पं० श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

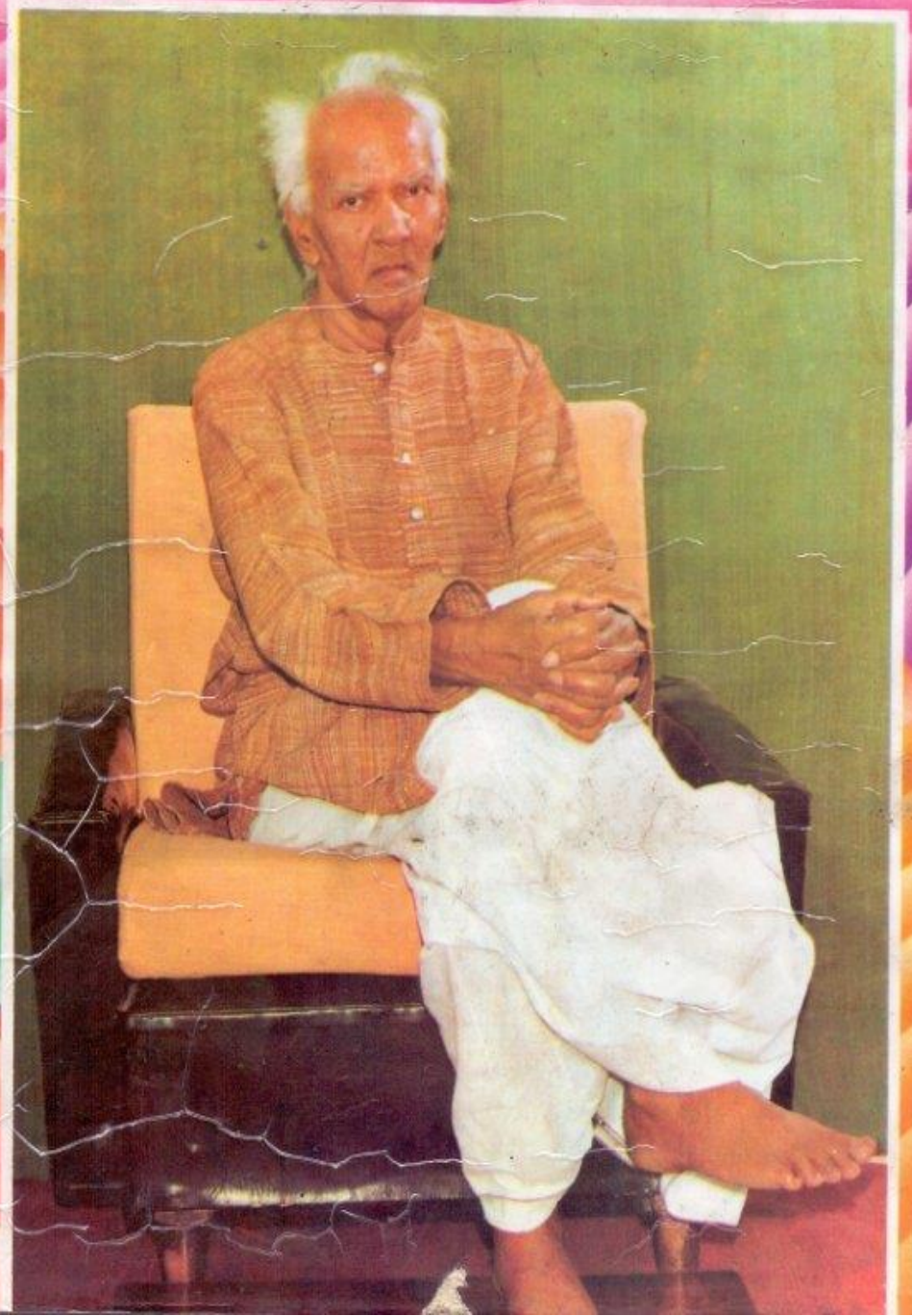

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस

प्रकाशक :

अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा-२८१ ००३

© सर्वाधिकार सुरक्षित

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

द्वितीय संस्करण १९९८

मूल्य १२५)

मुद्रक
जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

यह जगत स्रष्टा का एक विचित्र रंगमंच है, जिसका विस्तार असीम है। यह दो भागों में बँटा हुआ है-एक दृश्य या प्रत्यक्ष और दूसरा-अदृश्य या परोक्ष। एक इन्द्रियगम्य है तो दूसरा इन्द्रियातीत। आँखों से मात्र दृश्य पदार्थ ही दिखाई पड़ते हैं, किन्तु इनके भीतर एक प्रेरक शक्ति काम करती है जिसे आँखों से नहीं देखा जाता, उसकी क्षमता एवं गति को देखकर अनुमान लगाया जाता है कि प्रकृति के अन्तराल में शब्द, ताप और प्रकाश की तरंगें काम करती हैं, जिन्हें परोक्ष ही कहा जा सकता है। देखने में शरीर ही सारा काम करता दृष्टिगोचर होता है, पर वस्तुतः उसके भीतर चेतना की अदृश्य प्राण शक्ति ही कार्य करती है। भूमण्डल के संबंध में भी यही बात है। वह जल, थल और नभ के तीन भागों में विभक्त है, किन्तु उसका थोड़ा-सा भाग ही दृष्टिगोचर होता है। भूगर्भ में क्या हलचलें चल रही हैं, समुद्र तल में क्या हो रहा है, पोले आकाश में कितना पदार्थ वायुभूत होकर उड़ रहा है, कितना प्राण, पर्जन्य व सूक्ष्मसत्तायें परिभ्रमण कर रही हैं, इसकी जानकारी सामान्य बुद्धि या साधनों से प्राप्त नहीं होती, वह सभी एक प्रकार से परोक्ष या अदृश्य हैं। इसकी क्षमता-प्रत्यक्ष की तुलना में असंख्य गुनी अधिक है।

परमपूज्य गुरुदेव ने प्रत्यक्ष की तुलना में परोक्ष को अधिक महत्व दिया है। प्रत्यक्ष को उन्होंने जड़ एवं आवरण और परोक्ष को चेतन प्रेरणा माना है और चेतना को ही वातावरण का, मनःस्थिति का, परिस्थिति का जन्मदाता कहा है। यह एक तथ्य भी है कि मानवी चिन्तन, चरित्र और व्यवहार को प्रभावित करने वाली आस्था विकृत हो जाने के कारण आज अदृश्य जगत के मर्मस्थल में एक ऐसा नासूर पैदा हो गया है जिससे हर क्षेत्र में अनेकानेक संकट खड़े हुए हैं। दृश्य जगत की परिधि में मानवी आस्था को महत्व तो दिया जा सकता है, फिर भी वह समग्र नहीं है। दृश्य जगत की पीठ पर एक अदृश्य जगत भी है और उसमें चल रही हलचलों और गतिविधियों से प्रत्यक्ष जगत पूरी तरह प्रभावित होता है। देखना यह भी है कि अदृश्य जगत में कहीं अवांछनीय तत्व तो नहीं घुस पड़े हैं और उनके प्रभाव से दृश्य जगत का वातावरण तो विषाक्त नहीं हो रहा है। अदृश्य भी हमारे लिए उतना ही उपयोगी है जितना कि जगत। तुलनात्मक दृष्टि से इसकी महत्ता व गरिमा अधिक ही बैठती है। प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानना, बालकों जैसा दुराग्रह है।

परमपूज्य गुरुदेव ने वाङ्मय के इस खण्ड में बताया है कि आस्तिकता वस्तुतः बुद्धिसंगत, तर्कसंगत एवं प्रमाणों से प्रतिपाद्य है। जो सही अर्थों में वैज्ञानिक है, वह ईश्वरीय सत्ता को नकार नहीं सकता। विज्ञान, सद्ज्ञान व्यक्ति को नास्तिक नहीं सही माने में आस्तिक बनाता है व यह सोचने हेतु मजबूर करता है कि इस सृष्टि का कोई न कोई कर्त्ता-धर्त्ता है अवश्य। वह व्यक्ति नहीं है परब्रह्म है, सर्वव्यापी विधि-व्यवस्था है, नियामक तंत्र है जिसका दृश्य एवं अदृश्य लीला जगत ऐसी विलक्षणताओं से भरा पड़ा है जिन्हें देखकर कारण समझ में न आने पर दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ती है। यही विश्वास सुदृढ़ होने लगता है कि विज्ञान की पहुँच से परे भी कोई विलक्षण सत्ता है जिसके क्रियाकलापों को अभी गहराई से जाना नहीं जा सका है और न ही समाधान खोजा जा सका है कि ऐसा क्यों होता है? सतत् घटित होते रहने वाले इन घटनाक्रमों का कोई विज्ञानसम्मत कारण न मिलने पर इन्हें अविज्ञात के गर्त में धकेल दिया जाता है, फिर भी यह एक तथ्य तो स्पष्ट है कि विराट् के एक घटक प्रकृति को अभी पूरी तरह जान पाना संभव नहीं हो पाया है। यहीं हमें उस सत्ता के दर्शन होते हैं जिसे अचिन्त्य, अगोचर, अगम्य कहा गया है। परब्रह्म की सत्ता को इस रूप में भी मानते हुए आस्तिकता की अपनी मान्यताओं को परिपुष्ट-परिपक्व बनाया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ वन्दे भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ।।

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ।।

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ।।

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ।।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ।।

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जा सकता है। यह अंधविश्वास नहीं, वरन् जो कुछ दृश्यमान सत्य है, उसकी अनुभूति है कि यह सब उस परमात्मा की विनिर्मित रचनाएँ हैं, जिसे हम आँखों से देख नहीं पाते।

सृष्टि के कण-कण में परमात्मसत्ता विद्यमान है। जड़-चेतन में वह एक ही शक्ति क्रीड़ा-कल्लोल कर रही है। वह उसकी निर्मात्री भी है और संचालक भी। उसकी रचना में सब कुछ सुव्यवस्थित एवं सुनियंत्रित है। अनगढ़-निष्प्रयोजन दीखने वाले घटकों की भी यहाँ अपनी उपयोगिता एवं महत्ता है। समुद्र से लेकर ग्रह-गोलकों तक जो भी इस सृष्टि में है, उन सभी में पारस्परिक सहयोग-सहकार, एक अद्भुत तारतम्य एवं सामंजस्य है। "**अणोरणीयान**" एवं "**महतोमहीयान**" वाले प्रकृति विस्तार के प्रत्येक घटक में सर्वत्र समस्वरता विद्यमान है। इतना ही नहीं स्रष्टा ने अपनी कृति में किसी को भी असमर्थ नहीं छोड़ा है। क्या जड़ पदार्थ और क्या चेतन वृक्ष-वनस्पतियों से लेकर कीट-पतंगों, पशु-पक्षियों तक सभी को अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुरूप प्रचुर मात्रा में क्षमता एवं दक्षता प्रदान की है। फिर उसका ज्येष्ठ पुत्र-युवराज होने के नाते मनुष्य का तो कहना ही क्या है जिसे उसने अपना सहायक-सहयोगी बनाकर भेजा है। अतः उसके अधिक भारी दायित्वों का निर्वाह कर सकने वाला सिद्ध होकर अपनी वरिष्ठता की सार्थकता भी तद्नुरूप ही सिद्ध करनी चाहिए।

वाङ्मय के इस खण्ड के सात अध्यायों में जो भी पाठ्यसामग्री परमपूज्य गुरुदेव की लेखनी से निस्सृत हुई है, वह पाठकों में आस्तिकता के भाव जाग्रत करेगी और उन्हें अपना चिन्तन, कौशल और क्रियाकलाप ऐसा विनिर्मित करने में मदद करेगी जो स्रष्टा की उस सुव्यवस्था को अधिक सक्षम रख सके जिसे उसने दृश्य-अदृश्य जगत के कण-कण में समाविष्ट कर दिया है।

www.vicharkrantibooks.org

-ब्रह्मवर्चस

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है। परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्ज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है। परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी माँ शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही हैं। उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया। आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं हैं किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानीगणों के वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देखा सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये। इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबोकर लिखा गया हो। हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता, मन को व विचारों को बदलता चला जाता है। लाखों-करोड़ों के मनों के अंत:स्थल को छूकर उसने उनका कायाकल्प कर दिया। रूसो के प्रजातंत्र की, कार्लमार्क्स के साम्यवाद की क्रान्ति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है। उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्बोधन से एक विराट् गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े करते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाये, कैसे छन्दबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवनचरित को।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर, १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पन्द्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता। वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता श्री पं. रूपकिशोर जी शर्मा आस-पास के, दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अंत:करण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था। साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा। जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे, छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे। किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुत: अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी। जाति-पाँति का कोई भेद नहीं। जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला

की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवा कर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा। उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ। नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था।

किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा स्वल्प ही पायी थी किंतु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभासम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है। हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय यह सिखाया।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजास्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में। उनने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में सम्पन्न क्रिया-कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषिसत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीस लक्ष्य के चौबीस महापुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था। २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रान्ति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्बाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक-दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्त्वपूर्ण मोड़ था, जिसमें भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि- ''प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। दो बातें गुरुसत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गईं- संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी। वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया। सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।''

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने ताड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख-सुनकर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद

पैदल लम्बा रास्ता पार कर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल भी गये। छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई। जेल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अँग्रेजी सीखकर लौटे। आसनसोल जेल में वे श्री जवाहरलाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मदनमोहन मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से, मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना। यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान, बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जनआक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रान्तिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये; जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था। नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं। बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये। जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा झीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्यचकित रह गये। उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्तजी नाम से ही जानते हैं। लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्यमंत्री श्रीगोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधीजी के समक्ष पेश किये गये। बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए। कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुंज में सम्मानित किया। उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधानमंत्री राहत फण्ड के नाम समर्पित कर दीं। वैरागी जीवन का सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरू हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम, अहमदाबाद गये। सांस्कृतिक, आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया, जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्रीकृष्णदत्तपालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्यायरत रहकर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया। प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अतः पुनः सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमशः उनके अध्यवसाय घर- घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदयस्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ। स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे। पुस्तकों

का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंत:स्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही। साथ देने आ गयीं परमवंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वंपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी। उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दु:खी था- पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं। यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रान्ति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि-विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ। गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परमवंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी। धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी। २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है। १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है। १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५७ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया। कार्त्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देशभर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं। संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था। तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्राय: पैंतीस संस्करण छप चुके हैं। हिमालय से लौटते ही उनने महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूलथाती को पुनर्जीवन दिया। परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञानसम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ। तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तप-पूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था। तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों के द्वारा विचार क्रान्ति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए। स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों को विशेष कार्य-भार सौंप परमवंदनीया माताजी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़कर स्वयं हिमालय चले गये। एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया-पद्धति बतायी। ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्तन, संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किये।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे। इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के

अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक, साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य, प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक। इसके लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी-बूटी, यज्ञ विज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना, मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञानसम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण का, एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युगशिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता व आस्तिकता संवर्धन एवं जन-जाग्रति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञासंस्थान, शक्तिपीठ, प्रज्ञामण्डल, स्वाध्याय-मण्डल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

पस्मपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया-कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तपसाधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया-कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून, १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी के दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट-आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देवसंस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नवनिर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरुसत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युग संधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेध महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नवनिर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रान्ति ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर, १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद, दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेध यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु सम्पन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९५ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी गई। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो एक सौ आठ खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हुआ। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जाएँगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़-चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेगा' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी उज्ज्वल भविष्य, सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है। ❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
अणु में विभु-गागर में सागर	**१.१**
नदी, नद, सागर, तालाब सब कुछ इस शरीर में	११
शरीर की रहस्यमय विलक्षणताएँ	१.४
प्रत्यक्ष से भी अति समर्थ अप्रत्यक्ष	१.६
जो सशक्त है वह सूक्ष्म है	१.९
वैभव गरिमा का आधार	१.११
अति विलक्षण चेतना अर्थात् सूक्ष्म की सत्ता	१.१२
जड़वाद एक बौद्धिक दुर्भाग्य	१.१५
देखने में लगता है पर	१.१७
असीम-अतल शक्ति-सागर की एक बूँद	१.१९
विराट और लघु परमात्मा और आत्मा	१.२०
परा और अपरा प्रकृति	१.२१
शरीर संस्थान में भी सूक्ष्म ही प्रखर	१.२२
अन्तःस्रावी ग्रन्थि में गड़बड़ी	१.२५
मनुष्य की सूक्ष्म चेतना से सम्बद्ध	१.२७
जड़ के भीतर विवेकवान चेतन	**२.१**
प्रकृति की प्रत्येक रचना परिपूर्ण	२.१
मनुष्य के सहयोगी भी	२.४
प्रकृति की जीवन व्यवस्था	२.६
संसार से भी विचित्र उसके प्राणी	२.८
समर्थ सशक्त जीवनी-शक्ति	२.११
सूक्ष्मजीवों की दुनिया में प्रवेश की मानवी प्रयत्न	२.१३
संगठित जातियाँ चट्टानवत सुदृढ़ होती हैं	२.१६
प्रकृति के अनोखे वरदान	२.१८
प्रतिरोध की स्वयं समर्थ शक्ति	२.२०
असुरता के संहार में प्रवृत्त-अन्तःचेतना	२.२२
शक्ति का स्रोत	२.२४
अनुदान और दिशा प्रेरणा	२.२६
सभी संतानें प्रिय	२.२७
सर्प भी एक शिक्षक	२.२९
सर्प उतना भयंकर नहीं, जितना उसे समझा जाता है	२.३२
सर्पों में अधिकांश भले होते हैं	२.३४
साँप से न तो भयभीत हों, न उसके जैसा बनें	२.३७
हमारी दुर्दशा दुमुँहे साँप जैसी न हो	२.३७
पतन क्यों-उत्थान कैसे?	२.३८
आरामतलबी व आलसीपन प्रकृति के विरुद्ध	२.४०
परिणाम फिर भी प्रतिकूल क्यों?	२.४१
रक्षक आप-भक्षक आप	२.४४
अन्यथा संकट प्रस्तुत है	२.४५
व्यवस्था संन्तुलन काम विकार में भी	२.४६
प्रकृति की क्रूर कठोरता से सावधान	२.४८
हिमालय के अमर आदम-हिममानव	२.४८
कर्त्तव्य की गरिमा-सामान्य की महिमा	२.५३
शरीर व्यवस्था का नियन्त्रण केन्द्र	२.५५
शरीर एककोशा समाज	२.५६
मान भी लें कि विकास-क्रम सही है पर	२.५८
अद्भुत और अश्रुत	२.६०
न विकासवाद, न आनुवंशिकता	२.६२
दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ	**३.१**
दृश्य जगत की परमार्थ प्रेरणा	३.१
प्रकृति में दृश्यमान सहयोग-सहकार भरा सद्भाव	३.५
वृक्ष-वनस्पतियों में भी फैली हुई विश्वात्मा	३.६
महानता की दृष्टि से मनुष्य घास से भी छोटा है	३.८
पेड़-पौधों की विस्मयजनक गतिविधियाँ	३.१३
बोतल वृक्ष-शिक्षक पेड़	३.१५
आत्मचेतना का विकास वृक्ष-वनस्पतियों में	३.१९
पाप न करें-पौधे बात खोल देंगे	३.२०
प्रकृति-उपभोग ही नहीं उपास्य भी	३.२२
अद्भुत प्रकृति प्रेमी	३.२४
प्रेम का परिष्कार पेड़-पौधों से भी प्यार	३.२४
वनस्पति जगत मनुष्य से कहीं अधिक सम्वेदनशील है	३.२६
वृक्ष-वनस्पति भी परस्पर बातें करते हैं, मूक नहीं हैं	३.२९
जीवन कला में पारंगत-वृक्ष-वनस्पति	३.३०
आकार में छोटे खमीर से भी कुछ प्रेरणा लें	३.३२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
आओ हम -आप दोनों जियें	३.३२
प्रकृति की अनुपम देन-मनोहारी पुष्प	३.३४
विद्युत ऊर्जा से अभिपूरित वनस्पति जगत	३.३५
विचित्र एवं अद्भुत वनस्पति जगत	३.३७
प्रकृति का विलक्षण खेल प्रार्थना करते पेड़	३.३९
मनुष्य जीवन में वृक्षों का आध्यात्मिक महत्त्व	३.४०
चेतना का सहज स्वभाव–स्नेह-सहयोग	**४.१**
सहयोग-सहकार प्रगति का मूल आधार	४.१
सारा विश्व एक शरीर	४.२
विकास ही नहीं आनन्द का भी आधार	४.४
संघर्ष नहीं सहयोग ही आगे बढ़ाता है,	४.५
संघर्ष और विघटन से अंततः विनाश	४.६
जियो और जीने दो की प्रकृति प्रेरणा	४.८
जीव-जन्तु वृक्ष-वनस्पतियों में	४.१२
हर कोई लाभान्वित	४.१३
जीव-जन्तुओं से भी कुछ सीखें	४.१४
परिस्थितियाँ, जो निर्बल को भी साहसी बना देती हैं	४.१७
सहकार पर ही टिका है मानवी अस्तित्व	४.१९
अति विलक्षण अचेतन की माया	४.२१
चींटियों की अनुकरणीय समाज व्यवस्था	४.२४
यह संसार केवल मनुष्य के लिए ही नहीं है	४.२७
अन्य प्राणधारी भी विभूतियों से रहित नहीं	४.३०
प्रकृति पाठशाला में कला-संकाय	४.३१
अन्यथा मनुष्य एक निरीह प्राणी ही है	४.३४
मनुष्य न तो सर्वोपरि है और न सर्वशक्तिमान	४.३६
छोटे कीड़े-मकोड़ों की दुनिया हम से कम रोचक नहीं	४.३८
विशिष्टताओं से सम्पन्न ये तुच्छ जीव-जन्तु	४.४०
पशु सर्वथा पिछड़े ही नहीं हैं	४.४२
स्नेह-सद्भाव के वश में संसार	४.४५
प्यार बड़ा है या क्रूरता	४.४६
स्नेह-निष्ठा और पारिवारिकता का अनुगमन	४.४८
वासना नहीं कर्तव्य भावना से प्रेरित	४.५०
दाम्पत्य-निष्ठा के अद्भुत उदाहरण	४.५१
नीरस जीवन में सरसता	४.५४
भावनाओं की सम्पदा अन्य प्राणियों के पास भी	४.५७

विषय	पृष्ठ
प्रेम की न सीमा न बन्धन	४.५९
मनुष्य से कुछ कम नहीं मनुष्येतर प्राणी	४.६२
पशु भी उपकार करने में पीछे नहीं	४.६३
हमसे तो कई गुना श्रेष्ठ है-डॉल्फिन मछली	४.६६
ये संवेदनशील पशु-पक्षी	४.६८
बेईमानी और छल-कपट हाथी को भी नापसन्द	४.६९
प्रकृति प्रेरणा का भयावह व्यतिरेक	४.७०
आदर्श दाम्पत्य-जीवन का पाठ पढ़ाते ये जीव-जन्तु	४.७१
अन्य जीवों को तुच्छ न समझें	४.७२
मानवेतर प्राणियों की दुनिया भी मनुष्यों जैसी	४.७२
पशु-पक्षियों में पारिवारिक भावनाएँ	४.७५
कबूतर मात्र एक पक्षी?	४.७६
कछुए में भी उदार सहायता की भावना	४.७७
भेड़ियों द्वारा पाले गये मनुष्य के बच्चे	४.७७
दोष मत दीजिये 'कैच' ठीक कीजिए	४.७८
कुछ दिन पशुओं के बीच रहिए	४.८०
हम सब एक-दूसरे पर निर्भर	**५.१**
अपनापन विकसित कीजिए	५.१
सुख भोग में नहीं-त्याग, परोपकार में है	५.३
केवल स्वार्थ ही न सोचते रहिए	५.७
परमार्थ ही सच्चा स्वार्थ	५.१३
प्रकृति के अनुदान अन्य प्राणियों को भी मिले हैं	५.१४
दयानिधान भगवान के महान अनुदान	५.१७
सूक्ष्म चेतना को परिष्कृत किया जाय	५.१८
जीव-जन्तुओं की विशिष्ट चेतना शक्ति	५.२०
जीव-जन्तुओं की विलक्षणताएँ	
आत्म-चेतना की माया	५.२२
जीवधारियों की विलक्षण चेतना शक्ति	५.२४
ईश्वर का संसार-करुणा का आगार	५.२५
मनुष्य से भी बढ़कर क्षमतावान हैं अन्य प्राणी	५.२७
क्षमताओं की दृष्टि से पीछे नहीं है अन्यान्य जीव भी	५.२७

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
सृष्टि का हर प्राणी विशिष्टता सम्पन्न	५.२९
प्राणियों की अतीन्द्रिय एवं विलक्षण शक्ति	५.३१
इन्द्रिय चेतना से परे	५.३६
मनुष्येतर प्राणियों का विकसित संसार	५.३९
अद्भुत की व्यवस्था अद्भुत	५.४१
क्रिया-कौशल में हमसे आगे हैं जीव-जन्तु	५.४२
वास्तुकला विशेषज्ञ-ये नन्हें प्राणी	५.४४
कीड़ों की आत्म विद्युत	५.४७
विवेकरहित बुद्धि से काम नहीं चलेगा	५.४८
बुद्धिमान होने के कारण मनुष्य सर्वश्रेष्ठ नहीं है	५.५०
मनुष्य तो मकड़ी से भी पिछड़ा हुआ है	५.५१
हमारी अधूरी जानकारियाँ और मूढ़-मान्यताएँ	५.५३
पक्षी-जिन्हें पुरुषार्थ के बिना चैन कहाँ	५.५४
विलक्षण विभूतियों से सम्पन्न यह जीव-जगत	५.५६
काल और दिशा सम्बन्धी प्रकृति प्रेरणा	५.५८
महाकाल का गतिचक्र और अनुशासन	५.५९
प्रकृति के कलाकारों से सुरक्षा विधि सीखना	५.६३
जीव-जगत और विधाता की विनोदप्रियता	५.६५
अद्भुत क्षमताओं से सम्पन्न चमगादड़	५.६६
प्रकृति का उपहार-अनुदान मक्खी को भी मिला है	५.६७
पेट-प्रजनन में तो चूहा भी मनुष्य से आगे है	५.६८
बदलते समय के साथ अनुकूलन जरूरी	५.६९
स्वच्छता, सुगढ़ता के पक्षधर-जीव-जन्तु	५.७०
मात्र विज्ञान नहीं सद्ज्ञान भी चाहिये	५.७१
घ्राण शक्ति का जीवन विकास में महत्वपूर्ण स्थान है	५.७३
परमसत्ता के अनुदान हर जीवधारी को एक समान	५.७७
स्रष्टा का सृजन कितना सुन्दर कितना समग्र	५.७८
प्रगति और अवगति पुरुषार्थ पर अवलम्बित	५.८०

विषय	पृष्ठ
विशेषताओं में हमसे कहीं आगे हैं-अन्यान्य प्राणी	५.८१
प्राणियों की सक्षमता और कुशलता	५.८२
वरिष्ठता विस्तार में नहीं स्तर में है	५.८४
सीखने के लिए सामने ही सब कुछ है	५.८५
मनुष्य की बहुज्ञता का क्षुद्र जीवों को चुनौती	५.८६
गुबरीलों का कीर्तिस्तम्भ	५.८७
मृत्युपर्यन्त चिरयुवा कैसे रहें ?	५.८८
मनुष्य को अभी बहुत कुछ जानना शेष है	५.९०
स्नेह-दुलार सुधार का कारगर प्रदर्शन	५.९२
वन्य प्राणियों का दुःखद महाविनाश	५.९४
सृष्टि का सौन्दर्य ऐसे नष्ट न करें	५.९६
उपयोगिता नहीं परमार्थ - परायणता	५.९७
बुद्धिवाद से भी अधिक गरिमामय	५.१००
जीव-जन्तु बोलते भी हैं, सोचते भी हैं	**६.१**
क्या सचमुच मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है?	६.१
हम लें ही नहीं योगदान दें भी	६.३
बुद्धिमान होने के कारण मनुष्य सबसे बड़ा नहीं है	६.५
न विद्यालय न शास्त्र	६.७
जीव-जन्तुओं की विलक्षणता मनुष्योचित	६.७
बुनने वाली चिड़ियाँ	६.८
मछलियों की विद्युत शक्ति	६.८
प्रेम और स्नेह-सद्भाव भी	६.९
मनुष्येतर प्राणियों के बारे में भी सोचिए	६.१०
मानवेतर प्राणियों का संसार भी मनुष्यों जैसा	६.१२
प्रशिक्षण से प्रतिभा परिष्कार सम्भव	६.१४
बुद्धिमान पशु-पक्षी भी होते हैं	६.१५
प्रशिक्षण और मार्गदर्शन की स्वयंभू शक्ति	६.१७
मनुष्य जीवन भी एक प्रवास	६.१९
यात्राएँ मानव स्वभाव का अंग	६.१९
प्रकाश की खोज	६.२१
जीव-जन्तुओं की संस्कृति	६.२२
प्रवासी पक्षियों का सांस्कृतिक प्रेम	६.२३
भाव संवेदनाएँ आत्मचेतना की प्रतीक	६.२४
साहस, दया और करुणा	६.२५
मैत्री, सद्भाव और कर्तव्य भावना	६.२७

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
आनन्द और उन्नति का आधार	६.२९
गरिमा अन्य प्राणियों में भी	६.३०
वे भी बोलते हैं, कोई समझे तो	६.३३
व्यवस्था बुद्धि, जीव-जन्तुओं की विलक्षण बुद्धिमत्ता	६.३३
जीवों की भाषा-विलक्षणता	६.३६
मूक, किन्तु विलक्षणता सम्पन्न ये पशु-पक्षी	६.३८
भावाभिव्यक्ति का अनुदान सभी को प्रदत्त	६.४०
सद्गुणों का शिक्षण, प्रकृति की पाठशाला में	६.४१
बदलती परिस्थितियों में स्वयं भी बदलें	६.४३
रहस्यमय मछली के रहस्य	६.४७
जीव-जन्तुओं की बोली समझना	७.१
हमारे मूक भाई-बन्धु	७.१
प्राणियों की असाधारण शक्तियाँ	७.१
अन्य जीवों की आध्यात्मिक शक्ति	७.३
मनुष्य और जीव-जन्तुओं के सम्बन्ध	७.५
प्राणियों की आद्य भाषा	७.७
जीव-जन्तुओं की बोली	७.९
शकुन विद्या	७.१०
जीव-जन्तु किस प्रकार बोलते हैं?	७.१३
महाविद्या की साधना	७.१४
इस विद्या का महत्व	७.१६

* * *

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

अणु में विभु—गागर में सागर

नदी, नद, सागर, तालाब सब कुछ इस शरीर में

अमेरिका के जीव-वैज्ञानिक डॉ० इर्वन केमरान ने कुछ चूहे लेकर उन्हें एक विशेष बॉक्स में संकेत पाने पर भोजन के लिए प्रशिक्षित किया । चूहे कुछ ही दिन के अभ्यास से प्रशिक्षित हो गए । जब भी उन्हें टार्च का प्रकाश दिखाया जाता, वे तुरन्त भागते हुए आते और बॉक्स में रखे भोजन को प्राप्त कर लेते । इसके बाद इन प्रशिक्षित चूहों को मार कर उनके मस्तिष्क का 'न्यूक्लियक एसिड' निकाल लिया गया और फिर उसका इन्जेक्शन बनाकर कुछ ऐसे चूहों को दिया गया, जिन्हें इस तरह का कोई प्रशिक्षण नहीं दिया गया था । उस समय डॉ० केमरान के आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब यह चूहे भी टार्च का प्रकाश देखते ही भोजन के लिए उस विशेष बॉक्स में बिना बताये ही प्रवेश कर गये । यही प्रयोग चूहों के अतिरिक्त दूसरे जन्तुओं जैसे छछूँदर, गिलहरी आदि पर भी क्रिया गया और वहाँ भी यही आश्चर्यजनक सत्य देखने को मिला । इससे यह तो निश्चित ही साबित हो गया कि जैसे कोई चेतन शक्ति प्रकाश के अणुओं में ही है ।

डॉ० केमरान ने यह प्रयोग कुछ मनुष्यों पर भी 'मैग्नीशियम पैमुलीन' नामक दवा का प्रयोग करके देखा कि एक व्यक्ति जो ताश के पत्ते नहीं पहचान पाता था, इस तरह की औषधि का सेवन करने के बाद फिर पत्ते पहचानने लगा । एक मैकेनिक वृद्धावस्था के कारण मशीनों के पुर्जे भूल जाने लगा, इस तरह की औषधि से उसकी ज्ञान क्षमता में विकास हुआ ।

यह न्यूक्लियक एसिड क्या है, यह समझ लें तो बात स्पष्ट हो जाएगी । हमें पता है कि जिस प्रकार कोई भी पदार्थ का टुकड़ा छोटे-छोटे परमाणुओं से बना है, उसी तरह मनुष्य का शरीर जिन छोटे परमाणुओं से बना है, उन्हें 'कोश' (सेल) कहते हैं । एक कोश में जीवन के सारे लक्षण अमीवा की तरह विद्यमान रहते हैं । अमीवा एक कोशीय जीव है । उसमें आहार, निद्रा, भय आदि वह सब गुण पाए जाते हैं, जिनसे किसी पिण्ड में चेतना के अस्तित्व की जानकारी होती है । इसी तरह 'कोश' में मनुष्य जीवन के सारे लक्षण विद्यमान रहते हैं ।

यह कोश मुख्यतया दो भागों में विभक्त है—(१) नाभिक या केन्द्रक (न्यूक्लियस), (२) साइटोप्लाज्म । नाभिक एक तरह का तारा प्रकाश कण होता है और जीवन की यही अन्तिम इकाई है, दूसरे साइटोप्लाज्म में तो सभी प्रोटीन तत्व, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, फॉस्फोरस आदि तत्व पाये जाते हैं । यह तभी तक क्रियाशील रहते हैं जब तक नाभिक (न्यूक्लियस) बना रहता है । न्यूक्लियस के निकलते ही यह पदार्थ वाला अंश मृत हो जाता है, निष्क्रिय हो जाता है । यद्यपि इस केन्द्रक (न्यूक्लियस) को वैज्ञानिक स्वतंत्र स्थिति में प्रकट नहीं कर सके तथापि ऊपर जिस 'न्यूक्लियक एसिड' की चर्चा की गई, वह इसी में पाया जाता है, इससे स्पष्ट तौर पर कहा जा सकता है कि ज्ञान, विचार या अन्तर्चेतना प्रकाश कणों का गुण है और यदि वह मनुष्य के स्थूल से भिन्न पदार्थ है तो शरीर से विलग होने के बाद भी उसमें यह गुण विद्यमान बने रहने ही चाहिये ।

एक स्वस्थ मानव शरीर में लगभग ६०० खरब कोशिकाएँ होती हैं । ६०० खरब कोशिकाओं में ६०० खरब नाभिक होते हैं । प्रत्येक नाभिक में गुण-सूत्र (क्रोमोसोम) और प्रत्येक गुण-सूत्र के भीतर एक वटी हुई रस्सी की सीढ़ी के समान संस्कार कोश (जीन्स) विद्यमान होते हैं, यह संस्कार कोश जो प्रकाश की भी सूक्ष्म अवस्था है, न्यूक्लियक एसिड कहलाते हैं । यह एक प्रकार की विद्युत चुम्बकीय शक्ति है और कोश के भीतर सारे स्थूल द्रव्य में, तिल में तेल के समान व्याप्त है, इसीलिए वैज्ञानिकों को उसके स्वतंत्र होने पर भी एसिड होने का भ्रम हो रहा है । वस्तुतः अपवाद स्वरूप कुछ प्राणियों को छोड़कर शेष सभी प्राणियों की कोशिकाएँ अनेक तत्वों की बनी होती है, जो तत्व विकृत होते हैं, वहाँ उस तरह के विषाणु पैदा होते रहते हैं । उसका फल बीमारियाँ होती हैं । अपने आप में शुद्ध और समुन्नत कोशिकाओं से जीवन, आयु और प्राण की वृद्धि भी होती रहती है। अब यह विश्वास किया जा रहा है कि प्रत्येक प्राणी की कोशिकाओं का विश्लेषण कर लिया जाय और मानव शरीर में उनकी समीक्षा की जाये तो जिस जाति की कोशिकाएँ बहुतायत से पाई जा रही होंगी, पूर्व जन्म उसी से सम्बन्धित रहा होगा । कोशिकाएँ प्रोटोप्लाज्म नामक जीवित पदार्थ से बनी होती हैं । इसके भी साइटोप्लाज्म और नाभिक (न्यूक्लियस) दो भाग होते हैं । साइटोप्लाज्म अर्द्धपारदर्शक जल मिश्रित जेली की तरह का होता है, जिसमें अनेक प्रकार के प्रोटीन, लवण, शर्करा और वस्तुएँ होती हैं पर नाभिक के बारे में अभी निश्चित तथ्य नहीं प्राप्त किये जा सके । इसका सम्बन्ध प्राण विद्या से है । जब उससे वैज्ञानिक अनेक जानकारियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१.२ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

प्राप्त करेंगे तो पूर्व अध्यात्म की और भी विलक्षण पुष्टि होगी । पर एक बात तो यहाँ अभी सिद्ध हो गई कि आहारक्रम को बदलकर कोशिकाओं को बदला जा सकता है। भले ही यह क्रम मन्दगामी हो, पर यदि एक ही प्रकार के पदार्थ खाने में लिए जाएँ तो उसी प्रकार की कोशिकाओं को विकसित और सतेज कर विषाणुओं और दुर्बल एवं अधोगामी योनियों में पाई जाने वाली कोशिकाओं को हटाया और कम किया जा सकता है । इसका प्रभाव यह होता है कि मनुष्य में जो पाशविक वृत्तियाँ होती हैं, वह इन कोशिकाओं की मंद, अशुद्ध और जटिल परिस्थिति के कारण होती हैं । उन्हें बदलकर शुद्ध, सात्विक बनाया जा सकता है । अस्वाद व्रत और उपवास का महत्व इस जानकारी के आधार पर और भी बहुत अधिक बढ़ जायेगा ।

यदि कोशिका को काटकर नाभिक से अलग कर दिया जाय तो कोशिका की मृत्यु हो जाएगी पर नाभिक में स्वत: निर्माण की क्षमता होती है, हमारा आध्यात्मिक दर्शन यह कहता है कि उस नाभिक में इच्छा, आशा, संकल्प और वासना का अंश रहता है । उसी के अनुरूप वह दूसरा जन्म ग्रहण करता है । अभी पाश्चात्य विज्ञान इस सम्बन्ध में तो खोज नहीं कर पाया पर कोशिकाओं से निकलने वाली एक तरह की किरणें, जिन्हें क्रोमोसोम कहते हैं की जानकारी मिली है । प्रत्येक पदार्थ में क्रोमोसोम की संख्या अलग-अलग होती है । गेहूँ में ४२, मनुष्य के शरीर की कोशिकाओं में ४६ और किन्हीं-किन्हीं जीवों की कोशिकाओं में १००-१०० तक क्रोमोसोम पाए जाते हैं । यह क्रोमोसोम भी जीन नामक परमाणुओं से बने होते हैं । इनके अलग-अलग रङ्ग भी होते हैं, उन कणों को एलील कहा जाता है ।

जब इन सब की विस्तृत खोज होगी तो अनुमान है मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार आदि सूक्ष्म तत्वों की और भी विशद् जानकारी होगी । इनमें नाभिक हर घड़ी क्रियाशील रहता है और वह इन क्रोमोसोम के माध्यम से साइटोप्लाज्मा को भी गतिशील रखता है । इच्छानुवर्ती शरीर क्रिया को बदलने का सम्भव है बड़ा विज्ञान इसमें सन्निहित हो और उसकी जानकारी बाद में वैज्ञानिकों को मिले ।

यद्यपि कोशिकाओं के अन्दर निर्माण और क्रियाशील रखने वाली शक्ति न्यूक्लियस या नाभिक ही है, पर साइटोप्लाज्म का कार्य उससे कम महत्वपूर्ण नहीं, दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं । सच पूछा जाये तो साइटोप्लाज्म भी उतना ही शक्तिशाली, व्यापक और विशाल है ।

जब इनकी वैज्ञानिकों ने विस्तृत खोज की तो पता चला कि एक साइटोप्लाज्म के अन्दर एक बड़ी भारी झील है, उसमें कई इतने बड़े महासागर हैं, जितने न्यूयार्क, वाशिंगटन, लन्दन, पेरिस, वारसा या दिल्ली आदि । उसमें छाए हुए कुहरे को हटाकर देखा गया तो वहाँ तो एक भयंकर हलचल दिखाई दीं । उसी में अनेकों कोश ही प्रकाश-कणों का एक स्वतंत्र शरीर बनाये हुये निकल जाते हैं, उनमें वह सारी याददास्तें बनी रहती हैं, जो जीवित अवस्था में ज्ञान में आई थीं । इतना ही नहीं इस अवस्था में भी वह ज्ञान-सम्पादन की क्षमता से परिपूर्ण होता है । केवल स्थूल क्रियाएँ जैसे बोलना, पकड़ना, उठाना-बैठाना आदि उससे नहीं हो सकता, यह किसी विशेष अवस्था में ही सम्भव है ।

उपरोक्त प्रयोग इस बात का साक्षी है कि हमारी मानसिक चेष्टाएँ जिन्हें विचार, इच्छाएँ या ज्ञान कुछ भी कहें मनुष्य शरीर की रासायनिक प्रक्रिया मात्र नहीं, प्रकाश मानव कणों या सूक्ष्म शरीर के कारण है, यह एक ऐसा सिद्धान्त है, जो यदि सिद्ध हो जाता है तो न केवल पुनर्जन्म, भूत-प्रेत, दूरदर्शन, दूर-श्रवण, विचार सम्प्रेषण, परकाया प्रवेश, परलोक आदि की भारतीय मान्यताओं की ही पुष्टि नहीं होगी वरन् योगाभ्यास की उन क्रियाओं का भी समर्थन होगा, जो शरीरधारी-आत्मचेतना के विराट विकास के लिये बड़ी तपश्चर्या और कष्टसाध्य प्रयोगों के द्वारा भारतीय तत्वदर्शियों ने आविष्कृत की है । केन्द्रक स्थित यह तत्व जो स्मृतियाँ अर्जित करता है, मनुष्य शरीर की समस्त ६०० खरब कोशिकाओं में पाया जाता है, यदि उसे खींचकर लम्बाई में बढ़ाया जाए तो वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अर्थात् अब तक की खोज के अनुसार १८६००० × ६० × ६० × २४ × ३६५ १/४ × ५०००००००० मील लम्बा होगा । इतने लम्बे फीते में प्रत्येक कोश में १००००००००० अक्षरों के हिसाब से उपरोक्त संख्या में इसका गुणा करने से जो संख्या बनेगी, उतने अक्षरों की और उन अक्षरों से बने शब्दों की स्मृति मनुष्य रख सकता है ।

यह कोशिकाएँ शरीर के विभिन्न अङ्गों में विभिन्न गुणों वाली होती है । उसकी जानकारी करने पर शरीर द्वारा शरीर की ही चिकित्सा कर लेना भी सम्भव हो जायेगा और अधिक भीतरी मर्म-स्थलों की खोज हुई तो मनुष्य यंत्रों के द्वारा अनेक ऐसी शक्तियाँ प्राप्त कर लिया करेगा, जिनकी सम्भावनायें तन्त्र-विज्ञान से सम्बन्ध रखती है । इनमें अणिमा, गरिमा, लघिमा आदि सिद्धियाँ भी सम्मिलित होंगी ।

कोशिकाओं के भाग—कोशिकावरण प्लास्टिड, वैकुओल, एण्डोप्लाज्मिक, रेंटिकुलम, सेन्ट्रियोल और माइटोकॉण्ड्रिया आदि की विस्तृत जानकारी होगी तो ब्रह्माण्ड के अनेक रहस्यों का पता शरीर में ही लग जाया करेगा । इन सबने शरीर में नहरों और नदियों जैसा जाल बिछा रखा है ।

देखा गया कि यह संरचनाएँ जब परस्पर जुड़ती हैं या सम्बन्ध स्थापित करती हैं तो एक बड़ी भारी सड़क बनती है । लाखों मील लम्बी नहरें दिखाई देती हैं । कोशिकाओं के कुछ अंश उतने उठे हुये दिखाई देते हैं, जैसे वह

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हिमालय अथवा आल्पस पर्वत हों, उन पर प्रकृति के वह पदार्थ भी झलकते और चमकते दिखाई देते हैं, जो पर्वतों और नदियों के किनारे दिखाई देते हैं । नेत्र विस्फारित हो उठते है कि आखिर एक परमाणु के अन्दर यह सब कैसी हलचल है ? मनुष्य जो भी खाता है, वह शरीर में स्थापित विद्युत केन्द्रों को पहुँचता है, वहाँ से हर स्थान को आवश्यकता के अनुरूप ऊर्जा की सप्लाई होती है, उसे देखकर लगता है, इन सब कामों को कोई इन्जीनियर बड़े ही कुशलतापूर्वक चला रहा है ।

कोशिकाओं के सम्बन्ध में अभी तक स्थूल जानकारियाँ ही मिली हैं, उनके आधार पर ही चिकित्सा जगत् में हलचल पैदा हो गई है, ऐसे-ऐसे इन्जेक्शन और औषधियाँ बनाली गई हैं, जिनसे अब मनुष्य का केवल काया-कल्प करना शेष रह जायेगा, बाकी रोगों को नष्ट करना, दीर्घजीवन प्राप्त करना वैज्ञानिकों की मुट्ठी में है । इन कोशिकाओं को जीववैज्ञानिकों ने शरीर के जीवन का आधार कहा है । सर्वप्रथम जीववैज्ञानिक जोह्नर ने यह बताया है कि रसायन जीवविज्ञान से गठबन्धन हुए बिना चैतन्य जगत् स्थिर नहीं रह सकता । उन्होंने एल्यूमिनियम और यूरिया नामक शारीरिक रसायन का संश्लेषण कर यह सिद्ध किया कि शारीरिक रसायन और धातुओं को प्रयोगशाला में नहीं पकड़ा जा सकता । यह घोषणा रसायन और औषधि जगत में तीव्र हलचल पैदा करने वाली थी ।

तब से अब तक ५०००० यौगिकों की खोज की जा चुकी है, किन्तु जीवन के सम्बन्ध में कोई युक्तिसंगत विश्लेषण वैज्ञानिक प्रस्तुत नहीं कर सके, किन्तु वैज्ञानिकों ने उसकी खोज का संकल्प अवश्य किया । खोजते-खोजते वे कोशिका और उसके द्वारा उत्पादनों और घटकों तक जा पहुँचे । उन्होंने देखा कि कोशिका (सेल्स, जिनसे मिलकर शरीर बना है) के भीतर जो सैकड़ों यौगिक भरे पड़े हैं, उन्हें निश्चित रूप से प्रयोगशाला में बनाया जा सकता है । उन्होंने इस बहुत ही सूक्ष्म कोशिका के भीतर जीवविज्ञान का भी सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों से अध्ययन करना प्रारम्भ किया, जो निष्कर्ष प्राप्त हुए यद्यपि वह अपूर्ण हैं पर जितने हैं, जड़वादी मान्यता को काट देने के लिए वही काफी हैं । वैज्ञानिक दृष्टि में कोशिका वह पिण्ड है, जिसमें सम्पूर्ण जगत का सूक्ष्मदर्शन छिपा हुआ है । उसे अध्ययन कर लेने वाला कभी नास्तिक नहीं हो सकता है ।

यद्यपि यह अत्यन्त सूक्ष्म संरचना है तथापि बोधगम्य (नोएबुल) है । एक बिन्दु में मनुष्य के लाल रक्त की लगभग ५ हजार कोशिकाएँ समा सकती हैं । यह कोशिका-झिल्ली पौधों और बैक्टीरियाज में अपेक्षाकृत अधिक मोटी और कड़ी होती हैं । यह एक प्रकार की निर्जीव चहार-दिवारी है, सूक्ष्म जलीय जगत तो उसके अन्दर बन्द है, आइये उस पर एक दृष्टि डालकर देखें कि वहाँ कौन से तत्व क्या कर रहे हैं ?

सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों द्वारा कोशिका झिल्ली के भीतर की इस रचना को बड़े आश्चर्य के साथ देखा जाता है । यह झिल्ली कोशिका के अन्दर समस्त इकाइयों की अपेक्षा अधिक सक्रिय इकाई है, किन्तु उसकी सक्रियता भीतर घुसे हुए नाभिक (न्यूक्लियस) की इच्छा के कारण है । न्यूक्लियस ही वह चेतना और केन्द्रीयभूत सत्ता मानी जा रही है जिस पर कोशिका का सारा क्रिया व्यापार चलता है । यह एक अत्यन्त सूक्ष्म पर विराट-जगत का प्रतिनिधि है । उसी को देखकर आइन्स्टाइन ने कहा था कि यह क्षितिज भी अण्डाकार (कर्व) स्थिति में है, जब लोगों ने पूछा कि उसके बाद क्या है तो उसने कहा—''कुछ नहीं'' वह संसार का सबसे बड़ा आश्चर्य है कि यह संसार जिसकी सीमा अनन्त है, वह भी घिरा हुआ, मुड़ा हुआ अर्थात् असीम है । सीमा स्थित है ।

जो भी हो हमें उस कोशिका-झिल्ली का अध्ययन करना है । यह झिल्ली उन तत्वों को छाँटती है, जिनकी न्यूक्लियस इच्छा करता है, जिस प्रकार सिनेमा हाल के गेट पर खड़े हुए चौकीदार जिसके पास जैसा टिकट होता है, उसी तरह उन्हें आने देते हैं, उसी प्रकार कोशिका झिल्ली भीतर केवल उन्हीं तत्वों को जाने देती है, जिसकी न्यूक्लियस इच्छा और प्रेम करता है । इस न्यूक्लियस के अतिरिक्त वहाँ कमजोर रेशों और अपेक्षाकृत मजबूत तंतुओं का जाल-सा बिछा हुआ है, इन्हें क्रोमैटिन कहते हैं क्योंकि वह रंगों को जज्ब करते हैं, जब एक कोशिका दूसरी कोशिका में विभाजित होती है तो यह तन्तु ही व्यावर्त्तन, पृथक्करण और पुनर्व्यवस्थापन के रूप में एक प्रकार का सामूहिक नृत्य-सा करते हैं । आधुनिक नृत्यकार भी उस नृत्य की गति का मुकाबला नहीं कर सकते ।

यह गति बड़ी रहस्यपूर्ण होती है, यह उन चार तत्वों को क्रियाशील करने का वैज्ञानिक तरीका है, जिससे नई सृष्टि की उत्पत्ति होती (नये बालक का जन्म भी इसी विभाजन क्रिया से होता है) किन्तु वह सब करने वाला पाँचवाँ आकाश तत्व भी वहाँ विद्यमान है । न्यूक्लियस उसी आकाश में स्थित है, अर्थात् वह किसी भी तत्व पर टिका हुआ नहीं है, जबकि कोशिका-झिल्ली के अन्दर गति करने वाले सभी पदार्थ परस्पर सम्बद्ध होते हैं ।

न्यूक्लियस और कोशिका परिधि के बीच वाले भाग में जिसे साइटोप्लाज्म कहते हैं, अनेक संरचनाएँ होती हैं । छोटी सघन पहाड़ियाँ माइटोकॉण्ड्रिया और उससे भी छोटे टीले माइक्रोसोक्से मिट्टी के कणों के बने प्रतीत होते हैं । कहीं-कहीं पतले तन्तु गोल्जीबाडीज टेढ़े-मेढ़े ढंग से पड़े लहराते हैं, जिससे हवा का अस्तित्व दर्शन होता है । कुछ कोशिकाओं में दूसरी वस्तुएँ जैसे पिगमेंट, स्टार्च, चर्बी की गोलियाँ बिखरी पड़ी रहती हैं । कोश में ७० प्रतिशत जल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और इन तत्वों को क्रियाशील रखने वाले तापीय कण भी रहते हैं । इस बिन्दु जगत में ही चारों तत्वों के साथ आकाश भी छाया हुआ है । वैज्ञानिक इस सूक्ष्म रचना से दंग रह गये और अपने आपसे पूछने लगे यदि कोशिका ही जीवन संरचना की इकाई है तो क्या उसके कार्य की भी इकाई है ? रक्त परिसंचरण के आविष्कारकर्त्ता विलियम हार्वे ने उसका उत्तर देते हुए कहा था— "हम जो कुछ जानते हैं, वह उसकी तुलना में जो अब भी अज्ञात है, बहुत कम है ।" यह वक्तव्य आज भी उतना ही सत्य है । वैज्ञानिक यह मानते हैं, कोशिका के आकाश में स्थित जगत के सम्पूर्ण अध्ययन के लिए ३३५ वर्ष की अवधि भी बहुत अल्प है । चार्वाक और नीत्से ने तो न जाने कैसे प्रत्यक्ष देहात्मवाद को ही सर्वस्व कह दिया । आज के वैज्ञानिक उसे एक मूर्खतापूर्ण प्रलाप ही कहते हैं ।

शरीर की रहस्यमय विलक्षणताएँ

दृश्यमान शरीर की स्थूल-संरचना तो अन्य प्राणियों जैसी ही है पर उसके अन्तराल में प्रवेश करने पर पता चलता है कि पग-पग पर उसमें विलक्षणताएँ भरी पड़ी हैं । इनके स्वरूप और उपयोग को जाना जा सके तो तिलस्म के वे पर्दे उठ सकते हैं, जिनके भीतर रहस्यमय सिद्धियों के अनन्त भाण्डागार भरे पड़े हैं । काय-कलेवर से प्रजनन क्षमता की सूत्रधार अत्यन्त छोटी इकाई— जीन्स । यह आँख से दृष्टिगोचर न होने वाले शुक्राणुओं और डिम्बाणुओं के अन्तराल में रहने वाले अत्यन्त ही क्षुद्र घटक हैं । इतने पर भी उसकी क्षमता देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । यह नहीं सोचना चाहिए कि हारमोन या जीन्स ही रहस्यमयी क्षमताओं से सुसम्पन्न हैं, सच तो यह है कि पूरी काया ही तिलस्मी रहस्यों से भरीपूरी है । दुर्भाग्य यही है कि हम न तो उसकी सामर्थ्य को समझ पाते हैं और न उसके सदुपयोग का ही साहस जुटाते हैं ।

काया का स्थूल भाग अन्नमय कोश छोटी-छोटी कोशिकाओं (सेल्स) से बना है, जिनके अन्दर एक द्रव्य 'साइटोप्लाज्म' (वसामय पीला-सा द्रव्य) पदार्थ भरा रहता है । इसके बीच में अवस्थित होता है, कोशिका का नाभिक अथवा केन्द्रक (न्यूक्लियस) पुरुष की शुक्राणु कोशिका अथवा नारी की अंडाणु कोशिका के नाभिक में छोटे-छोटे धागे जैसे गुण-सूत्र (क्रोमोसोम) होते हैं । एक नाभिक में इनके २३ या २४ जोड़े होते हैं । इन्हीं से लाखों की संख्या में 'जीन्स' चिपके रहते हैं । नया मनुष्य शरीर के निर्माण तथा उनमें आनुवंशिकीय गुण-धर्मों का विकास इन्हीं पर निर्भर करता है ।

ये जीन्स क्या हैं ? कैसे ये अपनी आश्चर्यजनक भूमिका पूरी करते हैं ? इस रहस्य पर से विज्ञान अभी पर्दा उठा नहीं सका है । उनके सम्बन्ध में बड़ी तेजी से शोध कार्य चल रहे हैं, बहुत-से रहस्य खुले भी हैं, फिर भी वह नहीं के बराबर हैं ।

अभी तक के अध्ययन के आधार पर जीन्स छोटे से विद्युन्मय पुटपाक या पुड़ियाँ (पैकेट) हैं । माना जाता है कि इनकी रचना कई तरह के न्यूक्लियस अम्लों के संयोग से हुई है । उनमें से अभी केवल दो के बारे में जाना जा सका है । वे हैं—(१) डी. एन. ए. (डी ऑक्सी राइबो न्यूक्लिक एसिड), (२) आर. एन. ए. (राइबो न्यूक्लिक एसिड) ।

जीन्स की संरचना के बारे में अभी तक नहीं जाना जा सका है, किन्तु यह जानकारियाँ निश्चित रूप से हो गयी हैं कि शरीर के अंग-प्रत्यंग की विशिष्ट रचना से लेकर अनेक परम्परागत स्वभावों, रोगों तथा गुणों के विकास की आश्चर्यजनक क्षमता इनमें है । इनके गुणों और कार्यकलापों को कैसे नियन्त्रित किया जाय, यह पता विज्ञान अभी नहीं लगा सका है, किन्तु यह माना जाने लगा है कि यदि जीन्स के गुणों और कार्यप्रणाली को प्रभावित किया जा सके, तो आश्चर्यजनक उपलब्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं । यह अन्नमय कोश के छोटे-से घटक एक कोशिका के नाभिक में रहने वाले नगण्य आकार वाले विद्युन्मय पैकेट मनुष्य के आसपास के वातावरण से लेकर उसके विचारों और भावानात्मक विशेषताओं के संस्कार ग्रहण करने में समर्थ हैं ।

मनुष्य के विकास के सम्बन्ध में भारतीय मान्यता यह रही है कि उस पर आनुवंशिकता के साथ-साथ बाह्य वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है । पहले इस मान्यता के प्रति उपेक्षा बरती जाने लगी थी ।

यह स्पष्ट हो गया है कि अपने वातावरण तथा अपनी चेष्टाओं द्वारा व्यक्ति जिन स्वभाव-गुणों को अर्जित करता है, वे वंशानुक्रम से प्राप्त नहीं होते और न ही कोई व्यक्ति उन अर्जित विशेषताओं को वंशानुक्रम द्वारा अपने बच्चों को प्रदान कर सकता है । उदाहरण के लिए यदि एक व्यक्ति ने अनेक भाषाएँ सीखी हैं, तो वह उस भाषा-ज्ञान को अपने बच्चों को वंशानुक्रम द्वारा नहीं दे सकता । बच्चों को भी भाषा ज्ञान की प्रचलित विधियों को ही अपनाना होगा तथा मेहनत करनी पड़ेगी । वहीं दूसरी ओर यह भी स्पष्ट हो गया है कि वंशानुक्रम का निश्चित प्रभाव सन्तान पर पड़ता है । आनुवंशिकीय (जनैटिक्स) का सारा ढाँचा ही इसी आधार पर खड़ा है । यह सही है कि कोई भी व्यक्ति जंगली बेर के बीज बोकर उससे गुलाब के फूलों की आशा नहीं कर सकता । गौरैया के अंडों को सेकर उनमें से मोर के बच्चे कौन निकाल सकता है, लेकिन जिन पौधों के बीज बोए जाते हैं, उनसे उन्हीं जैसे पौधे आखिर क्यों उगते हैं ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चूहों से चूहा और बिल्ली से बिल्ली ही क्यों पैदा होती है ? इसका उत्तर है, आनुवंशिकता अर्थात् नियमित वंश परम्परा, जिनके कारण ही ऐसा होता है । जो वस्तु जिस वंश की होगी, उसका बीज डाले जाने पर वैसा ही फल होगा । आनुवंशिकता में काम करने का ढंग भी शामिल है और चीजों का कद तथा रंग भी । उदाहरण के लिये वया पक्षी को बढ़िया लटकाने वाला घोंसला बनाना किसी को सिखाना नहीं पड़ता है ।

आनुवंशिकता अपने पूर्वजों से मिलने वाली विशेषताओं का ही दूसरा नाम है । वैज्ञानिक जानते हैं कि जीवों में जो विशेषताएँ होती हैं, वे उन्हें माता-पिता से अत्यन्त सूक्ष्म कणों के रूप में मिलती हैं । इन सूक्ष्म कणों को 'जीन' कहा जाता है । हमारा शरीर बहुत-सी कोशिकाओं से मिलकर बना है । 'जीन' कोशिका का ही एक भाग है । अगर किसी वट वृक्ष की शाखा को कहीं उसके अनुकूल स्थान में ले जाकर बो दिया जाए तो वह भी मूल पेड़ की तरह ही फलने-फूलने लगेगी । उसकी कोशिकाओं के 'जीन' अपने पहले के पेड़ की ही भाँति होंगे । ठीक उसी तरह जिस तरह किसी स्पंज के टुकड़े में वैसे ही छिद्र होते हैं जैसे उस स्पंज में थे, जिसमें से कि टुकड़े को तोड़ा गया है ।

अधिकांश पौधों और जीवों की उत्पत्ति नर और मादा से होती है । कुछ 'जीन' नर से और कुछ मादा से मिलते हैं । झरबेरी झाड़ी के बीज गुलाब तो नहीं, लेकिन ऐसा पौधा अवश्य उगा सकते हैं, जिसमें एक की बजाय दो तरह के फूल हों । काली बिल्ली का बच्चा एकदम सफेद हो सकता है । यदि कोई पौधा या जानवर दो तरह की विशेषता के 'जीन' आनुवंशिकता द्वारा प्राप्त करता है और दोनों का प्रभाव बराबर रहता है तो दोनों के मिलने से तीसरी विशेषता उत्पन्न होती है । अगर लाल गाय और सफेद रंग का साँड़ हो तो उनका बछड़ा न तो सफेद होगा न लाल । वह भूरा, यानी दोनों के बीच के रङ्ग का हो सकता है । ऐसा हो जाने के नियम की वैज्ञानिक व्याख्या आनुवंशिकता के सिद्धान्त के आधार पर की जाती है । 'जीन' ही इस आनुवंशिकता के वाहक हैं और आनुवंशिकता की बुनियादी इकाई हैं । अभी तक किये गये परीक्षणों से यही जाना जा सका है कि व्यक्ति की शारीरिक विशेषतायें जैसे रंग, रूप, नेत्र, त्वचा, खून का प्रकार, लम्बाई, ठिगनापन आदि सब ही आनुवंशिक और पितृगत होते हैं । ये शारीरिक गुण भी मात्र माता-पिता से नहीं प्राप्त होते, वरन् वे दादा, परदादा तथा अन्य पूर्वजों से क्रमशः संक्रमित होकर आते हैं । वंशानुगत गुणों में माता-पिता का दाय प्रत्येक गुण में आधा होता है । यानी माँ का एक चौथाई और पिता का एक चौथाई । उनके पूर्व के चार पितरों में प्रत्येक का दाय प्रत्येक गुण का सोलहवाँ भाग होता है अर्थात् चारों पितरों का कुल दाय एक चौथाई भाग होता है । शेष एक चौथाई और पुरानी पीढ़ियों से आते हैं ।

व्यक्ति के संस्कार तो उसके जन्म-जन्मान्तरों की संचित सम्पदाएँ और साधन हैं । किन्तु उसके उपयुक्त उपकरण अन्नमयकोश के निर्माण के घटक जीन्स क्रोमोसोम्स का भी स्वरूप निर्धारण कितनी सूक्ष्मताओं और जटिलताओं के आधार पर होता है, यह आनुवंशिकी की आधुनिक खोजों द्वारा भी स्पष्ट होता है । भारतीय मनीषी इन सूक्ष्मताओं से परिचित थे, तभी वे सुसन्तति के लिये माता-पिता का चरित्रगत, तपस्वी-संयमी होना अनिवार्य बतलाते थे । इन्द्रिय-लिप्साओं की खुजली को शान्त करते रहने की कुचेष्टाओं के साथ सुसन्तति की आकांक्षा करते रहना एक असम्भव कल्पना मात्र है । उसके सफल होने की कदापि कोई भी सम्भावना नहीं है । अन्नमय कोश की इन सूक्ष्मताओं से परिचित होकर अपना जीवनक्रम उस प्रकार व्यवस्थित कर व्यक्ति न केवल सुयोग्य सन्तति के जनक-जननी बनने की क्षमता से, अपितु उन अनेक विशिष्ट क्षमताओं, विभूतियों से सम्पन्न बनता है, जिनसे मनुष्य शरीर की सार्थकता और गरिमा है । अन्नमय कोश की साधना स्वयं की इन क्षमताओं के विकास का ही नाम है ।

आनुवंशिकता का प्रभाव बिल्कुल सीधा और स्थूल नहीं होता । उदाहरण के लिए किसी माता-पिता में से दोनों को या किसी एक को टी. बी. रोग (क्षयरोग) हो तो इसका अर्थ कदापि नहीं कि बच्चे को जन्म से ही टी. बी. क्षयरोग हो, अपितु इसका सिर्फ यह अर्थ है कि बच्चे के शरीर में ऐसी वृत्ति या तत्परता विद्यमान है कि क्षय रोग के कीटाणु शरीर में पहुँचते ही वहाँ जड़ पकड़ लेंगे ।

इसी प्रकार मान लीजिए कि बढ़ई है, जो अपने काम में बड़ा दक्ष है । यह कार्यदक्षता बच्चे में जन्मजात रूप से नहीं उत्पन्न होती । अपितु यदि बच्चे को भी कुशल बढ़ई बनाना है, तो उसे बढ़ईगीरी का काम सिखाना ही होगा । हाँ, उस बच्चे के हाथ ऐसे हो सकते हैं, जिनके द्वारा कि उन औजारों का अधिक अच्छा उपयोग सम्भव हो, जो बढ़ईगीरी के काम आते हैं ।

इसीलिए आनुवंशिकता और पर्यावरण दोनों को समान महत्व दिया जाता है । आनुवंशिकता द्वारा अर्जित गुण नहीं प्राप्त होते । कुछ जन्मजात गुणों का आधार ही आनुवंशिकता माना जाता है । ये जन्मजात गुण वंशानुक्रम के लक्षण कहे जाते हैं । वंशानुक्रम के लक्षण क्रोमोसोमों के आधार पर प्राप्त होते हैं । क्रोमोसोमों में होते हैं—जीन जो व्यक्ति के 'करेक्टरिस्टिक्स' का निर्माण करते हैं ।

'जीन' का व्यवहार या आचरण से सीधा सम्बन्ध नहीं होता । जीन शरीर के ऊतक तथा अंगों के विकास को निर्देशित, नियन्त्रित करते हैं । इस प्रकार वे शरीर की क्रियाशीलता को भी नियन्त्रित करते हैं । शरीर की ये क्रियाएँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्पष्टत: व्यवहार को भी प्रभावित करती हैं और उस रूप में जीन्स का सम्बन्ध व्यवहार से भी होता है । उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति वंशानुक्रम से छोटी टाँगें, ठूँठदार अँगुलियाँ या बहरे कान प्राप्त करता है तो निश्चय ही कुछ क्षेत्रों में उसकी योग्यता सीमित हो जाएगी । इसी प्रकार शारीरिक क्रियाओं में भाग लेने वाले हजारों रासायनिक तत्व भी जीन्स द्वारा निर्धारित होते हैं । जैसे दृष्टि के लिए प्रकाशसंवेदी तत्व यानि रक्त के जमने में कई रासायनिक तत्व योग देते हैं । इन तत्वों की उपस्थिति, सशक्तता या दुर्बलता का सम्बन्ध जीन्स से ही होता है । ऐसे अनेक लक्षण वंशानुक्रम से सम्बन्धित होते हैं ।

वंशानुक्रम के आधारभूत घटकों, जीन्स और क्रोमोसोम्स के अध्ययनों के निष्कर्ष इस तथ्य के द्योतक हैं कि अन्नमय कोश में निर्माण का सूक्ष्म आधार कितना व्यापक और जटिल होता है । पौष्टिक भोजन मात्र से अन्नमय कोश सुदृढ़ नहीं हो जाता । इसके विपरीत अन्नमय कोश की सुदृढ़ता ही भोजन के रस-परिपाक का कारण व आधार बनती है । बढ़िया खाने-पहनने की चिन्ता करते रहने को ही जीवन का पुरुषार्थ मान बैठने वाले अन्नमय कोश के निर्माण के आधारों से अनभिज्ञ रहकर उसे अस्त-व्यस्त और दूषित, विकृत बनाते रहते हैं और भावी सन्ततियों को भी उस विकृति का अभिशाप दे जाते हैं ।

एक जीन्स युग्म शरीर के किसी विशेष 'करेक्टरिस्टिक' के विकास का निर्देश करता है । आँखें भूरी हैं या नीली, बाल घने काले हैं या हल्के स्वर्णिम हैं अथवा लाल, घुँघराले हैं या सीधे, सामान्य बाल हैं या गंजापन है, दृष्टि सामान्य है या रतौंधी ज्यादा होने की सम्भावना है, श्रवण-शक्ति सामान्य है या जन्मजात बहरापन है, रक्त सामान्य है या 'हेमोफीलिया' का दोष है, रंग-बोध स्पष्ट है या वर्णान्धता दोष है, अँगुलियाँ या अँगूठों की सामान्धय है या कम-अधिक है, किसी जोड़ में कोई अँगुली छोटी-बड़ी तो नहीं है, सभी अवयव सामान्य हैं या कुछ अवयव विरूप हैं, आदि सभी शारीरिक 'करेक्टरिस्टिक्स' जीन-युग्मों पर ही निर्भर करते हैं ।

फ्रान्सीसी दार्शनिक मान्टेन को ४५ वर्ष की आयु में पथरी की बीमारी हुई । उसके पिता को यह रोग २५ वर्ष की आयु में आरम्भ हुआ । जबकि मान्टेन के जन्म के समय उसके पिता सिर्फ इक्कीस वर्ष के थे । उस समय उन्हें यह रोग नहीं था, लेकिन उनके जीन्स में इस रोग के आधार विद्यमान थे । मान्टेन की पित्ताशय की पथरी की बीमारी कई पीढ़ियों से चली आ रही थी ।

बालकों का 'गैलेक्टोसीमियाँ' रोग जीन्स से ही सम्बन्धित होता है । वह जीन, जब यूरी डायल ट्रान्सफरे एन्जाइम नहीं बनने देता, तो बच्चे दूध में रहने वाली मिठास गैलैक्टोस को पचा नहीं पाते । फलत: वह खून में जमा होती रहती है और जिगर में इकट्ठी होकर बच्चे का पेट खराब कर देती है तथा मृत्यु का भी कारण बन बैठती है ।

'एक्रोडमे टाइटिस एटेरोपैथिका' नामक रोग का कारण भी मुख्यत: जीन्स की विकृतियाँ ही होती हैं । आँख का कैन्सर—रेटीनो ब्लास्टीमा-जीन्स दोष का ही परिणाम है । जीन्स की 'एक्रोड्रोप्लायिसा' विकृति के कारण बच्चे अविकसित रह जाते हैं । वे जल्दी मरते हैं । बच गये तो भी वंश-वृद्धि में असमर्थ होते हैं । ऐसे दोष वाली महिलाएँ गर्भवती होने पर स्वयं की भी प्राण-रक्षा नहीं कर पाती हैं । बच्चे की जान तो खतरे में होती ही है ।

'राइजोवियम' नामक जीवाणु की जीन को यदि धान, गेंहू, ज्वार-बाजरा आदि फसलों की जड़ों में पलने वाले किसी जीवाणु में प्रत्यारोपित करना सम्भव हो तो इन फसलों के लिए अधिक उर्वरक नहीं खर्च करना पड़ेगा । भारत समेत विश्व भर की आनुवंशिकी प्रयोगशालाओं में इस हेतु प्रयास हो रहा है ।

स्थूल दृष्टि से उपेक्षणीय लगने वाले इस अन्नमय कोश में अतिसूक्ष्म घटक 'जीन्स' के साथ मनुष्य के उत्कर्ष की कितनी धाराएँ, सम्भावनाएँ जुड़ी हैं, इसे देखकर इसके रचयिता उस महान कलाकार की कलाकारी को शत-शत नमन ही करते बनता है । अन्तर में बार-बार यही हूक उठती है कि क्या ही अच्छा होता कि हम इन महत् शक्तियों के जागरण और उपयोग की विधि जान पाते, सीख पाते और अपना पाते ।

प्रत्यक्ष से भी अति समर्थ अप्रत्यक्ष

योग वासिष्ठ में एक महत्वपूर्ण आख्यायिका आती है । लीला नाम की रानी के पति का देहावसान हो जाता है । पति के निधन से वह अत्यधिक दु:खी होती है । तब महर्षि नारद आकर कहते हैं, जिसके लिए तुम विलाप कर रही हो वह इसी तुम्हारे उद्यान में एक नया परिवेश धारण कर चुके हैं । वे लीला को अन्तर्दृष्टि देते हैं, तो वह देखती है कि उसके पति एक कीटक के रूप में विद्यमान हैं । यही नहीं वहाँ भी उनके पास कई रानियाँ हैं, वे उनमें आसक्त से दिखे । वह जिनकी याद में घुली जा रही थी उसे उसकी सुध तक नहीं थी । लीला ने अनुभव किया कि यह माया, मोह और आसक्ति मनुष्य का नितान्त भ्रम और अज्ञान है । उससे भी बड़ा अज्ञान है—मृत्यु की कल्पना । वास्तव में जीव-चेतना एक शरीर से दूसरे शरीर, एक जगत से दूसरे जगत में परिभ्रमण करती रहती है । जब तक वह सत्य लोक या अमरणशील या परमानन्द की स्थिति नहीं प्राप्त कर लेती तब तक यह क्रम चलता ही रहता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उक्त आख्यायिका का तत्वदर्शन बड़े ही महत्व का है । महर्षि वशिष्ठ कहते हैं—

सर्गेसर्गे प्रथग्रूपं सन्ति सर्गान्तराण्यपि ।
तेष्वप्यन्तस्थसर्गौघाः कदलीदलपीठवत् ॥

—योग वासिष्ठ ४/१८/१६-१७

अर्थात्—जिस प्रकार केले के तने के अन्दर एक के बाद एक अनेक परतें निकलती चली आती हैं, उसी प्रकार एक सृष्टि में अनन्त सृष्टियों की रचना विद्यमान है । संसार में व्याप्त प्रत्येक परमाणु में स्वप्न-लोक, छाया-लोक और चेतन जगत विद्यमान हैं, उसी प्रकार उनमें प्रसुप्त जीवन और चेतन समुदाय की सृष्टियाँ ठीक इस दृश्य जगत जैसी ही विद्यमान हैं ।

देखने में यह प्रत्यक्ष जीवन और गति अधिक समर्थ और शक्तिशाली दिखाई देते हैं किन्तु यह अपनी भूल तथा स्थूल दृष्टि मात्र है । यदि अपने ज्ञान-चक्षु जाग्रत हो जाएँ और लीला की तरह अन्तर्सृष्टियों की गतिविधियों, उन अवस्थाओं की समर्थता को समझ पाएँ तो यह पता चलेगा कि शक्ति और सामर्थ्य की दृष्टि से दृश्य-जगत सबसे कमजोर है । उसकी आँखें, कान, नाक, हाथ-पाँव, पेट, आँतों की सामर्थ्य बहुत सीमित है, उससे भी आगे उसका प्रेत या उसका छाया शरीर विद्यमान है । यह अपेक्षाकृत अधिक सामर्थ्यवान है । वह वेद की तरह गतिशील, पहाड़ तक उठा लेने जितना बलवान और निमिष मात्र में सैकड़ों मील दूर की खबर ले आने वाला अन्तर्दृष्टा है । उससे भी आगे की एक और सत्ता है देवसत्ता—समस्त शक्तियों, साधनों और दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण वहाँ न भय है, न ईर्ष्या, न द्वेष और न अभाव । मृत्यु की पीड़ा भी नहीं सताती, प्रियजनों का वियोग भी नहीं रुलाता । सृष्टियों और सृष्टिचरा का यह तारतम्य उस परिपूर्ण अवस्था तक पहुँचा देता है, जहाँ न इच्छाएँ हैं, न वासनाएँ हैं, न जरा है, न व्याधियाँ और न कर्तव्य है । इसे आनन्दमय स्थिति, तुरीयावस्था, साक्षी, दृष्टा परमानन्द की स्थिति कहा गया है । भारतीय दर्शन इस स्थिति को प्राप्त करने की निरन्तर प्रेरणा देता रहता है और उसे ही परम पुरुषार्थ की संज्ञा देता है । यही जीवन लक्ष्य भी माना गया है ।

भारतीय दर्शन के इस सत्य को अब भौतिक विज्ञान भी प्रमाणित करने लगा है । पिछले चालीस वर्षों से चोटी के खगोलज्ञ इस खोज में जुटे हैं कि वह यह जान पायें कि यह सृष्टि और यहाँ के निवासी ही अन्तिम हैं या और भी कोई ब्रह्माण्ड है । इस खोज में अब तक जो निष्कर्ष निकले हैं वे भौतिक दृष्टि को चकमका देने वाले हैं । स्थूल जगत के अन्दर क्रमशः अधिक सूक्ष्म और समर्थ क्षेत्रों की जैसे-जैसे पहचान होती जा रही है वैसे-वैसे आश्चर्य बढ़ता जा रहा है ।

एक के भीतर अनेक सृष्टियों की कल्पना वैसी ही है जैसे जल के भीतर एक और जल । यों सामान्य बुद्धि से परीक्षण करना चाहें या हाथ से अलग करना चाहें तो सामान्य जल से इस भारी जल को अलग नहीं किया जा सकता । अप्रत्यक्ष के अस्तित्व को स्वीकार न करने का कारण यही है कि हम उतनी ही बुद्धि को पूर्ण माने बैठे हैं, किन्तु वैज्ञानिक जब प्रयोगों द्वारा उसका प्रभाव स्पष्ट दिखा देते हैं, तो हमें उस बात को मानने को विवश होना पड़ता है । जल के भीतर जल की बात भी ऐसी ही है । सर्वप्रथम १९३१ में पहली बार जब वैज्ञानिक यूरे ने जल के भीतर 'भारी जल' की उपस्थिति से अवगत कराया तो लोग आश्चर्यचकित रह गए । इसे समझने के लिए पानी की पारमाणविक रचना समझना आवश्यक है । पानी का एक अणु, हाइड्रोजन के दो और ऑक्सीजन के एक परमाणु के संयोग से बनता है । सामान्य जल तथा भारी जल में अन्तर हाइड्रोजन के हल्के और भारी होने से पड़ता है । हाइड्रोजन संसार का सबसे हल्का तत्व है, क्योंकि उसके नाभिक (न्यूक्लियस) में एक ही प्रोटान और एक इलेक्ट्रॉन होता है । 'न्यूट्रॉन' नहीं होता किन्तु जब उसमें एक अतिरिक्त प्रोटान व एक न्यूट्रॉन भी आ जाता है—तो यही जल अणु भारी जल हो जाता है और उसकी विशेषताएँ हजार गुना अधिक बढ़ जाती हैं ।

इसे सामान्य जल का सार कह सकते हैं तभी तो ६५०० किलोग्राम पानी में से उसका कुल १ किलोग्राम अंश ही मिलता है, किन्तु महत्वपूर्ण इतना है कि जितना सामान्य जल १०० डिग्री सेन्टीग्रेड पर उबलने लगेगा और शून्य पर जमकर बर्फ हो जाएगा, किन्तु भारी जल १०१·४ डिग्री सेन्टीग्रेड पर उबलता और शून्यावस्था से पूर्व ही अर्थात् ३·८ डि. सेन्टीग्रेड पर ही जम जाता है । एक लीटर सामान्य जल का बजन जहाँ मात्र एक किलोग्राम होता है वहाँ भारी जल ११०० ग्राम अर्थात् १ किलो १ सौ ग्राम होता है । काम तो यह उससे भी महत्वपूर्ण करता है । अभी यूरेनियम के विखण्डन की तकनीक का पूरी तरह विकास नहीं हुआ । अतएव जहाँ भी अणु रिएक्टर हैं वहाँ 'मन्दक' और 'शीतक' का प्रयोजन यही जल पूरा करता है । इसकी १८० मीट्रिक टन मात्रा से २०० मेगावट शक्ति की विद्युत पैदा की जाती है ।

प्रसिद्ध डच व्यापारी एन्टानवान लीवेन हाक को शीशों के कोने रगड़-रगड़कर उनके लेन्स बनाने का शौक था । एक बार उसने एक ऐसा लेन्स बना लिया जो वस्तुओं की आकृति २७० गुना परिवर्द्धित दिखा सकता था । उसने इस लेन्स की सहायता से जब पहली बार गन्दे पानी को देखा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१.८ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

तो उसमें लाखों की तादाद में कीटाणु दिखाई दिए । उसके मन में जिज्ञासा जाग्रत हुई, फलस्वरूप अब उसने शुद्ध जल का निरीक्षण किया । उसने यह देखा कि वहाँ भी जीव विद्यमान हैं और वह न केवल तैर रहे हैं अपितु अनेक सूक्ष्म से सूक्ष्म और बुद्धिमान प्राणी की तरह क्रीड़ाएँ भी कर रहे हैं, वह इस दृश्य से इतना अधिक आविर्भूत हो उठा कि उसने अपनी पुत्री मारिया को भी बुलाया और दोनों घण्टों इस कौतूहलपूर्ण दृश्य को अवाक् देखते रहे । अब तो उससे अनेक गुना शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शी बन गये हैं और उनसे दृश्य जगत के निर्माण के आधार परमाणुओं का विस्तृत अनुवीक्षण, अन्वेषण और अध्ययन भी सम्भव हो गया है । ब्रह्माण्डों के भीतर अनन्त ब्रह्माण्डों की, पदार्थ में विलक्षण अपदार्थ और परम पदार्थ की उपस्थिति जानने के लिए विश्व ब्रह्माण्ड की ईंट परमाणु की अन्तर्रचना का अध्ययन आवश्यक है ।

परमाणु की लघुता को नापना हो तो कोई न कोई सापेक्ष सिद्धान्त ही अपनाना पड़ेगा । उदाहरण के लिए एक काँच के गिलास में भरे पानी के परमाणुओं को यदि बालू के कण के बराबर मान लिया जाए तो गिलास की समस्त बालू अटलाण्टिक महासागर में डाल देने से वह पट कर एक खेल का लम्बा-चौड़ा मैदान बन जाएगा । परमाणु पदार्थ की अत्यन्त लघुतम इकाई है । यदि २५ करोड़ परमाणुओं, २५ करोड़ सैनिकों की एक हथियार बन्द सेना मानकर उन्हें एक पंक्ति में 'फालेन' होने का आदेश दिया जाए तो उनके लिए १ इन्च भूमि पर्याप्त है । यह अंश भार में इतना क्षुद्र होता है कि हाइड्रोजन के एक परमाणु का भार कुल १/१० ०००००००००००००००००००००००००० ग्राम से भी कम होगा, किन्तु इनकी शक्ति बहुत अधिक होती है, उसकी कल्पना करना भी कठिन है ।

परमाणु पदार्थ का सबसे छोटा टुकड़ा होता है, इसके स्वरूप को देखना हो तो अपनी आँख और बुद्धि को १ इन्च के २० करोड़वें भाग से भी अधिक सूक्ष्म करना पड़ेगा । यदि किसी शक्तिशाली सूक्ष्मदर्शी से देखा जाए तो इस परमाणु के भीतर भी एक व्यवस्थित सृष्टि मिल जाती है । यह आश्चर्य की बात है कि परमाणु भी पोला होता है । उसके बीचों-बीच केन्द्रक और नाभिक के अतिरिक्त शेष भाग खाली पड़ा रहता है । केन्द्रक और खाली पड़े स्थान की अलग-अलग माप करनी हो, तो सापेक्ष गणना करनी पड़ेगी । यदि न्यूक्लियस या केन्द्रक को गेंद के बराबर मान लें, तो परमाणु का शून्य आकाश २००० फीट व्यास के घेरे जितना अर्थात् १०' × २०' साइज के १० बड़े कमरों के बराबर होगा ।

अभी तो इनमें और भी कई गुण विद्यमान हैं, न्यूट्रॉन, प्रोटॉन, पाजिट्रॉन आदि इनकी संख्या लगभग प्रमुख ३० तक तथा अन्य लगभग २०० हैं । प्रत्येक पदार्थ इन अधोपारमाणविक कणों (सब-एटामिक पार्टिकल) से बने होते हैं । इनकी संख्या किसी में कम किसी में अधिक होती है । उसी के अनुसार वे हल्के व्र भारी होते हैं । यह तत्व भी एक से अधिक हो सकते हैं । हाइड्रोजन के परमाणु में केवल १ प्रोटॉन और १ ही इलेक्ट्रॉन होता है । इसलिये वह विश्व का सबसे हल्का तत्व है । इसमें न्यूट्रॉन नहीं होते । हाइड्रोजन के बाद हीलियम आती है, इसमें प्रोटॉन और इलेक्ट्रानों की संख्या तो एक-एक बढ़ी ही साथ ही न्यूट्रान भी दो बढ़ जाते हैं । तत्वों में इन अणुओं के बढ़ने का क्रम इसी तरह बढ़ता रहता है । प्राकृतिक रूप से उपलब्ध यूरेनियम जो अब तक का सबसे भारी तत्व माना जाता है में ९२ प्रोटॉन, १४६ न्यूट्रॉन तथा ९२ इलेक्ट्रॉन होते हैं । प्रोटॉन धन आवेश और इलेक्ट्रॉन ऋण विद्युत आवेश होता है । इनकी संख्या परमाणु में समान होती है । इसीलिये प्रत्येक कण में विद्युत ऊर्जा होते हुए भी उसका प्रभाव व्यक्त नहीं होता ।

इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि कण अत्यधिक वेग वाले होते हैं, किन्तु फिर भी इनकी गति प्रकाश की गति से कम होती है । डॉ० सुदर्शन तथा टैक्सास यूनिवर्सिटी अमेरिका के उनके सहयोगी डॉ० बिलानिडक ने ऐसे कणों को टार्डियान की संज्ञा दी है । इन कणों में द्रव्य भार शून्य से कुछ अधिक मात्रा में विद्यमान रहता है, किन्तु इससे भिन्न प्रकार के कुछ कण वह होते हैं, जिनमें द्रव्य भार बिल्कुल नहीं होता, किन्तु जिनकी गति प्रकाश की गति १,८६,००० मील प्रति सैकिण्ड या २९९९२.५ किलोमीटर प्रति सैकिण्ड होती है । इन्हें 'लक्सान' कहा जाता है । इस वर्ग में प्रोटान, न्यूट्रिनो तथा ग्रेवीटोन आते हैं ।

'टेकियान' इन दोनों में भी भिन्न कोटि के कण हैं । इनमें या तो भार नाम की सत्ता है ही नहीं या है भी तो नाम मात्र के लिए, किन्तु इनकी गति प्रकाश की गति से भी बहुत अधिक होती है और अब यह माना जाने लगा है कि जिस दिन इस वर्ग के कणों की खोज सम्भव हो गई उस दिन सारा ब्रह्माण्ड नंगी आँखों से दिखाई देने वाला एक नन्हा-सा क्षेत्र रह जायेगा । अर्थात् उस दिन मानवीय चेतना का अस्तित्व अत्यधिक विराट हो जाएगा ।

इस परिकल्पना के कुछ ठोस आधार हैं इलेक्ट्रॉन और पाजिट्रॉन जो कि टार्डियान किस्म के पारमाणविक कण हैं, परस्पर मिलने पर गामा किरणें पैदा करते हैं । इन किरणों में प्रकाश की गति होती है । अतएव वे 'लक्सान' वर्ग में आ जाती हैं । अब यदि 'लक्सान' के घटक न्यूट्रिनो व ग्रेवीटोन आदि मिलकर कोई नई रचना प्रस्तुत करते हैं तो वह निस्संदेह 'टेकियान' वर्ग का तत्व होगा और उसे एक ब्रह्माण्ड से दूसरे ब्रह्माण्ड के छोर तक पहुँचने में कुछ सैकिण्ड ही लगेंगे, जबकि प्रकाशकणों को वहाँ तक पहुँचाने में शताब्दियाँ लग जाती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परमाणु के भीतर के इन कणों से विनिर्मित सृष्टि बहुत महत्वपूर्ण तथा एक स्वतंत्र भूखण्ड ही प्रतीत होता है, जिसमें नाभिक सूर्य की तरह चमकता है, इलेक्ट्रॉन तारों की तरह चक्कर लगाते हैं, न्यूट्रॉन और प्रोटॉनों में पहाड़, नदी, नद, वृक्ष - वनस्पति आदि के अद्भुत अनोखे दृश्य दिखाई देते हैं ।

जो सशक्त है वह सूक्ष्म है

जो सशक्त है वह सूक्ष्म है, स्थूल तो उसका आवरण है । काया को हम देख पाते हैं और मनुष्य को उसके कलेवर के रूप में ही पहचानते हैं, पर असली चेतना तो प्राण है जो न तो दिखाई पड़ता है और न उसका स्तर सहज ही समझ में आता है । जो सूक्ष्म है वही शक्ति का स्रोत है, उसे समझने और उपभोग करने के लिये अधिक गम्भीर और वेधन दृष्टि चाहिये । उसका उपयोग करने तथा उससे लाभान्वित होने के लिये तो और भी अधिक पैनी दृष्टि चाहिये ।

छोटे-से बीज में वृक्ष का विशालकाय कलेवर छिपा रहता है, एक शुक्राणु में मनुष्य का सारा ढाँचा पूरी तरह सन्निहित है, अणु की नगण्य सत्ता में एक पूरे सौरमण्डल की प्रक्रिया पूरी तरह विद्यमान है । यह सब जानते हुए भी हम 'सूक्ष्मता की शक्ति' से एक प्रकार अपरिचित ही बने हुए हैं ।

चिकित्सा पद्धतियों में से सूक्ष्मता पर अवलम्बित एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया होम्योपैथी की है । उसमें विष को विष से मारने की—काँटे से काँटे निकालने की—शठेशाठ्यां समाचरेत् की नीति को मान्यता दी गई है, साथ ही यह भी प्रतिपादन किया गया है कि वस्तु के स्थूल कलेवर में जितनी सामर्थ्य है उसकी अपेक्षा उसके अन्तराल में सन्निहित सूक्ष्म शक्ति की गरिमा अत्यधिक है । चिकित्सा में काम आने वाली औषधियों के बारे में भी यही बात है, उन्हें मोटे रूप में सेवन किया जाय तो स्वल्प गुण दिखावेंगी, किन्तु यदि उन्हें अति सूक्ष्म बनाकर सेवन किया जाय तो उसी पदार्थ की सामर्थ्य अनेक गुनी बढ़ जायेगी और अपना चमत्कारी प्रभाव प्रस्तुत करेगी । होम्योपैथी को एक प्रकार से सूक्ष्मता की शक्ति का प्रतिपादन ही कहना चाहिये ।

अर्गेनन सूत्र २६९, २७० में होम्योपैथी चिकित्सा के आविष्कारक डॉ० हैनीमैन ने बताया है कि होम्योपैथी औषधियों के निर्माण का सिद्धान्त यह है कि उनके अन्दर जो अदृश्य सूक्ष्म महाशक्ति है उसे जगाया जाए ताकि वह अदृश्य रोग शक्ति से ग्रसित जीवनीशक्ति (वायटैलिटी) को रोग मुक्ति करने में सहायक हो सके ।

पदार्थों के अन्दर यह जो अदृश्य सूक्ष्म शक्ति है, वह उसकी चेतना और संस्कार है । हम नहीं जानते पर यह सत्य है कि आज का रोग हमारे कल के मानसिक विकार का ही परिणाम होता है । रोग को औषधियाँ तब तक ठीक नहीं कर सकतीं, जब तक उन विकारों को नष्ट न किया जाए । औषधियाँ तेजी से तात्कालिक आराम पहुँचा सकती हैं पर उनके स्थूल गुण स्थूल रोग को ही दबा सकते हैं । दबे हुये दोष फिर नए रोगों के रूप में फूट पड़ते हैं और जब तक रोग शारीरिक कष्ट के रूप में उभरकर न आएँ, तब तक मनुष्य के मन में अशान्ति उत्पन्न किया करते हैं ।

होम्योपैथी के डॉक्टरों ने विभिन्न पदार्थों के गुणों का विभिन्न देश, जाति, वर्ण और आयु के लोगों में प्रयोग किया और उनके गुणों का अध्ययन कर उन्हें औषधि के रूप में प्रस्तुत किया । यह एक जटिल प्रणाली है तो भी उन औषधियों के निर्माण की जो विधि और प्रभाव है, उससे सूक्ष्म संस्कारों की महत्ता ही प्रतिपादित होती है ।

'औरम मिटैलिकम' एनाकार्डियम प्लैटिना, इन्नोशिया आदि औषधियाँ कई तरह के मानसिक लक्षण भेद का प्रतीक हैं, उसकी सूक्ष्म और नाभिकीय शक्तियों को जाग्रत करने के लिये होम्योपैथी औषधि निर्माताओं को दीर्घकालीन परिश्रम करना पड़ता है ।

उदाहरण के लिए 'औरम मिटैलिकम' बनाते समय सोने के एक टुकड़े को अच्छी तरह खरल करके बहुत बारीक चूर्ण बना लेते हैं । चूर्ण बनाते समय उसमें दूध और शक्कर मिलाकर उसकी अच्छी तरह घोटाई की जाती है । उस विचूर्णित स्वर्ण की एक रत्ती मात्रा को ४०० बूँद परिश्रम जल (डिस्टिल्ड वाटर) तथा १०० बूँदें रेक्टीमाइड अल्कोहल के साथ डालकर मिला लेते हैं, यह एक शक्ति 'पौटैसी' की औषधि हुई ।

तीनों वस्तुओं के घोल में १ रत्ती सोना था, अब उस पूरे घोल का कुल १ बूँद लिया । उसमें स्वर्ण की मात्रा १ रत्ती के सौगुने से भी कम होगी, उस एक बूँद में १०० बूँद अल्कोहल मिलाकर फिर हिलाते हैं । यह २ शक्ति पौटैसी की औषधि हुई । इसमें से एक बूँद औषधि १०० बूँद अल्कोहल लेकर फिर मिलाया यह तीन पौटैसी हुई । इसी प्रकार औषधि की सूक्ष्म शक्ति को कई लाख पौटैसी तक ले जाते हैं और जब वह औषधि किसी रोगी व्यक्ति को दी जाती है तो उसमें तीव्र हलचल उत्पन्न कर देती है । पिछले दोषों को उभार देती है, जैसे-जैसे रोग के लक्षण उभरते रहते हैं तब तक अनुभूत औषधियाँ दी जाती रहती हैं । समय तो लगता है पर उससे जीवनीशक्ति पर लगे जन्म-जन्मान्तरों के दोषों का शमन हो जाता है । ऐसा हर होम्योपैथी चिकित्सक का विश्वास है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

१.१० दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

यह चिकित्सा पद्धति हमारा ध्यान पदार्थों की सूक्ष्म सत्ता के अस्तित्व और उसकी महान महत्ता की ओर खींचती है । यदि पदार्थों और जीवनीशक्ति के सूक्ष्म अस्तित्व की बात का ज्ञान हो जाए तो मनुष्य न केवल अपने बल्कि अपने जीवन और अपनी आत्मा का भी उद्धार कर सकता है ।

डॉ० हैनीमैन की तरह ही पदार्थों की सूक्ष्म शक्तियों के आधार पर डा० शुकालर ने भी बायोकैमी के सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हुए अपनी चिकित्सा पद्धतियों का विवेचन किया तो उनका मजाक उड़ाया गया और विरोध किया गया । भला बाल की नोंक से भी बहुत कम मात्रा में दी गई औषधि भी किसी पर कुछ असर कर सकती है ? उतने भर से क्या किसी के कठिन रोग का निवारण हो सकता है ?

एक दिन कार्लवोन नागेली के हाथ से एक लीटर भाप से उड़ाए हुए एक लीटर पानी में ताँबे के संयोगवश चार पैसे गिर गए । उस पानी को ऐसे ही उसने बगीचे के स्पाइरोगिर पौधों में डाल दिया । आश्चर्य यह कि वे पौधे कुछ ही मिनटों में मर गए । आखिर पानी में ऐसा क्या विष मिल गया जो इतनी जल्दी इतने पौधे समाप्त हो गए । देखा तो उसमें चार ताँबे के पैसे जरूर पड़े थे । पर उससे क्या, पैसों में तो कोई विष नहीं होता फिर उतने सारे पानी में इतने कम ताँबे का ऐसा क्या असर होता है—फिर ताँबा कोई विष भी तो नहीं है, जो हो, इस सन्दर्भ में अधिक शोध करना आवश्यक समझा गया । प्रयोगों और विश्लेषणों से यह पाया गया कि अधिक और स्थूल मात्रा की अपेक्षा स्वल्प और सूक्ष्म मात्रा की शक्ति कम नहीं होती वरन् प्रकारांतर से वह और भी अधिक बढ़ जाती है ।

डॉ० शुक्रालर अपनी 'टिशू रेमिडीज' चिकित्सा पद्धति के द्वारा यही प्रतिपादन करते रहे कि मात्रा की सूक्ष्मता में शक्ति की गुणन प्रक्रिया चलती है । फलस्वरूप अधिक शक्ति के लिए अधिक सूक्ष्मीकरण की बात सही ठहरती है ।

रसायनशास्त्री लीविंग ने यह सिद्ध किया कि रुग्ण शरीर के तन्तुओं का घनत्व इतना बढ़ जाता है कि उनमें औषधियों का अन्तः प्रवेश कठिनाई से ही हो पाता है । पर यदि अजैव लवणों को उनके प्राकृत रूप में उपयोग किया जाय तो उनकी वेधकता तन्तुओं को प्रभावित कर सकती है । अणुओं के अलग-अलग होने की स्थिति में—अधिक सूक्ष्म होने की स्थिति में वे इस योग्य रहते हैं कि सघनता का वेधन करके प्रभावशाली परिणाम प्रस्तुत कर सकें ।

शरीर में जिस अनुपात में जो वस्तु है उससे न्यून अनुपात का पदार्थ यदि सेवन किया जायगा तो उसे शरीर में प्रवेश करने का अवसर मिल जायगा । किन्तु यदि उसका गाढ़ापन अथवा घनत्व अधिक होगा तो शोषक छिद्र उसे आत्मसात करने में असमर्थ रहेंगे । दूध के एक क्वार्ट में एक ग्रेन का छः लाखवाँ भाग ही लौह होता है । बच्चे आधा प्वाइण्ट दूध पीकर आवश्यक मात्रा में लौह प्राप्त कर लेते हैं । शरीर में क्लोरीन की मात्रा लोहे से भी कम है । यदि क्लोरीन या लोहे की स्थूल मात्रा दी जाय तो वह कितने ही कम होने पर भी शरीर के अनुपात से कहीं अधिक होगी और उसका दबाव बुरा प्रभाव उत्पन्न करेगा ।

संसार भर में रेडियम धातु कठिनाई से ४-५ औंस होगी, पर उतने से ही संसार भर के चिकित्सा तथा दूसरे प्रयोजन पूरे किए जाने की योजनाएँ बन रही हैं । रेडियम से निरन्तर निकलने वाला विकरण अन्ततः समाप्त होगा ही, पर इसमें अब से २५ हजार वर्ष लगेंगे, तब कहीं वह शीशे के रूप में ठण्डा हो पाएगा । यही बात धरती पर पाये जाने वाले यूरेनियम के सम्बन्ध में है । उससे भी विकरण निकलता है । समाप्त तो उसे भी होना है, वह भी ठण्डा होकर शीशा ही बन जायगा पर उसमें आठ अरब वर्ष लगेंगे । सूक्ष्मता की क्षमता और अवधि कितनी व्यापक और दीर्घकालीन हो सकती है, इसका अनुमान रेडियम और यूरेनियम धातुओं के क्रिया-कलाप को देखकर लगाया जा सकता है ।

परमाणु ऊर्जा की प्रतिक्रिया पर वेकुरेल, रदरफोर्ड, सौरी, क्यूरी आदि अनेकों मूर्धन्य वैज्ञानिक प्रकाश डाल चुके हैं और कहते रहे हैं—अणु शक्ति मूल इकाई नहीं है वह जिनके संयोग से बनती है वे एल्फा, बीटा और गामा किरणें ही वस्तुतः शक्ति के मूलभूत उद्गम हैं । अणु संचालन अपने आप में स्थूल भी है और परावैलम्बी भी, उसका उद्गम केन्द्र इन तीन किरणों में है । यदि उन पर नियन्त्रण किया जा सके तो अणु शक्ति से असंख्य गुनी शक्ति करतलगत की जा सकती है ।

हमारी स्थूल बुद्धि केवल दृश्यमान स्थूल पदार्थों को ही देख पाती है और उनका मोटा मूल्यांकन करके मोटा उपयोग ही समझ पाती है । फलतः सम्बन्धित व्यक्तियों एवं पदार्थों से हम बहुत मोटा-सा ही लाभ ले पाते हैं । कदाचित उनकी सूक्ष्म शक्ति को समझें और उनसे निःसृत होने वाली चेतना एवम् प्रेरणा को समझें तो हर प्राणी और हर पदार्थ हमें इतना अधिक अनुदान दे सकता है कि सिद्धियों और विभूतियों की किसी प्रकार कमी न रहे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वैभव गरिमा का आधार

किसी का वैभव बड़प्पन देखकर उसकी गरिमा का मूल्यांकन करना अवास्तविक है । गरिमा उत्कृष्टता में छिपी रहती है, क्योंकि सशक्तता उसी के साथ जुड़ी रहती है । सूक्ष्म जगत में प्रवेश करने पर भौतिकता का कलेवर नहीं रहता, पर इससे शक्ति में कोई कमी नहीं आती वरन् वह आवरण का भार हल्का हो जाने पर और भी अधिक क्षमता सम्पन्न बनती जाती है ।

अध्यात्म सूक्ष्मता का विज्ञान है । उसमें पदार्थ के विस्तार को नहीं गुणों की तेजस्विता को महत्व दिया गया है । आन्तरिक उत्कृष्टताएँ आँखों से दृष्टिगोचर नहीं होतीं तो भी उनका प्रभाव कितना अधिक होता है, इसे सहज ही जाना जा सकता है । विचारवान इसीलिए विस्तार की अपेक्षा सूक्ष्मताजन्य प्रखरता को ही महत्व देते हैं ।

'अधिकस्य अधिकं फलम्' की उक्ति बहुत मोटी बातों में ही सही सिद्ध होती है । सूक्ष्म प्रयोजनों में स्वल्प का ही महत्व बढ़ता जाता है । दृश्य जगत क्या है ? पदार्थों का समुच्चय । पदार्थ क्या हैं, यौगिकों तत्वों और परमाणुओं का समन्वय । परमाणु क्या है—विद्युत बिन्दुओं का संगठन । इन विद्युत बिन्दुओं, इलेक्ट्रॉन, प्रोटानों की भी गहराई अभी खोजी जा रही है । दृश्य जगत वस्तुतः उन विद्युत बिन्दुओं से आरम्भ होता है, जो कहने-सुनने में सरल किन्तु देखने-अनुभव करने में अत्यन्त छोटे कलेवर के कारण अति कठिन हैं ।

हमारे शरीर के जीवाणु बहुत ही छोटे हैं । उनकी शोषण शक्ति भी उनके कलेवर के अनुरूप ही स्वल्प है । उनमें प्रवेश कर सकने वाले पदार्थ इतने छोटे होने चाहिए जो इन शरीरगत जीवाणुओं, कोशाओं के भवन में आसानी से प्रवेश पा सकें । आहार में प्राकृतिक रूप से हर जीवनोपयोगी पदार्थ बहुत ही छोटे अंशों में विद्यमान रहता है । इसलिए वे पचकर शरीर में घुल-मिल जाते हैं, पर यदि उन्हें सघन रूप से लिया जाय तो उनके मोटे कण चूर्ण-विचूर्ण होने में बहुत समय और श्रम लेंगे और तब कहीं कठिनाई से थोड़ी मात्रा में हजम होंगे । यही कारण है कि शाक-भाजी, अन्न, दूध में अत्यन्त स्वल्प मात्रा में मिले हुए क्षार और खनिज हमारे शरीर में घुल जाते हैं, किन्तु उन्हीं पदार्थों को यदि गोलियों के रूप में खाया जाय तो उनका बहुत छोटा अंश ही शरीर को मिलेगा, बाकी स्थूल होने के कारण बिना पचे ही मल मार्ग से निकल जाएगा ।

हाइड्रोजन परमाणु का एक इलेक्ट्रॉन अपने केन्द्र के चारों ओर एक सैकिण्ड में ६,००० खरब चक्कर काटता है । परमाणु की रचना सौरमण्डल के सदृश्य है, उनके भीतर विद्युत कण भयंकर गति से घूमते हैं, फिर भी उसके पेट में बड़ा-सा आकाश भरा रहता है । परमाणुओं के गर्भ में चल रही भ्रमण-शीलता के कारण ही इस संसार में विभिन्न हलचलें हो रही हैं । यदि वे सब रुक जायें तो आधा इन्च धातु का वजन तीस लाख टन हो जायगा और सर्वत्र अकल्पनीय भार भरी जड़ता दिखाई पड़ेगी ।

वजन की दृष्टि से कौन वस्तु भारी और कौन हल्की है ? इस आधार पर उसकी गरिमा का मूल्यांकन नहीं हो सकता । चट्टान बहुत भारी है किन्तु उसका मूल्य हीरे के एक छोटे-से टुकड़े के बराबर नहीं होता । सबसे हल्का हाइड्रोजन अणु—अन्य भारी समझे जाने वाले अणुओं की तुलना में कम नहीं अधिक ही महत्व प्राप्त कर रहा है ।

बड़े पदार्थ अणुओं का एक विशाल रूप होता है, इसमें कलेवर भर का विस्तार होता है । प्रत्येक कण को अपना स्वतंत्र अस्तित्व और प्रभाव प्रकट करने का अवसर नहीं मिलता । वे यदि अलग-अलग होकर अपनी मूल सत्ता को प्रकट कर सकने की स्थिति में होते हैं तो आश्चर्यजनक प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं । इसी प्रकार नमक का एक करोड़वाँ भाग भी अपना आश्चर्यजनक काम करता है ।

आहार और चिकित्सा में सूक्ष्मता को महत्व मिलना चाहिये । इस तथ्य पर विज्ञानवेत्ता बहुत समय से प्रकाश डाल रहे हैं । सूक्ष्मता के विशेष शोधकर्ता डच विज्ञानी प्रो० डांडर ने एक बार डार्विन को लिखा था—एट्रोपिन की एक ग्रेन का लाखवाँ हिस्सा भी आँखों पर प्रभाव डालता है । इस प्रकार का डार्विन ने स्वयं का अपना अनुभव प्रो० डांडर को लिखा था—अमोनिया की १ ग्रेन का एक करोड़ चालीस लाखवाँ हिस्सा शरीर की ग्रन्थियों द्वारा ग्रहण करने पर आंत्रवाहक स्नायुओं में तेज झटका मारते हुए उन्होंने देखा है ।

एक पाव दूध में एक ग्रेन का छः लाखवाँ अंश जितना स्वल्प लोहा होता है, पर इतने से ही बच्चे के शरीर की लौह आवश्यकता पूरी हो जाती है । यदि इसी लोहे को गोली या सुई के रूप में दें तो उससे वैसा पोषण प्राप्त न हो सकेगा । शरीर में फ्लोरीन तो लोहे से भी कम है । उसकी आवश्यकता पूरी करने के लिए आहार या औषधि में उसी स्वल्प अनुपात में विरल अणुओं के रूप में वह तत्व होना चाहिये, तभी कोशाओं की वह आवश्यकता पूरी हो सकेगी । लोहा या फ्लोरीन बड़ी मात्रा में देकर शरीर का हित नहीं अहित ही किया जा सकता है । वह बड़ी मात्रा में हजम न होकर अनावश्यक भार डालने के बाद मल द्वारों से बाहर निकल जायेगी ।

पानी में हजारवें भाग के रूप में घुला दालों का ग्लूटिन हाइड्रोक्लोरिक एसिड आसानी से पच जाता है, पर जब वही अधिक मात्रा में होता है तो निरर्थक चला जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बात को और भी अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिये यह स्मरण करना चाहिये कि एक क्यूबिक इन्च के १२०००००००वाँ भाग आकार का एक लाल रक्ताणु होता है । एक बूँद खून में इस तरह के प्राय: तीन लाख अणु होते हैं, वे ही खनिजों, क्षारों तथा अन्य रसायनों को अपने ऊपर लादे सारे शरीर में ढोते-फिरते हैं । इन पर कितनी हल्की और विरल वस्तु लद सकती है इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है और खाद्य पदार्थों में सूक्ष्मता के सिद्धान्त की उपयोगिता समझी जा सकती है ।

मनुष्य की स्वयं की पूर्णसत्ता बीज रूप में कितनी छोटी होती है । यह जानने के लिये हमें शुक्राणु के आकार पर विचार करना होगा । गर्भाधान के समय उसका आकार एक क्यूबिक मिलीमीटर का दस लाखवाँ भाग मात्र होता है । उसी के भीतर शारीरिक और मानसिक दृष्टि से एक पूर्ण मानव उकड़ू-मुकड़ू बनकर बैठा रहता है । इस सारी दुनिया में प्राय: ५ औंस रेडियम होने का अनुमान लगाया गया है; पर इतने से ही उसकी महत्वपूर्ण आवश्यकता अगले २५ हजार वर्ष तक मजे से पूरी होती रहेगी ।

मोटी बुद्धि विस्तार को देखकर ही प्रभावित होती है । उसे यह पता नहीं होता कि काया की विशालता का कोई मूल्य नहीं, जीवन तो नापतौल में न आ सकने वाली अकिंचन-सी चेतना का है । वह चेतना ही इतने बड़े शरीर यंत्र के अगणित कलपुर्जों का संचालन करती है और जब वह शिथिल पड़ जाती है तो शरीर लड़खड़ा जाता है और विलग हो जाने पर वही शरीर तत्काल सड़-गलकर नष्ट होने लग जाता है ।

प्रकाश रश्मियों की लम्बाई एक इन्च के सोलह से तीस लाखवें हिस्से के बराबर होती है । रेडियो पर सुने जाने वाली ध्वनि-तरंगों की गति एक सैकिण्ड में एक लाख छियासी हजार मील की होती है, वे एक सैकिण्ड में सारी धरती की सात परिक्रमा कर लेती हैं । शब्द और प्रकाश की तरंगों का आकार एवं प्रवाह इतना सूक्ष्म एवं गतिशील है कि उन्हें बिना सूक्ष्म यंत्रों की सहायता के हमारी इन्द्रियाँ अनुभव नहीं कर सकती हैं ।

इस सूक्ष्मता की चरमसीमा तक पहुँचते हैं तो उपनिषद्कार की भाषा में हम विद्युत ब्रह्म की सीमायें छूने लगते हैं । परमाणु सत्ता के अन्तर्गत काम करने वाले विद्युत बिन्दुओं की ओर ही यह संकेत है । बृहदारण्यक उपनिषद् का ऋषि ५/७/१ में कहता है—**'विद्युद्धये ब्रह्म'** यह विद्युत ब्रह्म है ।

चर्म-चक्षुओं से दीख पड़ने वाले वैभव, विस्तार का मूल्य बढ़ा-चढ़ाकर मानने की स्थूल बुद्धि प्राय: धोखा खाती है । गहराई से तलाश करने से पता चलता है कि महत्व विस्तार का नहीं उसमें सन्निहित सूक्ष्म क्षमता का है । मनुष्य के धन, बल, पद, ज्ञान आदि के आधार पर नहीं, उसकी आन्तरिक स्थिति को देखकर ही यह समझा जा सकता है कि वह कितना समर्थ और कितना मूल्यवान है ?

अति विलक्षण चेतना अर्थात् सूक्ष्म की सत्ता

जीवन की सूक्ष्मतम सत्ता बड़ी विलक्षण और रहस्यपूर्ण है, अब तक ऐसी सूक्ष्म जीवन की इकाई का पता नहीं लगाया जा सका, जो अन्तिम (एब्सोल्यूट) और शाश्वत (इम्पार्शिअल) हो । किन्तु उसका पता लगाते-लगाते वैज्ञानिकों ने जिन सूक्ष्मताओं का पता लगा लिया है, वह भी कम आश्चर्यजनक नहीं है ।

वैज्ञानिकों के संसार में जीवन की जिन सूक्ष्मतम इकाइयों का पता चल पाया है, उनमें से 'डायटम' सबसे छोटा होता है, किन्तु इसमें भ्रमात्मक प्रक्रिया है । 'डायटम' को कुछ वैज्ञानिक जीवाणु मानते हैं, कुछ उसे वनस्पति जगत का सबसे छोटा कोश (सेल) मानते हैं । इसके बाद सबसे सूक्ष्म इकाई विषाणु (वायरस) है, यह इतना छोटा होता है कि अब तक खोजे गये लगभग ३०० वायरसों में से पोलियो वायरस के १०००००००००००००००० कण केवल एक छोटी-सी पिंगपौंग की गेंद में आ जायेंगे । विषाणु इतने सक्रिय होते हैं कि १९१८ में आए इन्फ्ल्यूएन्जा में उसने थोड़े ही दिनों में दो करोड़ स्त्री-पुरुषों और बच्चों को मृत्यु के द्वार पर पहुँचा दिया । सूक्ष्मतम की प्रबलतम शक्ति का इसी से अनुमान लगाया जा सकता है । कदाचित हमने भी अपने आपको बड़ा प्रदर्शित करने की भूल न की होती और इतने लघु होते गए होते कि संसार की सबसे छोटी इकाई में आत्मसात हो गये होते तो हमारी भी शक्ति ऐसी ही होती । उससे लाखों का हित कर सकने की स्थिति में होते ।

वैज्ञानिक विषाणु (वायरस) को निर्जीव कण मानते हैं, इसकी सक्रियता तो तभी देखने में आती है, जब वह किसी प्राणी के शरीर में कोशिका (सेल) के सम्पर्क में आता है । जड़ हो अथवा चेतन यह वैज्ञानिक जानें पर इतना निश्चित है कि प्रकृति या परमेश्वर को समझने के लिये बाह्य उपकरण काम नहीं दे सकते । उनकी स्पष्ट और सही जानकारी तभी सम्भव है, जब हम उन्हें अपनी मानसिक चेतना-ज्ञान या अनुभूति की अत्यन्त सूक्ष्म इकाई से तौलें । अभी तो वैज्ञानिकों को सूक्ष्मदर्शी यंत्रों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहायता मिल रही है पर सम्भव है आगे चलकर उन्हें भी 'ध्यान प्रणाली' अपनानी पड़े । प्रकृति के सूक्ष्मतम सत्यों का पता वस्तुत: चेतना की सूक्ष्म अवस्था तक पहुँचकर ही चल सकता है ।

जीवन की सूक्ष्मतम इकाई को जीवाणु कहते हैं । जीवाणु (बैक्टीरिया) इतने छोटे होते हैं कि एक इन्च की लाइन में उन्हें क्रमवार बैठाया जाए तो उनकी संख्या कोई ३०००० बड़े आराम से बैठ जाएगी । बाल की चौड़ाई में 'काक्स' नाम के जीवाणु ७५ की संख्या में मजे से बैठ सकते हैं, इतनी सूक्ष्म अवस्था में जीवन का होना भारतीय तत्व-दर्शन के **'अणोरणीयान महतो महीयानात्मा'** यह आत्मा अणु से भी छोटी और विराट से भी विराट है, सिद्धान्त की ही पुष्टि करता है । आत्मा का अर्थ यहाँ भी जीव-चेतना के उस स्वरूप से है, जो अगणितीय (नानमैथेमेटिकल) सिद्धान्तों पर खाता-पीता, पहनता, उठता-चलता, बातें करता, बोलता, हँसता, चिल्लाता, प्रेम-करुणा, दया आदि की अभिव्यक्ति करता पाया जाता है । शरीर से चाहे वह मनुष्य हो या पशु-पक्षी, जिसमें जीव-चेतना के लक्षण हैं, सब आत्मा हैं । विविध रूपों में होते हुए भी विश्वात्मा एक ही है, यह अनुभूति हम चेतना की अत्यन्त सूक्ष्म अवस्था तक पहुँचकर ही कर सकते हैं ।

जीवात्मा के स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए न्यायदर्शन में लिखा है—

इच्छाद्वेषप्रयत्नसुख दु:खज्ञानान्यात्मनो लिङ्गमिति ।

—न्याय-दर्शन १। १। १०,

अर्थात्—जिसमें भी इच्छा, द्वेष, सुख-दु:ख, ज्ञान और प्रयत्न आदि गुण हैं, वह सब जीवात्मा है ।

जीवात्मा अपने ज्ञान और प्रयत्न के द्वारा कर्म करता है और यह कर्म ही उसे विभिन्न योनियों में भ्रमण कराते हैं । जब तक वह अपने शुद्ध तेजस् स्वरूप को जान नहीं लेता और उसी मे लय नहीं हो जाता, तब तक वह जीव भाव में बना सांसारिक दु:ख-सुख भोगता रहता है, किन्तु जब वह शुद्ध चैतन्य की प्राप्ति का प्रयत्न करने लगता है तब वह बार-बार अनेक तरह के शरीर धारण करने की चिन्ता से भी मुक्त हो जाता है ।

यह बात जीवाणु के परिचय से बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है । जीवाणु, सबसे छोटे जीवों को कहते हैं, उनकी शारीरिक बनावट मनुष्य से बिल्कुल भिन्न होती है । एक नाभिक और उसके किनारे-किनारे प्रोटान झिल्ली । प्रत्येक किस्म के जीवाणु की प्रोटान झिल्ली में अपनी तरह के तत्व होते हैं, वह जीवाणु की प्रकृति और उसके स्वभाव पर निर्भर है अर्थात् आत्मा के अच्छे-बुरे गुण ही सब जगह साथ रहते हैं ।

जीवाणु कितना खाते हैं, इसका कोई अनुमान भी नहीं कर सकता । पेटू और आलसी आदमी जिस प्रकार केवल खाने और बच्चे पैदा करने में निपुण होते हैं, ज्ञान, विद्या, विवेक, सफलता और नई-नई तरह की शोध करने की योग्यताएँ उनमें विकसित नहीं हो पातीं, उसी तरह जीवाणु भी केवल खाते-पीते और बच्चे पैदा करते रहते हैं । जीवाणु एक घण्टे में अपने भार से दो गुना अधिक खा डालता है । जब तक भोजना मिलता रहता है, वह खाता ही रहता है । गंधक, लोहा, अंडे, खून, सड़े-गले पत्ते, लकड़ी और मरे हुये जानवर ही इनका आहार है, इस दृष्टि से जीवाणु बहुत कुछ मनुष्य का हित भी करते रहते हैं, जीवाणु न होते तो पृथ्वी पर गन्दगी इतनी अधिक बढ़ जाती कि मनुष्य का जीवित रहना कठिन हो जाता ।

कुछ जहरीले जीवाणु कार्बन मोनोऑक्साइड पर जीवित रहते हैं । यह एक जहरीली गैस है और मनुष्य के लिये अहितकारक । भगवान शिव की तरह विष से मानव-जाति की सुरक्षा का एक महान परोपकारी कार्य जीवाणु सम्पन्न करते हैं, जबकि मनुष्य अधिकांश अपने ही निकृष्ट स्वार्थ-भोग में लगा रहता है ।

पाश्चात्य वैज्ञानिक मनुष्य को अमीबा और बन्दरों का क्रमिक विकास मानते हैं, उनसे जब अमैथुनी सृष्टि की बात कही जाती है, तब वे भारतीय तत्व-दर्शन पर आक्षेप करते हैं, आश्चर्य है कि सृष्टि-प्रक्रिया जीवाणुओं पर अमैथुनी होती है, इससे भी वे चेतना के सूक्ष्मदर्शन की अनुभूति नहीं कर पाते । जीवाणुओं की सन्तानोत्पत्ति जितनी विलक्षण है, उतनी ही आत्मा के शुद्ध चैतन्य स्वरूप का प्रतिपादन करने वाली भी । खमीर पैदा करने वाला एक जीवाणु (बैक्टीरिया) ले लें, आप देखेंगे कि नर और मादा दोनों का काम यह एक ही जीवाणु कर देता है और सिद्ध करता है कि आत्मा न तो पुरुष है, न स्त्री वह तो शुद्ध चेतना मात्र है । स्त्री के शरीर में आ जाने से स्त्री भाव, पुरुष के शरीर में आ जाने पर पुरुष हो जाता है । यही चेतना भैंस के शरीर में भैंस, हाथी के शरीर में हाथी बन जाती है । शरीरों में अन्तर है पर तत्वत: आत्मा एक ही प्रकार की चेतना है ।

एक जीवाणु बढ़कर जब पूर्ण हो जाता है, तब उसी में से कोंपल फूटती हैं । नाभिक (न्यूक्लियस) थोड़ी देर में बँट जाता है और एक नए जीवाणु का रूप लेता है । जन्म से थोड़ी देर बाद ही वह भी जन्म दर बढ़ाना प्रारम्भ कर देता है । इस प्रकार पिता और पुत्र दोनों बच्चे पैदा करते चले जाते हैं, १ से २, २ से ४, ४ से ८ और ८ से १६ इस क्रम में बढ़ते हुए एक सप्ताह में खमीर का जीवाणु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१६८ पीढ़ी तैयार कर लेता है, उनमें से लाखों जीवाणु तो एक घण्टे में ही पैदा हुये होते हैं । वह भी बच्चे पैदा करने लगते हैं, जबकि उनका बूढ़ा पितामह भी उन मूर्खों की तरह बच्चा पैदा करने में लगा होता है, जिन्हें यह पता नहीं होता कि बच्चे पैदा करना ही काफी नहीं, उनकी शिक्षा-दीक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका आदि का प्रबन्ध न हुआ तो बढ़ी हुई जनसंख्या संकट ही उत्पन्न कर सकती है । जीवाणुओं का अस्तित्व और उनका बेतहाशा प्रजनन भी मनुष्य जाति के लिये खतरनाक ही होता है ।

मनुष्य तो भी समझदार है, क्योंकि औसतन २५ वर्ष में नई पीढ़ी को जन्म देता है, यह बात दूसरी है कि आजकल दूषित और गरिष्ठ आहार तथा कामुकता के कारण नवयुवक छोटी आयु में ही बच्चे पैदा करने लगते हैं और इस तरह जनसंख्या की वृद्धि के साथ अपना और परिवार का स्वास्थ्य भी चौपट करते हैं, अन्यथा २५ वर्ष की आयु स्वाभाविक है । उनमें जनसंख्या और अन्य समस्याओं का सन्तुलन बना रहता है । यदि मनुष्य इतना विवेक नहीं रख सकता तो वह भी उन जीवाणुओं की ही तरह समझा जाएगा जो केवल १५ मिनट बाद एक नया बच्चा पैदा कर देते हैं । २४ घण्टों में इनकी ९६ पीढ़ियाँ जन्म ले लेती हैं, मनुष्य को इतनी पीढ़ियों के लिये कम से कम दो हजार वर्ष चाहिये । २४ घण्टे की इस अवधि में कुल उत्पन्न सन्तानों की संख्या २। ९६ (अर्थात् दो-दो को ९६ बार गुणा किया जाय) होगी । अक्षरों में लिखने में यह संख्या थोड़ी समझ में आ रही होगी पर यदि विधिवत् गुणा करके देखा जाय तो यह संख्या २८१३७४९८००४०६५६ × २८१३७४९८००४०६५६ होगी ।

अनुमान नहीं कर सकते हैं यह तो एक जीवाणु की एक दिन की पैदाइश है । यदि मनुष्य भी ऐसे ही जनसंख्या बढ़ाने की भूल करे तो पृथ्वी पर आहार, विहार, निवास और कृषि उत्पादन आदि की कैसी बुरी स्थिति हो । सौभाग्य है कि जीवाणु बहुत छोटे हैं, इसलिए उनके सर्वत्र भरे होने से भी हमारे सब काम चलते रहते हैं । पर यह नितान्त सम्भव है कि हमारी प्रत्येक साँस के साथ लाखों जीवाणु शरीर में आते-जाते रहते हैं । प्रकृति की इस विलक्षणता से मनुष्य की रक्षा भगवान ही करता है, अन्यथा यदि विषैले जीवाणुओं की संख्या बढ़ जाती तो पृथ्वी पर रहने वाले सभी मनुष्यों को उसी तरह नजरबन्द रहना पड़ता, जिस तरह चन्द्रमा से कोई विषाणु (वायरस) न आ जाये, इस भय से चन्द्र-यात्री नील आर्मेस्ट्रांग, एडविन एल्ड्रिन और कोलिन्स को चन्द्रमा से उतरते ही नजरबन्द करके तब तक रख गया, जब तक उन्हें अनेक प्रकार के रसायनों से धोकर बिल्कुल शुद्ध और साफ न कर लिया गया ।

मनुष्य का यह सोचना व्यर्थ है कि अनेक प्रकार के देश और वर्णों में पाए जाने का सौभाग्य केवल उसे ही मिला है, यह तो सब प्रकृति और परमेश्वर का खेल है, जो जीवन की सूक्ष्म इकाई जीवाणु में भी कम है । इनकी लाखों किस्में हैं और हजारों तरह के आकार । आड़े-टेढ़े, कुबड़े, षट्कोण, लम्बवत विलक्षण शिवजी की बारात । कोई फैले रहते हैं, कोई गुच्छों में समुदाय बनाकर, कोई विष पैदा करते हैं, कोई मनुष्य जाति के हित के काम भी । 'काकस' 'डिप्थीरिया' 'स्फरोचेट्स' नामक जीवाणु जहाँ उपदंश, फफोले, मवाद पैदा कर देते हैं, वहाँ वे जीवाणु भी हैं जो दूध को दही में बदलकर और भी सुपाच्य और स्वास्थ्यवर्द्धक बना देते हैं ।

जो अच्छे प्रकार के जीवाणु होते हैं उन्हें काम में लाया जाता है, अच्छे मनुष्यों की तरह सम्मान दिया जाता है, जबकि बुरे और विषैले जीवाणुओं को मारने के लिए संसार भर में इतनी दवाएँ बनी हैं, जितने खराब मनुष्यों के लिये दण्ड विधान । कहीं अपराधियों को जेल दी जाती है, कहीं काला पानी, कहीं उनका खाना बन्द कर दिया जाता है, कहीं सामाजिक सम्पर्क । उसी तरह औषधियों के द्वारा खराब जीवाणुओं को भी नष्ट करके मारा जाता है । दण्ड का यह विधान कठोरतापूर्वक न चले तो उससे मानव-जाति का अस्तित्व ही संकट में पड़ जाए, इसीलिए सत्पुरुष के लिये दया और करुणा जितनी आवश्यक है, बुरे व्यक्ति को दण्ड भी उतना ही आवश्यक है ।

हमारे आस-पास के सम्पूर्ण प्राकृतिक जीवन में यह क्रियायें चलती रहती हैं पर हम जान नहीं पाते । मनुष्य की भौतिक आँखें बहुत छोटी हैं, इसलिए यह दृश्य केवल ज्ञान से ही देख या अनुभव कर सकते हैं । पर यह एक सत्य भी है कि इन अनुभूतियों को योग और साधनाओं द्वारा स्पष्ट बनाया जाता है । मनुष्य अपने को शरीर मानने की भूल को छोड़ता हुआ चला जाये और शुद्ध आत्म-चेतना की अनुभूति तक पहुँच जाये तो वह चींटी ही नहीं जीवाणु की उस सूक्ष्म सत्ता तक भी पहुँचकर सब कुछ यन्त्रवत् देख सकता है, जिसका व्यास १/३०००० इन्च तक होता है । वैज्ञानिक यंत्र इस बात के प्रमाण हैं कि आत्म-चेतना के लिये असम्भव कुछ है नहीं ।

जीवाणुओं को जिस यंत्र से देखते हैं, उसका नाम है 'माइक्रोस्कोप' । माइक्रोस्कोप में काँच के ऐसे शीशे (लेन्स), लगाए जाते हैं, जो प्रकाश किरणों से समूह (बीम) को एक छोटे से छोटे बिन्दु से गुजार सकें । प्रकाश की ऐसी बलवान किरणें छोटी से छोटी वस्तु को इतना बड़ा करके दिखा देती हैं जितना बड़ा आकार उस वस्तु का कभी सम्भव ही नहीं हो । उदाहरण के लिये यदि ५ फुट के व्यक्ति को यदि १००० गुना बढ़ाकर दिखाया जाय तो उसकी आकृति ५००० फुट की दिखाई देगी अर्थात् वह मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर्वताकार लगेगा । अब तो 'इलेक्ट्रॉनिक माइक्रोस्कोप' चल गए हैं, एक बार परीक्षण के तौर पर १२ इन्च के बाल को 'इलेक्ट्रानिक माइक्रोस्कोप' से देखा गया तो उसकी बढ़ी हुई लम्बाई २० मील थी और चौड़ाई २० फुट । इतना बड़ा बाल संसार में शायद ही कभी सम्भव हो पर प्रकाश किरणों की शक्ति ने यह सम्भव कर दिया । यदि आत्मचेतना भी इतनी सूक्ष्म की जा सके तो वह एक परमाणु में ही सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को देख सकती है । भारतीय योग दर्शन और चित्त-निरोध का यही उद्देश्य है कि मनुष्य अपने मन को सूक्ष्मता से बैठकर विराट ब्रह्माण्ड का दिग्दर्शन करे, तभी विश्व के यथार्थ को समझा जा सकता है । जीवाणुओं की परीक्षा और इन पर प्रयोग ऐसी ही स्थिति में बन पड़ता है, जब उन्हें माइक्रोस्कोप द्वारा कई हजार और लाख गुना बढ़ाकर देखते हैं । अन्यथा उनके अस्तित्व का ही पता न चलता । सूक्ष्मता का दर्शन मनुष्य भी उसी प्रकार आत्मा के विकास के द्वारा ही देख सकता है ।

जीवाणु आत्मा के अनेक रहस्यों की सत्यता का प्रतिपादन करते हैं । गीता में भगवान कृष्ण ने कहा है—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥

—२/२३

हे अर्जुन ! यह आत्मा बड़ी विलक्षण है, न तो इसे शस्त्र छेद सकते हैं और न ही अग्नि इसे जला सकती है, जल गीला नहीं कर सकता और न ही हवा इसे सुखा सकती है ।

मनुष्य के से शरीर जटिलता से युक्त अत्यन्त सूक्ष्म जीवाणु के अध्ययन से यह सारी बातें सत्य पाई गईं, कई जीवाणु जिन्हें गीले स्थान में ही रहने का अभ्यास था, उन्हें सूखे में लाया गया तब भी उनके जीवन को कोई संकट नहीं उपस्थित हुआ । वे २० वर्ष तक बराबर आर्द्रता की प्रतीक्षा करते रहे । इसी प्रकार इन पर तेज से तेज सूर्य की धूप का भी प्रभाव नहीं होता, ठण्डे से ठण्डे स्थान में भी जीवाणु मरते नहीं और उन्हें कुछ खाने को न मिले तो भी वे अपना जीवन धारण किए रहते हैं ।

चेतना और प्रकृति के द्वैत सम्बन्ध और आत्मा के स्वरूप को जीवाणु के अस्तित्व और अध्ययन द्वारा बहुत स्पष्ट अंशों में समझा जा सकता है, साथ ही मानवीय व्यवहार का बहुत-सा मार्गदर्शन भी उससे प्राप्त किया जा सकता है ।

जीवाणु के यह गुण, यह सूक्ष्मता इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि आत्मचेतना प्रकृति के जड़ परमाणुओं से भिन्न अत्यन्त सूक्ष्म, अमर और सर्वशक्तिमान सत्ता है, उसे अत्यन्त सूक्ष्मता की अनुभूति द्वारा ही जाना और पहचाना जा सकता है ।

जड़वाद एक बौद्धिक दुर्भाग्य

जड़ जगत को ही सब कुछ मान लेना और चेतना को भी जड़ के पीछे काम करने वाली हलचलों की प्रतिक्रिया समझ बैठना जड़वाद का अन्ध समर्थन मात्र है । चेतना के अस्तित्व को झुठलाया जाना अपने युग का बौद्धिक दुर्भाग्य ही कहा जायगा । जिस चेतना ने जड़ पदार्थों को साज-सँभाल कर उपयोगी एवं सुन्दर बनाया । जिस चेतना ने अपनी सूक्ष्म बुद्धि से प्रकृति के अनेकानेक रहस्यों को जाना और उनसे लाभान्वित हो सकने की स्थिति तक मनुष्य को पहुँचाया, उसी चेतना के अस्तित्व तक से हम इन्कार करने लगें तो इसे आत्मविस्मृति के अतिरिक्त और क्या कहा जायगा ?

चेतना का आस्तत्व हम शरीर के माध्यम से भी अनुभव करते हैं, पर वह उतने तक ही सीमित नहीं है । शरीर के बिना भी उसका अस्तित्व बना रहता है । प्रकृति का सूक्ष्म स्वरूप तो यन्त्र-उपकरणों की सहायता से खोजा, पकड़ा जा सकता है, पर चेतना की परख के लिए कोई भौतिक साधन बनकर तैयार नहीं हुए हैं । वे हो भी नहीं सकेंगे क्योंकि भौतिक उपकरण अपने सहधर्मी भौतिक पदार्थों को ही पकड़ सकते हैं । शरीर और उसकी इन्द्रियाँ पंचभूत तत्वों से बनी हैं । इसलिए उनकी अनुभूतियाँ भी तत्वों से बने परमाणुपरक पदार्थों के आधार पर ही कुछ निष्कर्ष निकालती एवं रस लेती हैं । मशीन भी प्रायः धातुओं से बनी और विद्युत जैसी भौतिक ऊर्जाओं से चलती है । ऐसी दशा में उनका परख क्षेत्र भी स्थूल अथवा सूक्ष्म-दृश्य अथवा अदृश्य जड़-जगत तक ही सीमाबद्ध रहता है । चेतना को तो चेतना ही अनुभव कर सकती है । चेतना को समझने का कोई यंत्र बन सका तो वह चेतना ही होगा । आत्मा और परमात्मा को प्रयोगशालाओं में अब तक सिद्ध नहीं किया जा सका और वह भविष्य में भी सिद्ध न हो सकेगा । इसी आधार पर वैज्ञानिकों ने इन दोनों की सत्ता को अस्वीकार किया है । वे शरीर को चलता-फिरता पौधा मानते हैं और उसको चेतना की मस्तिष्कीय हलचल कहते हैं । मस्तिष्क तो शरीर का ही अंग है । इसलिए वे आत्मा की परिभाषा शरीर तक ही सीमित रखते हैं और मरने के बाद आत्मा की समाप्ति की बात कहते हैं । परमात्मा के सम्बन्ध में भी उनका ऐसा कथन है । प्रकृति व्यवस्था को वे स्वसंचालित मानते हैं । सृष्टि में चल रही विभिन्न व्यवस्थाओं को वे अपने आप-अपने ढर्रे या धुरी पर घूमती हुई कहते हैं और इसमें किसी ईश्वर का दखल स्वीकार नहीं करते ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कठिनाई यह है कि विज्ञान जगत प्रत्यक्ष भौतिक प्रयोग, परीक्षणों को ही सब कुछ मान बैठता है और प्रयोगशालाओं की सिद्धि को ही प्रामाणिक ठहराता है, जबकि तर्क और तथ्य यह भी कहते हैं कि इस विश्व के रहस्यों को विशेषतया चेतन तथ्यों को जानने के लिए प्रयोगशालाओं की उपलब्धियों तक ही सीमित नहीं रहा जा सकता ।

पदार्थों में पाई जाने वाली हलचल स्वसंचालित हो सकती है, यह प्रतिपादन गले नहीं उतरता । चेतन संचालक के बिना वस्तुएँ निश्चेष्ट और अस्त-व्यस्त पड़ी रहती हैं । बहुमूल्य जलयान, वायुयान, रेल इंजन आदि बिना ड्राइवर के नहीं चलते, फिर असीम ब्रह्माण्डव्यापी अन्तर्ग्रही और सीमित परमाणु सत्ता में जो सुव्यवस्थित अनवरत् गति चक्र चल रहा है, वह अनायास स्वसंचालित कैसे हो सकता है ? इसके पीछे चेतन शक्ति की प्रेरणा एवं व्यवस्था होनी आवश्यक है । इसे तर्क बुद्धि सहज ही समझ सकती है । यदि विवेक, तर्क एवं बुद्धि को भी यांत्रिक उपकरणों की तरह ही साक्षी साधन मान लिया जाय तो फिर ईश्वर के अस्तित्व को समझने-स्वीकार करने में कोई कठिनाई न रहेगी ।

आत्मा के अस्तित्व को प्रयोगशालाओं में तो सिद्ध नहीं किया जा सका, पर अन्य ऐसे अकाट्य प्रमाण मौजूद हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि मरने के बाद भी जीव चेतना का अस्तित्व बना रहता है । इस तथ्य की साक्षी में प्रेतात्माओं की हलचलें तथा पुनर्जन्म की ऐसी घटनाएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं, जो प्रामाणिक व्यक्तियों के अनुभव में आई हैं और उन्हें झुठलाया नहीं जा सकता । इसी प्रकार पुनर्जन्म के भी अगणित प्रमाण मिलते हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि पिछले जन्म की ऐसी अनेक घटनाओं का विवरण नए जन्म में स्मरण बना रह सकता है, जो अन्य लोगों को विदित नहीं था । किसी ने सिखा-पढ़ा कर पूर्व जन्म विवरण का कौतूहल तो खड़ा नहीं कर दिया है, इस आशंका की काट उन प्रमाणों से हो जाती है, जिनमें बालकों ने अपने पूर्वजन्म के सम्बन्धियों को पहचाना और नाम लेकर पुकारा है । इसी प्रकार उन्होंने नितान्त व्यक्तिगत ऐसी घटनाएँ सुनाई हैं, जो सम्बद्ध व्यक्तियों के अतिरिक्त अन्य लोगों को विदित नहीं हो सकती थीं । जमीन में अपना गढ़ा हुआ धन बताकर उसे निकलवाना पूर्वस्मृति का ठोस प्रमाण समझा जा सकता है । प्रेतात्माओं के अस्तित्व और पुनर्जन्म के प्रत्यक्ष प्रमाणों को भी यदि प्रयोगशाला सिद्ध तथ्यों की तुलना में माना जा सके तो फिर आत्मा और परमात्मा के अस्तित्व में संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती ।

'दी ह्यूमन परसनैलिटी एण्ड इट्स सरवाइबल आफ बाडीली डैथ' नामक पुस्तक में ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं, जो शरीर में पृथक् आत्मा के स्वतंत्र अस्तित्व को सिद्ध करते हैं । कई उदाहरण एक व्यक्ति के शरीर पर किसी दूसरी आत्मा द्वारा आधिपत्य रखने और फिर उसे मुक्त कर देने के हैं । साथ ही संगीत, गणित, ललित-कलाओं आदि में अद्भुत क्षमता व प्रवीणता वाले बच्चों के विवरण भी हैं, जिनका असाधारण ज्ञान पूर्वजन्म की संचित ज्ञान सामग्री ही सिद्ध होता है ।

गणितशास्त्री ओस्पेन्स्की ने तीन ग्रन्थों में गणित के आधार पर चेतना के व्यापक अस्तित्व को सिद्ध करने का अकाट्य प्रयत्न किया है । इस सन्दर्भ में उनके द्वारा लिखे गये ग्रन्थों में 'इन सर्च आफ दि मिरेकुलस-टर्टियम आर्गेनमथ्योरी ऑफ इन्टरनल लाइफ' अधिक प्रसिद्ध है ।

भौतिकी के आचार्य राबर्ट मायर ने ऊर्जा के दर्शन पर जो खोजें की हैं वे बताती हैं कि उसकी अधिकाधिक सूक्ष्म स्थिति में जो तत्व शेष रह जाता है, उसे चेतना की संज्ञा दी जाती है । यह उच्चस्तर पर एकरस और सर्वव्यापी स्थिति में बनी रहती है । उसका उत्पादन और विलयन क्रम तो स्थूल रूप से ही चलता है ।

मनोविज्ञानी जे० बी० राइन ने मानवी मनःचेतना को पराजागतिक और पराभौतिक की संज्ञा दी है । वे उसका स्वरूप विद्युतीय एवं चुम्बकीय स्तर की ऐसी स्वतंत्र इकाई के रूप में मानते हैं, जो मरने के बाद भी अपनी सत्ता बनाए रहता है । उसमें इतने प्रबल संकल्प भी जुड़े रहते हैं जिनके सहारे पुराने स्तर की तथा नये प्रकार की किसी आकृति का सृजन और धारण कर सके । उनकी दृष्टि से यह व्यक्ति चेतना दृश्य अथवा अदृश्य स्थिति में अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रहने में पूर्णतया समर्थ है ।

आइन्स्टाइन ने सृष्टि के मूल में चेतना को सक्रिय माना था । जे० ए० थामसन, जेम्स जोन्स, ए० एस० एडिग्रन आदि ने विज्ञान की नवीन दिशाओं का अलग-अलग विवेचन करते हुए एक ही बात कही है—विज्ञान के पास जीवन के प्रारम्भ होने की कोई प्रामाणिक जानकारी नहीं है । वैज्ञानिक अन्वेषण अब चेतना और विचार जगत की ओर बढ़ रहे हैं ।

भारतीय दर्शन और संस्कृति आदिकाल से आत्मा की अखण्डता पर आस्थावान हैं । अणु मात्र होकर भी वह सम्पूर्ण शरीर पर आधिपत्य रखता है । भावनात्मक परिष्कार से आत्मबल बढ़ता है और अपने स्वरूप को जानने वाला जीवात्मा परमात्म-सत्ता से एकरूप हो जाता है ।

नोबुल पुरस्कार विजेता भौतिकीविद श्री पियरे दि कोम्ते ने आत्मा को विश्वात्मा से सम्बन्धित बताया है तथा इसी आधार पर उसे अमर भी कहा है, क्योंकि विश्व चेतना अमर है और आत्मा उसी की छोटी इकाई मात्र है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इलेक्ट्रोडायनेमिक सिद्धान्तों के अनुसार 'ईगो' की छानबीन की जाने पर ये तथ्य सामने आए हैं कि जन्म-मरण-चक्र में भ्रमण करती हुई, भिन्न-भिन्न आकृति-प्रकृति अपनाते हुए भी, मूल-सत्ता अक्षुण्य रहती है ।

विभिन्न खोजों के बाद विश्वविख्यात वैज्ञानिक फ्रेड हायल तथा जयंत विष्णु नार्लीकार ने यह स्थापना की है कि विश्व रचना में कारणभूत अणु और मानवीय शरीर की संरचना में कारणभूत जीवाणु की मूल संरचना एक-सी है ।

'दि रूट्स आफ कोइन्सिडेन्स' के लेखक आर्थर डा कोएस्लर ने जीवात्मा को आणविक या रासायनिक संघात से सर्वथा भिन्न माना है ।

'यू डू टेक इट विद यू' के लेखक डिविट मिलर ने मस्तिष्कीय कोशों में ही घुली हुई एक अतिरिक्त चेतना को माना है तथा उसका स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार किया है । यह चेतना मस्तिष्क के कोशों को प्रभावित करती है ।

हमारा विश्व एक विराट शक्ति-सागर है । यह शक्ति-सागर जड़-चेतन से मिश्रित है । प्राणियों की सत्ता इसमें एक बुलबुले की तरह स्वतंत्र अस्तित्व बनाती है, विकसित होती है और समयानुसार विलीन हो जाती है ।

मूर्धन्य वैज्ञानिकों की मान्यता है कि इस विराट शक्ति सागर में एक भौतिक शक्ति धारा है, दूसरी प्राणिज । दोनों एक अविच्छिन्न युग्म बनाती हैं ।

विकासमान विज्ञान अब जीवन को रासायनिक संयोग मात्र नहीं मानता । मनश्चेतना की मरणोत्तर सत्ता तो स्वीकार ही कर ली गई है । अब चेतना जगत की स्वतंत्र सत्ता को एक घटक मानने की बारी है ।

देखने में लगता है पर .....

अब तक विज्ञान केवल प्रत्यक्ष और प्रमाणसिद्ध को ही सत्य मानने का आग्रह लेकर चलता रहा है । परन्तु यहाँ कोई आवश्यक नहीं है कि जो प्रत्यक्ष दिखाई दे या अनुभव में आए वह सत्य ही हो । जो कुछ हम आँखों से देखते हैं क्या वही सत्य है? इस प्रश्न का उत्तर एकबारगी तो हाँ में ही दिया जा सकता है, पर वस्तुत: वह नितान्त बालकों जैसा ही होगा । वस्तुत: जो कुछ हम देखते हैं वह इन अस्तित्वों का अति स्वल्प अंश है जिसे हम देख नहीं सकते । न केवल खुली आँखों से वरन् सूक्ष्मदर्शी यंत्र भी उन्हें देखने में ही नहीं अनुभव करने में भी असमर्थ रहते हैं ।

इतना ही नहीं प्रत्यक्ष अनुभव भी कहाँ और कितने सही होते हैं । उदाहरण के लिये यों देखने में लगता है कि आप भारतवर्ष के निवासी हैं, पर उसी समय आप पृथ्वी के भी निवासी हैं, पर उसी समय सौरमण्डल के भी । सूर्य एक सैकिण्ड में २०० ट्रिलियन अर्थात् १००० मिलियन (१०००००००० किलोवाट) ऊर्जा पृथ्वी में फेंकता है । वह ऊर्जा इतनी अधिक होती है कि उससे नीपर जैसे १ करोड़ बिजलीघर स्थापित हो सकते हैं । सारी पृथ्वी की एक अरब आबादी तथा चींटी, मक्खी, कौवे, गिद्ध, भेड़, बकरी, गाय, हाथी, शेर, पेड़-पौधे, बादल, समुद्र सभी इस शक्ति से ही गतिशील हैं जिसमें यह शक्ति जितनी अधिक है (प्राणतत्व की अधिकता) वह उतना ही शक्तिशाली और वैभव का स्वामी है । कीड़े-मकोड़े उसके एक कण से ही जीवित हैं, तो वृक्ष-वनस्पतियाँ उसका सबसे अधिक भाग उपयोग में लाती हैं । मनुष्य इन सबसे भाग्यशाली है क्यों ? वह इस शक्ति के सुरक्षित और संचित कोष को भी प्राणायाम और योग-साधनाओं द्वारा मनचाही मात्रा में प्राप्त भी कर सकता है ।

हमारे लिए वर्ष ३६५, १/४ दिन का होता है पर सूर्य के लिए वह अपनी एक हजार किरणों के घूमने भर का समय, सूर्य का प्रकाश हर क्षण पृथ्वी के आधे भाग पर पड़ता है अर्थात् सूर्य का एक सैकिण्ड पृथ्वी के निवासी के लिए १२ घण्टे । कीट-पंतगों के लिये तो उसे कल्प ही कहना चाहिये । सूर्य अरबों वर्ष से जी रहा है और करोड़ों वर्ष तक जिएगा पर इतनी अवधि में तो मनुष्यों की लाखों पीढ़ियाँ मर-खप चुकी होंगी, यदि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर अब तक जितने लोग जन्म ले चुके उन सबके नाम लिखना सम्भव हो तो उसके लिये पृथ्वी के भार से कम कागज की आवश्यकता न पड़ेगी । सूर्य का एक जन्म इतना बड़ा है कि मनुष्य उसकी तुलना में अरबवें हिस्से की भी जिन्दगी नहीं ले पाया ।

ठीक यही बात मनुष्य की तुलना में कीट-पतंगों की है । वायुमण्डल में ऐसे जीव हैं जो इतने सूक्ष्म हैं कि उनको इलेक्ट्रॉनिक सूक्ष्मदर्शी से ही देखना सम्भव है, उनमें एक ही कोश (सेल) होता है । उसमें केन्द्रक सूर्य का ही एक कण होता है, अन्य तत्वों में कोई भी खनिज, लवण या प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट मिलेंगे । अर्थात् जीव-चेतना और प्रकृति का समन्वय ही दृश्य जगत है । मनुष्य में गर्मी अधिक है, १०० वर्ष का जीवन उसे प्राप्त है पर कीड़े-मकोड़े शक्ति के एक अणु और शरीर के एक कोश से ही मनुष्य जैसी आयु भोग लेते हैं । मनुष्य जितने दिन में एक आयु भोगता है, उतने में कीट-पतंगों के कई कल्प हो जाते हैं । प्रसिद्ध रूसी वैज्ञानिक एन० एस० श्चेरविनोवस्की एक कृषि विशेषज्ञ थे, उन्होंने ५० वर्ष तक कीट-पतंगों के जीवन का सूक्ष्म अध्ययन किया और उससे कृषिनाशक कीटाणुओं के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण खोजें कीं । उन्हीं खोजों में भारतीय दर्शन को प्रमाणित करने वाले तथ्य भी प्रकाश में आए । वे लिखते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं—टिड्डियों की सामूहिक वंशवृद्धि की अवधि सूर्य के एक चक्र अर्थात् ११ वर्ष से है अर्थात् ११ वर्ष में उनकी प्रलय और नई सृष्टि का एक क्रम पूरा हो जाता है । वीविल जो चुकन्दर कुतरने वाला कीड़ा होता है वह भी ११ वर्षीय चक्र से सम्बन्धित है पर कुछ कीड़ों की सामूहिक वृद्धि २२ वर्ष, कुछ की ३३ वर्ष है । इस आधार पर उन्होंने लिखा है कि पृथ्वी का सारा जीवन ही सूर्य पर आधारित है । सिद्ध होता है कि नन्हें-नन्हें जीवाणु (बैक्टीरिया) तथा विषाणु (वायरस) सभी का जीवन कोश (नाभिक या न्यूक्लियस) सूर्य का ही प्रकाश स्फुलिंग और चेतन परमाणु है, जबकि उनके कोशिका सार (साइटोप्लाज्म) में अन्य पार्थिव तत्व । जीवन चेतना सर्वत्र एकसी है, परिभ्रमण केवल मन की वासना के अनुसार ही चलता रहता है ।

नाभिक में भी नाभिक (न्यूक्लिओलस) होते हैं, जिससे यह भी सिद्ध होता है कि जिस प्रकार कोशिका सार (साइटोप्लाज्म) का सूर्य नाभिक होता, नाभिक अग्नि तत्व होता है, अग्नि या प्राण में ही मन होता है उसी प्रकार मन की चेतना में ही विश्व चेतना या ईश्वरीय चेतना समाधीन होनी चाहिये । प्रत्यक्ष में सूर्य भी स्व-प्रकाशित नहीं वह आकाश गंगा और नीहारिकाओं के माध्यम से किसी सुदूर केन्द्रक से ही जीवन प्राप्त कर रहा है अर्थात् सृष्टि के समस्त मूल में एक सर्वोपरि शक्ति है, उसे ही परमात्मा माना गया है, वही चेतना पदार्थ के संयोग से जीवों के रूप में व्यक्त होती है । श्री शंकराचार्य ने तत्वबोध में इसी तथ्य की पुष्टि करते हुए लिखा है—

नित्य शुद्ध विमुक्तैकमखण्डानन्दमद्वयम् ।
सत्यं ज्ञानमनन्तं यत्परं ब्रह्माहमेवतत् ॥
एवं निरन्तराभ्यस्ता ब्रह्मैवास्मीति वासना ।
हरत्यविद्या विक्षेपान् रोगानिव रसायनम् ॥

—तत्वबोध ३६-३७

अर्थात्—जो तीनों कालों में रहने वाला, जिसका कभी नाश नहीं होता जो मलरहित और संसार से विरक्त, एक और अखण्ड अद्वितीय आनन्द रूप है वही ब्रह्म है किन्तु वही ईश्वरीय चेतना "मैं हूँ" के अहंकार भाव के निरन्तर अभ्यास से उत्पन्न हुई वासना रोगों को रसायन के समान अविद्या से उत्पन्न होने वाले चित्त विक्षेप के कारण वास्तविक ज्ञान को नष्ट कर देती है और ईश्वरीय चेतना जीव रूप में काम करती हुई वासनाओं की पूर्ति में कभी यह कभी वह शरीर धारण करती भ्रमण करने लगती है ।

हमें मालूम है कि सूर्य ही नहीं चन्द्रमा, बृहस्पति, शुक्र, शनि तथा सभी तारागण तक विकरण करते हैं । किसी भी एक बिन्दु को ले लें और कल्पना करें कि वहाँ सभी विकरण आड़ी-टेड़ी दिशा में गमन कर रहे हैं तो पता चलेगा कि एक ही स्थान पर सूर्य प्रकाश का कण चन्द्रमा के कण को, चन्द्रमा का बृहस्पति के कण को, बृहस्पति का शनि के कण को पार कर रहा होगा—फिर यह क्रम निरन्तर चल रहा होगा अर्थात् सिनेमा के पर्दे की तरह की गति और दृश्य उस समय हर ग्रह-नक्षत्र के अन्तवर्ती क्षेत्र का विद्यमान होगा, जिस प्रकार सूर्य के रासायनिक आकाश मण्डल में हाइड्रोजन, हीलियम, कार्बन, नाइट्रोजन, ऑक्सीजन, सोडियम, सिलिकन, गन्धक, टाईटैनियम, मैंगनीज, कोबाल्ट, निकिल, जिंक आदि २४ रासायनिक तत्व विद्यमान हैं, उसी प्रकार हर ग्रह के आकाश क्षेत्र में भिन्न जाति के आकाश मण्डल हैं । यह तत्व ही ब्रह्माण्ड का निर्माण करते हैं । विकरण उनके प्रभाव क्षेत्र लिए होंगे अर्थात् वातावरण के हर बिन्दु पर विश्व के हर दृश्य विद्यमान हैं । मूल चेतना उनमें से अपनी इच्छा (इच्छा आकार स्वरूप) है और वासना के क्षेत्र में विद्यमान रहती होगी तो कुछ आश्चर्य नहीं ।

१८३८ में पौधों की संरचना का परीक्षण करते समय वैज्ञानिक माथियास शेलिडेन ने देखा कि पौधे भी कोशिकाओं से बने हैं और यह कोशिकाएँ भी बड़े जीव के भीतर एक जीवित जीव हैं । इस प्रकार हर योनिधारी का शरीर ब्रह्माण्ड है और उनमें रह रहे अनेकों चेतन कोश जीव जो अपनी वासना के अनुसार काम करते हैं, हर कोश में विराट ब्रह्माण्ड की बात विज्ञान भी स्वीकार करता है ।

यह इलेक्ट्रानिक प्रकाश की बौछार से ही देखे जा सकते हैं । इलेक्ट्रॉनिक्स विद्युत परमाणु होते हैं । मन भी एक प्रकार का सचेतन विद्युत परमाणु है । योग ग्रन्थों में इसे 'अग्नि स्फुल्लिग' कहा जाता है, उसे ध्यान की एकाग्रता के समय अत्यन्त सूक्ष्म किन्तु दिव्य प्रकाश कण के रूप के त्रिकुटी—दोनों भौंहों के बीच आज्ञा चक्र नामक स्थान में देखा भी जाता है । यही कीट-पतंगों में भी मन और मन की विशेषताओं के होने का प्रमाण है जो किसी भी विज्ञान से कम महत्व का नहीं ।

जीवन और जगत में जो कुछ भी महान व महत्वपूर्ण है, वह स्थूल की पकड़ से बाहर और सूक्ष्म है । उसे जानने के लिये सूक्ष्म का विज्ञान ही समझना पड़ेगा तथा इसी दिशा से आगे बढ़ना पड़ेगा । प्राचीनकाल में भारतीय मनीषियों ने इस दिशा में बड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रयत्न किये थे व शोध-अनुसंधानों द्वारा उस सूक्ष्म की शक्ति से लाभ उठाने की विधि विकसित कर ली थी । देर-अबेर विज्ञान भी इसी दिशा में पहुँचकर असीम विश्व के कण-कण में भरी अनन्त अपार क्षमता का सदुपयोग कर सकेगा ।

असीम-अतल शक्ति-सागर की एक बूँद

लगता है सूर्य असीम शक्ति का भण्डार है, पर वस्तुत: वह भी विराट ब्रह्माण्ड के महासंचालक ब्रह्म सूर्य का एक नगण्य-सा घटक ही है । सूर्य अपनी शक्ति उसी प्रकार अपने सूत्र संचालक महासूर्य से प्राप्त करता है जैसे कि अपनी पृथ्वी सौरमण्डल के अधिष्ठाता अपने सूर्य से । जीव और ईश्वर की दूरी ही उसकी शक्ति को दुर्बल बनाती है । यदि यह दूरी घटती जाय तो निश्चित रूप से सामर्थ्य बढ़ेगी और स्थिति वह न रहेगी जो आज कृमि-कीटकों जैसी दिखाई पड़ रही है ।

ब्रह्माण्ड की दूरी का अनुमान नहीं किया जा सकता । पर परमाणु के नाभिक के अन्दर के प्रोटानों की दूरी तो कुल १/२०००००००००००० इन्च होती है । यदि यह दूरी आधा इन्च होती तो उन दोनों के बीच की दूरी १/४ इन्च होने पर शक्ति सोलह गुनी होती, १/२ इंच होने पर ६४ गुनी—तात्पर्य यह है कि ब्रह्माण्ड की जो शक्ति विस्तार में है, परमाणु में वही शक्ति प्रोटानों की समीपता में है । पति-पत्नी जितने प्रेम और आत्मीयता से रहते हैं, उनकी शक्ति उतनी ही अधिक होती है । इसका अनुमान इस व्याख्या से चलता है, अर्थात् दो प्रोटानों के बीच में १/२०००००००००००० इन्च की दूरी के बीच इतनी शक्ति होगी, जो इस्पात की १० इन्च मोटी चादर को भी काटकर रख देगी । जीव और ईश्वर की समीपता का भी ऐसा ही सत्परिणाम हो सकता है । इस समीपता के आधार पर सामान्य को असामान्य देखा जा सकता है ।

ध्यान—मन की एकाग्रता द्वारा अपनी प्राणमय चेतना (नाभिकीय चेतना) को सूर्य या किसी अन्य चेतना के साथ जोड़ देने से दो तत्वों का मिलन ऐसे ही हो जाता है जैसे दो दीपकों की लौ मिलकर एक हो जाती है । व्यक्ति अपनी अहंता भूलकर जब किसी अन्य अहंता से जोड़ लेता है तो उसकी अनुभूतियाँ और शक्तियाँ भी वैसी ही—इष्टदेव जैसी ही हो जाती हैं । ध्यान की परिपक्वता को एक प्रकार का संलयन ही कहना चाहिये । वैज्ञानिक भी मानते हैं कि वह शक्ति विस्फोट की शक्ति से भी अधिक प्रखर होती है । आत्म-चेतना का ब्राह्मी-चेतना से मिलकर ब्रह्म साक्षात्कार इसी सिद्धान्त पर होता है ।

इस प्रचण्ड क्षमता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि यदि ९३००००००० मील लम्बी और ८८० गज मोटी बर्फ की सिल्ली के ऊपर उसको केन्द्रित (फोकस) कर दिया जाए तो सारी बर्फ एक सैकिण्ड में गलकर बह निकलेगी । सूर्य के १ इन्च में जिस ऊर्जा व प्रकाश की कल्पना की गई है, वह ५ लाख मोमबत्तियों के एक साथ जलाने की शक्ति के बराबर होती है । यह सारी शक्ति एक साथ पृथ्वी पर फेंक दी जाती तो यहाँ की मिट्टी भी जलने लगती । जलने ही नहीं लगती यह भी एक प्रकार का सूर्य पिण्ड हो जाती जबकि सामान्य स्थिति में पृथ्वी को सूर्य-शक्ति का लगभग २२० करोड़वाँ हिस्सा ही मिलता है । ३ अरब आबादी मनुष्यों की, १०० अरब आबादी पक्षियों की, १००० अरब आबादी अन्य जीव-जन्तुओं की और पृथ्वी पर पाये जाने वाले विशाल वनस्पति जगत तथा ऋतु-संचालन का सारा कार्य उस २२० करोड़वें हिस्से जितनी शक्ति से सम्पन्न हो रहा है । पूरी शक्ति जो सौरमण्डल के करोड़ों ग्रहों-उपग्रहों, क्षुद्र ग्रहों का नियमन करती है, प्रकाश और गर्मी देती है । अपने १९ करोड़ ९८ लाख महाशंख भार को २०० मील प्रति सैकिण्ड की भयानक गति से २५ करोड़ वर्ष में पूरी होने वाली विराट आकाश की परिक्रमा भी वह अपनी इसी शक्ति से पूरी करता है । उस सम्पूर्ण शक्ति और सक्रियता को कूता जाना सम्भव नहीं है, उसे भावनाओं में केवल मात्र उतारा जाना सम्भव है ।

सूर्य और पृथ्वी की तुलना नहीं हो सकती । किन्तु अपने स्थान पर पृथ्वी और उस पर रहने वाले प्राणियों की सामर्थ्य को देखकर भी दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ती है और सोचना पड़ता है कि विश्व की प्रत्येक इकाई अपने आप में एक परिपूर्ण सूर्य है ।

किसी गुब्बारे में ३०० पौण्ड हवा भरी जा सकती है तो उतने स्थान के लिए हाइड्रोजन १०० पौण्ड ही पर्याप्त होगा, उसी प्रकार जितने स्थान में एक औंस पानी या २/३ औंस हाइड्रोजन रहेगा, उतने स्थान को मनुष्य के सूक्ष्म शरीर को प्रकाश अणुओं का १२२४वाँ भाग ही घेर लेगा । यदि प्रयत्न किया जाय तो इन अणुओं की सूक्ष्मतम अवस्था में पहुँचकर विराट विश्वव्यापी आत्मचेतना के रूप में अपने आपको विकसित और परिपूर्ण बनाया जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विराट ब्रह्माण्ड के इस नाभिक में यदि समष्टिगत चेतना ठीक इसी प्रकार की हो जिस प्रकार एक कोश (सेल) के नाभिक (न्यूक्लियस) में जीव चेतना, तो उसे आश्चर्य और अतिश्योक्ति न माना जाये क्योंकि दोनों के रूप एक ही जैसे हैं और 'ईश्वर अंश जीव अविनाशी' की कल्पना को चरितार्थ करते हैं । प्रकाश की यह शोध हमें एक दिन निराकार ब्रह्म तक पहुँचा दे तो कुछ आश्चर्य नहीं, क्योंकि विराट का यह अध्ययन इन कल्पनाओं की ही सत्यता सिद्ध करता है । इसका प्रतिदान करने में तत्ववेत्ता ऋषियों ने बहुत पहले ही सफलता प्राप्त कर ली थी ।

यों परमात्मा को निर्विकार, सर्वव्यापी, सर्व शक्तिमान, अव्यय, अविनाशी और सृष्टि का मूल उपादान कहा गया है, तथापि जब भी उसके तात्विक शरीर की कल्पना की जाती है, दिव्य और विराट भुवन में प्रकाश भरने वाले स्रोत की ही कल्पना होती है । ब्रह्म और आत्मा के जिस स्वरूप की कल्पना भारतीय तत्वदर्शियों ने की उसकी स्थावर कलाओं की शतशः सत्यसिद्ध तो ज्योतिर्विज्ञान ने कर दी, अब उसकी जंगम कलाओं की पुष्टि भी होने लगी है । यही जानकारियाँ एक दिन **'एकोब्रह्म द्वितीयोनास्ति'** की पुष्टि और समर्थन करने लगें तो उसे आश्चर्यजनक नहीं माना जाना चाहिये ।

विराट और लघु— परमात्मा और आत्मा

ईश्वर और जीव में लघुता और महानता की दृष्टि से अकल्पनीय अन्तर है । इतने पर भी अंशी के नाते वे सभी विशेषताएँ जीव में विद्यमान हैं, जो उसके उद्गम स्रोत ईश्वर में होती हैं । प्रश्न केवल विकसित और अविकसित स्थिति का है । अविकसित जीव तुच्छ है, इस पर भी उसमें वे सभी सम्भावनाएँ मौजूद हैं जिनसे उसका विकास सहज ही विराट रूप धारण कर सकता है । आग की छोटी-सी चिन्गारी, मूलतः ब्रह्माण्डव्यापी अग्नि तत्व का एक घटक है, जिसे अवसर मिले तो प्रचण्ड दावानल बनकर सुदूर क्षेत्रों को अपनी लपेट में ले सकती है । वह चाहे तो अपना चिन्गारी स्वरूप समाप्त करके विश्वव्यापी अग्नि तत्व में विलीन हो सकती है । जीव जब तक चाहे अपनी छोटी स्थिति में रहे—संकल्प करे तो महान् बन जाय और उसको उत्कण्ठा हो तो अपने उद्गम में विलीन होकर पूर्ण ब्रह्म भी बन सकता है । तुच्छता से महानता में विकसित होने में प्रधान बाधा उसकी संकल्प शक्ति की ही तो है । उसी की अभिवृद्धि के लिए साधना का मार्ग अपनाया जाता है ।

विराट और लघु की—परमात्मा और आत्मा की प्रत्यक्ष तुलना सूर्य और परमाणु से कर सकते हैं । सूर्य का विस्तार और शक्ति भण्डार असीम है, पर नगण्य-सा दीखने वाला परमाणु भी तुच्छ नहीं है । अपनी छोटी स्थिति में उसकी शक्ति भी उतनी है जितनी कि विस्तृत स्थिति में विशालकाय सूर्य की । ब्रह्म और जीव का अनुपात भी इसी प्रकार है ।

सूर्य की तुलना में परमाणु तुच्छ है, किन्तु परमाणु के भीतर भी इतना ही बड़ा संसार विद्यमान है जितना सूर्य के घेरे में । उसका सौर-परिवार विशाल वट वृक्ष जिस बीज से अंकुरित, पुष्पित, पल्लवित और बड़ा हुआ है वह आधे सेन्टीमीटर व्यास से भी छोटा घटक रहा होगा । इस बीज की चेतना ने जब विस्तार करना आरम्भ किया तब तना, तने से डाल, डालों से पत्ते, फूल-फल, जड़ें आदि बढ़ते चले गये । मनुष्य शरीर की आकृति और विकास प्रक्रिया भी ठीक ऐसी ही है । वीर्य के एक छोटे से छोटे कोश (स्पर्म) को स्त्री के प्रजनन कोष ने धारण किया था । पीछे वही कोश जिसमें मनुष्य स्त्री या पुरुष के शरीर की सारी सम्भावनाएँ आकृति-प्रकृति, रंग, रूप, ऊँचाई, नाक-नक्शा आदि सब कुछ विद्यमान था उसने जब बढ़ना प्रारम्भ किया तो वह अन्तरिक्ष की अनन्त शक्तियों को खींच-खींचकर शरीर रूप में विकसित होता चला गया । एक सेण्टीमीटर स्थान में कई अरब कोश आ सकते थे, जो उसी सूक्ष्मतम कोश से ५ फुट ६ इन्च का मोटा शरीर दिखाई देने लगता है ।

धरती पर जीवनोपयोगी परिस्थितियों का आधार जिन रासायनिक हलचलों और आणविक गतिविधियों पर निर्भर है, वे अन्तरिक्ष से आने वाली रेडियो तरंगों पर अवलम्बित हैं। शक्ति के स्रोत उन्हीं में हैं । विविध-विधि हलचलों की अधिष्ठात्री इन्हीं को कहना चाहिये, हमारा परिवार, हमारा शरीर, हमारा अस्तित्व सब कुछ प्रकारान्तर से इन रेडियो तरंगों पर निर्भर है, जिन्हें हम आत्मा की तरह जानते भले ही नहीं, पर निश्चित रूप से अवलम्बित उन्हीं पर हैं । जीवन लगता भर अपना है, पर उसमें समाविष्ट प्राण इसी अदृश्य सत्ता पर निर्भर हैं जिन्हें विज्ञान की भाषा में रेडियो तरंग पुंज कहते हैं ।

ये रेडियो तरंग पुंज अदृश्य सत्ता के घटक मात्र हैं । इस प्रकार के अनेकानेक शक्ति पुंजों को ब्रह्माण्डीय चेतना कहा जाता है । ब्रह्मांडीय चेतना की इन दिनों वैज्ञानिक क्षेत्रों में बहुत चर्चा है । उसे परा प्रकृति की स्वीकृति माना जाना चाहिये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परा और अपरा प्रकृति

प्रकृति के दो स्तर हैं । एक 'परा' दूसरा 'अपरा' । परा वह है जिसे पंच भौतिक कह सकते हैं । इन्द्रिय चेतना से जो अनुभव की जा सकती है अथवा यन्त्र उपकरणों की सहायता से जो प्रत्यक्ष हो सकती है । भौतिक विज्ञान का कार्यक्षेत्र यहीं तक सीमित है । कुछ समय पूर्व तक वैज्ञानिक इतने को ही सब कुछ मानते थे । चेतना की व्याख्या आणविक एवं कम्पनपरक हलचलों की ही प्रतिक्रिया है । विज्ञान द्वारा अब अपरा प्रकृति के अस्तित्व को भी स्वीकार किया जाने लगा है । इस नये कार्यक्षेत्र को सूक्ष्म जगत कहा जाने लगा है । इसकी हलचलें आणविक गतिविधियाँ नहीं कही जा सकतीं और न ताप, प्रकाश शब्द के कम्पनों से उसकी कोई तुलना हैं । उसे समष्टि मस्तिष्क माना गया है । बल्ब में जलने वाला बिजली-अन्तरिक्ष में व्यापक विद्युत शक्ति की एक चिन्गारी समझी जाती थी और दोनों का परस्पर सघन सम्बन्ध स्वीकार किया जाता था । अब व्यष्टि मस्तिष्क की एक चिन्गारी और समष्टि मस्तिष्क की व्यापक अग्नि के समकक्ष माना गया है । व्यक्तिगत मस्तिष्क की अपनी सत्ता और क्षमता है, किन्तु वह सर्वथा स्वतंत्र नहीं वरन् वह समष्टि मस्तिष्क का एक अंग है, जिसे इन दिनों वैज्ञानिक क्षेत्र में 'ब्रह्माण्डीय चेतना' नाम दिया गया है । व्यक्ति समाज का एक अविच्छिन्न अंग है, एकाकी रहने लगे तो भी वह समष्टि से पृथक् होने का दावा नहीं कर सकता । उसे अब तक जो ज्ञान, अनुभव, संस्कार, कौशल आदि मिला है, शारीर पोषण हुआ है । वह सब समाज का ही अनुदान है । एकाकी निर्वाह में भी आखिर कुछ उपकरण तो साथ रखे ही गये हैं । माला, कमण्डल, कोपीन, कुल्हाड़ी जैसे साधनों के बिना तो गुफा में रहने वाले भी काम नहीं चला पाते । अग्नि का आविष्कार उस एकाकी व्यक्ति ने स्वयं नहीं किया है । इस प्रकार एकान्तवासी कहलाने वाले का भूतकालीन और वर्तमान क्रियाकलाप समाज सम्बद्ध रहा । आगे भी अन्तरिक्ष में चलने वाली असंख्य व्यक्तियों की असंख्य विचार तरंगें अप्रत्यक्ष रूप से उसे प्रभावित करेंगी और वह स्वयं दूसरों को अपनी मनःतरंगों से प्रभावित करेगा, यह भी सामाजिक आदान-प्रदान हुआ ।

व्यक्ति का शरीर निर्वाह एवम् विकास समाज पर आश्रित है और अविच्छिन्न रूप से सम्बद्ध है । ठीक इसी प्रकार व्यक्ति मस्तिष्क स्वतंत्र दीखने पर भी वह समष्टि मस्तिष्क का एक अंग है ।

'समूह-मस्तिष्क' के अस्तित्व और उसके 'व्यक्ति मस्तिष्क' के साथ आदान-प्रदान की बात अब दिन-दिन अधिक स्पष्ट होती और अधिक प्रामाणिक बनती चली जा रही है । मनुष्य का अचेतन मन अत्यधिक अद्भुत और रहस्यमय होने की बात तथ्य रूप में स्वीकार कर ली गई है । चेतन मन की बुद्धि क्षमता उसकी तुलना में अति तुच्छ है । इसी प्रकार अन्तरिक्ष में मनुष्यों के छोड़े हुए विचार और उनके आदान-प्रदान की जानकारी भी ऐसी ही उथली और कम महत्व की समझी जाने लगी है और रहस्यमय उस प्रवाह को माना जाने लगा है जो समष्टि की अचेतन-चेतना से सम्बद्ध है ।

मानवी चेतना मोटेतौर से शरीर निर्वाह एवं अहंता की तुष्टि तथा विस्मृति में संलग्न हलचल मात्र दृष्टिगोचर होती है । उसका प्रयोजन शरीर को सुखी तथा सक्रिय बनाए रहना भर प्रतीत होता है । लगता है शरीर मुख्य है और उसकी वृत्ति, पुष्टि, सुरक्षा एवं प्रगति के लिए सरंजाम जुटाने भर के लिए उसका सृजन एवम् उदय हुआ है । आमतौर से ऐसा ही समझा जाता है । उपयोग भी इसी स्तर पर होता है । मस्तिष्क का शरीर सुख के लिए जितना अधिक उपयोग हो सके उतनी ही उसकी सफलता एवम् सार्थकता मानी जाती है ।

गहराई में उतरने पर बात कुछ दूसरी ही दृष्टिगोचर होती है । मस्तिष्क—चेतना के निवास का केन्द्रीय शक्ति संस्थान है । यहाँ ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ जीव चेतना का मिलन-संगम होता है और उस आदान-प्रदान के आधार पर प्राणिजगत को अनेकानेक सुविधाएँ एवम् सम्वेदनाएँ उपलब्ध होती हैं । यह मस्तिष्कीय केन्द्र इतना अधिक शक्तिशाली है कि उसके माध्यम से पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एकता का अनुभव एवं लाभ आश्चर्यजनक मात्रा में उपलब्ध किया जा सकता है ।

हमें सामान्य जानकारियाँ इन्द्रिय शक्ति के आधार पर मिलती हैं । पर यदि प्रसुप्त अतीन्द्रिय शक्ति को जाग्रत किया जा सके तो व्यापक ब्रह्माण्ड सत्ता के साथ अपना सम्पर्क जुड़ सकता है और ससीम से असीम स्थिति में पहुँचा जा सकता है ।

इस विश्व में जड़ और चेतना की द्विधा अपने-अपने नियत प्रयोजनों में संलग्न है । उनका वैभव भी महासमुद्र की तरह है, जिसके किनारे पर बैठकर मनुष्य ने सीप और घोंघे ही ढूँढ़े हैं । प्रकृत परमाणुओं में और जीवाणु घटकों में जो सामर्थ्य तथा चेतना विद्यमान है उसका बहुत छोटा अंश ही जानना, हथियाना सम्भव हो सका है । सब कुछ पाना खींच-तान से छीना-झपटी से नहीं उसमें घुल जाने से ही सम्भव हो सकता है । समुद्र के पानी को कोई घड़ा कितनी मात्रा में अपने में भर सकेगा ? सम्पूर्ण समुद्र के साथ एकता स्थापित करनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो तो घड़े को अपना जल समुद्र में मिला देना पड़ेगा तभी तुच्छता को सुविस्तृत स्थिति में अनुभव कर सकना सम्भव होगा ।

योग साधना का प्रयोजन अपनी ससीमता को असीमता के साथ जोड़ देना है । इस प्रयोजन में जितनी ही सफलता मिलती जाती है, उतनी ही मात्रा में मनुष्य उस वैभव पर आधिपत्य जमाता जाता है, जिसके प्रभाव को हम जड़-चेतन जगत में अपने चारों ओर फैला हुआ देखते हैं । सीमाबद्ध स्थिति में हम तुच्छ और दरिद्र होते हैं, पर असीम के साथ जुड़ जाने पर महानता प्राप्त करने में कोई कमी नहीं रह जाती । सम्पन्नता से भरे-पूरे भण्डार से हमारी भागीदारी जितनी अधिक होती है उतनी ही अपनी स्थिति भी विभूतिमयी बनती चली जाती है । सिद्ध पुरुषों में देखी गई विशिष्ट क्षमताएँ और कुछ नहीं विराट के साथ उनकी घनिष्टता का आरम्भिक उपहार भर है । बढ़ी-चढ़ी स्थिति तो ऐसी बन जाती है जिसमें आत्मा और परमात्मा के बीच कोई बहुत बड़ा अन्तर नहीं रह जाता, दोनों समतुल्य ही दीखते हैं ।

शरीर संस्थान में भी सूक्ष्म ही प्रखर

भौतिक और आध्यात्मिक दोनों ही क्षेत्रों में सूक्ष्म शक्ति की प्रखरता काम करती देखी जा सकती है । जीवन की गरिमा और सफलता उसके स्थूल वैभव में सन्निहित नहीं है जैसी कि आप लोगों द्वारा समझी जाती है । उसका वर्चस्व सूक्ष्म चिंतन द्वारा किये गये आत्मनिर्माण में सन्निहित है । सद्गुणों की सम्पदा वह स्वर्ण भण्डार है, जिसके छोटे-छोटे टुकड़ों के बदले प्रचुर मात्रा में मनोरंजक सामग्री खरीदी जा सकती है ।

उदाहरण के लिए शरीर-संचालन को ही लेते हैं । लगता है हाथ, पैर, सिर आदि के सहारे ही जीवन यात्रा चल रही है । ऊपरी परत उखेड़ने पर पता लगता है कि रक्त, माँस, हड्डी आदि धातुएँ प्रधान हैं, पीछे हृदय, फेफड़े, आमाशय, गुर्दे आदि के कल-पुर्जे परस्पर मिल-जुलकर जिस तरह काम कर रहे हैं, उस तालमेल को देखकर अचम्भा होता है । आगे चलकर कोटि-कोटि जीवाणुओं की विचित्र गतिविधियाँ देखकर उसे जादूमहल मानना पड़ता है ।

मोटेतौर पर यह समझा जाता है कि आहार से रक्त बनता है और रक्त की शक्ति से शरीर में गर्मी तथा शक्ति बनी रहती है । पर बारीकी से देखने पर विदित होता है कि आहार को रक्त में परिणत करने वाली एक प्रणाली और भी है और वही अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण भी है । स्वसंचालित नाड़ी-संस्थान तथा चेतन-अचेतन द्वारा उनके नियंत्रण, संचालन की बात भी अब मोटी बात ही रह गई है । मस्तिष्क अचेतन नाड़ी-संस्थान को दिशा, प्रेरणा और सामर्थ्य देने वाले केन्द्र और भी सूक्ष्म हैं और उनके निरीक्षण से पता चला है कि शक्ति और अशक्ति के मूल आधार और भी अधिक गहराई में छिपे हुए हैं और वे पिछले दिनों प्रायः अविज्ञात ही बने रहे हैं । घी-दूध जैसे मोटा बनाने वाले पदार्थों से वंचित व्यक्ति भी जब मोटे होते चले जाते हैं और चिकनाई तथा पौष्टिक आहार में डूबे रहने वाले भी जब दुबले-पतले रहते हैं तो आहार का स्वास्थ्य पर पड़ने वाला प्रभाव गलत सिद्ध होता है । इसी प्रकार शरीर में चुस्ती, थकान, सर्दी, गर्मी का बाहुल्य, कद का बहुत छोटा या बहुत बड़ा होना, मन्द और तीव्र बुद्धि, हिम्मत और भीरुता, सौन्दर्य और कुरूपता जैसी बातें जब स्वास्थ्य के सामान्य नियमों का उल्लंघन करते हुए घटने या बढ़ने लगती हैं तब भी आश्चर्य होता है कि समुचित सावधानी बरतने पर भी यह अकस्मात् ही क्या और क्यों होने लगता है ।

यह आधार वे ग्रन्थियाँ हैं जो 'हारमोन' नामक रसों को प्रवाहित करती रहती हैं और वह रस-रक्त में मिलकर सजीवन का काम करते हैं । इन रसों के उत्पादन या प्रवाह में तनिक भी व्यतिक्रम या अवरोध उत्पन्न हो जाय तो शरीर का ही नहीं, मन का भी सारा ढाँचा लड़खड़ाने लगता है ।

साधारणतया आहार-विहार का प्रभाव स्वास्थ्य पर पड़ता है । स्वास्थ्य के नियमों का पालन करने वाले नीरोग रहते हैं और असंयम बरतने वाले—अखाद्य खाने वाले बीमार पड़ते हैं । बीमारियों के कारण रोग-कीटाणुओं के रूप में—ऋतु प्रभाव या धातुओं, तत्वों के हेर-फेर में ढूँढ़े जाते हैं और उसी आधार पर चिकित्सा की जाती है । पर कई बार इन सब मान्यताओं को झुठलाते हुए ऐसे कारण उपस्थित हो जाते हैं कि अप्रत्याशित रूप से शरीर के किन्हीं अवयवों का या प्रवृत्तियों का यकायक घटना-बढ़ना शुरू हो जाता है । कारण ढूँढ़ते हैं तो समझ में नहीं आता, अंधेरे में ढेला फेंकने की तरह कुछ उपचार किया जाता है तो उसका कुछ परिणाम नहीं निकलता ।

ऐसी परिस्थितियाँ प्रायः हारमोन ग्रन्थियों में गड़बड़ी आ जाने के कारण उत्पन्न होती हैं । शरीर के सामान्य अवयवों की संरचना और उनकी कार्यपद्धति का ज्ञान धीरे-धीरे बढ़ता आया है, इसलिये रोगों के कारण और निवारण के सम्बन्ध में काफी प्रगति भी हुई है । पर यह अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की आश्चर्यचकित करने वाली हरकतें जब से सामने आई हैं तब से चिकित्सा-विज्ञानी स्तब्ध रह गए हैं, प्रत्यक्षतः शरीरगत क्रिया-कलाप से इनका कोई सीधा उपयोग नहीं है । वे किसी महत्वपूर्ण आवश्यकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की पूर्ति नहीं करतीं । चुपचाप एक कोने में पड़ी रहती हैं और वहीं से तनिक सा स्राव बहा देती हैं । वह स्राव भी पाचन अंगों द्वारा नहीं सीधा रक्त से जा मिलता है और अपना जादू जैसा प्रभाव छोड़ता है ।

हारमोन, शरीर और मन पर कितने ही प्रकार के प्रभाव डालते और परिवर्तन करते हैं । उनमें से एक परिवर्तन कामवासना का मानसिक जागरण और यौन अंगों की प्रजनन क्षमता भी सम्मिलित है ।

छोटी उम्र के लड़की और लड़के लगभग एक जैसे लगते हैं । कपड़ों से, बालों से उनकी भिन्नता पहचानी जा सकती है अन्यथा वे साथ-साथ हँसते, खेलते, खाते हैं । कोई विशेष अन्तर दिखाई नहीं पड़ता पर जब बारह वर्ष से आयु ऊपर उठती है तो दोनों में काफी अन्तर अनायास ही उत्पन्न होने लगता है । लड़के की आवाज भारी होने लगती है । होंठों के बाल काले होने लगते है और कोमल अंग कठोर होने लगते है । लड़कियाँ शरमाने लगती हैं, उनके कुछ अंगों में उभार आने लगता है और नए किस्म की इच्छायें तथा कामनायें मन में घुमड़ने लगती हैं ।

यह 'हारमोन' स्रावों की करतूत है । वे समय-समय पर ऐसे उठते-जगते हैं मानो किसी घड़ी में अलार्म लगा कर रख दिया हो अथवा टाइम बम को समय के काँटे के साथ फिट करके रखा हो । यौवन उभार के सम्बन्ध में इन्हीं के द्वारा सारा खेल रचा जाता है । अन्य सारा शरीर अपने ढंग से ठीक काम करता रहे पर यदि इन हारमोन ग्रन्थियों का स्राव न्यून हो तो यौवन अंग ही विकसित न होंगे और यदि किसी प्रकार विकसित हो भी जाएँ तो उनमें वासना का उभार नहीं होगा, न कामेच्छा जाग्रत होगी, न उस क्रिया में रुचि होगी । सन्तानोत्पादन तो होगा ही कैसे ?

साधारणतया कामोत्तेजना का प्रसंग १५-१६ वर्ष की आयु से आरम्भ होकर ६० वर्ष पर जाकर लगभग समाप्त हो जाता है । स्त्रियों का मासिक धर्म बन्द हो जाने पर लगभग पचास वर्ष की आयु में उनकी वासनात्मक शारीरिक क्षमता और मानसिक आकांक्षा दोनों ही समाप्त हो जाती हैं । इसी प्रकार ६० वर्ष पर पहुँचते-पहुँचते पुरुष की इन्द्रियाँ एवं आकांक्षायें भी शिथिल और समाप्त हो जाती है । यह सामान्य क्रम है । पर कई बार हारमोनों की प्रबलता इस सन्दर्भ में आश्चर्यजनक अपवाद प्रस्तुत करती हैं । बहुत छोटी आयु के बच्चे भी न केवल पूर्ण मैथुन में वरन् सफल प्रजनन में भी समर्थ देखे गए हैं । उसी प्रकार शताधिक आयु हो जाने पर भी वृद्ध व्यक्तियों में इस प्रकार की युवावस्था जैसी परिपूर्ण क्षमता पाई गई है ।

लिंग भेद से सम्बन्धित हारमोनों में गड़बड़ी पड़ जाय तो नारी को मूँछें निकल सकती हैं । पुरुष बिना मूँछ का हो सकता है तथा दोनों की प्रवृत्तियाँ भिन्न लिंग जैसी हो सकती हैं । नारी-पुरुष की तरह कठिन व्यवहार करने वाली और नर, जनखों जैसे स्त्री स्वभाव का हो सकता है । यौन आकांक्षाएँ भी विपरीत वर्ग जैसी हो सकती हैं । इतना ही नहीं कई बार तो इन हारमोनों का उत्पात ऐसा हो सकता है कि प्रजनन अंगों की बनावट ही बदल जाय । ऐसे अनेक आपरेशनों के समाचार समय-समय पर सुनने को मिलते रहते हैं जिनमें नर से नारी की और नारी से नर की जननेन्द्रियों का विकास हुआ और फिर शल्य क्रिया द्वारा उसे तब तक के जीवन की अपेक्षा भिन्न लिंग का घोषित किया गया । इसी नई परिस्थिति के अनुसार उन्होंने साथी ढूँढ़े विवाह किए और गृहस्थ बनाये ।

हिप्पोक्रेट्स ने इस तरह की विपरीत वर्गीय कुछ घटनाएँ देखी थीं और उनका कारण समझने का प्रयत्न किया था । चिकित्सक प्लिनी ने एक ऐसे सात वर्ष के लड़के का वर्णन लिखा है जो लैंगिक दृष्टि से पूर्ण विकसित हो गया था ।

८ जनवरी सन् १९१० को दो चीनी बच्चों ने सामान्य बालकों को जन्म दिया, जिसमें माता की उम्र ८ वर्ष और पिता की ९ वर्ष की थी । संसार में यह सबसे छोटे माता-पिता हैं । अमोथ फुकेन प्रान्त का यह कृषक परिवार 'साद' नाम से पुकारा जाता है । इस परिवार में ऐसे ही बाल प्रजनन के और भी उदाहरण हुए हैं ।

कलावार (अफ्रीका) में भी कुछ समय पूर्व ऐसी ही घटना घटित हुई थी । वहाँ एक्की नामक एक नीग्रो की आठ वर्षीय पत्नी ने आठ वर्ष चार मास की आयु में ही प्रसव किया और एक बालिका को जन्म दिया । आश्चर्य यह और देखिए कि वह बच्ची भी अपनी माँ की तरह आठ वर्ष की आयु में ही माँ बन गई । इस प्रकार उमेजी को १७ वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते दादी बनने का अवसर प्राप्त हो गया ।

सूडान में भी एक नौ वर्ष की लड़की माँ बनी है । उसका पति १० वर्ष का है । यह समाचार प्रायः सभी समाचार पत्रों में छपा था ।

जोरा आगा नामक टर्की के एक दीर्घजीवी वृद्ध पुरुष की आयु १९२७ में १५३ वर्ष की थी । उस समय उसने अपना ग्यारहवाँ विवाह किया था । उससे पूर्व १० स्त्रियों और २७ बच्चों को वह अपने हाथों कब्र में सुला चुका था । उसके जीवित बच्चे ७० वर्ष से ऊपर थे ।

लिंग परिवर्तन की घटनाओं में यही होता है । मनुष्य की आकांक्षायें और अभिरुचियाँ जिधर गतिशील होती हैं उसी तरह की लिंग मनोभूमि बनती चली जाती है । कोई नारी यदि नर के प्रति अत्यधिक आसक्त होती है, उसी के सान्निध्य एवं चिंतन में निरत रहती है तो उसका अन्तःकरण उसी ढाँचे में ढलता और तादात्म्य होता चला जाएगा । कालान्तर में वह आकांक्षा उसे स्वयं नर के रूप में परिणत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर सकती है । इसी प्रकार कोई नर यदि नारी के चिंतन और सान्निध्य में अतिशय रुचि लेता है तो उसकी चेतना नारी वर्ग में परिणत होने लगेगी और वह उस प्रवृत्ति की तीव्रता के अनुरूप देर में या जल्दी लिंग परिवर्तन कर लेगा । इसमें एकाध जन्म की देरी भी हो सकती है । लिंग परिवर्तन की ऐसी घटनाओं में जिनमें नारी नर के रूप में या नर नारी के रूप में परिणत किए गए, उनमें शारीरिक या मानसिक कारण नहीं होते वरन् अन्त:चेतना का गहन स्तर कारण शरीर ही इस प्रकार की पृष्ठभूमि विनिर्मित करता है । नपुंसक वर्ग भी ऐसी ही स्थिति है । इसे परिवर्तन का मध्य स्थल कह सकते हैं ।

समलिंगी आकर्षण से लेकर सहवास तक की अनेक घटनाएँ देखने-सुनने में आती रहती हैं । इसमें भी वह अतृप्त आन्तरिक आकांक्षा ही उभरती है । दो नर-नारी यदि नर रूप में विकसित हो रही होंगी तो उनमें नर के प्रति आकर्षण की विद्यमान मात्रा स्त्री रति की अपेक्षा पुरुष रति में रस एवं तृप्ति अनुभव करेगी और उनमें परस्पर घनिष्टता बढ़ती जाएगी । इसी प्रकार दो नर यदि नारी रूप में विकसित हुए हैं तो उनका पूर्वाभ्यास नारी के प्रति आकर्षण बनाए रहेगा और वे दो नारियाँ परस्पर मिलन का अधिक आनन्द अनुभव करेंगी । यह विपर्यय दोनों कारणों से हो सकता है । विकसित होती हुई आकांक्षा भी अपनी अतृप्ति का समाधान कर सकती है । इसी प्रकार विकास आगे चल पड़ा है । शरीर बदल गए हैं पर पूर्व मनोवृत्ति में भिन्न लिंग के संस्कार अभी भी प्रबल हैं तो वे भी बार-बार वैसी ही उमंगें उठाकर समलिंगी सम्पर्क में अधिक आकर्षण अनुभव कर सकते हैं ।

गत वर्ष योरोप में ऐसे विवाहों को अदालत द्वारा भी मान्यता मिल चुकी है, जिनमें पति-पत्नी दोनों या तो नर ही थे या नारी ही नारी । यों ऐसे प्रसंग निजी और अप्रकट रूप से चलते तो रहते हैं पर पिछली न्यायिक परम्पराएँ तोड़कर जिन्हें कानूनी मान्यता मिली हो ऐसे विवाह गत वर्ष ही सर्व साधारण के सामने आए हैं ।

काम-वासना को ही लें पुराने जमाने में भस्में तथा रसायनें खिलाकर मृत या स्वल्प कामेच्छा को पुनर्जाग्रत करने का प्रयत्न किया जाता था । यह प्रयास भी नशे से उत्पन्न क्षणिक उत्तेजना जैसा ही सिद्ध हुआ । जब से हारमोन प्रक्रिया का ज्ञान हुआ है, तब से यौन ग्रन्थियों के रसों को पहुँचाने से लेकर बन्दर एवं कुत्ते की ग्रन्थियों का आरोपण करने तक का क्रम बराबर चल रहा है । आरम्भ में उससे तत्काल लाभ दिखता है पर वह बाहर का आरोपण देर तक नहीं ठहरता । भयंकर आपरेशनों के समय रोगी को अन्य व्यक्ति का रक्त दिया जाता है, वह शरीर में ३-४ दिन से अधिक नहीं ठहरता । शरीर यदि नया रक्त स्वयं बनाने लगे तो ही फिर आगे की गाड़ी चलती है । इसी प्रकार आरोपित स्राव अथवा रस ग्रन्थियाँ तत्काल ही लाभ दिखावेंगी यदि उस उत्तेजना से अपनी ग्रन्थियाँ जाग्रत होकर स्वत: काम करने लगें तो ही कुछ काम चलेगा अन्यथा वह बाहरी आरोपण की फुलझड़ी थोड़ी देर चमक दिखाकर बुझ जाएगी । अब तक के बाहरी आरोपण के सारे प्रयास निष्फल हो गये हैं । कुछ सप्ताह का चमत्कार देख लेने के अतिरिक्त उनसे कोई प्रयोजन सिद्ध न हुआ ।

सन् १८७९ में एक वृद्ध डॉक्टर ब्राउन सेक्वार्ड ने घोषणा की कि उसने कुत्ते का वृषण रस अपने शरीर में पहुँचाकर पुन: यौवन प्राप्त करने में सफलता प्राप्त कर ली है । ७२ वर्षीय इस डाक्टर की ओर अनेक चिकित्साशास्त्रियों का ध्यान आकर्षित हुआ और उन्होंने उसकी घोषणा को सच पाया, लेकिन यह सफलता स्थिर न रह सकी वे कुछ ही दिन बाद पुन: पुरानी स्थिति में आ गए ।

इंग्लैण्ड के डॉक्टर सूरे ने थामरेक्सिन का प्रयोग एक थायराइड विकारग्रस्त रोगिणी पर किया । दवा का असर बहुत थोड़े समय तक रहता था । कुछ वर्ष जीवित रखने के लिये एक-एक करके ८७० भेड़ों की ग्रन्थियाँ निचोड़कर उसे आये दिन लगानी पड़ती थीं । इस पर धक्का-मुक्की करके ही उसकी गाड़ी कुछ दिन और आगे धकेली जा सकी ।

शरीरशास्त्रियों ने इस अद्भुत निरंकुश को ढूँढ़ने का प्रयत्न किया तो उनकी पकड़ में अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ आ गईं । इनमें छ: प्रधान हैं । कई उप-प्रधान हैं । इनमें तनिक-तनिक से रस स्रवित होते रहते हैं और वे रेंगकर रक्त में जा मिलते हैं । इन्हें हारमोन कहते हैं । इनके भी कई भेद-उपभेद ढूँढ़े गये हैं । इतना सब होते हुए भी यह आश्चर्य का ही विषय है कि इनमें आखिर ऐसा क्या जादू है, जो शरीर की सामान्य व्यवस्था में इतनी भयानक उलट-पुलट करके रख देते हैं । स्वास्थ्य के साधारण नियमोपनियम एक ओर और इनकी मनमानी एक ओर तथा इस रस्साकसी में सामान्य व्यवस्था लड़खड़ा जाती है और इन हारमोनों की मनमानी जीतती है । इन स्रावों का रासायनिक विश्लेषण करने पर वे सामान्य स्तर के ही सिद्ध होते हैं, उनमें कुछ ऐसी अनहोनी मिश्रित नहीं दीखती जिससे ऐसे उथल-पुथल भरे परिणाम होने चाहिये । पर 'चाहिये' को ताक पर रखकर जब 'होता' है सामने आता है तो बुद्धि चकरा जाती है और इस अन्धाधुंधी में हाथ पर हाथ डालकर बैठना पड़ता है ।

अन्त:स्रावों की भेद-उपभेद की दृष्टि से संख्या भी बढ़ती जा रही है पर साधारणतया उनमें से छह प्रमुख हैं—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१) पीयूष ग्रन्थि, (२) कण्ठ ग्रन्थि, (३) अधिवृक्क ग्रन्थि (४) अग्न्याशय ग्रन्थि, (५) अण्डाशय ग्रन्थि, (६) वृषण ग्रन्थि ।

शरीर का आकार सामान्य रखने या उसे असाधारण रूप से घटा या बढ़ा देने का—यकायक भारी हेर-फेर उत्पन्न कर देने का कारण मस्तिष्क स्थित पीयूष ग्रन्थि ही है । उसमें जहाँ बाल की नोक की बराबर अन्तर पड़ा कि शरीर में वैसी ही विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं । हार्वर्ड विश्वविद्यालय के सर्जन डॉ० हार्वे कुशिंग ने एक पिल्ले की पीयूष ग्रन्थि निकाल दी । बस फिर वह बढ़ा ही नहीं । सदा के लिये पिल्ला ही बना रह गया । चूहों के बच्चे पीयूष ग्रन्थि रहित किए गए तो वे बढ़िया से बढ़िया भोजन देने पर उतने ही छोटे बने रहे । न उनका कद बढ़ा और न वजन में रत्ती भर भी अन्तर आया । बूढ़े होने तक वे बच्चे ही बने रहे । कोलम्बिया विश्वविद्यालय के सर्जन फिलिप स्मिथ ने एक चूहे की पीयूष ग्रन्थि दूसरे में फिट कर दी तो दूने हारमोन बढ़ने से वह चूहा असाधारण रूप से बढ़ा और अपने साथियों की तुलना में तीन गुना दैत्य जैसा हो गया ।

हारमोन ग्रन्थियों में अन्तर आने से शरीर का विकास असाधारण रूप से रुक सकता है और आश्चर्यजनक रीति से बढ़ सकता है । २५ इन्च ऊँचा आदमी टामथम्ब और २४ इन्च ऊँची स्त्री लेवोनिया लोगों की दृष्टि में आश्चर्यजनक हैं पर यह हारमोन ग्रन्थियों की एक मामूली-सी उलट-पुलट मात्र है । टामथम्ब जन्म के समय ९ पौण्ड २ औंस था, पर न जाने क्या हुआ कि आशा के विपरीत वह जहाँ का तहाँ रह गया । बाजीगरी का धन्धा करता था । उसने अपने ही जैसी बौनी लड़की भी ढूँढ़ निकाली । उससे शादी करके अपने व्यवसाय को और भी अधिक आकर्षक बनाया । उनका यह पलड़ा दूसरी तरफ झुक जाय तो फिर लम्बाई ही लम्बाई बढ़ती चली जायगी । ८ फुट ११ इन्च ऊँचा आदमी राबर्ट वाडली ताड़ के पेड़ जैसा लगता था । पलामू (बिहार) में साढ़े सात फुट ऊँचा तिलवर नामक व्यक्ति अभी कुछ दिन पहले तक लोगों का ध्यान अपनी अनोखी लम्बाई की ओर खींचता रहता था ।

रूस का शासक जार पीटर स्वयं लम्बे कद का था, उसे लम्बे आदमी बहुत पसन्द थे । उसका एक प्रिय लम्बा सार्जेन्ट जब मरा तो जार ने उसके अस्थि–पिंजर को कुन्सत्कैयर के संग्रहालय में सुरक्षित रखने का आदेश दिया । तब से वह रखा ही हुआ था । अब दो सौ वर्ष बाद एक्स किरणों की सहायता से उस कंकाल की असाधारण लम्बाई का कारण खोजा गया है तो उसमें पीयूष ग्रन्थि से अधिक स्राव होना ही कारण पाया गया है ।

सिकन्दरिया में एक ऐसा बौना मनुष्य था जिसकी ऊँचाई केवल १७ इन्च थी, उसका नाम था अलीपियस । उसे वहाँ के अमीर जैम्बिलकस ने अपने मेहमानों के मनोरंजन के लिए अपने पास रखा था और उसे कभी-कभी तोते के पिंजड़े में बन्द करके इधर-उधर ले जाया जाता था ।

ओहियो (संयुक्त राज्य) के सिनसिनाटी नगर में एक लड़की थी कुमारी फैनी माइल्स । यह सन् १८८० में जन्मी । इसके और सब अंग तो साधारण थे पर पैरों के पंजे असाधारण रूप से लम्बे थे । उनकी लम्बाई दो-दो फुट थी । उसकी इस विचित्रता से सभी डरते थे और कोई उससे विवाह करने के लिये तैयार न हुआ ।

डेट्रोमेट, मिचीराना (अमेरिका) का एक नागरिक अल्फेड लेंजवेन एक अनोखी शारीरिक विशेषता से सम्पन्न था, जिस प्रकार दूसरे लोग नथुनों से साँस लेते हैं वह आँखों से ले सकता था और छोड़ सकता था । परीक्षा के तौर पर वह जलता दीपक और मोमबत्तियाँ मुँह और नाक बन्द करके मात्र आँखों से देखकर बुझा देता था ।

फेडपैटजेल की आवाज इतनी बुलन्द थी कि जब वे गरजकर बोलते तो उनकी कही हुई बात तीन मील तक सुनी जा सकती थी ।

अन्तःस्रावी ग्रन्थि में गड़बड़ी

गले के पास थायराइड नामक ग्रन्थि है । इससे थाइराक्सिन नामक हारमोन निकलता और रक्त में सम्मिलित होता रहता है । यदि इसकी कमी हो जाय तो पाचन क्रिया बिगड़ जाती है, मस्तिष्क कुन्द हो जाता है, त्वचा और केशों में रुक्षता छाई रहती है, होंठ और पलक लटक जाते हैं, शरीर थुलथुला हो जाता है, अँगुली गाढ़ने से गड्ढा बनने लगता है, थकान छाई रहती है, ठण्ड अधिक सताती है, यदि यह ग्रन्थि बढ़ जाय तो गला मोटा होने लगता है, 'घेंघे ' की शिकायत खड़ी हो जाती है, आहार-विहार सब कुछ ठीक रहने पर भी यह ग्रन्थि सूखने या बढ़ने लग सकती है ।

इस महत्वपूर्ण किन्तु अनियन्त्रित ग्रन्थि में गड़बड़ी क्यों पड़ती है ? यह खोजते हुए शरीरशास्त्री सिर्फ इतना जान सके हैं कि 'आयोडीन' की कमी पड़ने से ऐसा होता है । वे कहते हैं भोजन में कम से कम २० माइक्रो ग्राम आयोडीन होनी चाहिये, समुद्री जल, समुद्री नमक, समुद्री घास-पात, समुद्री मछली में वे आयोडीन का बाहुल्य बताते हैं । यह सब करने पर भी बहुत बार निराश ही होना पड़ता है । श्वास नली के ऊपरी भाग को ढके हुए, गहरे लाल रंग की दो पत्तियों वाली,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तितलीनुमा यह थायराइड ग्रन्थि तो भी काबू में नहीं आती। अन्वेषकों ने इस ग्रन्थि के गह्वर में 'कोलॉइड' नामक एक पीला प्रोटीन और ढूँढ़ निकाला और अनुमान लगाया कि शायद यही थाइराक्सिन को प्रभावित करता हो, पर यह निष्कर्ष भी गलत ही निकला ।

थायराइड में सिकुड़न आ जाने से चमड़ी शुष्क रहने लगती है, बाल झड़ने लगते हैं और रूखे हो जाते हैं, उनकी चिकनाई और मुलायमी नष्ट होती जाती है । उभरी हुई आँखें, लटके हुये होंठ, याददास्त की कमजोरी, मोटी चमड़ी, माँस में अँगुली दबाने से गड्ढा जैसा बन जाना जैसी विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं । शरीर में बेहद थकान, मस्तिष्क में जड़ता, याददास्त घटना, उदासी, किसी भी काम में मन न लगना, जैसी शिकायतें अकारण ही पैदा होने लगें तो उसका कारण थायराइड से प्रभावित होने वाले हारमोन थाइराक्सिन की कमी पड़ना समझना चाहिए। इस कमी के कारण शरीर में ऑक्सीजन सोखने की शक्ति घट जाती है । स्वच्छ हवा मिलने पर भी वह उसका लाभ नहीं उठा पाता । ऑक्सीजन की कमी से उपरोक्त उपद्रव खड़े होते और बढ़ते हैं ।

इसी कमी को पूरा करने के लिए दूसरे प्राणियों की थाइराइड का सत्व प्रवेश कराया गया उसका तालमेल भी नहीं बैठा । कृत्रिम थायराक्सिन बनाने के लिये डॉ० ई० सी० कैन्डाल और हैरिंगटन वार्गन नामक अँग्रेज ने भारी प्रयत्न किया और कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन तथा आयोडीन के सम्मिश्रण से उसे बना भी लिया । देखने में समतुल्य होने पर भी वह उस कमी को पूरी न कर सका, आयोडीन नमक में मिलाकर खिलाने का भी प्रयोग बहुत चला पर वह भी कुछ स्थायी प्रभाव न दिखा सका ।

अधिक मात्रा में यह हारमोन निकलने लगे तो भी मुसीबत खड़ी होती है । इंजन तेज हो जाता है और बढ़ी हुई गर्मी हर अवयव की गति तेज कर देती है । धड़कन बढ़ जाती है, पसीना फूटता है, उत्तेजना रहती है, चिड़चिड़ापन बढ़ता है और रक्तचाप बढ़ा हुआ दिखाई देता है । गले की मोटाई बढ़ने लगती है । रेडियम, एक्स किरणें, रेडियो सक्रिय आयोडीन आदि उपचारों का भी इन दिनों इस पर प्रयोग परीक्षण चल रहा है, थायराइड के भीतर पाई जाने वाली पैराथायराइड नन्हीं-सी ग्रन्थियों की भी तलाश की जा रही है पर रहस्य का पर्दा तो भी उठता नहीं ।

डॉ० इसले व कनाडा के रसायनशास्त्री कोलीय तक से लेकर थाइराइड को नियन्त्रित करने का सिलसिला अद्यावधि चल ही रहा है । कैल्शियम देने से शायद कुछ काम चले यह भी परख लिया गया है ।

भोजन का ग्रास पेट में पहुँचते ही वहाँ उसका परिवर्तन होने लगता है । स्टार्च तथा शुगर दोनों अंश ग्लूकोज शर्करा में बदल जाते हैं । इस ग्लूकोज का कुछ अंश तत्काल खून में चला जाता है और शरीर को गर्मी तथा शक्ति देने के काम आता है । शेष ग्लाइकोजन के रूप में जिगर में जाकर जमा हो जाता है और आवश्यकतानुसार उसका उपयोग होता रहता है, पर जिन्हें मधुमेह-डायबिटीज की शिकायत हो जाती है उनकी भोजन से बनी हुई शर्करा शरीर में काम नहीं आती वरन् रक्त में उसकी मात्रा बढ़ती चली जाती है । उधर शर्करा अभाव के कारण शरीर क्षतिग्रस्त होता चला जाता है । यह गड़बड़ी अग्न्याशय नामक ग्रन्थि से निकलने वाले इन्सुलोन नामक हारमोन की कमी पड़ जाने के कारण उत्पन्न होती है ।

फैडरिक वैंटिंग ने इस सम्बन्ध में भारी शोध किया । लैंगर हैंस की द्वीपिकाओं में बनने वाले इस रसायन को पहले आइजलीटिन कहा जाता था । पीछे इसे इन्सुलिन कहा जाने लगा । इसी शोध पर वैंटिंग तथा मैकलियाड को नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ ।

आधा लीटर रक्त में एक औंस के साठवें भाग के बराबर शर्करा रहती है । इसे एक प्रकार का ईंधन कहना चाहिये, जिसके आधार पर कोशिकाओं तथा माँसपेशियों को समस्त अवयवों को गरम और गतिशील रहने का अवसर मिलता है । इस कार्य में इन्सुलिन की सहायता एड्रिनेलिन भी करता है ।

गुर्दों के पास दो छोटी ग्रन्थियाँ हैं, इन्हें एड्रिनिल या अधिवृक्क कहते हैं । दोनों का मिलाकर कुल वजन लगभग १२ ग्राम बैठता है । वे लगभग दो इन्च लम्बी एक इन्च चौड़ी होती हैं । इनके दो भाग होते हैं । भीतरी भाग बाहरी भाग से खोल की तरह घिरा होता है और बाहरी भाग छाल (कार्टेक्स) कहलाता है । भीतर के गूदे को 'मनडुला' कहते हैं । कोई विपत्ति की घड़ी या तात्कालिक उत्तेजना का अवसर आने पर यह ग्रन्थियाँ सक्रिय हो उठती हैं और उससे इतनी शक्ति मिलती है, जो सामान्य शरीर बल की अपेक्षा कई गुनी होती है ।

यह छोटी-सी गाँठें उपेक्षित-सी एक कोने में पड़ी थीं, इनका कार्य ठीक तरह समझ में नहीं आता था, पीछे वे बड़ी महत्वपूर्ण मालूम हुईं । उनके द्वारा स्रवित होने वाला रस ऐड्रिनेलिन कहा जाने लगा ।

भय या खतरे के समय पाचन यन्त्र ठप्प हो जाते हैं और उस ओर लगी हुई शक्ति खतरे का सामना करने के लिये असाधारण शक्ति उत्पन्न करना आरम्भ कर देती है । दिल जोरों से धड़कता है श्वास तेज चलता है, रक्त की चाल बढ़ जाती है ताकि उस शक्ति के आधार पर शरीर उस संकट का सामना करने के लिए जोरदार प्रयत्न करने में, लड़ने या भागने में समर्थ हो सके । श्वास नली चौड़ी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाती है ताकि अधिक हवा फेफड़ों में भरी जा सके । रक्त में शर्करा बढ़ जाती है ताकि शक्ति के लिये आवश्यक ईंधन जुट सके । खतरे का सामना करने के लिये इस प्रकार हर अवयव अपनी क्षमता को तीव्र करता है । माँस-पेशियाँ तन जाती हैं । समस्त शरीर उत्तेजित दीखता है, चेहरा लाल हो जाने के रूप में इस बढ़ी हुई शक्ति को प्रत्यक्ष देखा जा सकता है ।

जहाँ तक खोज का विषय है उन अन्तःस्राव ग्रन्थियों का उनसे प्रवाहित होने वाले रसों का स्वरूप समझ लिया गया है और उनका रासायनिक विश्लेषण कर लिया गया है । पर उनकी असाधारण महत्ता और असाधारण हरकत का कुछ कारण नहीं जाना जा सका । इतना ही नहीं उसके नियंत्रण का भी कोई उपाय हाथ नहीं लगा है । यह मोटा और भौंड़ा तरीका है कि उसी स्तर के रसायन बाहर से पहुँचाकर उन स्रावों की कमी-वेशी के परिणामों को रोकने का प्रयत्न किया जाय । इतना ही बन पड़ा है सो किया भी गया है । अन्य जीवों से प्राप्त करके अथवा रासायनिक पद्धति से विनिर्मित करके उन रसों को व्यक्ति के शरीर में पहुँचाकर यह प्रयत्न किया जाता है कि विकृतियों पर नियंत्रण किया जाय । उसका लाभ होता तो है पर रहता क्षणिक ही है । भीतर का उपार्जन बन्द हो जाय तो बाहर से पहुँचाई मदद कब तक काम देगी । इसी प्रकार जमीन फोड़कर कोई स्रोत निकल रहा हो तो उसे एक जगह से बन्द करने पर दूसरे छेद से फूटेगा । यह तो तात्कालिक या क्षणिक उपचार हुआ । बात तब बनती है जब उत्पादन के केन्द्र स्वतः ही अपने स्रावों को घटा या बढ़ा लें उपचार का उद्देश्य तो तभी पूरा हो सकता है, पर यह स्थिति हाथ आ नहीं रही है । शरीरशास्त्रियों के सारे प्रयत्न अब तक निष्फल ही रहे हैं और आगे भी इनकी अद्भुत संरचना और कार्यपद्धति को देखते हुए अधिक आशा नहीं बँधती ।

ओछी भावनाएँ अन्तरात्मा में जमी हों और छोटा बनाने वालों पर बड़प्पन के संस्कार जम जाएँ तो शरीर को ही नहीं मस्तिष्क को भी बड़ा बनाने वाले हारमोन उत्पन्न होंगे । इन्द्रिय भोगों में आसक्त अन्तःभूमिका अपनी तृप्ति के लिए कामोत्तेजक अन्तःस्रावों की मात्रा बढ़ाती है । विवेक जाग्रत हो और विषय भोगों की निरर्थकता एवं उनकी हानियों को गहराई से समझ लिया जाय तो इन हारमोनों का प्रवाह सहज ही कुण्ठित हो जाता है । इसी प्रकार वियोग, विश्वासघात, अपमान जैसे आघात अन्तःकरण की गहराई तक चोट पहुँचा दें तो युवावस्था में भी-भले-चंगे हारमोन स्रोत सूख सकते हैं । इसके विपरीत यदि रसिकता की लहरें लहराती रहें तो वृद्धावस्था में भी वे यथावत गतिशील रह सकते हैं । जन्मान्तरों की रसानुभूति बाल्यावस्था में भी प्रबल होकर उस स्तर की उत्तेजना समय से पूर्व ही उत्पन्न कर सकती है ।

काम-क्रीड़ा शरीर द्वारा होती है, कामेच्छा की मन में उत्पत्ति होती है । पर इन हारमोनों की जटिल प्रक्रिया न शरीर से प्रभावित होती है और न मन से । उसका सीधा सम्बन्ध मनुष्य की अन्तःचेतना से है, इसे आत्मिक स्तर कह सकते हैं । जीवात्मा में जमे काम-बीज जिस स्तर के होते हैं तदनुरूप शरीर और मन का ढाँचा ढलता और बनता बिगड़ता है । हारमोनों को भी प्रेरणा, उत्तेजना वहीं से मिलती है ।

पोलियन ग्रन्थि भ्रूमध्य भाग में है । जहाँ देवताओं का तीसरा नेत्र बताया जाता है । प्राचीन-काल में ऐसे प्राणी भी थे जिनके मस्तिष्क में सचमुच एक अतिरिक्त तीसरी आँख और भी होती थी, जिससे वे बिना गर्दन मोड़े पीछे के दृश्य भी देख सकें । अभी भी अफ्रीका में कुछ ऐसी छिपकलियाँ देखी गई हैं जिनके सिर पर कार्निया, रेटिना, लेन्स युक्त पूरी तीसरी आँख होती है ।

धान के दाने की बराबर धूसर रंग की इस छोटी-सी ग्रन्थि में आश्चर्य ही आश्चर्य भरे पड़े हैं । जिन चूहों में दूसरे चूहों की पीनियल ग्रन्थि का रस भरा गया, वे साधारण समय की अपेक्षा आधे दिनों में ही यौन रूप में विकसित हो गए और जल्दी बच्चे पैदा करने लगे । समय से पूर्व उनके अन्य अंग भी विकसित हो गये पर इस विकास में जल्दी भर रही, मजबूती नहीं आयी । कामदहन की शिवजी की कथा की इन हारमोन से संगति अवश्य बैठती है पर अन्तःकरण का रुझान जिस स्तर की होगा शरीर और मन को ढालने के लिये हारमोनों का प्रवाह उसी दिशा में बहने लगेगा ।

हारमोन स्रावों की घटोत्तरी-बढ़ोत्तरी का आहार-विहार से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है । इसी प्रकार उनका सचेतन और मन से भी कोई सम्बन्ध अभी तक स्थापित नहीं किया जा सका । इसी प्रकार आनुवंशिकी विज्ञान में पैतृक जीनों से भी उनकी कुछ संगति नहीं बैठती, अचेतन मन से कोई संग्रहीत संस्कार उन्हें प्रभावित करता हो ऐसी भी तुक किसी प्रकार नहीं बैठती । फिर अकारण इन अन्तःस्रावों की अकस्मात् क्यों घटोत्तरी आरम्भ हो जाती है, इसका यथार्थ कारण ढूँढ़ना हो तो हमें अधिक गहराई तक जाना पड़ेगा । इसके आधार मनुष्य की सूक्ष्मतम चेतना से सम्बन्धित हैं ।

मनुष्य की सूक्ष्म चेतना से सम्बद्ध

मनुष्य तीन भागों में विभक्त है । एक भाग वह जो भौतिक पदार्थों का—पंच तत्वों का बना है, जिसे स्थूल शरीर कहते हैं, जिस पर आहार-विहार का प्रभाव पड़ता है और जिसका उपचार औषधियों अथवा उपकरणों से किया जाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

है । दूसरा भाग वह जिसे मन, मस्तिष्क अथवा अचेतन कहते हैं । यह सूक्ष्म शरीर है । चरित्र, चिन्तन एवम् वातावरण का इन पर प्रभाव पड़ता है । तर्क, विवेक, विचार विनिमय, भावोत्तेजन जैसे उपायों से इसे विकसित किया जाता है । नशीले तथा दूसरे प्रकार के रसायन भी इसे प्रभावित करते हैं । आहार का एवम् क्रिया-कलाप का भी इस पर प्रभाव पड़ता है । मनोविज्ञान, मस्तिष्कीय विद्या आदि के माध्यम से इसे परिष्कृत संतुलित किया जाता है ।

तीसरा भाग इन दोनों से ऊपर है, जिसे कारण शरीर, लिंग शरीर, हृदय, अन्तःकरण, आत्मचेतना आदि नामों से पुकारते हैं । इसका सीधा सम्बन्ध मनुष्य की आस्था, श्रद्धा, आकांक्षा, भावना एवम् अहंता से है । उस स्तर के पाप-पुण्य वहाँ छाये रहते हैं और इन्हीं के आधार पर जीव की अन्तरंग सत्ता का प्रकटीकरण होता है । हारमोन इसी स्तर की स्थिति में प्रभावित होते हैं, इसीलिये यदि उन्हें चाहें तो संचित प्रारब्ध अथवा संग्रहीत संस्कार भी कह सकते हैं । यह संचय इस जन्म का भी हो सकता है और पिछले जन्मों का भी । परिवर्तन एवं उपचार इस स्तर की स्थिति का भी हो सकता है पर वे प्रयत्न होने उसी प्रकार के चाहिए जो आन्तरिक सत्ता की गहराई तक प्रवेश कर सकें और अपना प्रभाव उस पृष्ठभूमि तक उतार सकें ।

क्या हारमोन क्षेत्र पर नियंत्रण हो सकता है ? क्या उनकी विकृत गतिविधियों को सन्तुलित किया जा सकता है ? क्या इच्छा या आवश्यकता के अनुरूप इन्हें घटाया या बढ़ाया जा सकता है ? इसका उत्तर 'हाँ' में दिया जा सकता है । पर यह समझ लेना चाहिये कि इसके लिये प्रयास वे करने पड़ेंगे जो अन्तःचेतना को गहराई तक प्रभावित करते हैं । शारीरिक आहार-विहार या मानसिक तर्क-वितर्क या उपचारों के द्वारा उस गहराई तक नहीं पहुँचा जा सकता जहाँ इन हारमोनों का मूलभूत उद्गम है । केवल आध्यात्मिक साधनाओं का मार्ग ही ऐसा है जो शरीर और मन को प्रभावित करके हारमोनों को ही नहीं और भी कितने ही महत्वपूर्ण आधारों में हेर-फेर करके मनुष्य को सामान्य से असामान्य बना सकता है ।

आध्यात्मिक साधनाओं द्वारा इसलिए सम्भव है कि इस विज्ञान दृष्टि में सम्पूर्ण जगत, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एक अविभक्त और एक रस सत्ता है । सागर की एक बूँद में भी वही विशेषताएँ होती हैं, जो सागर की अगाध जलराशि में विद्यमान रहती हैं । वस्तुतः अध्यात्म की दृष्टि से यह तुलना भी पूरी तरह संगत नहीं बैठती । अध्यात्म के विषय को वैभाविक उपमाओं द्वारा नहीं समझा जा सकता । मनीषियों का तो यह कहना है कि जो अणु में है वही विभु में है, इतना ही नहीं अणु ही विभु है क्योंकि अणु कहने के लिए भी तो एक विभाजन परिधि खींचनी पड़ेगी, जब सारा जगत ही उस एक तत्व से संव्याप्त है तो विभाजन रेखा खींचने के लिए भी कौन-सा रिक्त स्थान बचता है। इस तथ्य को समझने और हृदयंगम करने के बाद मनुष्य के लिए कोई शोक-संताप नहीं रह जाते ।

जड़ के भीतर विवेकवान चेतन

प्रकृति की प्रत्येक रचना परिपूर्ण

प्रकृति ने प्रत्येक जीव को उसकी दुनिया के हिसाब से परिपूर्ण बनाया है । उसे देखकर मनुष्य यह विश्वास करने को विवश होता है कि हर चेतना का निर्माण किसी उच्च चेतना के गहन चिन्तन-मनन के बाद होता है । लीमर जीव जब अपने शरीर की सफाई करता है तो उसके बहुत से बाल दाँतों में फँस जाते हैं । उस बेचारे को जिन्दगी भर इस परेशानी का सामना करना पड़ता, यदि रचयिता ने उसकी जीभ के नीचे एक दूसरी छोटी कंघीनुमा जीभ नहीं लगाई होती । इसकी सहायता से वह फँसे हुए बालों को निकाल लेता है, यदि इस सहायक जीभ को नहीं लगाया गया होता तो बेचारे का मुँह न जाने कब का सड़ जाता ।

माना कि मनुष्य की रचना परमात्मा की पूर्ण विकसित कला है, किन्तु यदि सांसारिक जीवन की सुख-सुविधाएँ ही अभीष्ट हैं तो उस दृष्टि से अन्य जीवों को भी छोटा नहीं कहा जा सकता । घोंघे को अपना आहार खुरचकर खाना होता है इसलिए उसकी जीभ में प्रकृति ने दाँत लगाए है, इन दाँतों की संख्या १२०० से १४००० तक होती है ।

अनातीदी जाति के पक्षियों में प्रकृति ने उनके पंखों के नीचे कुछ ऐसी ग्रन्थियाँ बनाई हैं जिनसे तेल निकलता रहता है । उसके कारण ही उनके पंखों का विकास होता है तथा वे चिकने और स्वस्थ बने रहते हैं । एक प्रयोग में एक बतख की तेल उत्पादक ग्रन्थि को ऑपरेशन करके निकाल दिया गया तो उसके पंख कुछ ही दिनों में झड़ गए ।

इसका यह अर्थ हुआ कि प्रकृति स्थानीय परिस्थितियों में प्रत्येक जीव के अनुरूप संरचना का ध्यान पहले रखती है, इस दृष्टि से मनुष्य निर्माण पर गर्व प्रकृति या परमात्मा करे तब तो उचित भी है, मनुष्य का अहंकार करना तो उसकी तुच्छता ही है । १०० फुट लम्बी ह्वेल का कुल वजन १२५ टन के लगभग होता है । इसके शरीर में ३५ टन चर्बी और ७० टन माँस होता है, यदि उसे हाथियों से तोला जाय तो दूसरे पलड़े पर २० से २५ हाथी तक चढ़ाने पड़ जाएँ । अकेले उसकी जीभ ३ टन और २ मन वजन का दिल होता है, जो ८ टन खून की नियमित सफाई में दिन-रात लगा रहता है, इसके लिए उसके फेफड़े एक बार में १४००० लीटर वायु खींचते हैं । नवजात ह्वेल शिशु का ही वजन ६ टन होता है और उसकी वृद्धि १ कुन्टल प्रतिदिन के हिसाब से होती है । कोई मनुष्य इतना बड़ा विकास स्वेच्छा से कर सकता है क्या ? व्यायाम से कोई किंगकांग, दारासिंह और चन्दगीराम हो सकता है, पर ह्वेल बनाने का काम परमात्मा का ही हो सकता है । अतएव सर्वोपरि कलाकार के रूप में वन्दनीय वही है, मनुष्य नहीं ।

बीटल-कीटक की आँखों पर प्रकृति ने एक चश्मा भी चढ़ा दिया है । ऊपर की आँखों से वह हवा में देखता है, किन्तु जब यह पानी में चला जाता है, तब नीचे की आँखों से देखने लगता है । हम समझते हैं हमारे पास ही इतनी बुद्धि है कि लेन्स लगाकर आँखों की बीमारी ठीक कर लें, पर प्रत्येक परिस्थिति के अनुरूप साधन इकट्ठे करने हों तो इतने विशालकाय संसाधन आवश्यक होंगे कि उनके वजन से दबकर ही मनुष्य मर जाए । अपनी परिपूर्णता बाहर नहीं अन्दर खोजी जाए तब तो कोई बात है । बात ही नहीं मनुष्य के भीतर जो सर्वांगपूर्ण सृष्टि भरी हुई है, उसे खोजा जा सके तो मनुष्य को बाहर कुछ पाने की आकांक्षा ही न रहे ।

कुछ भालुओं को ताड़ी के नशे की आदत पड़ जाती है तो उनको बार-बार ताड़ी के पेड़ों की तरफ जाना पड़ता है । ताड़ी पीकर भालू झूमने लगते हैं । उनके पाँव लड़खड़ाने लगते हैं, शिकारी इस स्थिति का लाभ उठाकर उसी प्रकार जा धमकते हैं जिस तरह नशेबाज मनुष्य को बीमारियाँ दबोच लेती हैं । भालू का शिकार भी इस स्थिति में अत्यन्त सुगम हो जाता है । अतएव वे इस ताक में रहते हैं कि भालू किस ताड़ में लगे मिट्टी के बर्तन को फोड़कर वे ताड़ी पी जाते हैं । मनुष्य को भी लगता है उसी तरह बाहर खोजने का नशा हो गया है । उससे सम्भव है कुछ समय की मस्ती तो हाथ लग जाए, पर शिकारी के हाथों पड़ जाने वाले भालू की तरह अन्ततः मनुष्य भी दुर्दैव का ही ग्रास बनता है । तब फिर उसकी शोभा क्या रही है ?

मनुष्य ने बिजली बना ली; पर अपने भीतर की बिजली को तो वह जान भी नहीं सका । ह्वेल मछली का तो नाम ही 'इलेक्ट्रिक ह्वेल' है, जिसके नाम से ही उसके विद्युत जनरेटर होने का पता चलता है । इस विद्युत शक्ति का उपयोग वह शिकार करने में करती है । वह इसके एक झटके से तैरते हुए घोड़े को भी गिरा देती है ।

'इलेक्ट्रिक रे' या 'टारपीडो फिश' का विद्युत भाग पीठ पर होता है । इसमें कितनी अधिक विद्युत शक्ति होती है, इस सम्बन्ध में जेराल्ड ड्यूरेल नामक जीवविज्ञानी का एक संस्मरण उल्लेखनीय है । वे यूनान की एक घटना के

२.२ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

हवाले से बताते हैं कि एक लड़का त्रिशूल से मछलियों का शिकार किया करता था, एक दिन उसने अपना निशाना इस मछली को बनाया, किन्तु त्रिशूल ने जैसे ही मछली का स्पर्श किया इतना जबर्दस्त झटका उसे लगा कि एक भयानक आवाज के साथ वह पानी में जा गिरा । उसे इतना जबर्दस्त विद्युत-शाक लगा था कि घण्टों बाद उसे होश आया ।

सात-आठ फुट लम्बा २१/२ से ३ मन वजन का शुतुर्मुर्ग संकट के समय बालू में सिर घुसेड़ लेने की मूर्खता के लिए ही विख्यात नहीं बल्कि तेज दौड़ने की गति के लिए भी प्रसिद्ध है । इसकी दौड़ने की गति प्रायः ६० मील प्रति घण्टे की है । इसकी चोंच का प्रहार इतना तीक्ष्ण होता है कि लोहे की चादर में भी छेद हो जाता है । इसकी पाचन शक्ति भी ऐसी होती है कि कठोर से कठोर वस्तु भी खाकर पचा लेता है । लगता है यह बीमारी मनुष्य को भी है, तभी तो कुछ भी इकट्ठा करते रहने की तृष्णा उसे अहर्निशि पीड़ित किये रहती है । वास्तव में यह शुतुर्मुर्ग की तरह रेत में मुँह छिपाने की तरह की मूर्खता है, जबकि मृत्यु निरन्तर पास आती रहती है, उसके लिए जो पूर्व तैयारी की जा सकती थी मूर्खतावश मनुष्य उससे वंचित बना रहता है ।

संरचना की दृष्टि से तो एक मक्खी भी मनुष्य से कम रहस्यपूर्ण नहीं । उसे देखकर कलाकार की कला पर आश्चर्य होता है । उसके पाँव में एक विशेष प्रकार का स्राव होता है । मक्खी जहाँ बैठी यह स्राव उस स्थान पर चिपका और उस स्थान की भोजन सामग्री को पैरों से ही चूसकर सारे शरीर में पहुँचा दिया । उसकी आँखें प्रकृति की विलक्षण रचना है । इस पर भी उसकी लगभग ८०००० जातियाँ पृथ्वी पर तब से विद्यमान चली आ रही हैं, जब मनुष्य भी नहीं आया था । इसके पंख अत्यधिक कुशल सन्तुलन तो बनाए रखते ही हैं, वह उनसे ही इन्द्रियों की बोध क्षमता का लाभ लेती है । कोई भी यांत्रिक यंत्र ऐसा नहीं बन पाया जो जिरास्कोप का भी काम कर सके, हिचकोले भी ले सके । उसके पंख सीधे मस्तिष्क के ज्ञान-तन्तुओं से सम्बद्ध होते हैं, जिससे वह तुरन्त परिस्थिति के अनुरूप इनसे काम ले लेती है ।

जीवन का नाम यदि पेट और प्रजनन ही हो तो मक्खी बनने में ज्यादा लाभ है । मादा मक्खी एक ही बार में १२५ से लेकर पाँच हजार तक अंडे देती है । मनुष्य के शरीर का विकास तो लम्बी अवधि के बाद होता है, पर मक्खी के शरीर में ऐसा न जाने क्या तन्त्र है कि यदि उसे ५ माह की भी जिन्दगी मिल जाए तो वह इसी अवधि में ५०००००००००० (पाँच खरब) बच्चे पैदा कर देगी । यही नहीं यदि एक ही जोड़ा पितामह बनने तक जीवित बच जाए तो वह इतनी सन्तान पैदा कर देगा, जिससे ६ माह में ही सारी पृथ्वी में ५० फुट ऊँचा विशालतम ढेर लग जाएगा । यह तो उसकी क्षुद्र प्रवृत्ति ही है कि वह जितनी वंश वृद्धि करती है काल उतना ही उसे चबेना बना डालता है और यह बताता रहता है, कि जो भी जीव पृथ्वी का भार बढ़ाने का प्रयास करेगा, उसका भी अन्त इन्हीं की तरह शत्रुओं से, अकाल मृत्यु और रोग-शोक से घिरा हुआ रहेगा । उसे अन्यत्र कुछ सोचने-विचारने, प्रगति करने का तो अवसर ही मिलता कहाँ है ?

मक्खियाँ धरती के लिए ही नहीं हर जीव के लिये भार हैं । उन्हें स्थान नहीं मिलता तो कुछ हवा में ही अंडे दे देती हैं । कुछ भेड़ों के थूथन पर अंडे देती हैं । कुछ उड़ती हुई मधुमक्खियों की पीठ पर अंडे देकर अपना प्रयोग तो पूरा कर लेती हैं, पर यह प्रयोग अन्ततः उसके ही वंश नाश का कारण बनते हैं । अधिक प्रजनन कम आयु का सिद्धान्त चाहे मक्खी हो या मनुष्य सर्वत्र एक-सा है । मक्खी का बच्चा ६ दिन में ही विकसित हो जाता है और १० दिन में ही मर जाता है । कुछ ही मक्खियाँ ज्यादा दिन जीती हैं पर उनकी प्रजनन क्षमता उतनी ही कम होगी । इतनी वंश वृद्धि आखिर जियेगी तो प्रकृति के सीमित साधनों को नष्ट करके ही जियेगी । कनाडा की 'पाइन-सा' मक्खियाँ प्रति वर्ष हजारों एकड़ भूमि की उपज हजम कर जाती हैं । विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार मुर्गियों के विनाश का मूल कारण यह मक्खी ही है जिसके छोटे-से पंख में एक लाख से अधिक रोग कीटाणु होते हैं । संख्या का गन्दगी से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है, गन्दगी का बीमारी से । मनुष्य जीवन का वर्तमान लेखा-जोखा उसी का नमूना है, यदि यह क्रम न रुके तो अगले दिनों हर मनुष्य एक लाख विषाणुओं की प्रयोगशाला बन जाये तो कोई आश्चर्य नहीं । आज तो मक्खी प्रति वर्ष हजारों मनुष्यों को अंधा कर देती है, तब मनुष्य मनुष्य को ही जीवित खाने लग सकता है । मनुष्य स्वयं बढ़ सकता है, आखिर पृथ्वी तो नहीं बढ़ सकती, साधन तो उस अनुपात का साथ नहीं दे सकते ।

यदि यह विवेक न हो तो मनुष्य उतना ही उपहासास्पद है जितना सूरीनाम टैड । उसकी अंडे देने और उनको सेने की क्रिया बहुत ही विलक्षण होती है—मादा अपने अंडे अपनी पीठ पर डालती जाती है । अंडा खाल में कुछ इस तरह धँस जाता है कि ऊपर एक और खोल ढक्कन की तरह चढ़ जाता है, इसी तरह सारे अंडे पीठ में ही पकते रहते हैं । विकसित होने पर जब ये बच्चे फुदक-फुदक कर बाहर निकलते हैं तो किसी नीहारिका के विस्फोट से बनने वाले ब्रह्माण्डों की कल्पना साकार हो उठती है । यह बच्चे थोड़े ही समय में स्वेच्छाचारी जीवन जीते और मनुष्य को यह बताते हैं कि यदि प्रजनन उद्देश्यपूर्ण न हुआ तो वह मेरी तरह भार ही होगा ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उल्लू जैसा मूर्ख समझा जाने वाला पक्षी कितनी विलक्षणताओं से परिपूर्ण है, उसकी कल्पना करते ही प्रकृति की सचेतन कलाकारिता पर आश्चर्य हुए बिना नहीं रहता । कहते हैं कि उल्लू रात का राजा होता है । वस्तुत: उसे रात में दिखाई नहीं देता । इस कमी की पूर्ति के लिये प्रकृति ने उसे ऐसे कान दिए हैं, जिनमें एक विचित्र ढक्कन लगा होता है । यह पूरी तरह कान को ढकता नहीं । जब कोई ध्वनि उल्लू के पास आती है तो पहले उसे वह ध्वनि एक कान से सुनाई देती है, पीछे कुछ क्षणों के बाद दूसरे से । बस श्रवण के इस अन्तर को ही वह फटाफट गणित में बदलकर यह पता लगा लेता है कि आवाज किस दिशा से कितनी दूर से आई है ? मनुष्य जोकि प्रकृति का परिपूर्ण प्राणी माना जाता है, उसे भी सम्वेदनशील कान न मिलने का दु:ख हो तो कुछ आश्चर्य नहीं, जिनसे वह और नहीं तो पृथ्वी के घूर्णन की, ग्रहों के चलने और सौर घोष जैसी ध्वनियाँ तो सुन ही लेता, यदि ऐसा हो सका होता तो नि:सन्देह उसके चिन्तन और दृष्टिकोण में आज जो संकीर्णता भरी हुई है वह नहीं होती ।

सुप्रसिद्ध जीवशास्त्री जान एच० टाड ने एक बार मछलियों पर एक प्रयोग किया । मछलियाँ एक नियत समय पर अपने सामान्य निवास से चलकर किसी विशेष स्थल में जाकर अंडे देती हैं । विकसित होने के बाद उनके बच्चे स्वयं ही अपने माता-पिता की जन्मभूमि को लौट आते हैं । वे किस बौद्धिक सूझ-बूझ और अन्त:प्रेरणा से ऐसा करती हैं, यह जानने के लिये ही यह प्रयोग किया गया था । प्रयोग के समय जहाँ मछलियाँ थीं उस स्थान को घेर दिया गया और उस स्थान का सम्बन्ध एक कुएँ से जोड़ दिया गया । ऐसा करने पर भी वे मछलियाँ कुएँ की ओर नहीं गईं, अपितु उस रासायनिक संकेत के सहारे ही समुद्री धारा में बढ़ने लगीं, जिधर उन्हें अंडे देने जाना होता है । अपने स्थान पर लौटने या नये स्थान पर जाने के अतिरिक्त भी मछलियों की एक रासायनिक भाषा होती है, जिससे वे सजातियों को सामाजिक व्यवस्था की जानकारी देती रहती हैं ।

जन समुदाय को कोई चेतावनी या सूचना देनी हो तो ढोल पीटकर मुनादी की प्रथा प्रचलित है । कदाचित कोई दीमकों के सूक्ष्म जीवन पर दृष्टि डाले तो उसे यह जानकर आश्चर्य हुए बिना न रहेगा कि यह परम्परा उनमें भी पाई जाती है । सैनिक दीमक को जब किसी शत्रु का पता चलता है तो वे एक विशेष ध्वनि से अपने कुनबे को संकेत कर देते हैं । बात की बात में सारे दीमक नगर को सूचना हो जाती है और वे सब अपना माल, असबाब बाँधकर दूसरे आश्रय के लिये चल पड़ते हैं ।

विवेक-बुद्धि मिल जाने पर मनुष्य चाहे तो गर्व कर सकता है, पर इतना होने पर भी जब वह जीवन की गुत्थियाँ नहीं सुलझा पाता तो उसकी इस बुद्धिमता पर तरस आता है ।

कला-कौशल और अपनी बौद्धिक सामर्थ्य से आज मनुष्य ने धरती, वायु, आकाश सर्वत्र अपनी कीर्ति पताका फहरा दी है, किन्तु यदि इतने मात्र को ही श्रेष्ठता का मापदण्ड मान लिया जाए तब तो पशु-पक्षी उससे इक्कीस ही बैठेंगे उन्नीस नहीं । आज मनुष्य ने तरह-तरह के विमान विकसित कर लिये, पर जीवों की सदृश क्षमताएँ अभी भी उसे उपलब्ध नहीं । उड़ने को अमेरिका की कुछ 'गिलहरियाँ' भी उड़ लेती हैं । मलाया, सिंगापुर की छिपकली और साँप उड़ानों के लिए विश्व प्रसिद्ध हैं । एक समय था जब टेरोडक्टाइल नामक विशालकाय सरीसृप उन्मुक्त आकाश में उड़ते थे, तब तक तो मानवी सभ्यता अस्तित्व में भी नहीं आई थी । इस तरह उड़ान का श्रेय राइट बन्धुओं को नहीं अपने इन छोटे कहे जाने वाले भाइयों को ही देना पड़ेगा ।

'एक्सोसिटायडी' मछलियाँ मनुष्य की तरह पारिवारिक जीवन बिताती हैं । ये सदैव समूह में रहतीं, एक-दूसरे के हितों का ध्यान रखतीं, प्रसव जैसी कठिन परिस्थितियों में एक-दूसरे की सहायता करती हैं, यही नहीं यह अपने बच्चों को पेड़ों पर चढ़ाकर उन्हें विधिवत् उड़ना भी सिखाती हैं । इस तरह यह समूचा समुदाय उड़न-दस्तों की तरह ही जीवनयापन करता है । कुछ मछलियों को तो प्रकृति ने पीठ ही नहीं पेट में भी पंख अर्थात् चार-चार डैने प्रदान किये हैं । इनमें पेलभिक मछली अत्यन्त कुशल उड़ाका होती है । यह अपने पीठ के कन्धों से 'ग्लाइडर' का काम लेती है और किसी विशेष स्थान में ठहरना चाहें तो पंखों को लहराती हुई ठहर भी जाती है । इतनी उन्नत किस्म तो मानवीय यानों ने भी अभी नहीं पाई । मनुष्य ने तो उड़ान के तरीके लगता है 'हैचेट' तथा 'वटरफ्लाई' मछलियों के ही करतब देखकर सीखे हैं, जिनके सहारे वे पहले पानी में ही प्रचुर वेग लेकर ऊपर उड़ जाती हैं । जावा में एक मेंढक पाया जाता है, यह भी उड़ता है । 'गरनार्ड' मछली इन सबसे उन्नत किस्म की उड़ाका होती है । यह अपने पंखों के सहारे पानी में तैर भी सकती है, सतह पर संतरण भी कर सकती है और उड़ भी सकती है । उड़ान में तो मनुष्य मक्खी से भी हार मानता है, सिफेनेमिया जाति की मक्खी ८१६ मील प्रति घण्टा की भयंकर गति से उड़ने में सक्षम है ।

प्रगति और आत्मरक्षा के लिए जड़ता का आश्रय एक दिन जीवन चेतना को ही जड़ बना दे तो कुछ आश्चर्य नहीं । स्पंज और मूँगे जीव हैं किन्तु वे इसी ताक मे रहते हैं कि कहीं उन्हें चट्टान का कोई ढेर या रेत मिल जाए,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बस वे उसी से चिपककर जड़ हो गये, उनकी मूल चेतना का विनोद समाप्त हुआ वे न उडने का आनन्द ले सकते हैं न विविधापूर्ण सृष्टि के विहंगावलोकन का ।. मस्सेल, ओइस्टर ड्रिल, बारनकल तथा इसी श्रेणी के जीव हैं, जिन्होंने अपनी दुनिया सीमित कर ली है और व्यापक दृष्टि से वंचित हो गए हैं । मनुष्य जाति भी कुछ इसी तरह होती जा रही है । जड़ता के अनुसन्धान के साथ-साथ चेतन मन की सम्वेदना और उसकी भावनाएँ बुरी तरह नष्ट होती जा रही हैं । उसकी मैत्री-भावना, करुणा, दया और उदारता नष्ट होती जा रही और इन्द्रियलिप्सा इन जीवों की तरह बढ़ती रहती है ।

मनुष्य के सहयोगी भी

पशु-पक्षियों को पालतू और प्रशिक्षित बनाने का प्रयास किया जाय तो वे हमारे लिए बाधक न रहेंगे वरन् सहयोगी के रूप में काम करके हमारी समृद्धि और शांति में सहायता प्रदान करेंगे । उन्हें नष्ट करने पर उतारू न रहकर यदि मानवी प्रयत्न अन्य प्राणियों को प्रशिक्षित करने में लग जाए तो न केवल प्राणिमात्र के बीच सद्भावना का विस्तार हो सकता है वरन् विश्वव्यापी चेतना तत्व को अधिक गति से विकास की दिशा में बढ़ चलने का अवसर भी मिल सकता है । प्राणियों को प्रशिक्षित करने के लिए जहाँ भी प्रयत्न हुए हैं, वहाँ आशाजनक सफलता मिली है ।

संसार के विभिन्न भागों में विभिन्न आकृति-प्रकृति के वानर पाए जाते हैं । अफ्रीका का गुयेरेजा कोलोवस बन्दर शरीर में तो तीन फुट का ही होता है पर उसकी पूँछ शरीर से भी अधिक लम्बी अर्थात् साढ़े तीन फुट होती है । हाथी जो काम सूँड़ से लेता है लगभग वैसा ही यह पूँछ से लेता है । दक्षिणी अमेरिका के हाडलर वानर का स्वर बहुत तीखा होता है, दो मील दूर तक उसकी आवाज सुनी जाती है और क्रोध, हर्ष, पीड़ा, कामोन्माद आदि की अनुभूतियाँ उसकी वाणी से सहज ही पहचानी जा सकती हैं । दक्षिणी अमरीका के अमेजन क्षेत्र में पाये जाने वाले सिवाइड्स वानर, गिलहरी और उल्लू की आकृतियों के सम्मिश्रण से बने हुए अपने ढंग के अनोखे प्रतीत होते हैं ।

निशाचर डोरोकोलिस, लम्बी दाड़ी वाला साकी, देखने में सुन्दर और अकल का पुतला केपूचिन मनुष्य के साथ कुत्ते की तरह ही घुल-मिल जाता है । वह बर्तन धोना, कपड़े सुखाना, झाड़ू लगाना, बिखरी चीजों को सँभालकर रखना, पंखा झलना, घर की रखवाली जैसे छोटे-मोटे घरेलू काम करने में मालिकों की सहायता करता है । ड्राइंग का अभ्यास करा दिया जाय तो वह खड़िया हाथ में लेकर सीखी हुई आकृति बिल्कुल सही बना देता है । बूली बन्दर पर भेड़ जैसी ऊन होती है । मकड़ी की तरह हाथ-पैर और पूँछ के सहारे यह एक डाली से दूसरी डाली पर उल्टी-सीधी चाल से उतरता और उछलता रहता है । इसलिए इस वानर का नाम स्पाइडर मंकी पड़ा है । गले की अतिरिक्त थैली में ढेरों फालतू आहार भर कर फिरते रहने वाले बन्दर बोर्नियो में अधिक होते हैं । पूर्वीय गोलार्द्ध में पाए जाने वाले मैकेक और रहसीस जीवनीशक्ति और सन्तुलित मानसिक क्षमता वाले होते हैं । अन्तरिक्ष उड़ान में एक समय इन्हीं का उपयोग किया गया था । कुत्ते के जैसे मुँह वाले वेबून अरब देशों में पाए जाते हैं । वे पेड़ पर चढ़ने की अपेक्षा जमीन पर रहने में सुख, सरलता अनुभव करते हैं ।

जर्मन प्राणिशास्त्री कोलर ने अपने पालतू चिम्पैंजी 'सुल्तान' की बुद्धिमता बढ़ाने के लिए उसे कितनी ही गुत्थियाँ सुलझा सकने और अड़चनों का सही हल निकालने के लिए प्रशिक्षित किया था ? वह अलमारी खोलकर अपने काम की चीजें निकालता और फिर बन्द कर देता था । लम्बे बाँस के सहारे ऊँची टँगी हुई चीजें उतारना उसे अच्छी तरह आता था । ऐसे ही वह और भी कई बुद्धिमानी के काम करता था ।

मैडम कोट्स का पालतू चिम्पैंजी रंगों के भेद-उपभेद समझता था और प्राय: तीस तरह के हल्के-गहरे रंगों का वर्गीकरण कर लेता था । रेखागणित की आकृतियों को पहचान लेने में भी उसने कुशलता प्राप्त कर ली थी । क्यूबा में मादाम अबू के पास एक विनोदी चिम्पैंजी था । वह जब पुरुषों को पास आते देखता तो अपनी मादा को फौरन छिपा लेता, किन्तु कोई स्त्री पास आती तो मादा को प्रसन्नतापूर्वक फिरने देता ।

गोरिल्ला वनमानुषों में अग्रणी है । उसकी ऊँचाई छह फुट होती है किन्तु दोनों हाथों को मिलाकर लम्बाई नौ फुट तक जा पहुँचती है । वजन ४०० से ६०० पौण्ड । यह दो-ढाई इन्च मोटी लोहे की छड़ आसानी से तोड़-मरोड़ कर फेंक सकता है । इसकी पकड़ में किसी जानवर का कोई अंग आ जाय तो उसे एक झटके में उखाड़कर फेंक सकता है । संसार प्रसिद्ध फिल्म 'किंग कांग' में प्रमुख करतब एक भीमकाय गोरिल्ला का है । इस फिल्म को अत्यधिक ख्याति मिली ।

इस जाति का दूसरा वानर चिम्पैंजी अपेक्षाकृत अधिक बुद्धिमान होता है । उसकी हर क्रिया से बुद्धिमता और विचारशीलता टपकती है । अकारण उसे बेतुकी हरकतें करते नहीं पाया जाएगा । परिवार भी उसका व्यवस्थित रहता है । एक नर के साथ कई मादाएँ सुख और सुरक्षापूर्वक जीवनयापन करती हैं । पालतू चिम्पैंजी के सांथ कभी पेचीदगी भरी स्थिति उपस्थित कर दी जाय तो वह उसे सहज ही सुलझा लेता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जर्मनी में कुछ समय पूर्व एक विश्वविख्यात घोड़ा था— 'क्लेवर हान्स' वह जर्मन भाषा में पूछे गये गणित के छोटे-मोटे प्रश्नों का उत्तर अपनी टाप के खटके मार कर देता था और दर्शक उसकी गणितज्ञ बुद्धि को देखकर चकित रह जाते थे । अमेरिका और फ्रांस में भी इस तरह के कई घोड़े हो चुके हैं । इनकी बुद्धिमत्ता जाँचने के लिए पशु मनोविज्ञानी थार्नडाइक ने गम्भीर अध्ययन किए हैं कि बुद्धि पर मनुष्य की ही बपौती नहीं है, वह बीज रूप में दूसरे जीवों के भीतर भी मौजूद है और यदि उन्हें उपयुक्त अवसर मिले तो वे भी अपनी बुद्धिमत्ता को बड़ी हद तक विकसित कर सकते हैं ।

तंजानिया (अफ्रीका) में पशु अभियन्ता मि० जार्ज के मकान के पास पेड़ पर एक गिलहरी ने घोंसला बना रखा था । संसर्ग के प्रभाव से इस गिलहरी ने अपने में ऐसी आदतें उत्पन्न कर ली थीं जिससे देखने वालों को बड़ा कौतूहल होता था । शराब का चस्का उसे लग गया था । वह चुपके से आती और घर में रखी शराब की बोतलों के कार्क खोलकर मद्यपान का आनन्द लेती । यह गिलहरी प्रायः अपना भोजन इस परिवार से ही प्राप्त करती थी, अस्तु उसे समय और स्वाद का अभ्यास हो गया था । नियत समय ही वह भोजन करती और जो वस्तुयें खाने की शिक्षा दी गई थी उन्हें ही चुनकर ग्रहण करती । उसने 'कमोड' में ही टट्टी जाना सीख लिया था । जब भी उसे मल त्यागना होता नियत स्थान पर जाकर अपनी हाजत पूरी करती । इधर-उधर मल विसर्जन करते उसे कभी नहीं देखा गया ।

मास्को के एक इन्जीनियर आनातोली वाइकोव ने दो कबूतरों को मशीनों के अच्छे और खराब पुर्जे पहचानने और उनका अन्तर बता सकने की शिक्षा दी । इस पहचान का आधार त्रुटिपूर्ण पुर्जों से अलग ढंग के ऐसे कम्पनों का निकलना था, जो बहुत ही संवेदनशील मशीनों से पहचाने जा सकते थे । कबूतर उस अन्तर को समझने में अभ्यस्त हो गये और अपने पालने वालों की अच्छी सहायता करने लगे ।

वाइकोव ने लिखा है— प्रशिक्षित कबूतर जिस बारीकी से यांत्रिक खराबी को पकड़ सकते हैं, उतनी जानकारी देने वाले निर्देश उपकरण बहुत ही कठिनता से बनाये जा सकेंगे ।

शिशुमार नामक मत्स्य जाति का जल का बहुत ही प्रेमी और सहयोगी प्रकृति का होता है । प्रयत्न करने पर वह मनुष्य के साथ हिलमिल जाता है और खुशी से पालतू बनकर रहने लगता है । जापानी मत्स्य विशेषज्ञ मसाइकी नहाजमा का कथन है कि "यदि शिशुमार थलचर होते तो वे मनुष्य के लिए कुत्तों से भी अधिक स्नेही सहयोगी सिद्ध होते ।" वे अपने परिवार के साथ बहुत ही सज्जनता भरा व्यवहार करते हैं ।

शिशुमार कोई तीस तरह की ध्वनियाँ अपने मुख से निकाल सकते हैं और उनके आधार पर अपनी मनःस्थिति का दूसरों को परिचय दे सकते हैं । शिकार पकड़ने के लिए दौड़ते समय वे कुत्ते की तरह भौंकते हैं, सफल होने पर बिल्ली की भाँति-म्याऊँ-म्याऊँ करके खुशी जाहिर करते हैं । पेट भरने पर वे डकार लेते हैं, चटाख की ध्वनि के साथ होंठ चाटते हैं । विरोधियों को डराने के लिए पटाखा चलने जैसी आवाज करते हैं ।

सिखाने पर वे कई तरह के खेल करते हैं । सीटी बजाने पर उसका जवाब सीटी बजाकर देते हैं । शिशुमार को 'सिटासियन' वंश का ह्वेल जातीय समझा जाता है । दिशा बोध और शब्द ज्ञान की उसे अच्छी जानकारी होती है । २५ गज दूरी से फेंकी हुई वस्तु को वह इस तेजी से पकड़ सकता है, मानो उस वस्तु के साथ ही वह उड़कर आया हो । समुद्री खोज के लिए गहरे सागर तल में बने हुए अमेरिका खोज केन्द्र सीलैब-२ के लिए एक कुशल कार्यकर्ता के रूप में पालतू शिशुमार 'टैफी' ने असाधारण सहायता की थी । थके हुए गोताखोरों को उनकी कमर में बँधी रस्सी मुँह से पकड़कर जहाज तक पहुँचा देने में भी पालतू शिशुमार बड़ा कौशल दिखाते हैं । वे मनुष्य की तरह हँस भी सकते हैं ।

ब्रिटिश नौ सेना से रिटायर होकर नीरेफौक के विचिंगहम स्थान में फिलिप वेयरे ने अपने आठ एकड़ के खेत में घरेलू चिड़ियाघर बनाया । उसका उद्देश्य पशु-पक्षियों की प्रकृति का अध्ययन और उनकी नस्लों को सुन्दर सुविकसित बनाने का मार्ग खोजना था । अपने विषय में रुचिपूर्वक तन्मय हो जाने के कारण वेयरे ने दुर्लभ पशु-पक्षी प्राप्त किए और उनकी प्रकृति के बारे में नई-नई जानकारियाँ प्राप्त कीं । चिड़ियाघर की ख्याति फैली तो दर्शकों के झुण्ड भी अपने कौतूहल की तृप्ति के लिए वहाँ आने लगे और टिकट की आमदनी से चिड़ियाघर का खर्च चलने में सहायता मिलने लगी ।

रीछ और भेड़िये किस प्रकार सज्जन बनाए जा सकते हैं और बिदकने वाले पशुओं को विश्वस्त एवं स्नेही कैसे बनाया जा सकता है । इस प्रयोग में उन्होंने आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है ।

वेयरे की तत्परता ने उन्हें संसार के अनुभवी प्राणि विशेषज्ञों की पंक्ति में ला बिठाया है । ऐंग्लिया टेलीविजन कम्पनी में प्राणि विशेषज्ञ की भूमिका में कितने ही कौतूहलवर्धक कार्यक्रम देते रहते हैं । 'विन्ड इन दी रीडस्' नामक प्रख्यात फिल्म में उन्होंने प्रागैतिहासिक काल से लेकर अब तक प्राणियों के विकास और विनाश का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महत्वपूर्ण चित्रण किया है । वेयरे मात्र पशु-पक्षियों के शोधकर्ता, प्रयोक्ता मात्र नहीं हैं वरन् "प्राणिमात्र के साथ मनुष्यों को अधिक अच्छा व्यवहार करना चाहिए ।" यूरोप में इस आन्दोलन के सूत्रधार भी हैं । उनकी पत्नी 'पैट' इस कार्य में उनका भरपूर सहयोग करती हैं ।

मत्स्य विशेषज्ञ स्टेटर ने विभिन्न प्रकार के संगीत के मछलियों पर पड़ने वाले विभिन्न प्रभावों का पर्यवेक्षण किया है । कुछ ध्वनियाँ तो मछलियों को इतनी प्रिय लगीं कि वे उन्हें सुनकर उछलने-कूदने और नाचने लगतीं । कुछ ध्वनियाँ उन्हें बिल्कुल पसन्द न आईं और वे जब बजतीं तो उपेक्षापूर्वक मुँह मोड़कर अन्यत्र चली जातीं । संगीत की विभिन्न ध्वनियों ने उनके शरीर पर भी भिन्न और विचित्र प्रभाव डाले । एक प्रकार के संगीत ने तो उनका वजन और विस्तार बढ़ाने में बहुत सहायता की । एक ध्वनि के कारण उनकी प्रजनन क्रिया दूनी हो गई तथा अधिक अंडे दिये ।

प्रो० फ्रेंक वाडन ने मछलियों को रंग पहचानना सिखाया और यातायात के नियमों का अभ्यास कराया, वे अपने मालिक और दर्शक का अन्तर करना सीख गईं । मिनो जाति की मछलियाँ यह समझने लगीं कि किस प्रकार आवाज सुनकर उन्हें क्या आचरण करना चाहिए ?

प्रो० जे० पी० फ्रोलोफ ने मछलियों को संगीत सुनने का शौकीन बनाने में सफलता प्राप्त की है । वे तालाब में बिजली के तार डालते और संगीत के रिकार्ड बजाते रहे । आरम्भ में मछलियों ने थोड़ा ही ध्यान उस ओर दिया, किन्तु धीरे-धीरे उसकी पूरी शौकीन हो गईं जैसे ही संगीत की ध्वनि होती वे चारों ओर से वहीं इकट्ठी हो जातीं और ध्वनि केन्द्र को लपकने का प्रयत्न करतीं ।

उन्होंने एक तालाब में कुछ मछलियाँ पालीं । भोजन नियत समय पर दिया जाता और चारा डालने से पूर्व घण्टी बजाई जाती । थोड़े दिन में घण्टी और चारे का सम्बन्ध वे समझ गईं और जब भी समय कुसमय घण्टी बजती तभी वे चारे के लिए दौड़कर इकट्ठी हो जातीं ।

पशु-पक्षियों को अपने ही प्राणि परिवार का सम्मानित सदस्य समझकर उन्हें सुखी-समुन्नत और प्रशिक्षित बनाने की दिशा में यदि हमारी प्रवृत्ति मुड़ सके तो न केवल जीव जगत् का उपकार होगा वरन् मानवी उदारता और सद्भावना का एक सुखद अध्याय प्रारम्भ होगा । विश्व चेतना में सदाशयता की वृद्धि करने के प्रयास करके मनुष्य घाटे में ही नहीं वरन् नफे में ही रहेगा । नये सहयोगियों का नया सद्भाव पाकर मानवी प्रगति में नया उभार ही आवेगा ।

प्रकृति की जीवन व्यवस्था

दृश्य प्रकृति में जो कुछ भी है अच्छी और बुरी दो प्रवृत्तियों में बँटा हुआ है । जीवन की सूक्ष्मतम अवस्था जीवाणु का अध्ययन करें तो एक दूसरा तथ्य भी उपस्थित होता है, वह यह कि अच्छाइयाँ और बुराइयाँ किसी और की देन नहीं यह भी स्वयंभू हैं । मनुष्य का अपना देवत्व ही अच्छी प्रवृत्तियाँ विकसित कर लेता है और उनके सत्परिणामों से लाभान्वित होता है जबकि उसका अन्तः पिशाच ही दुष्प्रवृत्तियों के रूप में प्रकट हो उठता और न केवल उसे अपितु दूसरों का भी सर्वनाश करके छोड़ता है । जीवाणु अर्थात् देवत्व की शक्ति, प्रति जीवाणु या विषाणु असुरता का प्रतीक है ।

सेल्यूलोज आवरण से आच्छादित तरल प्रोटोप्लाज्मा से बने जीवाणु किसी भी स्थान पर नमी, आदि पाकर स्वयं ही जन्म ले लेते हैं । यह इतनी सूक्ष्म सत्ता है कि एक इन्च की लम्बी लकीर में इन्हें पंक्तिबद्ध खड़ा किया जाए तो २५००० जीवाणु बड़े मजे में खड़े हो जाएँगे । इतने आदमी एक पंक्ति में खड़े किए जाएँ और यह माना जाए कि एक व्यक्ति औसतन १ फुट जगह लेगा तो कुल आदमियों के लिए ५ मील लम्बी सड़क आवश्यक होगी । देवत्व सूक्ष्म तत्व है, अनुभूति के लिए वैसी ही सूक्ष्म बुद्धि दूरदर्शी समीक्षा चाहता है । यह न हो तो मनुष्य सामान्य स्वार्थ को ही उस श्रेणी में मानकर उसके लाभों से वंचित हो सकता है ।

विषाणु तो उससे भी सूक्ष्म और प्रभावी सत्ता है, एक इन्च में यह १४१००० आसानी से बैठ सकते हैं । अर्थात् यदि वह आदमी को बराबर हों और यह माना जाये कि उनमें से प्रत्येक को १ फुट ही जगह चाहिये तो २६ मील सड़क की आवश्यकता होगी । तात्पर्य यह हुआ कि बुराई की शक्ति अत्यन्त सूक्ष्म है । वह कब आ धमके यह पता लगाना भी कठिन है, जब तक कि उतनी ही पैनी और सूक्ष्म निरीक्षण बुद्धि न रखें ।

जीवाणु जल में भी होते हैं और इस रूप में वे लोकसेवी हमारे जीवन के पोषक के रूप में काम करते हैं । मिट्टी में पड़े मल और सड़न को बैक्टीरिया ही खाकर उसे अच्छी मिट्टी में बदलते रहते हैं । देव-प्रवृत्तियाँ भी इसी तरह अपने को बढ़ाने में सहायक होती हैं । साथ ही वह सृष्टि के उच्छिष्ट तत्व सड़ाकर सबको नष्ट कर स्वच्छ, पवित्र वातावरण बनाती हैं, जिससे सर्वत्र सुख-शान्ति और प्रसन्नता बढ़ती है । जीवाणु १० या २० मिनट में ही अन्य जीवाणुओं को जन्म देने लगते हैं और २४ घण्टे में १७०००००० जीवाणुओं में परिणत हो जाते हैं । देवत्व एक क्षण के लिए भी उदित हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो दूरगामी शान्ति और व्यवस्था की नींव गहरी जमा जाता है ।

दूसरी ओर विषाणु है जो जीवाणु के ही पैरों में लगा चला आता है । बुराइयाँ सदैव छद्म वेष में देवत्व के बाने में आती हैं । अन्यथा उन्हें स्थान ही न मिले, इसलिए अच्छाइयाँ जहाँ हमारे जीवन को अभीष्ट हैं, वहीं सतर्कता भी उतनी ही आवश्यक है । इस बात का सदैव ध्यान रखना चाहिये कि अतिथि और मित्र बनकर आये परिजनों में ही कहीं कोई अपनी द्विविधा और भ्रम का लाभ उठाकर कोई चोर-उचक्का तो नहीं आ धमकता ।

दूध में पड़ा बैक्टीरिया उसे दही बना देता है । देवत्व और श्रेष्ठ व्यक्तियों की संगति समाज को भी उसी तरह सुन्दर बना देती है, जैसे दूध की अपेक्षा दही अधिक सुपाच्य हो जाता है । अपने जीवन में छोटी से छोटी वस्तु का उपयोग है । यदि हम भलाई के हर कण को अपनाने की कला सीख जाएँ तो हर किसी के आदर और विश्वास के पात्र बन सकते हैं पर विषाणु जहाँ भी पहुँच जाएँ वहीं बीमारी पैदा कर दें अर्थात् बुराई के कर्म ही नहीं विचार भी हमारे पतन का आधार बन जाते हैं ।

जीवाणु तथा विषाणु दोनों की ही संचार और विस्तार व्यवस्था बड़ी व्यापक है, पक्षियों के परों में लिपटे जहाजों में चढ़कर यात्रियों के माध्यम से भी ये एक स्थान से दूसरे स्थान, एक देश से दूसरे देश में पहुँच जाते हैं और सर्वत्र महामारी की स्थिति पैदा कर देते हैं । कुछ न मिले तो हवा ही उनके लिए उपयुक्त वाहन है । इसी से यह कहीं भी जा पहुँचते हैं । अच्छाइयों और बुराइयों का क्षेत्र भी उसी तरह सर्वत्र खुला पड़ा है । स्वाध्याय के माध्यम से हम अर्वाचीन युग के देवत्व को भी अपने वर्तमान जीवन में बुला सकते हैं और नाटकों, फिल्मों से भी अच्छे बनने की प्रेरणा ले सकते हैं । दूसरों के अच्छे आचरण हमारे जीवन दीप बन सकते हैं और उनकी शिक्षायें भी वही प्रेरणा दे सकती हैं । बुराइयों के लिए भी ठीक यही स्थिति है, बुलाएँ तो मन ही मन से करोड़ों मनोविकार आमन्त्रित कर लें । दृढ़ता हो तो दृष्टि में पड़ने वाली कुत्सा भी अन्दर झाँकने न पाये ।

हमारे भीतर आसुरी प्रवृत्तियों जड़ न जमा पाएँ उसके लिए उन्हें मारने की मुहीम जाग्रत रखनी चाहिए । एण्टीबायटिक औषधियाँ जिस तरह शरीर में पहुँचकर वहाँ के विषाणुओं को चारों ओर से घेरकर रसद मार्ग काट कर उन्हें आत्मघात को विवश करती हैं, उसी तरह आत्मसुधार के लिए हमें प्रलोभनों को मार भगाने का, बुराइयों से लड़ने का माद्दा अपने अन्दर से ही पैदा करना चाहिये । यदि ऐसा कर लें तो वह हमारी उसी तरह हानि नहीं कर सकतीं जिस तरह हॉस्पिटलों में तपेदिक, कैन्सर आदि के मरीज भरे पड़े रहते हैं । स्वाभाविक है कि वहाँ विषाणुओं का सरोवर लहरा रहा हो, किन्तु उसी वातावरण में डॉक्टर लोग दिन-दिन भर काम करते रहते हैं फिर भी उनका रत्ती भर भी अहित नहीं हो पाता ।

दैवी अंश प्रबल हो तो वह सशक्त जीवाणुओं की तरह शरीर की ढाल का कार्य करते हैं । उससे असुरता हावी नहीं होने पाती, आत्मसुधार की सबसे अच्छी प्रक्रिया यह है कि हम निरन्तर रचनात्मक विचारों को मस्तिष्क में विकसाएँ, रचनात्मक कार्य करते रहें । उससे बुराइयाँ अपने आप ही झाँककर लौट जाती हैं । जिस घर में पहले ही समर्थ लोग रहते हों, वहाँ चोर-उचक्के झाँककर ही लौट जाते हैं ।

लेकिन यदि सीलन, सड़न, गलन अपने भीतर ही हो तो कमजोर भलेमानस को भी सशक्त बदमाशों द्वारा सताए जाने की तरह बुराइयों को पनपने का भीतर ही भीतर आधार मिल जाएगा । बाहर के विषाणु शरीर में आएँ पर शरीर सशक्त हो, पाचन यंत्र ठीक काम करते हों, रुधिर में श्वेताणुओं की कमी न हो तो विषाणु रत्ती भर असर नहीं डाल पाएँगे, उल्टे नष्ट हो जाएँगे पर भीतर विजातीय द्रव्य भरा हो, आदमी में आकर्षणों की सड़न भीतर-भीतर बुश रही हो तब तो वे अपनी शक्ति भीतर ही बढ़ाकर हमारे विनाश का कारण बन जायेंगे । यहीं नहीं विजातीय द्रव्य के बाद वे शरीर की कोशाओं को भी खाने लगेंगे तब फिर जीवन का अन्त होगा ही ।

प्रकाश में विषाणुओं को मार देने की शक्ति है । हमारे जीवन में प्रकाश तत्व बना रहे, विवेक बना रहे तो न केवल भलाई की शक्ति—देवत्व का विकास और उसके फलितार्थों से लाभान्वित होते रह सकते हैं । आसुरी तत्व वे चाहे कितने अदृश्य और शक्तिशाली क्यों न हों जानकारी में आते रहें और उन्हें नष्ट करने, मारकर भगा देने का साहस हमारे जीवन में बना रहना चाहिये ।

प्राणी यों प्रकृति की विपरीत चपेट में आकर अक्सर अस्तित्व गँवा बैठता है । नियति के उग्र परिवर्तनों का सामना नहीं कर पाता और विपरीत परिस्थिति के सामने अपने को निरीह, असमर्थ अनुभव करता है, पर ऐसा तभी होता है, जब वह उस आपत्ति का सामना करने के लिए पहले से ही तैयार न हो ।

यदि प्राणी को विपरीत अनभ्यस्त परिस्थिति में रहने को विवश होना पड़े तो वह अपने अस्तित्व की रक्षा करने के लिए क्रमशः ऐसे परिवर्तन उत्पन्न कर लेता है, ऐसी विशेषता का उत्पादन कर लेता है, जिसके आधार पर वह प्राणघातक समझी जाने वाली परिस्थितियों से भी तालमेल बिठा ले और अपना अस्तित्व कायम रख सके, सुविधापूर्वक निर्वाह कर सके ।

जीवाणुओं की असह्य तापमान पर मृत्यु हो जाती है । वे अधिक उष्णता एवं शीतलता सहन नहीं कर सकते, यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मान्यता अब पुरानी पड़ चली है । पानी खौलने से अधिक गर्मी और २७० आ० से० नीचे शीत पर जीवाणुओं की मृत्यु हो जाने की बात ही अब तक समझी जाती रही है । इसका कारण यह था कि शरीर में पाया जाने वाला ग्लिसरोद रसायन असह्य तापमान पर नष्ट हो जाता है और जीवाणु दम तोड़ देते हैं । अब वे उपाय ढूँढ़ निकाले गए हैं कि इस रसायन को ताप की न्यूनाधिकता होने पर भी बचाया जा सके और जीवन को अक्षुण्ण रखा जा सके ।

अत्यधिक और असह्य शीतल जल में भी कई प्रकार के जीवित प्राणी निर्वाह करते पाए गए हैं । इनमें से प्रोटोजोआ, निमैटोड, क्रस्टेशिया, मोलस्का आदि प्रमुख हैं ।

येलोस्टोन की प्रयोगशाला में लुइबाक और टामस नामक दो सूक्ष्म जीव-विज्ञानी—माइक्रोबायोलाजिस्ट द्वारा यह पता लगाने में निरत हैं कि जीव सत्ता के कितने न्यून और कितने अधिक तापमान पर सुरक्षित रह सकने की सम्भावना है, वे यह सोचते हैं कि जब पृथ्वी अत्यधिक उष्ण थी तब भी उस पर जीवन सत्ता मौजूद थी । क्रमशः ठण्डक बढ़ते जाने से उस सत्ता ने क्रमिक विकास विस्तार किया है पर इससे क्या अति प्राचीनकाल में जब जीवन सत्ता थी ही तो वह विकसित अथवा अविकसित स्थिति में अपनी हलचलें चला ही रही होगी, भले ही वह अब की स्थिति की तुलना में भिन्न प्रकार की अथवा पिछड़े स्तर की ही क्यों न रही हो । विकसित प्राणी के लिए जो तापमान असह्य है वह अविकसित समझी जाने वाली स्थिति में कामचलाऊ भी हो सकती है ।

यदि यही तथ्य हो तो फिर जीवन की मूल मात्रा को शीत, ताप के बन्धनों से युक्त माना जा सकता है और गीताकार के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आत्मा को न आग जला सकती है, न पवन सुखा सकती है और न जल डुबा सकता है । पंचभूतों की प्रत्येक चुनौती का सामना करते हुए वह अपना अस्तित्व सुरक्षित रख सकने में पूर्णतया समर्थ है ।

समुद्र तट के सभी पर्वतीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली धूसर रंग की मक्खी 'एफिड्रिल' को ४५^0 से ५१^0 से. के बीच तापमान वाले गर्म जल में प्रवेश करते देखा गया है । यह प्राणियों के जीवित रहने को असम्भव बनाने वाले गर्मी है । सामान्यतया धरती की सतह पर २१^0 से. तापमान रहता है । प्राणियों को उतना ही सहन करने का अभ्यास होता है । अधिक उष्ण या अधिक ताप के वातावरण में रहने वाले जन्तुओं को विशिष्ट स्थिति के अभ्यस्त ही कह सकते हैं ।

एफिड्रिल मक्खी के अतिरिक्त कुछ जाति के बैक्टीरिया भी ऐसे पाये गये हैं, जो खौलते पानी के ९२^0 से. तापमान में भी मजे से जीवित रहते हैं । अमेरिका के येलोस्टोन नेशनल पार्क में स्थित गर्म जल के झरने प्रायः इसी तापमान के हैं और उनमें जीवित बैक्टीरिया पाए गए हैं । इन गर्म झरनों अथवा कुण्डों में एक प्रकार की काई की मोटी परत जमी रहती है, जिसे हिन्दी में शैवाल कहा जाता है, अँग्रेजी में उसका नाम एल्गी है । इसमें जीवन रहता है । आमतौर से वह ७५^0 से. तक गर्म जल में मजे का निर्वाह करती है । बैक्टीरिया उसी के सहारे पलते हैं । एफिड्रिल मक्खी का प्रमुख भोजन यह एल्गी ही है उसे प्राप्त करने के लिए वह उस असह्य तापमान के जल में डुबकी लगाती है और बिना जले, झुलसे अपना आहार उपलब्ध करती है ।

यह तो हुई छोटे जीवों की बात, अब अधिक कोमल समझे जाने वाले मनुष्यों की बात आती है । वह भी प्रकृति की असह्य कही जाने वाली स्थिति में निर्वाह करने के लिए अपने को ढाल सकता है । उत्तरी ध्रुव प्रदेश में रहने वाले एक्सिमो लोग अत्यधिक शीत भरे तापमान में रहते हैं । भालू, हिरन और कुत्ते भी उस क्षेत्र में निवास करते हैं । वनस्पतियाँ और वृक्ष न होने पर पेट भरने के लिए माँस प्राप्त कर लेते हैं । इसके लिए उन्होंने बर्फ की मोटी परतें तोड़ कर नीचे बहने वाले समुद्र में से मछली पकड़ने की अद्भुत कला सीख ली है । आयुध साधनरहित होते हुए भी हिरन, भालू और कुत्तों का भी वे शिकार करना सीख गए हैं और लाखों वर्ष से उस क्षेत्र में निर्वाह कर रहे हैं ।

संसार से भी विचित्र उसके प्राणी

इस संसार का निर्माण करने वाली समर्थ सत्ता ने अपने सृजन कार्य में कितनी पैनी और सूक्ष्म 'बुद्धि' से काम लिया है, इसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता । प्रकृति के आँगन में रहने वाले सूक्ष्मजीवियों से लेकर विशालकाय प्राणियों का जीवनक्रम, उनके क्रिया-कलापों का अध्ययन करते हैं तो उन्हें देखकर विस्मय विमुग्ध रह जाना पड़ता है और यह मानने के लिए बाध्य होना पड़ता है कि इतने विलक्षण, विचित्र और जटिल जीवन क्रम का कोई रचयिता नियन्ता है अवश्य ।

एक से एक विचित्र और विलक्षण मनुष्य, किन्हीं भी दो व्यक्तियों की आकृति-प्रकृति में कोई साम्य नहीं, प्रत्येक जीव भिन्न-भिन्न विशेषताओं, सामर्थ्यों से युक्त और फिर उनकी अगणित संख्या निश्चित ही किसी नियामक समर्थ सत्ता का आभास देती है । उदाहरण के लिये सूक्ष्मजीवियों को ही लें, जिनकी शरीर रचना को जीवविज्ञान के द्वारा एककोशीय से लेकर जीवों की श्रेणियों में विभक्त किया है । इन जीवों की विविध जातियाँ होती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूक्ष्मजीवियों की ही तरह सरलतम जीवधारियों 'वायरस' (विषाणु) होता है । वायरस अपने आप में एक कोशिका नहीं होता । इसमें केवल एक न्यूक्लिक अम्ल होता है, कभी डी० एन० ए० और कभी आर० एन० ए० । वायरस भी अपने से अपने जैसी अनन्त प्रतिकृतियाँ पैदा कर सकते हैं, पर वे यह कार्य परपोषी कोशिका के अन्दर ही कर सकते हैं । जीवाणुओं की किस्मों की विविधताओं तथा व्यवहार की भिन्नताओं के कारण की सूक्ष्म जीवविज्ञान की आज अनेक शाखाएँ हैं । 'वायरोलोजी' संक्रामक रोगों के जीवाणुओं का अध्ययन करती हैं । नीरोग विज्ञान के अन्तर्गत संक्रामक रोग के जीवाणु जिन जीवों पर आक्रमण करते हैं, उनकी प्रतिक्रिया का अध्ययन किया जाता है । जानपादित रोग विज्ञान के अन्तर्गत रोगोत्पादक सूक्ष्म जीवों के जीवन विकास, विस्तार और विहार तथा इनके सम्भावित नियन्त्रण के उपायों का अध्ययन होता है और चेमोथेरैपी में सूक्ष्म जीवों के विनाश के साधनों का अध्ययन होता है आदि ।

प्रयोगशाला में सूक्ष्मजीवियों की विभिन्न नस्लें जिस पदार्थ में पैदा की जाती हैं । उस पदार्थ को 'संवर्धन माध्यम' कहा जाता है । संवर्धन-माध्यम में सम्भागी जीवाणु-समूह पैदा कर जीव रासायनिक प्रतिक्रियाओं का अध्ययन होता है । जीवाणु खाद्य के रूप में जिस पदार्थ का उपयोग करते हैं, वह पचकर रूपान्तरित हो जाता है, इसे ही 'चयापचित' होना कहते हैं ।

जीवाणुओं की प्रत्येक नस्ल एक-दूसरे से भिन्न होती है । इस भिन्नता का कारण जिस खाद्य का जीवाणु प्रयोग करते हैं, जिन पदार्थों का वे विच्छेदन करने में समर्थ होते हैं और रासायनिक ऊर्जा स्रोत अथवा सूर्य से वे जो ऊर्जा प्राप्त करते हैं, उनकी मात्राओं की भिन्नताएँ होती हैं क्योंकि खाद्य-पदार्थ व ऊर्जा की मात्रा का संयोग हर बार भिन्न-भिन्न सम्भव है इसीलिए जीवाणुओं की नस्लें भी परस्पर भिन्न होती हैं ।

दाल-रोटी, साग आदि का स्वाद बिगड़ जाना, दूध का खराब हो जाना, रोटी में फफूँद आ जाना, अचार बगैरह को फफूँदी लग जाना इन सबका कारण सूक्ष्मजीव ही होते हैं । ताजे सन्तरे का रस निकालकर खुली हवा में रख दें तो दो दिन में खराब हो जाएगा कृपा इन्हीं सूक्ष्मजीवियों की है । यदि वही रस बोतल में इस युक्ति के साथ रख दिया जाय कि वहाँ सूक्ष्मजीवी हवा के साथ पहुँच न पाएँ, तो वह महीनों के बाद भी वैसा ही ताजा निकलेगा ।

गठिया तथा अन्य सूजन वाले रोगों के इलाज के लिये एड्रेनल हारमोन की जरूरत पड़ती है । वृद्धावस्था में विशेषकर और विशिष्ट परिस्थितियों से किसी भी उम्र में प्रतिस्थान-चिकित्सा में पुरुष तथा स्त्री को नव-शक्ति देने के लिए हारमोन जरूरी होते हैं ।

मनुष्यों तथा पशुओं में शारीरिक ऊतकों के विकास के लिए भी हारमोन जरूरी होता है । शल्य-चिकित्सा के समय ऊतकों को जो क्षति पहुँचती है, उन्हें पुनर्लाभ के लिए प्रेरित करने हेतु मनुष्य को इन हारमोनों की जरूरत पड़ती है, जबकि पशुओं में माँस उत्पादन की वृद्धि हेतु हारमोन दिए जाते हैं । परिवार नियोजन हेतु निरोधक गोलियाँ बनाने के लिए भी हारमोन जरूरी होते हैं ।

इन हारमोनों का प्राप्त करना अब तक बहुत ही कठिन था । हाल ही में सूक्ष्म जीवविज्ञान के क्षेत्र में हुई खोज ने इसे सरल बना दिया है । एक ऐसे जीवाणु समूह तथा रासायनिक की खोज की गई है, जिनके गुणों के कारण एन्ड्रोस्टान नामक पदार्थ का उत्पादन सम्भव हो सका है । इस एन्ड्रोस्टान को आसानी से रूढ़ हारमोनों में बदला जा सकता है । इस प्रक्रिया के औद्योगीकरण से ऊपर लिखे सभी हारमोन सुलभ हो सकेंगे ।

इसी तरह अभी तक भेड़ की ऊन की वसा में से कोलेस्टेरोल नामक एक पदार्थ प्राप्त कर, उसे रूढ़ हारमोनों में बदला जाता था पर परम्परागत रासायनिक विधियों से इस कोलेस्टेरोल को हारमोनों में बदलना बहुत कठिन होता था । कुछ समय पूर्व ऐसे सूक्ष्मजीवी खोज निकाले गये हैं, जो कोलेस्टेरोल को हारमोनों में बदलने में मददगार सिद्ध हुए हैं ।

इससे एक बड़ा फायदा होगा । परिवार नियोजन की निरोधक गोलियों के सुलभ होने तथा उनकी अन्धाधुन्ध मूल्य वृद्धि रुकने का । ये गोलियाँ मेक्सिको तथा मध्य अमरीका के पहाड़ी इलाकों में उगने वाले अरबी से निकाले जाने वाले एक रासायनिक पदार्थ से बनने वाली दो रूढ़ हारमोनों से बनती है । इस पदार्थ का वार्षिक उत्पादन लगभग ७०० टन प्रतिवर्ष होता है, किन्तु जिन जंगली पौधों से ये निकाला जाता है, वे बड़ी मात्रा में चुन लिए गए हैं, जबकि उनकी पैदावार देर से तथा कठिनाई से होती है । इससे इनका मूल्य लगातार बढ़ रहा था । अब कोलेस्टेरोल के रासायनिक परिवर्तन हेतु सहायक सूक्ष्मजीवियों की खोज से यह समस्या सुलझी है ।

इसी तरह विश्व-खाद्य समस्या के समाधान में भी सूक्ष्मजीवी सहायक सिद्ध हो सकते हैं । प्रतिवर्ष बढ़ने वाली ७ करोड़ की आबादी को २० लाख टन अतिरिक्त प्रोटीन चाहिये । इसके लिए ४ करोड़ हेक्टेयर अतिरिक्त जमीन पर सोयाबीन की खेती की जरूरत पड़ेगी जबकि एककोशिकीय प्रोटीन के व्यापक पैमाने पर उपयोग करने पर २०० घन मीटर धारिता वाले २००० टैंक, २० लाख टन अतिरिक्त प्रोटीन सूक्ष्मजीवियों की सहायता से तैयार करने के लिए काफी होंगे । इस विधि से २० लाख टन अतिरिक्त प्रोटीन के लिए सिर्फ एक हेक्टेयर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जमीन पर्याप्त होगी । सोयाबीन उत्पादन की वर्तमान विधि द्वारा इतने ही प्रोटीन के उत्पादन हेतु वांछित भूमि का यह ४ करोड़वाँ भाग है ।

इसी तरह औद्योगिक प्रक्रिया से काफी मात्रा में बनने वाले कूड़े का उपयोग प्रोटीन बनाने तथा बढ़ाने में किया जा सकता है—सूक्ष्मजीवियों की सहायता से । यदि विश्व के वर्तमान तेल उत्पादन से उपलब्ध सम्पूर्ण पैराफिन को प्रोटीन में बदल दिया जाय, तो लगभग ७० करोड़ टन प्रतिवर्ष का उत्पादन होगा ।

दुनिया का १० प्रतिशत दूध प्रतिवर्ष पनीर बनाने के काम आता है । इस प्रक्रिया में प्रोटीन जमाने के लिए दुधमुँहे बछड़े के पेट से प्राप्त होने वाले एक किण्वाणु को जिसका नाम रेन्नेट है—मिलाना जरूरी होता है ।

इस रेन्नेट के लिए प्रतिवर्ष ४ करोड़ बछड़ों का वध किया जाता था । पिछले १५ वर्षों में तो पनीर उत्पादन खूब बढ़ा, पर फिर रेन्नेट की कमी का सामना करना पड़ गया । सूक्ष्मजीवविज्ञानियों ने फफूँदी के विलगन से रेन्नेट की ही तरह के किण्वाणुओं के उत्पादन की विधि खोजी । इससे केवल एक ग्राम तैयार पदार्थ ७०० किलोग्राम पनीर बनाने को पर्याप्त होता है ।

विभिन्न प्रकार के दूषणों के लिए सूक्ष्मजीवी जिम्मेदार माने जाते रहे हैं, किन्तु पर्यावरण की सफाई में भी सूक्ष्मजीवों की उतनी ही प्रमुख भूमिका है । गन्दे द्रव की सफाई की मोटेतौर पर तीन विधियाँ हैं—क्रियाशील, कीचड़-विधि, निस्पन्दन तथा किण्वीकरण । तीन विधियों में सूक्ष्मजीवियों की भूमिका प्रमुख है । तीसरी विधि मीथेन-किण्वीकरण में एक विशेष प्रकार के जीवाणु कार्बनिक गन्दगी को कार्बनिक अम्ल में बदल देते हैं । उसके बाद मीथेन-जीवाणु कार्बनिक अम्लों को मीथेन तथा कार्बन-डाइ-ऑक्साइड में बदल देते हैं । इस विधि में गति मन्द होती है पर लाभ यह है कि गन्दगी की ऊर्जा का ८० प्रतिशत से अधिक मीथेन के रूप में मिल सकता है । मीथेन का एक स्वच्छ ईंधन की तरह प्रयोग सम्भव है । इस तरह सूक्ष्मजीव दुनिया की एक और बड़ी समस्या के समाधान में सहायक हो सकते हैं ।

लाइसीन उन तीन अनिवार्य अमीनो अम्लों में से एक है, जो अनाज में नहीं होते । गेहूँ या मक्का में मात्र १/४ यानी ०.२५ प्रतिशत लाइसीन मिलाने पर आटे का जैवीयमान बढ़कर दूध के बराबर हो जाता है । पशुओं को भी चारे के साथ दिये जाने पर लाइसीन बहुत लाभ पहुँचाता है ।

सूक्ष्म जीवों की सहायता से अनाज के खाद्यमान को भी बढ़ाया जा सकता है । मनुष्य के लिए २० में से ९ अमीनो अम्ल आवश्यक हैं । अन्य प्रोटीन पशु प्रोटीनों से घटिया होते हैं, अतः इनमें कुछ अमीनो अम्लों की कमी होती है ।

व्यावसायिक पैमाने पर सूक्ष्मजीवों की सहायता से अमीनो अम्लों का उत्पादन किया जा रहा है । साथ ही जापानी सूक्ष्मजीवविज्ञानियों ने ग्लूनेटिक अम्ल तैयार करने वाला जीवाणु ढूँढ़ निकाला है । प्रदीपन से यही जीवाणु एक उत्परिवर्ती पैदा करता है, जो लाइसीन नामक पदार्थ के बड़े पैमाने पर उत्पादन में सहायक होता है ।

ऐसे स्वादहीन विभिन्न खाद्य-पदार्थ जो विश्व में उपलब्ध हैं, पर अभी खाद्य प्रयोग में नहीं आते, उन्हें स्वादिष्ट बनाने में भी सूक्ष्मजीवियों की मदद जरूरी है ।

इस तरह पर्यावरण प्रदूषण की समस्या और विश्व खाद्य समस्या, विश्व की इन दो सबसे बड़ी समस्याओं के समाधान में सूक्ष्मजीवियों की महत्वपूर्ण भूमिका है । आबादी की सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या के क्षेत्र में भी परिवार नियोजन-निरोधक गोलियों के निर्माण में इनका विशिष्ट योगदान है । मनुष्य को नीरोग बनाने हेतु उपचारों, औषधियों के निर्माण में भी इनकी अनिवार्यता है । ऊर्जा की समस्या में भी उनकी सहायता समाधानकारक सिद्ध होगी ।

विकास तथा प्रौद्योगिक प्रगति में प्रायोगिक सूक्ष्म जीवविज्ञान की विशिष्ट भूमिका है । कृषि, कोशिकीय, आणविक, आनुवंशिक तथा विकिरण जीववैज्ञानिक अनुसंधान इसकी शाखाएँ हैं । उद्योग, अभियान्त्रिकी एवम् औषध क्षेत्रों में इसके प्रभावी परिणाम सामने आए हैं ।

एक पूर्ण-पोषित मनुष्य अपने जीवन में पानी और ऑक्सीजन के साथ-साथ बड़ी तादाद में कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन ग्रहण करता है । इनका उत्पादन सूक्ष्मजीवों पर ही निर्भर करता है । पानी को प्राकृतिक रूप से शुद्ध कौन करता है ? सूक्ष्मजीव ।

जन्तुओं और पौधों के मरने के बाद सूक्ष्मजीव इन्हें अपघटित करते हैं, अन्यथा इनसे पर्यावरण में दूषण ही फैले । एक आदमी अपने सम्पूर्ण जीवन में जितना कूड़ा बनाता है, उसी से एक पहाड़ बन जाय, यदि सूक्ष्मजीव उन्हें अपघटित करके प्रकृति-चक्र में दुबारा न डाल दें ।

इसके साथ ही सूक्ष्म जीवविज्ञानी नाइट्रेटों को वायुमण्डलीय नाइट्रोजन में बदलने की क्षमता के विकास की भी कोशिश कर रहे हैं, जिससे गन्दे पानी के पौधों और खेती के नाइट्रेट द्वारा नदियों, झीलों में फैल रही सड़न समाप्त की जा सकेगी ।

यह आशा भी है कि कई सूक्ष्मजीवों का उच्चजीवों में आनुवंशिक रूपान्तरण सम्भव होगा, इससे कुछ मानवीय किण्वाणु कमियाँ पूरी की जा सकेंगी । दालों की जड़ों में रहने वाले नाइट्रोजन उत्पादक सूक्ष्मजीवों को यदि सामान्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनाज की जड़ों में संयुक्त किया जा सका तो इससे भी आर्थिक एवं सामाजिक लाभ होगा, क्योंकि इन अनाजों का खाद्यमान इससे बढ़ जाएगा ।

सूक्ष्मजीवियों से सम्भावित सहयोग के अलावा प्रकृति ने विभिन्न जीव-जन्तुओं को इतनी सामर्थ्य दे रखी है कि वह स्वयं भी परिस्थितियों के अनुरूप अपने को ढाल सकें अथवा प्रस्तुत प्रतिकूलताओं से मुकाबला करने की सामर्थ्य जुटा सकें ।

समर्थ सशक्त जीवनी-शक्ति

बीमारियों का निदान करने के लिए रक्त, मल, मूत्र, थूक आदि की परीक्षा की जाती है और देखा जाता है कि प्रस्तुत रोग के कारण कौन-से विषाणु हैं ? रोगी के शरीर में जो विषाणु पाए जाते हैं, उन्हें मारने के लिए औषधि कारगर होती है, उसको उपचार के रूप में सेवन कराया जाता है ।

समझा यह जा रहा है कि उन कीटाणुओं की आकृति-प्रकृति समझ ली जाय और उन्हें मार डालना किस रसायन के उपयोग से सम्भव हो सकता है—इसका पता लगा लिया जाय तो रोगों से—उनके उत्पादक विषाणुओं से—छुटकारा प्राप्त कर लिया जायगा ।

पूना की विषाणु अनुसन्धानशाला ने मनुष्यों की तरह समय-समय पर पशु-पक्षियों में भी फैलने वाली महामारियों का लेखा-जोखा तैयार किया है । रानीखेत में एक बार कोयलों पर विपत्ति टूटी थी, मैसूर के क्यासानूर वनों में बन्दरों का सफाया हुआ था । नागपुर की मस्तिष्क-शोथ बीमारी, कलकत्ता का रक्तास्रावी ज्वर, दिल्ली का पीलिया सभी को याद है । महामारियों के ऐसे आक्रमण अक्सर होते रहे हैं । प्रथम महायुद्ध के बाद हैजा, प्लेग और इन्फ्लुऐन्जा की जैसी बाढ़ आई थी, वह किसी से छिपी नहीं है ।

अब तक प्रायः २०० से अधिक प्रकार के विषाणु—'आर्थोपोंड-वोर्नवायरस'—ढूँढ़े जा चुके हैं । ये मक्खी, मच्छर, पिस्सू, खटमल जैसे छोटे कीड़ों के शरीर पर कब्जा जमाते हैं और फिर उनके सम्पर्क में आने पर मनुष्य भी प्रभावित होते हैं ।

राकफैलर फाउण्डेशन तथा इण्डियन कौन्सिल ऑफ मेडीसन रिसर्च ने पिछले दिनों विषाणुओं की आकृति-प्रकृति के सम्बन्ध में तो सुविस्तृत लेखा-जोखा तैयार किया है, पर वे भी ऐसा कुछ ठोस उपाय नहीं निकाल सके कि किस प्रकार इन रक्त-बीजों से छुटकारा पाया जाय क्योंकि उनके आक्रमण ऐसे छद्म और इतने तीव्र हैं कि जब तक रोक-थाम का अवसर आवे, तब तक तो वे अपना तीन चौथाई काम पूरा कर लेते हैं ।

विषाणुओं की खोजबीन न केवल भारत में, वरन् समस्त संसार में हो रही है किन्तु अब तक जो परिणाम निकले हैं, वे बहुत उत्साहवर्धक नहीं हैं क्योंकि मारण प्रयोग की सार्थकता पूर्णतया संदिग्ध होती चली जा रही है । इसका एक कारण तो यह है कि रोग-कीटकों के साथ-साथ जीवन-रक्षक स्वस्थ कीटाणु भी मरते हैं, क्योंकि दवा तो रक्त में मिलकर मार-काट मचाती है, वह रोग को मारने और नीरोग को बचा देने की समझ वाली नहीं होती । इसलिए जहाँ रोग-कीटकों को मारने में आंशिक सफलता मिलती है, वहाँ शरीर की जीवनीशक्ति इतनी दुर्बल हो जाती है कि इसके फलस्वरूप किसी रोग की सामयिक निवृत्ति भले ही हो जाय, पर पीछे-पीछे अनेक विकृति-विद्रोह उठ खड़ा होने की सम्भावना बन जाती है । दूसरी एक बात यह है कि विषाणु मारक औषधि प्रयोग के पहले झोंके में तो कुछ न कुछ मरते हैं, पर जो बच जाते हैं, वे ऐसे ढीठ बन जाते हैं कि दवाएँ उनका कुछ भी बिगाड़ नहीं कर पातीं ।

विश्व स्वास्थ्य-संगठन ने रोगवाहक कीटों की आनुवंशिकता पर एक अन्वेषण रिपोर्ट प्रकाशित करके बताया है कि कीटनाशक दवाएँ आरम्भ में तो मारकाट करने में सफल होती हैं, पर जो जीवित बच जाते हैं, उनमें इन कीटनाशक दवाओं से लड़ने की क्षमता भी तेजी से विकसित हो जाती है । इस वातावरण में रहते-रहते वह कीट निर्भय हो जाते हैं और फिर डी० डी० टी०, ऐल्ड्रिन—जैसी दवाएँ भी उन्हें नष्ट करने में असमर्थ हो जाती हैं । अभ्यस्त कीड़े इन विषैली दवाओं पर निर्भय होकर बैठे रहते हैं, इतना ही नहीं, कितने ही तो इन विषों के रसास्वादन का भी प्रेमपूर्वक आनन्द लेते हैं, जो बात फसलनाशक कीटाणुओं पर लागू होती है, ठीक वही मानव शरीर में भीतर अड्डा जमाये बैठे विषाणुओं पर लागू होती है । कुछ दिन के अभ्यास के बाद वे भी दवाओं को अँगूठा दिखाने लगते हैं ।

इन परिस्थितियों में यही सोचना पड़ रहा है कि कीटाणुनाशक दवाओं पर लगने वाले प्रयत्न को एकांगी न रहने दिया जाय, वरन् शरीरों में उस जीवनी-शक्ति के उद्भव का प्रयास किया जाय, जिसके रहते न विषाणु बाहर से आक्रमण कर सकें और न मलों व सड़न के कारण भीतर ही उत्पन्न हो सकें । स्वास्थ्य सम्बन्धी सामान्य नियमों का पालन करना, आहार-विहार में प्रकृति के अनुरूप सामंजस्य उत्पन्न करना ही वह वास्तविक उपाय है, जिससे विषाणु की विभीषिका से निपटने का स्थायी उपाय निकल सकता है ।

एक और भी चिन्ताजनक पक्ष यह है कि यह मारक औषधियाँ भी विषाणुओं से कम घातक नहीं हैं । यदि उनका मारक-तत्व किसी प्रकार प्रबल हो सके तो फिर उसकी भयंकरता किसी महामारी से कम न रहेगी । लाभ सोचने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्थान पर रोग और रोगियों के ही नहीं, स्वस्थ मनुष्यों के सफाया होने की सम्भावना भी सामने आ खड़ी होगी ।

खरगोशों की बहुलता से निपटने के लिए उनमें एक मारक-तत्व की सुई लगाने का ऐसा ही प्रयोग हुआ है, जिसने विषाणुनाशक दवाओं के सेवन के साथ जुड़ी हुई विभीषिका को सामने लाकर खड़ा कर दिया है । फ्रांस में एक डॉक्टर ने अपने बगीचे के खरगोश मारने के लिए उन्हें एक जहरीला इन्जेक्शन लगाया, उसका अनुमान था कि इन खरगोशों के सम्पर्क में आने वाले बगीचे के कुछ और खरगोश भी मर जाएँगे, पर परिणाम अप्रत्याशित हुआ, वह मारक छूत इस प्रकार अनियन्त्रित होकर फैली कि यूरोप में खरगोशों के वंश नाश का ही संकट उत्पन्न कर दिया । घटना इस प्रकार घटी कि फ्रांसीसी डॉ० पाल अमर्दाडिलाइल के बगीचे में खरगोशों का बाहुल्य था, वे आये दिन नये पौधे नष्ट कर देते, इससे वे खरगोशों पर बेतरह झल्लाए हुए थे । खरगोश मारने की दवा का विज्ञापन पढ़ा तो उनकी बाछें खिल गईं और दूसरे ही दिन उसे मँगाने का आर्डर दे दिया और वह कुछ ही दिनों में आ भी गई । उनका विचार अपने बगीचे के खरगोशों को खत्म करने का था, सो बताई हुई तरकीब के अनुसार उन्होंने दो खरगोश पकड़े, उन्हें दवा के इन्जेक्शन लगाये और बगीचे में छोड़ दिया । खरगोश बीमार पड़े, उनकी छूत बगीचे के अन्य खरगोशों को लगी और वे उसी छूत की बीमारी से सब के सब मर गये । डॉक्टर को अपनी इस सफलता पर बहुत प्रसन्नता हुई ।

एक बात एक ही बगीचे तक समाप्त नहीं हुई । छूत फैली और उसने पहले फ्रांस भर के खरगोशों का सफाया किया और पीछे सारे यूरोप में उन पर कहर बरपा दिया ।

फ्रांस में माँस के लिए खरगोश पाले जाते थे । किसानों ने पशुपालन के घरेलू उद्योग में खरगोशों को भी शामिल कर रखा था । सरकारी शिकारगाह में शिकारियों के लिए लाइसेंस लेकर खरगोशों के शिकार की अनुमति मिलती थी । इससे सरकारी खजाने में करोड़ों रुपया लाइसेंस-फीस का जमा होता था । अनुमान किया जाता है कि प्राय: २० लाख खरगोशों का माँस उस देश के निवासियों को मिलता था । उनकी खालें काफी कीमती जाती थीं और उससे किसानों तथा शिकारियों को काफी पैसा मिलता था । चमड़े के उद्योग में इस चमड़े की बड़ी भूमिका थी । इस उद्योग से सरकार को २० लाख करोड़ फ्रेंक का टैक्स मिलता था और चमड़े के कारखानों में प्राय: एक लाख कर्मचारी काम करते थे । द्वितीय महायुद्ध के समय तो भुखमरी से खरगोशों ने ही फ्रांसीसियों को बचाया था । उन दिनों प्राय: ८४ लाख खरगोश हर साल मारे जाने लगे थे ।

यूरोप भर में इन उपयोगी खरगोशों का इतनी तेजी से सर्वनाश होने से सर्वत्र हाहाकार मच गया । उन दिनों प्रति तीन वर्गमील के इलाके में २० हजार खरगोश जमीन पर मरे हुए पड़े पाए गए । जंगलों और झाड़ियों में मरने-सड़ने वालों की संख्या तो और भी बढ़ी-चढ़ी थी । बीमार खरगोशों से गाँवों की गलियाँ भरने लगीं और सड़कों पर पहुँचकर वे तेज दौड़ती मोटरों से कुचलने लगे । सड़कें इस रक्त-माँस से घिनौनी हो गईं । यह समस्या उन दिनों यूरोप की एक बड़ी समस्या बन गई ।

खरगोशों का वंश-नाश करने वाली इस दवा का नाम था—'भिक्जामेटोसिस' उसे आस्ट्रेलिया की सरकारी प्रयोगशाला में बढ़े हुए खरगोशों को नष्ट करने के लिए बनाया गया था । इस दवा के इंजेक्शन लगाकर कुछ खरगोश जंगलों में छोड़े गए, फलस्वरूप छूत की बीमारी उन्हें लगी और बड़ी संख्या में वे मर गए । इससे वे मरे तो, पर वैसा सफाया नहीं हुआ—जैसा कि यूरोप की जलवायु ने उन पर कहर बरपाया ।

इस संकट के निवारण का खरगोशों की नस्ल बचाने के लिए फैली हुई महामारी पर नियन्त्रण करने का काम पाश्चर इन्स्टीट्यूट ने अनेक सरकारों के अनुरोध पर अपने हाथ में लिया । डा० प्येरलेपें के नेतृत्व में एक वैक्सीन निकाला गया और उससे उस महामारी पर नियन्त्रण प्राप्त किया जा सका ।

रोकथाम के लिए जो 'एन्टी भिक्जामेटोसिस' इन्जेक्शन बनाया जा सका, उससे इतना ही हो सका कि खरगोशों की नस्ल मिटने से बचाई जा सके । पाश्चर इन्स्टीट्यूट के कर्मचारियों ने बड़ी मेहनत करके दो वर्ष में ४ लाख स्वस्थ खरगोश पकड़े और उन्हें टीका लगाकर जंगलों में छोड़ दिया, ताकि वे उस महामारी के प्रभाव से अपने को बचा सकें और भविष्य में नस्ल पैदा कर सकने योग्य बने रह सकें । जिन्हें टीका नहीं लगाया जा सका, वे तो बेचारे तेजी से मौत के ग्रास बनते ही चले गए ।

बेल्जियम, लग्जेम्वर्ग, जर्मनी आदि देशों में भी खरगोशों का इसी प्रकार इस महामारी ने सफाया किया । डॉ० पाल डिलाइल ने कुछ खरगोशों पर ही मारक प्रयोग किया था, पर इसकी विष-बेल फैली तो उसने करोड़ों के ही प्राण ले लिये ।

विषाणुओं की भयंकरता और उनकी हानि कम नहीं है । उनके निराकरण का उपाय किया जाना चाहिये । पर वह अति उत्साह भरा और एकांगी नहीं होना चाहिये । मारक औषधियों की उल्टी प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए उनका प्रयोग फूँक-फूँककर करने में ही कल्याण है ।

अन्य प्राणी प्रकृति के आक्रमण को एक सीमा तक ही सहन कर सकते हैं और अधिक दबाव पड़ने पर दम तोड़ देते हैं, पर मानवी काया का निर्माण इतना लोचदार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है कि वह विपन्न परिस्थितियों में भी निर्वाह कर सकता है और अपने आपको इस प्रकार ढाल सकता है, जिससे प्रकृति का दबाव उसे चुनौती न दे सके ।

'न्यूरोफिजियोलाजिकल बेसिस आफ माइण्ड ग्रन्थ' में उदाहरणों और प्रमाणों में यह बताया गया है कि मनुष्य का सामान्य निर्वाह १·५° में होता है पर वह १० हजार फुट से अधिक ऊँचाई पर जहाँ टेम्प्रेचर १५° से. होता है तथा ऑक्सीजन की कमी से असुविधा पड़ती है वहाँ भी कुछ ही दिनों के अभ्यास से सरलतापूर्वक निर्वाह करने लगता है । यहाँ तक कि २० हजार फुट पर जहाँ २५° से. तापमान रहता है, वहाँ भी जिन्दा रह सकता है और २५ हजार से अधिक ऊँचाई पर जहाँ ४५° से. शीत होता है, सामान्य बुद्धि के हिसाब से मनुष्य का जीवित रह सकना सम्भव नहीं है, पर उसकी लोच ऐसी है, जो वहाँ भी जिन्दा बनाए रह सकती है ।

सूक्ष्मजीवों की दुनिया में प्रवेश को मानवी प्रयत्न

बड़ी आकृति वाले थलचर प्राणियों से ही हमारा परिचय है । इससे आगे भी कहीं जीवधारियों का अस्तित्व है और उनकी भी कोई अपनी दुनिया है । इस तथ्य की बहुत कम लोगों को जानकारी होती है । पृथ्वी पर रेंगने वाले प्राणियों की कितनी अधिक जातियाँ और उप-जातियाँ हैं ? उनकी आकृति-प्रकृति क्या है ? उनके सोचने और करने का उपक्रम क्या है ? उन्हें किन साधनों से गुजारा करना पड़ता है और किन परिस्थितियों में रहना पड़ता है ? इसकी जानकारी रखना तो दूर ठीक तरह कल्पना कर सकना भी हमारे लिए सम्भव नहीं ।

हमारी चेतना मानवी मस्तिष्क-परिस्थिति एवं साधनों के अनुरूप ढली है, अस्तु उसे जो सीमित दृष्टिकोण एवम् ज्ञान मिला है, उसी को लेकर काम चलाना पड़ता है । फिर अन्य प्राणियों की विलक्षण दुनिया के बारे में सही कल्पना कर सकना कैसे सम्भव है । यही बात जानकारियों के सम्बन्ध में भी है । आँखों से देखे जा सकने वाले जल जीवों की जानकारी—उतनों तक ही सीमित है, जो आँखों के सामने आते और अपना परिचय देते रहते हैं । समुद्र तल में ही निर्वाह करने वाले जल जीवों की नगण्य जितनी जानकारियाँ ही हैं, उनकी प्रकृति और परिस्थितियों का पता लगाने के लिए जैसा चिन्तन चाहिये—जैसे उपकरणों और साधनों की आवश्यकता है, उन्हें जुटाना अन्तरिक्ष यंत्रों से भी कठिन सिद्ध होगा । इतने पर भी यह एक तथ्य है कि अपनी धरती की 'दुनिया' उतनी छोटी नहीं है जितनी कि मनुष्यों द्वारा सोची और जानी गयी है । इसी धरती पर असंख्य जाति के जीवधारी निवास करते हैं । उनकी संख्या भी इतनी बड़ी है कि तुलनात्मक दृष्टि से ४०० करोड़ मनुष्यों का संख्या बल बहुत ही नगण्य एवं उपहासास्पद प्रतीत होगा । संख्या बल के अतिरिक्त उनकी प्रकृति, आवश्यकता, पारस्परिक सहयोग व्यवस्था, निर्वाह, विनोद, वंशवृद्धि, प्रसन्नता, आयुष्य आदि की परिस्थितियाँ इतनी विचित्र मिलेंगी, जिन्हें देखते हुए उन्हें मनुष्यों की 'दुनिया' से सर्वथा भिन्न एवम् विलक्षण स्तर की कहा जा सकता है । आश्चर्य इस बात का है कि अपनी धरती पर असंख्य प्राणियों की, असंख्य स्तर की चित्र-विचित्र दुनिया बसी हुई है । असंख्य सभ्यताएँ फल-फूल रही हैं । असंख्य जीवन विधाओं का कार्यान्वयन हो रहा है, किन्तु हम अपनी ही दुनिया तक सीमित हैं और उस सीमित क्षेत्र को ही सब कुछ मानकर मूर्खों की दुनिया में रहने की उक्ति चरितार्थ कर रहे हैं ।

सत्रहवीं सदी के उत्तरार्ध में वैज्ञानिक आनोफा ल्यूवेनाक ने सूक्ष्मजीवों को स्वनिर्मित लेन्सों से देखा । उन्नीसवीं शताब्दी में लुई पाश्चर ने सूक्ष्मजीवों की दुनिया की जानकारी प्राप्त कर उनकी भूमिका को प्रयोग द्वारा दिखाया । फिर यह सिलसिला बढ़ता ही गया । कोरव, मैक्निरवोव, फिनले, फ्लेमिंग द्वारा विकसित सूक्ष्मजीवविज्ञान आज विशाल अध्ययन-अन्वेषण का क्षेत्र बना है ।

सूक्ष्मजीव इतने छोटे होते हैं कि आँखों से उन्हें नहीं देखा जा सकता । पास-पास रखने पर साधारणत: २५ हजार सूक्ष्मजीव एक इन्च की जगह में समा जायेंगे । इनकी आकृति और वजन दोनों के आधार पर कई जातियाँ हैं । सामान्यत: बीस अरब सूक्ष्मजीवियों का वजन एक खस-खस के दाने के बराबर होता है ।

सूक्ष्मजीवी प्रत्येक जगह पर मिलते हैं । यहाँ तक कि ये ऐसे स्थानों पर भी पाए गए हैं, जहाँ जीवन की कोई सम्भावना नहीं मानी गई थी । पृथ्वी के वायुमण्डल की ऊपरी तह में, दक्षिणी ध्रुवों की बर्फ में, गरम स्रोतों के खौलते प्रवाह में, नाभिकीय रियेक्टरों की शीतलन प्रणालियों में भी इन्हें पाया गया है ।

'मृतसागर' से साफ पानी तक, स्तनपाइयों की आँतों से लोहे के जमीनदोज नलों की सतहों तक इनका बोलवाला है । प्रतिदिन अनेक सूक्ष्मजीवी हमारे शरीर के भीतर नाक और मुँह के रास्ते से घुसते हैं । वे हमारी त्वचा पर भी विहार करते हैं ।

इन सूक्ष्मजीवियों की असंख्य जातियाँ हैं । कुछ सूक्ष्मजीवी अम्लीय माध्यम में रहते हैं तो कुछ क्षारीय, कुछ ऊँचे तापक्रम पर, तो कुछ नीचे तापक्रम पर, कुछ हवा के बिना नहीं जी सकते, तो कुछ हवा में ही नहीं जी सकते, बिना हवा के मजे में रह लेते हैं । यह माध्यम क्या है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

२.१४ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

जीवाणु जिस वस्तु में जन्म लेते, पलते-पनपते हैं, वही उनका माध्यम है । ये छोटे इतने होते हैं कि किसी भी द्रव माध्यम के एक घन सेन्टीमीटर में लगभग १ करोड़ जीवाणु आराम से रह लेते हैं, जिस माध्यम में ये जीवाणु रहते हैं, उसी से आहार प्राप्त करते हैं । उसी माध्यम में ये बढ़ते, बच्चे पैदा करते और बलवान बनते हैं ।

इनके बढ़ने और बच्चे पैदा करने का ढंग दिलचस्प है । प्रत्येक जीवाणु एक कोशिका भी है और एक जीव भी । इसीलिए यह एककोशिकीय जीव कहलाता है । एक सूक्ष्मजीवी थोड़ा-सा लम्बा होकर स्वयं दो भागों में विभक्त हो जाता है । ये दोनों ही भाग मूल कोशिका के ही समान दो पृथक्-पृथक् सूक्ष्मजीवी बन जाते हैं । इनकी बढ़ने की रफ्तार भी गजब की होती है । एक सूक्ष्मजीवी चौबीस घण्टे में ७० पीढ़ियाँ पैदा कर सकता है । विषूचिका का एक सूक्ष्मजीवी एक दिन में ४ अरब ८० करोड़ की संख्या में हो जाता है । तभी तो इस रोग के अधिकांश रोगी देर होने पर बच नहीं पाते । पोषक माध्यम की कुछ ही बूँदों में सूक्ष्मजीवियों की ७ अरब आबादी का आवास सम्भावित होता है । एक सूक्ष्मजीवी द्वारा स्वयं को दो भागों में बाँटकर फिर पृथक्-पृथक् यही क्रम अपनाते हुए बढ़ते जाने के कारण इनकी वंश वृद्धि की क्रिया को 'विखण्डन-क्रिया' द्वारा वंश-वृद्धि कहा जाता है ।

अब तक मनुष्य के सहायकों में श्रम, दूध, बाल, चर्म, माँस आदि देने वाले प्राणियों की गणना होती थी और वनस्पति वर्ग को छाया, अन्न, शाक, फल, फूल, लकड़ी आदि देने वाले सहायकों में गिना जाता था । प्राणियों और वनस्पतियों के सहारे ही मानव जीवन की गाड़ी घिसटती दिखाई देती थी, अब सहायकों के वर्ग में सूक्ष्मजीवों की एक नई जाति सम्मिलित हुई है । विज्ञान ने धरातल की दूरी को ही समीपता में नहीं बदला है, वरन् प्राणियों के बीच की दूरी को भी घसीटकर एकता में परिणत कर दिया है । अब सूक्ष्मजीव हमारे लिए पशु और वृक्ष वनस्पतियों से भी अधिक उपयोगी एवं सहायक सिद्ध होने जा रहे हैं ।

सतर्कता तो मित्रों से भी रखनी पड़ती है । अनियन्त्रित और अव्यवस्थित छोड़ देने पर तो सुई भी काँटे का काम करेगी और संकट में फँसा देगी । संक्रामक रोग-कीटकों की हानि को ध्यान में रखते हुए उनसे सुरक्षा का प्रबन्ध भी करना होता है और उनके मारण-निवारण का सरंजाम भी जुटाना होता है । इतने पर भी समूची सूक्ष्मजीवों की दुनिया हमारे लिए शत्रु का नहीं मित्र का ही काम करती है और निकट भविष्य में उनकी सहायता से भारी हित साधन हो सकने की अपेक्षा है ।

संक्रामक रोगों की भयानकता प्रसिद्ध है । तपेदिक, प्लेग, मोतीझरा, हैजा, इन्फ्लूएन्जा, चेचक, डिप्थीरिया, कुकरखाँसी, टिटेनस, अधरंग आदि अनेक संक्रामक यानी छूत के रोग हैं । संक्रामक रोगियों से दूर रहने की सलाह इसी आधार पर दी जाती है । विज्ञान के विचार से छूत लगने का कारण अत्यन्त छोटे-छोटे कृमि होते हैं । इन्हें बैक्टीरिया या सूक्ष्मजीव अथवा जीवाणु कहते हैं ।

विषाणुओं से डरना और सतर्क रहना उचित है, पर यह भी ध्यान में रखा जाना है कि सूक्ष्मजीवियों की अधिकांश जातियाँ हमारी शत्रु नहीं मित्र हैं, वे अनायास ही हमें बहुत लाभ पहुँचाती हैं, पर जब उनका सहयोग विधिवत आमन्त्रित किया जायगा तब तो वे अपनी मित्रता का उससे भी बड़ा परिचय देंगी जैसा कि अब तक उपयोगी प्राणियों और वनस्पतियों का मिलता रहा है ।

इस तरह विज्ञान आज सिर्फ बाह्य अन्तरिक्ष की चुनौतियों में ही नहीं उलझा है, बल्कि वह आन्तरिक अन्तरिक्ष की उन चुनौतियों से भी जूझ रहा है, जहाँ हमारे सम्पूर्ण जीवन को प्रभावित करने वाले अदृश्य रूपाकृति वाले अनन्त सूक्ष्मजीवों और सूक्ष्मतर हलचलों का विराट संसार है । महाकवि गेटे के शब्दों में कहें तो इस आन्तरिक अन्तरिक्ष को सिर्फ 'देखना' पर्याप्त नहीं उसे 'जानना' भी जरूरी है ।

प्रकृति के आँगन में विशालकाय जीवों की अथवा बहुत छोटे और आँखों से न दिखाई देने वाले प्राणियों की भी भरमार है । शरीर में बहुत छोटे और बहुत बड़े का अन्तर होते हुए भी सभी प्राणी अपना जीवन-निर्वाह समान रूप से व्यतीत करते हैं । इसके लिए प्रकृति ने प्रत्येक प्राणी को उसकी आवश्यकता और स्थिति के अनुसार पर्याप्त सामर्थ्य दी है । हाथी, ऊँट, गैण्डा, जिराफ, चिम्पैंजी, गुरिल्ला, सिंह, व्याघ्र, ह्वेल, शार्क जैसे समर्थ और बड़े शरीर वाले प्राणियों की गतिविधियों तथा उनकी सामर्थ्यों के सम्बन्ध में हमें कुछ जानकारी उपलब्ध है । मनुष्य इन सबमें सर्वाधिक बुद्धिमान समझा जाता है । उसकी बुद्धिशीलता के सम्बन्ध में बहुत कुछ जाना, खोजा और कहा गया है किन्तु इसी आधार पर यह नहीं मान लेना चाहिये कि प्रकृति ने ऐसी विशेषताएँ बड़ी आकृति वाले प्राणियों को ही दी हैं । छोटे जीवों में चींटी, दीमक और मधुमक्खियों जैसे कीड़े-मकोड़ों की गतिविधियों को यदि गंभीरतापूर्वक देखा जाय तो आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है और मानना पड़ता है कि उन्हें अपने जीवन क्षेत्र की परिधि में प्रकृति ने मनुष्य से भी अधिक बुद्धिमता और कुशलता प्रदान की है ।

जिन प्राणियों के सम्बन्ध में समझा जाता है कि उनमें कोई बुद्धि नहीं होती, वास्तव में ऐसा होता नहीं है । वे बुद्धिमान हैं या निर्बुद्धि इसका विश्लेषण निर्धारण हम अपनी क्षमता के स्तर को मानदण्ड बनाकर करते हैं और उस समय यह भूल जाते हैं कि सब प्राणियों का जीवन क्रम तथा उनका कार्यकलाप एक जैसा नहीं है । प्रत्येक प्राणी को उसकी आवश्यकता के अनुसार प्रकृति ने पर्याप्त कुशलता और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सफलता प्राप्त करने योग्य क्षमता दी है । इस तरह से वे न तो तुच्छ ठहरते हैं और न ही मूर्ख तथा अशक्त । मछलियों के समाज में कदाचित हमें रहना पड़े और जल में निवास करना पड़े तो निस्संदेह मछलियाँ हमें सर्वथा अशक्त एवं शोचनीय दुर्दशाग्रस्त स्थिति में पड़ा प्राणी दिखाई देंगी । यही बात मक्खियों के सम्बन्ध में भी लागू होती है । मक्खियाँ ही क्यों कोई भी प्राणी या जीव-जन्तु हमें अपनी तुलना में दीन-हीन ही प्रतीत होगा ।

बड़े और स्थूल प्राणियों में ऐसे जीव-जन्तुओं का अध्ययन किया जाय, जिन्हें विकसित कहा जा सकने योग्य मस्तिष्क तथा संवेदना-सूचक इन्द्रिय समूह प्राप्त नहीं है । इतनी अभावग्रस्तता के बीच भी उन्हें चेतना का अपना अद्भुत स्तर उपलब्ध है और धंधे-वृद्धि से लेकर जीवन-यापन के दूसरे साधन तक बहुत कुछ प्राप्त है और वह इतना अधिक तथा विस्तृत है कि मनुष्य उसे देखकर दाँतों तले अँगुली ही रख सकता है ।

उदाहरण के लिए जीवाणुओं की अपनी दुनिया है, ये बहुत छोटे हैं । उनमें से कितने ही तो ऐसे हैं जो सूक्ष्मदर्शी यंत्रों की सहायता के बिना खुली आँखों से नहीं देखे जा सकते । इतना होते हुए भी उन्हें अपने स्तर का क्रिया-कलाप, जीवन-यापन करने की आश्चर्यजनक क्षमता प्राप्त है । शरीर के अनुपात से उन्हें जितनी सामर्थ्य प्राप्त है उसी हिसाब से हमारे शरीर के लिए कितनी सामर्थ्य चाहिये ? इसका हिसाब लगाया जाय तो प्रतीत होगा कि उन जीवों की तुलना में मनुष्य को प्रकृति के अनुदान बहुत ही स्वल्प मात्रा में प्राप्त हैं । जीवाणुओं को उनके छोटे कलेवर के अनुसार जो कुछ मिला है, यदि वही अनुदान मनुष्य को प्राप्त रहा होता तो उसकी क्षमता इतनी अधिक होती जितनी कि हम देवताओं की सामर्थ्य के रूप में करते हैं ।

जीवित प्राणियों में सबसे सूक्ष्म इकाई अमीबा है, इनमें 'तरल' प्रोटोप्लाज्म भरा रहता है । ऊपर से ग्लूकोज की झिल्ली रहती है । इनका आकार प्रायः एक इन्च का पच्चीस हजारवाँ भाग होता है । ये स्वयं ही अपने शरीर में प्रजनन करते हैं । २४ घण्टे में प्रायः एक जीवाणु लगभग डेढ़ करोड़ नये जीवाणु उत्पन्न कर देता है और प्रत्येक जीवाणु अपने जन्म के प्रायः पन्द्रह मिनट बाद प्रजनन योग्य प्रौढ़ता प्राप्त कर लेता है । सूर्य का तीव्र ताप इनकी मृत्यु का प्रधान कारण होता है । इनमें कोमलता और अशक्तता बहुत होती है, पर इतने पर भी प्रकृति ने इन्हें अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए वे सभी विशेषताएँ प्रदान कर दी हैं, जिनके आधार पर ये प्रलय से भी भयंकर विपत्तियों से जूझते हुए अपना अस्तित्व सुरक्षित रख सकते हैं ।

वैज्ञानिकों की मान्यता है कि पृथ्वी पर जीवन चेतना का अवतरण सर्वप्रथम जीव द्रव्य के रूप में हुआ । धरती की उष्णता शान्त होकर जब जीवधारियों के योग्य हुई तो सबसे पहले जीव द्रव्य प्रोटोप्लाज्म उत्पन्न हुआ । प्रथम जीवधारी, जीव द्रव्य की बूँदों के सम्मिश्रण से नहीं बना, वरन् वह एक स्वतंत्र सत्ता सम्पन्न एककोशीय जीव था । उपलब्ध अमीबा उसी के स्तर का जीव था । यह एककोशीय जीव नदी, तालाबों, नालियों एवं कीचड़ जैसे स्थानों में पाया जाता है और इसका आकार प्रायः इन्च के सौवें भांग के बराबर होता है । इनके ऊपर एक पतली झिल्ली चढ़ी रहती है जिसे प्लाज्मालेमा कहते हैं । इसमें कई-कई शंकुपाद हाथी की सूँड़ के समान निकले रहते हैं और वह अपना आहार इन्हीं के सहारे पकड़ता तथा खींचता रहता है ।

अमीबा प्रौढ़ हो जाने पर अपने आपको ही दो टुकड़ों में विभाजित कर लेता है । उसकी वंश परम्परा इसी प्रकार बढ़ती है । विभाजन के पूर्व वह अपनी आकृति को गोलाकार बनाता है और इस प्रकार अपनी आकृति को बढ़ाते हुए वह मध्य में पतला होते हुए दो टुकड़ों में बँट जाता है । इस भाँति उसके विभाजन-प्रजनन कर्म को सम्पन्न होने में लगभग डेढ़ घण्टे का समय लगता है ।

जड़ परमाणुओं की चर्चा भौतिकशास्त्र और रसायनशास्त्र में प्रायः होती रहती है । इन परमाणुओं की भाँति ही सजीव जगत में भी कई प्रकार के परमाणु होते हैं, इनमें से एक होता है—डायटम । डायटम का अर्थ होता है दो परमाणुओं की शक्ति वाला । यों ये वनस्पति वर्ग में आते हैं, किन्तु इनमें पेड़-पौधे जैसे प्रत्यक्ष लक्षण नहीं दिखाई देते । इसका आकार इन्च के पचासवें हिस्से से लेकर हजारवें हिस्से के बराबर तक होता है, वे सूक्ष्मदर्शी यन्त्रों की सहायता से ही देखे जा सकते हैं ।

इनकी आकृति को किसी सूक्ष्मदर्शी यंत्र से विस्तारित रूप में देखा जाय तो इतने सुन्दर और चित्र-विचित्र दिखाई देते हैं कि देखने वाला इनकी सुन्दरता पर मुग्ध होकर रह जाता है । लगता है किसी बहुत ही कुशल कारीगर ने इन्हें अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा का उपयोग कर पच्चीकारी और मीनाकारी को एक से एक सुन्दर डिजायनों के रूप में गढ़ा है । गुलदस्ते, रत्नजटित हार, डिजायनदार कालीन जैसी कितनी ही कलात्मक वस्तुओं और केकड़ा, कनखजूरा, स्फटिक कच्छप जैसे प्राणियों की तरह एवं कई प्रकार के पुष्प गुच्छाओं के रूप में इन्हें सूक्ष्मदर्शक यंत्र द्वारा ही देखा जा सकता है । देखने वालों को अचम्भा होता है कि इतने छोटे, असमर्थ और अविकसित प्राणी पर नियति ने कितनी सुन्दरता से अपनी कलाकृति का अनुदान बखेरा है । इनकी चाल इतनी विचित्र है कि यह न केवल वैज्ञानिकों के लिए आश्चर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का विषय है, अपितु मनुष्य मात्र को बहुत कुछ सिखाती भी है । कितने ही यंत्रों का गतिक्रम निर्धारण करने में इन छोटे डायटमों के अध्ययन से महत्वपूर्ण मार्ग सूचक संकेत मिले हैं । इनमें से कुछ टैंक की तरह तो कुछ जलयान की तरह, कुछ राकेट की तरह और कुछ बिजली की तरह आगे-पीछे हटते, बढ़ते अपनी गति का प्रदर्शन करते हैं । ये भी अपने आपको दो टुकड़ों में विभाजित करके एक से दो बनते हैं ।

जड़ अण्ड 'परमाणु' के नाम से पुकारे जाते हैं और चेतन प्राणधारियों में काम करने वाले चेतन अण्डजों को कोशिकाएँ कहते हैं । यों ये कोशिकाएँ भी अण्डजों से ही अपने आप निर्मित होती हैं, पर उनमें चेतना का अतिरिक्त अंश मिल जाने से उन्हें दूसरे वर्ग में रखा गया है । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जड़ जगत् अण्डजों से और चेतन सृष्टि जीवाणुओं तथा कोशिकाओं से बनी है । जिस प्रकार परमाणु के भीतर भी कई अनोखी सृष्टि होती है उसी प्रकार कोशिकाओं के भीतर भी एक पूरा चेतन सरोवर भरा हुआ होता है । इन दोनों को अलग इकाइयाँ समझा जाता है, पर ये अविच्छिन्न नहीं है । इनके भीतर भी विश्लेषण करने जैसे असीम तत्व और अगणित भेद-प्रभेद भरे होते हैं—इस लघुता का अन्त भी विराट के अन्त की तरह अभी तो बुद्धि की सीमा से बाहर ही दीखता है, जिसे जितना खोलते हैं, उतनी ही एक के भीतर एक नई-नई पर्तें निकलती चली जाती हैं ।

जीव परिवार में सभी सदस्य पौधे और प्राणी, कोशिकाओं से बने हुए हैं । ये कोशिकाएँ एक विशेष प्रकार के चिपचिपे पदार्थ से भरी होती हैं । ये कोशिकाएँ अपनी पूर्ववर्ती कोशिकाओं के विभाजन से बड़ी होती हैं और विभाजन क्रम से ही उनकी आगे की वंशवृद्धि होती रहती है । प्राणी की वृद्धि, विकास, आनुवंशिकता, बलिष्ठता, दुर्बलता, जरा, मृत्यु, मनःस्थिति आदि का आधार इन कोशिकाओं की आन्तरिक संरचना पर ही निर्भर रहता है । इस प्रकार हम चाहें तो इन कोशिकाओं को भी एक स्वतंत्र जीवधारी जैसी संरचना कह सकते हैं । जीव का सामान स्वरूप इन जीवाणु कोशिकाओं के संगठन का ही दूसरा नाम है ।

संसार का सबसे छोटा और लघुकाय प्राणी अमीबा है । अमीबा जैसे और भी कई जीव हैं, जो एककोशीय होते हैं । अन्य विकसित और बड़े प्राणियों से इनकी संख्या अधिक होती है । १६० पौंड के वयस्क पुरुष में ६० हजार अरब तक कोशिकाएँ होती हैं । इनके भीतर भरे हुए पदार्थ को प्रोटोप्लाज्म कहा जाता है । इसके ऊपर चढ़ी हुई झिल्ली इतनी लचीली होती है कि उसमें होकर आवश्यक आदान-प्रदान होता रहता है, किन्तु वह अवांछनीय प्रवेश को रोके रहती है । प्रोटोप्लाज्म या जीव द्रव्य को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—एक साइटोप्लाज्म और दूसरा न्यूक्लीअस । साइटोप्लाज्म में लवण, वसाएँ, शर्करा, प्रोटीन, खनिज जैसे अनेकों पदार्थ सम्मिश्रित होते हैं । न्यूक्लीअस उसी के भीतर एक अचेतन मृत सघन गेंद की तरह रहता है । उसकी संरचना क्रोमोसोम समूह के न्यूकलीओस पदार्थों से होती है ।

निर्जीव समझे जाने वाले रासायनिक पदार्थों की स्थिति जड़ अचेतन स्तर की दयनीय और दीन-हीन प्रतीत होती है । प्रायः तो उन्हें जड़ कहकर चेतन जगत से बहिष्कृत ही मान लिया जाता है, पर वैज्ञानिक अन्वेषणों से यह पता चला है कि निर्जीव कहलाने वाले इन रासायनिक पदार्थों में भी वह अद्भुत शक्ति भरी पड़ी है, जिससे वे निर्जीव होते हुए भी जीवन को, जीवधारियों को उत्पन्न कर सकें लेकिन इनमें वह शक्ति तभी क्रियान्वित हो सकती है, जब ये परस्पर घुल-मिलकर रहने के लिए तत्पर हो जायें । अलग-अलग रहने की पृथक्तावादी नीति जब तक ये अपनाते रहते हैं, तभी तक वे जड़ हैं, पर जिस क्षण वे रासायनिक द्रव्य में सन्तुलित रूप से एकत्रित होते हैं, उसी क्षण द्रव्य के रूप में चेतना का संचार होने लगता है ।

जीवद्रव्य या प्रोटोप्लाज्म कुछ रासायनिक तत्वों का सम्मिश्रण मात्र समझा जाता है । कार्बन, क्लोरीन, आयोडीन, मैग्नीशियम आदि रासायनिक पदार्थों का समन्वयीकरण इस जीवद्रव्य को विनिर्मित करने की भूमिका सम्पादित करता है । प्रकृति परिवार में, सृष्टि परिवार में रहने वाले सभी छोटे-बड़े सदस्यों के सम्बन्ध में हमें मानना चाहिये कि हम न तो सृष्टि के सबसे बड़े और महान प्राणी हैं और न ही प्रकृति ने हमें कोई विशिष्ट क्षमताएँ प्रदान कर पक्षपात बरता है । इस आधार पर न उपलब्धियों पर उद्धत होना चाहिए तथा न ही उद्धत । साथ ही छोटे प्रतीत होने वाले प्राणियों को न हेय दृष्टि से देखें, न तुच्छ समझें तथा न ही दयनीय, दुर्भागी, वरन् यही समझते हुए अपनी जीवन नीति निर्धारित करें कि सृष्टि के प्रत्येक घटक में ईश्वर की दिव्य-ज्योति विद्यमान है।

संगठित जातियाँ चट्टानवत सुदृढ़ होती हैं

आस्ट्रेलिया के उत्तरी तट पर एक चट्टान है—१२०० मील लम्बी —भूगोल में इसका विशिष्ट स्थान है—नाम है 'ग्रेट बैरियर रीफ' इसकी चौड़ाई न्यूनतम २०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फीट है, कहीं-कहीं पर तो वह एक मील तक चौड़ी हो गई है । ५० मीटर नीचे तक जाने वाली यह चट्टान, जिसके समीप जाने से बड़े-बड़े जहाज भी भय खाते हैं, सचमुच कोई पत्थर की चट्टान नहीं है वरन् 'स्टोनो कोरल्स' जाति के 'एन्थ्रोजोआ' जीव होते हैं । उनका चट्टान की तरह एक उपनिवेश (कालोनी) में रहना यह बताता है कि संगठन में कितनी सामर्थ्य है ? छोटे-छोटे जीव संगठित होकर इतने शक्तिमान हो सकते हैं तो हम बुद्धिशील भारतीय जातीय एकता के बंधन मजबूत करके समर्थ क्यों नहीं हो सकते ?

चट्टान के भीतरी भाग में कोमलता भरी हुई है पर ऊपर इतनी सुदृढ़ता क्यों ? यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है । भीतर के सब जीव श्रम विभाजित कर अपना-अपना काम करते रहते हैं । कोई खाद्यान्न जुटाता है तो कोई बच्चे सेता है । बाहरी रक्षा पंक्ति के एन्थोजोआ कैल्सियम कार्बोनेट का बहुत भारी आवरण अपने ऊपर चढ़ा लेते हैं, इस तरह वे एक चट्टान की आकृति में मजबूत दुर्ग के समान सुरक्षित बने रहते हैं, यदि उन्होंने परस्पर मिलने की सुदृढ़ता न दिखाई होती, आपस में बिखरे और विशृंखलित बने रहते तो आज उनकी वंशावली या तो होती ही नहीं, होती भी तो बहुत सम्भव है, पूर्व भारतीयों के समान पराधीन या विश्व में अल्पसंख्यक रह गए होते ।

आवश्यकतानुसार यह विभिन्न आकृतियाँ बनाते रहते हैं, कभी पंखे जैसे होकर 'सीफैन' कहलाते हैं तो कभी प्राचीनकाल के मोरपंख की लेखनी जैसे, जिन्हें 'सीपेन' कहते हैं । इसी जाति का 'एटाल' नामक जीव बैलों व घोड़ों के खुरों में जड़े जाने वाले नाल जैसा होता है, जिसकी दोनों भुजाओं के बीच की दूरी ५० मील तक हो सकती है । विभिन्न आकृतियों में संगठन का स्वरूप यह इंगित करता है कि हम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि कैसे ही स्वरूप में रहें, शासन और सामाजिक व्यवस्थाओं के स्वरूप भले ही बनते-बिगड़ते रहें पर धर्म व संस्कृति की दृष्टि से अपनी एकता कभी भंग न करें, तभी हम संसार की भयंकरताओं से, द्वन्द्वों और आक्रमणों से टक्कर ले सकते हैं ।

काम वितरण करके भी एक जाति एक परिवार की तरह रह सकती है । संसार के अनेक जीवों में यह सिद्धान्त पाया जाता है, जिसका नाम 'पोली-मार्फिज्म' है । एक ही जीव कई प्रकार का आकार बनाकर रहते हैं पर उनका मुख्य उद्देश्य अपने समाज व समुदाय की सुरक्षा व विकास करना ही होता है ।

सीलेन्ट्रेटा समुदाय के 'साइफेनोफोरा' वर्ग में पाये जाने वाले फाइसिलिया वेलेला, पोरपिटा, टेन्टिला कैलिकोफोरा आदि जीव श्रम का वर्गीकरण करके जीते हैं, पर उनमें पारस्परिक एकता व मैत्री भी इतनी घनिष्ट होती है कि कोई भी बाहरी जीव अँगुली नहीं उठा सकता । किसी समय भारतीय समाज में भी यही व्यवस्था थी । सारी हिन्दू-जाति एक पिता की सन्तान की तरह रहती थी । सुविधा की दृष्टि से कोई ब्राह्मण का, समाज को संस्कारवान बनाने का कार्य करता था, कोई देश की सुरक्षा का क्षत्रिय कर्म, कुछ भरण-पोषण का उत्तरदायित्व सँभालते थे, कुछ सेवा-सुश्रूषा के स्थूल कार्य । काम बँटे थे, एकता नहीं । जब तक यह व्यवस्था रही भारत विश्व में अपराजेय रहा, पर जब संगठन टूटा तो अपने घर में मुसलमान, अँग्रेज, पुर्तगाली आदि कितनी ही जातियाँ घुस बैठीं और हम पर शासन करने लगीं ।

फाइसेलिया जीव पुर्तगाल के सिपाही की हैट (पुर्तगीज मैन ऑफ वार) की तरह की आकृति बनाकर अपनी जाति के सब अंडे-बच्चों को समेटकर सुरक्षित कर लेता है । इनमें जो उदर-पोषण के लिए समुद्र से आहार लेते रहते हैं, उन्हें 'गेस्ट्रोजूइड' कहते हैं । अन्य कुछ सुरक्षा का कार्य करते हैं । अकेले तो यह एक कीड़े को भी नहीं मार सकते पर संगठित होने के कराण वे बड़ी-बड़ी मछलियों को उसी प्रकार मार भगाते हैं, जैसे संगठित भारतीय कभी आक्रमणकारी अफगानों, चीनियों को मार भगाते थे । 'गोनोजूइड' नामक इन्हीं जीवों की एक श्रेणी प्रजनन का काम करती है, शेष सब संयमित जीवन-यापन करते हैं । उनका एक ही काम रहता है, अपने समाज की सेवा और सुरक्षा । हमारी आन्तरिक व्यवस्था भी ऐसी ही थी । जब तक संयमी व सेवाशील समाज-सुधारकों की कमी न रही, देश विश्व का सिरमौर रहा, पर अब जब सारे लोग पेट और प्रजनन की निकृष्ट प्रक्रियाओं में ग्रस्त हो गए, हमारी सारी विशेषताएँ ही नष्ट हो गईं । धर्म, संस्कृति और तत्व दर्शन अभी वैसा ही सामर्थ्यवान है पर अपनी जातीय एकता से विमुख होने के कारण हम उस समर्थता को धारण करने में भी समर्थ नहीं रहे ।

संगठित जातियाँ संख्या में थोड़ी ही हों, तो भी वे सारे संसार में अँग्रेजों की तरह छा सकती हैं । मुसलमान भारतवर्ष में कुल सात सौ आए थे और आज भारतीय प्रदेश में ही दस करोड़ मुसलमान हैं, एक पाकिस्तान बन गया सो अलग यह सब संगठन की महिमा है । मनुष्य क्या जीवों में भी उसके बड़े अनूठे उदाहरण हैं । 'बाल वाक्स' नामक प्रोटोजोआ (जिन जीवों के शरीर एक ही कोश के होते हैं, उन्हें प्रोटोजोआ कहते हैं) जीव भी है और कुछ वैज्ञानिक उसे वनस्पति भी मानते हैं, इसको भोजन प्रकाश-संश्लेषण (फोटोसिंथेसिस) द्वारा प्राप्त होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । यह हमेशा एक कालोनी में संगठनबद्ध रहता है । इनकी कालोनी गोल गेंद के आकार की होती है । परस्पर मिले-जुले न रहें तो एक जीव तैर भी नहीं सकता पर वे जब परस्पर मिलकर गेंद की आकृति बना लेते हैं तो कहीं भी समुद्र भर में घूमते रह सकते हैं । सुरक्षा, आजीविका और प्रजनन के सब कार्य इनमें भी वितरित होते हैं ।

शीत ऋतु में तापक्रम गिर जाने के कारण मक्खियाँ जीवित नहीं रह पातीं । कमजोर मक्खियाँ अकेली-अकेली रहती हैं और भारतीयों की तरह नष्ट होती रहती हैं, लगता है हमारी समझ से उनकी समझ अच्छी है कि वे अपनी भूल शीघ्र ही अनुभव कर लेती हैं । जाति, उपजाति, प्रजाति के भेदभाव भूलकर वे लाखों की संख्या में संगठित होकर एक छत्ते की-सी आकृति बना लेती हैं । अब वे एक जाति, एक वंश, एक कुनबे की तरह रहती, खाती, पीती, उठती-बैठती दिखाई देने लगती हैं, इससे वे प्रकृति के आघात हँसते-खेलते सहन कर लेती हैं । सटे रहने के कारण हवा उसी प्रकार प्रवेश नहीं कर पाती जिस प्रकार संगठित जातियों में भेदिये, जासूस और तोड़-फोड़ की कार्यवाही करने वाले कुछ नहीं बिगाड़ पाते । इस प्रकार वे ठण्ड से अपने शरीरों की रक्षा कर लेती हैं ।

संगठन और जातीय एकता, शक्ति और सुरक्षा के आधार हैं । कोई भी देश और जाति तब तक विकसित नहीं हो सकती, जब तक उनका यह प्राथमिक आधार ही सुदृढ़ न हो ।

प्रकृति के अनोखे वरदान

पैसिफिक सागर में गोता लगाकर मोती ढूँढ़ने वालों को पता चला कि 'स्टारफिश' (यह तारे की तरह चमकने वाली छोटी-सी मछली होती है) ही अधिकांश सीपियों को नष्ट कर डालती है । अतएव वे मोती ढूँढ़ने से पहले इन स्टारफिशों को ही समूल नष्ट कर डालने के लिये जुट पड़े । उन्होंने इन्हें पकड़-पकड़ कर काटना शुरू कर दिया ।

एक, दो, दस, पचास, सैकड़ा, हजार कितनी ही स्टारफिशें काट डाली गईं पर रावण के मायावी सिरों की भाँति वे कम न हुईं, उल्टे उनकी संख्या बढ़ती ही गई । अभी तक तो उनकी उपस्थिति ही चिन्ताजनक थी । अब तो उनकी आश्चर्यजनक वृद्धि और भी कष्टदायक हो गई । अन्त में यह जानने का फैसला किया गया कि आखिर यह स्टारफिशों की वृद्धि का रहस्य क्या है ?

सावधानी से देखने पर पता चला कि जो स्टारफिश काट डाली गई थीं, उनका प्रत्येक टुकड़ा स्टारफिश बन चुका था । अभी तक अमीबा, हाइड्रा जैसे एककोशीय जीवों के बारे में ही यह था कि ये अपना 'प्रोटोप्लाज्म' दो हिस्सों, दो से चार, चार से आठ हिस्सों में बाँटकर वंश वृद्धि करते जाते हैं पर अब इस बहुकोशीय जीव को काट देने पर भी जब एक स्वतंत्र अस्तित्व पकड़ते देखा गया तो जीव-शास्त्रियों का प्रकृति के इस विलक्षण रहस्य की ओर ध्यान आकर्षित होना स्वाभाविक ही था ।

तब से निरन्तर शोध-कार्य चलता रहा और देखा गया कि नेस सलामैसीना, आइस्टर, (स्नेल घोंघा-फ्रेश वाटर मसल (शम्बूक) साइलिम, चेटोगैस्टर, स्लग मन्थर) पाइनोगोनाइड (समुद्री मकड़ी) आदि कृमियों में भी यह गुण होता है कि उनके शरीर का कोई अंग टूट जाने पर ही नहीं वरन् मार दिए जाने पर भी वह अंग या पूरा शरीर उसी प्रोटोप्लाज्म से फिर नया तैयार कर लेते हैं । केकड़ा तो इन सबमें विचित्र है । टैंक की-सी आकृति वाले इस जीव की विशेषता यह है कि अपने किसी टूटे हुए अंग को तुरन्त तैयार कर लेने की प्रकृतिदत्त सामर्थ्य रखता है ।

यह तथ्य जहाँ इस बात का प्रतिपादन करते हैं कि इच्छाशक्ति पदार्थ का बन्धनरहित उपयोग कर सकने में समर्थ है, वहाँ इस बात को भी प्रमाणित कर रहे हैं कि आत्मचेतना एक शक्ति है और वह भौतिक शक्तियों से बिल्कुल भिन्न मरण-धर्म से विपरीत है । उस पर जरा, मृत्यु आदि का कोई प्रभाव नहीं पड़ता । आत्म-तत्व भले ही वह किसी भी घृणित और तुच्छ से तुच्छ वासना एवम् इच्छाशक्ति के रूप में क्यों न हो, इतना सशक्त है कि स्वेच्छा से न केवल अपने भीतर से उत्पादन की क्रिया आप ही करता रहता है वरन् अपने पूर्णतया मुर्दा शरीर को भी बार-बार जीवित और नया कर सकता है । इन महान आश्चर्यों को देखकर ही लगता है कि भारतीय तत्वदर्शियों ने सृष्टि विकास क्रम को ईश्वर इच्छाशक्ति पर आधारित माना । इसी आधार पर विकासवाद जैसा सिद्धान्त विखण्डित हो जाता है । जब प्रकृति के नन्हें-नन्हें जीव जीवन, उत्पादन, उत्पत्ति और विकास की क्रिया में समर्थ होते हैं तो कोई एक ऐसा विज्ञान भी हो सकता है जब कोई एक स्वतंत्र इच्छाशक्ति अपने आप पंच महाभूतों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) के संयोग से अपने आपको प्रकट कर दे । यों देखने में यह क्रिया बीज और वंशानुगत होती प्रतीत होती है ।

हाइड्रा देखने में ऐसा लगता है जैसे एक स्थान पर फूल-पत्ते इकट्ठे हों । उसके अंग की कोई एक पंखुड़ी एक ओर बढ़ना प्रारम्भ होती है और स्वाभाविक वृद्धि से भी ज्यादा बढ़ जाती है । यह अधिक बड़ा अंग अपने आपको मूल भाग से अलग कर लेता है और वह एक स्वतंत्र अस्तित्व बन जाता है । पैरामीशियम, यूग्लीना आदि एककोशीय जीवों में प्रजनन का यही नियम है, जो यह बताता है कि आत्मसत्ता को एक सर्वांगपूर्ण शरीर यंत्र के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निर्माण के लिये करोड़ों वर्षों के विकासक्रम की आवश्यकता या प्रतिबन्ध नहीं है । यदि उसे अपना लघुत्तम या परमाणविक स्वरूप का पूर्ण अन्त:ज्ञान हो जाय तो वह कहीं भी कैसा भी रूप धारण करने में समर्थ हो सकता है सम्भवत: अणिमा, लघिमा, गरिमा, महिमा यह सिद्धियाँ इसी तथ्य पर आधारित हैं । एक दिन विज्ञान भी इस दिशा में सफल हो सकता है, वह स्थिति आ सकती है, जब सम्मोहन शक्ति के द्वारा रासायनिक ढंग से उत्पादित प्रोटोप्लाज्म में जीवन उत्पन्न किया जा सके । कैसा भी हो इस महान उपलब्धि के लिये विज्ञान को पदार्थ तक ही सीमित न रहकर 'भाव' को भी संयुक्त करना ही पड़ेगा । जैसा कि भारतीय तत्ववेत्ताओं ने अब से हजारों वर्ष पूर्व कर लिया था ।

स्टेन्टर अपने प्रोटोप्लाज्मा का १/६० अंश बाहर कर देता है और उसी से एक नया स्टेन्टर तैयार कर देता है । प्लेनेरिया और हाइड्रा को नयी सन्तान पैदा करने के लिए अपने शरीर का कुल १/३००वाँ हिस्सा पर्याप्त है ।

प्राणों को जिस प्रतिभा का लाभ मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी होने के रूप मिला, सृष्टि के अन्य प्राणी भी उस प्राण की महत्ता से सृष्टि के नन्हें-नन्हें जीव भी अनभिज्ञ नहीं । बेशक वह प्राणों के स्वरूप की व्याख्या नहीं कर सकते, प्राणों का असीमित विकास और उसके फलस्वरूप प्राप्त होने वाली तेजस्विता, दीर्घजीवन, प्रज्ञा, बुद्धि का लाभ नहीं ले सकते, पर उनमें भी इच्छाशक्ति इतनी दृढ़ होती है कि वे अपने मृत शरीर का बार-बार इस्तेमाल कर सकते हैं । परकाया प्रवेश की क्षमता भारतीय योगी ही अर्जित कर सके हैं पर प्रकृति में ऐसे अनेकों योगी हैं, जो अपने ही मरे, कुचले, टूटे-फूटे शरीर का अपने प्राणों के बल पर पुन: उपयोग कर लेते हैं ।

जीवित स्पंज को लेकर टुकड़े-टुकड़े कर डालिये, उससें भी मन न भरे तो उन्हें पीसकर कपड़े से छान लीजिए । पिसे और कूटे कपड़छन किए शारीरिक द्रव्य को पानी में डाल दीजिए । शरीर के सभी कोश धीरे-धीरे फिर एक स्थान पर मिल जाएँगे और कुछ दिन बाद पूरा नया स्पंज फिर से अपनी जीवन यात्रा प्रारम्भ कर देगा । चुनौती है स्पंज की कि जब तक प्राण हैं, तब तक मुझे शरीर के अवसान की कोई चिन्ता नहीं । मरना-जीना तो मात्र प्राणों का ही खेल है ।

हाइड्रा, स्टेन्टर तथा प्लेनेरिया आदि जीवों में यह गुण होता है कि वे अपने शरीर के एक छोटे-से अंश को (३००वें भाग तक छोटे टुकड़े को) ही तोड़कर नया शरीर बना देते हैं । उन्हें गर्भ धारण, भ्रूण-विकास और प्रजनन जैसी परेशानियाँ उठानी नहीं पड़ती हैं । लगता है प्राण-तत्व की जानकारी होने के कारण ही प्राचीन भारत के तत्वदर्शी एक भ्रूण से १०० कौरव, घड़े से कुंभज और जँघा से सरस्वती पैदा कर दिया करते थे । अन्य एककोशीय जीवों में पैरामीशियम तथा यूग्लीना में भी एक कोश से विभक्त होकर दूसरा स्वस्थ कोश अर्थात् नया जीव पैदा कर देने की क्षमता होती है । यह घटनाएँ इस बात की साक्षी भी हैं कि ऐसी क्षमताएँ अणु जैसी सूक्ष्म मन:स्थिति तक पहुँचने वाली क्षमता से ही प्रादुर्भूत हो सकती हैं ।

टूटे हुए शारीरिक अंगों के स्थान पर नए अंग पैदा कर लेने की क्षमता ही कुछ कम विलक्षण नहीं । ट्राइटन सलामाण्डर, गोह अपने कटे हुए शरीर की क्षतिपूर्ति तुरन्त नए अंग के विकास रूप में कर लेते हैं । अमेरिका, अफ्रीका में पाए जाने वाला शीशे का साँप जरा-सा छूने से टूट जाता है पर उसमें यह भी विशेषता होती है कि अपने टूटे हुए अंग को पुन: जोड़ लेता है । आइस्टर, शम्बूक, घोंघा, समुद्री मकड़ी, मन्थर आदि जीवों में भी यह गुण होते हैं । स्टारफिश के पेट में कोई जहरीला कीड़ा चला जाय तो वह पूरा पेट ही बाहर निकालकर फेंक देती है और नया पाचन संस्थान तैयार कर लेती है । सलामेंसिनानेस, साहलिस तथा काटोगास्टर जीव तो स्पंज की तरह होते हैं, उन्हें कितना ही मार डालिए, मरना उनके लिये जबर्दस्ती प्राण निकाल देने के समान होता है । जहाँ दबाव समाप्त हुआ यह अपने प्राणों को फिर मरे मराए शरीर में प्रवेश करके जीवन यात्रा प्रारम्भ कर देते हैं ।

जीवन यात्रा में उत्पन्न होने वाली विकृतियों के लिए भी प्रकृति ने मनुष्य देह में समुचित प्रबन्ध कर रखा है । मनुष्य जो कुछ खाता-पीता है, उससे जीवनी-शक्ति को उसकी सहायता के लिए कार्बोहाइड्रेट, (कार्बन, हाइड्रोजन और ऑक्सीजन) चर्बी, प्रोटीन, विटामिन्स खनिज द्रव्य मिलते हैं । भोजन में यह आवश्यक तत्व ग्रहण करने के लिए गले की नली से लेकर आमाशय की छोटी आँतों तक की पूरी मशीन दिन-रात काम करती रहती है । उससे भी अधिक ध्यान और मशीनरी का निर्माण शरीर में इसके लिए किया गया है कि शरीर द्वारा उत्पन्न होने वाली गन्दगी शरीर से अलग होती रहे । भोजन और शक्ति के अभाव में मनुष्य कुछ दिन जी भी सकता है पर स्वच्छता और सफाई के अभाव में मनुष्य शरीर अधिक दिन तक टिक नहीं सकता ।

शरीर के वृक्क प्रतिदिन डेढ़ सेर मूत्र निकालते हैं । इसके द्वारा यूरिया, यूरिक एसिड, क्रीटीनाइन, एमोनिया, सोडियमक्लोराइड, फॉस्फोरिक अम्ल, मैग्नीशियम, कैल्सियम और पोटेशियम की बहुत-सी गन्दगी शरीर से बाहर निकल जाती है । बड़ी आँत प्रतिदिन ढेरों मल निकालती रहती है । शरीर की त्वचा में लाखों की संख्या में ग्रन्थियाँ होती हैं, जो रक्त से पसीने को छानकर बाहर निकालती रहती हैं । हथेली के एक वर्ग इन्च में ही ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कम से कम ३६०० ग्रन्थियाँ होती हैं । इससे पता चलता है कि प्रकृति ने शरीर में सफाई की व्यवस्था को सबसे अधिक ध्यान देकर सावधानी से जमाया है । यदि शुद्धिकरण की यह क्रिया एक दिन को भी बन्द हो जाए तो शरीर सड़ने लगे और मस्तिष्क पागल हो जाए ।

शरीर ही नहीं प्रकृति का हर कण और प्रत्येक क्षण दोष-दूषणों के प्रति सजग और सावधान रहता है । जहाँ कहीं भी कहीं गन्दगी दिखाई दी प्रकृति उस पर टूट पड़ती है और देखते-देखते गन्दगी को साफ करके उस स्थान को शुद्ध और उपयोगी बना देती है ।

जिसे हम नगण्य समझते हैं—उस मिट्टी में भी फफूँद (फंगाई) एक्टीनो माइसिटीज तथा दूसरे कई महत्त्वपूर्ण जीवाणु (बैक्टीरिया) पाए जाते हैं । यह नंगी आँखों से दिखाई नहीं देते, उन्हें शक्तिशाली खुर्दबीनों माइक्रोस्कोप से ही देखा जा सकता है पर उनकी इस लघुता में वह महानता छिपी है जो सारे मनुष्य समाज के हितों की रक्षा करती है । यदि यह जीवाणु न होते तो यह सारी पृथ्वी ७ दिन के अन्दर पूरी तरह से मल से आच्छादित हो जाती और तब मनुष्य का जीवित रहना भी असम्भव हो जाता ।

जैसे ही कोई सड़ी-गली वस्तु, मल या कोई गन्दगी जमीन में गिरी यह जीवाणु दौड़ पड़ते हैं और इन गन्दगी के अणुओं की तोड़-फोड़ प्रारम्भ कर देते हैं । दूसरे दिन हम उधर जाते हैं तो मल के ढेर के स्थान पर मिट्टी का-सा ढेर दिखाई देता है । लोग उपेक्षा से देखकर निकल जाते हैं पर वहाँ प्रकृति का एक बड़ा उपयोगी सिद्धान्त काम करता रहता है । यह जीवाणु इस गन्दगी के एक-एक अणु को तब तक तोड़ते-फोड़ते रहते हैं, जब तक वह सारी की सारी मिट्टी में बदल नहीं जाती ।

प्रतिरोध की स्वयं समर्थ शक्ति

सरल और सहज जीने की चाह तो हर किसी को रहती है पर उसकी पूर्ति होना शक्य नहीं । प्रकृति चाहती है कि हर प्राणी को—संघर्ष की पाठशाला में पढ़कर शौर्य, साहस की शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिले । सरल जीवन में सुविधा तो है पर हानि यह है कि प्राणी की प्रखरता नष्ट हो जाती है । उसकी प्रतिभा अविकसित रह जाती है । प्रतिकूलता से जूझे बिना जीवन के शस्त्र पर धार नहीं धरी जा सकती, चमक और पैनापन लाने के लिए उसे पत्थर पर घिसा ही जाता है । मनुष्य समर्थ, सबल और प्रखर बना रहे इसके लिए संघर्षरत रखने की सारी व्यवस्था प्रकृति ने कर रखी है । इसी व्यवस्था क्रम में एक भयंकर लगने वाली रोग कीटाणु संरचना भी है जो जीवन को मृत्यु में बदलने के लिए निरन्तर चुनौती देती रहती है ।

आँखों से न दीख पड़ने वाले अत्यन्त सूक्ष्म रोग कीटाणु हवा में घूमते रहते हैं—प्रयोग में आने वाली वस्तुओं के सहारे रेंगते रहते हैं और अवसर पाते ही हमारे शरीर में प्रवेश कर जाते हैं । उनकी वंशवृद्धि आश्चर्यजनक गति से होती है । उनकी विषाक्तता एवम् मारक-शक्ति भी अद्भुत होती है । शरीर में साँस, जल या दूसरे किन्हीं आधारों पर वे प्रवेश कर जाते हैं और वहाँ पहुँचकर अपनी गतिविधियों से भयानक रोगों का सृजन करते हैं । उनके प्रतिरोध की प्रकृति ने व्यवस्था की है । रक्त में पाये जाने वाले श्वेत कीटाणु इन शत्रुओं से जूझते हैं । शरीर की गर्मी तथा विभिन्न स्थानों से निकलने वाले स्राव उन्हें मारते हैं । इस युद्ध में बहुधा मनुष्य की जीवनी-शक्ति ही विजयी होती है तभी तो स्वास्थ्य रक्षा सम्भव होती है, अन्यथा इन विषाणुओं के द्वारा होते रहने वाले अनवरत् आक्रमण से शरीर का एक दिन भी जीवित रह सकना सम्भव न हो सके ।

इन रोग कीटाणुओं की असंख्य जातियाँ हैं और उनके क्रिया-कलाप भी अद्भुत हैं । वर्तमान रोग परीक्षा पद्धति में यह पता लगाने का सर्वप्रथम प्रयत्न किया है कि रोगी के शरीर में किन रोग के कीटाणुओं का आधिपत्य है । मल-मूत्र, कफ, रक्त आदि की परख करके इसकी जानकारी प्राप्त की जाती है और तदनुरूप उन्हें मारने की विशेषताओं वाली औषधियों का प्रयोग किया जाता है । विषाणुओं की अनेक जातियों के अनुरूप ही उनकी मारक औषधियाँ ढूँढ़ी गई हैं । इन्हें एन्टीबायोटिक्स कहते हैं । इन दिनों इन औषधियों का निर्माण और उपयोग खूब हो रहा है । रोग निवारण का इन दिनों यह प्रमुख आधार है ।

पैनसिलीन, स्ट्रेप्टोमायसिन वर्ग की रोग कीटनाशक एन्टीबायोटिक्स औषधियों में अब एक और चमत्कारी चरण जुड़ गया है, वह है लैडरली लैबोरेटरी द्वारा प्रस्तुत किया गया रसायन डी० एम० सी० टी० । इसका पूरा नाम है—डिमिथाइल क्लोर टैटरासाइक्लिन । इन दवाओं की चमत्कारी औषधियों को 'वन्डर ड्रग्स' कहा जाता है । इनका मूल उद्देश्य है शरीर में उत्पन्न हुए या प्रविष्ट हुए रोग कीटाणुओं को निरस्त करना । विकृत बैक्टीरिया—वायरसों के उपद्रव ही विभिन्न रोगों के प्रधान कारण माने जाते हैं । यह मारक औषधियाँ इन कीटकों पर आक्रमण करती हैं—इन्हें मूर्छित करतीं और मारती हैं फलतः रोगों के जो कष्टकारक उपद्रव लक्षण थे वे शमन होते दिखाई देते हैं ।

इन मारक रसायनों के प्रयोग का उत्साह इसलिए ठंडा हो जाता है कि वे विषाणुओं के मारने के साथ रक्षाणुओं को भी नहीं बख्शतीं । उनकी दुधारी तलवार बिना अपने पराए का, मित्र-शत्रु का भेदभाव किये जो भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनकी पकड़ परिधि में आता है, उन सभी का संहार करती हैं । पैनसिलीन के चमत्कारी लाभों की आरम्भ में बहुत चर्चा थी, पर जब देखा गया कि उसके प्रयोग से दानेदार खुजली जैसे कितने ही नए रोग उत्पन्न होते हैं और किसी-किसी को तो उसकी प्रतिक्रिया प्राणघातक संकट ही उत्पन्न कर देती है, तब वह उत्साह ठंडा पड़ा । अब कुशल डाक्टर पैनसिलीन का प्रयोग आँखें मूँदकर नहीं करते । उसके लिए उन्हें फूँक-फूँककर कदम रखना होता है । कुनैन से मलेरिया के जीवाणु तो मरते थे, पर कानों का बहरापन—नकसीर फूटना जैसे नए रोग गले बँध जाते हैं । इस असमंजस ने उसके प्रयोग का आरम्भिक उत्साह अब शिथिल कर दिया है । कुनैन का अन्धाधुन्ध प्रयोग अब नहीं किया जाता ।

लन्दन के बारथोलोम्यूज अस्पताल में विभिन्न स्तर की एण्टीबायोटिक औषधियों का प्रयोग परीक्षण २७५ प्रकार के बैक्टीरियाओं से ग्रसित मरीजों पर उलट-पुलट कर किया गया । इन परीक्षणों में नवनिर्मित डी० एम० सी० टी० इस दृष्टि से अधिक प्रशंसनीय मानी गई कि उसने विषाणुओं का जितना संहार किया उतनी चोट रक्षाणुओं को नहीं पहुँचाई, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि वह पूर्णतया हानिरहित है । इसमें केवल रोग ही नष्ट होते हैं जीवनी-शक्ति को क्षति नहीं पहुँचती, ऐसा दावा करना किसी के लिए भी सम्भव नहीं हो सका है ।

हल्की खाँसी, तीसरे पहर बुखार की हरारत, भूख की कमी, वजन का घटना, रात्रि के अन्तिम पहर में पसीना आना जैसे सामान्य लक्षणों से क्षय रोग की सम्भावना का पता लगाया जा सकता है । इन चिह्नों के आधार पर यह आशंका की जा सकती है कि हो न हो रोगी पर क्षय का आक्रमण हो चला है ।

वस्तुस्थिति का पता तो छाती का स्क्रीनिंग अथवा एक्सरे एवम् रक्त, थूक आदि का परीक्षण करने पर ही चलता है । इसके लिए माँस मिनिएचर रेडियोग्राफी (एम० एम० आर०) की सरल परीक्षा पद्धति भी सामने आई है ।

आमतौर से क्षय उपचार में लगातार दो-तीन महीने 'स्ट्रेप्टोमाइसिन' के इन्जेक्शन लगाए जाते हैं एवं आइसोनेक्स—पी० ए० एस० जैसी दवाओं का स्थिति के अनुरूप सेवन कराया जाता है ।

बचाव उपचार में बी० सी० जी० (बेसीलस काल्मेटेग्बेरिन) के टीके लगाए जाते हैं । यह नामकरण उनके आविष्कर्त्ताओं के नाम पर ही किया गया है । ४० सुइयों की खरोंच वाला यह टीका आरम्भ में बहुत उत्साहवर्धक समझा गया था, पर अब उसकी प्रतिक्रिया संदिग्ध आशंका के रूप में सामने आ रही है । अब क्षय से सुरक्षा प्राप्त करने का यह टीका अमोघ उपचार नहीं रहा वरन् उसके दुष्परिणाम पीछे किसी अन्य व्यथा को साथ लाएँगे ऐसा माना जाने लगा है ।

आवश्यक नहीं कि आक्रमण बाहर से ही हो, अपनी आन्तरिक दुर्बलता भी गृह-युद्ध खड़ा कर देती है । 'घर का भेदी लंका ढावे' वाली कहावत भी बहुत बार सामने आती है । अवांछनीय व्यवहार से रुष्ट होकर अपने उपयोगी तत्व विद्रोही बनकर आक्रमणकारी शत्रु का रूप धारण कर लेते हैं और उस अन्तःविस्फोट का स्वरूप भी विप्लवी गृह-युद्ध जैसा बन जाता है । इस प्रकार उत्पन्न हुए रोगों और विषाणुओं की संख्या भी कम नहीं होती ।

जब कारणवश शरीर के कुछेक जीवकोष विद्रोही हो जाते हैं तो सामान्य रीति-नीति की मान-मर्यादा तोडकर उद्धत उच्छृंखल गतिविधि अपनाकर मनमर्जी की चाल चलते हैं । यह उद्धत विद्रोही ही कैन्सर का मूल कारण है ।

आमतौर से जीवकोष अपनी भूख तथा आवश्यकता तरल रक्त से प्राप्त करते रहते हैं किन्तु जब उनमें से कुछ असन्तुष्ट अपने लिए मनमर्जी का वैभव चाहते हैं तो समीपवर्ती जीवकोषों पर टूट पड़ते और उन्हें लूट-खसोटकर अपना अधिकार क्षेत्र बढ़ाते हैं, इतना ही नहीं वे अपने लिए निर्धारित क्षेत्र और कार्य की मर्यादाओं को तोड़कर रक्त प्रवाह में तैरते हुए किसी भी अंग में जा घुसते हैं और वहाँ भी कत्लेआम का दृश्य उपस्थित करते हैं । जहाँ भी उन्हें पैर टिकाने को जगह मिली वहीं के अधिकारी बनकर बैठ जाते हैं । यही है कैन्सर की मूल प्रकृति ।

कैन्सर को उत्पन्न करने वाले उपकरण 'कारसिनोज' कहे जाते हैं । कोलतार, रेडियम, मादक द्रव्य इसी वर्ग में आते हैं । इनका गहरा प्रभाव शरीर पर पड़ेगा तो कैन्सर की आशंका बढ़ेगी । अधिक आग तापने अथवा किसी अंग विशेष का अनावश्यक अतिघर्षण होते रहने से भी यह विपत्ति सामने आ खड़ी होती है । रतिक्रिया की सीमा एवम् कोमलता का व्यतिक्रम होने से स्त्रियों की जननेन्द्रियाँ कैन्सरग्रस्त हो जाती हैं ।

एक ओर विषाणुओं की विभीषिका सामने खड़ी है और रुग्णता से लेकर मरण तक के साज सँजो रही है, वहीं दूसरी ओर जीवन रक्षा की सेना भी कमर कसकर समाने खड़ी है । हमारे शरीर में ही एक विशालकाय महाभारत रचा हुआ है । कौरवों की कितनी ही अक्षौहिणी सेना जहाँ अपने दर्प से दहाड़ रही है, वहाँ पाण्डवों की छोटी टुकड़ी भी आत्मरक्षा के लिए प्राण हथेली पर रखकर युद्ध क्षेत्र में डटी हुई है ।

रक्ताणु हमारी जीवन रक्षा के अदम्य प्रहरी हैं । वे विषाणुओं को परास्त करके जीवन सम्पदा को बचाने के लिए कट-कट कर लड़ते हैं । अपने प्राण देकर भी शत्रु का अपनी भूमि पर अधिकार न होने देने का प्रयत्न करते हैं । हमारे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तःक्षेत्र में, धर्मक्षेत्र में, कर्मक्षेत्र में चलती रहने वाली यह महाभारत जैसी पुण्य प्रक्रिया देखने-समझने ही योग्य है ।

रक्त को नंगी आँखों से देखें तो वह लाल रंग का गाढ़ा प्रवाही मात्र दिखाई देता है, पर अणुवीक्षण यंत्र से देखने पर उसमें असंख्य रक्ताणु दिखाई देते हैं । इनकी आकृति-प्रकृति की अब अनेकों जातियाँ जानी-परखी जा चुकी हैं । यह रक्ताणु भी कोशिकाओं की तरह ही जन्मते-मरते रहते हैं । प्रायः उनकी आयु तीन महीने होती है । उनकी बनावट स्पंज सरीखी समझी जा सकती है, जिसके रन्ध्रों में 'हीमोग्लोबिन' नामक रसायन भरा होता है । यह रक्ताणु रक्त के साथ निरन्तर समस्त शरीर में भ्रमण करते रहते हैं और अपने तीन माह के स्वल्प जीवनकाल में प्रायः तीन सौ मील का सफर कर लेते हैं ।

हीमोग्लोबिन कभी रक्त का प्रमुख रसायन माना जाता था । अब उसे चार शृंखलाओं में जुड़ा हुआ प्रायः ६०० अमीनो अम्लों का समूह पाया गया है । नोबेल पुरस्कार विजेता लाइनस सी० पलिंग ने अपने दो साथियों के साथ इन रक्ताणुओं की शोध में अभिनव जानकारियों की कितनी ही कड़ियाँ जोड़ी हैं ।

कितने ही रोग इन रक्ताणुओं के साथ जुड़े होते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी चलते हैं । कुछ विशेष कबीलों में, कुछ विशेष प्रकार के रक्ताणु पाए जाते हैं । तदनुसार उनकी शारीरिक स्थिति में अमुक रोग का प्रतिरोध करने की—अमुक रोग से आक्रान्त होने की विशेष स्थिति देखी गई है । शारीरिक ही नहीं मानसिक क्षेत्र में भी यह रक्त विशेषता जमी रहती है । कुछ परिवारों के लोग बहुत भोले और डरपोक पाए जाते हैं, जबकि किन्हीं वर्गों में आवेश, उत्तेजना और लड़ाकू प्रवृत्ति का बाहुल्य रहता है । राजपूतों की लड़ाकू प्रवृत्ति और जुलाहों का डरपोकपन प्रसिद्ध है । सम्भवतः ऐसी विशेषताएँ रक्ताणु की परम्परागत स्थिति के कारण उत्पन्न होती हैं ।

पिछले पन्द्रह वर्षों में तीस से अधिक प्रकार के असामान्य हीमोग्लोबिन वर्गों का पता लगाया जा चुका है । कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रो० वर्नाव एम० इंग्राम ने इनके वर्गीकरण तथा क्रिया-कलापों का गहरा शोध करके यह पाया है कि शरीर एवं मन के रुग्ण एवं स्वस्थ होने में यह रक्त रसायन असाधारण भूमिका सम्पन्न करते हैं । अफ्रीका में कोई ८० हजार बच्चे इन रक्त रसायनों की विकृति के साथ जन्म लेने के कारण स्वल्प काल में ही मृत्यु के ग्रास बन जाते हैं । इसी प्रकार उस महाद्वीप के एक कबीले में ऐसे रक्ताणु पाए गए जो मलेरिया के 'प्लास्मोडियम फाल्सी पेरम' कीटाणुओं से शरीर को तनिक भी प्रभावित नहीं होने देते । अन्य कबीलों के लोग उस क्षेत्र में आकर रहे तो तुरन्त मलेरिया ग्रसित हो गए, किन्तु वहाँ के मूल निवासी मुद्दतों से इन्हीं मच्छरों के बीच रहते हुए कभी बीमार नहीं पड़े ।

स्वीडन के शरीरविज्ञानी प्रो० फोलिंग इस बात पर जोर देते हैं कि विषाणुओं को मारने के लिए एन्टीबायोटिक्स अथवा दूसरी प्रकार की जो मारक औषधियाँ दी जा रही हैं, उनका प्रचलन बन्द किया जाय और स्वस्थ रक्ताणुओं को अधिक समर्थ बनाने के प्रयोगों को प्राथमिकता दी जाय । रोगों का स्थायी निवारण और सुदृढ़ स्वास्थ्य का संरक्षण इसी नीति को अपनाने से सम्भव होगा ।

मारक औषधियाँ मित्र-शत्रु का—अपने-पराए का भेद किए बिना अपनी अन्धी तलवार दोनों पक्ष के योद्धाओं को मारने के लिए प्रयुक्त करती हैं । विषाणु मरें, सो ठीक है पर स्वस्थ कणों की सम्पदा खोकर तो हम इतने दीन-हीन बन जाते हैं कि वह दुर्बलता भी रुग्णता से कम कष्टकारक नहीं होती । उससे भी मन्द गति से दीर्घकाल तक चलती रहने वाली रुग्णता ही जम बैठती है ।

प्रकृति ने जीवन की प्रखरता को सँजोए रखने के लिए संघर्ष आवश्यक समझा और विषाणुओं, रक्ताओं में निरन्तर संघर्ष होते रहने की व्यवस्था बना दी ताकि हम युद्ध-कौशल में प्रवीण होकर सच्चे अर्थों में समर्थ और प्रगतिशील बन सकें ।

इस युद्ध से एक निष्कर्ष यह निकलता है कि शत्रु को मारने से भी अधिक उपयोगिता आत्मपक्ष को सबल बनाने की है । संसार में फैली हुई अनीति के दमन के लिए आवेश में आकर उपयोगी-अनुपयोगी की परख किए बिना अन्धाधुन्ध तलवार चलाना हानिकारक है, लाभ इसमें है कि नीति पक्ष को परिपुष्ट किया जाय, जिससे बिना कठिन संघर्ष के ही शत्रु पक्ष परास्त हो सके साथ ही आत्मपुष्टि से चिरस्थायी स्वास्थ्य सन्तुलन की—शान्ति और प्रगति की अभिवृद्धि हो सके । हमारी जीवन नीति एवं सुधार-व्यवस्था का संचालन इसी आधार पर होना चाहिए ।

असुरता के संहार में प्रवृत्त—अन्तःचेतना

कैंसर क्रोनिक स्टिमुलस से बढ़ता है, जिसका अधिकांश कारण धूम्रपान (स्मोकिंग) है । क्रोनिक सविसाइटिस (स्त्री-रोग), पेट का फोड़ा (पेप्टिक अल्सर) आदि से भी ५ प्रतिशत कैंसर हो सकता है । पर डॉक्टरों की राय में इन सबका कारण अपनी ही चिन्ताएँ, उतावलापन और मिर्च-मसालों वाला गरिष्ठ आहार होता है । एक बार क्रोनिक स्टिमुलस पैदा हो जाने के बाद वह कोश (सेल्स) को विकृत करना प्रारम्भ करता है । १ से २, २ से ४ इस क्षिप्र गति से बढ़ता हुआ यह रोग सारे शरीर पर उसी तरह छा जाता है जिस तरह दहेज, रिश्वत, मिलावट, अन्धविश्वास, अशिक्षा और बाल-विवाह आदि कुरीतियाँ भारतीय जीवन को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आच्छादित किये हैं । यदि प्रारम्भ में ही इसे नष्ट न किया जाय तो कैंसर का ठीक होना कठिन हो जाता है ।

मनुष्य जीवन की एक विस्तृत प्रक्रिया का नाम समाज है । हम जिस गाँव में, मुहल्ले या नगर में रहते हैं—समाज वहीं तक सीमित नहीं । हमारा प्रान्त, हमारा देश, पड़ोसी देश और सारा विश्व एक समाज है । समाज की सीमाएँ विशाल हैं । अपने आप तक सीमित सुधार की प्रक्रियाएँ सरल हो सकती हैं, किन्तु हम इस व्यापक समाज से इतने प्रभावित और बँधे हुए हैं कि उसकी हर छोटी-बड़ी बुराई से हमारा टकराव हर घड़ी होता रहता है । हमारी सज्जनता, हमारी शुद्धता, हमारा सौष्ठव तभी स्थिर रह सकता है जब सारा विश्व समाज ही शुद्ध, सज्जन और सौम्य हो ! इस जटिल समस्या को हल करना तभी सम्भव है जब, विश्व-संस्कृति की सभी भलाई वाली शक्तियाँ निरन्तर क्रियाशील रहें और बुराइयों पर उसी प्रकार दबाव डालती रहें, जिस तरह शरीर में उत्पन्न होने वाले रोग, शोक और बीमारियों का संहार औषधियों से करते रहते हैं ।

जब शरीर में बाहरी कीटाणुओं से या भीतरी किसी कारण से कोई रोग हो जाता है तो एन्टीबायोटिक्स दवाइयों द्वारा उस पर सीधा घातक प्रभाव डाला जाता है । यह औषधियाँ शरीर के सारे रक्त का दौरा करती हैं और जहाँ-कहीं भी रोग-कीटाणुओं को छिपा हुआ पाती हैं मार गिराती हैं ।

कई बार इस संघर्ष में अपनी भी हानि होती है । औषधिशास्त्र कहता है—यदि १०० शत्रु नष्ट करने में एक अपना भी मारा जाए तो कुछ हर्ज नहीं, पर सीधे मुकाबले का रास्ता छोड़ना नहीं चाहिए । पेट में कई बार राउन्ड वाल्वस पैदा हो जाते हैं । यह परजीवी (पैरासाइट) कीड़े (बैक्टीरिया) आँतों को इस तरह खाने लगते हैं जैसे फैशनपरस्ती, नशेबाजी, वासनाएँ, स्वास्थ्य को खाने लगती हैं । इस स्थिति में डॉक्टर कोई दस्तावर औषधि देते हैं और रक्त में होने वाले विषैले प्रभाव से शरीर को बचाते हैं । इन औषधियों में तीव्रता होती है, वह पेट की सारी गन्दगी झाड़ फेंकती है । यह क्रिया कुछ तीव्र होती है, इससे पाचन वाले अम्ल (एसिड्स) भी पटक जाते हैं पर उनका चला जाना भी रोग के आक्रमण से हो जाने वाली हानि की तुलना में कहीं अधिक उपयोगी है । इसीलिए सीधे संघर्ष में कुछ लोगों को शारीरिक या मानसिक कष्ट भी हो, तो भी प्रसन्नता अनुभव करनी चाहिये ।

कई बार डॉक्टर उचित इलाज का पता नहीं लगा पाते, तब वे प्रभावित अंग से रोग के कीटाणु निकालकर उन्हें कल्चर प्लेट पर रखते हैं और उन पर कई एन्टीबायोटिक्स औषधियों की एक-एक बूँद रखते जाते हैं, जो औषधि अधिक कीटाणुनाशक हुई बाद में उसी का प्रयोग किया जाता है ।

बुराइयों से सतर्कता तो प्रत्येक स्थिति में रखनी ही चाहिये अन्यथा पता न चलेगा और वह भीतर ही भीतर हमें नष्ट कर दे सकती है । शराब पीने वालों में चर्बी की एक सतह जिगर के कोषों के ऊपर जम जाती है, उससे जिगर के कोषों को खाद्य (ऑक्सीजन) मिलना बन्द हो जाता है । शराब पीने वाले को पता नहीं चलता और भीतर-ही-भीतर सिरोसिस आफ लिवर की बीमारी हो जाती है । मनुष्य को अपने स्वभाव, समाज की प्रत्येक गतिविधि पर सतर्क दृष्टि रखनी चाहिये । यदि ऐसा न हुआ और बीमारी पककर फूटी तो उसका सँभालना कठिन हो जाता है ।

डॉक्टर और स्वास्थ्य विशेषज्ञ जानते हैं कि जीवाणु दो प्रकार के होते हैं—(१) एयरोबिक अर्थात् जिन्हें जिन्दा रहने के लिये ऑक्सीजन आवश्यक है । (२) एन-एयरोबिक अर्थात् जिन्हें वायु आवश्यक नहीं । कोई अंग सड़ जावे (ग्रैगीन) क्लास्टेडियम बेसलाई, क्लास्टेडियम एडेमेन्टीस एवम् क्लास्टेडिक सैप्टिक जो एन-एयरोबिक हैं, उनको मारने के लिये एयरोबिक वातावरण पैदा करना आवश्यक है ।

बुराई न बढ़े इसके लिए यह भी आवश्यक है कि उन्हें पोषण न मिले । गुण्डा तत्वों से डरकर लोग न चाहते हुए भी उन्हीं का समर्थन और हाँ में हाँ मिलाने लगते हैं । इससे उनका कुनवा और भी फलने-फूलने लगता है । यदि लोग उनका समर्थन और पोषण बन्द कर दें, तो वह अपने आप मरकर नष्ट हो जायें ।

टी० बी० के कीटाणु इसी सिद्धान्त पर मारे जाते हैं । यह एसिड फास्ट बेसिलाई (जो एसिड से भी नहीं मरते) हैं । जब इस तरह के कीटाणु शरीर में प्रविष्ट हो जाते हैं, तब डॉक्टर स्ट्रेप्टोमाइसीन देते हैं । यह टी० बी० के कीटाणु की ऊपरी झिल्ली (लायपॉइड कवरिंग) पर चारों ओर से घेरा डाल लेता है । इससे उस कीटाणु की मुसीबत आ जाती है । दुष्ट अपना खाद्य भी नहीं ले सकता और भीतर घुटकर मर जाता है, जो बुराइयाँ सीधी टक्कर से नहीं जीती जा सकतीं, उनको पोषण न मिले तो वे टी० बी० के कीटाणु की तरह अपने आप ही नष्ट हो जाती हैं ।

जहाँ इस स्थिति में भी काम न बने वहाँ भलाई की शक्ति का उद्बोधन करना और उसे मुकाबले के लिये ललकारना आवश्यक हो जाता है । नान स्पेसिफिक थैरेपी के अन्तर्गत कई बीमारियाँ ऐसी होती हैं, जो लगातार औषधि-सेवन से भी अच्छी नहीं होतीं। उदाहरण के लिये चमड़ी की बीमारी—एक्जिमा । उस स्थिति में डॉक्टर मुकाबले की शक्ति तैयार करते हैं, रोगी के शरीर का ५ सी. सी. शुद्ध रक्त लेकर शरीर में प्रवेश (इन्जेक्ट) कर दिया जाता है । यह प्रोटीन होता है जो भीतर शरीर में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पहले से ही होता है । जब तक अच्छाई बुराई में भेद न किया गया था, बुराइयाँ भी दहेज, पर्दा-प्रथा, नशा आदि की तरह साथ-साथ पल रही थीं । पर जब कुछ यज्ञ, हवन, जप-तप, बिना दहेज विवाह, नशा-उन्मूलन आदि की स्थिति बनी तो दूसरे लोगों ने भी अनुभव किया कि बुराई वह है जो अपनी या समाज के किसी भी वर्ग का अहित करती है, भले ही वह कोई परम्परा बन गई हो । जब इस तरह का विवेक जाग पड़ता है तो अपनी बुराइयों का उन्मूलन ठीक ऐसे ही सरल हो जाता है जैसे एक्जिमा में रोगी का ही रक्त इन्जेक्ट कर देना । भीतर वाले प्रोटीन उन्हें बाहरी समझ कर हमले के लिए तैयार होते हैं पर जब वे अनुभव करते हैं कि अरे ! यह तो अपने ही बन्धु और हितैषी हैं तब उनसे मिल जाते हैं और एक नई शक्ति अनुभव करते हैं, अब सब मिलकर एक्जिमा के विरोध में लड़ पड़ते हैं और उस न मिटती जान पड़ने वाली बीमारी को भी नष्ट कर डालते हैं । अच्छाई को उकसाकर बुराई को नष्ट करने का प्रयोग बहुत ही उपयोगी और सफल सिद्ध होता रहा है ।

यह वैज्ञानिक प्रयोग है जिनसे शरीर के समान ही अपने को शुद्ध, पवित्र और दिव्य बनाया जा सकता है । उसी के आधार पर सुख, समृद्धि और विश्वशान्ति का वातावरण पैदा किया जा सकता है ।

शक्ति का स्रोत

पदार्थों को बड़ी मात्रा में एकत्रित करके अधिक वैभव, बल या सुख पाया जा सकता है, यह मान्यता अब बहुत पुरानी हो गई है । मात्रा की अपेक्षा अब गुण को महत्व मिलने लगा है जो उचित भी है । 'खोदा पहाड़ निकली चुहिया' वाली कहावत वहाँ लागू होती है जहाँ यह सोचा जाता है कि जो जितना बड़ा है—साधन-सम्पन्न है, वह उतना ही सशक्त है । शक्ति का स्रोत हर छोटे पदार्थ, व्यक्ति एवं साधन में मौजूद है । यदि हम बारीकी से ढूँढ़ना, परखना और सही रीति से प्रयुक्त करने की विद्या जान जायें तो थोड़ी-सी सामग्री से ही प्रचुर शक्तिसम्पन्न बन सकते हैं । हमारे छोटे-छोटे व्यक्तित्व ही ऐसे महान कार्य सम्पन्न कर सकते हैं जिन्हें देखकर दाँतों तले अँगुली दबानी पड़े ।

अणु शक्ति इस तथ्य को प्रत्यक्ष रूप से प्रमाणित करती है । पदार्थ का छोटे से छोटा घटक 'अणु' कितना सशक्त है और वह कितने बड़े कार्य कर सकता है इसे देखने, समझने पर इस सच्चाई को हृदयंगम करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिये कि छोटा समझा जाने वाला व्यक्ति भी यदि अपने को समझ सके तो जो कुछ वह है उतने का ही सही उपयोग कर सके तो वह कर सकता है, जिसके लिए सामान्य बुद्धि बहुत बड़े साधनों की आवश्यकता अनुभव करती है ।

अब परमाणु पदार्थ की सबसे छोटी इकाई नहीं रहा । उसके भीतर १०० से भी अधिक ऐलिमेन्टरी पार्टिकल—प्राथमिक कण-खोज निकाले गये हैं । इनको भी अन्तिम इकाई नहीं कहा जा सकता । इनके भीतर जो सूक्ष्मता के अनुपात से अधिक रहस्यमय स्पन्दन, स्फुरण भरे पड़े हैं उनका रहस्योद्घाटन होना अभी शेष है । अब विज्ञान अधिक गहराई में प्रवेश कर रहा है । पिछले दशकों के प्रतिपादन अब झुठलाये जा रहे हैं । यथा—'ईथर' की कल्पना का अनस्तित्व पिछले दिनों मोर्स तथा माइकेलसन ने सिद्ध कर दिया है । शब्द तरंगों के वहन करने वाले इस ईथर की खोज पर फिट्स गेराल्ड और लारेन्ट्ज को बहुत ख्याति मिली थी और उनकी शोध को बड़ी उपयोगी मानकर सर्वत्र मान्यता मिली थी । पर अब उसके नकारात्मक प्रबल प्रतिपादन ने विज्ञान की अन्य मान्यताओं के भी खोखली होने की आशंका उत्पन्न कर दी है । आइन्स्टाइन का सापेक्षवाद अब उतना उत्साहवर्धक नहीं रहा । उसमें बहुत-सी शंकाओं और त्रुटियों की सम्भावना समझी जा रही है । गैलीलियो, न्यूटन आदि की मान्यताएँ अब पुरातनपंथी वर्ग की कल्पनाएँ ठहराई जा रही हैं ।

महर्षि कणाद ने अपने वैशेषिक दर्शन में अपने ढंग से यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि यह संसार छोटे-छोटे कणों से मिलकर बना है । ईसा से ४०० वर्ष पूर्व यूनानी दार्शनिक देमोक्रितु भी अणुवाद का प्रतिपादन करते थे । इससे पूर्व यह जगत् पंचतत्वों का बना माना जाता था । अब पंचतत्व का बहुत मोटा वर्गीकरण है । पानी अपने आप में मूल सत्ता नहीं रहा; उसे कुछ गैसों का सम्मिश्रण मात्र स्वीकार किया गया है । पुरानी मान्यताएँ अपने समय में बहुत सम्मानित थीं, पर ये अब त्रुटिपूर्ण ठहरा दी गई हैं ।

न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त एक सीमा तक ही सही है । यदि कोई राकेट प्रकाश की गति से एक सैकिण्ड में ३००००० किलोमीटर उड़ने लगे तो वे गुरुत्वाकर्षण नियम गलत हो जायेंगे ।

रेडियम धातु द्वारा उत्पन्न होने वाले विकिरण की खोज होने तक यही मान्यता थी कि पदार्थ को ऊर्जा में नहीं बदला जा सकता है । दोनों का अस्तित्व स्वतंत्र है, पर अब अणु विस्फोट के पश्चात् यह स्वीकार कर लिया गया है कि पदार्थ और ऊर्जा वस्तुतः एक ही सत्ता के दो रूप हैं और उन्हें आपस में बदला जा सकता है । क्वाण्टम और मैक्सवेल के सिद्धान्तों को आइन्स्टाइन की नई खोजों ने बहुत पीछे छोड़ दिया है । चुम्बक सम्बन्धी पुरातन मान्यताओं में रदरफोर्ड ने नये तथ्य जोड़े । उन्होंने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिद्ध किया कि रेडियमधर्मी विकिरण का एक भाग जब एक दिशा में मुड़ता है तो उसे 'अल्फा', विपरीत दिशा में मुड़ता है, तो 'बीटा' और बिल्कुल न मुड़ने वाला प्रवाह 'गामा' किरणों के रूप में निसृजित होता है । यह तीनों प्रवाह अपने-अपने ढंग के अनोखे हैं । अल्फा विकिरण को कागज में एक पतली झिल्ली से रोका जा सकता है, किन्तु बीटा विकरण एल्यूमिनियम की कुछ मिलीमीटर मोटी चादर को भी पार कर सकता है । गामा विकिरण को शीशे की मोटी परत ही शोषित कर सकती है ।

पुरानी मान्यता का परमाणु ठोस था । पीछे उसमें भी ढोल की पोल पाई गई है । आकाश में घूमने वाले पिण्डों की तरह परमाणु के गर्भ में कुछ प्राथमिक कण भ्रमण तो करते हैं फिर भी उसमें खाली जगह बहुत बच जाती है । यदि इलेक्ट्रॉन रहित परमाणुओं के नाभिकों को पूरी तरह सटाकर दबाया जा सके तो एक घन सेन्टीमीटर नाभिकीय द्रव्य का भार १० करोड़ टन के लगभग हो जायेगा ।

पुरानी मान्यताओं के अनुसार जीव तुच्छ, हेय, पापी, पतित भव-बन्धनों में जकड़ा हुआ—जन्म-मरण के कुचक्र में बँधा हुआ नगण्य था । उसे अपने उद्धार-उत्थान के लिए किसी गुरु-मन्त्र या देवता की सहायता अपेक्षित थी, पर जब आत्मसत्ता में सन्निहित गरिमा पर विचार किया जाता है तो स्पष्ट दिखाई पड़ता है कि आत्मा अणु होते हुए भी परमात्मा-विभु की समस्त विशेषताएँ अपने भीतर छिपाये हुए है । जीवात्मा के सम्बन्ध में अनेक पुरातन मान्यताओं को निरस्त करते हुए वेदान्त ने **'अयमात्मा ब्रह्म प्रज्ञानं ब्रह्म तत्वमसि सोऽहम्, शिवोहम्'** का उद्घोष किया है तो वह अहम्मन्यता नहीं जैसे कि तथ्यपूर्ण यथार्थता परमाणु के सम्बन्ध में सामने आई है । धूल-मिट्टी का एक अत्यन्त छोटा घटक होने के कारण उसका प्रत्यक्ष मूल्य नगण्य है, पर यदि उसका वैज्ञानिक ढंग से उपयोग किया जाय तो उससे समस्त संसार का अभाव-दारिद्र दूर हो सकता है । शक्ति का असाधारण स्रोत करतलगत किया जा सकता है ।

अणु शक्ति की झाँकी तो कर ली गई है, पर साथ ही यह खतरा भी सामने है कि विस्फोट से जो हानिकारक विकिरण उत्पन्न होगा उस पर नियन्त्रण कैसे किया जा सकेगा । अणुविज्ञान के उदय काल में यह कल्पना की गई थी कि चूने के बराबर प्लूटोनियम के इंजन लगाकर मोटरें चलाई जा सकेंगी, पर वह अब पूरी होती नहीं दीखती, क्योंकि अणु विस्फोट में जो नाभिकीय विकिरण फैलता है वह न केवल पदार्थों को वरन् जीव कोषों को भी नष्ट करके रख देता है । उससे बचाव करने के लिए चने के बराबर अणु इंजन के लिए किले जैसी मोटी दीवारें खड़ी करनी पड़ेंगी । ऐसी दशा में वह कल्पना की गई कि हल्की और सस्ती अणु मोटर, मात्र मस्तिष्कीय उड़ान बनकर ही रह जायगी ।

फिर भी अणु बिजलीघर बनाए जा रहे हैं और प्रयत्न किया जा रहा है कि इस शक्ति को वशवर्ती बनाकर मनुष्य की शक्ति आवश्यकता को पूरा किया जाय । इस दिशा में सफलता भी मिली है और आशा भी बँधी है । वह दिन दूर नहीं जब हानिरहित अणु बिजलीघर सामान्य बिजलीघरों की तरह ही कार्यान्वित होने लगेंगे । अब तक जितना 'यूरेनियम' प्राप्त कर लिया गया है, वह ९०० खरब टन कोयले से मिलने वाली शक्ति के बराबर है ।

अणु ऊर्जा—एटामिकइनर्जी—हमारे लिए कितने ही उपयोगी प्रयोजन सिद्ध कर सकती है । चिकित्सा जगत, कृषि, उद्योग, यातायात—युद्ध कौशल आदि कितने ही प्रयोजन उससे चमत्कारी स्तर पर पूरे किए जा सकते हैं ।

कैन्सर चिकित्सा के लिये अणु शक्ति द्वारा विनिर्मित विशिष्ट 'कोबाल्ट' बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है । जहाँ एक्सरे यंत्र काम नहीं करते वहाँ 'गेइनर काउन्टर' वस्तु-स्थिति का पता आसानी से लगा लेता है । रेडियो सक्रिय अणुओं के द्वारा एनीमिया—रक्ताल्पता का इलाज सफलतापूर्वक होने लगा है । पैलीसा इथोमिया वीरा नामक कष्टसाध्य रक्त रोग के उपचार में रेडियोसक्रिय फॉस्फोरस के इन्जेक्शन सफल रहे हैं । ऐंजिना पैक्टोरिस नामक हृदय रोग में तथा थाइराइड कैन्सर में रेडियोसक्रिय आयोडीन अच्छा काम करता है । शरीर के पोले भागों में जहरीला पानी भर जाने की स्थिति में रेडियोसक्रिय स्वर्ण, ट्यूमर और आँख के कैन्सर में रेडियो सक्रिय स्ट्रान्टियम ने चमत्कार कर दिखाया है । रेडियोसक्रिय आइसोटोपों में मनुष्यों तथा पशुओं के कितने ही रोगों की सफल चिकित्सा होने लगी है । अमेरिका में इस प्रकार के उपचारों के लिए विशेष रूप से अतिरिक्त आणविक अस्पताल ही खुले हुए हैं ।

कृषि क्षेत्र में अणु ऊर्जा की सहायता से किस प्रकार अधिक मात्रा में और अधिक पौष्टिकता युक्त अन्न, शाक, फल आदि उगाने के सम्बन्ध में सुविस्तृत खोज हो रही है और पता लगाया जा रहा है कि बलिष्ठ पौधे, सशक्त खाद, कीड़ों से फसल की रक्षा, अधिक उत्पादन के लिए अणु ऊर्जा किस प्रकार और किस हद तक सहायक हो सकती है शोध संस्थानों को आशा है कि अणु शक्ति की सहायता से पौधों की ऐसी नस्लें पैदा की जा सकेंगी जो सर्दी, गर्मी, पानी और खाद की कमी तथा कीड़ों के आक्रमण का सामना करते हुए अपनी प्रगति का स्तर बनाये रह सकें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

२.२६ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

अमेरिका एटामिकइनर्जी ऐजेन्सी के अध्यक्ष ग्लीन सीबर्स ने अणु, विज्ञानियों की एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी में कहा था—अणु शक्ति की खोज बड़े मौके पर हो गई । यदि उसमें विलम्ब हुआ होता तो ईंधन के अभाव में समस्त संसार की प्रगति का क्रम बेतरह ठप्प पड़ जाता ।

अभी अणु शक्ति उत्पादन में यूरेनियम धातु का उपयोग प्रधान रूप से होता है, पर आगे चलकर उसका स्थान थोरियम ले लेगा । यूरेनियम की कमी है, पर थोरियम आसानी से और अधिक मात्रा में उपलब्ध किया जा सकेगा ।

अब कोयले की कमी पड़ने की भावी चिन्ता से छुटकारा पाया जा सकेगा । ९ पौण्ड यूरेनियम से उतनी ऊर्जा प्राप्त की जा सकेगी, जितनी १५०० टन कोयला जलाने पर प्राप्त होती है ।

अतीत काल में जब आग मनुष्य के हाथ लगी थी तब भी उसके सामने यही समस्या थी कि उसकी हानियों से कैसे बचा जाय और लाभ कैसे उठाया जाय । देर-सबेर में उसने इसका रास्ता भी निकाल लिया । अब हम आग से बेखटके लाभ उठाते हैं और उसकी भयंकर सम्भावना से अपना बचाव कर लेते हैं । अगले दिनों अणु ऊर्जा के सम्बन्ध में प्रस्तुत कठिनाई को भी हल कर लिया जायगा और इस महादैत्य को मनुष्य की सेवा करने के लिए बाध्य किया जा सकेगा ।

मनुष्य के भीतर जड़ अणु शक्ति से भी उच्चकोटि की जीवाणु शक्ति मौजूद है । जड़ चेतन की गरिमा सर्वविदित है । अणु से जीवाणु की क्षमता अत्यधिक प्रचण्ड होना स्वाभाविक है । अणु समूह का थोड़ा-सा यूरेनियम जब इतनी शक्ति उत्पन्न कर सकता है तो असंख्य जीवाणुओं के समूह मानवी व्यक्तित्व की क्षमता कितनी महान हो सकती है, इसका अनुमान लगाया जाना कुछ कठिन नहीं होना चाहिए ।

प्रकृति प्रदत्त शक्ति स्रोतों में झंझावात, कबन्ध, आँधी, तूफान तथा ज्वार-भाटे अद्भुत हैं । इनमें सन्निहित शक्ति को यदि संग्रहीत करके किसी उपयोगी दिशा में लगाया जा सके तो उससे भी बहुत काम चलता है । औसत दर्जे की आँधी में प्रायः एक हजार अणु बमों के बराबर शक्ति होती है ।

निस्संदेह इस जड़ जगत में सर्वत्र शक्ति का सागर भरा पड़ा है । पदार्थ के कण-कण में से ऊर्जा की प्रचण्ड लहरें उठ रही हैं । इस बिखराव को समेटने और सही ढंग से प्रयुक्त करने की विद्या जब मनुष्य के हाथ लग जायगी तो फिर अशक्तिजन्य सभी कठिनाइयों का निवारण हो जायगा । मनुष्य के हाथ में सामर्थ्य का अजस्र स्रोत होगा ।

निस्संदेह यदि चेतना जगत में सव्याप्त आनन्द और उल्लास से लेकर सिद्धियों, समृद्धियों और विभूतियों के वरदानों की उपलब्धि जब मनुष्य के हाथ में आ जायेगी तब वह जीव चेतना के प्रत्येक घटक जीवाणु में समाई सत्ता को देखने, परखने, समेटने और प्रयुक्त करने की कला में निष्णात् बन जायगा । इस स्थिति में पहुँचकर ही हम नर से नारायण रूप में विकसित हो सकेंगे और अपूर्णता से पीछा छुड़ाकर पूर्णता सम्पन्न होने का जीवन-लक्ष्य प्राप्त कर सकेंगे ।

अनुदान और दिशा प्रेरणा

प्राणियों की आवश्यकताएँ तथा इच्छाएँ उनकी शारीरिक, मानसिक शक्तियों तथा भौतिक परिस्थितियों का सृजन करती हैं । इस तथ्य को थोड़ा अधिक गहराई से विचार करने पर सहज ही जाना जा सकता है और उसके अनेकों प्रमाण पाए जा सकते हैं ।

समझा जाता था कि वर्षा होने से वृक्ष वनस्पतियाँ उत्पन्न होती हैं, पर पाया यह गया है कि वृक्षों की आवश्यकता उधर उड़ने वाले बादलों को पकड़कर घसीट लाती है और उसे अपने क्षेत्र पर बरसाने के लिए बाध्य करती है । कुछ दिन पूर्व जहाँ बड़े रेगिस्तान थे, पानी नहीं बरसता था और बादल उधर से सूखे ही उड़ जाते थे, पर अब जब वहाँ वन लगा दिए गए हैं तो प्रकृति का पुराना क्रम बदल गया और अनायास ही वर्षा होने लगी है । अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों के बारे में अब यह नया सिद्धान्त स्वीकार किया गया है कि वहाँ की वन सम्पदा बादलों पर बरसने के लिए दबाव डालती है । बादलों की तुलना में चेतना का अंश वृक्षों में अधिक है इसलिए वे विस्तार में बादलों से कम होते हुए भी सामर्थ्य में अधिक हैं । अतएव दोनों की खींचतान में चेतना का प्रतिनिधि वृक्ष ही भारी पड़ता है ।

आत्मरक्षा प्राणियों की एक महती आवश्यकता है, जीवों में जागरूकता और पराक्रम वृत्ति को जीवन्त बनाये रखने के लिए प्रकृति ने शत्रुपक्ष का निर्माण किया है । यदि सभी जीवों को शान्तिपूर्वक और सुरक्षित रहने की सुविधा मिली होती तो फिर आलसी और प्रमादी होते चले जाते । उनमें स्फूर्ति और कुशलता पाई जाती है वे या तो विकसित ही न होतीं या फिर जल्दी ही समाप्त हो जाती ।

सिंह, व्याघ्र, सुअर, हाथी, मगर आदि विशालकाय जन्तु अपने पैने दाँतों से आत्मरक्षा करते हैं और उनकी सहायता से आहार भी प्राप्त करते हैं । साँप, बिच्छू, बर्रे, ततैया, मधुमक्खी आदि अपने डंक चुभोकर शत्रु को परास्त करते हैं । घोंघा, केंचुआ आदि के शरीर से जो दुर्गन्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निकलती है, उससे शत्रुओं को नाक बन्द करके भागना पड़ता है । गैंडा, कछुआ, सीपी, घोंघा, शंख, आर्मेडिलो आदि की त्वचा पर जो कठोर कवच चढ़ा रहता है, उससे उनकी रक्षा होती है । टिड्डे का घास का रंग, तितली का फूलों का रंग, चीते का पेड़-पत्तों की छाया जैसा चितकबरापन, गिरगिट मौसमी परिवर्तन के अनुरूप अपना रंग बदलता है ध्रुवीय भालू बर्फ जैसा श्वेत रंग अपनाकर समीपवर्ती वातावरण में अपने को आसानी से छिपा लेते हैं और शत्रु की पकड़ में नहीं आते । कंकड़, पत्थर, रेत, मिट्टी, कूड़ा, करकट आदि के रंग में अपने को रँग कर कितने ही प्राणी आत्मरक्षा करते हैं । शार्क मछली बिजली के करेन्ट जैसा झटका मारने के लिए प्रसिद्ध है । कई प्राणियों की बनावट एवं मुद्रा ही ऐसी भयंकर होती है कि उसे देखकर शत्रु को बहुत समझ-बूझकर ही हमला करना पड़ता है ।

शिकारी जानवरों को अधिक पराक्रम करना पड़ता है । इस दृष्टि से उन्हें दाँत, नाखून, पंजे ही साधारण रूप से मजबूत नहीं मिले वरन् पूँछ तक की अपनी विशेषता है । यह अनुदान उन्होंने अपनी संकल्प शक्ति के बल पर प्रकृति से प्राप्त किए हैं ।

शेर का वजन अधिक से अधिक ४०० पौंड होता है जबकि गाय का वजन उससे दूना होता है । फिर भी शेर पूँछ के सन्तुलन से उसे मुँह में दबाए हुए १२ फुट ऊँची बाड़ को मजे में फाँद जाता है ।

प्राणियों की शरीर रचना और बुद्धि संस्थान भी अपने स्थान पर महत्वपूर्ण है, पर उनकी सबसे बड़ी विशेषता है संकल्प शक्ति, इच्छा तथा आवश्यकता । यह संवेदनाएँ जिस प्राणी की जितनी तीव्र हैं वे उतने ही बड़े अनुदान प्रकृति से प्राप्त कर लेते हैं । मनुष्य को जो विभूतियाँ उपलब्ध हैं उनका कारण उसकी बढ़ी हुई संकल्प शक्ति ही मानी गई है ।

इसके अलावा प्रकृति ने अपनी संतानों के लिए विशेष व्यवस्था भी कर रखी है । उन्हें अनेकानेक अनुदान दिये हैं, जिनके कारण क्षुद्र से क्षुद्र प्राणी भी अपनी जीवन यात्रा बेखटके निर्बाध पूर्ण कर लेता है ।

सभी संतानें प्रिय

उदाहरण के लिए कई जीव-जन्तु क्षुद्र लगते हैं । पक्षी ही देखने में तुच्छ लगते हैं । मनुष्य की तुलना में उन्हें बुद्धि नहीं मिली और न उतनी विकसित इन्द्रियाँ ही । फिर भी यह नहीं मान बैठना चाहिए कि भगवान ने उनकी उपेक्षा ही की है । बारीकी से देखने पर प्रतीत होता है कि उनमें ऐसी कितनी ही विशेषताएँ हैं, जिनमें मनुष्य काफी पिछड़ा हुआ है । यदि वे क्षमताएँ मनुष्य को मिली होतीं जो तुच्छ समझे जाने वाले पक्षियों को प्राप्त हैं तो वह तथाकथित देवताओं के वैभव से कहीं अधिक ऊँची स्थिति में रहा होता ।

भगवान् को अपनी पक्षी सन्तानें प्यारी हैं । उन्होंने किसी को कोई खिलाने खेलने के लिये दिया है तो किसी को कोई । इस सृष्टि में न तो कोई सर्वथा साधनविहीन है और न सर्वसम्पन्न, हर प्राणी को उसकी आवश्यकता के अनुरूप इतने और ऐसे साधन प्रचुर परिमाण में उपलब्ध हैं जिनसे वह अपनी जीवनचर्या सन्तोष और प्रसन्नता के साथ चला सके । पक्षियों की दुनिया पर नजर डालते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि वे भी भगवान् के कृपा पात्र हैं और अपनी आवश्यकता के अनुरूप उतने साधन सम्पन्न हैं कि किन्हीं उपलब्धियों में मनुष्य को छोटा और पिछड़ा हुआ सिद्ध कर सकें ।

गरुड़ की चाल साधारणतया ६५ से ११० मील प्रति घण्टा होती है, पर जब वह शिकार पर झपटता है तो वह चाल २०० मील की हो जाती है । यों गरुड़ का वजन पाँच से दस किलो तक का होता है, पर वह अपने से ड्योढ़े वजन का शिकार पंजों में दबाकर घोंसले की ओर लम्बी उड़ान उड़ता चला जाता है । गरुड़ अंडे चुराने में भी नहीं चूकता ।

वृक्षों पर रहने वाला आस्ट्रेलिया का टेडीवियर अपनी पीठ पर आधे दर्जन तक बच्चे लादे फिरता है और चढ़ने-उतरने में ऐसी सावधानी बरतता है कि कोई बच्चा गिरने न पाये ।

अमेरिका के ओपासय चूहों के आठ-दस बच्चे अपनी माँ की पीठ पर लदे फिरते हैं । यह बच्चे इतने चतुर होते हैं कि अपनी पूँछ माता की पूँछ से लपेटकर जंजीर-सी बना लेते हैं और गिरने के खतरे से बचकर सवारी का आनन्द लेते हैं ।

शरीर के अनुपात से संसार में सर्वाधिक शक्तिशाली चिड़िया 'हमिंग वर्ड' मैक्सिको खाड़ी और पनामा नहर के तटों पर पाई जाती है । इसकी जिजीविषा परायणता देखते ही बनती है । शरीर की लम्बाई ३ इन्च किन्तु चोंच पाँच इन्च की । यह इतनी पेटू होती है कि निरन्तर खाते रहते बिना उसे चैन ही नहीं पड़ता । अपने शरीर के वजन से वह तीन गुना आहार एक दिन में करती है । इस आहार को जुटाने में उसे अत्यन्त व्यस्त और सक्रिय रहना पड़ता है । इसी अनुपात से यदि मनुष्य को तत्पर रहना पड़े तो उसे सामान्य शक्ति व्यय की अपेक्षा ४५० गुनी शक्ति खर्च करनी पड़े । एक साथ बहुत-सा आहार पकड़ और निगल सके इसी सुविधा के लिए प्रकृति ने उसे इतनी लम्बी चोंच दी है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

२.२८ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

'हमिंग वर्ड' जब सोती है तब उसकी नींद इतनी गहरी होती है कि कोई चाहे तो ढेले की तरह उसे उठा ले । शरीर मुरदे जैसा निःचेष्ट हो जाता है । करवट तो वह बदलती ही नहीं ।

हैलीकाप्टर सिद्धान्त पर उसके पंख अन्य चिड़ियों की अपेक्षा कुछ अलग ही ढंग के बने होते हैं । वह आगे-पीछे, तिरछी जमीन से सीधी आकाश को, आकाश से जमीन पर उड़ सकती है । हवा में स्थिर भी रह सकती है । फूलों की डालियाँ, पेड़ों की शाखों पर जब वह आहार ले रही होती है, तब भी बैठती नहीं वरन् उड़ती ही रहती है । उस समय भी उसके पंख एक सैकिण्ड में ५ बार की आश्चर्यजनक गति से हरकत कर रहे होते हैं । इसके कारण एक फुट तीव्र दृष्टि अपनी जाति के पक्षियों में सबसे आगे होती है ।

शुतुरमुर्ग अब सिर्फ अफ्रीका में ही पाया जाता है । ऊँचाई प्रायः ६ फुट, वजन ३०० पौण्ड, रफ्तार ४० मील । बीच में वह १५-१५ फुट की ऐसी छलाँगें लगाता है कि घुड़सवारों को भी हार माननी पड़े । इनकी लात से घोड़े की टाँग टूट सकती है । इसे पालतू भी बनाया जाता है । अफ्रीका में इसकी दोस्ती जंगली गधे—जेबरे के साथ रहती है । दोनों एक-दूसरे को प्यार करते हैं और विपत्ति के समय एक दूसरे की सहायता भी करते हैं । उन्हें साथ-साथ घूमते और सोते-खाते देखा जा सकता है । ध्रुव प्रदेशों में पाया जाने वाला ६ फुट ऊँचा २०० पौंड भारी पेनगुई—मनुष्य की तरह खड़ा होकर दो पैरों से चलता है । समुद्र जल में तैरते और शीत सहन करने की उसकी अपनी विशेषता है । तेज ठंड के दिनों में वह ३-४ महीने बिना खाए ही गुजर कर लेता है । बर्फ पर फिसलने का खेल इसे बहुत भाता है । इस जाति के सभी पक्षी प्रायः पति-पत्नी का जोड़ा बनाकर रहते हैं । नर को विशेषतया घर की जिम्मेदारी सँभालनी पड़ती है ।

केकड़ा कभी-कभी भारी शंखों के खोल में घुस जाता है और उनके वजन को ढोता हुआ समुद्र में इधर-उधर यात्रा करता रहता है । हर वर्ष वह दस मील की यात्रा कर लेता है और अपने वजन से दस बारह गुना तक वजन ढो लेता है । कुछ कीड़े तथा पौधे भी इन शंख कलेवरों पर जा बैठते हैं और केकड़े पर लदा वजन बढ़ता ही जाता है । मजा तो यह है कि इतने लदान से लदा हुआ केकड़ा समुद्र तट के पेड़ों पर चढ़कर घोंसलों से चिड़ियों, इर्द-गिर्द तक की पत्तियाँ हवा के तेज झोंके के समय जैसी हिलती रहती हैं और तेजी से उड़ते समय इसके पर एक सैकिण्ड पीछे २०० बार हिलते हैं । प्रणय-क्रीड़ा भी वह उड़ते-उड़ते घड़ी के पेन्डुलम की तरह आगे-पीछे हिलते हुए पूरी कर लेता है । अंडे देते समय घोंसला पेड़ की छाल और कपास के धागे से ऐसा सुन्दर और मजबूत बनाता है कि देखने वाले उसे पेड़ की एक गाँठ ही समझ सकते हैं । यह लड़ाकू भी कम नहीं होता । नरहमिंग वर्ड जब आपस में लड़ते हैं तो उनकी तलवार जैसी चोंच प्रतिद्वन्द्वी का सफाया कर देती है । मादा को जब किसी शिकारी पक्षी से खतरा होता है तो अपनी छुरे जैसी चोंच से निर्भय आक्रमण करती है और बड़ी आकृति वाला बाज, कौआ, गिद्ध भी उसकी मार से घबराकर सिर पर पाँव रखकर भागते हैं । लम्बी उड़ान में उसकी अपनी शान है । बिना खाए और ठहरे वह लगातार १२ घण्टे उड़कर ६०० मील की यात्रा कर सकती है ।

भवन निर्माण और कपड़ा बुनने, टोकरी बनाने जैसी अनेक कला शिल्पों का सम्मिश्रण करने से ही घोंसला बनाने की विधा बनी मालूम देती है । बिना किसी कालेज में सैद्धान्तिक और कारखाने में व्यावहारिक शिक्षा पाए अधिकांश पक्षी जन्मजात रूप से जानते हैं । यों ऋतु प्रभाव से बचने और अंडे-बच्चों की सुरक्षा व्यवस्था के उपयुक्त सभी पक्षी घोंसले बनाते हैं पर उनमें से कुछ की प्रवीणता तो देखते ही बनती है ।

वया का लटकता हुआ घोंसला हर किसी को आश्चर्य में डाल देता है कि वह कितनी सुन्दरता और सुघड़ता के साथ बनाया गया है । इसे देखकर उसके निर्माता की भूरि-भूरि प्रशंसा करनी पड़ती है । दक्षिण अफ्रीका की वया ने तो एक कदम और भी आगे बढ़ाया है । वह घोंसले के तिनकों को न केवल मजबूती से सटाती है वरन् बालों का फंदा लगाकर इस तरह कस देती है कि फिर आँधी-तूफान उसका कुछ भी बिगाड़ न सकें । यों इस तकनीक में वह भेड़ों की ऊन भी काम में लाती है, पर अधिकतर प्रयोग अधिक लम्बे और मजबूत बालों का ही करती है । इस दृष्टि से घोड़े और गधे की पूँछ के बाल उसे अधिक उपयुक्त लगते हैं । कभी-कभी तो हाथी और सुअर के बाल भी उसमें कसे होते हैं । इन जानवरों की पूँछ पर बैठकर बाल उखाड़ना भी तो अपने ढंग का एक अलग ही कौशल है । तिनकों के बीच बालों का जो फन्दा लगाता है, उसे देखते हुए स्काउटिंग में तरह-तरह की गाँठें लगाने की जो शिक्षा दी जाती है, स्वेटर आदि बुनने में लड़कियाँ जो हस्त लाघव बरतती हैं । वह सभी पीछे पड़ जाता है ।

परिपक्व पक्षियों की बात तो दूर, अंडे में रहने वाले अविकसित पक्षी भी जब समर्थता के निकट पहुँचते हैं तो अपने पुरुषार्थ से अंडे का आवरण तोड़कर बाहर निकलते हैं और उन्मुक्त जगत में स्वच्छन्द वातावरण में प्रवेश करते हैं ।

जब अंडा पक जाता है और फूटकर बच्चा निकलने का समय समीप होता है तो उसमें थरथराहट होती है । छूकर या कान लगाकर यह देखा-समझा जा सकता है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसके भीतर खिचड़ी-सी पक रही है । यह सब कुछ क्या है ? यह बच्चे द्वारा अंडा तोड़कर बाहर निकलने के लिये किया जाने वाला संघर्ष है । चूजा अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुरूप पूरा-पूरा प्रयत्न यह करता है कि उसे बंधन से मुक्ति मिले और स्वतंत्र जीवनयापन कर सकने का अवसर उपलब्ध हो । इसके लिए वह अंडे की दीवार से पूरी तरह टकराता है और उस संघर्ष को तब तक जारी रखता है जब तक कि ऊपर का मजबूत खोल टूटकर बिखर नहीं जाता ।

कई बार यह पक्षी मनुष्यों को चुनौती देने खड़े हो जाते हैं तो उनका होश-हवाश गुम कर देते हैं ।

कुछ समय पहले बोस्टन अमेरिका के लोगन अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर एक जैट विमान से आकाश में उड़ता हुआ पक्षियों का झुण्ड टकरा गया । फलस्वरूप इंजन में खराबी आने से जहाज टूट गया और ६३ यात्री कालकवलित हो गये ।

पक्षियों में से कितनों में ही बुद्धिमत्ता ही नहीं उनकी स्नेहिल सद्भावना भी देखते ही बनती है । उनमें वह मृदुल सौजन्य पाया जाता है, जिसे अभी बहुत दिन तक मनुष्य को सीखना होगा ।

कबूतर, पण्डुक, सारस आदि पक्षी पतिव्रत और पत्नीव्रत पालन करते हैं । वे एक बार प्रेम सम्बन्ध स्थापित कर लेने के बाद उसे वफादारी के साथ आजीवन निभाते हैं ।

टिटहरी समुद्र के निर्जन तटों पर अंडे देती है । वे मिलजुल कर अंडे सेती हैं । अपने-विराने का भेदभाव किए बिना सेती हैं । यदि कोई मादा चारे की तलाश में उड़ जाय तो कोई दूसरी उसका स्थान ग्रहण कर लेगी । इसी प्रकार मिलजुल कर अंडे-बच्चों की साज-सँभाल में उन्हें बहुत सुविधा रहती है ।

घोंसला बनाने, अंडे सेने से लेकर बच्चों के पालन-पोषण तक का सारा काम नर-मादा मिलजुल कर पूरा करते हैं । प्रणय की परिणति, दाम्पत्य सहयोग और शिशु पालन में भागीदार रहने तक के उत्तरदायित्व को नर भली प्रकार समझता है और उसे भली प्रकार निबाहता भी है । बच्चे पानी में तैरने से डरते हैं—इस भय से छुटकारा दिलाने के लिये पेनगुइन उन्हें बलपूर्वक पानी में धकेलती है और तैरने की कला सिखाती है । प्रायः दो-तीन महीने में बच्चे तैरने की ट्रेनिंग पूरी कर पाते हैं ।

गरुड़ शावक भारी होता है इसलिए उसे घोंसले से नीचे उतरने और उड़ने का साहस करने में डर लगता है । माता उसे खतरे का सामना करने की शिक्षा देती है और धकेलकर घोंसले से नीचे गिरा देती है । साथ ही यह ध्यान भी रखती है कि वह कहीं विपत्ति में न फँस जाय । इसलिये नीचे गिरकर जमीन से टकराने से पूर्व ही वह उसे अपनी पीठ पर ले लेती है और उड़कर उसे फिर घोंसले में ले आती है । यह शिक्षण क्रम तब तक चलता ही रहता है जब तक बच्चा स्वावलम्बी होकर स्वतंत्र रूप से उड़ना नहीं सीख जाता । शिकार पकड़ने के लिए मादा को ही शिक्षा देनी पड़ती है । घायल शिकार को वह बच्चों से कुछ दूर छोड़ देती है और फिर अलग बैठकर बच्चों को आखेट कौशल विकसित करने का अवसर देती है ।

कर्तव्य, उत्तरदायित्व, सहयोग और सद्भाव की दृष्टि से भी पक्षियों की दुनिया मनुष्य से पीछे नहीं है, उन्हें अपनी आवश्यकतानुसार ऐसी समर्थता तो उपलब्ध ही है जिसके लिए मनुष्य उनसे ईर्ष्या ही करता है ।

सर्प भी एक शिक्षक

सर्प के सम्बन्ध में किंवदन्तियाँ जितनी अधिक प्रचलित हैं उनसे भी अधिक वे तथ्य हैं जिन्हें अप्रचलित और अविदित ही कहना चाहिये । साधारणतया सर्प को मृत्यु दूत के रूप में चित्रित किया जाता है । ईसाई और मुस्लिम धर्म में ईश्वर के प्रतिद्वन्द्वी शैतान का सर्प रूप में वर्णन हुआ है । हिन्दू धर्म में हर प्राणी और हर वस्तु में भगवान् का दर्शन करने का दार्शनिक आदर्श के अनुरूप सर्प का स्वरूप भी श्रेष्ठता के साथ सम्बद्ध किया गया है, किन्तु साथ ही उसकी गरिमा को उच्चस्तरीय स्थान दिया गया है ।

शेषनाग के फन पर यह धरती टिकी हुई है । विष्णु भगवान की शैय्या सर्प पर है, शंकर भगवान् ने सर्प के अलंकार धारण किए हैं । समुद्र-मन्थन में सर्प की रस्सी का प्रयोग हुआ है जैसे पौराणिक उपाख्यानों में उसकी महिमा का ही वर्णन है । जहाँ अशुभ वर्णन है वहाँ भी उसे भगवान् के समतुल्य ही कूता गया है । कालिया नाग का दर्प दमन करने में श्रीकृष्ण को स्वयं जुटना पड़ा, भागवत के इस उपाख्यान में ईसाई धर्म के सर्प शैतान जैसा ही वर्णन है । राजा परीक्षत को सर्प द्वारा काटा जाना इसके पश्चात् कलियुग का आगमन—जन्मेजय द्वारा नागयज्ञ करके विकृति के निराकरण का प्रयास जैसी आख्यायिकाएँ भी सर्प की ध्वंसात्मक शक्ति पर प्रकाश डालती हैं । योग साधना में कुण्डलिनी जागरण विद्या की सर्प-सर्पिणी संयोग के रूप में चर्चा की जाती है । इस प्रकार के वर्णन यह बताते हैं कि सर्प की अपनी कुछ भली-बुरी विशेषताएँ उच्चस्तर की हैं और ऐसी हैं, जिन पर गम्भीरतापूर्वक चिन्तन करके जीवनोपयोगी तथ्य हस्तगत किए जाने चाहिये ।

धर्म की पौराणिक गाथा है कि शैतान ने साँप बनकर हौवा को बहाकाया कि वह ईश्वरी आदेश की अवज्ञा करे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस पर अल्लाह ने शैतान रूपी साँप को शाप दिया कि 'तेरी और हौवा की सन्तान में सदा बैर रहेगा ।' सो साँप और मनुष्य का बैर तो प्रख्यात है, पर बात यहीं समाप्त नहीं हुई । उस शैतान सर्प ने अपने वंशजों से भी बैर ही बना रखा है ।

सर्पों के बारे में अनेकानेक किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं । ह्यूप सर्प के बारे में कहा जाता है कि उसकी फुस्कार से पेड़ जल जाता है । मिल्क स्नेक के बारे में कहा जाता है कि वह दुधारू जानवरों के थनों से लिपटकर दूध पी जाता है । अमेरिका के किसान ऐसा मानते थे कि घिर जाने पर सर्प अपने आपको काटकर आत्महत्या कर लेता है । एशिया और अफ्रीका के अनेकों देशों में किसी न किसी रूप में सर्प पूजा प्रचलित है । उसे कहीं देवताओं का, कहीं दैत्यों का प्रतिनिधि मानकर पूजा-पत्री द्वारा संतुष्ट करने का प्रयत्न किया जाता है । भारत में मान्यता है कि कृपण व्यक्ति अपनी भूमि में छिपी सम्पदा की रक्षा के लिए सर्प बनते हैं और उसका उपयोग किसी को नहीं करने देते । किसी सर्प को मार देने पर उसके साथी मारने वाले से बदला लेते हैं और मौका पाते ही काट लेते हैं, ऐसा कहा जाता है ।

साँप मनुष्यों का ही शत्रु नहीं, अपने जाति बन्धुओं और वंशजों का भी शत्रु है । वह मात्र मनुष्यों के ही प्राण हरण नहीं करता, मात्र चिड़ियों, चूहों पर ही आक्रमण करके संतुष्ट नहीं होता वरन् वही व्यवहार उनके साथ भी करता है ? जो उसके साथी सहचर ही नहीं वंशज होने का भी दावा करते हैं । क्रोधी, दुष्ट को अपने पराये का ज्ञान रह भी कैसे सकता है ? सच तो यह है कि साँप ही साँप का सबसे बड़ा शत्रु है । जाति विनाश में उसकी भूमिका अन्य सब प्राणियों से आगे है ।

ब्लैक केसर नाग का प्रिय भोजन अपने ही स्वजातीय हैं । न मिलने पर वह मिलते-जुलते सगोत्री-गार्टर सर्पों से भी काम चला लेता है । स्नेक स्टार्स का भी यही हाल है । वे दूसरे जीवों को तभी खाते हैं जब अपनी जाति वालों की उपलब्धि सर्वथा असम्भव हो जाय ।

सर्पिणी प्रजनन के बाद क्षुधातुर होती है । अंडे देते समय उसमें जो क्षणिक मातृत्व उदय होता है वह ज्यादा समय ठहरता नहीं, जैसे ही बच्चे निकलते हैं वैसे ही उसके मुँह में पानी भर आता है । वात्सल्य और क्षुधा निवृत्ति में से दूसरे का चयन करना भला लगता है और जो भी सँपोला उसकी नजर में आ जाय उसी को निगल जाती है, जो इधर-उधर खिसक जायें वे ही भाग्यशाली जीवित बचते हैं ।

क्रोधी, दुष्ट और क्रूर प्रकृति बाहर वालों को ही हानि पहुँचाते हों सो बात नहीं, उनकी प्रतिक्रिया स्वजनों, कुटम्बियों, आत्मीयों के लिए भी कम घातक नहीं होती । मोटेतौर से यह समझा जाता है कि दुष्ट मनुष्य बाहर के लोगों पर आक्रमण करके उनका अहित करके जो कमाते हैं, उससे अपने परिवार को लाभ पहुँचाते हैं पर वास्तविकता इससे भिन्न है । दुष्टता की कमाई, स्वजनों को तत्काल कुछ विलास सामग्री भले ही जुटा दे पर अन्ततः उनमें भी इतने दुर्गुण मनोविकार भर देती है कि वे बिना परिश्रम प्राप्त हुए वैभव से मिलने वाले क्षणिक सुख का मूल्य भविष्य में अत्यन्त दुःखद परिणाम भोगते हुए चुकाते हैं । समय पड़ने पर वे अपने आश्रितों और आत्मीयों के लिए भी विषधर जैसा दंशन करने में नहीं चूकते । तनिक-तनिक से कारणों अथवा संदेहों की आड़ में लोग अपने स्त्री-बच्चों तक की हत्या कर देते हैं । दूसरों के साथ प्रेमालाप को सहन न कर सकने की ईर्ष्या के आवेश में कितने ही नरपिशाच अपनी पत्नी की समस्त सेवा सहायता को भुलाकर उसके रक्तपिपासु बन जाते हैं । ऐसे समाचार आये दिन पढ़ने को मिलते रहते हैं । तथाकथित देवताओं से अमुक सुख-सुविधा का वरदान मिलने के प्रलोभन में निरीह पशु-पक्षियों का ही नहीं अपने या पड़ोसी के बच्चों की बलि चढ़ाने वाले दुरात्माओं की संख्या भी कम नहीं है । दुष्टता तो एक अग्नि है जो दूरवर्ती और निकटवर्ती का भेदभाव किये बिना सर्वतोमुखी अहित ही करती है । सर्प में पायी जाने वाली यह दुष्टता उसे मृत्युदूत, घृणित, शैतान आदि के रूप में सर्वत्र निन्दनीय ठहराती है । उसकी आतंकवादी प्रकृति से लोग डरते तो हैं पर साथ ही उसका मुँह कुचलने में भी नहीं चूकते ।

भारत में पाये जाने वाले विषधरों में कोबरा, किरात, कोरल, वाइपर, कोडर, करायत, बफई, राजनाग, रसेल प्रमुख हैं । इनका पूरा दंश लग जाय तो १० मिनट से लेकर २ घण्टे की अवधि में मनुष्य दम तोड़ देता है । अजगरों की लम्बाई ३५ फीट तक पाई जाती है । उनका वजन तीन मन तक देखा गया है । हिरन, सुअर, सियार, जंगली भैंसा जैसे जानवरों को वह अपनी कुण्डली में ऐसे जकड़ता है कि उनकी हड्डी पसली चूरचूर हो जाती हैं, इसके बाद वह अपने शिकार को प्रायः समूचा ही निगलता है और पचने तक आराम से पड़ा सुस्ताता रहता है । शेर के साथ मल्लयुद्ध में कभी-कभी अजगर के हाथ ऐसी पकड़ आ जाती है कि शेर का चूरा करके उसे पूरी तरह निगल जाय ।

इतनी सामर्थ्य का उपयोग यदि कोई प्राणी रचनात्मक दिशा में कर सके तो उसकी उपयोगिता बैल या घोड़े से कई गुनी अधिक सिद्ध हो सकती है, पर यदि उसका उपयोग घातक प्रयोजनों के लिए किया जाये तो इससे अजगर की तरह अशान्ति ही उत्पन्न की जा सकती है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार में प्रायः २५०० जाति के सर्प पाए जाते हैं । भारत में इनकी २३० जातियाँ ही देखने में आई हैं । इनमें से १५ प्रकार के ही विषधर होते हैं । हर वर्ष भारत में प्रायः डेढ़ लाख मनुष्यों को साँप काटते हैं, पर उनमें से १० प्रतिशत की ही मृत्यु होती है क्योंकि काटने वाले सभी सर्प अधिक विषैले नहीं होते ।

कुछ की दुष्टता से उस वर्ग के अन्य निर्दोषों को भी कलंकित होना पड़ता है । समस्त सर्प विषधर और दुष्ट प्रकृति के न होने पर भी बेचारे अकारण घृणास्पद समझे जाते हैं और लोग उनका भी जीवन दुर्लभ कर देते हैं । इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए मनुष्य समाज में यह प्रथा प्रचलित है कि हर वर्ग अपने समाज के लोगों को दुष्प्रवृत्तियों से रोकने-बचाने के हर सम्भव प्रयत्न करे । समझाने-बुझाने से न सुधरे तो उसे बहिष्कृत एवम् दण्डित करके कड़े कदम भी उठाए । राजसत्ता और समाज संगठन द्वारा ऐसा किया भी जाता है । इसी कारण मानव समाज की बहुत कुछ दुष्टताएँ नियन्त्रण में रहती हैं । सर्पों को भी यदि यह सहज बुद्धि होती तो सम्भवतः वे भी क्रोधी और दुष्ट सर्पों को बहिष्कृत एवं दण्डित करने में न चूकते ।

सर्प का विष उसकी पैराटाइड ग्रन्थि से निकलता है । उसकी संरचना प्रोटियोलाइटिक, एंजाइम, फॉस्फेटाइडेज और न्यूरोटानिक्स से होती है ।

सर्प विष के बारे में यह कथन सत्य है कि काटे हुए स्थान का रक्त मुँह से चूसा जा सकता है और उससे रोगी को विष मुक्त किया जा सकता है, पर यह बात तभी सही होगी जब चूसने वाले के मुँह में किसी प्रकार का छोटा-बड़ा जख्म न हो । सपेरे साँप को मारकर खा जाते हैं यह भी सत्य है । साँप का विष बिना किसी हानि के पचाया जा सकता है । वह घातक तभी होता है जब रक्त में सीधा जा मिलता है ।

सर्प विष रक्त में मिलकर ही 'हिमोलिसस' नामक पदार्थ उत्पन्न करता है । रक्त कोशिकाएँ फट जाती हैं, आमाशय और गुर्दे में रक्त जमा होना प्रारम्भ हो जाता है, त्वचा ठंडी पड़ जाती है । हाथ, पैर, जीभ आदि सुन्न होते-होते मस्तिष्क अपना काम करना बंद कर देता है और बेहोशी के बाद दिल धड़कना बंद हो जाता है ।

हाँगकाँग में सर्प का पित्ताशय बड़े चाव से खाया जाता है । ब्रह्मा में एक बार अन्वेषी चिडविन का दल जंगलों में फँस गया तो उसने अजगर खाकर अपना काम कई सप्ताह तक चलाया । अमेरिका में गार्टर साँप का माँस डिब्बों में बन्द बिकता है ।

संसार में फैली हुई दुष्प्रवृत्तियाँ अपने लिए सर्प विष की तरह तभी घातक बनती हैं, जब वे अपने रक्त में, जीवन-क्रम में मिलने-घुलने लगें । यदि उन्हें आत्मसात न किया जाय तो विकृतियाँ कितनी ही भयंकर क्यों न हों किसी का कुछ अहित नहीं कर सकतीं । सर्प विष को सीधा रक्त में न मिलने देने की सावधानी रखने वाले काल-कूट के साथ अठखेलियाँ करते रहते हैं और उसके दुष्प्रभाव से सहज ही बचे रहते हैं ।

इतना ही नहीं बुद्धिमान लोग तो सर्प विष जैसे भयंकर पदार्थ से भी लाभ उठा लेते हैं । उससे सम्पदा उपार्जन करते हैं और सदुपयोग करके उस विष को अमृत में बदलते हैं । सर्प विष से भयानक रोगों का शमन करने वाली औषधियाँ बनती हैं और उसका संग्रह करने वाले सम्पन्न एवं यशस्वी बनते हैं ।

भारत में हाफकिन इन्स्टीट्यूट बम्बई सर्प शोध-कार्य में प्रवृत्त है, साथ ही सर्प विष संग्रह करके उन्हें विदेशों में चिकित्सा अनुसंधानों के लिएं भेजता है और दुर्लभ विदेशी मुद्रा कमाता है । सर्प का विष सोने की अपेक्षा पन्द्रह गुने अधिक मूल्य का होता है । पाले हुए सर्पों में से नाग एक बार में २०० मिलीग्राम, कांडर १५० मिलीग्राम, करायत २६ मिलीग्राम और बफई ६ मिली ग्राम विष देता है ।

दुष्टता को परिष्कृत करके उसे सदुद्देश्य के लिए प्रयुक्त कर सकना एक महत्वपूर्ण कला है । सपेरे विषैले साँप पकड़ने का धन्धा करते हैं, इससे वे अनेकों को भयमुक्त करते हैं, साथ ही बीन बजाकर उन्हें लहराने का खेल दिखाकर दर्शकों का मनोरंजन एवं अपने लिए आजीविका उपार्जन करते हैं । शेषशैयाशायी विष्णु और सर्पालंकारधारी शंकर के चित्र इसी प्रयोग की सफलता का संकेत करते हैं । वाल्मीकि, अंगुलिमाल, आम्रपाली, अजामिल, विल्वमंगल, अशोक आदि के पूर्वपक्षी दुष्टजीवन उत्तर भाग में कितने श्रेष्ठ बन सके, इस तथ्य पर दृष्टिपात किया जाय तो यह स्वीकार किया जायगा कि उच्चस्तरीय सद्भावनाएँ बुरों को भी भला बना सकती हैं । इस तथ्य को स्मृति-पटल पर बनाये रखने के लिए हिन्दूधर्म में एकाध त्योहार सर्प पूजा का भी है ।

श्रावण शुक्ला पंचमी को हर साल नागपंचमी का त्योहार आता है, उस दिन जगह-जगह सँपेरे अपने साँप पिटारे लेकर पहुँचते हैं, सर्प का दर्शन कराते हैं, धर्मभीरु लोग उन्हें दूध पिलाते हैं और सँपेरों को दान-दक्षिणा देते हैं ।

महाराष्ट्र के साँगली नगर में कोई ७० मील दूर शिराला गाँव में बसन्त पंचमी पर होने वाली सर्प पूजा अद्भुत है । वहाँ दूर गाँवों के लोग इकट्ठे होते हैं और सर्प नृत्य का आनन्द मनाते हैं । सपेरे तथा दूसरे लोग अपने पकड़े सर्पों को लेकर वहाँ पहुँचते हैं, गाते-बजाते हैं । सर्प,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फन फैलाकर उनके साथ-साथ नृत्य करते हैं । कहते हैं कि बाबा गोरखनाथ ने यह आशीर्वाद दिया था कि इन ३२ गाँवों में सर्प किसी को नहीं काटेंगे और न इन गाँवों के लोग उन्हें मारेंगे । आश्चर्य है कि यह लोकोक्ति सही भी होती चली आ रही है । पूना से इस्लामपुर तक पक्की सड़क जाती है । इसके बाद शिराला तक १० मील पैदल चलना पड़ता है ।

इस प्रकार के उदाहरण बताते हैं कि एकपक्षीय सद्भावना भी दूसरे पक्ष की दुष्टता को ऋजु एवं मृदुल बनाने में बहुत हद तक सफल हो सकती है ।

सर्प उतना भयंकर नहीं जितना उसे समझा जाता है

साँप का नाम सुनते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं । उसे मृत्यु का दूत माना जाता है, उसे देखते ही कँपकँपी छूटती है और प्राण-संकट के भय से कलेजा काँपने लगता है । यह सर्प संकट नहीं वरन् अपडर का त्रास है । हम सामान्य से कीड़े को इतना भयंकर मान लेते हैं जितना कि वस्तुत: वह है नहीं । पाये जाने वाले सर्पों में से बहुत ही कम विषैले होते हैं । उनमें से अधिकांश तो ऐसे हैं, जिनसे बिना किसी प्रकार का जोखिम उठाए खिलौने की तरह खेलते रहा जा सकता है । मनुष्य शरीर से और बुद्धि से बड़ा है, वह चाहे तो किसी भी आक्रमणकारी सर्प से सहज ही निपट सकता है, पर जब डर हावी हो जाय तो फिर न बुद्धि काम देती है और न कोई उपाय ही सूझता है । इसी भयभीत स्थिति में प्राय: लोग साँपों से काटे जाते हैं और उपाय की ओर मस्तिष्क को न दौड़ाकर भयाक्रान्त हो जाने से काटे हुए लोगों में से अनेकों ऐसे मर जाते हैं, जो थोड़ी विवेक-बुद्धि का परिचय देने पर सहज ही बच सकते थे ।

दस पीछे दो ही साँप विषैले होते हैं शेष निर्विष । वह हर तीसरे-चौथे महीने केंचुली बदलता है । उसे रात में भी साफ दिखाई पड़ता है । रीढ़ इतनी लचीली होती है कि यदि कड़ा झटका मार दिया जाया तो वह टूट जाएगी और इतने मात्र से वह अधमरा हो जायगा । पेट के स्नायु सशक्त होने के कारण ही वह सपाटे के साथ रेंग सकता है । वे अपने बड़े आकार के शिकार को निगल जाते हैं । अजगर साँप समूचे हिरनों को निगलते देखे गए हैं । उनकी पाचन शक्ति इतनी तीव्र होती है कि हड्डियाँ भी उसमें गल जाती हैं । उसकी पकड़ इतनी मजबूत होती है कि जिसे भी कसकर पकड़ ले उसे मरोड़ कर या तोड़कर ही छोड़ता है । केंचुली की तरह उसके दाँत भी बार-बार गिरते उगते रहते हैं ।

साँपों के सम्बन्ध में कितनी ही किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं, किन्तु उनमें से एक में भी तथ्य नहीं । साँप अपनी साँस से पक्षियों को खींच लेता है । आँखों की चमक से शिकार सम्मोहित होकर अचल खड़ा रह जाता है । सर्प और सर्पिणी में से एक को मार डालने पर दूसरा मारने वाले से बदला लेता है, गायों के थन से लिपट कर दूध पी जाता है, बीन सुनने के लिए या सुगन्धित पुष्प सूँघने के लिए वह अपने बिलों से निकल आता है, गढ़े हुए खजाने पर पहरा देता है । मन्त्र शक्ति से खिंचकर चला आता है और काटे हुए स्थान का विष् चूसता है, आदि बातें कपोल कल्पना मात्र हैं । साँप भी दूसरे अन्य कीड़ों की तरह एक कीड़ा है । फुर्तीलापन और विषैलापन आदि उसकी अपनी विशेषताएँ हैं ।

भारत में किंग कोबरा ही एक ऐसा है जिसका दंशन तत्काल मृत्यु की गोद में सुला देता है । शेष साँपों में कम विष होता है और उसे चिकित्सा द्वारा अच्छा किया जा सकता है । सर्प विष से ही सर्प दंशन की अमोघ औषधियाँ निकली हैं । विष से विष मारने की उक्ति सर्प चिकित्सा पर पूरी तरह लागू होती है । काटने पर मरने वालों में से आधे लोग विष की अधिकता से नहीं वरन् मृत्यु की सम्भावना से भयभीत होकर मरते हैं । अकारण आक्रमण करने वाले साँप कम ही होते हैं वे प्राय: आघात लगने पर या वैसी आशंका होने पर ही हमला बोलते और काटते हैं ।

संसार भर में लगभग ढाई हजार किस्म के साँप पाये जाते हैं, जिनमें भारत में पाये जाने वालों की संख्या २३० है । यह सभी जहरीले नहीं होते । अपने देश में अधिकांश विषहीन होते हैं । उनमें से केवल १५ जातियाँ ही विषैली हैं ।

सर्प विष उसके तालू में लगी हुई विष ग्रन्थियों में भरा होता है । इन ग्रन्थियों का रस उसके पोले विष दन्तों में होकर काटे जाने वाले के शरीर में प्रवेश करता है । यह पूरी इन्जेक्शन पद्धति है । पोले विष दन्त इन्जेक्शन की सुई का और विष थैली पिचकारी का काम देती हैं । काटने पर सर्प इन्हीं पोले विष दन्तों को माँस में चुभोता है और उस चुभन के साथ ही विष उड़ेल देता है । यह विष रक्त में मिलकर सारे शरीर में फैलता है और काटे जाने वाले की मृत्यु का कारण बनता है । विभिन्न जाति के सर्पों द्वारा उड़ेले जाने वाले विष भिन्न-भिन्न होते हैं और उनकी मात्रा भी न्यूनाधिक निकलती है । मिलीग्रामों में इस विष की औसत मात्रा इस प्रकार है—क्रीटलेस ६००, कोबरा ३१७, रसेल वाइपर १०८, एकैथोफिस ८४, एडक्रिस्टोडोन ५५, नोटलस ४७ मिलीग्राम ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्पों में पाये जाने वाले विष रसायनों में कुछ बहुमूल्य हैं । न्यूरोटाक्सिन, हायल्यूरोनाइडेज, राइबो न्यूक्लिएज, आफी आक्सीडेज, फास्फोडी एस्टेज, न्यूक्लियोटाइडेज आदि । इनकी कीमत प्रति मिली ग्राम १५०० रुपये तक जा पहुँचती है ।

ऐलोपैथी में सर्प विष से बनी औषधियाँ कैन्सर, क्षय, कोढ़, ल्यूकोडर्मा, साइफिलिटिक, इलाप्स, एपिस, मेलीफिका आदि रोगों में प्रयुक्त होती हैं । होम्योपैथी में सर्प विष ऐपीलेप्सी, एस्थमा, न्यूराल्जिया, न्यूराइटिस, लेम्बेगो, सिपाटिका, टिक्स, काजोडायनिया, लेरिजाइटिस, प्लूरिसी, डिबिलिटी, इन्सोमीनिया आदि रोगों में प्रयुक्त किया जाता है । आयुर्वेद ग्रन्थों में तो उसके अनेकानेक प्रयोग भरे पड़े हैं । इन दिनों उसका सर्वाधिक प्रयोग सर्प काटने के इलाज के लिए एन्टीसीरप के रूप में किया जाता है । काँटे से काँटा निकालने की तरह, मारने वाला ही जीवन दान कर सकने की बात को प्रमाणित करता है ।

भयंकर और हानिकारक समझी जाने वाली वस्तु का भी मानवी बुद्धि चाहे तो सदुपयोग कर सकती है । आग, बिजली आदि ऐसी शक्तियाँ हैं जिनके खतरे स्पष्ट हैं, पर मानवी बुद्धि कौशल ने उन्हें अपने वशवर्ती कर लिया है और उनसे समर्थ सेवक की तरह काम लिया जा रहा है । उसी बुद्धि द्वारा सर्प को मृत्यु दूत से बदल कर दुधारू कामधेनु गौ की तरह प्रयुक्त किया जा रहा है ।

बैंकाक के सर्प फार्म ने विष एकत्रित करने और बेचने में कीर्तिमान स्थापित किया है । वहाँ सप्ताह में एक बार पालतू साँपों का विष संग्रह किया जाता है । उनका मुँह विशेष यंत्रों की सहायता से चौड़ा दिया जाता है और विष थैली में नली लगा दी जाती है, जिसमें प्राय: दो चाय चम्मच में भरा जा सकने जितना विष निकल आता है । उसके बाद उन्हें फिर अपने पिंजड़े में वापस भेज दिया जाता है ।

जापान में पुरानी मान्यता अभी भी चली आ रही है कि सर्पचूर्ण तपेदिक और गठिया की अच्छी दवा है । फलत: वहाँ सैकड़ों लोग सर्पचूर्ण बनाने का व्यवसाय करते हैं । उन्हें तन्दूर पर सुखा कर कड़ा किया जाता है और फिर कूटकर चूर्ण बना दिया जाता है । उस देश में इसी प्रयोजन के लिए प्राय: पचास हजार साँपों को अपनी जान गँवानी पड़ती है ।

अब दवाओं के लिए सर्प विष की बहुत माँग है । इसलिए उसकी कीमत ३० पौण्ड तक मिल जाती है । शिकारियों ने जाल में फँसाकर उसे पकड़ने की सहज तरकीब ढूँढ़ निकाली है और उस धन्धे से खूब कमाई करते हैं । फलत: अब उनकी वंश रक्षा तक के लिए संकट उत्पन्न हो गया है ।

डॉ० जोनाथन लौकी द्वारा स्थापित नैरोबी से १७० मील दूर सर्पोद्यान और ट्रान्सबाल के डॉ० के० सी० वेन एवम् डॉ० फिट्जसिमोन्स का सर्प संस्थान इस प्रयास में संलग्न है कि विषैले सर्पों को पालकर उन्हें दुधारू गौओं एवं पालतू मधुमक्खियों की तरह अधिक लाभदायक बनाया जाय । सर्प विष सोने से भी कई गुना महँगा बिकता है क्योंकि उससे कितनी ही विष निवारक दवाएँ बनती हैं और भारी माँग रहती है ।

भारत में पाये जाने वाले किंग कोबरा और तक्षक से भी भयंकर पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका क्षेत्र का सबसे विषैला सर्प 'मम्बा' माना जाता है । यह दो प्रकार के होते हैं एक काला दूसरा हरा । काला मम्बा औसतन १४ फुट और हरा उससे कुछ छोटा १० फुट का होता है । उनकी चाल १० से १५ मील प्रति घण्टा तक देखी गई है ।

मम्बा के दंश में कितने ही प्रकार के विषैले रसायन मिले होते हैं । न्यूरोटानिक्स—जो स्नायु तन्त्र को ठप्प कर देता है । श्वास झिल्ली पर लकवा मार देता है फलत: ऑक्सीजन के अभाव में आदमी दम घुटने जैसी छट-पटाहट के साथ मर जाता है । उसके दंश में एक और भी विष घुला रहता है—हीमोटाक्सिन जो रक्त संचार प्रणाली में खून के थक्के जमा देता है और कोशिकाओं को जलाता चला जाता है । ट्रान्सबाल से केनिया तक के विशाल क्षेत्र में इस जाति के सर्प सर्वत्र पाये जाते हैं । नाटाल, जुलूलेण्ड, बेचुआनालेण्ड तक के बीच हर साल हजारों लोगों को इन्हीं की चपेट में प्राण गँवाने पड़ते हैं । पाँच मिनट से लेकर दो घण्टे की अवधि में काटा हुआ व्यक्ति दम तोड़ देता है ।

एशिया का किंग कोबरा और आस्ट्रेलिया का टाइपान भी विष की दृष्टि से ऐसे ही होते हैं, पर वे डरपोक होने के कारण बिना छेड़े नहीं काटते । मम्बा इनसे उद्दण्ड है, वह स्वभावत: क्रोधी और आक्रामक होता है और अकारण हमला बोलता है । हाथ-पैर में काटा हो तो बचने की थोड़ी आशा भी है, पर यदि हृदय और मस्तक के नजदीक काटा होगा तो फिर बचने की कोई गुंजायश नहीं है ।

इतना सब होते हुए भी मम्बा की अपनी निजी दुर्बलताएँ ही ऐसी हैं, जो उसके लिए पग-पग पर प्राणघातक संकट उत्पन्न करती रहती हैं । कोई छोटी चुहिया उसे काट खाय तो भी जख्म जल्दी नही पुरेगा और सैप्टिक होने से उसकी मौत हो जाएगी । बरुथी जैसे छोटे कीड़े कई बार उसकी मुलायम चमड़ी पर चिपक जाते हैं और अपनी संख्या वृद्धि करते हुए उसके माँस को तब तक खाते ही रहते हैं जब तक कि यह छटपटा-छटपटा कर मर नहीं जाता । बाज, गरुड़, उल्लू, जंगली कुत्ते, बनविलाव भी उसको दबोचने की घात लगाये बैठे रहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुष्ट देखने में बड़े दुर्दान्त मालूम पड़ते हैं, पर उनकी अपनी निजी कमजोरियाँ ही ऐसी होती हैं, जो उन्हें पानी के बबूले की तरह देखते-देखते मिटाकर रख देती हैं । हर बात हर आतातायी पर लागू होती है और मम्बा पर भी । जैसा कि वह दूसरों को हानि पहुँचाने में बलिष्ठ मालूम होता है यदि उसकी सत्ता भी वैसी ही मजबूत रही होती तो शायद उस क्षेत्र का कोई प्राणी जीवित न बचता । ईश्वर को धन्यवाद है कि उसने मम्बा सहित हर पर-पीड़क को ऐसी आन्तरिक दुर्बलताओं से घिरा रखा है जो बात की बात में उसका विनाश करके रख देती है । तनिक-सा जख्म होते ही सड़-सड़कर मर जाना, चुहियों और चीटियों द्वारा उसे जीवित ही उदरस्थ कर लिया जाना यह सिद्ध करता है कि आतातायी वस्तुतः अतीव दुर्बल होते हैं और वे तनिक से आघात से बिखर जाते हैं ।

सपेरे की बीन सुनकर साँप का मुग्ध हो जाना जनमान्यता में अपना स्थान बना चुका है, पर है गलत । वस्तुतः साँप के कान नहीं होते और वह सुन नहीं सकता । वह पूरी तरह बहरा होता है, यहाँ तक कि बन्दूक की आवाज भी उसे सुनाई नहीं पड़ती । बीन बजाने की ध्वनि पर सर्पों के फन फैलाकर भाव नृत्य करने की बात में तथ्य यह है कि सपेरा साँप की आँख से आँखें मिलाए रहता है और सिर घुमाने तथा पुतलियों को नीचा-ऊँचा करने के संकेत करता रहता है । बीन का हिलना-जुलना भी काम आता है । सर्प सपेरे की आँखों में अपने लिए आक्रामक सम्भावना देखता है और आत्मरक्षा के लिए उसी तरफ अपना सिर हिलाता-जुलाता है जिस ओर कि सपेरे के नेत्र एवं उपकरण हिलते-जुलते हैं । यदि सपेरे और साँप के बीच में एक मोटी चादर तान दी जाय और बीन बजता रहे तो साँप पर कुछ प्रतिक्रिया न होगी । उसे प्रभावित ध्वनि नहीं बल्कि दृश्य हलचलें करती हैं ।

विश्व स्वास्थ्य संघ की सूचनानुसार संसार भर में प्रायः ४० हजार व्यक्ति साँप काटने के कारण मरते हैं । अन्वेषकों का कहना है कि इनमें एक चौथाई की मृत्यु के लिए वे विषधर दोषी हैं । शेष तो भयभीत मनःस्थिति की आशंका-कुशंकाओं से ग्रसित होकर बे-मौत मरते हैं । सन्तुलित मस्तिष्क से बिना घबराहट के सामयिक उपाय करने में असमर्थ रहने की स्थिति भी उनका जीवन हरण करती है । सर्प इतना भयंकर नहीं जितना उसका अपडर, जिसने जनसाधारण के मस्तिष्क को अपना प्रभाव क्षेत्र बनाया हुआ है ।

सर्पों में अधिकांश भले होते हैं

सर्प को सब लोग काल रज्जु के नाम से जानते हैं । चलती-फिरती मौत दीखता है । साँप को देखते ही होश उड़ जाते हैं । हक्का-बक्का हुआ आदमी भी साँप को एक प्रत्यक्ष संकट दीखता है । दोनों के बीच में भय की भयंकरता आ खड़ी होती है । इस भयंकरता के दबाव में ही कितने ही अपने प्राण खो बैठते हैं । कुछ सर्प दंशन से मरते हैं और कुछ आशंका कुकल्पना के शिकार बनकर अपनी धड़कन बन्द कर लेते हैं । हाथ-पैर सुन्न होते देर नहीं लगती ।

संसार में छह इन्च से लेकर १५ गज तक के चित्र-विचित्र साँप पाए जाते हैं । इनमें से सिर्फ १५ प्रतिशत जहरीले होते हैं । बाकी तो रस्सी का खिलौना जैसे कीड़े-मकोड़े जैसी प्रकृति के प्राणी मात्र होते हैं ।

साँप के काटने से संसार भर के वर्ष भर में पन्द्रह हजार आदमी मरते हैं । किन्तु आदमी एक साल में ५० हजार साँप मार डालता है । १५ हजार जहरीलों में से भी कितने काटने के लिए कुसूरमन्द थे, यह नहीं कहा जा सकता । साँप बेकसूरों को काटता है यह कहना बहुत अंशों में सही है । पर यह कथन और भी अधिक सत्य है कि अधिकांश बेकसूर साँप डरे हुए आदमियों द्वारा मारे जाते हैं ।

साँप शिकार को निगलता है । चबाने लायक उसके दाँत नहीं होते । छोटे साँप एक बार का निगला हुआ एक सप्ताह में पचा पाते हैं । बड़े साँप भी हिरन या बकरी जैसी बड़ी शिकार पकड़ लेते हैं, पाँच महीने में पचा जाते हैं । बाकी दिन वे ऐसे ही लोट-पोट करने में गुजारते हैं । कोबरा जैसे जहरीले और क्रोधी साँप भी तब हमला बोलते हैं, जब सामने से किसी छेड़छाड़ का खतरा देखते हैं । औसत साँप एक घण्टे में दो तीन मील की चाल से दौड़ सकता है । यदि होश-हवाश दुरुस्त हो तो कोई भी दौड़ में उसे पीछे छोड़ सकता है । उसकी डरावनी सूरत अथवा काल रज्जु की मान्यता ही ऐसी है, जो डरे हुए आदमी को खड़ा कर देती है, ताकि वह मजे में उसे काटकर भाग जाये ।

बुरे साँपों की अपेक्षा भले साँप अपेक्षाकृत अनेक गुने अधिक होते हैं । दक्षिण अमेरिका के रैड इण्डियनों का साल में एक दिन सर्प पर्व होता है । वे जहाँ भी साँपों का निवास समझते हैं, वहाँ चावल लेकर निमन्त्रण देने जाते हैं । पत्थर की एक छोटी गद्दी उनका पूजा स्थान है । पर्व के दिन सैकड़ों सर्प उस पत्थर के आस-पास जमा हो जाते हैं । उन्हें रैड इण्डियन हाथ से पकड़कर बाहर निकालते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं और मक्का के दाने से बनी हुई खीर खिलाते हैं । दिन भर यह क्रम चलता है । इस अविश्वसनीय दृश्य को देखने के लिए उस क्षेत्र के गोरे अपने ट्रकों और मोटर गाड़ियों में बैठ कर आते हैं । दिन भर दृश्य देखकर शाम को लौटते हैं, तब साँप भी विदा हो जाते हैं । दूसरे दिन ढूँढ़ने पर भी एक नहीं मिलता । यह पर्व सैकड़ों वर्षों से चला आ रहा है पर आज तक एक भी दुर्घटना नहीं हुई ।

ग्रीक द्वीप सीफालोनिया में मार्कोपोलो एवम् अर्जीनिया नामक गाँव के समीपस्थ होली स्नेक गिरने में ६ अगस्त की निश्चित तिथि को, जो वर्जिन मेटी का दिन है, बिना बुलाए ही सैकड़ों सर्प मरियम के चित्र का दर्शन करने आते हैं और १५ अगस्त, जो ईसामसीह का दिन है, तक वहाँ रहते हैं । मूर्ति के चरणों पर लोटते रहते हैं । दर्शकों में से कितने ही वहाँ आए, वे उनमें से किसी की ओर ध्यान नहीं देते ।

इस आश्चर्य पर उस देश में भी अविश्वास करने वाले कम नहीं हैं, इसलिए कुछ वर्ष पूर्व इस दृश्य की एक फिल्म बनाई गई है ताकि १० दिवसीय इस आश्चर्यजनक दृश्य को अविश्वासी लोग भी देख सकें ।

भारत में नाग पंचमी सर्दी का त्योहार है । शेषनाग के फन पर पृथ्वी रखी हुई है ऐसी मान्यता है । उस दिन सर्प का दर्शन शुभ माना जाता है । कहते हैं कि नाग पंचमी को कोई सर्प किसी को नहीं काटता । सर्पों से भय वस्तुतः अवास्तविक है । वे भी भले जीव हैं, इस प्राणी जगत के ही एक अंग हैं ।

'नाग-पाश' को मृत्यु का आयुध माना गया है । इससे लोकमान्यता का पता चलता है, जिसमें यह समझा गया है कि साँप मृत्यु का पर्यायवाचक है, पर वस्तुतः इस किंवदन्ती में वास्तविकता कम और भ्रम अधिक है । दर्शनशास्त्र में 'रस्सी का साँप' समझे जाने का भ्रम उदाहरण अक्सर प्रस्तुत किया जाता है । उस कथन का मन्तव्य कुछ भी हो पर बात वास्तविकता से मिलती-जुलती है । साँपों में से काटने पर मृत्यु उत्पन्न करने वाले बहुत ही कम होते हैं । उन अपवादों को छोड़कर शेष तो अन्य छोटे प्राणियों की तरह निरीह ही होते हैं । उनकी चमक, सुन्दरता, स्फूर्ति और आकर्षक बनावट को देखकर लगता है प्रकृति ने उन्हें खेलने योग्य खिलौना बनाया है । वे मनुष्य के लिए हानिकारक कम और लाभदायक ज्यादा हैं । वे ऐसे कीड़े-मकोड़े को खाते और भगाते रहते हैं, जो मनुष्य के लिए तथा उपयोगी पेड़-पौधों के लिए हानिकारक होते हैं । इस प्रकार साँप की उपयोगिता भी है । नाग पंचमी को दूध पिलाने और साँप को देवता मानने की प्रथा का प्रचलन इसी प्रयोजन के लिए हुआ है ।

साँपों के सम्बन्ध में प्रचलित अज्ञान को यदि हटाया जा सके और उनकी प्रकृति एवं उपयोगिता के सम्बन्ध में अधिक समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि सृष्टि का यह सुन्दर प्राणी अन्य जीवधारियों की तरह ही सृष्टा की सुन्दर संरचना का एक आकर्षक प्रमाण है ।

साँपों की अधिक जातियाँ अण्डमान निकोबार में देखने को मिलती हैं ? क्योंकि वहाँ इनके पलने का पूरा-पूरा अवसर उपलब्ध है । साँपों में बड़े विचित्र किस्म के साँप देखने को मिलते हैं, जिनमें 'टाइफ्लस' साँप की विचित्रता यह है कि यह आँखें कमजोर होने से रास्ता खोजने में असमर्थ होता है । यह जीभ और नाक जो अति सम्वेदनशील होती है के सहारे रास्ता खोज लेता है । पहले यह जीभ को बाहर फेंककर, पुनः उसी जीभ को तालू से लगाकर मस्तिष्क को सन्देश भेजकर संग्रहीत जानकारी देकर मार्ग एवं आस-पास की वस्तुओं की जानकारी प्राप्त कर लेता है । इन साँपों की आँखें भी सम्वेदनशील होती हैं, जो धरती एवं पानी पर कम्पनों से दिशासात करके शत्रु अथवा रास्ते की जानकारी प्राप्त कर लेते हैं । साँपों की घ्राणेन्द्रियाँ तेज होती हैं । कभी-कभी अपने सताने वालों की गन्ध लेकर वे अपना बैर पूरा करते भी पाए जाते हैं, लेकिन ऐसा सभी किस्म के साँप नहीं करते ।

साँप अंडे जरूर देता है लेकिन उसका रक्त ठंडा होने से वह उन्हें सेने में समर्थ नहीं है । कई बार साँप स्वयं ही अपने अंडे भी खा जाता है । अब तक यही मान्यता थी कि साँप मात्र अंडे देता है । लेकिन कुछ साँप बच्चे भी देते हैं । जो साँप बच्चे देते हैं उन्हें १५ से २८ सप्ताह तक का समय लगता है । अंडे देने वाले साँप ४ से लेकर १०० तक अंडे देते हैं ।

विषहीन साँप मेंढकों को पकड़ते हैं, जब मेंढक शरीर फुला लेता है । इन्हें ऐसे दाँत प्रकृति ने दिए हैं, कि यह इन दाँतों से पंचर करके निगलने योग्य बना लेता है । प्रकृति ने इनकी आत्मरक्षा और भोजन प्राप्ति हेतु तेज गति, साहस, सूझ-बूझ, चालाकी, पेड़-पौधों, मिट्टी से मिलता-जुलता रंग देकर इनके वंश को विनाश से बचा लिया है ।

नवम्बर, १९७६ में सर्प विद्या सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन बेनेजुएला (दक्षिण-अमरीका) के कैराकास नामक स्थान पर हुआ था, जिसमें भारत, अमेरिका, जापान, यूरोप और कई अरब देशों के २०० से अधिक सर्प विद्या विशेषज्ञ एकत्रित हुए । उसी समय विलियम हास्ट नामक व्यक्ति ने भारतीय काले नाग के मुँह में अपनी अँगुली डाली और निकाल ली । उसे साँपों को पालने की विशेष रुचि है । उसके यहाँ देशी एवं विदेशी कई प्रकार के सर्प देखने को मिलते हैं । एक सौ तेईस बार उसे जहरीले सर्प काट चुके हैं, लेकिन उसके ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

२.३६ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

पोर्ट एलिजाबेथ (अफ्रीका) में जॉन नाम का व्यक्ति एक चिड़ियाघर में साँपों की देखभाल करता है । उसने दावा किया है कि मैं साँपों के साथ एक कोठरी में ७० घण्टे निरन्तर रह सकता हूँ । कोठरी में लगभग १०० साँप होते हैं । ४८ घण्टे तो वह सर्पों के साथ रह चुका है, लेकिन इससे अधिक समय तक रहने का उसने दृढ़ निश्चय किया है । जॉन को कई बार विषधर सर्पों ने काटा है, लेकिन उसके शरीर पर जहर का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है । एक बार तो उसे 'कोबरा किंग' ने भी काटा है, लेकिन उसकी मृत्यु नहीं हो पाई । यह वस्तुत: आश्चर्य का ही विषय है । एक बार एक व्यक्ति को सर्प ने काटा तो वह जॉन के पास आया । जॉन ने काटे हुए हिस्से पर अपना मुँह लगा दिया और सारे जहर को खींचने में सफल रहा और उस व्यक्ति को नया जीवन दिया । वह सर्पों के साथ नेकर बनियान में रहता है । अब तो उसने १०० घण्टे सर्पों के साथ व्यतीत करने का निश्चय किया है ।

इसी प्रकार आस्ट्रेलिया की कुमारी सैनी को साँपों को पालने की बड़ी रुचि है । जहरीले से जहरीले सर्पों को भी वह अपने गले में डाले रहती है । कमर में पेटी के स्थान पर सर्प को ही लपेटे मिलेगी । जब भी कभी उसे देखें तो छोटा-मोटा सर्प उसकी जेब में पड़ा हुआ मिलेगा । रात को वह अजगर का तकिया लगाकर सोती है । उसने निश्चय किया है कि वह आजीवन सर्पों के समाज में रहेगी, क्योंकि सर्प भी उसे अपरिमित प्रेम करते हैं ।

महाराष्ट्र-पर्यटन विकास निगम में नौकरी कर रहे २८ वर्षीय नीलम कुमार ने ७२ विषैले सर्पों के बीच ७२ घण्टे रहकर एक अनूठा कीर्तिमान स्थापित किया । बाद में इस कीर्तिमान को केरल के ही एक युवक ने तोड़ा । इसके पूर्व मई १९७१ में पीटर स्लेमैन ने दक्षिण अफ्रीका के जोहान्सबर्ग में १८ विषैले और ६ अर्ध विषैले साँपों के साथ ५० दिन गुजार कर कीर्तिमान स्थापित किया था, लेकिन हर २४ घण्टे बाद वे आधे घण्टे आराम करने के लिए बाहर निकलते थे । उनका कक्ष २११ × २१/४ मीटर माप का था । नीलम कुमार ने इससे ४ प्रतिशत अधिक क्षेत्रफल वाला काँच का कक्ष अपने इस प्रयोग के लिए लिया तथा ७२ घण्टे में एक सैकिण्ड के लिए भी बाहर नहीं निकले । सर्पों की संख्या भी स्लैमैन से चार गुनी थी । अत: विशेषज्ञों ने स्लैमैन और नीलम कुमार को क्रमश: ९०० और १५१२ अंक दिये ।

यह प्रदर्शन नीलम कुमार ने २० से २३ जनवरी १९८० की अवधि में किया । २० जनवरी को ३ बजकर ५५ मिनट पर नीलम कुमार ने जिस काँच के कक्ष में प्रवेश किया उसमें कलकत्ता सर्प उद्यान के मालिक दीपक मित्रा ने ३६ नाग, १२ करैत तथा २४ गोनस सर्प छोड़ रखे थे । नीलम कुमार की सुरक्षा के लिए हर तरह के प्रयत्न किए थे । कक्ष के बाहर पुलिस, पत्रकारों तथा दर्शकों की भारी भीड़ रही ।

२१ जनवरी को एक नाग तथा एक करैत आपस में लड़कर मर गए । मृत सर्पों को निकालकर उन्हीं की जाति के दो साँपों को अन्दर किया गया । दोपहर की गर्मी बढ़ने पर कई साँप खतरनाक मुद्रा में फन उठाकर नीलम कुमार को घूरने लगे । सर्पों के चलने में गति आ गई । गर्मी कम करने के लिए फुहारा दिया गया ।

बम्बई के दो सर्प विशेषज्ञ श्रीमती नीलिमा तथा जी डीसा और दीपक मित्रा हर क्षण निगरानी करते रहे । नीलम कुमार के सोने पर उनके शरीर पर ३२ साँप रेंगकर चढ़े और धीरे से उतर भी गए । २२ जनवरी को दर्शकों में से कुछ ने यह कहा कि साँपों को विषरहित कर दिया गया है । साँपों को विषरहित साबित करने वाले के लिए नीलम कुमार ने १० हजार रुपये इनाम देने की घोषणा की, लेकिन यह साबित करने की किसी की हिम्मत न हुई । दीपक मित्रा ने एक नाग निकालकर अपने हाथों से उसका मुँह खोलकर पत्रकारों तथा दर्शकों को उसकी विष ग्रन्थि दिखायी । २३ जनवरी को ३ बजकर ५५ मिनट में नीलम कुमार को एक करैत साँप की माला पहनाकर स्वागत किया गया और कक्ष से बाहर निकाला गया । जहाँ नीलम कुमार की माँ श्रीमती ऊषा ताई जो ७८ घण्टे से घर में बैठकर बेटे की सुरक्षा के लिए प्रार्थना कर रही थीं ने अपने बेटे को गले से लगा लिया ।

पिछले दिनों नीलम कुमार के पास एक अजगर तथा डेढ़ सौ साँप थे, जिन्हें उन्होंने अपने घर में ही एक सुरक्षित स्थान पर पाल रखा था । साँपों के शौक के बारे में पूछने पर वे बताते हैं कि बचपन में एक बार उनके कमरे में एक जहरीला साँप घुस आया था जिसे लेकर वे बड़े प्यार से आफिस में गए हुए थे । मैनेजर तो घबड़ा गया, नीलम के साँपों को साथी बनाने की यही शुरूआत थी ।

'रस्सी का साँप' समझने में तो कभी-कभी ही भूल होती है, पर साँपों को मृत्यु का दूत मानने की भ्रान्ति तो एक प्रकार से लोकमान्यता ही बन गई है । ऐसी-ऐसी अगणित भ्रान्तियों का जंजाल मनुष्य के मस्तिष्क पर चढ़ा रहता है, इससे छुटकारा पाया जा सके तो भय के स्थान पर सौन्दर्य के दर्शन करने का आनन्द सहज ही उठाया जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साँप से न तो भयभीत हों, न उसके जैसा बनें

संसार के जल-थल में कितने साँप रहते हैं ? यह कहना तो कठिन है । निश्चय ही वे मनुष्यों से कहीं अधिक होंगे । विषैले सर्पों का काम मनुष्यों को काटना और मार डालना ही नहीं है । वे भी अन्य कीड़े-मकोड़ों की तरह डरपोक होते हैं और आदमी की आहट पाकर बचने, भागने और छिपने का प्रयत्न करते हैं ।

साँप का क्रोधी स्वभाव तो है, पर वह उसे उतारता तभी है, जब कोई उसे छेड़ता, टोकता है अथवा उसे यह अनुभव हो कि मुझ पर आक्रमण होने वाला है, तब वह अपने बचाव के लिए आक्रमण कर बैठता है । यदि जहर ऊँचे दर्जे का हो तो मौत जल्दी हो जाती है, कम शक्ति का विष हो तो अफीम का नशा चढ़ने जैसी खुमारी प्रतीत होती है । ऐसे रोगी पर विष का प्रभाव उपचार से अथवा शरीर की जीवनी-शक्ति द्वारा निरस्त हो जाता है । अति जहरीले साँप अफ्रीका के जंगलों में पाये जाते हैं । देशी साँपों में कोबरा अधिक विषैला माना जाता है, वह फनधर कहलाता है । जब सिर ऊँचा करके लहराता है तो उसके फन पर गाय के खुर जैसा सफेद गोलाकार निशान उभर आता है । इसके नीचे सर्पमणि पाई जाने की किंवदन्ती है । वस्तुतः जन्तुविज्ञान के अनुसार साँप के सिर, फन, मुँह या किसी हिस्से में कोई मणि नहीं होती ।

सर्प की शक्ल देखते ही लोग बौखला जाते हैं और उसे मारने दौड़ते हैं । उसे शत्रु समझा जाता है, पर वह साथ ही मित्र भी है । बुद्धिमतापूर्वक पाला जाय तो शत्रु प्रतीत होने वाले से भी मित्र जैसा लाभ उठाया जा सकता है । साँप के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियाँ हैं । वह खजानों की रखवाली करता है । उसे सपने में देखा जाता है तो मृत्यु का संदेश समझा जाता है । इन सभी बातों में कोई सच्चाई नहीं है । खजाना पहचानने की बुद्धि उसमें कहाँ है ? सीलन भरे अँधेरे स्थानों में कीड़े-मकोड़े अधिक होते हैं, उनसे अपना पेट भरने के लिए ऐसे स्थानों में जा पहुँचता है । कभी संयोगवश वहाँ किसी को खजाना मिल गया होगा और तभी से यह किंवदन्ती चल पड़ी होगी कि सर्प खजाने की रखवाली करता है ।

छोटे-कीड़े को खाना और पचाना उसके लिए सरल है । इसलिए वह जिन खेतों, घरों, झोपड़ी, झाड़ियों में जा विराजता है, वहाँ उसकी गंध पाते ही हानिकारक कीड़े भाग खड़े होते हैं या उसकी खुराक बन जाते हैं । चूहे आदि बड़े जन्तुओं को भी वह खाकर हमारी हानि बचाता रहता है । इतना लाभ तो प्रत्यक्ष ही है कि उसे देखने या गंध पाने पर कीड़े उसके इर्द-गिर्द से पलायन कर जाते हैं ।

साँप के मुँह में कदाचित पूँछ में भी जहर पाया जाता है । इसे काट-पीटकर कहीं-कहीं लोग मध्य भाग की तरकारी बनाते व उसे खाते हैं । जहर मनुष्य की जीभ में भी होता है । कटुभाषियों, अपमान, निंदा, चुगली आदि की आदत पड़ने पर मित्रों की संख्या घटती और शत्रुओं की बढ़ती जाती है, तब उससे वे साँप की तरह बचते हैं या उसका सिर कुचलते हैं ।

हमारी दुर्दशा दुमुँहे साँप जैसी न हो

दक्षिणी अफ्रीका के पोर्टएलिजाबेथ के अजायबघर में एक दो मुँह का साँप था । वह खाता तो दो मुँह से था पर पेट एक ही था । एक दिन साँप के दोनों फन आपस में लड़ने लगे और एक-दूसरे पर आक्रमण करने लगे । उस दिन पहरेदार ने उसे देख लिया और हस्तक्षेप करके लड़ने से रोक दिया, पर वे द्वेष मन में बसाते और बढ़ाते ही चले गए, फनों में आये दिन खटपट होती रहती और पहरेदार बीच-बचाव करता रहता । अन्त में अवसर पाकर दोनों फिर आपस में बुरी तरह जूझ पड़े और तब छूटे जब उनकी जान चली गई ।

एक ऐसा ही दुमुँहा सर्प न्यूयार्क के अजायबघर में था उसका नाम प्रोवेल्टिस रखा गया था । दर्शकों का वह प्रमुख आकर्षण था । संरक्षक जब उसे दूध पिलाने आते तो दोनों फन खुद पी जाने और दूसरे को न पीने देने के लिए झगड़ते । इसका बीच-बचाव करने के लिए संरक्षक को दो प्याले दो दिशाओं में रखने पड़ते या फिर दोनों फनों के बीच एक दफ्ती का टुकड़ा खड़ा करना पड़ता ताकि एक-दूसरे को देख न सकें और शान्तिपूर्वक पेट भर लें । इस साँप के दोनों मस्तिष्क पृथक्-पृथक् ढंग से सोचते थे । एक पूर्व को चलना चाहता था तो दूसरा पश्चिम को । इस खींचतान में शरीर की बुरी तरह दुर्गति होती थी । दोनों मस्तिष्कों के साथ जुड़े हुए ज्ञान तन्तु विलक्षण स्थिति में होते । दोनों की परस्पर विरोधी आज्ञाएँ एक ही समय में किस प्रकार पालन की जायें इसका कोई हल न निकलने पर शरीर बुरी तरह इठता, अकड़ता, खिंचता, टूटता और थककर चूर-चूर होता हुआ दीखता था ।

थाईलैण्ड के अजायबघर में ठीक ऐसा ही एक दो सिर का कछुआ था । वह भी उपरोक्त सर्पों की तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिड़ियाघर में रखा गया था और उसी को सबसे पहले देखने के लिए दर्शक आतुर रहते थे । यह सिर एक ही ओर नहीं थे वरन् विपरीत दिशाओं में थे । अगले पैर उस सिर का हुक्म मानते थे जो उनके समीप होता था । दोनों और बढ़ने के लिए दोनों पैर जोर लगाते थे । फलस्वरूप बीच के धड़ की रस्साकसी जैसी खींचतान होती रहती थी । बेचारा कछुआ कोल्हू का बैल बना एक ही जगह आगे-पीछे चलने-लौटने की हरकतें करता रहता था ।

इन दोमुँहे साँप और कछुओं की मूर्खता पर हँसी आती है कि वे अपने ही एक अंग को अपना प्रतिद्वन्द्वी मानकर उस पर आक्रमण करने की नासमझी में अपने को ही हानि पहुँचाते रहे और विज्ञ लोगों की दृष्टि में उपहासास्पद बनते रहे ।

हम सब शारीरिक दृष्टि से तो दुमुँहे साँप जैसी आकृति के नहीं हैं, पर प्रकृति लगभग उसी प्रकार की है । अपने ऊपर आप ही निरन्तर आक्रमण करते रहते हैं और अपने हाथों इतनी हानि पहुँचाते हैं, जितनी कि शत्रु समझे जाने वाले लोग सब मिलकर एकबारगी आक्रमण करके भी नहीं पहुँचा सकते । आहार-विहार की अनियमितताएँ अपनाकर अपना स्वास्थ्य अपने आप ही हम नष्ट करते हैं । जीभ की लिप्सा से पेट खराब होता है और कामुकता की अति जीवन रस को निचोड़कर गन्दी नाली में बहा देती है । फिर खोखले शरीर से जिन्दगी की भारी भरकम लाश को ढोना कठिन हो जाता है । चिन्तन की भ्रष्टता, दृष्टिकोण की निकृष्टता अपनाकर हँसी-खुशी का हल्का-फुल्का जीवन जी सकना असम्भव हो जाता है ।

दूसरे हमसे घृणा इसलिए करते हैं कि हम अपने आप से घृणा करते हैं । संसार में हमारी उपेक्षा, अवज्ञा इसलिए हुई कि हमने स्वयं अपना सम्मान नहीं किया । हम आप ही अपने काटने-गिराने में लगे रहे, अपने हाथों आत्महत्या करते रहे और इस कष्टप्रद एवं उपहासास्पद स्थिति में पड़े हैं जिसमें रहकर दुमुँहे साँप दुर्दशा भुगतते हैं ।

पतन क्यों–उत्थान कैसे?

जीवित वे रहते हैं जो सतर्क रहते हैं और सामयिक परिस्थितियों से जूझने का साहस करते हैं, जिन्होंने प्रमाद बरता और सरलता का जीवन जीने की राह ढूँढ़ी, उन्हें यह आरामतलबी बहुत महँगी पड़ी है । प्रकृति की विघातक शक्तियाँ इसी फेर में रहती हैं कि कब किसे बेखबर और कमजोर पाएँ और किसे कब कैसे धर दबोचें ? यह संसार कुछ ऐसा ही विचित्र है, यहाँ उपयोगी का चुनाव वाला कम काम करता रहता है और जो संघर्ष से बचता, डरता पाया जाता है उसी पर विपत्ति का कुल्हाड़ा चलने लगता है । सरलता और सुविधा के फेर में जिन्होंने अपनी सतर्कता, संघर्षशीलता गँवा दी उन्हें देर-सबेर में अपने अस्तित्व से भी हाथ धोना पड़ता है ।

रूस की विज्ञान एकेडमी के पुराजीव संग्रहालय में लाखों वर्ष पुराने जीव-कंकालों का संग्रह किया गया है । इनमें सबसे बड़ा कंकाल सारोलोफ वर्ग की एक विशालकाय 'डिनोसार' का है, जो २३ फुट ऊँचा है । यह मंगोलिया में पाया गया था । ऐसी प्रागैतिहासिक दुर्लभ वस्तुएँ उसी क्षेत्र में मिली हैं । मंगोलिया में समुद्र की सतह से कोई ३२०० फुट ऊँचा एक पठार है । समुद्री हलचलों से वह स्थान पिछले १० करोड़ वर्षों से सुरक्षित रहा है । वहाँ का गोबी रेगिस्तान चिर अतीत की भौगोलिक गाथाओं और जीव इतिहास की महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ अपनी छाती में छिपाए बैठा है । अन्वेषकों का बहुत ध्यान इस क्षेत्र पर है । उपरोक्त कंकाल वहीं से मिला है ।

किसी समय मनुष्य भी अब की अपेक्षा काफी लम्बे तगड़े थे, पर उनमें बुद्धि की कमी रही, प्रकृति के अवरोधों से अपना बचाव करने की बात न सोच सके । फलतः उनकी विशेषताएँ घटती चली गईं । लुप्त होने से जो बच सके तो उनकी पीढ़ियाँ कद और वजन की दृष्टि से हल्की होती चली गईं और वही स्थिति अब तक चली आ रही है ।

सन् १९३९ में जावा-इण्डोनेशिया में सोलो नदी के किनारे खुदाई करते हुए पुरातत्ववेत्ता वान क्योनिंगबाल्ड को एक ऐसा मनुष्य का जबड़ा मिला था, जो बताता था कि प्राचीनकाल के मनुष्य अबकी अपेक्षा काफी लम्बे-चौड़े थे । उन्हें दो वर्ष बाद सन् १९४१ में उससे भी बड़ा जबड़ा प्राप्त हुआ जिससे पता चलता है कि भूतकाल के दैत्याकार मनुष्यों की जैसी किंवदन्तियाँ प्रचलित हैं वे निराधार नहीं हैं ।

दैत्याकार मानवों के शोध प्रसंगों में चीन के विभिन्न स्थानों पर कुल मिलाकर मानव प्राणी के ४७ दाँत ऐसे मिले हैं जो अब के मनुष्यों की तुलना में छै गुने बड़े हैं । दैत्याकार अस्थि-पिंजरों के टुकड़े प्रायः चार लाख वर्ष पुराने माने गए हैं । इन अस्थियों से एक और रहस्योद्घाटन होता है कि पुराने समय में जबड़े बड़े थे और मस्तिष्क का आकार जैसे-जैसे बढ़ा वैसे-वैसे जबड़ा छोटा होता चला गया । पंख युक्त होते हुए भी उड़ सकने की क्षमता से रहित पक्षियों में मोआ, कही, कीवी, कैसोवरो, एमू, शुतुरमुर्ग और पैनगुइन मुख्य हैं । यों पालतू मुर्गे और मोर भी धीरे-धीरे अपने उड़ने की क्षमता खोते चले जा रहे हैं । इस प्रकार के और भी कुछ पक्षी हैं, जिनका स्वाभाविक वजन बढ़ता जा रहा है और वे उड़ने की दृष्टि से अपंग होते चले जा रहे हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न्यूयार्क के म्यूजियम आफ नेचुरल हिस्ट्री में पिछले दिनों न्यूजीलैण्ड में पाए जाने वाले मोआ पक्षी का अस्थि-पिंजर रखा है । इसकी ऊँचाई १३ फुट थी और वजन ५०० पौण्ड । यह पक्षी अपने उड़ने की क्षमता खो चुका था ।

अमेरिकी शुतुरमुर्ग 'कही' भी भूमिचारी था, नर के साथ ८-१० मादायें रहती थीं । मादाएँ वन-विहार करती हैं और नर सबके अंडे-बच्चे सँभालने घर पर रहता था । उसे चारे-दाने के लिए तभी बाहर जाने का अवसर मिलता था जब मादाएँ उसे वैसी सुविधा और आज्ञा प्रदान कर दें ।

न्यू गायना में पाया जाने वाला कैसेवरी धरती पर सुविधाजनक रीति से आहार पाकर संतुष्ट हो गया और उसने उड़ने का परिश्रम करने से जी चुराना शुरू कर दिया । फलस्वरूप उसकी उड़न शक्ति विदा हो गई और धरती पर रहने वाली लोमड़ियाँ उसे चट कर गईं । यही हाल आस्ट्रेलियाई एमू का हुआ । दौड़ने की क्षमता गँवा बैठने के बाद उसे अक्ल आई, तब उसने तेज दौड़ने का अभ्यास करके किसी प्रकार जान बचाने की तरकीब लड़ाई, इससे भी काम नहीं चला, जो एक बार हारा सो हारा । धूर्त शिकारियों ने उनका अस्तित्व निर्दयतापूर्वक मिटा ही डाला । गोल गेंद जैसे कीवी अब कुछ ही दिन में धरती पर से उठ जाएँगे । आलसी नर घर पर पड़ा-पड़ा अंडे बच्चे सेता रहता है । बेचारी मादा को ही आहार जुटाने के लिए भी दौड़-धूप करनी पड़ती है । ८० दिनों में जब तक पिछले बच्चे उड़ने योग्य हो पाते हैं तब तक मादा पर नए बच्चे देने का भार आ पड़ता है । इस प्रकार वह प्रजनन का ही कष्ट नहीं उठाती, परिवार का पेट पालने में भी मरती खपती है । नर को आलस मारे डाल रहा है और मादा की जान अति भारवहन से निकली जा रही है । इस असुतंलन का परिणाम सामने है । यह सुन्दर पक्षी, पंख तो पहले ही गँवा चुका था अब प्रकृति के निर्दय रंगमंच पर अपनी सत्ता भी समाप्त करने जा रहा है ।

प्रकृति के साथ संघर्ष करने में जो प्राणी साहस और सतर्कता के साथ संलग्न हैं, उन्हें अतिरिक्त परिश्रम तो करना पड़ता है पर अपने अस्तित्व को भली प्रकार अक्षुण्ण रखे हुए हैं ।

कुछ बतखें जल तट पर नहीं पेड़ों पर अंडे देती हैं और जब बच्चे कुछ समर्थ हो जाते हैं तो उन्हें पीठ पर लाद कर पेड़ से नीचे लाती हैं । हिप्पो, समुद्री ऊदविलाव भी अपने बच्चों को पीठ पर लादते हैं । मादा बिच्छू की पीठ पर तो तीस की संख्या तक लदे देखे गये हैं । चलते समय जो गिर गये उन्हें उठाकर फिर पीठ पर लादने का काम भी मादा को ही निपटाना पड़ता है । चमगादड़ के बच्चे अपनी माँ की गरदन पकड़कर लटके रहते हैं । कंगारू के बच्चे माता के पेट से सटी हुई थैली में बहुत दिनों तक गुजर बसर करते हैं ।

गिनी, चकमों और हेमड्रेन वानर मिस्र और एबीसीनिया में धार्मिक श्रद्धा के पात्र समझे जाते हैं । दक्षिणी एबीसीनिया में पाये जाने वाले गेलेडा जब समूहबद्ध युद्ध करते हैं, तब उनका रण-कौशल मनुष्य युद्ध-विद्या विशारदों के लिए भी देखने समझने योग्य होता है । लगता है कि चक्रव्यूह विद्या के अनेक पक्षी अभिमन्यु की तरह गर्भ में से ही सीखकर आये हों । उनका रौद्ररूप देखकर आक्रमणकारी चीता भी दुम दबाकर भागता है ।

कृमि-कीटकों की प्राय: ५० लाख जातियाँ इस पृथ्वी पर होने का अनुमान है । इनमें से २० लाख की खोज-खबर मनुष्य द्वारा अब तक ली जा चुकी है । संसार में आँखों से दीख पड़ने वाले जितने जीवधारी बसते है, उनमें से ८५ प्रतिशत यह कीट-पतंगे ही हैं ।

आत्मरक्षा, ऋतु प्रभाव और आहार उपलब्धि एवं वंशवृद्धि की समस्याओं को सुलझाने के लिए उन्हें अपनी आकृति-प्रकृति में सृष्टि के आदि से लेकर समयानुसार अनेक परिवर्तन करने पड़े हैं । परिस्थितियाँ उनकी इच्छानुसार नहीं बन सकती थीं तो अपने आपको उन्होंने बदलना, सँभालना आरम्भ किया फलस्वरूप अभावग्रस्तता, असुविधा और भयानक परिस्थितियों से अपने अस्तित्व को बचाये रहना उनके लिए सम्भव हो सका ।

हवा और पानी के प्रवाह में वे अक्सर कहीं से कहीं पहुँच जाते हैं । परिव्रजन आकांक्षा से प्रेरित होकर भी रेंगते, फुदकते, उड़ते दूर-दूर की ऐसी यात्राएँ कर लेते हैं, जहाँ अनभ्यस्त आहार और अजनबी वातावरण में ही निर्वाह करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रहता । तब प्रकृति उनके शरीरों में तेजी से परिवर्तन करती है और इस लायक बना देती है कि वे नये वातावरण में गुजर कर सकें ।

कछुआ प्रकृति ने जलचर के रूप में बनाया है, वह जलाशयों के समीपवर्ती तटों पर भी रह सकता है । पर जब उसे परिस्थितिवश कठोर पर्वतों पर रहना पड़ा तो वह पाषाण कच्छप के रूप में बदल गया और चट्टानों के बीच ही निर्वाह करने लगा । बिलों में रहने वाला सर्प आहार की सुविधा के लिए जलाशयों की मछलियाँ आसानी से प्राप्त करने लगा तो उसने जलचर बनना अंगीकार कर लिया और जल सर्पों की जातियाँ अस्तित्व में आईं ।

आक्रमणकारियों से अपना बचाव करने और शिकार पकड़ने के दाँव-पेंच सफल बनाने के लिए इन कीड़ों ने पौधों की पत्तियों में छिपे रहने योग्य काय-कलेवर का रंग-रूप आवश्यक समझा । तदनुसार अधिकांश कीड़े घास-पात की हरियाली में छिप सकने जैसे रंग-रूप के बन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गये । फूलों पर उड़ने वाली तितलियों का रंग-रूप प्राय: वैसा ही रंग-बिरंगा हो गया । जिराफ की चमड़ी के दाग-धब्बे ऐसे होते हैं, जिससे वह दूर से देखने वालों को झाड़ी मात्र प्रतीत हो ।

सींग, विषदंश, दाँत, पंजे प्राय: इसी आधार पर बने हैं कि वे अपना आहार सरलतापूर्वक पकड़ने और खाने में सफल रहें । पेट के पाचन यंत्रों में भी इसी आधार पर विकास परिवर्तन होता रहा है ।

दुर्बलकाय सीप और घोंघे, शंख, शम्बुक, कौड़ी जाति के कीड़ों ने आत्मरक्षा का एक उपयोगी उपाय सोचा है—अपने चारों ओर एक मजबूत कवच का निर्माण करना । वे अपने शरीर में से ही एक अजीब किस्म का रस निकलते हैं और उसकी परतें शरीर के चारों ओर चढ़ाते चले जाते हैं । समयानुसार यह परत इतनी मजबूत हो जाती है कि शिकारी जल जीव इनका कुछ भी बिगाड़ नहीं कर पाते और सुरक्षित शान्तिपूर्ण जीवनयापन करते हैं । इन कीटकों की कुशलता उन पर चढ़े कवचों की आकर्षक सुन्दरता के रूप में दर्शकों का मन मुग्ध करती है ।

जो हो इस विश्व में सजगता, समर्थता और सक्रियता का अपना महत्व है, इन्हें गँवाकर जो आलसी बनते है, असावधान रहते हैं उनकी सुविधा को प्रकृति सहन नहीं कर सकती और एक दिन झल्लाकर छीन ही लेती है । उसे तो पुरुषार्थ और संघर्ष ही भाता है ।

आरामतलबी व आलसीपन प्रकृति के विरुद्ध

सुगम सुविधाजनक, आरामतलबी की जिन्दगी आज के आदमी का लक्ष्य बनी हुई है । वह अधिक से अधिक शौक-मौज से भरे-दिन काटना चाहता है और विलासिता में निमग्न रहने का साधन ढूँढ़ता है । तथाकथित बड़े लोगों की आजकल यही प्रवृत्ति है । वे अधिक धन और सुविधा-सामग्री इसी प्रयोजन के लिए जमा करते हैं ।

छोटा कहा जाने वाला वर्ग धन की कमी की बजह से नहीं, उत्साह और उमंगों की दरिद्रता के कारण छोटा है और दिन-दिन और भी अधिक गिरता जाता है । उसे आलस्य और प्रमाद खाए जाता है । जब भूख विवश करती है तो कुछ करने को खड़ा होता है और उतने ही हाथ-पैर हिलाता है जितने के बिना कि पेट का गड्ढा नहीं भरता । इसके बाद उसे भी आलस्य-प्रमाद, व्यसन आदि झगड़े, गप-शप और आवारागर्दी की सूझती है । अपने आपके सम्बन्ध में बेखबर यह लोग कितना गन्दा गलीज जीवन क्रम अपनाये रहते हैं यह देखकर दया आती है, आवारागर्दी के समय को यदि वे शरीर, वस्त्र, मकान और जो कुछ उनके पास है उसे स्वच्छ बनाने में ही लगा लिया करें तो इतने मलीन तो न दीखें । पिछड़ेपन में निर्धनता और अशिक्षा भी कारण हो सकता है पर सबसे बड़ा कारण है मानसिक छोटापन । उसी व्यापक छूत की बीमारी को हम इस देश के पिछड़ेपन का मूलभूत कारण भी कह सकते हैं ।

आरामतलबी या आलसीपन यह दोनों ही सजीव चेतन प्राणी की अन्तरात्मा की मूल प्रकृति के विपरीत हैं । यदि अन्त:करण को दुर्बुद्धि ने मूर्छित न कर दिया हो तो उससे सदा साहसिकता का परिचय देने की—शौर्य प्रवृत्ति उमगती रहती दिखाई देगी । बहादुरी और वीरता का प्रतिफल ही सच्चा आनन्द और सन्तोष दे सकते हैं, इसे छोटे पक्षी भी जानते हैं ।

चिड़ियों में बहुत-सी ऐसी होती हैं जो बदलती हुई ऋतुओं का आनन्द लेने के लिये यात्राएँ करती हैं । इसमे उन्हें काफी श्रम करना पड़ता है और भारी जोखिम उठाना पड़ता है तथा मनोयोग का प्रयोग करना पड़ता है, पर वे बेकार झंझट में क्यों पड़ें—चैन के दिन क्यों न गुजारें की भाषा में नहीं सोचतीं वरन् इस प्रकार साहसिकता का परिचय देने में आन्तरिक प्रसन्नता एवं सन्तोष का अनुभव करती हैं । इसके लिए उनमें भीतर से ऐसी उमंग उठती है, जिसे पूरा किए बिना रहा ही नहीं जाता । पेट कहीं भी भरा जा सकता है और दिन कहीं भी काटे जा सकते हैं, यह मरी हुई जिन्दगी है जिसे मनुष्य भले ही पसन्द करे, पर पशु-पक्षियों से लेकर कीट-पतंगों तक कोई भी उसे पसन्द नहीं करता । कुछ चिड़ियाँ तो ऐसी हैं जो अपनी साहसिक यात्राओं द्वारा सम्भवत: मनुष्य को भी उत्साही, परिश्रमी, साहसी और महत्वाकांक्षी होने की प्रेरणा करती हैं ।

सितम्बर के प्रथम सप्ताह में भारत में ऐसे अनेक रंग-बिरंगे पक्षी दिखाई पड़ते हैं, जो गर्मी और बरसात में नहीं थे, यह पक्षी जर्मनी, साइबेरिया, चीन, तिब्बत आदि सुदूर देशों से हजारों मील की लम्बी यात्रा करके आते हैं । तिधारी, चैती, हंसक, पैतरा, सुरखाव, लालसर आदि प्रमुख हैं । इनमें पैर के अँगूठे के बराबर 'स्वेटपेनिकल' जैसे छोटे और २५ पौण्ड भारी आदमकद सारस जैसे बड़े पक्षी भी होते हैं । यह लम्बी यात्रा सप्ताहों तथा महीनों की होती है । आहार की सुविधा, ऋतु प्रभाव से बचाव और सैर-सपाटे का आनन्द यह इस लम्बी यात्रा का उद्देश्य होता है । आश्चर्य यह है कि यह अपनी यात्रा अवधि पूरी करके नियत समय पर ही अपने स्थानों को लौट जाते हैं और अपने पुराने पेड़ों और पुराने घोंसलों में ही जाकर फिर बस जाते हैं । भारत में भी वे मारे-मारे नहीं फिरते वरन् यहाँ भी वे अपने नियत स्थान बनाते हैं और जब तक जीवित रहते हैं प्राय: इन दोनों क्षेत्रों में अपने नियत स्थानों पर ही निवास करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन पक्षियों की लम्बी यात्राएँ, ऊँची उड़ानें आश्चर्यजनक हैं । बागटेल २००० मील की लम्बी यात्रा करके बम्बई के निकट एक मैदान में उतरते हैं और फिर विभिन्न स्थानों के लिए बिखर जाते हैं । गोल्डन प्लावर पक्षी अमेरिका से चलते हैं । पतझड़ में भारत में विश्राम करते हैं फिर थकान मिटाकर अटलांटिक और दक्षिण महासागर पार करते हुए दक्षिण अमेरिका जा पहुँचते हैं । आते समय वे समुद्र के ऊपर से उड़ते हैं और जाते समय जमीन के रास्ते लौटते हैं । अलास्का में उनके घोंसले होते हैं और वहीं अंडे देते हैं । हर वर्ष प्राय: वह दो-ढाई हजार मील की यात्रा करते हैं । पृथ्वी की परिक्रमा तीन हजार मील की है । इस प्रकार वे लगभग पृथ्वी की एक परिक्रमा हर वर्ष पूरी करते हैं । आर्कटिका टिटहरी इन सब घुमक्कड़ पक्षियों से आगे है । उत्तरी ध्रुव के समीप उसका घोंसला होता है । पतझड़ में वह दक्षिण ध्रुव जा पहुँचती है । बसन्त में फिर वापस उत्तरी ध्रुव लौट आती है । जर्मनी के बगुले ४ महीने में करीब ४००० मील का सफर पूरा करते हैं । रूसी बतखें भी ५००० मील की लम्बी यात्राएँ करती हैं । यह पक्षी औसतन २०० मील की यात्रा हर रोज करते हैं । टर्नस्टान इन सबसे अधिक उड़ती है, उसकी दैनिक उड़ान ५०० मील के करीब तक की होती है । साथ ही उसका १७ हजार फीट ऊँचाई पर उड़ना और भी अधिक आश्चर्यजनक है । हाँ समुद्र पार करते समय उड़ने की ऊँचाई तीन हजार फीट से अधिक नहीं होती ।

इन्हें इतनी खतरनाक और कष्टसाध्य उड़ानें उड़ने की उचंग क्यों उठती है ? क्या उनके लिए उड़ान अनिवार्य है ? क्या वे अपने क्षेत्र में गुजारा नहीं कर सकते या वहीं कहीं थोड़ा उड़कर काम नहीं चला सकते ? आखिर ऐसा बड़ा कारण क्या है, जिसके कारण जान-जोखिम में डालने वाला ऐसा कदम उन्हें उठाना पड़ता है ?

पक्षी विज्ञान के विज्ञानियों ने यह पाया है कि बाह्य दृष्टि से उनके सामने कोई ऐसी बड़ी कठिनाई नहीं होती, जिसके कारण उन्हें इतना बड़ा जोखिम उठाने के लिए विवश होना पड़े । आहार की —ऋतु प्रभाव की घट-बढ़ होती रह सकती है, पर दूसरे पक्षी भी तो उन्हीं परिस्थितियों में किसी प्रकार निर्वाह करते हैं । फिर सैलानी चिड़ियों को ही ऐसी विचित्र उमंग क्यों उठती है ? इस प्रश्न का उत्तर उनकी वृक्क ग्रन्थियों में पाये जाने वाले विशेष हारमोन रसों से मिलता है । जिस प्रकार कुछ बढ़े हुए हारमोन अपने समय पर काम-वासना के लिए बेचैनी उत्पन्न करते हैं, लगभग वैसी ही बेचैनी इस प्रकार की लम्बी उड़ान भरने के लिए इन पक्षियों को विवश करती है । वे अपने भीतर एक अद्भुत उमंग अनुभव करते हैं और वह इतनी प्रबल होती है कि उसे पूरा किये बिना उनसे रहा ही नहीं जाता । यह उड़ान हारमोन न केवल प्रेरणा देते हैं, वरन् उसके लिए उनके शरीरों में आवश्यक साधन सामग्री भी जुटाते हैं । पंखों में अतिरिक्त शक्ति, खुराक का समुचित साधन न जुट सकने की क्षतिपूर्ति करने के लिए बढ़ी हुई चर्बी—साथ उड़ने की प्रवृत्ति, समय का ज्ञान, नियत स्थानों की पहचान, सफर का सही मार्ग जैसी कितनी ही एक से एक अद्भुत बातें हैं जो इस लम्बी उड़ान और वापसी के साथ जुड़ी हुई हैं । उन उड़न हारमोनों को पक्षी के शरीर, मन और अन्तर्मन में इस प्रकार के समस्त साधन जुटाने पड़ते हैं, जिससे उनकी यात्रा प्रवृत्ति तथा प्रक्रिया को सफलतापूर्वक कार्यान्वित होते रहने का अवसर मिलता रहे ।

प्रकृति नहीं चाहती कि कोई प्राणी अपनी प्रतिभा को आलसी और विलासी बनाकर नष्ट करे । प्रकृति इन यात्रा प्रेमी पक्षियों को यही प्रेरणा देती है कि वे विभिन्न स्थानों के सुन्दर दृश्य देखें और वहाँ के ऋतु प्रभाव एवम् आहार-विहार के हर्षोल्लास का अनुभव करें । अपनी क्षमता और योग्यता को परिपुष्ट करें ।

मनुष्य में आरामतलबी की प्रवृत्ति इतनी घातक है कि वह कुछ महत्वपूर्ण काम कर ही नहीं सकता, अपनी प्रगति के द्वार किसी को रोकने हों तो उसे काम से जी चुराने की आदत डालनी चाहिये और साहसिकता का त्याग कर विलासी बनने की बात सोचनी चाहिये । ऐसे लोगों को मुँह चिढ़ाते हुए—उनकी भर्त्सना करते हुए ही यह उड़न पक्षी विश्व-निरीक्षण, विश्व-भ्रमण करते रहते हैं—ऐसा लगता है ।

परिणाम फिर भी प्रतिकूल क्यों ?

मनुष्य अपने बुद्धिबल और पुरुषार्थ के अनुरूप सदा से यह प्रयत्न करता रहा है कि उसे अधिक अच्छी परिस्थितियाँ, सुविधाएँ तथा सम्पदाएँ प्राप्त होती चलें । इसके लिए उसने प्रकृति के भौतिक स्तर का ही स्पर्श किया है और तदनुरूप थोड़ा-बहुत लाभ पाया भी है ।

उसे ध्यान नहीं रहा कि प्रकृति का एक अध्यात्म पक्ष भी है । उसमें विकृति आने से दैवी आपत्तियाँ टूटती हैं और किए हुए सारे प्रयत्न देखते-देखते मटियामेट हो जाते हैं । प्रकृति का सूक्ष्म स्तर तब बिगड़ता है जब मनुष्यकृत चेतनात्मक विक्षोभ से पराप्रकृति का अन्तराल विषाक्त हो जाता है ।

सतयुग के —रामराज्य के वर्णन में यह बताया गया है कि उन दिनों प्रकृति अत्यधिक अनुकूल थी, समय पर वर्षा होती थी—वृक्ष, वनस्पतियाँ प्रसन्न होकर फलते थे, मनुष्य दीर्घजीवी थे, दूध-दही की नदियाँ बहती थीं; दैवी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकोपों से किसी को कोई कठिनाई नहीं उठानी पड़ती थी । अकाल मृत्यु से लेकर महामारियों तक का कहीं अता-पता भी नहीं मिलता था । यह इसलिए होता था कि मनुष्यों की सद्भावनाएँ और सत्प्रवृत्तियाँ उत्कृष्ट, उच्चस्तर की बनी हुई थीं ।

कलियुग में तरह-तरह की दैवी विपत्तियों और विकृतियों की सम्भावना का पुराणों में जो पूर्व कथन मिलता है उसका एकमात्र आधार यही है कि जब मनुष्यों का रुझान दुष्कर्मों की ओर होगा तो उसकी प्रतिक्रिया प्रकृति के सूक्ष्म अन्तराल को विषाक्त बनायेगी । फलस्वरूप मनुष्यों को उनका प्रतिफल विपत्तियों के रूप में भुगतना पड़ेगा । सम्पत्तियाँ एवं सुविधाएँ भले ही बढ़ जाएँ पर उन्हें शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, सामाजिक, अन्तर्राष्ट्रीय हर क्षेत्र में घोर विपत्तियों का सामना करना पड़ेगा । इस संकट को बढ़ाने में प्रकृति का प्रकोप भी कम योगदान नहीं देगा । कलियुग के सविस्तार भयावह वर्णन की पौराणिक भविष्यवाणियाँ इसी आधार पर हैं । हम देखते हैं कि वह पूर्व कथन सही होता चला जा रहा है । जिस क्रम से हम दुष्ट और भ्रष्ट बनने पर उतारू हैं, उसी क्रम से प्रकृति के हण्टरों की मार दिन-दिन अधिक तीव्र एवं अधिक निर्दय बनती चली जा रही है ।

प्रकृति की—मौसम की अनुकूलता, प्रतिकूलता हमारी आर्थिक और शारीरिक परिस्थितियों को अत्यधिक प्रभावित करती है । वर्षा के न्यून अथवा अधिक होने पर—पाला पड़ने, अन्धड़ चलने, तूफान, भूकम्प जैसे उपद्रव खड़े होने से कृषि, पशु-पालन तथा अन्यान्य उद्योग-धन्धों पर जो प्रभाव पड़ता है, उसे कौन नहीं जानता ? मौसम की असह्य प्रतिकूलता से कितने ही बीमार पड़ते हैं, कितने ही दम तोड़ देते हैं । दुर्भिक्ष, महामारी एवं अप्रत्याशित विपत्तियाँ लेकर मौसम की प्रतिकूलता जब सामने आती है तो प्राणियों को अत्यधिक कष्ट होता है । वृक्ष, वनस्पतियाँ नष्ट हो जाती हैं और सर्वत्र त्राहि-त्राहि सुनाई पड़ती है । इसके विपरीत यदि मौसम अनुकूल हो तो आर्थिक और शारीरिक खुशहाली बढ़ने का भरपूर लाभ मिलता है ।

सन् १९७१ के अक्टूबर मास में उड़ीसा के समुद्र तट पर तूफान ने जो कहर ढाया उसकी याद करके रोंगटे खड़े हो जाते हैं । कटक के समीपवर्ती क्षेत्र में उसने ७ हजार व्यक्तियों की बलि देखते-देखते ले ली थी । ६ हजार वर्ग मील में बसी ५० लाख की जनसंख्या को उसने दयनीय दुर्दशा के गर्त में झोंक दिया था । एक अरब रुपयों की सम्पत्ति बर्बाद हो गई । सात लाख मकान नष्ट हो गए । इसके पीछे एक और साथी जुड़ा हुआ था, गनीमत इतनी हुई कि वह पश्चिमी बंगाल की ओर मुड़ गया अन्यथा वह दूसरा रहा-सहा विनाश पूरा करके उसे सर्वनाश की स्थिति तक पहुँचा देता ।

मियानी (फ्लोरिडा) की नेशनल हरीकेन रिसर्च लेबोरेटरी के डायरेक्टर डा० सेसिले गेन्ट्री ने उन प्रयासों पर प्रकाश डाला है, जो समुद्री तूफानों पर किसी तरह नियन्त्रण प्राप्त कर सकने में सफल हुए हैं । बादलों पर सूखी बर्फ का चूर्ण गिराकर उन्हें हल्का और दुर्बल बना दिया गया । डॉ० सिम्पसन ने सिल्वर आयोडाइड छिड़क कर तूफान को हल्का किया । तूफानों का उठना रोकने तथा दिशा बदलने में तो सफलता नहीं मिली पर 'सीडिंग' उद्योग शृंखला का यह परिणाम जरूर निकला कि चक्रवातों का वेग ३१ प्रतिशत तक घटाया जा सका । 'विरास' और 'निम्बये' उपग्रह इस सन्दर्भ में इन दिनों कई तरह की जाँच-पड़ताल कर रहे हैं ताकि इन सत्यानाशी तूफानों की उच्छृंखलता पर किसी प्रकार नियन्त्रण स्थापित किया जा सके ।

'साइक्लोन्स हाउ टू गार्ड अगेन्स्ट दैम' पुस्तक में दिए गए विवरणों से विदित होता है कि भारत को समय-समय पर इन समुद्री तूफानों से कितनी क्षति उठानी पड़ती है । १६ अक्टूबर १९४२ को बंगाल की खाड़ी में १४० मील प्रति घण्टा की चाल से एक ऐसा तूफान आया था, जिसने कलकत्ता नगर को झकझोर कर रख दिया, भयंकर वर्षा हुई । ज्वार की लहरों ने २५० वर्ग मील सूखी जमीन को पानी से भर दिया । पानी की ऊँचाई १६ फुट तक जा पहुँची थी । करीब १५ हजार मनुष्य और ६० हजार पशु मरे ।

अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प आदि की बात छोड़कर केवल आँधी, तूफान की एक विपत्ति पर ही विचार करें तो प्रतीत होगा कि इस शताब्दी में उससे भयावह हानि उठानी पड़ी है । प्रगति के नाम पर हुए उपार्जन का एक बड़ा भाग इन अन्धड़ चक्रवातों ने निर्दयतापूर्वक उदरस्थ कर लिया ।

इस स्तर के अगणित अन्धड़ समुद्री क्षेत्र में इन दिनों आये दिन उठते रहते हैं और वे भारी विनाश उत्पन्न करते हैं । ये अन्धड़ प्रायः एक हजार से लेकर दो हजार किलोमीटर क्षेत्र का मौसम उद्विग्न कर देते हैं और अपने विकराल रूप से महाविनाश के लिए आगे बढ़ते हैं । कोई-कोई छोटे या बड़े भी होते हैं । हवा का वेग जब ६० किलोमीटर प्रति घण्टे से अधिक हो जाता है तो उसे तूफान कहते हैं । ८५ किलोमीटर का वेग उग्र तूफान कहा जाता है । यह चक्रवात यदि समुद्र की परिधि में ही उठे और यहीं समाप्त हो जाय तो उससे उस क्षेत्र के जल जीवों एवं जलयानों को ही क्षति पहुँचती है, पर यदि वे थल क्षेत्र में घुस पड़ें तो फिर तटवर्ती क्षेत्रों में भयावह विनाश लीला प्रस्तुत करते हैं ।

टेलीविजन और इन्फ्रारेड आबजर्वेशन सैट लाइट (टाइरोस) यंत्र आकाश में उड़ाकर मौसम सम्बन्धी पूर्व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जानकारी प्राप्त करने का प्रयत्न पिछले १३ वर्षों से किया जा रहा है । इन उपकरणों ने पिछले दिनों जो जानकारियाँ भेजी हैं उनसे यह आशा बँधी है कि निकट भविष्य में मौसम के परिवर्तनों की विशेषतया वर्षा एवं आँधी, तूफानों की पूर्व जानकारी प्राप्त की जा सकेगी और उस आधार पर सम्भावित विपत्ति से बचने के लिए सुरक्षात्मक प्रयत्न कर सकना सम्भव हो सकेगा ।

संसार का मौसम नियन्त्रण में रखने के लिए कुछ उपाय वैज्ञानिक जगत में विचाराधीन हैं । (१) आर्कटिक क्षेत्र की हिमराशि पर कालिख पोत दी जाय तो इससे सौर ऊर्जा पर नियन्त्रण करके उत्तरी ध्रुव क्षेत्र को मानवोपयोगी बनाया जा सकेगा । (२) समुद्र में जहाँ से अधिक बादल उठते हैं और अनावश्यक वर्षा करके बर्बादी प्रस्तुत करते हैं, उन क्षेत्रों पर हेक्साडेकानोल जैसे रसायनों की परत जमाकर बादल बनना सीमित कर दिया जाय ताकि अधिक वर्षा वाले क्षेत्र भी उपजाऊ हो सकें । (३) आर्कटिका क्षेत्र के नीचे धरती खोदकर उसमें १० मेगाटन शक्ति के दस ऐसे हाइड्रोजन बम फोड़े जाएँ जो विषाक्त विकिरण से रहित हों । इससे ५ मील मोटा बर्फ का बादल आकाश में छितरा जाएगा और पृथ्वी का मौसम अब की अपेक्षा थोड़ा और गर्म हो जाएगा । (४) बैरिंग मुहाने पर ५५ मील चौड़ा बाँध बनाकर आर्कटिका सागर में ठंडे पानी को प्रशान्त महासागर में मिलने से रोक दिया जाय ।

सोचा जा रहा है कि यह योजनाएँ बड़ी तो हैं और खर्चीली भी, पर यदि मनुष्य को व्यापक पैमाने पर मौसम का नियन्त्रण करना है तो उतना बड़ा पुरुषार्थ भी करना ही होगा ।

आखिर आँधी, तूफान आते क्यों हैं ? उठते कहाँ से हैं ? इनका उद्गम स्रोत कहाँ है ? इन प्रश्नों का उत्तर विज्ञान ने अपने ढंग से प्रस्तुत किया है ।

कहा गया है कि मौसम के निर्माण एवं परिवर्तन के चार प्रमुख आधार हैं—(१) सूर्य के द्वारा प्रेषित ऊर्जा का वातावरण पर पड़ने वाला प्रभाव, (२) पृथ्वी के भ्रमण मार्ग में प्रस्तुत होते रहने वाले आधार, (३) धरती से उठने वाले और सूर्य से गिरने वाले दबाव की प्रतिक्रिया, (४) भू-गर्भी एवं अन्तरिक्षीय प्रभाव से उत्पन्न विस्फोटीय उत्तेजना । इन चारों से मिलकर मौसम के उतार-चढ़ाव उत्पन्न होते हैं । सूर्य, वायु, पृथ्वी तथा अन्तरिक्ष की स्थिति के अनेकानेक ज्ञात-अविज्ञात कारण मिलकर मौसम का निर्माण करते हैं । कौन ऋतुएँ किन महीनों में होती हैं, वर्षा, सर्दी, गर्मी के दिन कब होते हैं यह मोटी जानकारी ही हमें प्राप्त है । किस अवधि में क्या घटनाक्रम किस प्रकार घटित होगा इसे ठीक तरह से जान सकना अभी किसी के लिए भी सम्भव नहीं हुआ है ।

पृथ्वी से ९ करोड़ २९ लाख मील दूर बैठा हुआ सूर्य पृथ्वी पर अपनी ऊर्जा का केवल दो अरबवाँ भाग भेजता है, पर वह भी प्रति मिनट २३ अरब हार्स पावर जितना होता है । यह ऊष्मा अत्यधिक प्रचण्ड है यदि वह सीधी धरती पर आती तो यहाँ सब कुछ जल-भुन जाता । खैर इसी बात की है कि इस ताप का अधिकांश भाग बादलों, समुद्री, ध्रुवीय हिम शृंखलाओं और वायुमण्डल की विभिन्न परतों द्वारा सोख लिया जाता है । यह अवशोषण भी बहुत सन्तुलित है । सामान्य धरातल को जो सूर्य ताप प्राप्त होता है यदि उसमें १३ प्रतिशत और कमी किसी कारण हो जाये तो फिर सारी पृथ्वी एक मील ऊँची बर्फ की परत से ढक जायेगी ।

पश्चिम से पूर्व की ओर ध्वनि वेग से भी अधिक तेजी के साथ घूमती हुई पृथ्वी सूर्यदेव की ६० करोड़ मील लम्बी अण्डाकार कक्षा में परिक्रमा करती रहती है । उसकी धुरी ३११ डिग्री झुकी हुई है । इससे सूर्य किरणें तिरछी पड़ती हैं इससे न केवल सौर ऊर्जा में वरन् जल प्रवाहों और हवाओं की संचरण प्रक्रियाओं में भी अन्तर पड़ता है । मौसम बदलते रहने का यह भी एक बड़ा कारण है ।

पृथ्वी की गति को बदलना—उसकी कक्षा में परिवर्तन लाना—सूर्य को अमुक-अमुक मात्रा में ऊर्जा भेजने के लिए विवश करना आज के तथाकथित विकासमान विज्ञान को अति कठिन मालूम पड़ता है । इतनी ऊँची बात जाने भी दी जाय और ऐसा भर सोचा जाय कि मौसम की सामयिक परिस्थितियों की ही थोड़ी रोकथाम कर ली जाय तो वह भी इतना अधिक भारी प्रतीत होता है कि बार-बार उतना कर सकना सम्भव ही न हो सकेगा ।

यदि सारी दुनिया की हवा इच्छानुसार चलाई जाय तो इसके लिए प्रतिदिन दस लाख परमाणु बम फोड़ने से उत्पन्न हो सकने जितनी शक्ति जुटानी पड़ेगी । समस्त वायुमण्डल के तापक्रम में एक अंश सेन्टीग्रेड गर्मी और बढ़ानी हो तो डेढ़ हजार अणुबम फोड़ने होंगे । एक मामूली-सा तूफान रोकना हो तो उसके लिए एक मेगाटन ऊर्जा की आवश्यकता पड़ेगी । इतनी ऊर्जा जुटाकर प्रकृति से लड़ सकना और उसे वशवर्ती बना सकना विज्ञान के लिए कब और कैसे सम्भव हो सकेगा यह कोई नहीं कह सकता ।

शरीर का स्वास्थ्य ठीक बनाए रखने के लिए मानसिक स्वास्थ्य को सुधारना आवश्यक है । इस तथ्य पर विज्ञान बहुत दिन बाद अब आकर पहुँचा है । इससे पूर्व शरीर और मानसिक स्वास्थ्य को पृथक्-पृथक् मानकर उनके सम्बन्ध में सोचा जाता रहा है । अब अनेक शोधों ने यह सत्य प्रकट कर दिया है कि शरीर को नीरोग रखना हो तो मन का आरोग्य सँभालना आवश्यक है । बिल्कुल यही तथ्य परा और अपरा प्रकृति के सम्बन्ध में लागू होता है । विज्ञान की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पहुँच जिस स्थूल प्रकृति तक है वह सब कुछ नहीं है । उसके अन्तराल में सूक्ष्म प्रकृति काम करती है, जो चेतना है । उनकी परिशुद्धि इस बात पर निर्भर है कि संसार में सद्भाव सम्पन्न वातावरण संव्याप्त हो । सतयुग में ऐसी ही स्थिति के फलस्वरूप स्थूल प्रकृति शान्त और सन्तुलित रहती थी और संसार में सुखद प्रकृति-अनुकूलता बनी रहती थी ।

स्थूल प्रकृति को अनुकूल बनाने के लिए—मौसम को नियन्त्रण में रखने के लिए जितने खर्चे की, जितने पुरुषार्थ की आवश्यकता पड़ेगी, उनका लाखवाँ भाग भी यदि सूक्ष्म प्रकृति को शान्त सन्तुलित रखने के लिए, सदाशयतापूर्ण वातावरण बनाने के प्रयत्न में लगाया जाय तो मनुष्य पारस्परिक सद्व्यवहार के कारण भी सुखी रहेंगे और प्रकृति भी अनुकूल व्यवहार करेगी । कलियुगी प्रचलन को यदि सतयुग की रीति-नीति में बदला जा सके तो मौसम ही नहीं वातावरण का हर भाग बदल जायगा और विक्षोभ के स्थान पर मंगलमय उल्लास बिखरा दिखाई पड़ेगा । संसार के मूर्धन्य व्यक्ति न जाने क्यों इस तथ्य पर ध्यान नहीं देते ।

रक्षक आप-भक्षक आप

प्रकृति ने अपनी गोद में कितने ही प्रकार के प्राणियों को पाला-पोसा और स्थान दिया है । उसकी कुछ संतानें अपार शारीरिक क्षमता रखती हैं, तो कुछ संतानें ध्वनि के कारण होने वाले कम्पन से ही मर जायें, इतनी कमजोर होती हैं । सबल-निर्बल, सशक्त-अशक्त, चालाक-भोले यानी कि हर तरह के जीव-जन्तु प्रकृति के प्रांगण में मिल जाएँगे, ऐसी स्थिति में उद्धत शक्तिशाली निर्बल प्राणियों को जीवित भी न रहने दें, यह सम्भावना भी बनी रहती है । यदि नियमत: ऐसा ही हो तो इस संसार में दुर्बल, निर्बल और कमजोरों का जीना भी असम्भव हो जाय ।

परन्तु प्रकृति ने निर्बल प्राणियों को ऐसी विशेषताएँ भी प्रदान कर रखी हैं, जिनसे वे अपनी रक्षा कर सकें और आने वाले संकटों से अपना बचाव कर लें । कई कीड़े-मकोड़े बहुत क्षुद्र और कमजोर होते हैं, इतने कमजोर कि जरा से व्याघात से ही मर जाएँ लेकिन प्रकृति ने उनके बचाव का भी पूरा-पूरा उपाय कर रखा है । जैसे 'वाकिंग स्टिक' एक कीड़ा होता है जिसका शरीर, हाथ, पैर और रंग किसी सूखी लकड़ी की टहनी की तरह होता है । क्रियाशील अवस्था में कई दुष्ट व माँसाहारी जीव इस पर आक्रमण कर देते हैं और मारकर खा जाते हैं । शत्रुओं से बचने के लिए अन्तत: उसने इस ईश्वर प्रदत्त जीवन-सत्य को ही माध्यम बनाया । वह किसी दुश्मन को बढ़ता हुआ देखता है तो निश्चेष्ट लेट जाता है, शत्रु, आता है और देखता है कि जहाँ उसे कीड़ा दिखा था, वह तो सूखी लकड़ी है, भ्रम हो गया है । यह समझकर वह वहाँ से निराश लौट जाता है 'वाकिंग-स्टिक' की सुरक्षा हो जाती है।

अमेरिका में पाया जाने वाला कंगारू इस क्रिया में सबसे अधिक चतुर होता है । दुश्मन को देखते ही वह जमीन में इस प्रकार लेट जाता है, मानो बिल्कुल मर गया हो । जब तक शत्रु दूर रहता है तब तक तो वह विधिवत साँस भी लेता रहता है, आँखें भी अधखुली रखकर चुपचाप देखता रहता है पर जैसे ही शत्रु पास आया कि उसने आँखें भी बन्द कीं और साँस भी । शत्रु आता है उसे सूँघता है और मरा हुआ समझकर वहाँ से चल देता है । कंगारू प्रसन्नतापूर्वक उठता है और अपने काम से लग जाता है ।

बाहरी शत्रुओं से तो किसी प्रकार रक्षा की भी जा सकती है, आंतरिक शत्रुओं से विजय पाना सबसे अधिक दु:साध्य रहा है । शरीर रूपी गुफा जिसमे जीवात्मा रहती है और मनुष्य को यह गुफा भगवान ने इसलिए दी थी कि वह उसमें सुरक्षापूर्वक रहकर आत्मकल्याण और लोकमंगल की आवश्यकता पूरी करेगा । उसी में ६ भयंकर शत्रु और अनेक छोटे-छोटे दुश्मन भी आ बैठे । काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, मत्सर यह प्रबल शत्रु मनुष्य की शक्ति निचोड़ते, मित्रता और प्रेमपूर्वक रहने न देकर अपने ही लोगों से लड़ाते-भिड़ाते रहते, शोषण, छल-कपट और न जाने कैसी-कैसी दुष्टता की प्रेरणा देते रहते हैं ? मनुष्य को उनसे बचना भारी पड़ता है । कोई उपाय कारगर नहीं होता जब यह शत्रु प्रबल हो उठते हैं, उनसे रक्षा के उपाय प्रकृति के इन कलाकारों से सीखना चाहिये ।

उदाहरण के लिए कभी कामवासना का वेग सताये अथवा किसी के प्रति शत्रुता हो और अहंकारवश प्रतिशोध की भावना भड़क उठे उस समय वाकिंग स्टिक और कंगारू के समान निश्चेष्ट लेट जाइये और अनुभव कीजिए आपकी मृत्यु हो गई । आपका प्राण शरीर छोड़कर बाहर खड़ा है और देख रहा है । यह शरीर, यह इन्द्रियाँ जिनके विषय बड़े सुन्दर और सुखद प्रतीत होते थे, उनमें कितनी गन्दगी और दुर्गन्ध भरी है । यह मनुष्य शरीर किसी बड़े काम के लिये मिला था पर उसका दुरुपयोग हुआ । शक्तियाँ इन्द्रिय भोग और बखेड़ों में खर्च कर दीं—इस तरह के विचार कुछ देर तक इतनी गम्भीरता से उठाएँ मानो कि आप सचमुच मर गए हों । उस क्षण की कल्पना आप में वैराग्य भर देगी, आप बुराई से बच जायेंगे ।

जीवशास्त्र में इन क्रियाओं को मादृश्यता (मिमिक्री) कहते हैं । डॉ० वेटसन व फ्रिट्ज मुलर ने जीवों की इन अद्भुत क्रियाओं पर गहन अनुसंधान किये और ऐसे सैकड़ों उदाहरण देकर जीवों की प्रकृति के रोमांचक पृष्ठ खोले पर इनका सर्वोत्तम लाभ मानव जाति को इन प्रेरणाओं के रूप में ही मिल सकता है । समुद्र के किनारे क्रिप्टोलिथोडस नामक एक केकड़ा पाया जाता है, इनके शरीर की ऊपरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सतह कठोर होती है और रंग श्वेत । कोई दुश्मन आया और ये सतह पर बिछे कंकड़-पत्थरों के बीच जा लेटे । उस समय कोई पास जाये तो यही समझेगा कि कोई पत्थर पड़ा है । केकड़ा कुछ बोल नहीं रहा होगा पर उसकी यह कला कह रही होगी—मनुष्य ! तू भी अपने शरीर को कंकड़, पत्थर, मिट्टी, पानी का समझता और मानता कि इसमें निवास करने वाली जीवात्मा ही रक्षा और विकास के योग्य है तो यह मानस शत्रु जो हर घड़ी तुम्हारी शक्तियों को खा जाने की ताक में बैठे रहते हैं, धोखा खा जाते और तेरे पास आकर भी तेरा कुछ बिगाड़ नहीं पाते ।

शत्रुओं से सुरक्षा के कोई एक दो उपाय ही नहीं सैकड़ों योजनाएँ इन प्रकृति के कलाकारों से सीखीं और प्रयोग में लाई जा सकती है । उदाहरण के लिए एक कीड़ा होता है जिसे 'लीफ इंसेक्ट' कहते हैं । इसका रंग हरी पत्तियों की तरह हरा होता है, शत्रु को देखते ही यह हरी पत्तियों के बीच बैठ जाता है । शत्रु आता है तो उसे पत्तियाँ मिलती हैं फिर तो उसे वहाँ से निराश ही लौटना पड़ता है । कैलिमा नामक तितली फूल-पत्तियों के आकार से इतनी मिलती-जुलती होती है कि उसको पहचानना कठिन हो जाता है, उसके पिछले पंख, तने और आगे वाली पत्तियों के आकार के होते हैं । शत्रु को देखते ही यह किसी फूल वाले पौधे की मोटी शाखा को अपने पिछले पंखों से स्पर्श कराकर बैठ जाती है तब देखने से ऐसा लगता है कि किसी तने पर दो पत्तियाँ उगी हों । शत्रु धोखा खाकर चला जाता है ।

तितलियों की एक जाति ऐसी होती है जिनका माँस कड़ुआ और जहरीला होता है । उन्हें कोई भी जीव खाना पसन्द नहीं करता पर कुछ तितलियों को खाने वाले भी सैकड़ों शत्रु तैयार रहते हैं । स्वास्थ्य, खूबसूरत होने पर कामवासना के प्रवाह अधिक टकराते हैं, पैसा हो तो अपव्यय और अहंकार की दुष्प्रवृत्तियाँ घेर सकती हैं, शरीर में बल हो तो ही बदमाशी सूझती है जब कभी ऐसे अवसर आयें तब कामवासना से जर्जरित व्यक्तियों के दुर्बल शरीर और वृद्ध लोगों के टूटे शरीरों की कल्पना करके उसी प्रकार बचा जा सकता है, जिस तरह गौतम बुद्ध उनसे बच गये थे और अपना जीवन पुण्य, परमार्थ और लोक-सेवा में उत्सर्ग कर दिया था । अहंकार आये तो कंस, रावण, जरासंध लोभ आये तो हिरण्यकशिपु की दुर्दशा, मोह सताये तो सैकड़ों बच्चे लिए फिरने वाली सुअरिया की कल्पना करके उनसे बचा और सँभला जा सकता है । किसी भी घृणित विचार को उसके दुष्परिणाम के चिन्तन से काटने की कला आ जाये तो मनुष्य न केवल उस दुष्प्रभाव से बच सकता है वरन् आत्मकल्याण की दिशा में भी तेजी से अग्रसर हो सकता है ।

इतने पर भी बुराइयों के शत्रु न मानें तो उन्हें डराना, धमकाना और मारकर भगाना भी नीतिसंगत तथ्य है । अमरीका में जहरीले साँपों की एक ऐसी जाति पाई जाती है जिनका रंग बहुत चमकदार होता है । उसी क्षेत्र में कुछ साँप ऐसे होते हैं, जिनमें कोई जहर नहीं होता । इनका जब कभी किसी शत्रु से मुकाबला पड़ जाता है तो यह अपनी आकृति-प्रकृति जहरीले साँपो जैसी बना लेते हैं । शत्रु डर कर भाग जाते हैं और इस तरह उनकी रक्षा हो जाती है । हमारे मन में भी ऐसे साहसपूर्ण शक्तिशाली विचार जाग जायें तो बुरे विचारों को डाँट, मारकर भगाया जा सकता है।

इस तरह इन जीवों की निश्चेष्ट करने की क्रियायें, अच्छे विचारो से बुरे विचार काटने की क्रियायें सीखकर आन्तरिक शत्रुओं से बचा जा सकता है । गुणों का विकास किया जा सकता है और आत्मकल्याण के अवरोधों को दूर कर सुख-शान्ति का जीवन भी जिया जा सकता है ।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर के रूप में जो ६ शत्रु गिनाये गये हैं. उनमें कामवासना सर्वाधिक भयकर होती है । अन्य प्राणियों की अपेक्षा यह मनुष्य को ही अधिक सताती है या मनुष्य स्वयं ही इस रिपु के सामने आत्मसमर्पण कर देता है, स्वयं उसके जाल मे जा फँसता है । यह विचार नहीं किया जाता कि कामवासना का क्रीड़ाकेलि में उलझे रहने के कारण अपनी ही शक्तियों का आत्यन्तिक क्षरण होता है और क्षण भर के क्षुद्र आनन्द के लिये अपने आपको बर्बाद करना पड़ता है ।

अन्यथा संकट प्रस्तुत है

कामवासना का क्षुद्र आनन्द के लिये उपयोग न केवल मनुष्य के लिए वरन् उन प्राणियों के लिए भी घातक होता है जो कामुक होते हैं ।

प्रकृति-पर्यवेक्षण से पता चलता है कि अल्पजीवी प्राणी अधिक कामुक होते हैं तथा वे सहवास भी अधिक करते हैं जबकि दीर्घजीवी प्राणियों में सहवास की आवृत्ति में एक बड़ा अन्तराल रहता है । वे वर्ष में एक निश्चित अवधि में ही यौन-जीवन जीते हैं । शेष समय में दाम्पत्य प्रेम तो उनमें गहरा रहता है, पर यौन-क्षुधा नहीं होती । इसी तरह दुर्बल जीवों में अधिक सन्तति होती है, जबकि सशक्त प्राणियों में कम सन्तानें होती हैं ।

छोटी-छोटी मछलियाँ लाखों, करोड़ों की संख्या में अण्डे देती हैं । काड मछली चार लाख अंडों का प्रजनन करती है, तो सनफिश तीन करोड़, जबकि विशालकाय ह्वेल तथा डाल्फिन अंडे नहीं देतीं, उनके सीमित जीवित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बच्चे पैदा होते हैं । शार्क मछली अपने ही पेट में अंडे सेती और फिर शिशु को जन्म देती है । मक्खियाँ भी बहुत अंडे देती हैं और एक मक्खी की कुल उम्र ३० दिन होती है । मादा चमगादड़ वर्ष में सिर्फ एक बच्चा देती है ।

हाथी भी वर्ष में एक बार ही समागम करता है और कई हाथी तो लम्बे अरसे तक सहवास नहीं कर पाते क्योंकि किसी भी समूह की सभी हथिनियों का स्वामी सरदार हाथी ही होता है । हाथी की सन्तान भी कम होती है ।

गाय, बैल, भैंस, घोड़े आदि सभी सशक्त प्राणियों में सन्ततिक्रम सीमित है । कम सन्तान जनने वाले हाथी और ह्वेल सौ-सौ वर्ष जीते हैं । शेर चालीस वर्ष, घोड़ा तीस, गाय पच्चीस, कुत्ता पन्द्रह, बकरे-बकरी पन्द्रह वर्ष जीते हैं जबकि छोटी मछलियाँ और छोटे पशु अल्प अवधि तक जीते हैं । जो प्राणी जितने अधिक और जितनी जल्दी बच्चे उत्पन्न करता हो तो समझना चाहिये कि वह उतनी ही कम आयु प्राप्त कर सकेगा और उतना ही दुर्बल बनकर रहेगा ।

नर-नारी प्रेम तथा एकनिष्ठता की प्रवृत्ति कई पशुपक्षियों में देखी जाती है ।

'स्किवड' नामक एक रेंगने वाला कीड़ा सैंकड़ों मादाओं में भी अपनी प्रियतमा को पहचान लेता है । दूसरों की ओर वह कभी भी नहीं देखता ।

बतखों का दाम्पत्य प्रेम अत्यन्त प्रखर होता है । थोड़े से क्षणों का भी विछोह वे सह नहीं पाते । साथी आँख से ओझल हुआ कि व्याकुलता से उसे खोजने लगते हैं ।

यूरोप में गोहों की कुछ जातियाँ हैं, जो जीवन में एक ही बार हमसफर चुनती हैं । विधवा या विधुर गोह, दूसरे गोह को देखकर उस पर आक्रमण कर बैठती हैं । प्यार कभी दुबारा नहीं करतीं ।

कबूतर कट्टर पतिव्रती एवं पत्नीव्रती होते हैं । कुछ मछलियाँ भी प्रेम-प्रसंग के बाद ही विवाह करती हैं । ऐसी मछलियाँ झीलों या शान्त गति वाली नदियों में ही पाई जाती हैं । ये मछलियाँ सदैव एकनिष्ठ होती हैं ।

दाम्पत्य जीवन का अर्थ है—स्नेह, सद्भावपूर्वक सहचरत्व का निर्वाह किया जाय । सद्भाव सम्पन्न प्राणियों में प्रायः यही प्रवृत्ति पाई जाती है । इस आधार को अपनाने पर उनका दाम्पत्य जीवन सुखी सन्तुष्ट रहता है, किन्तु जहाँ कामलोलुपता ही प्रधान है, वहाँ सघननिष्ठा का अन्त हो जाता है और कुचक्र का दौर चल पड़ता है । बहुपत्नी प्रथा या बहुपति प्रथा दोनों ही समान रूप से अनावश्यक एवं अवांछनीय हैं । जहाँ-कहीं यह दौर चल रहा होगा वहाँ कलह, संघर्ष एवं संकटग्रस्त वातावरण बना रहेगा । प्राणिजगत् में इस बहुवादी लोलुपता की प्रतिक्रिया कुत्तों में, हिरनों में, हाथी में, सील आदि में देखी जा सकती है ।

बहुपत्नीवाद का सर्वाधिक दुष्परिणाम 'सील' नामक मछली में देखने को मिलता है । ये उत्तरी ध्रुव के हिमानी क्षेत्र में होते हैं ।

व्यवस्था सन्तुलन काम विकार में भी

कामोत्तेजना क्या है ? इस सन्दर्भ में कवि और कलाकार कुछ भी कहते रहें विज्ञानियों की दृष्टि में यह एक रासायनिक उत्तेजना मात्र है । कोई मादा जब गर्भ धारण के योग्य आन्तरिक अवयवों को पुष्ट कर लेती है, तो उसमें से एक प्रकार का विशेष स्राव निकलता है । यह वायु के साथ गन्ध रूप में मिल जाता है और हवा में उड़कर नरों की सन्तानोत्पादन चेतना को चुनौती देता है । वे इस अदृश्य आन्तरिक हलचल से उत्तेजित हो उठते हैं और मादा की आवश्यकता पूरी करने के लिए धर दौड़ते हैं । इसी प्रकरण को कामोत्तेजना के रूप में देखा-समझा जा सकता है । मादा के अन्तःस्राव जैसे ही बन्द हो जाते हैं, नरों की उत्तेजनाएँ भी समाप्त हो जाती हैं और वे फिर होश-हवास के सौम्य सदाचार की ओर वापस लौट जाते हैं ।

छोटे जीव सन्तानोत्पादन की उपयोगिता नहीं समझते इसलिए उनको वंश नष्ट हो जाने का खतरा रहता है । प्रकृति ने इस स्थिति को न आने देने के लिए उनके शरीर में एक गन्ध आवेग यौनाकर्षी रस के रूप में उत्पन्न किया है । मादा के शरीर में समयानुसार जब यह मादक गन्ध उत्पन्न होती है तो वे प्रकृति की प्रेरणा को पूरा करने के लिए आतुर हो उठते हैं और जैसे ही गुदगुदी उत्पन्न करने वाले संकेत बन्द होते हैं, नशा उतर जाता है । इस प्रकार प्रकृति उनसे अपना वंश-वृद्धि का प्रयोजन पूरा करा लेती है और वे अनायास ही जनक-जननी बनने की भूमिका सम्पादित कर बैठते हैं ।

मनुष्य की स्थिति इससे ऊपर है । इसीलिए प्रकृति ने उन्हें गंध आवेग से उत्तेजित होने का अवसर नहीं दिया है । तरुणी नारी के शरीर से भी अन्य जीवों की तरह यौनाकर्ष रसायनों की गन्ध निकलती होगी पर वह मानवी विवेक से टकराकर हतप्रभ ही हो जाती है और वह बहिन-बेटी आदि की मर्यादाओं का पालन करता हुआ जोड़ा बनाने से पूर्व हजार बार यह विचार करता है कि गृहस्थ के उत्तरदायित्व को निबाहने की क्षमता उसमें है कि नहीं या फिर साथी का चयन करने में किन तथ्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का ध्यान रखा जाय ? सन्तानोत्पादन की संख्या निर्धारण करने में भी उसे विवेक से काम लेना पड़ता है । यही है मनुष्य और पशु के बीच का विवेकजन्य अन्तर ।

पिछड़े हुए जीव मात्र रासायनिक गन्ध उत्तेजना के आवेग से सन्तानोत्पादन करने में जुट जाते हैं, न साथी का चुनाव करने की कोई कसौटी उनके पास होती है और न सन्तान के लालन-पालन के लिए अपनी योग्यता उपयुक्तता देखने की उनमें क्षमता होती है । मनुष्य भी यदि उसी स्तर का बन जाय तो उसकी विवेकशीलता और बुद्धिमता का कोई महत्व ही न रह जायेगा ।

प्राणियों की रासायनिक गन्ध किन्हीं आवेशों से उत्तेजित करके काम-क्रीड़ा में प्रवृत्त कर देती है । उनके स्तर को देखते हुए यह उचित भी हो सकता है, पर मनुष्य के कर्तव्य और उत्तरदायित्व तो बहुत अधिक बढ़े-चढ़े हैं, इसीलिए प्रकृति ने उसे गन्ध उत्तेजना के आवेगों से बच सकने और विवेकसम्मत रीति-नीति अपना सकने के योग्य रखा है, जबकि अन्य प्राणी एक प्रकार से बाध्य और विवश हैं ।

कामोत्तेजना से प्राणियों के समस्त शरीर में आवेश उत्पन्न होता है और उनकी विविध विधि गतिविधियाँ ऐसी उभरती हैं, जिन्हें उन्मत्तता की संज्ञा दी जा सकती है । भँवीरी और डेयजल मक्खी की उड़ान सीधी-सादी न रहकर कलाबाजी जैसी बन जाती है और लगता है वह कोई नृत्य अभिनय कर रही है । केटिटिड साइक्डा और झींगुर जिन दिनों मदमस्त होती हैं, उन दिनों उनकी झंकार में नये किस्म का स्वर और मिठास होता है ।

मकड़ी, मछली और रेप्टाइल्स जैसे जन्तुओं की भाँति मेटिस नामक टिड्डा मादा ही बड़ी और जबरदस्त होती है, नर मेटिस अपेक्षाकृत छोटा भी होता है और कमजोर भी । नर के लिए सम्भोग क्रिया उसका मृत्यु सन्देश ही सिद्ध होती है । मादा द्वारा उत्तेजित किये जाने पर वह डरता, सहमता उसके पास जाता है और धरती पर सिर रखकर आत्मसमर्पण की मुद्रा में खड़ा हो जाता है । मादा उसे कसकर पकड़ लेती है कि वह छूटकर भाग न सके । गर्भाधान में मादा को ही देर तक पूरा श्रम करना पड़ता है, अस्तु वह थक भी जाती है । भूखी भी होती है, तब उसे निखट्टू नर को ही चटकर जाने की बात सूझती है और वह विहार के बाद आहार का साधन भी उसी को बनाकर समाप्त कर देती है । नर मेटिस जीवन में प्रायः एक ही सुहागरात देख पाते हैं ।

बोनिला पक्षी नर को आजीवन मादा का दास बनकर रहना पड़ता है । भोजन जुटाने का काम मादा करती है, इसके बदले बच्चों के लालन-पालन का भार उसे ही वहन करना पड़ता है । हिपोकेम्पस पाइपफिश और फोटोकोरिनस मछलियाँ इतनी दबंग होती हैं कि जिस नर को वशवर्ती बना लेती हैं, उससे दास जैसा व्यवहार करती हैं ।

कामोत्तेजना को प्रकाश के रूप में परिणत किया जा सकता है । जुगनू जैसे कीटकों में यह प्रकाश चमक के रूप में मनोरम दीखने और सुहावना लगने तक ही सीमित रहता है पर वह मनुष्य द्वारा तो ओजस् शक्ति में विकसित किया जा सकता है और उससे सर्वतोमुखी समर्थता विकसित करने का लाभ लिया जा सकता है ।

जुगनू की चमक टिमटिमाहट कितनी मोहक होती है रात के अन्धकार में जब वह छोटे तारों की तरह उड़ते-चमकते दिखाई पड़ते हैं तो लगता है कि वह आकाश से उतरकर धरती पर खेलने लगा हो ।

जुगनू की चमक क्या है ? जुगनू की पूँछ के पास तीन पदार्थ भरे होते हैं । लूसीफेरिन रसायन द्रव, लूसीफ्रेस ऐंजाइम एडीनोसिन ट्राइफॉस्फेट यौगिक—इन तीनों का सम्मिश्रण चमक उत्पन्न करता है पर तभी है जब उसे एक विशेष प्रकार की मानसिक उत्तेजना होती है । जीवविज्ञानी कहते है कि यह कामोत्तेजना ही है जो इन रसायनों को चमक में बदल देती है । इस उत्तेजना के अभाव में जुगनू उड़ते तो रहते हैं पर चमकते नहीं ।

जुगनू में पाए जाने वाले लूसीफेरिन और लूसीफ्रेस रसायन मनुष्यों में भी पाये जाते हैं । उनके द्वारा शारीरिक और मानसिक अनेक क्रिया-प्रक्रियाएँ सम्पन्न होती हैं । चमक भी पैदा होती है पर होती तभी है, जब उनके साथ भावनात्मक उत्तेजना का सम्पर्क हो । जीवविज्ञानी कहते हैं कि जुगनू के लिए उतनी तीव्र उत्तेजना जो उसके रसायनों को चमका सके केवल कामोत्तेजना ही हो सकती है । आहार आदि की सामान्य आवश्यकताएँ उस स्तर की नहीं होतीं जो उसे चमकने की स्थिति में ला सकें । मादा जुगनू जब रतिसंयोग के लिए उद्विग्न होती है और नर जुगनू जब उसके पीछे-पीछे मनुहार करते हुए चक्कर लगाते हैं, तभी उनकी पूँछ चमकती है और मनोरम दृश्य दिखाई पड़ते हैं ।

प्रकृति ने मनुष्य को विवेक दिया है और अन्य कीटकों की तरह गन्ध आवेशों के कारण उन्मत हो उठने की दुर्बलता से मुक्त रखा है । इसके पीछे नियति का यही उद्देश्य काम कर रहा है कि वह अपने भीतर भरी हुई अति महत्वपूर्ण शक्ति को आवेशग्रस्तता में बर्बाद न करें । प्रजनन प्रकरण में अति सतर्कता बरतें और मानवोचित आदर्श की प्रतिष्ठापना करें । विवेक हमें वस्तुस्थिति समझाता है पर कामोद्वेग और कुछ नहीं मात्र जड़ पदार्थों में रासायनिक द्रव्यों द्वारा उत्पन्न की जाने वाली उत्तेजना मात्र है । कुछ रसायन मनुष्य पर बेतरह हावी हो जायें और उसे कठपुतली की तरह नाच-नचाकर अधःपतन के गर्त में धकेलें, यह किसी प्रकार शोभनीय नहीं !

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकृति की क्रूर कठोरता से सावधान

अनियन्त्रित सन्तानोत्पत्ति और मौज-मजे की जिन्दगी यह दो इस युग की ऐसी दुष्प्रवृत्तियाँ हैं जो प्रकृति के सुव्यवस्थित क्रिया-कलापों को चुनौती देकर महाकाल की विविध विधि, आपत्तियों में धकेल देने के लिए उसे बाध्य करती है ।

धरती पर प्राणियों के लिए सीमित संख्या में ही स्थान और साधन हैं । यदि वे अपनी संख्या बढ़ाने पर स्वेच्छापूर्वक नियन्त्रण न करेंगे तो इस कटौती के लिए प्रकृति को निर्मम कुल्हाड़ी चलानी पड़ेगी । इसी प्रकार यदि लोग समर्थता, पुरुषार्थपरायणता, प्रतीक्षा और संघर्षशीलता की अवज्ञा करके शौक-मौज का विलासी जीवन जीने लगेंगे तो भी ऐसी अकर्मण्यता और कोमलता जन्मेगी जिसे प्रकृति की परिभाषा में निकम्मापन माना जाता है । विलासी, आलसी और जागरूकतारहित प्राणियों को नियति के चक्र में पिसकर नष्ट ही होना पड़ता है ।

सन्तानोत्पादन की जो क्षमता प्राणियों को मिली है, यदि वह निर्बाध गति से चलती रही तो एक ही प्राणी कुछ शताब्दियों में सारी धरती को घेर लेगा । हाथी को ही ले, उसकी प्रजनन गति मन्द मानी जाती है । ३० वर्ष की आयु में पिता के योग्य होता है और उसकी प्रजनन शक्ति इसके बाद ९० वर्ष तक रहती है । १० वर्ष के अन्तर से हथिनी माता बनती है । इतने पर भी गणित कहता है कि यदि उसकी सारी सन्तानें जीवित रहें तो ७० वर्षों की अवधि में एक हाथी का वंश १९ लाख हो जायगा । चक्रवृद्धि गति से यह स्वाभाविक है आश्चर्यजनक नहीं । यह तो मन्द प्रजनन अभ्यासी और सशक्त काया वाले हाथी की बात हुई । दुर्बल काया और अति प्रजनन की प्रकृति वाले पिछड़े जीवों की बात ली जाय तो उनकी वंश वृद्धि के परिणाम तो इतने आश्चर्यजनक होंगे कि यदि उनकी सभी सन्तानें बनी रहें तो दस बीस वर्ष में ही वे पृथ्वी को अपने वंशजों से ढक लेंगी ।

इस विपत्ति से निपटने के लिए प्रकृति ने एक क्रूर कुल्हाड़ा भी तैयार रखा है, वह है समर्थ का चुनाव, जो सुयोग्य और समर्थ होते हैं वे ही प्रकृति की विविध चुनौतियों को स्वीकार करते हुए संघर्ष करते हैं और उस आधार पर अपनी विकसित योग्यता का परिचय देकर जीवित बने रहते हैं । जो इस लड़ाई में हारते हैं वे मौत के मुँह में चले जाते हैं । जो जीव जितना अधिक प्रजनन करेगा उसकी सन्तानें उतनी ही दुर्बल और स्वल्पजीवी होंगी । जो इस आग से खेलने में समझदारी का उपयोग करते हैं, उन्हें काँट-छाँट की कैंची उतना ही कम कष्ट देती है ।

जीवन संग्राम एक ऐसी सच्चाई है जिससे न तो इन्कार किया जा सकता है और न बचा जा सकता है । चैन से बैठने और मौज-मजा करने की कल्पना भर कोई करता रह सकता है, पर प्रकृति उसे वैसा करने नहीं देती । आलसी अपनी संघर्षशीलता वाली प्रतिभा गँवाते चले जाते हैं, फलतः समय की चुनौती से जूझने लायक क्षमता उनमें रहती ही नहीं । ऐसी दशा में अयोग्य और असमर्थ को हटा कर संसार के सौन्दर्य को बनाए रखने के लिए नियति के संचालक सूत्र, कुशल माली की तरह अपना काम करते हैं । वह इस बात की परवाह नहीं करते हैं उन्हें दयालु कहा जाएगा अथवा निर्दयी ।

आलसी और प्रमादी वर्ग के विशालकाय प्राणी धरती पर से अपना अस्तित्व समाप्त कर बैठे हैं । परिस्थितियों से लड़ने के लिए जिस कठोरता और सजगता की आवश्यकता है, उसे यदि अक्षुण्ण न रखा गया तो अकर्मण्यता का अभ्यस्त व्यक्ति क्रमशः दुर्बल होता चला जाएगा और फिर उसकी अनुपयोगी सत्ता को स्थिर न रखा जा सकेगा ।

आत्मरक्षा के लिए हमें प्रकृति के कानूनों को ध्यान में रखना होगा । सन्तानोत्पादन पर विवेकपूर्वक नियन्त्रण स्थापित करें और साथ ही संघर्षशील कठोर जीवन-क्रम को अपने स्वभाव का अंग बनाकर रखें तभी प्रकृति के कठोर कुल्हाड़े से हमारा बचाव हो सकेगा ।

हिमालय के अमर आदम– हिममानव

हिमालय पर रहने वाले हिममानव की जीवनचर्या भी कम रहस्यमय नहीं है । यह प्राणी मनुष्य जैसी आकृति-प्रकृति का है, उसे रीछ और मानव का सम्मिश्रण कह सकते हैं । अत्यन्त शीत भरे हिम-आच्छादित प्रदेश में इतनी ऊँचाई पर वह रहता है, जहाँ साँस लेने के लिए ऑक्सीजन के सिलेण्डर पीठ पर बाँधकर पर्वतारोही जाया करते हैं और खुली हवा में साँस लेना मृत्यु को निमन्त्रण देना मानते हैं । लम्बे समय से वह एकाकी जीवन जीता चला आ रहा है । युगीय सभ्यता से दूर रहते हुए भी उसने अपने रहस्यमय जीवनक्रम को किसी प्रकार अक्षुण्ण बनाये ही रखा है ।

हिमालय के उतुंग शिखरों पर रहने वाला हिममानव अपने अस्तित्व के समय-समय पर अगणित परिचय देता रहा है, पर अभी तक उसे पकड़ने के प्रयास सफल नहीं हो सके । इस अद्भुत प्राणी के सम्बन्ध में अधिक जानने के लिए उसे निकट से देखना, समझना आवश्यक है । यह तभी हो सकता है, जब वह पकड़ में आवे, किन्तु अति बुद्धिमान समझे जाने वाले मनुष्य को भी यह हिममानव अभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तक चकमा ही देता आया है, उसके पकड़ने के प्रयत्नों को निष्फल ही बनाता रहता है । उतने पर भी हिममानव का अस्तित्व प्राय: असंदिग्ध ही समझा जाता है ।

जीवशास्त्री कहते हैं कि वह रीछ-भालू की किस्म का एक जंगली जन्तु है । विकासशास्त्री उसे नियंडरथल मनुष्य कहते हैं और जीव-जन्तुओं से विकसित हुये मनुष्य की एक खोई हुई कड़ी (मिसिंग लिंक) मानते हैं । भारतीय उन्हें भटकी हुई प्रेतात्माएँ, यक्ष व किन्नर कहते हैं । अनेक भारतीय और नेपाल के तराई क्षेत्र के निवासियों की मान्यता है कि रामायण और महाभारतकाल से भी पूर्व काल के सिद्ध योगी जिन्होंने शरीर से भी अमरत्व प्राप्त कर लिया है । वह योगी ही हिमालय की अतुल ऊँचाइयों में बर्फ के सागर में सानन्द निवास करते हैं ।

अनेक प्रकार की कल्पना और मान्यता का यह जीव न केवल भारत वरन् सारे संसार के लिये ज्ञान-विज्ञान की नई पहेली के रूप में उभरा । उसके अस्तित्व के बारे में किसी को शंका नहीं है पर बर्फ में रहने वाला यह हिममानव कौन है ? क्या करता है और उस क्षेत्र में जहाँ जीवन के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती किस प्रकार नग्न शरीर विचरण करता है यह प्रश्न आज तक कोई हल नहीं कर पाया ।

पहले तो लोग उसके अस्तित्व पर भी शंका करते थे और उसे भारतीयों का अन्धविश्वास कहा करते थे । पर वह वर्णन जो किंवदन्तियों के रूप में चिरकाल से चले आ रहे थे पहली बार उस समय सत्य प्रमाणित हुए जब सुप्रसिद्ध पर्वतारोही तेनसिंह और एडमंड हिलेरी ने १९५४ में हिमालय की चढ़ाई की । एडमंड हिलेरी ने १९ हजार फुट की ऊँची चोयांग घाटी पर अपना खेमा गाड़ रखा था । उस समय की बात है एक दिन जब वे उस क्षेत्र के निरीक्षण के लिए बाहर निकले और बर्फ पर चलते हुए काफी दूर निकल गये, तब एकाएक उन्हें बर्फ पर बने हाल ही के पदचिह्नों ने चौंका दिया । हिममानव की लोककथाएँ उन्होंने सुनी अवश्य थीं, यह भी सुना था कि यह प्राणी उस दुर्गम क्षेत्र में रहता है, जहाँ मनुष्य पहुँच भी नहीं सकता था पर जहाँ पहुँचने के लिए उन्हें स्वयं अपने जीवन रक्षार्थ करोड़ों रुपयों की लागत के उपकरण ले जाने पड़ते थे । फिर भी मौत हर क्षण छाया की तरह घूमती रहती, उस बीहड़ हिमस्थली में मनुष्य के निवास की तो बात वे सोच भी नहीं सकते थे । पदचिह्नों का पीछा करते हुए वे काफी दूर तक गये पर कहीं न कुछ दिखा न कुछ मिला । अपनी यात्रा के संस्मरणों में पहली बार उन्होंने इस हिममानव का विस्तार से उल्लेख किया, तब विज्ञान को अनेक नई धारणाएँ मिलीं, कि जीवन के अस्तित्व के लिए अति शीत और उच्चतम ताप भी बाधक नहीं है । मनुष्य शरीर संसार की हर परिस्थिति में रखने योग्य बनाया जा सकता है । भले ही भारतीय योगदर्शन और सिद्धियों जैसे वे आधार आज लोगों की समझ में न आयें पर यह निर्विवाद सत्य है कि मनुष्य उन अभूतपूर्व शक्तियों और सिद्धियों का समन्वय है, जिन्हें विकसित कर वह शरीर से ही परमात्मा की कल्पना को सार्थक कर सकता है ।

पीछे हिममानवों की खोज का सिलसिला चल पड़ा । हर पर्वतारोही उनकी टोह लेने लगा । उससे उनके बारे में नई-नई विस्मयबोधक जानकारियाँ मिलीं । हिममानव एक नहीं अनेक हैं । उन्हें देखा भी गया है पर अब तक उनका फोटो शायद ही कोई ले पाया हो, क्योंकि वह शरीर से असाधारण क्षमता वाले होते हैं । कुछ लोगों का तो कहना है कि किसी भी स्थान में अन्तर्धान भी हो सकते है और जिस तरह कोई मनुष्य पानी में डुबकी लगाकर दूसरे किसी स्थान पर जा निकलता है, उसी प्रकार कहीं भी लुप्त हो जाने के बाद वे कहीं भी जाकर प्रकट भी हो सकते हैं । यदि ऐसा नहीं होता तो हिमालय की निचली तराइयों में जहाँ आबादी रहती है वहाँ वे कैसे उतर आते और एक रात के अन्तर से ही जो यात्रा कई महीनों में सम्पन्न हो सकती है उसे पूरा करके तुरन्त ही २० हजार फुट से अधिक ऊँचाई पर कैसे भाग जाते ?

चेहरा लम्बा और पतला होता है । आँखें लाल और दाँत बड़े-बड़े, ७ से ८ इंच लम्बी जीभ और बीसियों आदमियों के बराबर की ताकत तभी सम्भव है, जबकि व्यक्ति नितान्त ब्रह्मचारी और प्राकृतिक जीवन जीता हो, या फिर योग सिद्ध हो । डॉ० ईजार्ड का कहना है कि वे माँसाहारी होते हैं, इसके प्रमाण में वे बताते हैं कि मैंने उसके मल (यतीज ड्रापिंग्स) का रासायनिक विश्लेषण कर लिया है पर अन्य लोगों का कथन है कि वे पूर्ण शाकाहारी होते है और उनके शरीर में मल बनता ही नहीं । उनके शाकाहारी होने का प्रमाण तराई क्षेत्रों में प्रचलित लोकगीत और कथाओं में भी मिलता है । रात को जब स्त्रियाँ सोने की तैयारी करती हैं तो बड़ी-बूढ़ी माताएँ बधुओं को हिदायत देती हैं कि देखो बहू चक्की में आटा या गेहूँ पड़ा न रह जाये नहीं तो हिममानव आएगा और उसे खा जाएगा ।

सोचने वाली बात है कि केवल आटा और चक्की में बचे हुये दानों के लालच में हिममानव २०हजार फुट की दुर्गम पहाड़ियों क्यों कर उतरेगा, इससे पूर्व उसे हजारों किस्म के जंगली जानवर मिल सकते हैं । आदमखोर हो तो वह गाँव के बच्चों को उठाकर ले जा सकता है । दाने ही क्यों चुराने लगा । उसके स्वभाव से पता चलता है कि वह शाकाहारी है । उसके व्यवहार और क्रिया-कलापों से पता चलता है कि वह कोई अति मानवीय शक्तियों का पुन्ज कोई सिद्ध योगी ही होना चाहिये । कुछ तो उस क्षेत्र की जलवायु ही सहायक होती है कुछ योगाभ्यास द्वारा विकसित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्तियाँ हो सकती हैं, जिनके कारण वह उस एक क्षण में बर्फ कर देने वाले दुर्गम क्षेत्र में भी सानन्द जीवन जीता है।

काठमाण्डू के लामा श्रीपुण्य वज्र ने बहुत दिन हिमालय के इस प्रदेश में बिताये हैं, एक यती-योगी, सन्त-संन्यासी के ढंग पर उन्होंने हिममानव की खोज की, उनका कहना है कि मैं बहुत समय तक उनके साथ रहा और पाया कि उनकी क्षमतायें बहुत ही विलक्षण हैं । यद्यपि बातों को पाश्चात्य लोग प्रामाणिक नहीं मानते तो भी यह बात तो अमरीका के सुप्रसिद्ध जीव विशेषज्ञ श्री कैरोल वायमैन ने भी स्वीकार की है कि हिममानव की सामर्थ्य विलक्षण है, उदाहरणार्थ वह बहुत दूर गन्ध से ही पहचान सकता है कि इस क्षेत्र में किधर से मनुष्य या कोई दूसरा जीव जा रहा है । वे मुख को देखकर ही भावों को भाँप जाते हैं । उसकी ताकत १५ व्यक्तियों की ताकत से बढ़कर होती है । वह अधिकांश बच्चों को ही दिखता है इससे यह भी तय है कि वह मनुष्यों के स्वभाव से परिचित होता है और उसके विश्वासघात का उसे भय अवश्य रहता है । तभी तो वह उसकी परछाईं भी देखना नहीं चाहता है । एक बार काठमाण्डू के एक बहिन-भाई ने उसे देखा । डॉ० सिल्कि जानसन ने उन दोनों बच्चों को मनुष्य से मिलती-आकृतियों वाले कुछ बन्दरों और गुरिल्लाओं के चित्र दिखाकर पूछा तुमने जिस आकृति को देखा वह इनमें से किससे मिलता-जुलता था, अलग-अलग ले जाकर चित्र दिखाने और पूछे जाने पर दोनों ही बालकों ने गुरिल्लों और औरांग ओटान के चित्र चुनकर कहा—वह इसी शक्ल से मिलता-जुलता था पर यह नहीं, इससे भिन्न था ।

अनेक बार दिखा है यह हिममानव और हर बार उसने वैज्ञानिकों की बुद्धि को चकमकाया-चौंधाया है । अनेक प्रकार की कल्पनाओं और मान्यताओं के बावजूद यह निश्चित नहीं हो सका कि यह हिममानव है अथवा कोई जंगली जीव है । पर इतना तो सुनिश्चित है कि मात्र जीवट के बल पर ही वह इन प्रतिकूल परिस्थितियों में भी जीवित है ।

मानवी प्रगति के इतिहासवेत्ता यही कहते है कि मनुष्य सामाजिक प्राणी है । पारस्परिक सहयोग से ही उसने प्रगति के विभिन्न सोपान पार किए और आदान-प्रदान की रीति-नीति अपनाकर सुविधा-साधनों का उपार्जन किया । यह प्रतिपादन बहुत हद तक सही भी है, किन्तु इसे पत्थर की लकीर नहीं मानना चाहिये । यह मानने के भी कारण हैं कि जीवधारी का अपना निजी जीवट भी उसका अस्तित्व बनाए रहने, प्रकृति प्रतिकूलताओं से जूझने और निर्वाह के साधन जुटाने में बहुत बड़ी भूमिका निभाता है । पारस्परिक सहयोग वाली बात उतनी ही महत्त्वपूर्ण सच्चाई मनुष्य के निजी जीवट में भी केन्द्रीभूत है ।

बर्फीले प्रदेशों में रहने वाले हिरन, भालू, कुत्ते अनादि काल से उन्हीं विकट परिस्थितियों में रहते चले आ रहे हैं । बर्फीले समुद्रों में पाई जाने वाली मछलियाँ तथा अन्य जल जीव उसके प्रमाण हैं । मनुष्यों में ध्रुव क्षेत्र के निवासी 'एस्किमो' इसके प्रमाण हैं । आदिवासी, वनवासी, प्रजापतियों में अनेकों ऐसी हैं, जिन्हें पारस्परिक सहयोग पर कम और अपने निजी जीवट पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है ।

वानर वर्ग से मिलता-जुलता विशालकाय हिममानव इसका प्रमाण है । इसके अस्तित्व के सम्बन्ध में समय-समय पर अनेक प्रमाण मिलते रहते हैं । साथ ही यह भी पता चलता है कि वह स्वभावत: एकाकी रहता है । वंशवृद्धि की आवश्यकता से विवश होकर ही वे कभी जोड़ा खोजते होंगे और कुछ ही क्षण उपरान्त नर-मादा अपना-अपना रास्ता नापते होंगे । जीव-जन्तुओं में से अनेकों की एकाकी प्रकृति एवम् जीवनचर्या समझ में आती है किन्तु मनुष्य एवं उसके सजातियों के सम्बन्ध में उस तथ्य को गले उतारना कठिन पड़ता है । हिममानव इसका अपवाद है । उसके अस्तित्व को प्रमाणित करने वाले यह भी सिद्ध करते हैं कि वह मनुष्य का निकटवर्ती है । आकृति-प्रकृति में बहुत कुछ मिलता-जुलता है फिर भी वह हिम क्षेत्रों की कठिन निर्वाह परिस्थितियों में अपने आपको ढाले हुए है और बिना झुण्ड बनाए अपने जीवट के बलबूते चिरकाल से निर्वाह करता चला आता है । हिममानव के अस्तित्व और निर्वाह क्रम के सम्बन्ध में समय-समय पर जो जानकारियाँ मिलती रहती हैं, वे सभी असाधारण रूप से आश्चर्यजनक है ।

२५ मार्च सन् १९७० को ब्रिटिश पर्वतारोहियों का एक दल अन्नपूर्णा शिखर की सबसे ऊँची चोटी पर अपनी विजय पताका फहराने के उद्देश्य से दुस्साहस भरी यात्रा कर रहा था । चन्द्रमा की चाँदनी से आलोकित हिमाच्छादित प्रदेश में पर्वतारोही दल के सदस्य रात्रि विश्राम के लिए कैम्प लगाकर सोने की तैयारी में थे, अचानक सामने हाथी जैसी भयानक आकृति वाली लम्बी परछाईं के साथ एक वन्य जीव इधर-उधर घूमते दिखाई दिया । खतरे की आशंका से उन लोगों ने बाहर निकलकर राइफलें तान लीं । निरीक्षण करने पर पाया कि दूसरे जीव की आकृति-प्रकृति बहुचर्चित हिममानव जैसी है । आधा घंटे बाद वह उछल-कूद करता पर्वत शृंखलाओं की ओट में गायब हो गया

बर्नार्ड होवेल मेन्स ने अपनी यात्रा पुस्तक 'आन दि ट्रेक आफ अननोन एनिमल्स' में येति नामक मानवाकृति का वर्णन किया है, जिसका सारा शरीर घने लम्बे बालों से आच्छादित रहता, ऊँचाई ५ मीटर या इससे अधिक रहती है । येति के अतिरिक्त दो अन्य जीवधारियों का वर्णन है । 'रिमि' नामक प्राणी ३ से ४ हजार मीटर की ऊँची पहाड़ियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में रहते हैं, जिनकी ऊँचाई करीब ३ मीटर बताई गई है । दूसरा है 'न्यालमो' जो ४ हजार मीटर से अधिक ऊँचे बर्फीले स्थान में रहते हैं, जिनकी ऊँचाई ४ से ५ मीटर होती है । न्यालमों के चेहरे की त्वचा सफेद और सम्पूर्ण शरीर काले घने बालों से ढँका रहता है । उसके हाथ इतने लम्बे होते हैं, जो घुटने से नीचे तक जाते हैं । मुखाकृति मानव से मिलती-जुलती है । पैर बहुत बलिष्ठ, हाथों के बल से बड़े-बड़े पेड़ उखाड़ना और चट्टानें उठा फेंकना इसके लिए कोई बड़ी बात नहीं ।

सन् १९२१ में एवरेस्ट चढ़ाई करने वाले दल के अध्यक्ष सी० के० हावर्ड बरी ने इस प्रकार के मानव के अस्तित्व के बारे में पुष्टि की । लन्दन के प्रसिद्ध समाचार पत्र 'डेली मेल' में १९५४ व ५७ में ऐसे मानवों के पदचिह्नों के फोटोग्राफ छपे थे । १९५४ में हावर्ड बरी द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट में बताया गया, इसी प्रकार की पहाड़ी शेरपा ने ७ हजार मीटर पर मानवाकृति दिखाई । तब उन्हें विश्वास नहीं हुआ । उसे भेड़िया समझा लेकिन पदचिह्न मनुष्य जैसे थे । १९५७ में किसी वैज्ञानिक ने ५ हजार मीटर की ऊँचाई पर मानव आकृति वाला दो पैरों से चलने वाला विशालकाय जीव देखा, जो चलते-चलते एक-एक कर घासपात की तरह पेड़ उखाड़ रहा था । चेहरे का रंग हल्का पीला, शरीर पर घने बाल, सिर पर बाल जटाओं जैसे लम्बे थे ।

सन् १९४४ में वुड क्रिकलैंड एवं मैक्स ने अपनी यात्रा वर्णन में बताया कि ४ हजार मीटर की ऊँचाई पर मनुष्य जैसी ऊँचाई के लंगूर रहते हैं । दो पैरों से चलते हैं ।

सन् १९७० में प्रसिद्ध पर्वतारोही डॉन बिलन्स ने नेपाल में ४ हजार फुट की ऊँचाई पर बर्फ के पहाड़ पर रहस्यमय पदचिह्न देखे और चन्द्रमा के प्रकाश में पर्वत की तलहटी पर मानवाकृति को देखा।

ऐसी अन्य अनेक घटनाओं को तो वैज्ञानिकों ने निराधार सिद्ध कर दिया, लेकिन १९५१ में माउण्ट एवरेस्ट पर ६ हजार ५०० मीटर की ऊँचाई पर लिये गये पदचिह्नों के फोटोग्राफ अब भी रहस्यमय बने हुए हैं । एरिक सिप्टन और माइचेल वार्ड दोनों शेरपा तेनसिंह के साथ माउण्ट एवरेस्ट पर गये थे, उस समय की यह घटना है ।

स्मिथ सोनियल इन्स्टीट्यूट अमेरिका के प्रिमेटोलॉजी विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष प्रो० जॉन नेपियर ने ऐसी अनेकों घटनाओं के साथ उपर्युक्त घटना का अध्ययन किया और बताया कि ''माउण्ट एवरेस्ट की घटना को निराधार नहीं कह सकते हैं, लेकिन फिलहाल यह अनिर्णित ही बनी है ।''

'तास' की खबर के अनुसार कुछ रूसियों ने उत्तरी साइबेरिया के याकुत इलाके में 'छछना' (यती) देखा है । १९८० में समाचार पत्रों में खबर छपी कि केन्द्रीय चीन में ४८ से. मी. लम्बे पैरों के निशान मिले । १९७४ में नेपाली न्यूज एजेन्सी की रिपोर्ट के अनुसार नौजे (नामचे बाजार) में लगभग तीस किलोमीटर फेरिचे गाँव की १० साल की लाक्पा नाम की शेरपाणी ने यति देखा । वह अपने पाँच याक चरा रही थी कि एकाएक यति ने उसे उठाया और खड्डे में डाल दिया और उसके पाँचों याकों को गले से पकड़ कर मार दिया । बेचारी दहशत के मारे बाद में चार महीनों तक विक्षिप्त-सी रही ।

चीन के हुबेई प्रान्त में हाल के वर्षों में कई 'वनमानुष' देखे गये जिनकी लम्बाई दो मीटर से अधिक तथा अंग बालों से ढँके हुए थे ।

शंघाई के दैनिक 'वेनहुई बाओ' में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार १९७६ में हुबेई के निवासियों ने १४ बार वनमानुष देखे । अगले वर्ष उनकी खोज के लिए ११० सदस्यीय खोंजी दल का गठन किया गया । ये वनमानुष मानवों की भाँति पैरों के बल चलते हैं और ताली बजाने, चिल्लाने, हँसने व छड़ी आदि लेकर चलने की क्रियाएँ करते हैं, उन्हें मनुष्यों के साथ रहना अच्छा लगता है ।

उनके चेहरे भी बालों से ढँके होते हैं । मुँह बड़ा होता है तथा चेहरे का ऊपरी हिस्सा चौड़ा व निचला हिस्सा संकरा होता है ।

पत्र के अनुसार इन वनमानुषों के पूँछ नहीं होती और कान मनुष्यों से बड़े होते हैं तथा आँखें बड़ी व गहरी होती हैं । शंघाई विश्वविद्यालय के जीवविज्ञान विभाग के प्रोफेसर श्री लिडविन हुआंग के अनुसार ये वनमानुष मानव तथा ओरंगउटांग के बीच के जीव हैं ।

यों तो हिमालय में ३००० मीटर से ६००० मीटर की ऊँचाई तक जहाँ-तहाँ पर्वतारोहियों, चरवाहों और शेरपाओं को इसके पदचिह्न दिखाई दिये हैं, किन्तु इसका मुख्य क्षेत्र है—एवरेस्ट श्रेणी की हिमानियाँ और तलहटियाँ । इसलिए नेपाल में एवरेस्ट श्रेणी के लिए 'महालंगूर हिमाल' शब्द का प्रयोग मिलता है । महालंमूर शब्द से यही रहस्यमय हिममानव यती अभिप्रेत है ।

इसके अतिरिक्त अमेरिका में भी उसके अस्तित्व के प्रमाण मिले हैं । १९६९ की ३० जून को नेशनल बुलेटिन में प्रकाशित घटना का विवरण इस प्रकार है—एक अमेरिकी लड़की ने बताया कि अमेरिका के मिनेसोटा जंगल में एक भीमकाय हिममानव ने मुझे छेड़ा, किसी तरह मैंने उसकी दाहिनी आँख में गोली मारी और छुटकारा पाया । इस हिममानव का फ्रेंक डी० हेन्सन प्रदर्शन के लिए उपयोग करता था । सामान्यतः जंगली जानवरों को पिंजरों में रखा जाता है, लेकिन इसे बर्फ के कटघरे में रखा जाता था । प्रदर्शन के समय हेन्सन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सबको इसका परिचय इस प्रकार देता था कि साइबेरिया के पास आखोटस समुद्र में तैरते हुए ६ हजार पौंड के हिमशैल पर मैंने इसे पकड़ा था । उसके मर जाने के बाद वैसा ही कृत्रिम हिममानव प्रदर्शन हेतु बनाया, लेकिन आश्चर्य की बात है कि प्रसिद्ध जीवशास्त्री इवान सेंडरसन और बर्नाडे होवेलमेन ने 'बुलेटिन ऑफ दि रायल इन्स्टीट्यूट आफ नेचुरल साइन्सिस बेल्जियम' नामक पत्रिका में एक लेख प्रकाशित किया जिसके अनुसार—उन्होंने विशालकाय आकार के प्राणियों की वैज्ञानिक जाँच भी की, यह रहस्यमय मानवाकृति होमोपोंगाइड्स नामक प्राणी से मिलती है ।

सन् १९२० में स्विट्जरलैण्ड के जिओलोजिस्ट फ्रोंकोइस डी० लोइस ने एक महाकाय बन्दर जैसे प्राणी को गोली से मारा था, जिसकी लम्बाई २ मीटर थी । इस प्रकार के अनेकों बन्दर दक्षिणी अमेरिका में देखे गये हैं ।

सन् १९२४ में लॉयर्स नामक वैज्ञानिक ने बन्दर की आकृति से मिलते-जुलते भीमकाय प्राणी को देखने और उसके पदचिह्नों के फोटो प्रस्तुत किए थे ।

सन् १९३३ में एक रिपोर्ट समाचार पत्रों में छपी थी । ४५०० मीटर ऊँचाई के हिमाच्छादित पहाड़ों पर दो पर्वतारोही बैठे थे । वहाँ से उन्होंने मानवाकृति के विशालकाय प्राणी को ४०० मीटर नीचे पहाड़ की तलहटी में फल खाते देखा था । बाद में पदचिह्नों को देखकर मालूम हुआ कि वे रीछ के पद से भिन्न थे ।

सन् १९४० में छपी रिपोर्ट के अनुसार चैपमैन परिवार की दो महिलाएँ खेत में काम कर रही थीं । उन्होंने ३-४ मीटर ऊँचाई का घने बालों वाला राक्षसाकृति व्यक्ति देखा । उसे देखकर दोनों डरकर भागने लगीं, नदी के उस पार उनका घर था । वह व्यक्ति पीछा करते हुए नदी के किनारे आया, वहाँ लकड़ी की पेटी में मछलियाँ रखी थीं । उसने वह पेटी उलट दी ।

सन् १९५५ में एक व्यक्ति ने एक महाकाय शरीर वाली स्त्री को स्वयं से २० मीटर दूरी पर कुछ खाते हुए देखा । पेड़ की टहनियाँ तोड़कर उसके पत्ते खा रही थी । जब वह चली गयी, तो वह उस स्थान का निरीक्षण करने गया । वहाँ उसके मल में भी पत्तियों के टुकड़े थे ।

सन् १९५८ में एक बिल्डिंग का निर्माण कार्य चल रहा था । एक कारीगर ने जंगल की ओर का दरवाजा खोला । घने बालों से ढँके विशालकाय मनुष्य को देखा, मजदूर के हाथ में खाने की वस्तु थी उसने उसे दे दी, लेते ही वह चला गया ।

सन् १९६३ में एक मकान के निर्माण का कार्य चल रहा था । कांकरीट के बड़े-बड़े ब्लाक पड़े थे । एक ट्रक भी वहीं खड़ा था । रात्रि में एक विचित्र घटना घटी । दूसरे दिन प्रातः लोगों ने मनुष्य की पदाकृति के बड़े आकार में पदचिह्न देखे, वजनी कांकरीट ब्लाक इस तरह बिखरे पड़े थे जैसे किसी शक्तिशाली हाथों ने इधर-उधर कर दिया हो, ट्रक भी उल्टा पड़ा था ।

सन् १९६७ की घटना इस प्रकार है— शीतकाल में कई जंगली चूहे शीत निद्रा में सो जाते हैं । उन जंगलों में लोगों ने दो विशालकाय मानवाकृति एवं एक बच्चे को पत्थर में टटोलते कुछ देखा । कुछ पत्थरों के नीचे उन्हें जंगली चूहे मिल गए । इतने बड़े चूहों को वे केले की तरह खाने लगे ।

सन् १९६९ में अमेरिका के बोसवर्ग नामक शहर से बाहर जहाँ शहर के कूड़े का ढेर रहता था, वहाँ बड़ी आकृति के असंख्यों पदचिह्न देखे गए । गिनने पर उनकी संख्या १००८९ थी ।

सन् १९७० में जंगल में रात्रि के समय एक शिकारी ने मानवाकृति जैसे डरावने विशालकाय प्राणी को देखा । उसकी आँखें लाल प्रकाश से चमकती दिखाई दे रही थीं, वह ऐल्फ नामक जंगली जानवर को खा रहा था । पीछा करने पर वह भाग गया । ऐल्फ का अधखाया शरीर वहीं पड़ा था । उसके बड़े-बड़े पैरों के निशान भी देखे गए ।

सन् १९७२ में रबर की नाव में समुद्री यात्रा करने वाले दो यात्रियों ने बन्दर की आकृति जैसे बड़े प्राणी देखे । एक की ऊँचाई १·८ मीटर और दूसरे की १·२ मीटर थी । इन दोनों यात्रियों ने उत्सुकतापूर्ण नेत्रों से समुद्री यात्रियों को देखा । उनकी आँखों में भयानकता नहीं थी ।

प्रस्तुत घटनाएँ अपवाद रूप में ही नहीं, हिममानव का अस्तित्व अथवा अपनी जिजीविषा के बल पर उसकी दुर्गम स्थानों पर जीवित रहने की सम्भावनाएँ उजागर करती हैं । जीवों में विद्यमान यह अद्भुत क्षमताएँ ईश्वरीय विधान की करुणामूलक व्यवस्था है, ताकि उसकी संतति हर स्थिति में सुरक्षित बनी रहे । इस स्थिति व्यवस्था का कारण किन्हीं अन्य साधनों पर निर्भर नहीं है, बल्कि वह व्यवस्था स्वयं संचालित होती है । इस व्यवस्था के अनुसार स्वयं ही प्रतिकार हो जाता है और स्वयं ही सुरक्षा, सुफल की व्यवस्था बन जाती है । यह व्यवस्था नियम केवल मनुष्यों या सूक्ष्मजीवियों के लिए ही नहीं है वरन् समष्टि जगत् के सभी प्राणियों के लिए है । विश्वजगत के सभी प्राणी परम कारुणिक व्यवस्था से लाभान्वित होते और अपना जीवन सुखपूर्वक व्यतीत करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर्तव्य की गरिमा–सामान्य की महिमा

देखने, नापने और तोलने में छोटा-सा लगने वाला मस्तिष्क, जादुई क्षमताओं और गतिविधियों से भरा-पूरा है । उसमें प्रायः एक अरब स्नायु कोष हैं । इनमें प्रत्येक की अपनी दुनिया, अपनी विशेषता और अपनी सम्भावनाएँ हैं । वे प्रायः अपना अभ्यस्त काम निपटाने भर में दक्ष होते हैं । उनकी अधिकांश क्षमता प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहती है । काम न मिलने पर हर चीज निरर्थक रहती है । इसी प्रकार इन कोषों से दैनिक जीवन की आवश्यकताएँ पूरा कर सकने के लिए आवश्यक थोड़ा-सा काम कर लिया जाता है । तो उतना ही करने में वे दक्ष रहते हैं । यदि अवसर मिला होता, उन्हें उभारा और प्रशिक्षित किया गया होता, तो वे अब की अपेक्षा लाखों गुनी क्षमता प्रदर्शित कर सके होते, अलाटीन के चिराग की कहानी कल्पित हो सकती है पर अपना मस्तिष्क सचमुच जादुई चिराग सिद्ध होता है ।

मस्तिष्क का आकार बढ़ने के पीछे वह क्रमिक विकास है जो पूर्वजों की तुलना में आज के मस्तिष्क की स्थिति में हो चुका है । अब से कोई छै लाख वर्ष पूर्व मनुष्य का आदि पूर्वज कहा जा सकने वाला पुच्छविहीन-वानर 'एप्स' था । उसके मस्तिष्क का आकार ६२० से ६५० घन से. मी. था । इसके बाद अधिक विकसित नर वानर 'पिथेकेन्थोपस' के मस्तिष्क का आयतन ८०० से ९०० घन से. मी. था । आधुनिक मनुष्य का मस्तिष्क आयतन १४०० घन से. मी. है । यही क्रम बुद्धि विकास के साथ-साथ आगे भी चलता रहेगा और हमारी पीढ़ियाँ अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत मस्तिष्क वाली होंगी; पर यह आवश्यक नहीं कि खोपड़ी में भरे हुए भार की भी वृद्धि हो जाय । वह हल्का रह सकता है, किन्तु उसकी सम्वेदन कणिकाएँ अधिक जटिल एवं सूक्ष्म हो जायेंगी । वजन की दृष्टि में संसार के महामनीषियों के मस्तिष्क का भार हाथी के मस्तिष्क के समतुल्य अथवा कम था, तो भी वे हाथी से कहीं अधिक बुद्धिमान थे । वायरन का मस्तिष्क २२३९ ग्राम, तुर्गनेव का २०९२ ग्राम, शिलर का १८७१ ग्राम, पावलोव का १६५८ ग्राम और अनातोले फ्रांस का १०१७ ग्राम था जबकि हाथी का औसतन २००० ग्राम होता है ।

मानवी मस्तिष्क बड़ा विचित्र है । उसकी सूक्ष्म एवम् जटिल संरचना अद्भुत है । यह बारीकियाँ आमतौर से प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहती हैं । आमतौर पर उनका ४ प्रतिशत भाग ही काम आता है और ९६ प्रतिशत मूर्छित पड़ा रहता है । इस प्रसुप्त भाग में से जो जितना अधिक अंश जाग्रत कर लेता है, वह उतना ही अधिक बुद्धिमान बन जाता है । भविष्य में मानवी मस्तिष्क के इस सूक्ष्म भाग का अधिक मात्रा में जागरण होगा, इससे उसका आयतन तो बढ़ेगा, पर भार नहीं बढ़ेगा ।

न्यूरोलाजी–मस्तिष्क विज्ञान के अनुसार मस्तिष्क के बाहरी धूसर पदार्थ–ग्रे मैटर में तन्त्रिका कोशिकाओं न्यूरान्स की संख्या करीब १७ अरब है । अनुमस्तिष्क सेरिबेलम में १२० अरब और मेरुदण्ड में १ करोड़ ३५ लाख तन्त्रिकाएँ इसके अतिरिक्त हैं । इनके साथ-साथ ग्लाया स्तर की करीब एक खरब लघु कोशिकाएँ इन न्यूरान्स की सहेली बनकर और रहती हैं । इनके मिलन स्थल को तन्त्रिका बन्ध, न्यूरोग्लाया कहते हैं । इन सबका सम्मिश्रित प्रयास ही मस्तिष्कीय चेतना है । इतना सूक्ष्म, सही और सक्रिय कम्प्यूटर संसार में अब तक नहीं बना और न भविष्य में बनने की सम्भावना है, जैसा कि मानवी मस्तिष्क है ।

इन बातों पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट है कि मस्तिष्क, मात्र रासायनिक पदार्थों से बना माँस पिण्ड नहीं है । यदि ऐसा होता तो उसके भार विस्तार के अनुपात से उसकी क्षमता घटती-बढ़ती । हाथी और ह्वेल के मस्तिष्क विस्तार में बड़े होते हुए भी उस सूक्ष्म संरचना की दृष्टि से बहुत पिछड़े हुए हैं, जो मनुष्य को उपलब्ध है ।

भीतरी मस्तिष्क के चारों ओर दो काले रंग की पट्टियाँ लिपटी हुई हैं, इन्हें 'टेम्पोरल कोरटेक्स' कहते हैं । इनका क्षेत्रफल लगभग २५ वर्ग इन्च और मोटाई एक इन्च का दसवाँ भाग है । इनका स्थान कनपटियों के ठीक नीचे है । स्मृति का संचय और नियमन इन्हीं से होता है ।

मस्तिष्क के शल्य चिकित्सक डॉ० विल्डर पेन फील्ड ने इन पट्टियों की ढूँढ़ खोज की है और वे मुद्दतों पुरानी ऐसी स्मृतियों को जाग्रत करने में सफल हुए हैं, जिन्हे सामान्य या उपेक्षणीय कहा जा सकता है । महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालने वाली घटनाएँ तो प्रायः याद रहती हैं पर जो दैनिक जीवन में ऐसे ही आँखों के सामने से गुजरती रहती हैं, उनका कोई महत्व नहीं माना जाता । वे विस्मृति के गर्त में जा पड़ती हैं । पुरानी हो जाने पर उन्हें याद कर सकना सम्भव नहीं होता, फिर भी वे पूर्णतया विस्मृत नहीं कही जा सकतीं । वे टेम्पारल कोरटेक्स' पट्टियों के पुराने परत स्पर्श करने से जाग्रत हो सकती हैं । डॉ० विल्डर ने कितने ही व्यक्तियों के मस्तिष्क के मर्मस्थलों का विद्युत धारा से स्पर्श करके निरर्थक घटनाक्रमों को स्मरण कराने में सफलता प्राप्त की है ।

स्मरण शक्ति की विलक्षणता को ही लें, वह कई व्यक्तियों में इतनी अधिक मात्रा में विकसित पाई जाती है कि आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । लिथुयानिया का रैवी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐलिजा दो हजार पुस्तकें कंठाग्र करने के लिए प्रसिद्ध था । कितनी ही बार उलट-पुलट कर उसकी परीक्षा की गई और वह सदा खरा उतरा । फ्रांस का राजनेता लियान गैम्बाय को विक्टर ह्यूगो की रचनाएँ बहुत पसन्द थीं । उनमें से उसने हजारों सन्दर्भ के पृष्ठ याद कर रखे थे और उन्हें आवश्यकतानुसार धड़ल्ले के साथ घण्टों दुहराता रहता था । इसमें एक भी शब्द आगे-पीछे नहीं होता था । पृष्ठ संख्या तक वह सही-सही बताता चलता था ।

ग्रीक विद्वान रिचार्ड पोरसन को भी पढ़ी हुई पुस्तकें महीनों याद रहती थीं, जो उसने आज पढ़ा है उसे एक महीने तक कभी भी पूछा जा सकता था और वे ऐसे सुनाते थे मानो अभी-अभी रटकर आये हों । शतरंज का जादूगर नाम से प्रख्यात अमेरिकी नागरिक हैरी नेल्सन पिल्सवरी एक साथ बीस शतरंज खिलाड़ियों की चाल को स्मरण रखकर उनका मार्गदर्शन करता था । यह सब काम पूरी मुस्तैदी और फुर्ती से चलता था । बीसों खिलाड़ी उसका मार्गदर्शन पाते और खेल की तेजी बनाए रखते थे । प्रशा जर्मनी का लायब्रेरियन मैथुरिन बेसिरे दूसरों के कहे शब्दों की हूबहू पुनरावृत्ति कर देता था । जिन भाषाओं का उसे ज्ञान नहीं था, उनमें वार्तालाप करने वालों की बिना चूक नकल उतार देने की उसमें अद्भुत शक्ति थी । एक बार बारह भाषा-भाषी लोगों ने अपनी बोली में साथियों से वार्तालाप किए । मैथुरिन ने क्रमशः बारहों के वार्तालाप को यथावत् दुहराकर सुना दिया । बरमान्य का आठ वर्षीय बालक जेरा कोलवर्न गणित के अति कठिन प्रश्न को बिना कागज-कलम का सहारा लिए मौखिक रूप से हल कर देता था । लन्दन के गणितज्ञों के सम्मुख उसने अपनी अद्भुत प्रतिभा का प्रदर्शन करके सबको चकित कर दिया था । हम्बर्ग निवासी जान मार्टिन डेस भी अति कठिन गणित प्रश्नों को मौखिक रूप से हल करने में प्रसिद्ध था । उन दिनों उसके दिमाग की गणित क्षमता इतनी बढ़ी-चढ़ी थी कि आज के गणित कम्प्यूटर भी उससे प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकते थे ।

मस्तिष्क की अद्भुत क्षमताएँ यह बतलाती हैं कि संसार में ज्ञान-नाम्नी चेतन सत्ता ही सबसे विलक्षण तत्व है । उस पर ध्यान एकाग्र करके ही संसार की यथार्थता का अवगाहन किया जा सकता है । कबीर ने कभी कलम और स्याही नहीं छुई, ज्ञान स्वरूप की आराधना से वह कवियों के कवि हो गये । होमर और सुकरात पश्चिम के दो महान लेखक और दार्शनिक जिन्होंने न जाने कितने काव्य और लेख लिखे, इसे इतिहास की अद्भुत घटना ही कहेंगे कि उन्होंने न कहीं पढ़ा और न ही अपनी रचनाओं को लिखा । मस्तिष्क में ही बनाते और मस्तिष्क में ही लिख लेते । लम्बे से लम्बा पद वे जब चाहें वही अक्षरशः ज्यों का त्यों दुहरा देते । जबकि दूसरे लोग उन्हें कागज पर लिख-लिखकर महीनों तक रटते तो भी अधिक से अधिक ५० प्रतिशत ही याद कर पाते ।

हनावा होकीची जापान के मुसाशी प्रान्त का रहने वाला व्यक्ति सात वर्ष की आयु में अन्धा हो गया था, किन्तु उसने अपना जीवन उच्च कोटि के विद्वानों को इकट्ठा कर उन्हें पढ़ने में बिताया । उसने स्वयं ने सुनकर पढ़ा था और अपनी बौद्धिक क्षमता को इतना प्रखर बनाया था कि ४०००००० हस्तलिपि की विषय-सूची तैयार कर सकता था, उसने एक ऐसी पुस्तक संकलित की जिसके २८२० खण्ड है । ऐसी विशाल पुस्तक आज तक दुनिया में किसी ने भी नहीं लिखी । उसने वागाक्से में एक स्कूल भी खोला, जिसमें जापानी साहित्य पढ़ाया करता था । कहते हैं वह अँधेरे में पढ़ सकता था, इस तरह उसने मस्तिष्कीय चेतना को प्रकाश तत्व के रूप में सिद्ध कर दिया था ।

मस्तिष्कीय क्षमताओं का अभ्यास द्वारा विकास किया जा सकता है—किन्तु मस्तिष्क इतना जटिल है कि उसके अनोखेपन, उसकी बीमारियों को ठीक कर पाना विज्ञान के हाथ नहीं लग रहा है । कुछ घटनाएँ अवश्य ऐसी घट जाती हैं, जो अच्छे-खासे विज्ञानवेत्ताओं को भी हैरत में डाल देती हैं । उदाहरण के लिये हंगरी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक जिनका जन्म १७९१ में हुआ, श्रीकाउन्ट स्टवाअ जेचेनवी पागल हो गये । डाक्टरों को कोई भी इलाज, उपचार नजर न आया । किसी ने मजाक में कह दिया इन्हें शतरंज खेलने में लगा दो । एक युवक खोजा गया जो जेचेनवी के साथ शतरंज खेलने को राजी हो गया । ६ वर्ष तक बेचारा शतरंज खेला भी किन्तु इन ६ वर्षों में ही कुछ ऐसा क्रम-फेर हुआ कि जेचेनवी तो अच्छे हो गए पर वह युवक पागल हो गया और फिर कभी अच्छा नहीं हुआ । हवा में उड़कर पागलपन एक मस्तिष्क से दूसरे में कैसे चला गया वैज्ञानिक उस रहस्य को नहीं समझ सके तो उन्हें भी यही कहते बना—भगवान का अद्भुत खेल वही जाने मनुष्य उसे कहाँ तक समझ सकता है ?

मस्तिष्क की अनोखी हलचलों का विश्लेषण अणु जैविकी—मोलीक्यूलर बायोलाजी के आधार पर करते हुए स्वीडन की गोटनवर्ग यूनिवर्सिटी के जीवविज्ञानी होल्गर हाइड्रेन इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि मस्तिष्क को दक्ष बनाने वाले शिक्षण एवं चिन्तन कार्य कोशिकाओं में महत्त्वपूर्ण रासायनिक पदार्थों की मात्रा बढ़ा देते हैं और वे अधिक सम्वेदनशील बनकर बुद्धिमता का क्षेत्र विस्तार करती हैं । कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी के डॉ० सेमुअल बार्नडेस अपनी शोधों के आधार पर मस्तिष्क में काम करने वाली बिजली की अपेक्षा कोशिकाओं की रासायनिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थिति को अधिक श्रेय देते हैं । स्मृति का आधार वे उस अव्यव को पोषण देने वाले प्रोटीनों की रासायनिक स्थिति को देते हैं । यह स्थिति घटती-बढ़ती और बदलती रहती है ।

मस्तिष्कीय विकास, मात्र उस शिक्षण पर निर्भर नहीं जो स्कूलों में या समीपवर्ती लोगों से मिलता है । वह जानकारी बढ़ाना मात्र है । बलिष्ठ मस्तिष्कों की विद्युत शक्ति का प्रवाह यदि दुर्बल मस्तिष्कों की ओर मुड़ जाय तो उनकी तीक्ष्णता में भारी परिवर्तन हो सकता है और उसका परिचय विशेष प्रोटीनों की मात्रा की वृद्धि के रूप में सहज ही देखा जा सकता है । मस्तिष्कीय पोषण के लिए सुविकसित चेतना सम्पन्न मनस्वी लोगों का सान्निध्य अत्यन्त उपयोगी है, उनकी बढ़ी-चढ़ी प्राण शक्ति दुर्बल मनःचेतना की अभावपूर्ति कर सकती है । प्रयोगशालाओं में मामूली बिजली को कुछ विशेष कोष्ठकों में पहुँचाकर प्राणियों की प्रकृति कुछ समय के लिए बदलना सम्भव हो सकता है । प्रतिभाशाली लोगों का प्राण–दुर्बल मनःस्थिति को बदलने में स्थायी उपचार का प्रयोजन पूरा कर सकता है ।

येल निवासी मस्तिष्क विज्ञानी डॉ० जोजे डेलगाडो ने अपने प्रयोगों से यह सिद्ध कर दिया है कि मस्तिष्क में बाहर से बिजली पहुँचाकर उसके कार्य केन्द्रों को उद्दीप्त एवम् प्रसुप्त किया जा सकता है । तदनुसार उस प्राणी को इच्छित कार्य कराने और आज्ञा पालन के लिए विवश किया जा सकता है ।

डॉ० जोजे ने अपने प्रयोगो की सार्वजनिक प्रदर्शनी करके दर्शकों को आश्चर्यचकित कर दिया । उनके हाथ में एक विद्युत संचालक था और कुछ प्राणियों की खोपड़ी पर अमुक स्थान एवं अमुक संख्या में इलेक्ट्रोड लगा रखे गए थे । इस प्रकार यंत्र और प्राणी के बीच रेडियो सम्पर्क स्थापित हुआ । प्रेरित सूचनाओं के अनुसार प्राणी ऐसे काम करने लगे जो उनकी सामान्य प्रवृत्ति के विपरीत था । नम्र प्राणी उद्धत हो उठे और उद्धत प्रकृति वाले पूर्ण शान्त होकर एक कोने में जा बैठे । साँड़, बन्दर, कुत्ते, चूहे, बिल्ली आदि प्राणियों ने इस विद्युत संचार प्रणाली से प्रभावित होकर वे काम किए जिसकी आशा प्रदर्शन में उपस्थित जनता ने कभी भी नहीं की थी ।

मनुष्यों पर भी यह प्रयोग किए गए हैं और उनकी इच्छा-शक्ति, ज्ञान-शक्ति एवम् क्रिया-शक्ति पर नियन्त्रण करके अमुक प्रकार सोचने और अमुक प्रकार काम करने को उन्हें विवश कर दिया गया है । सम्मोहन क्रिया के वशीकरण में परिणति के लिए अब किसी व्यक्ति विशेष द्वारा किये गये प्रयोगों की अपेक्षा नहीं की जाती, यह कार्य इलेक्ट्रोनिक्स यंत्रों से ही सम्पन्न हो जाता है । अभी यह प्रयोग इसी सीमा तक सफल हुए हैं कि जब तक प्रयोग चलता रहे तब तक व्यक्ति वशवर्ती रहे, पीड़ा अनुभव न करे अथवा अन्य प्रकार उससे अनुशासन पालन कराया जा सके । प्रयोग की पकड़ ढीली होते ही यह पुनः अपनी पिछली स्थिति में चला जाता है और अभ्यस्त स्तर के आचरण करने लगता है । तूला विश्वविद्यालय के डॉ० राबर्ट हीथ ने ऐसा यंत्र बनाया है, जिसकी सहायता से वह आवश्यकतानुसार अपने मस्तिष्क की अमुक कार्यक्षमता को एक सीमा तक स्वयं नियंत्रित कर सकता है ।

शरीर व्यवस्था का नियन्त्रण केन्द्र

मस्तिष्क के निचले भाग में मटर के दाने के बराबर लटकी हुई पीयूष ग्रन्थि से निकलने वाले हारमोन गोनेडोट्रोफिक का ही कमाल है कि वह साधारण किशोरी को नवयुवती के रूप में परिणत करने वाले सारे साधन अनायास ही जुटा देता है ।

गोनेडोट्रोफिक रक्त में मिलकर अण्डाशय को जाग्रत करता है और उस जाग्रति के फलस्वरूप वहाँ एक नये हारमोन 'एस्ट्रोजन' की उत्पत्ति होने लगती है । एक दिन में उसकी मात्रा चीनी के दाने के हजारवें भाग की बराबर नगण्य जितनी होती है, पर उतने से ही प्रजनन अवयवों का द्रुतगति से विकास होता है और प्रायः दो वर्ष पूर्व की किशोरी, युवती के सभी चिह्नों से सुसज्जित हो जाती है ।

अण्डाशय यों प्रायः ४ लाख कोशिकाओं का बना होता है पर उसमें से ४-५ सौ ही विकसित होकर अण्ड बनता है । ग्यारह से लेकर चौदह वर्ष की आयु में क्रमशः एक-एक अण्ड विकसित होता है । उसके आधार पर प्रायः २८वें दिन रजोधर्म होने लगता है । जो तीन से लेकर आठ दिन तक स्रवित होता रहता है । वाशिंगटन विश्वविद्यालय के डॉ० एडगर एलन तथा एडवर्ड ए० डौजी ने पीयूष ग्रन्थि के प्रभाव से अण्डाशय में उत्पन्न होने वाली ऐसी अनेक सम्वेदनाओं का पता लगाया है जो यौन आकांक्षाओं के उतार-चढ़ाव के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका उत्पन्न करती हैं । उनके प्रभाव से मस्तिष्क और प्रजनन अंगों में ऐसी उत्तेजना उत्पन्न होती है, जिसके कारण यौन आकांक्षा में तीव्रता, मन्दता अथवा मध्यवर्ती स्थिति बनी रहती है । दोष अथवा श्रेय प्रजनन अंगों की संरचना को दिया जाता है पर इन मानसिक सम्वेदनाओं के पीछे वस्तुतः पीयूष ग्रन्थि का सूत्र संचालन ही काम करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीयूष ग्रन्थि का एक हारमोन है—प्रोलेक्टिव । यह स्तनों को प्रभावित करता है, उनका विस्तार करता है एवं दुग्ध उत्पादन प्रणाली को गतिशील बनाता है । इसकी न्यूनता रहे तो न तो स्तनों का विकास होगा और दुग्ध का उत्पादन भी स्वल्प ही होगा ।

यदि पीयूष ग्रन्थि में थोड़ी-सी खराबी रह जाय और एस्ट्रोन तथा प्रोजेस्टेरोन हारमोन समुचित मात्रा में न बनें तो अण्ड का विकास न हो सकेगा और नारी बन्ध्या ही बनी रहेगी । गर्भाशय की स्थानीय खराबी से तो बहुत ही कम संख्या में नारियाँ सन्तानरहित रहती हैं । वे खराबियाँ तो मामूली उपचार से ठीक हो जाती हैं, पर पीयूष ग्रन्थि के किसी अंग के अविकसित रहने पर हारमोन उपचार ही सफल हो सकता है । नपुंसकता नर की हो या नारी की, प्रधानतया पीयूष ग्रन्थि की खराबी के कारण ही होती है । जननेन्द्रिय की स्थानीय कमी वासना अथवा प्रजनन को अधिक प्रभावित नहीं करती । सन्तान के प्रति माता का प्यार क्यों कम या ज्यादा पाया जाता है । इसका स्रोत भी पीयूष ग्रन्थि से स्रवित होने वाले प्रोलेक्टिन हारमोन में पाया जाता है ।

पिछले दिनों यौन सम्वेदना को मनःशास्त्रियों ने मनुष्य की प्रेरक शक्ति माना था और कहा था मनुष्य के व्यक्तित्व का उत्थान, पतन इसी केन्द्र से होता है शूर, साहसी, कायर, निराश, प्रसन्न, दुःखी, आदर्शवादी, ईश्वर भक्त, अपराधी, अविकसित स्तर का निर्माण इसी केन्द्र से होता है, पर अब नया सिद्धान्त कायम हुआ है कि हारमोन ही यौन सम्वेदनाओं के लिए उत्तरदायी हैं । अब सबसे जटिल प्रश्न यह उत्पन्न हुआ है कि यह हारमोन किससे नियन्त्रित होते हैं, उनके स्रावों में उतार-चढ़ाव कौन लाता है ?

इस अनबूझ पहेली का समाधान शरीर और मस्तिष्क की समस्त संरचना को उलट-पुलट कर डालने पर भी खोजा न जा सकेगा । इसका आधार ढूँढ़ने पर वह जीव-चेतना के साथ जुड़े हुए जन्म-जन्मान्तरों के संग्रहीत संस्कारों एवं उसकी प्रबल संकल्प शक्ति में ही मिलेगा ।

जीव सत्ता का स्वतंत्र अस्तित्व मानने में अभी जो हिचकिचाहट विज्ञान के क्षेत्र में चल रही है, उस पर से अगले दिनों पर्दा उठने ही वाला है । जीव-चेतना का अपना स्वतंत्र अस्तित्व और उसकी भावानात्मक, चिन्तनात्मक, अभ्यस्त प्रवृत्तियों की सम्पदा से सुसज्जित होना जब मान लिया जायेगा तो इस प्रश्न का समाधान होगा कि हारमोन ग्रन्थियों से निकलने वाले अत्यन्त स्वल्प किन्तु अत्यन्त शक्तिशाली स्रावों की न्यूनाधिकता जो विभिन्न व्यक्तियों में पाई जाती है उसका कारण क्या है और उनमें कुछ परिवर्तन करना हो तो उसके लिए ताला खोलने की चाबी कहाँ मिलेगी ? जीवन का स्वतंत्र अस्तित्व शरीर में ऊपर भी विद्यमान है और उसकी अपनी उपार्जित विभूतियाँ भी रहती हैं यह मान लेने पर हारमोन अन्वेषण में जो गतिरोध इन दिनों उत्पन्न हो गया है इस प्रश्नवाचक चिह्न का सहज समाधान निकल आवेगा ।

शरीर एककोशा समाज

बहुत दिन तक पृथ्वी में केवल विवेक और ज्ञानशून्य पशुओं और जीव-जन्तुओं का बाहुल्य रहा । इनमें शक्ति थी, ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ थीं, किन्तु विवेक और विचार नहीं था । इसलिये यह सबके सब अपनी-अपनी मनमानी करते थे । एक-दूसरे को मारकर खा जाते थे, जो अधिक शक्तिशाली होता था वही समाज का मुखिया होता था और उसकी अन्तिम इच्छा ही न्याय होती थी । शक्तिशाली किन्तु विचारहीन के हाथ सत्ता होने से उसका दुरुपयोग होना स्वाभाविक था, उससे पशु-प्रवृत्ति वाले संसार में सर्वत्र अशान्ति छा गई । तब भगवान् ने मनुष्य शरीर पैदा किया, उसे बुद्धि और विचार भी दिए और यह विश्वास किया कि अब संसार में शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित की जा सकेगी ।

मनुष्य पशु-योनियों से विकसित हुआ है । इसलिये पूर्व संस्कार एवं पाशविक वृत्तियाँ भी निश्चित रूप से भड़कीं और उनकी पूर्ति का औचित्य ठहराने के लिये उसने उपयोगितावाद जैसे भ्रान्त सिद्धान्त का आश्रय लिया । यह देखकर ही ऋषियों ने ऐसी व्यवस्था बनाई थी कि मनुष्य पशुवृत्तियों से अपने आपको विलग माने और यह अनुभव करे कि अन्य जीवों की तुलना में उसे अधिक साधन और सुविधाएँ मिली हैं । यह आत्मकल्याण और प्राणिमात्र की व्यवस्था के लिये मिली है । अपनी क्षमताओं का उपयोग इस तरह करना चाहिये, जिससे अपना विकास भी हो सकता हो और सामाजिक शान्ति एवं सुव्यवस्था भी अक्षुण्ण रह सकती हो । वर्णाश्रम संस्कृति की स्थापना मनुष्य-समाज को उपयोगितावाद जैसी भ्रान्त धारणा से बचाने का ही एक वैज्ञानिक उपाय था । यह व्यवस्था ईश्वरीय आदेश की तरह है । विश्वशान्ति के लिए उसके अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय भी नहीं है ।

सहयोग और सामूहिकता को ईश्वरीय आदेश या आत्मा की आवश्यकता मानने का कारण हमारे सामने स्पष्टतया हमारा शरीर है । भगवान् बोलता नहीं, लिखकर भी कुछ बात समझाता नहीं, पर उपयोगिता के विपरीत उसने अपने आदेशों का अनुबन्ध अवश्य किया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य-शरीर की रचना और उनकी क्रिया-प्रणाली (एनोटामी एण्ड फिजियोलाजी) वह उत्तर है जिससे उपयोगितावाद का खण्डन किया जा सकता है ।

शरीर एक समाज है । ऐसा समाज जिसमें अनेक गुण, प्रकृति, कर्म एवम् स्वभाव वाले लोग निवास करते हैं । यों पृथ्वी एक है, पर उसमें रहने वाले जितने भी मनुष्य हैं वह सब अलग-अलग प्रकृति और स्वभाव के हैं । ठीक उसी प्रकार शरीर एक है पर उसमें कई अरब जीव कोश (सेल्स) पाए जाते हैं, वह सबके सब अनेक तरह के गुण, कर्म और स्वभाव वाले हैं तो भी शरीर जगत् के सारे प्राणी और उनके समाज परस्पर इस तरह व्यवहार करते हैं कि शरीर में कहीं भी किसी तरह का गतिरोध, अव्यवस्था एवं कलह उत्पन्न नहीं होती । जब सारे जीव-कोश सहयोग और सामूहिकता के नियम का पालन करते रहते हैं, सारा शरीर प्रसन्नतापूर्वक अपने कार्य में जुटा रहता है । इस व्यवस्था में उपयोगितावाद को प्रश्रय मिल गया होता तो मनुष्य का एक महीने जीवित रहना कठिन हो जाता । जिस स्थान के कोश सशक्त होते दूसरे कमजोर कोशों को खाते चले जाते तथा मनुष्य और शरीर कुछ क्षणों में ही धराशायी हो जाता ।

मनुष्य में इतना विवेक नहीं कि वह यह अनुभव करे कि हम एक ही पितामह की सन्तान परस्पर भाई-भाई हैं और इसलिए हम सजातीय हैं । जीव-कोश बताते हैं कि अनेक समाज, संस्कृति और राष्ट्रों में विभक्त मनुष्य दरअसल एक ही माता प्रकृति और पिता परमात्मा के पुत्र हैं । यदि इस मान्यता को स्वीकार कर लिया गया होता तो परस्पर उसी तरह का प्रेम, स्नेह, सहयोग, सौजन्य, उदारता, बुद्धिमत्ता, दया, करुणा, ममता, समता और कर्तव्यभावना का विकास हुआ होता जिस तरह मनुष्य शरीर में छोटे-छोटे कोश (सेल्स) व्यवहार करते और शरीर समाज की व्यवस्था को सन्तुलित बनाए रखते हैं । यदि विश्वशान्ति, समृद्धि और कल्याण की भावना को जीवित रखना हो तो हमें उन्हीं आदर्शों का पालन करना होगा ।

मनुष्य शरीर के सभी कोश चाहे वह पैर में हों या पेट में और मुख में एक कोश से पैदा हुए हैं । प्रारम्भ में स्त्री के 'ओवम' में एक ही जीव-कोश (स्पर्म) प्रविष्ट हुआ था उसी से अनेक कोशों वाला शरीर अस्तित्व में आया था । शरीर में जितने कोश हैं वह सब अपने को भाई-भाई मानते हैं और उनके जितने भी समाज बने हैं, सब परस्पर सहयोग, सहानुभूति, दया, करुणा, उदारता का पालन करते हैं ।

शरीर का कोई भी कोश बिना खाद्य के जीवित नहीं रह सकता । ऑक्सीजन ही वह खाद्य है जो रक्त के द्वारा शरीर के सम्पूर्ण भागों में पहुँचता और प्राण-संचार करता है । रक्त पैदा करना, सफाई करना और संग्रह करना हृदय का काम है, उसके लिये वह जीवनभर क्रियाशील रहता है । हृदय एक क्षण भी रुकता नहीं । उदार मनुष्य उसी तरह एक क्षण भी विश्राम किये बिना सोते-जागते हृदय के समान तप करके अपनी शक्ति बढ़ाते रहते हैं और उस संचित शक्ति या तप से सारे समाज को जीवनदान देते रहते हैं । यदि उपयोगितावाद का सिद्धान्त सच रहा होता तो हृदय अपने रक्त की एक बूँद भी औरों को न देता । अपने लिए तो वह बहुत थोड़ा लेता है शेष सारा का सारा समाज को दे देता है । इसलिए हृदय बड़ा है, पूज्य है, सम्माननीय है । यदि वह इस तरह आत्मत्याग न करता तो शरीर कैसे जिन्दा रहता ?

शरीर रचना शास्त्र (एनाटामी) का एक बहुश्रुत सिद्धान्त है—'एनक्सिया आफ ब्रेन' जिसका अर्थ है यदि मनुष्य को ३ मिनट तक रक्त न मिले तो उसका तुरन्त अन्त हो जाये । मस्तिष्क के मर जाने का अर्थ है शरीर का मर जाना । उसी प्रकार माँसपेशियों को रक्त न मिले तो वह मर (गैंगरीन) जाती हैं । कारोनरी आट्रीज को रक्त न मिले तो दिल का दौरा आ जाता है, रेटिनल आट्रीज को रक्त न पहुँचे तो दीखना बन्द हो जाता है । आँतें, जिगर, फेफड़े, माँसपेशियाँ, शरीर का कोई ऐसा हिस्सा नहीं जिसे रक्त का उचित वितरण न होता हो । इससे सिद्ध होता है कि साधनों का एक स्थान पर संग्रह (स्टोर) नहीं होना चाहिये वरन् उन्हें क्रियाशील रहना चाहिये । सामाजिक जीवन में जहाँ भी साधनों का उदारतापूर्वक वितरण होता रहता है, वहाँ व्यवस्था रहती है, शान्ति और प्रसन्नता बनी रहती है, पर जहाँ ऐसा नहीं होता किसी स्थान को साधनों का मिलना बन्द कर दिया जाता है तो शरीर के समान उसका दुष्प्रभाव सारी मनुष्य जाति को भुगतना पड़ता है ।

साधनों का वितरण समान रूप से नहीं किया जा सकता । आवश्यकता और कार्य का स्वरूप देखना पड़ता है, जो ज्यादा महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं, उन्हें अधिक अधिकार, साधन और सुविधाएँ देनी ही पड़ती हैं, उनकी तुलना में जो कम महत्त्व का स्थूल कार्य करते हैं । शरीर में ज्ञान का, चेतना का महत्त्व सबसे अधिक है । व्यवस्थापक ही न रहे तो व्यवस्था कहाँ रहेगी ? मकान मालिक ही न हो तो मकान कहाँ सुरक्षित रह सकता है ? व्यवस्थापक को, मकान मालिक को अधिक महत्त्व देने की तरह ही शरीर में ज्ञान वाले भाग की भी अधिक देख-रेख की आवश्यकता है । शरीर में यह व्यवस्था है । हृदय से बाईं ओर (लेफ्ट वेन्ट्रिकिल) सबसे बड़ी धमनी (एओर्टा) निकलती है और सबसे शुद्ध रक्त का सबसे शुद्ध भाग क्रैरोटेड एवं इनामिनेटेड धमनी द्वारा होकर वरटेबरल आर्टीज में पहुँचता है । यहाँ से सेरीबल आर्टीज में वह शुद्ध रक्त पहुँचकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सारे शरीर को पोषण प्रदान करता है । मस्तिष्क में जितना शुद्ध रक्त पहुँचता रहता है उतना ही शरीर निषेधात्मक आवेग (निगेटिव इम्पल्सेज) जैसे क्रोध, चिड़चिड़ापन, भय, आतुरता, आलस्य से बचा रहता है और प्रसन्नता एवम् दीर्घजीवन बना रहता है । इससे यह पता चलता है कि जिस समाज में उन बुद्धिजीवियों को जो लोगों को सद्ज्ञान और सत्कर्मों की प्रेरणा देते रहते है, पर्याप्त पोषण मिलता रहता है, वहाँ सुख और शान्ति बनी रहती है । जीवन और प्राण बना रहता है ।

समाज की सुरक्षा का प्रश्न द्वितीय है । पोषण अनिवार्य रूप से मिले पर समाज को बाहरी आक्रमणों से बचाना भी आवश्यक है । ऐसे वर्ग को जो शान्ति और सुव्यवस्था की रक्षा करते हैं क्षत्रिय कहते हैं और उन्हें द्वितीय श्रेणी का शुद्ध रक्त दिया जाता है । हाथ शरीर की रक्षा करते हैं उन्हें अंगों की अपेक्षा अधिक सक्रिय रहना पड़ता है, यह समझकर ही हृदय उन्हें सबवलेरियन आर्टीज द्वारा द्वितीय श्रेणी का रक्त प्रदान करता है । उसमें भेद-भाव नहीं आवश्यकता को ही प्राथमिकता दी गई है ।

तीसरे नम्बर पर शरीर के वे निचले भाग पेट, पैर आदि आते हैं, इन्हें डिसेन्डिंग एओर्टा से रक्त पहुँचाया जाता है । उन्हें आवश्यकतानुसार मात्रा तो अधिक दी जाती है, पर उसकी शुद्धता दोनों से कम होती है ।

समाज में एक शूद्र वर्ग भी होता है । शूद्र का अर्थ कोई जाति नहीं । विभाग सभी कर्मानुसार हैं । ब्राह्मण वह है जो बुद्धिजीवी ही नहीं सच्चरित्र और परमार्थी भी है, क्षत्रिय वह है जो समाज की बुरे तत्वों से रक्षा करता है, जो अपने स्वार्थों को तो थोड़ा अधिक देखता है, पर समाज के पोषण का कार्य ईमानदारी से करता है । शूद्र वह है जो सद्गुण रहित है । यद्यपि वह हानिकारक है पर त्याज नहीं । उसका भी उपयोग करना चाहिये यह शिक्षा हमें अपने शरीर रूपी समाज से मिलती है ।

सारे शरीर में प्रयोग के बाद रक्त में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है प्लाज्मा वही बना रहता है अर्थात् श्वेताणु (ह्वाइट ब्लड कार्पसल्स) एवं लाल-अणु (रेड ब्लड कार्पसल्स) की मात्रा वही रहती है, केवल शुद्धता नष्ट हो जाती है । ऐसे रक्त को शिराओं द्वारा लौटाकर हृदय में पहुँचाने की व्यवस्था की गई है । शिराओं में कुछ वाल्व लगे रहते हैं । वह रक्त को नीचे नहीं जाने देते, दूसरे फेफड़ों में से साँस निकलने के बाद वायु-शून्यता (वैकुअम) उत्पन्न होने से भी रक्त ऊपर की ओर दौड़ने लगता है । माँसपेशियों के दबाव के द्वारा भी अशुद्ध रक्त हृदय की ओर बढ़ता है । तात्पर्य यह है कि समाज में फैल रही गन्दगी और कुरीति का सब तरफ से ऐसा सामना करना चाहिये जिससे उसे शुद्ध और उपयोगी बनाया जा सके । ऐसा नहीं होता तो समाज विशृंखलित होने लगते हैं, ठीक उसी तरह जिस तरह शरीर में अशुद्ध रक्त न लौटे तो बीमारी (कन्जस्टिव कार्डियक फेलर) हो जाती है और हाथ-पैर में सूजन, फेफड़ों में बलगम इकट्ठा हो जाता है । दिल बड़ा (डाइलेटेड) और कमजोर हो जाता है ।

साधनों का अभेद वितरण, आवश्यकतानुसार वितरण और समाज में गुणों की दृष्टि से शुद्धीकरण का क्रम जहाँ शरीर की भाँति चलता रहता है, वहाँ स्थिर शान्ति और सुव्यवस्था बनी रहती है । शरीर उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है । इसी आधार पर ही ऋषियों ने वर्णाश्रम संस्कृत का ढाँचा तैयार किया था । सारा समाज अपने-अपने कर्तव्यों का पालन किस प्रकार करे इसका निर्धारण भी उन्होंने शरीर के विभिन्न अवयवों की कार्य प्रणाली का अध्ययन करके किया था । उसमें भी भेदभाव का नाम नहीं है । सामाजिक अवस्था को ही वहाँ भी प्रमुख स्थान दिया गया है । साम्यवाद और उपयोगितावाद का यह मिला-जुला रूप ही इस पृथ्वी में स्थायी शान्ति का आधार हो सकता है । इसमें व्यक्ति को उदार और त्यागी होना पड़ता है, सामाजिक उपयोगिता को ध्यान में रखकर सर्वहित परायण, कर्तव्यपरायण होना पड़ता है ।

मान भी लें कि विकास-क्रम सही है पर····

विकास-क्रम या आनुवंशिकी विज्ञान के अनुसार मनुष्य दूसरे प्राणियों से विकसित हुआ अथवा उसने अपनी सारी विशेषताएँ पूर्वजों से अर्जित की । इस सिद्धान्त को एक सीमा तक ही सही माना जाना चाहिये । पूरी तरह यही सत्य है अथवा विकास की अंतिम सीमा इसी को मान लेना पूर्वाग्रस्त मान्यताओं से प्रेरित व पीड़ित कहा जाएगा । यदि इन मान्यताओं को पूरी तरह सच मान भी लिया जाय तो उन घटनाओं को क्या कहेंगे जो आए दिन मनुष्य की बुद्धि को चकरा देती हैं । उदाहरण के लिए भूरी या नीली आँखों वाले माता-पिता की संतान भी भूरी या नीली आँखों वाली हो तो इसे कोई आश्चर्यजनक बात नहीं कहेंगे, क्योंकि बच्चे का शरीर माता-पिता के शरीरों के गुणसूत्र (क्रोमोसोम्स) से ही तो बनता है ? स्वभाव और गुणों में भी पैतृक संस्कारों का प्रभाव रहता है । कई बार तो यह इतने जबर्दस्त रूप में व्यक्त होता है कि कोई आश्चर्य किए बिना नहीं रह सकता ।

उदाहरण के लिए फ्रांस के क्लरमाण्ट शहर का क्रेटीन परिवार । क्रेटीन एक पादरी था, एक बार घर वालों से किसी बात पर विवाद हो जाने के कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ईर्ष्यावश उसने एक ऐसी लड़की से विवाह कर लिया जिसके वंशजों को पीढ़ियों से कुख्यात अपराधी माना जाता था । इस दम्पत्ति से जीन क्रेटीन नामक पुत्र पैदा हुआ जिसे हत्या और डाकेजनी के अपराध में फाँसी दी गयी । जीन क्रेटीन के पियरी, टामस तथा बैपटिस तीन लड़के हुए । अपने पिता के समान यह तीनों भी अपराध जगत के मूर्धन्य निकले और यह तीनों भी फाँसी की भेंट चढ़े । पियरी के एकलौते लड़के जीन फ्रान्सिस, टामस के दो पुत्र—फ्रान्सिस और मार्टिन, बैपटिस की एक मात्र संतान जीन फ्रान्सिस—इन सब में भी हत्या और डकैती के दुर्गुण पाये गये, वह सभी फाँसी से या सजा भुगतते मरे । मार्टिन को मार्टिन जूनियर केने के सुधार गृह में रखा गया, वहाँ उसने आत्महत्या कर ली । जीन फ्रान्सिस और उसकी पत्नी मेरी टेम से सात संतानें—सभी पुत्र जन्मीं और वह सभी हत्या और लूटपाट के मामले में दंड के भागी बने ।

किन्तु जो बातें परम्परागत न रही हों यदि वह प्रकाश में आएँ तो यही कहा जा सकता है कि संसार में कोई एक ऐसी सत्ता अवश्य है, जो प्राकृतिक नियमों से भी सर्वोपरि है । लैटले (फ्रांस) में एक बार भयंकर तूफान आया । तेज बिजली कड़की और टूट पड़ी एक किसान के कृषि फार्म पर । उस फार्म में हजारों काली और सफेद भेड़ें थीं । बिजली से केवल निर्जीव वस्तुएँ बच सकती हैं । काले-गोरे का भेदभाव उसे क्या ? किन्तु यहीं तो उसने भेदभाव किया जितनी काली भेड़ें थीं मर गईं किन्तु उस बिजली गिरने के फलस्वरूप, एक भी सफेद भेड़ का बाल तक बाँका न हुआ ।

कोई पदार्थवादी कह सकता है कि इसमें कोई बात शरीर कोशों से सम्बन्धित रही होगी जिसे विज्ञान न समझ पाया हो पर जिसने सफेद और काली भेड़ों को गुणशः दो भागों में बाँट दिया हो—एक को विद्युत प्रभावक और दूसरे को विद्युत शक्ति से भी सुरक्षित रहने से ओतप्रोत ।

दो आँख, दो हाथ, दो कान दो नथुने सबके होते हैं किन्तु आज तक विश्व मानव के इतिहास में दो दिलों का एक भी उदाहरण नहीं, जिससे यह कहा जा सके कि यह आनुवंशिक गुण होगा, किन्तु अपवाद से रिक्त रह जाये तो ईश्वरीय सत्ता को कौन माने ठोस पत्थर के अन्दर जल और उस जल में मेंढक जैसा अद्भुत करतब था भगवान् का । नेपल्स (इटली) जियूसेप डीमाये के शरीर में एक नहीं दो-दो हृदय थे दोनों काम करते थे, दोनों के अनुसार शरीर की सारी मशीनरी का ढाँचा भिन्न था । लन्दन की एकाडमी आफ मेडिसिन आकर्षित हुई और उसने इस विलक्षण रहस्य को जानने का यत्न किया । दुर्भाग्य से दिल तो तभी पढ़े जा सकते थे जब उनकी चीरफाड़ हो । भला चंगा आदमी उसके लिए क्यों राजी होता ? डीमाये तैयार तो हो गये और अपना एक दिल ६० हजार रुपये में बेच भी दिया, किन्तु करार के अनुसार वह दिल मृत्यु के बाद ही लिया और परीक्षण किया जा सकता था, सम्भव है वैज्ञानिकों ने उससे कोई नई जानकारी पाई हो पर अभी तक उसके बारे में कोई नया अनुसंधान सामने नहीं आया ।

चीन के चिहली नगर में एक यूनानी रहता था, उसका जन्म १३८९ में हुआ, मृत्यु १४६४ में । ७५ वर्ष वह संसार के विलक्षण आश्चर्य के रूप में जिया । शी-स्वान नामक इस व्यक्ति का शरीर पारदर्शक था, उसके शरीर के भीतर का माँस, हड्डियाँ श्वास गमन के मार्ग तक एक्स किरणों से भी अधिक स्पष्ट सभी अंग देखे जा सकते थे । मनुष्य शरीर में अद्भुत शक्ति के प्रदर्शन का यह अद्भुत उदाहरण था जिसका विज्ञान कोई भी हल प्रस्तुत नहीं कर सका ।

शांसी प्रान्त के राज्य मन्त्री श्री लूमिन की आँखों में दो-दो पुतलियाँ थीं, जो जीवविज्ञान का अविजित-आश्चर्य ही बनी रहीं । लूमिन बाद में गवर्नर हो गये पर उनकी आँखों से काम करने की क्षमता में कोई अन्तर नहीं था । फ्रांस के टूरकोइंग स्थान में सन् १७९३ में एक ऐसी लड़की ने जन्म लिया जिसकी केवल एक आँख थी, वह १५ वर्ष तक 'क्लीमेंट चाइल्ड' के नाम से विख्यात रही । यह एक आँख भी भारतीय योगियों की तृतीय आँख का प्रमाण थी और नाक के ठीक ऊपर दोनों भौहों के बीच थी । योगविज्ञान की मान्यता है कि इस स्थान पर पीयूष ग्रन्थि होती है, जो वस्तुतः आध्यात्मिक तीसरे नेत्र का काम करती है । उसका जागरण हो जाने पर मनुष्य करोड़ों मील दूर की भी वस्तुयें देख और अनुभव कर सकता है । यह लड़की इस आँख से सब कुछ देख सकती थी । उसे देखकर यह अनुमान किया जा सकता है कि भगवान ने उसे भेजकर मनुष्य को यह समझाने का प्रयास किया होगा कि मनुष्य बाह्य दृष्टिवादी ही न रहकर अन्तर्द्रष्टा भी बने, बिना उसके वह विश्व के यथार्थ को जान समझ नहीं सकता ।

ग्रान्सवर्ग के एक चरवाहे वाल्टर रिडिल मैन के पास एक भेड़ थी । भेड़ें संसार में बहुत हैं, बहुत हो चुकीं और न जाने कितने अभी होंगी इस सामान्य जीव से लाभ तो हैं पर उसमें कोई विशेषता न होने से उसे कोई महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं । उसके शरीर में ऊन उगने का एक प्राकृतिक नियम है । दुनिया की हर भेड़ के शरीर में ऊन ही उगती है किन्तु इस भेड़ की पीठ पर घास उगती थी और भगवान की उस प्रेरणा का दिग्दर्शन कराती थी कि यह शरीर माटी का एक घरोंदा मात्र है । प्रकृति की खूबसूरती है कि उसने हर शरीर में नई आकृति गढ़ी पर उससे यह सत्य ओझल नहीं हो जाता कि शरीर का उपयोग केवल पार्थिव सुखों तक ही सीमित है । यदि उसका असाधारण उपयोग करना हो,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो उसके चेतन अंश की भी खोज और प्राप्ति की जानी चाहिये । परमात्मा ने यह प्रेरणा इस भेड़ की पीठ में घास उगाकर दी और अपनी महत्ता भी प्रतिपादित कर दी कि वह प्राकृतिक नियमों से भी बढ़कर कलाकार और रचनाकार है ।

ईश्वर वाणी है—'अद्भुतः अश्रुतोऽहम्'—मैं अद्भुत हूँ जो कभी नहीं सुना गया वह भी मैं ही हूँ । यह थोड़े-से उदाहरण इस तथ्य के साक्षी हैं । प्रयत्न करें, साधनाएँ करें, तो उसके विराट् तात्विक स्वरूप को पाकर हम धन्य भी हो सकते हैं, जिसके लिए मनुष्य जैसा शरीर जीव को प्रदान किया गया है ।

वेदन के सम्राट ग्रैंड डची के उत्तराधिकारी कास्पर हासर विसके के बारे में कहा जाता है कि वह दिन में सितारे देख व गिन सकता था । कास्पर हासर का बाल्यावस्था में अपहरण कर लिया गया था । उसे १८ वर्ष तक लगातार अँधेरी काल कोठरी में रखा गया । एक रात वह चुपचाप काल-कोठरी से निकल भागा तब वह १८ वर्ष की उम्र का था । अन्सपच साइबेरिया में पहली बार उसने प्रकाश के दर्शन किए पर तब तक न जाने उसकी किस आन्तरिक शक्ति का विकास हो चुका था कि वह दिन में भी बखूबी तारे देख सकता था ।

कास्पर हासर ही नहीं विलक्षणताओं से भरे इस संसार में जीव-तत्त्व की सर्व समर्थता, पूर्णता और उसके अद्भुतपन के सैकड़ों प्रमाण-पत्र मिलते हैं । सन् १०२४ को राजसिंहासन में बैठे इंग्लैण्ड के सम्राट 'एडवर्ड दि कनफेसर' जिसने १०६६ तक राज्य किया—की आँखें लाल थीं, चमड़ी दूध के समान तथा बाल और दाड़ी बर्फ के समान सफेद थे ।

आस्ट्रेलिया में एक 'बुश टर्की' नामक एक चिड़िया पाई जाती है जो अंडे से निकलते ही उड़ जाती है और शत्रुओं के आक्रमण से लेकर अपनी खुराक ढूँढ़ लेने तक के सारे काम-काज भी करने लगती है । लगता है कि उसे सारा ज्ञान अदृश्य संसार से ही सिखाकर भेज दिया जाता है ।

अद्भुत और अश्रुत

विचित्र प्रकार के जीव-जन्तुओं के लिये न्यूयार्क अमेरिका का चिड़ियाघर विश्व-प्रसिद्ध है । कई वर्ष पूर्व यहाँ एक ऐसा सर्प लाया गया, जिसके दो सिर थे । भारतवर्ष में एक 'दुमुँहा' नामक सर्प पाया जाता है, इसके दोनों तरफ मुख होते हैं । किंवदन्ती है कि यह सर्प ६ माह एक तरफ के मुख से चलता है,' ६ माह दूसरी ओर से । पर न्यूयार्क का यह सर्प जिसका नाम 'किंग स्नेक' रखा गया, एक ऐसा सर्प था, जिसके एक ही तरफ दो मुख थे । दोनों मुख लगभग ३-३ इन्च थे । दोनों में दो-दो आँखें, नाक, कान और जीभें भी थीं । श्वास और भोजन ग्रहण करने की नली भी दो थीं, जो आगे चलकर मिलती और एक हो जाती थीं ।

साँप के कहीं दो सिर नहीं होते, इसलिए क्रमागत सन्तानों में भी अनन्त काल तक ऐसी विशेषता नहीं पाई जानी चाहिये थी, फिर सर्प के दो मुख क्यों हो गए ? मजेदार बात तो यह थी कि दोनों मुखों के दो मस्तिष्क, दो व्यक्तित्व भी थे । जब कभी एक मुख कोई शिकार पकड़ता लोभी व्यक्ति की तरह दूसरा भी उस पर झपट पड़ता ।

एक दिन किसी बात पर दोनों सिर झगड़ बैठे । एक ने आवेश में आकर दूसरे को मुख में भर लिया । मनुष्य जाति जिस तरह धन से नहीं अघाती और अधिक, और अधिक की तृष्णा में सामाजिक विषमता उत्पन्न करती है, साँप ने उसी तृष्णा में दूसरे मुख को अन्त तक निगल लिया । चिड़ियाघर के अधिकारी दौड़े । किसी तरह दोनों को छुड़ाया पर दुर्गति ऐसी हो गई थी कि अन्ततः वह सर्प मर ही गया ।

एक कछुए के साथ भी प्रकृति ने गहरी मजाक की थी । गोल आकृति वाले इस कछुए के भी दो सिर थे । दोनों के लिये दो पैरों का विभाजन प्रकृति ने कर दिया था । पर उनमें कभी समझौता नहीं हो सका । एक सिर पूर्व की ओर तैरना चाहता तो दूसरा पश्चिम को । परिणाम यह होता कि वह जहाँ का तहाँ चक्कर काटता रह जाता । भारतवर्ष को स्वतंत्रता प्राप्त किए आज कई वर्ष हो गए पर अपनी खींचा-तानी की प्रवृत्ति के कारण यहाँ के निवासी जितने दुःखी, पराधीनता में थे, स्वाधीनता में उससे भी अधिक दुःखी हैं ।

दण्डकारण्य क्षेत्र (जगदलपुर) के एक कबायली परिवार में नसैया नामक गोंड के एक पुत्र हुआ, जिसकी छोटी-सी पूँछ भी थी । यह लड़का जिसका नाम हनमैया रखा गया, जब १४ वर्ष की आयु का हुआ, तो उसकी पूँछ काफी बढ़ गई । बस्तर में महारानी अस्पताल के सिविल सर्जन डॉ० ए० सी० गौड़ ने लड़के की परीक्षा करके बताया कि लड़के के सामान्य रूप से हाथ-पैर बढ़ने के साथ-साथ पूँछ भी बढ़ रही है । पूँछ गोलाकार और रीढ़ की सबसे नीचे निकोनी हड्डी के एक इन्च ऊपर थी, लड़का जब चलना, तब वह पैण्डुलम की तरह हिलती ।

डेनवर (कोलम्बिया) में एक किसान के पास हरफोर्ड नामक गाय है, जिसके दो स्थानों पर थन हैं, सामान्य स्थान में भी और पीठ में भी । दोनों थनों से दूध निकलता है । दो जीभों वाली गायें बहुत मिलती हैं पर थनों वाली नहीं । फिर थनों में दूध पीयूष ग्रन्थि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(पिट्यूटरी ग्रन्थि) की क्रिया से बनता है । इसलिये दोनों स्थानों से पीयूष ग्रन्थि का सम्बन्ध निर्विवाद है और वह यह बताता है कि भीतर ही भीतर शरीरों की गुप्त रचना करने वाली सत्ता कुछ भी कर सकने में समर्थ है । आँख फोड़वा (ग्रास हापर्स) की दो आँखें होती हैं, वह एक नियम है, पर एक ग्रास हापर्स वह भी होते हैं, जिनकी पाँच-पाँच आँखें होती हैं और पाँचों आँखें देखती भी हैं । कैलीफोर्निया के ह्विटियर में लैरीस्टोन नामक व्यक्ति ने एक बतख पाली । डैफी नामक यह बतख आधे-आधे अंडे देती है और उन आधे अंडों से ही पूरे और स्वस्थ बच्चे पैदा होते हैं ।

बहुत दिन पहले जापान में एक मुर्गा उत्पन्न हुआ था । जैसे सब मुर्गे होते हैं, ऐसा ही यह भी था, किन्तु इस मुर्गे की पूँछ असामान्य रूप से लम्बी अर्थात् पूरे ३० फुट लम्बी थी । जैसे किसी पेटू आलसी और मुफ्त का माल मारने वाले का पेट इतना मोटा हो जाता है कि उसका चलना-फिरना कठिन हो जाता है, अपनी इस अनावश्यक लम्बी पूँछ के कारण 'याकोहामा काक' नामक यह मुर्गा भी चल-फिर नहीं पाता था । एक पिंजरा बनाया गया था । उसमें बैठने के लिए एक ऊँची डाल जैसी बनाई गई थी, बेचारा दिन भर उसी में बैठा रहता था । इस मुर्गे को जो भी देखता हँसे बिना नहीं रहता था । कभी-कभी वह बाहर निकाला जाता था तो दो-तीन नौकर उसकी पूँछ ऊपर उठाकर चलते थे, तब थोड़ा-बहुत घूम भी पाता था, नहीं तो बहुत पाकर भी वह गुमसुम बैठा रहता था ।

मनुष्य जाति यों शरीर से भिन्न प्रतीत होती है । पर इच्छाएँ, आकांक्षाएँ, आवश्यकताएँ सबकी एक तरह की हैं । संसार में व्यवस्था बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि इच्छाओं और आवश्यकताओं के औचित्य पर विचार किया जाये और सबको आवश्यकता के अनुसार जीवनदायी सुविधाएँ मिलती रहें । इसकी एक शर्त है, वह यह कि लोग अपने लिए कम से कम चाहें, समाज के लिए अधिकतम देने की भावना रखें । देने वाला घाटे में नहीं रहता ।

दक्षिणी ट्रिनीडाड द्वीप पर पहली बार पर्यटक 'नवीन' की खोज में गए तो उन्हें पहले से ही स्वागत के लिए तैयार 'टर्न' और 'अल्बेट्रास' नाम के दो पक्षी मिले । बतख की-सी आकृति वाले इन पक्षियों की विशेषता यह थी कि वह बिना हिचकिचाहट के यात्रियों के पास चले आए, एक बार भगवान राम के सहयोगी सहचर रीछ-वानर समुद्र के किनारे बैठे कुछ परामर्श कर रहे थे, तब कहीं से संपाती नामक भयानक गिद्ध वहाँ जा पहुँचा, उसे देखते ही उन सबके प्राण सूख गए थे । वैसे ही इन यात्रियों के हृदय किसी अनिष्ट की आशंका से धड़क उठे थे पर इनके कन्धों पर आ बैठने वाले इन पक्षियों ने मानो उनको लज्जित करते हुए कहा हो—"हम तुम्हारे जैसे किसी भी प्राणी को अपने स्वार्थ के लिए पीड़ित-प्रताड़ित और मारकर खा जाने वाले नहीं, आत्मा की आकांक्षाएँ क्या हैं, हम उसे जानते और आचरण करते हैं ।"

यह बातें—बेचारे पक्षियों ने मुख से नहीं कहीं पर उनके व्यवहार से यही भावार्थ निकलता था । इन पक्षियों ने इनका स्वागत किया । कुछ उन्हें अपने घोंसलों तक ले गये, उनका मनुष्य की तरह अभिवादन किया और यात्रियों के अभिवादन का उत्तर भी दिया ।

सारी पृथ्वी में यह जो प्रकृति दिखाई दे रही है, वह हमारी दृष्टि में भले ही तुच्छ जान पड़े पर अध्ययन यह बताता है कि वह एक ही आत्मचेतना की विलक्षण और रहस्यपूर्ण परिणति है । एक ही चेतना अपनी इच्छा आकांक्षाओं के रूप में अनेक शरीर धारण करती रहती है । प्रकृति निर्जीव नहीं, जीवित क्रिया शक्ति है, गुण और जीवन पद्धति उतनी ही विलक्षण है, जितनी इच्छा और वासनाओं वाला यह संसार रहस्यपूर्ण है ।

डार्विन के मन में विकासवाद सिद्ध करने का एक भूत सवार था, इसी कारण उन्होंने यद्यपि सैकड़ों विलक्षण जीव-जन्तुओं का अध्ययन किया पर, उन सबकी शारीरिक रचना का वह अंश ही चुनने में व्यस्त रहे जो विकासवाद का सिद्धान्त सिद्ध करने में सहायक मिला । आज का जीवशास्त्र का विद्यार्थी कदाचित प्रश्न कर देता है कि यदि प्राकृतिक परिवर्तनों और इच्छाशक्ति के कारण ही जीव एककोशीय अवस्था से विकसित होकर बहुकोशीय क्षुद्र जन्तुओं की श्रेणी में आये और क्रमशः हाइड्रा, मछली, घोड़ा, बन्दर आदि बनते-बनते मनुष्य बन गया तो फिर जीवों के स्वभाव और बनावट की इस विलक्षणता का क्या रहस्य है ? वह किस बात के विकसित परिणाम हैं जो आज भी अनेक जीवों में दिखाई देते हैं ।

उत्तरी अमेरिका में अलास्का से बाजा केलीफोर्निया तक समुद्र में ६० फुट से १८०० फुट तक की गहराई में 'लेम्प्रे' जाति की एक मछली पाई जाती है, इसका नाम है 'हैगफिश' । कोई कल्पना नहीं कर सकता कि कई इन्जनों वाले जेट विमान के समान इस मछली के ४ हृदय होते हैं, पेट होते ही नहीं और नथुना भी केवल एक ही होता है, दाँत जीभ में होते हैं । अपने शरीर को रस्सी की-सी गाँठ लगाकर यह किसी मरे हुए जीव के शरीर में घुस जाती है और उसका सारा शरीर चटकर जाती है, पर आश्चर्य है कि भोजन न मिले तो भी वह वर्षों तक जीवित बनी रह सकती है ।

हैगफिश किस जीव का विकास है यह सोचना पड़ता तो डारविन अपना सिद्धान्त अपने हाथों से काट देते । स्वयं आज का विज्ञान जगत भी प्रकृति के इस रहस्य को सुलझा सकने में असहाय अनुभव कर रहा है । सन् १८६४ में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोपन हेगन की साइन्स एकेडेमी ने घोषित किया कि जो वैज्ञानिक यह खोज कर लेगा कि हैगफिश की प्रजनन विधि क्या है उसे भारी पुरस्कार दिया जायेगा पर आज तक भी यह पुरस्कार कोई वैज्ञानिक प्राप्त नहीं कर सका ।

जिस प्रकार 'हैगफिश' की प्रजनन विधि ज्ञात नहीं हो सकी, उसी प्रकार वैज्ञानिक सर्वत्र पाये जाने वाले तिलचट्टे (काक्रोच) की आयु निर्धारित करने में असफल रहे हैं । अनुमान है कि करोड़ों वर्ष पूर्व पृथ्वी में देनोसारस श्रेणी के जीवों का आविर्भाव हुआ तब तिलचट्टा पृथ्वी में विद्यमान था । इसकी सम्भावित आयु ३५ करोड़ वर्ष बताई जाती है, इतनी अवधि पार कर लेने पर भी कठोर से कठोर और भयंकर से भयंकर प्राकृतिक परिवर्तन झेल लेने पर भी इसकी शारीरिक रचना में न तो कोई अन्तर आया न विकास हुआ तब फिर जीव-जगत् को नियमित और प्राकृतिक परिवर्तनों के अनुरूप विकास की संज्ञा कैसे दी जा सकती है ।

तेज से तेज गर्मी, वर्ष भर बर्फ जमी रहने वाले ग्लेशियर, पहाड़ और मैदान सब जगह यह तिलचट्टे पाये जाते हैं । महीने भर तक भोजन पानी नहीं मिले तो भी उसका काम चल सकता है । दो महीने तक केवल पानी पर उपवास करके दिखा सकता है कि भोजन शरीर की आवश्यकता नहीं तो ५ महीने तक वह सूखा भोजन ही लेता रहकर यह सिद्ध कर देता है कि मनुष्य पानी के बिना भी शरीर धारण करने में समर्थ हो सकता है । यह सब चेतना के आन्तरिक गुणों पर आधारित रहस्य हैं, जिन्हें केवल शारीरिक अध्ययन द्वारा नही जाना जा सकता, उसे समझने के लिए आत्मचेतना के विज्ञान का एक नया अध्याय खोलना आवश्यक है । यह अध्याय जीव के शरीर धारण की प्रक्रिया से सम्बन्धित और आध्यात्मिक तथ्यों व तत्वदर्शन का अध्याय होगा, जिसके लिये हमारे पूर्वजों ने कठोर से कठोर तप किया था और उन सनातन सत्यों का प्रतिपादन किया था जो, धार्मिक विरासत के रूप में अभी भी हमारे पास विद्यमान हैं ।

तिलचट्टे की भूख भी भयंकर होती है । वह आहार प्रारम्भ कर देता है तो अपने अंडे-बच्चे भी नहीं छोड़ता है । मादा अपने बच्चों से बड़ा स्नेह रखती है प्राय: हर दो दिन में यह १ अंडा दे देती है । एक रूसी जीवशास्त्री ने एक बार पौने पाँच लाख तिलचट्टों के ऐसे शव ढूँढ़ निकाले जो एक ही तिलचट्टे दम्पत्ति की सन्तान थे । नर काक्रोच बड़ा सफाई व सौन्दर्य पसन्द जीव है । वह घंटों अपने शरीर और मूँछों की सफाई में लगाता और उन्हें सुन्दर ढंग से सँवारता है । इसकी मूँछें लम्बी होती हैं और एंरियल का काम देती हैं । मूँछों की मदद से वह अँधेरे में भी अपना रास्ता आसानी से तय कर लेता है । विज्ञान के लिए यह खुली चुनौतियाँ हैं । आज जो खोजें मनुष्य ने कर ली हैं प्रकृति उनका ज्ञान आदिकाल से अपने गर्भ में छिपाये हुए है । सृष्टि के यह विलक्षण जीव प्रकृति की चेतना के ही परिणाम हैं वह इस बात के साक्षी भी हैं कि प्रकृति एक 'परिपूर्ण वैज्ञानिक' है । विज्ञान की पूर्ण शोध और जानकारी का लाभ किसी प्रकृतिस्थ को ही उपलब्ध हो सकता है ।

तिलचट्टे की विलक्षणताएँ और भी है । उसके बच्चे सप्ताहों तक भूखे रह सकते हैं । वह स्वयं बर्फ की चट्टान में दब जाता है, बर्फ पिघलकर उधर निकलती है और यह इधर उठकर चल देता है । इसका बाहरी आवरण इतना कठोर होता है कि पाँव से दब जाने पर भी यह मरता नहीं है । दौड़ने में यह किसी सुन्दर विमान से कम नहीं । यह सब गुण ही हैं जिन्होंने वैज्ञानिकों का ध्यान इसकी शोध के लिए आकर्षित किया । पर बेचारे जीवशास्त्री उसकी इस शारीरिक विलक्षणता पर ही उलझे रहे, मानसिक रहस्यमयता का एक भी पर्दा वे उघाड़ न सके ।

अनेक अस्त्र-शस्त्र बनाकर मनुष्य ने बौद्धिक चतुरता और दक्षता का परिचय दिया पर हम नहीं जानते हैं कि प्रकृति इस सम्बन्ध मे कितनी धनवान है । उष्ण कटिबन्धीय समुद्र में एक ट्रिगर फिश (वह मछली जिसके शरीर में काँटे होते हैं) पाई जाती है । इसका नाम है 'हुमुहुमु-नुकुनुकु' जैसा विलक्षण नाम वैसी ही विलक्षण स्वयं भी । इसकी पूँछ, पीठ और सिर पर कुछ काँटे होते हैं, जिन्हें यह अपनी इच्छा और नाड़ियों के द्वारा जब चाहती है तरेर कर सीधा और तीक्ष्ण कर देती है, फलस्वरूप किसी भी दुश्मन की इस पर घात नहीं लग पाती । इसके दाँतों की बनावट विचित्र होती है, दोनों जबड़ों में बाहर आठ-आठ दाँतों के अतिरिक्त ऊपर के जबड़े में एक प्लेट की शक्ल में ६ दाँतों की भीतरी पंक्ति भी होती है । ऐसा किस सुविधा के लिए है यह वही जानती है क्योंकि प्रकृति की कोई भी रचना निरर्थक नहीं, भले ही मनुष्य सारगर्भित कल्पनाओं के स्थान पर वह क्रियाकलाप और रचनाएँ गढ़ता रहे जो उसे लाभ पहुँचाने के स्थान पर हानिकारक होती हों ।

न विकासवाद, न आनुवंशिकता

इस तरह की घटनाओं से सिद्ध होता है कि एक सार्वभौमिक सत्ता है, जो अपनी इच्छा से विलक्षण कौतुक उपस्थित करती रहती है । इन विलक्षणताओं का कोई भौतिक आधार नहीं होता इसलिए उन्हें आध्यात्मिक ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहना उपयुक्त लगता है । ऐसे अनेक उदाहरण प्रस्तुत हैं जिनका कोई भौतिक आधार नहीं, वे मात्र किसी इच्छा शक्ति के ही चमत्कार प्रतीत होते हैं, जो स्वतंत्र बुद्धि के रूप में विराट् विश्व में क्रियाशील होती है—उसे ही परमात्मा कह सकते हैं ।

इटली के एक ४३ वर्षीय गिवनी गैलेन्ट की आँखें उल्लू की आँखों जैसी हैं । सन् १९२८ में उसने अपने माता-पिता से मिलने हरमिन जाने के लिए बीसा के लिए आवेदन किया । उसे अस्वीकार करते हुए पब्लिक हैल्थ इन्स्पेक्टर ने कहा—आपको दिन के अन्धेपन का रोग है, इसलिए यात्रा की अनुमति नहीं दी जा सकती । सचमुच ही वह केवल रात में ही देख सकता था, दिन में उसे कुछ दिखाई नहीं देता था । इस प्रकार उसने यह अमान्य कर दिया कि देखने के लिए प्रकाश आवश्यक होता है, उसने एक प्रकार से सिद्ध किया कि जीवन के सारे गुण उसकी सूक्ष्म चेतना में विद्यमान हैं, इसलिए उसे ही जानना और समझना चाहिये ।

यह विचित्रताएँ किसी भी आनुवंशिक गुण (हेरीडिटी करेक्टर) पर आधारित नहीं होने से अधिक विस्मयपूर्ण हैं । जन्मान्ध हुआ, जन्म से एक आँख न रही हो, पर बिना आँखों के जन्म हुआ हो ऐसा एक भी उदाहरण इतिहास में नहीं मिलता । लेकिन फ्रांस में सबेलनासी आक्स में एक ऐसा लड़का भी जन्मा जिसके एक भी आँख नहीं थी । आँखों का स्थान सपाट था और विज्ञान को चुनौती दे रहा था कि यह किस आनुवंशिक गुण का प्रभाव है । उस लड़के के ६ और भी भाई-बहिनें हैं जिनमें से किसी में भी इस तरह का कोई चिह्न नहीं है ।

इससे भी विलक्षण था मोमिन्स का डब्ल्यू० जे० बासर्ड । अभी तक विज्ञान का यही तर्क है कि स्त्री व पुरुष के गुणसूत्र (क्रोमोसोम) मिलकर ही शरीर की विविधता का निर्माण करते हैं । यह तो सम्भव है कि माता और पिता के वंशजों में किसी की नीली या भूरी आँखें रही हों और उसके फलस्वरूप कभी नीली आँखों वाली तो कभी भूरी आँखों वाली सन्तानें पैदा होती रही हों, पर बासर्ड इन सभी वैज्ञानिक मान्यताओं का अपवाद था अर्थात् उसकी एक आँख तो नीली थी और एक भूरी, ऐसा किस कारण हुआ? पता नहीं चल पाया पर इतना स्पष्ट हो गया कि जिस प्रकार कोई आदमी कापी पर अपनी इच्छा से चित्र बनाया करता है, कोई एक सार्वभौमिक विचार शक्ति है जो संसार की विचित्रताओं का नियमन और सृजन करती है ।

आँख वालों की दुनिया के कुछ और आश्चर्य– भौंरे की आँखों का लेन्स ऐसा होता है कि वह पहले एक आकृति की हजार आकृतियाँ बनाकर भेजती है, पर दिखाई देती है अन्त में वही एक की एक वस्तु । मक्खियों और तितलियों की आँखें भी ऐसी ही होती हैं । इस विचित्रता में सम्भवतः एक शिक्षा यह है कि पंच-भौतिक पदार्थों से बनने वाले करोड़ों दृश्यों वाला इस संसार में मनुष्य को भूलना नहीं चाहिये वरन् एक और अन्नादि तत्व को ही पकड़ना और प्राप्त करना चाहिये । यह तभी सम्भव है, जब कुछ चार आँखों वाली समुद्री मछलियों के समान अपनी दृष्टि चौमुखी बनाएँ और आठ-आठ हाथों-पाँवों वाली स्क्वीड मछली की तरह अपने चारों तरफ के वातावरण के अध्ययन की सक्रियता दर्शाएँ । आँखों की इस अनोखी दुनिया में भेड़िया-मकड़ी को भुलाया नहीं जा सकता, जिसके कि आठ आँखें होती हैं, इन आठों आँखों का उपयोग वह अपने चारों तरफ के क्षेत्र की जाँच और अपने शिकार की टोह में करती है । विवेकशील मनुष्य भी अपनी बुद्धि की आँखों से चारों तरफ देखकर निर्णय करते हैं, तभी वह संसार के दैन्य और दुर्भाग्य को जीतकर सफल और समर्थ कहलाते हैं ।

आँख या शारीरिक अंगों का मिलना न मिलना कोई बड़े महत्व की बात नहीं । प्रसंग बताते हैं कि उसने संसार के हर कण को परिपूर्ण बनाया है । हमें उस मूल बिन्दु को खोजने भर की आवश्यकता है । स्काटलैण्ड के इनवर्नस स्थान में ५ फरवरी सन् १८६६ में एक लड़का पैदा हुआ, नाम था विलियम मैकफर्सन, वह जन्मान्ध था, उसके हाथ भी नहीं थे फिर भी वह मूनटाइप के उभरे हुए अक्षरों को अपनी जीभ की नोंक से पढ़ लेता था, अपने इस दुर्भाग्य के बावजूद भी वह अपने आपको दुनिया का सबसे अधिक सुखी व्यक्ति कहा करता था ।

फ्रैंकफोर्ट में ग्रेटेल मेयर नामक ऐसी महिला थी, जिसके दो जीभें थीं । लगता है वे पूर्व जन्मों में बहुत बोलने वाली थीं, तभी उन्हें भगवान ने दो जीभें दीं, पर बोल सकना उनके लिए पूँजी के धन की भाँति दो जीभों से भी सम्भव न हुआ । कुमारी फैनी माइल्स अमेरिका के ओहियो प्रांत के विख्यात नगर सिनसिनाटी में १८८० में जन्मी, उसके पैर के पंजे २-२ फीट लम्बे थे, जबकि शरीर सामान्य था । यह विचित्रता यह संकेत देती थी कि मनुष्य कोई स्वतंत्र इकाई न होकर इतर प्राणियों का सजातीय है, ऐसा न होता तो यह आनुवंशिक गुण मनुष्य में कहाँ आ जाते । ऐसी घटनाएँ ही जीवन के अन्य योनियों में भ्रमण और पुनर्जन्म का भी प्रमाण हैं, उनको ठुकराया जाना सम्भव नहीं है ।

कई बार की विचित्रताएँ तो और भी आश्चर्यजनक होती हैं और वह बताती हैं कि यह संसार किसी बहुत ही कौतुकी सत्ता का खेल है । जार्जिया के ग्रीनबिले नगर में ए० एफ० डाडी नामक एक स्त्री को प्रसव के समय अंडा देते देखकर लोग चौंके । कुछ दिन तक यह प्रतीक्षा की जाती रही कि अंडा फूटेगा और बच्चा निकलेगा किन्तु जब अंडा न हिला न डुला तो उसे फोड़ा गया, भीतर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

से निकला एक मूँगफली का दाना । कुछ लोग इस घटना पर हँसे पर अधिकांश यह सोचते रह गये कि यह किस विकासवाद की बला है ।

शिकागो (अमेरिका) में जान० टी० बोवर्स के वायु नली नहीं थी, स्वर तन्त्री तथा कण्ठ पिटक आदि कुछ भी नहीं थे, फिर भी वह सामान्य व्यक्तियों की भाँति ही अपनी जीभ से बोलता और उच्चारण करता था । यह सारी घटनाएँ यदा-कदा और कहीं एक-आध व्यक्तियों के साथ घटित होती हैं । स्पेन में करवेरा डी ब्रुट्रेगा नामक एक गाँव में सभी व्यक्तियों के हाथ तथा पैरों में कई-कई अँगुलियाँ हैं । ६ अँगुलियाँ तो सभी के हैं केवल एक बुड्ढा ही ऐसा है जिसके १०-१० अँगुलियाँ हाथ-पैरों में हैं । यह लोग संसार में सामान्य लोगों को आश्चर्य की दृष्टि से देखा करते हैं ।

लिसे नमडीयर (आयरलैण्ड) की घटना है । वहाँ की एक महिला ब्रिद्दी कैशन्स एक ऐसी स्त्री थी, जिसने अपने गर्भ से एक बार, दो-चार नहीं पूरे १०० मुर्गी के अंडे दिए । मातृ भावनावश कहें अथवा किन्हीं पूर्वजन्मों के संस्कार, जिस तरह मुर्गी अपने अंडों के ऊपर बैठ कर उन्हें बच्चे न निकलने तक सेती रहती है । ब्रिद्दी कैशल्स भी लगातार एक घोंसला बनाकर और अंडे उसमें सुरक्षित रखकर तीन सप्ताह तक बैठी रही । तीन सप्ताह बाद उन अंडों से १०० मुर्गी के बच्चे पैदा हुए ।

मनुष्यों और जीव-जन्तुओं में दृष्टिगोचर होने वाली ये विचित्र विलक्षणताएँ सिद्ध करती हैं कि जीवन का विकास और स्वरूप किन्हीं सद्नियमों के अनुसार नहीं होता । जीवों की यह तरह-तरह की आकृति और प्रकृति देखते-देखते शास्त्रकार की जैविक व्याख्या अनायास ही याद आ जाती है ।

योग वासिष्ठ ४४।४५।१-२ एवम् ४।४३।१-२ में कहा है—"हे राम ! जिस प्रकार जल में अनेक बुलबुले बनते और बिगड़ते हैं, उसी प्रकार सब देश और सभी कालों में यह चेतना ही अनेक जीवों के रूपों में उत्पन्न और नष्ट होती रहती है । यह सब चित्त के रूपान्तर का फल है । जीव अपनी इच्छा और कल्पना के द्वारा लाखों और करोड़ों की संख्या में तीनों कालों में उत्पन्न होते रहते हैं । जैसे झरने के जल कण ।"

नृतत्व विज्ञानियों का मत है कि पिछले छह लाख वर्षों में अकेले कुल ७५ अरब मनुष्य पृथ्वी पर जन्म ले चुके व न्यूनाधिक जीवन जीकर मर चुके हैं । यह गणना उन्होंने उपलब्ध एन्थ्रोपोलॉजिकल आँकड़े तथा जन्म व मृत्यु दर का विश्लेषण करके की है ।

भारतीय दर्शन की उक्त मान्यता ईश्वर की महानता को स्पष्ट करती है और बताती है कि मानवी चेतना भी एक क्षुद्र जीव ही है जो बौद्धिक विकास के कारण इस स्थिति में है कि अपनी यथार्थ अवस्था का ज्ञान, अनुभव और साक्षात्कार कर सकता है और ८४ लाख योनियों में भ्रमण कराने वाली इच्छाओं, वासनाओं को जीतकर विराट् आत्मा, ब्रह्म और परम पद तक की प्राप्ति कर सकता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

दृश्य जगत की परमार्थ प्रेरणा

आत्मा के लिए भगवान ने जितने शरीर बनाये हैं, उनमें से एक मनुष्य शरीर ही सर्वांगपूर्ण और सुन्दर है । मनुष्य शरीर के एक-एक अवयव, चक्र, कोण और उपत्यिकाओं में भगवान ने ऐसी-ऐसी शक्तियाँ भरी हैं, जिनके द्वारा वह सम्पूर्ण त्रैलोक्य में शासन कर सकता है । बुद्धि-विवेक, ज्ञान, श्रवण, दर्शन, घ्राण, सन्देश, सम्प्रेषण के लिए वाणी, लेखनी आदि के ऐसे-ऐसे सुन्दर साधन उसे मिले हैं, जो सृष्टि के किसी भी प्राणी को नही मिले । भगवान की शक्तियाँ अनन्त हैं पर वह प्रकाश में नहीं आ सकती हैं । मनुष्य को उसने अपना प्रतिनिधि बनाकर इस आशा से भेजा कि वह अपनी क्षमताओं का उपयोग विश्व-कल्याण और प्राणिमात्र के हित में करेगा । किन्तु बन्दर के हाथ तलवार वाली कहावत की तरह मनुष्य ने उन ईश्वर प्रदत्त शक्तियों का दुरुपयोग ही किया । बेईमान और रिश्वतखोर ऑफिसर की तरह उसने किया तो परपीड़न, शोषण और अत्याचार ढाए या फिर रोटी, बेटी, रुपया पैसा वाले निकृष्ट जीवन मे गलकर मर गया और अपने पीछे परमात्मा की दी हुई विभूति—मनुष्य शरीर को भी कलंकित कर गया ।

मनुष्य से तो अच्छे रहे पेड़-पौधे जो अपने बन्धन-युक्त मूक जीवन से भी प्रेरणाओं के स्रोत उँड़ेलते रहते हैं । योग वासिष्ठ में महर्षि वशिष्ठ ने भगवान राम से तत्त्व-चर्चा करते समय कहा था—

ये च मध्यमधर्माणो मृतिमोहादनन्तरम् ।
ते व्योमवायवलिताः प्रयान्त्योषधिपल्लवम् ।।

—३। ५५। २४,

हे राम ! ऐसे जीव जिनके पुण्य मध्यम श्रेणी के होते हैं, वह वायु द्वारा उड़कर औषधि फल-फूल आदि वृक्षों की योनियों में जन्म लेते हैं । अपने-अपने कर्मों का फल भोगकर वे पुनः पुण्यार्जन के लिए मनुष्य शरीर में आते हैं ।

कम फल देने वाले पौधों के बीज ऐसी जगह ले जाएँ, जहाँ उसे विकसित होने के लिए पर्याप्त जलवायु, ताप, खाद्य पदार्थ और हवा की नमी (माएशचर) उपलब्ध हो, वह बीज भी अधिक फल देने वाली जाति में बदल जाते हैं । वही सिद्धान्त मानवीय जीवन में भी काम करता है । हमारे समाज में अनेक पिछड़े और पद-दलित लोग पड़े हैं, वह भगवान के बनाये या कर्मभोग के दोषी नहीं । मनुष्य की योनि कर्मभोग प्राप्त कर लेने के बाद ही मिलती है, यहाँ जन्म लेने के बाद उसका अच्छा-बुरा होना, बढ़ना, विकसित होना या दीनता, दरिद्रता की स्थिति में पड़े रहना अधिकांश परिस्थितिवश होता है । इसलिए विचारशील लोग अपनी योग्यता का थोड़ा भाग अपने स्वार्थ में लगाकर अधिकांश शक्तियाँ समाज सेवा में जुटाते हैं । शिक्षा, स्वाध्याय, स्वास्थ्य, सहयोग आदि के द्वारा कम शिक्षित और दलित लोगों को भी आगे बढ़ाते हैं, इसका सामूहिक फल प्रत्येक मनुष्य के लिए लाभदायक ही होता है । इसका एक दूसरा पहलू भी है और वह यह कि कमजोर मनुष्य या अविकसित मनुष्य बाह्य परिस्थितियों से सीखकर भी अपनी क्षमताएँ और योग्यताएँ इसी प्रकार बढ़ा सकता है ।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, वह परस्पर सहयोग, दूसरों के अनुभवों और ज्ञान के सहारे से ही तो आज की इस विकसित अवस्था तक पहुँचा है । इसलिए वह भी केवल लेने का ही अधिकारी नहीं, वह जन्म से ही समाज का ऋणी है, इस ऋण का भुगतान उसे परस्पर सहयोग और सहानुभूति द्वारा करना चाहिये ।

वृक्ष-वनस्पतियों में एक सिम्बायसिस सिद्धान्त काम करता है । द्विदल वनस्पतियाँ (लिग्विम कार्प्स) जैसे चना, मटर, अरहर, मूँगफली, मूँग, मोंठ आदि की जड़ों में एक प्रकार की गाँठें होती हैं, जिनमें गुलाबी रंग का एक विशेष रस (सीरप) भरा होता है । उस रस में जीवाणु (बैक्टीरिया) होते हैं, जो एरियेशन क्रिया के द्वारा वायुमण्डल से बहुत-सा नाइट्रोजन एकत्रित करते रहते हैं । यह संचित नाइट्रोजन उस पौधे के ही काम आता हो, जिसकी वह जड़ है ऐसा नहीं । ऊपर की पौध काट ली जाती है, तब वह जड़ें मिट्टी में ही रह जाती हैं । गाँठों के रूप में सुरक्षित नाइट्रोजन अब मिट्टी में मिल जाती है और उसकी खोई हुई उर्वरता को फिर से जगा देती है । सामाजिक जीवन में मनुष्य जन्म उनका सराहा जाता है, जो अपने संचय का थोड़ा लाभ ही अपने लिये रखते हैं, शेष समाज की उपयोगिता और समर्थता बढ़ाने में व्यय कर देते हैं ।

वृक्षों में सामूहिकता की भावना का आदर्श चीकू के पेड़ में देखने को मिलता है । लोग कहते हैं कि अकेला हो तो शक्ति का मनमाना उपभोग करने को मिलता है पर उससे मनुष्य की प्रसन्नता नहीं बढ़ सकती । एकाकी मनुष्य न किसी से प्रेम कर सकता है, न उदारता व्यक्त कर सकता है । न्याय-नीति, सेवा और सदाचार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फलितार्थ भी अकेले में नहीं भोगे जा सकते, यह बात मनुष्य को चीकू से सीखनी पड़ेगी । अकेला चीकू फल तो देता है पर कम, लेकिन जब उसके बहुत से साथी भी आ जाते हैं तो यद्यपि उसकी खुराक के साझीदार बढ़ जाते हैं तो भी वह अधिक फल देने लगता है । उसकी आत्मिक प्रसन्नता बढ़ती, सौजन्य और सौहार्द्र को आधार मिलता है, तब चीकू अधिक फल देने लगता है । यदि मनुष्य भी उस धरातल पर विचारपूर्वक काम कर सका होता तो आज संसार में जो अशान्ति और संघर्ष है, वह न होता, उसके स्थान पर परस्पर प्रेम, सहयोग, उदारता, सहानुभूति की परिस्थितियाँ होतीं । स्थायी विश्व-शांति के यही आधार हैं, यदि उन्हें हम अपने अन्दर से विकसित नहीं कर सकते तो अब पेड़-पौधों से वह शिक्षाएँ ग्रहण करनी होंगी और उनकी तरह अपना सम्पूर्ण जीवन सेवा, उत्सर्ग में ही बिताना पड़ेगा ।

अपने लिए न्यूनतम रखने और दूसरों के लिए अपने संचय का अधिकांश भाग समर्पित कर देने की वृत्ति का नाम ही परमार्थपरायणता है । कतिपय क्षेत्रों में यह बात कही जाती है कि दूसरों की क्षमताओं का लाभ उठाकर ही कोई व्यक्ति बड़ा बन सकता है । यह मान्यता गलत है और मनुष्य ही इस नीति को अपनाए जाते हैं । वस्तुतः प्रकृति अपनी विभूतियों का लाभ दूसरों को देते रहने की प्रेरणाएँ प्रदान करती है। वनस्पति जगत में भी इसका उदाहरण प्रत्यक्ष देखा जा सकता है । आम अपनी सघन छाया में पान की बेलों को बड़ी आसानी से विकसित होने की छूट देता है । आम ऐसा करने से इन्कार कर दें तो पानों का अस्तित्व ही समाप्त हो जाय । नारियल की छाया में ही इलायची फलती-फूलती है । छोटों को बड़े खा जाते हैं यह सिद्धान्त गलत है । सही बात तो यह है कि छोटों को बड़ों से संरक्षण, प्रेम, स्नेह और उदारता मिलती रहे यही प्रकृति की प्रेरणा है ।

प्रकृति ने कुछ कायदे कानून ऐसे बनाए हैं जो सृष्टि सन्तुलन की दृष्टि से नितान्त आवश्यक है । इन नियमों को न केवल मनुष्यों के लिए वरन् अन्य प्राणियों के लिए भी बनाया गया है । यहाँ तक कि वनस्पतियों के लिए भी ।

मनुष्यों में बुद्धि, धन, बल, प्रतिभा, भावना आदि की सम्पदाएँ ऐसी हैं जिन्हें उसके व्यक्तित्व का बीज कहा जा सकता है । इसी के आधार पर हम ऊँचे उठते और आगे बढ़ते हैं । बीज सड़ा-गला हो तो उससे वंश वृद्धि न हो सकेगी । गुण, कर्म, स्वभाव की विभूतियाँ यदि स्वस्थ और समर्थ न हों तो कोई व्यक्ति प्रगति के पथ पर दूर तक अग्रसर न हो सकेगा । ध्यानपूर्वक देखने से पता चलता है कि हमारी विभिन्न शारीरिक और मानसिक हलचलें इन बीज तत्वों को विकसित, परिष्कृत और पुष्ट करने के लिए ही होती हैं । भौतिक और आत्मिक सम्पदाओं से अधिकाधिक मात्रा में सम्पन्न होने की अभिलाषा स्वाभाविक मानी जाती है—वह बनी ही रहती है—और उनके लिए जाने-अनजाने प्रयास चलते रहते हैं ।

वनस्पति जगत में भी यही प्रक्रिया अपने ढंग से उसी तरह चलती रहती है, जिस तरह मनुष्यों में चलती है । मनुष्य जीवन का लक्ष्य आत्म-विस्तार है । हम बढ़ें विकसित हों और सुदूर क्षेत्र तक फैलें इसके लिए भाँति-भाँति के प्रयत्न पुरुषार्थ किए जाते हैं यहाँ तक कि युद्ध भी । आध्यात्मिक क्षेत्र में यही विस्तारवाद आत्मीयता का क्षेत्र बढ़ाकर सबमें अपने को और अपने में सबको देखने वाला तत्वदर्शन हृदयंगम किया जाता है । बीज तत्व का विकास और सत्ता का विस्तार करने के लिए हम मनुष्यों के विभिन्न क्रिया-कलापों को सँजोया जाना देखते हैं । यदि यह दो प्रवृत्तियाँ न होतीं तो कदाचित पेट और प्रजनन जैसी निकृष्ट स्तर के जीवों में पाई जाने वाली तुच्छ हलचलों के अतिरिक्त हम और कुछ महत्वपूर्ण सोचने या करने में समर्थ ही न हो पाते । ठीक यही बात वनस्पति जगत पर भी लागू होती है ।

पौधे बढ़ते और विकसित होते हैं । अन्ततः उनकी प्रौढ़ता फलवती होती है और उन पर फल लगते लदते हैं । यह फल मनुष्यों सहित अन्य प्राणियों के लिए आहार का काम देते हैं पर जहाँ तक वृक्ष के लिए इन फलों का अपना उपयोग है । वह उनकी बीज सत्ता को अक्षुण्ण रखने, परिपुष्ट बनाने और सुविस्तृत करने के उद्देश्य में ही सन्निहित देखी जा सकती है । वृक्ष मात्र परोपकार के लिए ही नहीं फलते उनके अपने जीवन की सार्थकता भी फलवान होने में ही है ।

फलों में गूदा भरा होता है और गूदे के भीतर बीज रहते हैं । यह बीज एक जगह इकट्ठे नहीं रखे रहते वरन् दूर-दूर फासले पर रहते हैं । पूरे वृक्ष पर एक ही फल नहीं लगता वरन् उनकी बहुत बड़ी संख्या होती है । प्रकृति ने ऐसी व्यवस्था क्यों की, इस पर विचार करने से स्पष्ट होता है कि प्रगति के आधार जिस प्रकार मनुष्यों के लिए बनाए गए हैं वैसे ही वृक्षों के लिए भी विनिर्मित किए गए हैं ।

गूदे का उद्देश्य है बीज को पोषण देना— परिपुष्ट करना—प्रौढ़ावस्था तक पहुँचाना । माता के गर्भ में जिस प्रकार भ्रूण पकता पलता है । उसी प्रकार फल के उदर में गूदे के मध्य बैठा हुआ बीज धीरे-धीरे सबल और समर्थ बनता रहता है । मानव जीवन के अधिकतर क्रिया-कलाप भौतिक उपार्जन के लिए होते हैं । इससे सुविधा- सामग्री तो मिलती ही है साथ ही वे विशेषताएँ,विभूतियाँ भी परिपक्व होती हैं जिनके आधार पर प्रत्येक क्षेत्र में सफलताएँ पाई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सकती हैं—जिन्हें विकसित व्यक्तित्व की परिपुष्ट सत्ता कहते हैं ।

एक वृक्ष अनेक फल और प्रत्येक फल में अनेक बीज इसलिए उत्पन्न करता है कि उसकी सत्ता को अधिकाधिक विस्तार करने का अवसर मिले । उसे सीमित दायरे में संकीर्णता की परिधि में ही आबद्ध रहकर अविकसित कहलाने का कलंक न सहना पड़े । आत्म-विस्तार बिना न तो आत्म-सन्तोष मिल सकता है और न आत्म-गौरव । जब मनुष्य अपूर्णता से पूर्णता की ओर—क्षुद्रता से महानता की ओर बढ़ने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहता है तो वृक्ष भी उसी प्रकृति प्रेरणा का अनुसरण क्यों न करे ?

प्रत्येक बीज में एक पूर्ण वृक्ष सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहता है । परिपुष्ट होने के पश्चात् उसका अगला उद्देश्य यह रहता है कि उसी जाति के नये वृक्ष उत्पन्न करे । साथ ही यह भी आवश्यक हो जाता है कि क्षेत्र की दृष्टि से समीपवर्ती सीमा बन्धन को लाँघकर सुदूर क्षेत्रों तक अपनी सत्ता को सुविस्तृत बनाया जाय । फल के भीतर सारे बीज एक जगह ही एकट्ठे चिपके नहीं रहते । गूदे के भीतर वे थोड़ा-थोड़ा फासला देकर अलग-अलग जमे होते हैं । इसका उद्देश्य यह है कि उन्हें पृथक्-पृथक् रूप से सुदूर क्षेत्र में जाने की और सुविस्तृत परिधि में विस्तार का अवसर मिले । यदि गूदे में सब बीज इकट्ठे रखे होते तो फल के पककर गिरने पर वे सभी एक जगह ही उगते । फलतः वे सभी एक-दूसरे की खुराक छीनते—फैलने की जगह प्राप्त न कर पाते और ऐसे ही सूख मुरझाकर समाप्त हो जाते । विस्तार के लिए यह आवश्यक है कि पुरखों के घर आँगन को छोड़कर अन्यत्र भी जाने और फैलने का प्रयत्न किया जाय ।

वृक्ष की सत्ता फलों के माध्यम से यही सब करती रहती है । फलने और पकने के साथ-साथ उनकी वितरण चेष्टा भी उत्साहपूर्वक चलती है । गूदे में बीजों का स्थान अलग-अलग था भी इसीलिए कि उनके वितरण की व्यवस्था बन सके । आहार में प्रायः गूदा ही काम आता है । बीज कड़े होते हैं इसलिए वे फेंक दिए जाते हैं या संग्रह कर लिये जाते हैं । गूदा समाप्त हो जाने पर भी बीजों का अस्तित्व बना रहता है । यदि उन्हें पीसकर नहीं खाया गया है तो चबाने पर भी उनमें से अधिकांश साबुत बच जाते हैं । पेट में भी कम ही पचते हैं । मल मार्ग से निकलकर वे पृथ्वी पर बिखर जाते हैं और इधर-उधर छितराते, धक्के खाते और वृद्धि करते हैं ।

मनुष्य जीवन की प्रगति के भी दो आधार हैं- एक भौतिक उपलब्धियों के लिए प्रयत्न करते हुए अपने में गुण, कर्म, स्वभावपरक बीज सत्ता को परिपुष्ट करना और दूसरा उस पुष्ट सत्ता को सुविस्तृत क्षेत्र में वितरण करके उन विभूतियों को दूर-दूर तक बिखेरना—विकसित करना । प्रथम चरण को शक्ति संचय कह सकते हैं और दूसरे चरण को सेवा साधना । बलवृद्धि का—सामर्थ्य सम्पादन का उद्देश्य यही हो सकता कि उनके वितरण विस्तार का लाभ सुदूर क्षेत्रों को मिले । जो लोग शरीर या परिवार के भीतर ही अपनी प्रतिभा का लाभ सीमित किए बैठे रहते हैं, उन्हें गूदे के भीतर ही पहुँचाने वाले बीज की उपमा दी जाती है ।

गूदे में पककर विकसित हुए बीज सुदूर क्षेत्रों तक फैलें इसके लिए प्रकृति ने अनेक प्रकार की व्यवस्थाएँ की हैं । प्राणियों द्वारा उनका खाया जाना और मल विसर्जन के साथ उनका दूर-दूर जा पहुँचना प्रत्यक्ष ही है । कई बीज फेंके या संग्रह करने पर किसी न किसी प्रकार वंश वृद्धि करने का अवसर पाने में सफल हो जाते हैं । बीजों का व्यवसाय भी होता है । अनाज की तरह अन्य बीज भी खरीदे-बेचे जाते हैं और वे यहाँ से वहाँ की यात्रा करते हैं । यह तो प्रचलित व्यवस्था हुई । प्रकृति भी इस दिशा में भारी योगदान करती है और तरह-तरह के ऐसे साधन जुटाती है, जिससे वह उत्पन्न हुई बीज सम्पदा किसी एक स्थान तक सीमित होकर न रह जाय वरन् उसे सुदूर क्षेत्रों में वितरित होने का अवसर मिले ।

हवा असंख्य बीजों को अपने साथ उड़ाकर एक स्थान से दूसरे स्थानों तक पहुँचाती है । इस स्तर के हल्के बीजों की वनस्पतिजगत में कमी नहीं है । 'कुनैन' जिस सिनकोना पौधे से बनती है उसके बीज इतने हल्के होते हैं कि एक औंस में ७० हजार तौले जा सकें । आर्किडो के बीज इससे भी हल्के होते हैं । इनकी बनावट भी ऐसी होती है जैसे पक्षी के परों की । हल्कापन और बनावट की विशेषता दोनों के कारण हवा उन्हें आसानी से उड़ा ले जाती है और कहीं से कहीं ले जाकर पटकती है । कुछ बड़े और भारी बीजों में सूर्यमुखी, डोंडिलिओन, सोमा, वेलकुन, आक, सेंमर, सरकंडा आदि के बीज ऐसे हैं, जो पैरासूट की तरह बने होते हैं, वे हवा का तनिक-सा सहारा पाकर लम्बी उड़ान उड़ने लगते हैं । नीचे उतरने और ऊपर चढ़ने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं होती । आक के बीज में जो रुई चिपकी होती है उससे उनका उड़ना कितना सुहावना लगता है । ब्लड फ्लावर, करची, व्यूमोनशिया, चाटियम जैसे पौधों के बीज भी रोंएदार होते हैं, जिनके कारण उनकी वायुयात्रा बड़ी सरल बन जाती है । अरलू, पराल, जरुल, सहजन, चीड़ के बीजों की बनावट भी पक्षियों के परों जैसी होती है । वे इच्छा से नहीं उड़ पाते पर हवा उनकी उड़ने की सारी व्यवस्था स्वयं जुटा देती है । कुछ वृक्षों के तो पूरे फल ही उड़नशील होते हैं । वे अपने बीज परिवार को लेकर क्षेत्र विस्तार का प्रयोजन पूरा करने के लिए हवा की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहायता से यात्रा करने पर उतर पड़ते हैं । ऐसे उड़ाकू फलों में होलोक, मधुलता, जिमीकन्द, फ्रेक्सीनस, होपियामेपल, डिप्टीरोकारपस, साल आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । इसमें से एलेथस की बनावट हवाई जहाज से बिल्कुल मिलती-जुलती है, उसे देखकर यह असमंजस पड़ता है कि इन्हें देखकर हवाई जहाज बने या हवाई जहाज देखकर प्रकृति ने इन्हें बनाया है । आँधियाँ धूल तिनके ही नहीं हल्के बीजों को भी अपने साथ उड़ा ले जाती हैं और कहीं से कहीं उन्हें जा पटकती हैं, जड़ी-बूटियाँ प्राय: इसी प्रकार यहाँ से वहाँ जा पहुँचती हैं ।

कुछ फल भी स्वार्थी मनुष्यों की तरह बड़े कृपण होते हैं । वे पके हुए बीजों को भी अपने सूखे खोखले में समेटे बैठे रहते हैं । स्वयं भले ही उससे कुछ प्रयोजन सिद्ध न हो पर दूसरों को लाभ न मिलने पाए, ऐसी मनोवृत्ति वाले मनुष्य ही नहीं फल भी दुनिया में मौजूद हैं । लाल पोस्त, सत्यानाशी, कुत्ताफूल, हंसलता तथा धतूरा इसी प्रकार के फल हैं । हवा जब इन्हें झकझोरती है तो खुद भी उलटने-पुलटने लगते हैं और बीजों को छोड़ने के लिए भी विवश होते हैं । स्वेच्छा से न सही बलात्कार से सही, चलना उन्हें भी प्रकृति के कानूनों पर ही पड़ता है । संग्रही कोई बनना भी चाहे तो प्रकृति उसे वैसा करने की आज्ञा नहीं दे सकती । जो दिया गया है, वह देने के लिए है जो यह नहीं जानते उन्हें इन फलों की तरह दुर्गति और बल प्रयोग का सामना करना पड़ता है ।

पानी में उगने वाली वनस्पतियों के बीजों को लहरें एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाती हैं । यह बीज हल्के और हवा भरे स्पंज की तरह होते हैं, जिससे वे लहरों पर आसानी से तैरते रह सकें । नदियों और समुद्रों के तटों पर उगे हुए पेड़-पौधे भी अपने बीज—जल को समर्पित करके उन्हें अन्यत्र चले जाने की खुशी-खुशी छूट देते हैं । मनुष्य ही ऐसा है जो स्वजनों को अन्यत्र उपयोगी स्थानों पर जाने से रोककर घर की चहारदीवारी में ही बन्द रखने के लिए मोहग्रस्त बना रहता है । कमलगट्टे अक्सर पानी में तैरते हुए ही कहीं से कहीं जा उगते हैं । नारियल के फलों का पानी में गिरना और सहस्रों मील जन शून्य द्वीपों में जा उगना इसी प्रकार सम्भव हुआ है ।

कई फल ऐसे हैं जिनके छिलके बहुत कड़े होते हैं । पक जाने और सूख जाने पर भी वे बीजों को बाहर नहीं निकलने देते । इस कठोर नियन्त्रण की उग्र प्रतिक्रिया होती है । बीज विद्रोह कर बैठते हैं और उस भीतरी तनाव से छिलका एक विस्फोट की तरह फटता है और बीज उछलकर बाहर निकल जाते हैं । गुलमेंहदी, वुडसेरिल, नाइटजेसमिन, अरंड, कालमेघ, वज्रदंती, पलाक्स, कंचनलता आदि फलों में अक्सर फटने और बीज उछलने की प्रक्रिया देखने को मिलती है । प्रहलाद, विभीषण, कैकेयी, बालि आदि को अपने अभिभावकों एवम् गुरुजनों के विरुद्ध इसी प्रकार विद्रोह करना पड़ा था । अनुचित प्रतिबन्ध के अहङ्कारी दुराग्रह अक्सर ऐसे ही विस्फोट उत्पन्न करते रहते हैं ।

कुछ बीज ऐसे होते हैं जो हवा, पानी, मनुष्य आदि की सहायता न पाने पर स्वयं ही अपनी प्रवृत्ति प्रेरणा से आत्म-विस्तार का रास्ता अपने बलबूते बनाते हैं और जिसका भी अंचल हाथ लगे उसी को पकड़कर आगे चल पड़ते हैं । लटजीरा, गोखरू, वनऔखरा, चोरकाँटा, बुइया, ठीकरी, चित्रक आदि के फल अथवा बीज अपने काँटों के साथ पशुओं-पक्षियों के शरीरों एवम् मनुष्यों के कपड़ों को पकड़ लेते हैं और उन पर सवारी गाँठकर कहीं से कहीं जा पहुँचते हैं ।

चीटियाँ, चूहे, गिलहरी आदि संग्रही प्रकृति के प्राणी बीजों को इकट्ठा करते हैं । बिलों में से छितराकर वे फिर जहाँ-तहाँ जा पहुँचते हैं । पक्षियों के पैरों में चिपकी मिट्टी के साथ अथवा उनकी बीट के माध्यम से भी अनेक वनस्पतियाँ तथा वृक्ष लम्बी यात्राएँ करते हुए पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर तक जा पहुँचते हैं ।

वनस्पतियों और वृक्षों की यह आत्म-विस्तार की अपनी उपलब्धियों को सुदूर क्षेत्र में वितरण करने की प्रवृत्ति ठीक उसी प्रकार पाई जाती है जैसी कि प्रकृति प्रेरणा मनुष्य को उपलब्ध है । जो जीवन विद्या का मर्म जानते हैं, वे अपनी आन्तरिक विशेषताओं को बीज सत्ता की तरह परिपक्व करने के लिए अपनी हलचलों का गूदा सँजोये, साथ ही यह भी ध्यान रखे कि यह समस्त उपार्जन वितरण के लिए है ताकि संसार की शोभा-सुषमा का विस्तार होता रहे उसमें कमी न आने पावे ।

इस प्रकृति प्रेरणा को—ईश्वरीय विधान को ही धर्म एवम् अध्यात्म के नाम से पुकारा जाता है । व्यक्तिवाद की संकीर्ण स्वार्थपरता को निरस्त करके लोकहित की जन-कल्याण की सत्प्रवृत्तियों में अपनी विभूतियों को समर्पित करना यही है मानवी संस्कृति । वृक्ष वनस्पतियाँ तक इसे अपनाने के लिए तत्पर हैं तो फिर विवेकवान और सहृदय समझे जाने वाले मनुष्य को ही उदार अनुदान देते रहने में क्यों कृपणता बरतनी चाहिये ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकृति में दृश्यमान सहयोग— सहकार भरा सद्भाव

जीव मात्र में व्याप्त परमात्म सत्ता के दर्शन इन स्थूल नेत्रों से कर सकना सम्भव नहीं है । उसका साक्षात्कार करने एवं आनन्दानुभूति के लिए अपनी अन्तःचेतना को विकसित करना होगा । चेतना को विकसित करने का आधार निज के स्वार्थ की संकीर्ण सीमा को तोड़कर समष्टि चेतन तक अपने भाव कों व्यापक एवं विस्तीर्ण बनाना है । सबमें एक ही दिव्य सत्ता विराजमान है, अपनी आस्था को यदि इस स्तर तक विकसित कर ले और परस्पर स्नेह-सहयोग को, सद्भाव को व्यापक बनाए तो भागवत सत्ता का सामीप्य अनुभव किया जा सकता है ।

यह निज की स्वार्थपरता ही है, जिसके कारण व्यक्तिवाद, मोह, आसक्ति आदि दोष पनपते हैं । जबकि परस्पर सहयोग एवम् सहकारिता का भाव अपने तथा समाज के उन्नयन में सहायक है ।

संसार इसी सहयोग एवं सहकारिता के सिद्धान्त पर जीवित है । यदि दुनिया के सारे लोग अपनी-अपनी बुद्धि को तिलांजलि दे, परस्पर शोषण एवं असहयोग पर उतर आयें तो समूची सृष्टि का अस्तित्व समाप्त प्रायः हो जायेगा ।

समष्टि चेतना से उद्भूत प्रकृति को सूक्ष्मता से देखने पर पाते हैं कि उसका अन्तर्जीवन कितना सद्भावना एवं सहयोग से परिपूरित है । छोटे-छोटे जीव-जन्तु, वृक्ष-वनस्पतियाँ भी किस तरह मैत्री का जीवनयापन कर रहे हैं । मानवी सभ्यता आज भी इसी कारण विराजमान है कि भौतिकता की इतनी चकाचौंध बढ़ने पर भी हम परस्पर दया, उदारता, सौहार्द्र के सम्बन्ध को बनाए रखे हैं ।

गाँव के किसान से यदि कोई जिज्ञासा करे कि खेत में कई प्रकार के अनाज को मिलाकर बोने का क्या तात्पर्य है ? तो परस्पर सहयोग से ही उन्नति के सूत्र की व्याख्या सामने आ जाएगी । ज्वार एवं अरहर साथ-साथ बोई जाती हैं । मूँग, उड़द और लोबिया आदि दालें भी ज्वार के साथ बो दी जाती हैं । ज्वार का पौधा लम्बा और बड़ा होता है, यदि उसमें निज के स्वार्थ को ही सब कुछ मान बैठने की संकीर्ण वृत्ति होती तो मूँग उड़द को बढ़ने न देता । जबकि होता यह है कि दालों को ज्वार में बढ़ने और हृष्ट-पुष्ट होने में सहायता मिलती है । ज्वार को नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है । यह काम अरहर पूरा करती है । वह वातावरण से खींचकर कुछ अपने लिए रख लेती है शेष ज्वार को दे देती है, जिससे वह भी बढ़ती और अच्छा बीज पैदा कर सकने की शक्ति पाती है । अपने देश का सामाजिक ढर्रा भी इसी दृष्टि से बनाया गया था । लुहार, तेली, मोची सब अपना-अपना काम करते और परस्पर विनिमय के द्वारा बाँट लेते । इस प्रकार एक-दूसरे से स्नेह आत्मीयता का भाव भी बना रहता था ।

पान की बेल आम के वृक्ष के सहारे ही अच्छी तरह से बढ़ती है । यदि उसे किसी सघन वृक्ष की छाया न मिले तो उसका जीवन ही संकटग्रस्त हो जाय । यहाँ बड़ा छोटे के विकास में सहायक ही है । बेचारी अमरबेल जिसमें न तो जड़ है, न ही क्लोरोफिल, इस अभावग्रस्त स्थिति में स्वयं सीधे भोजन प्राप्त कर सकने में असमर्थ है । इसके लिए उसे बड़े वृक्षों का संरक्षण मिलता है । जिनके पास प्रचुर धन वैभव है, वे उसे मात्र अपने स्वार्थ में खर्च न कर यदि अल्पविकसितों को भी बाँटते रहें तो यह विषमता पैदा ही न हो । बात आर्थिक विशेषताओं की नहीं, विद्या बुद्धि-कला कौशल भी एक जगह केन्द्रित न होना चाहिये । हमारे पास जो भी योग्यता सामर्थ्य है, उसे अल्पविकसित लोगों को ऊँचा उठाने बढ़ाने में नियोजित करने में ही उसकी सार्थकता है ।

अधिक शक्ति वाले कम शक्ति वालों के विकास में जुट जाएँ तो ही विकास की समग्रता, उत्कृष्टता सम्भव है । छोटी पीपल जो एक प्रकार की औषधि है, अपना विकास किसी घने, छायादार वृक्ष के नीचे ही कर सकती है ।

अन्धे और लँगड़े की कहानी बहुत प्रसिद्ध है । दोनों ने परस्पर सहयोग को वरीयता दी । अन्धे ने लँगड़े को कन्धे पर बिठाया, लँगड़े ने उसे दिशा निर्देशन दिया और दोनों ने इस प्रकार अपनी यात्रा सम्पन्न की ।

यह कहानी मानवी समाज की सद्भावना सहानुभूति का प्रमाण है । यहाँ कोई व्यक्ति पूर्ण नहीं सब अपूर्ण ही हैं । चिकित्सक औषधिशास्त्र का महापण्डित हो सकता है, पर कृषि का ज्ञाता नहीं । इन्जीनियर कल-पुर्जों की बारीकियाँ समझने में निष्णात् भले ही हो पर व्यापारशास्त्र के कौशल में अबोध बच्चा ही है । अपूर्णताओं वाले इस संसार में यदि सभी बुद्धि प्रधान अपने स्वार्थ के लिए छल-कपट, चालाकी का आश्रय लेने लगें तो अशिक्षित पर स्वस्थ बलिष्ठ भी निज के स्वार्थ को पूरा करने के लिए डकैती, मार-पीट का सहारा अपनाएगा क्योंकि उसे न्याय नियन्त्रण में रखने वाली बौद्धिक शक्ति प्रायः पंगु जो हो जाती है, जबकि सभी उदारतापूर्वक परस्पर सहयोग एवं आत्मीयता का राजमार्ग अपना लें तो हर कोई अपना सर्वांगपूर्ण विकास कर सकता है ।

लेग्यूमिनस पौधों जैसे मटर, सेम आदि की जड़ों में छोटे-छोटे फूले हुए भाग होते हैं, जिन्हें नोड्यूल्स (ग्रन्थियाँ)

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहते हैं । इन ग्रन्थिकाओं में एजैटोबैक्टर नाइट्रोबैक्टर जैसे विशेष तरह के जीवाणु रहते हैं । ये हवा में उपस्थित नाइट्रोजन को उसके यौगिक्रों में बदलकर पौधों के उपयोग लायक बना देते हैं, क्योंकि हवा की यह नाइट्रोजन इन पौधों के किसी काम की नहीं और स्वयं भी पौधों की जड़ों से अपना स्वल्प भोजन प्राप्त कर लेते हैं । इस प्रकार परस्पर सहयोग से दोनों अपने-अपने विकास की पूर्णता प्राप्त करते हैं ।

इसी तरह का पारस्परिक सहयोग संघ प्रोटोजोआ के जन्तु पैरामीशियम में पाया जाता है । यह जन्तु जब थक जाता है और बुढ़ापे के घिर आने से जीवनशक्ति कम पड़ती है, तब दो पैरामीशियम मिलकर एक-दूसरे से साइटोप्लाज्म अदल-बदल लेते हैं । इससे उनमें पुनः नई शक्ति आ जाती है । जबकि हम अपने माँ-बाप-बुजुर्गों को इसलिए तिरस्कृत-अपमानित करते हैं कि उनमें शक्ति की न्यूनता है और आजीविका की दृष्टि से अक्षम हैं । यदि नई पीढ़ी उनसे उनके विविध अनुभवों एवं बुद्धि का लाभ उठाकर उन्हें स्व-अर्जित ज्ञान जीवन की उपयोगी सामर्थ्य के आवश्यकतानुसार दे सकें, तो दोनों पक्ष कुशलता एवं सक्षमता से रह सकते हैं ।

लाइकेन जीवशास्त्र का ऐसा शब्द है जो प्रकृति में सहजीवन को स्पष्ट करता है । देखने में तो लगता है कि कुकुरमुत्ता जिस पेड़ या पत्थर पर उगा है, वही उसका शरणदाता है, पर तथ्य इसके विपरीत ही है । इसके कोमल तने के अन्दर जल शैवाल नाम का कोश समुदाय निवास करता है । वह कुकुरमुत्ते के भीतर न केवल सुरक्षित रहता है अपितु क्लोरोफिल विहीन कुकुरमुत्ते को इस उपकार के बदले प्रकृति से जीवन तत्व खींचकर देता है, जिससे उसका भी विकास होता रहता है । ऐसा ही सम्बन्ध कर्कट (Crab) और सी-एनीमोन में पाया जाता है । कर्कट इन्हें पीठ पर लादे घूमता है । बदले में यह कर्कट की जीवन रक्षा में सहायक होता है । कर्कट जल जीवों का प्रिय भोजन है, किन्तु एनीमोन अपने शरीर से ऐसा विषैला द्रव निकालते हैं, जिससे आक्रामक जीव इससे बहुत दूर रहते हैं । यह परस्पर सहकार का चमत्कार है । यह सहयोग एवं सहकार का सद्भाव ही है, जिसके कारण परमात्म चेतना का विश्व उद्यान हरा-भरा दीखता है । मनुष्य जैसे भावनाशील प्राणी के लिए यही उचित है कि वह अपनी संकीर्ण मनोवृत्तियों से ऊपर उठकर सबके प्रति दया, करुणा और आत्मीयतापूर्ण सम्वेदना से ओत-प्रोत हो । परम पुरुष के उद्यान को पुष्पित पल्लवित करने में उसका हाथ बँटाए।

वृक्ष-वनस्पतियों में भी फैली हुई विश्वात्मा

आत्मा वृक्षों और वनस्पतियों में भी है, इसलिए अध्यात्मवादी दृष्टिकोण के अनुसार उनके साथ भी सद्व्यवहार करना चाहिये । वृक्षों का लगाना, उनका पोषण करना एक पुण्य माना गया है । उसी प्रकार उन्हें काटना और बढ़ने न देना पाप कहा गया है । वृक्ष हमें प्राण-वायु, जीवन-तत्व, हरीतिमा, छाया, लकड़ी, पुष्प-फल आदि बहुत कुछ देते हैं, ऐसे उपकारी प्राणियों से, वृक्षों से हमें बहुत कुछ सीखना है और उनके जैसा उपकारी बनना है ।

यह प्रश्न हो सकता है कि वृक्ष जड़ हैं, उनमें किसी तरह की चेतन सम्वेदनशीलता नहीं है, इसलिये उनके साथ जड़ जैसा बर्ताव करना पाप या अनुचित कर्म नहीं । इस सम्बन्ध में वैदिक मान्यताएँ स्पष्ट ही इस पक्ष में हैं कि वृक्षों में जीवन है, अब उक्त कथन को वैज्ञानिक अनुसंधानों के द्वारा भी सिद्ध करना सम्भव हो गया है । सर जगदीशचन्द्र बोस का तो जीवन ही इसी बात में लग गया, उन्होंने वृक्षों की सम्वेदनशीलता के अनेक प्रयोग किए थे । साँस और स्पन्दन की गति की नाप और जहरीले पदार्थों का प्रयोग करके यहाँ तक सिद्ध कर दिखाया था कि जिस तरह और प्राणियों के शरीर में विष का प्रभाव होता है, वृक्षों में भी वैसा ही प्रभाव पड़ता है । हरे-भरे होना वृक्षों का जीवन है तो उनका सूख जाना ही मृत्यु । मनुष्यों की तरह आहार पर जीवित रहने, साँस लेने, सूर्य-रश्मियों से जीवन ग्रहण करने, काम क्रीड़ाएँ आदि विभिन्न क्रियाएँ वृक्ष-वनस्पति भी करते हैं । इसलिए उन्हें प्राणि-जगत का ही एक अंग मानने से इन्कार नहीं किया जा सकता है ।

अथर्व के प्रथम काण्ड, अनुवाक ५ सूक्त ३२ की प्रथम ऋचा में **'येन प्राणन्ति वीरुधः'** ऐसा प्रयुक्त हुआ है । उसका अर्थ ही है—"जिस से बेलें जीवन धारण करती हैं" उसके अतिरिक्त भी कहा है—

जीवला न धारियां जीवन्तीमौषधीमहम् ।

—अथर्व ८। ४। ६,

उक्त मन्त्र में भी औषधियों (वनस्पति) में जीवन होता है, प्रमाणित किया गया है ।

छान्दोग्य उपनिषद में भी कहा है—

अस्य सोम्य महतो वृक्षस्य यो मूलेऽभ्याहन्याज्जीवन् स्रवेद्यो मध्येऽभ्यहन्याज्जीवन्स्रवेद्योऽग्रेऽभ्याहन्याज्जीवन्स्रवेत्स एष जीवेनात्मनानुप्रभूतः पेपीया- मानो मोदमानस्तिष्ठति ॥ ६- १० - १-॥

अर्थात्—हे सौम्य ! यदि इस बड़े वृक्ष को मूल से काटें तो मनुष्य के रक्त की तरह जीता हुआ स्रवण करता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, मध्य और अग्रभाग (टहनी आदि) काटने से भी वैसा ही जीवन-रस टपकता है, इससे प्रतीत होता है कि वृक्ष जीवात्मा से अधिष्ठित हुआ है । एक स्थान से जीवन रक्त निकल जाने से रोगी अंग की तरह वृक्षों की भी अनेक टहनियाँ सूखती रहती हैं, जब वृक्ष से जीवात्मा का अन्त हो जाता है तो वह सूख जाता है और उसमें किसी प्रकार का प्राण-स्पन्दन नहीं रह जाता ।

मनुस्मृति में योनियों का वर्णन करते हुए मनु भगवान कहते हैं—

उद्भिज्जाः स्थावराः सर्वे बीजकाण्डप्ररोहिणः ।
ओषध्यः फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः ।

—॥ ४६ ॥

कर्मानुसार जीव उद्भिज और स्थावर योनियों—औषधि फल-फूल वाले वृक्षों-पौधों में भी जन्म ग्रहण करता है । अनेक मन्त्रों में यह भी बताया है कि उन्हें भी मनुष्य की तरह सुख-दुःख की अनुभूति होती है । पौधे वृक्षों द्वारा साँस भी लेते और जड़ों द्वारा खाते भी हैं । चल फिर नहीं सकते बस इसी से उन्हें स्थावर कहा गया है पर यह कोटि जड़ता से भिन्न ही है ।

आज लोगों को इस पर अविश्वास है, शंका है । वस्तुतः सारी कठिनाई आत्मा के तत्व स्वरूप में परिचय न पाने की है । मनुष्य एक इकाई है, इसलिए वह आत्मा को भी इकाई के रूप में ही देखना चाहता है, जबकि आत्मा एक चैतन्य तत्व है, जो मनुष्य की तरह ही सुख-दुःख आदि की अनुभूति करता है, भले ही वह कहीं भी किसी भी स्थिति में रहे । अँग्रेज अपनी अनुभूति को भिन्न शब्दों में कहता है—भारतीय, रूसी और चीनी भिन्न भाषा में पर अनुभूति की परिभाषा सर्वत्र एक-सी है, भले ही उसे शब्दों से व्यक्त न किया जा सके, इसलिए यह नहीं मानना चाहिये कि शब्द रहित पदार्थों में आत्मा का अस्तित्व नहीं रहता ।

कभी किसी उपवन में जाने का अवसर मिले तो देखना कि फूलों पर मँड़राती मधुमक्खियाँ, भँवरे आदि अपने पैरों में एक प्रकार का पीला पाउडर लपेटे रहते हैं, यद्यपि वे नहीं जानते पर इस पराग के द्वारा वे वृक्षों, वनस्पतियों में रतिक्रिया की वैसी ही आवश्यकता पूर्ण करते हैं जैसी स्त्री और पुरुष बिना किसी तीसरे माध्यम से करते हैं पर स्त्री और पुरुषों के संयोग से ही जिस प्रकार जीव की उत्पत्ति सम्भव है, वृक्ष, वनस्पतियों में भी वैसी ही क्रिया सम्पन्न होती है, उसके बिना उनकी वंशावली भी बढ़ नहीं सकती ।

वनस्पति विज्ञान के विद्यार्थी जानते होंगे कि फूल दो प्रकार के होते हैं । (१) पुंकेसर (पुरुष योनि वाले), (२) स्त्रीकेसर (स्त्रियों की योनि वाले) । स्त्री केसरों के निचले हिस्से के भीतर बीजाण्ड होते हैं, जब तक इस हिस्से में किसी पुंकेसर के परागकण नहीं पहुँचते तब तक प्रजनन का कार्य हो नहीं सकता । फूल सूख जाएगा पर जब तक उसके वर्तिकाग्र पर पराग न झड़ेगा (पोलीनेट) तब तक बीज पैदा नहीं होगा । परागण की क्रिया गर्भधारण जैसी ही है और उसी से फूल से फल की उत्पत्ति होती है ।

इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध जर्मन वनस्पतिज्ञ कैमरियस ने भी माना है कि वृक्षों का प्रजनन विज्ञान मनुष्य के प्रजनन की भाँति ही बड़ा आश्चर्यजनक है और वर्णशंकर पैतृक बीमारियाँ या गुणों की सारी बातें उनमें भी मनुष्यों की तरह ही होती हैं । अच्छी नस्ल की फसल उगाने के लिए अच्छे फूलों वाले पुंकेसरों और स्त्रीकेसरों को मिलाया जाता है । अरब, सीरिया, बेबीलोन और मिस्र के निवासी अच्छी किस्म के खजूर पैदा करने के लिए अच्छे खजूर के नर-पुष्पों को मादा-पुष्पों में झाड़ा (पोलीनेट) किया करते हैं ।

'केतकीयम' भारतीय शब्द भी इसी मान्यता का प्रतिपादक है कि प्रत्येक वृक्ष के फूलों में नर और मादा किस्में होती हैं और उन दोनों के संयोग से ही उनकी वंशावली का विकास होता है । कई बार यह माध्यम पशु-पक्षियों और हवा आदि के द्वारा भी बनता है । पर यह संयोग प्रत्येक दशा में आवश्यक है । बीजाण्ड में फल का विकास गर्भकोष में पड़े वीर्य से बच्चे के विकास जैसा ही होता है ।

वृक्षों में जीवन के अस्तित्व का सबसे बड़ा प्रमाण उसका विश्लेषण है । जिस प्रकार जीवित प्राणी प्रोटोप्लाज्मा नामक तत्त्व से बना होता है और उसका सबसे सूक्ष्म कण सेल कहलाता है, उसी प्रकार वनस्पति के सबसे छोटे अणु का नाम जीवाणु (बैक्टीरिया) है । इन्हें एककोशिका वाले पौधे कहा जा सकता है और वह इतने सूक्ष्म होते हैं कि माइक्रोस्कोप की सहायता के बिना देखे नहीं जा सकते । यही जीवाणु ही मनुष्य और पशुओं की आहार नली में रहते हैं और सेल्यूलोज वाले भाग को पचाने का काम करते हैं । जीवाणु कोशिका की लम्बाई ०·५ माइक्रोन तक होती है । यह तीन प्रकार के होते हैं, गोलाणु (कोकस), दण्डाणु (बैसिलस) और सर्पिलाणु (स्पिरिलस) ।

कोशिका जिस तरह प्रोटीन के आवरण में बन्द होती है और उसके भीतर केन्द्रक (न्यूक्लियस) काम किया करता है, उसी प्रकार जीवाणुकोशिका एक लिसलिसी श्लैष्मपरत (कैप्सूल) में बन्द (रेजिस्ट) होती है । कोशिका भित्ति की सुरक्षा के लिए प्लाज्मा झिल्ली (प्लाज्मा मैम्बरैन) होती है । किन्तु किन्हीं जीवाणुकोशिकाओं में केन्द्रक नहीं भी होते हैं तो भी उनमें केन्द्रीय पदार्थ (क्रोमिटिन) अवश्य होता है । यह जीवाणु भी अलैंगिक रीति से स्वयं ही बढ़ने की वैसी ही क्षमता रखते हैं, जैसे कि 'प्रोटोप्लाज्मा केन्द्रक' ।

एक कोशिका से विभाजन प्रारम्भ होता है तो १५ घण्टे बाद उसी तरह की एक अरब संतति कोशिकाएँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(डॉक्टर सेल्स) जन्म ले लेती हैं । ३६ घण्टे बाद इनकी तादाद इतनी हो जाती है कि उससे सौ ट्रक भरे जा सकते हैं, यह गति यदि निर्बाध चलती रहे तो ४८ घण्टे बाद एक कोशिका से बने अन्य कोशिकाओं का भार पृथ्वी के भार से चौगुना अधिक हो जाएगा, किन्तु उनकी ही देह से निकले विषैले पदार्थ इस वृद्धि को रोक देते हैं और यह गति रुक जाती है । वस्तुत: यह बाढ़ मानव जाति के हित में ही है।

यह जीवाणु सर्वत्र विद्यमान रहकर मनुष्य जाति की बड़ी सेवा करते हैं, एक प्रतिशत जीवाणु ही मनुष्य के लिए हानिकारक हैं, अन्यथा पौधों और जन्तुओं के हानिकारक तत्वों और मृत अवशेषों का विघटन यह जीवाणु ही करते हैं । प्रतिवर्ष प्रति पौधा २०० अरब टन कार्बन, कार्बन डाइ-ऑक्साइड गैस लेकर प्रकाश किरणों द्वारा उसे जैव पदार्थ में बदल देता है । यह कार्बन जीवों द्वारा पैदा की जाती है, यदि जीवाणु यह क्रिया सम्पन्न न करें तो सारा वायुमण्डल कार्बन डाइ-ऑक्साइड से आच्छादित हो जाये और मनुष्य का धरती पर रहना कठिन हो जाए ।

जीवाणु की क्रिया और प्रोटोप्लाज्मा की कोशिका (सेल) की क्रिया का तुलनात्मक अध्ययन करें तो दोनों में एक जैसी चेतना ही दिखाई देती है, जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है आकृति और कार्य प्रणाली में थोड़ा अन्तर है, जो मनुष्य के हित में पूरक ही है । यदि यह पूरक क्रिया सम्पन्न न हो तो मनुष्य का जीवन खतरे में पड़ जाए । विश्व-चेतना का यह अंश मनुष्य के उपयोग में आता है पर उसका यह अर्थ नहीं लगा लेना चाहिये कि उनमें आत्मा नहीं है । यदि मनुष्य की प्रजनन प्रणाली, खाद्य प्रणाली, मल विसर्जन आदि की क्रियाएँ और उसकी परमाणविक रचना में वृक्ष वनस्पतियों की क्रिया प्रणाली से साम्य पाया जाता है तो उसे विश्वव्यापी चेतना का स्वरूप ही मानना चाहिये । यदि विज्ञान की इन उपलब्धियों से भी मनुष्य यह मानने को तैयार नहीं होता तो उसे हठधर्मी ही कहा जाएगा ।

यह भी ध्यान रखना है कि यदि मनुष्य मानवोचित कर्त्तव्यों का पालन नहीं करते तो वृक्ष आदि योनियों में अपने को भी जाना और उन सुख-सुविधाओं से वंचित होना पड़ सकता है जो मनुष्य योनि में उपलब्ध हैं ।

वृक्ष दीखते और समझे भर जड़ जाते हैं, वस्तुत: वे चेतन हैं । एक ही चेतन आत्मा सर्वत्र सबमें विद्यमान है । यह अनुभव करते हुए हमें विराट् ब्रह्म की असीम चेतना अपने चारों ओर फैली हुई देखनी चाहिये और सबके साथ सहृदयतापूर्ण व्यवहार करना चाहिये । वृक्षों को भी अकारण क्षति न पहुँचायें, यही उचित है ।

महानता की दृष्टि से मनुष्य घास से भी छोटा है

प्राणियों में पशु-पक्षियों और जीव-जन्तुओं का ही स्थान नहीं । वनस्पति भी जीवधारियों में ही आती है । उनमें मस्तिष्क न होने से चिन्तनशील प्राणियों की तरह कष्टानुभूति न होने से उन्हें विकसित प्राणियों द्वारा खाया जाता है । हिंसा की बात तो वहाँ आरम्भ होती है, जहाँ किसी सचेतन प्राणधारी को अपने स्वाद के लिए हम हनन करते हैं । वनस्पति प्राणधारियों का स्वाभाविक आहार होते हुए भी वह भी सजीव वर्ग में ही है ।

मनुष्य की सेवा सहायता पशु करते हैं । अब तो कुछ दिन से उनका श्रम मशीनें भी हल्का करने लगी हैं, पहले जब वे नहीं बनी थीं, तब तो मनुष्य का जीवन आधार एक प्रकार से पशुओं का श्रम ही था, वह स्वयं तो अपने दुर्बल शरीर से बहुत कम कर पाता था जो करता था वह इतना नहीं होता था कि सुख-सुविधायुक्त जीवन जी सके । पशुओं का श्रम, दूध, बाल, चर्म आदि की सहायता से ही उसकी समृद्धि भूतकाल में बनी रही । आज भी विश्व का अर्थ उत्पादन पशुओं के माध्यम से इतना होता है जो विश्व उपार्जन का दो तिहाई है । एक तिहाई ही मशीनें उत्पन्न करती हैं ।

जिस प्रकार पशु मनुष्य जाति के जीवनाधार रहे हैं, उसी प्रकार वनस्पति न केवल मनुष्यों की वरन् पशु-पक्षियों की जीवनाधार रही है । यहाँ तक कि कीट-पतङ्ग भी उसी के अञ्चल में पलते पनपते रहे हैं । विशाल दृष्टि से देखा जाय तो वनस्पति ही जीवन का मूल स्वरूप है । उसी को खाकर जीवधारी जीवित हैं ।

जलजीवों का जीवन-क्रम भी यही है । समुद्र सरोवरों में एक हल्के किस्म की वनस्पति होती है, वही जलजीवों का मुख्य आधार है। अकेले पानी पर ही वे जीवित नहीं रह सकते । जीवन रक्षा के लिए उन्हें भी वनस्पति चाहिये और वह जिन जलाशयों में छोटे या बड़े रूपों में होगी उसी में जलजीव जन्मेंगे बढ़ेंगे ।

वनस्पति जगत् का सर्वप्रधान सर्वत्र उपलब्ध पौधा है—घास । यह घास पैरों तले कुचलती रहती और तुच्छ नगण्य प्रतीत होती है पर उसकी गरिमा पर विचार करें तो वह आश्चर्यजनक महत्व की प्रतीत होती है । घास अपने आपको जीव जगत की रक्षा, अभिवृद्धि और पोषण के लिए किस प्रकार खपाती है यह दृष्टव्य है ।

वनस्पतिशास्त्रियों का कथन है कि घास धरती के पाँचवें हिस्से पर छाई हुई है । उसकी छै हजार जातियाँ अब तक ढूँढ़ी जा चुकी हैं । एक प्रकार से जीवधारियों का जीवन ही कहना चाहिये । पानी की बाढ़ को रोकने के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाँध जो काम करते हैं, उससे लाखों गुना अधिक काम घास करती है । यदि घास न हो तो वर्षा का पानी इतनी तेजी से बहे कि नदियों में विकराल बाढ़ें आएँ और जमीन का बहुत बड़ा भाग कटकर खड्ड बनने लगे और उपयोगी मिट्टी समुद्र में पहुँचकर उपजाऊ क्षेत्र घटा दें । वह मिट्टी समुद्र को उथला करके और भरा हुआ पानी बाहर फैलने से तटवर्ती स्थानों के डूबने का खतरा हो जाय । जमीन में पानी सोखने की शक्ति घास की जड़ों से ही पैदा होती है यदि घास न हो तो सूखी मिट्टी ठोस या रेतीली पानी की अधिक मात्रा देर तक पचा सकने में समर्थ न हो ।

हर मौसम और हर परिस्थिति में घास अपने आपको जीवित रखती है । घोर गर्मियों में जबकि वह सूख जाती है और जल गई प्रतीत होती है । तब भी उसका जड़ वाला भाग गीला और जीवित रहता है । यही कारण है कि वर्षा होते ही वह देखते-देखते उग आती है और चारों ओर हरियाली छा जाती है । पहाड़, मैदान, मरुस्थल, शीत प्रधान, अति उष्ण प्रदेशों में ही नहीं अथाह समुद्र की तली में भी उसका अस्तित्व पाया जाता है । 'काई' के रूप में वह जलाशयों में भी छाई रहती है । अमरबेल की तरह बिना जड़ के भी बिना जमीन की सहायता लिए हुए भी वह अपना अस्तित्व बनाए रह सकती है ।

घास का सूक्ष्म रूप है उसका पराग । वह हवा के साथ चार हजार फुट की ऊँचाई तक उड़ जाता है और आँधी-तूफानों के साथ हजारों मील की यात्रा करके कहीं से कहीं जा पहुँचता है । मनुष्य के सामान तथा जानवरों के शरीरों के साथ लिपटकर भी वह छूत की बीमारी की तरह लम्बी यात्रायें करता है और जहाँ भी अवसर मिलता है वहीं अपनी वंश वृद्धि करने में लग जाता है । पुराने जमाने में अफ्रीका से आदिवासी, अमेरिका में मजूरी के लिए लाए गए थे । घास के पराग भी उनके साथ चले आये और वह घास जो अफ्रीका में ही होती थी अमेरिका में भी उगने लगी ।

हम गेहूँ, जौ, चना, मक्का आदि अन्न खाते हैं । यह सब क्या है घास के बीज ही तो हैं । पालक, बथुआ, धनियाँ, पोदीना, मैथी आदि छोटी घास है । बड़ी घास शाक भाजियों और खीरा, ककड़ी, खरबूज, तरबूज आदि के रूप में फलती है । ईख एक बड़े किस्म की घास ही तो है । चीनी की मिठास वस्तुतः घास का ही अनुदान है ।

कीड़े-मकोड़े, पशु-पक्षी सब घास पर ही जीवित रहते हैं । पौधों पर चिपकने वाले कृमि-कीटकों से लेकर कीड़े-मकोड़ों तक की संख्या इस पृथ्वी के जीव जगत् का ९/१० भाग है । पशु, पक्षी, मनुष्य और बड़े जलचरों की संख्या १/१० ही है । इनमें से अधिकांश का जीवन घास पर ही निर्भर है । पशु तो घास पर ही जीवित हैं । प्रकारान्तर से और सबका भोजन भी उसी पर निर्भर रहता है । छोटे कीड़े-मकोड़े घास की पत्तियाँ, जड़ें आदि खाते हैं । उन्हें चिड़ियाँ खा जाती हैं, चिड़ियाँ या पशु माँसाहारियों के पेट में चले जाते हैं । इस प्रकार माँसभक्षी जीवों का घुमा फिराकर मूल भोजन घास ही है । इसलिए उसे जीवधारियों का मूलभूत आधार कहा गया है । जड़ी-बूटियाँ खाने वाला यदि दो सेर घास खाले तो उसे उतनी ही शक्ति मिल सकती है । समझा यह जाता है कि दाल, दूध, अंडा, माँस से ही प्रोटीन प्राप्त होती है पर यह भूल जाते हैं कि घास में भी प्रोटीन की मात्रा कम नहीं है और वह अपने ढंग की सबसे निर्दोष प्रोटीन है । टूटी-फूटी माँसपेशियों की मरम्मत का उसमें अनुपम गुण है ।

घास ऊपर जितनी लम्बी दीखती है उसकी जड़ें जमीन के अन्दर उससे कहीं अधिक लम्बी होती हैं । यही कारण है कि मिट्टी को बाँधे रहती हैं, उसे पोला रखती हैं । जिससे वह पानी, खाद और हवा सोखकर उत्पादक बनी रह सके । मिट्टी से जितना जीवन वह लेती है उससे भी ज्यादा उसे प्रदान भी करती है । जमीन का उपजाऊपन घास पर ही निर्भर है । जहाँ घास नहीं जमेगी वह जमीन अनुत्पादक और वीरान जैसी रहेगी ।

मनुष्य शरीर भी भौतिकशास्त्रियों की दृष्टि से एक प्रकार का वृक्ष ही है । उसकी सारी आवश्यकता भूमि द्वारा उत्पन्न वनस्पतियों से ही पूरी होती है । हवा और जल को छोड़कर मुख से खाये जाने वाले पदार्थों में वनस्पति ही एकमात्र वह आधार है जिसे 'अन्न' या आहार कहते हैं । उसके बिना किसी का भी निर्वाह नहीं हो सकता ।

घास हर जगह उपलब्ध होने से उसे सस्ती समझकर उपेक्षणीय समझा भर जाता है पर वस्तुतः उसका महत्व किसी भी बहुमूल्य पदार्थ से कम नहीं है । एक पौण्ड घास में इतनी कैलोरी शक्ति रहती है कि आदमी उतने से ही डेढ़ घण्टे तक लकड़ी काट सके । बीजों में इससे चार गुनी अधिक शक्ति होती है ।

संसार में आय के साधन कारखाने, व्यापार आदि को समझा जाता है पर सच बात यह है कि मनुष्य जाति का आय का सबसे बड़ा साधन पशु हैं और वे घास पर निर्भर रहते हैं । इस प्रकार घास को आर्थिक दृष्टि से संसार का सबसे बड़ा आय साधन भी माना जा सकता है । साफ-सुथरी जमीन को घास की ही देन कह सकते हैं यदि वह न हो तो सर्वत्र धूल ही धूल उड़ती दिखाई पड़े या फिर चट्टानों जैसी निर्जीव स्थिति दीख पड़े ।

मकान, किवाड़, फर्नीचर, फल, चूल्हा, चटाई, कपड़े, कागज जिधर भी नजर उठाकर देखें घास, वृक्ष और वनस्पति का ही वरदान, अनुदान बिखरा पड़ा है । वह मनुष्य की लकड़दादी है । सृष्टि के निर्माण काल में सबसे पहले वनस्पति का ही उद्भव हुआ था ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

३.१० दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

एककोशीय एवम् बहुकोशीय जीव तो उसके बहुत बाद में बने और मनुष्य तो उन प्राणधारियों की शृंखला से हजारों पीढ़ी पश्चात् जन्मा है ।

घास का ही विकसित रूप है वृक्ष । गुल्म झाड़ियों, पौधे और विशाल वृक्ष उसी प्रकार छोटे हैं जिस प्रकार चतुष्पदों में छोटी चुहिया और विशालकाय हाथी । छोटा मच्छर और बड़ा सारस । इनके आकार-प्रकार बड़े-छोटे हैं, वह वर्गीकरण तो उसी स्तर पर होगा । वनस्पति में छोटी घास और बड़े विशालकाय वृक्ष गिने जा सकते हैं । उन सबकी अपनी विशेषताएँ ऐसी हैं जो सृष्टि की सुन्दरता और सन्तुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान करती है ।

कैलीफोर्निया में पाया जाने वाला डगलस वृक्ष ३०० से ४०० फुट तक लम्बा होता है। इसका तना ५० फुट व्यास तक का पाया जाता है । 'फर' नामक वृक्ष की आयु हजारों वर्ष मानी जाती है । यदि इन विशाल वृक्षों का तना खोखला कर दिया जाय तो उसमें २०० बच्चों को पढ़ाने जैसा एक स्कूल आसानी से बन सकता है । अमेरिका में कई ऐसे फर के वृक्ष हैं, जिनके तने को खोखला करके उनमें बीच में सड़क निकाल दी गई है । सड़क बनाने में उनको काटने की अपेक्षा यह तरीका अधिक अच्छा समझा गया ।

सन्त, ब्राह्मण, दानी, परोपकारी मनुष्य ही नहीं होते । गाय जैसे पशु भी उसी स्तर के वन्दनीय वर्ग में आते हैं । वृक्षों में भी कुछ वृक्ष ऐसे ही हैं, जिन्हें सन्त या दानवीर की उपाधि दी जा सकती है ।

उत्तरी आस्ट्रेलिया में एक विशालकाय गोरख इमली का वृक्ष है । यह पेड़ दो हजार वर्ष पुराना है । इसका खोखला तना किसी समय नगर जेल की तरह काम में लाया जाता था ।

ऐण्डोनियम वृक्षों के तनों में पानी भरा होता है और यह कई वर्षों तक सूखा पड़ने पर भी हरे ही बने रहते हैं । दक्षिण अमेरिका के ब्राजील और पेरु के जंगलों में एक ऐसा वृक्ष होता है जिसके तने से दूध जैसा तरल पदार्थ निकलता है जो मीठा भी होता है और स्वादिष्ट भी । वन वाले इसे देवताओं की कामधेनु समझते हैं और बड़े चाव से उसका दूध पीते हैं ।

इण्डोनेशिया के सुमात्रा द्वीप में और अमेरिका के चिली देश में एक ऐसा वृक्ष पाया जाता है, जिससे पानी टपकता रहता है और उसके नीचे एक छोटा गड्ढा उस पानी से भरा रहता है । यह पेड़ अपनी पत्तियों द्वारा हवा में उड़ती हुई भाप बड़ी मात्रा में सोखता है और फिर अपनी आवश्यकता जितना जल पास में रखकर शेष को बूँदों के रूप में बरसा देता है ।

अफ्रीका में एक ऐसा पेड़ पाया जाता है जिसकी छाल को आटे की तरह पीसकर रोटी बनाई जाती है । यह अन्न की तरह ही पौष्टिक और स्वादिष्ट होती है ।

वनस्पतियों का विकसित रूप ही सचेतन जन्तुओं में परिणत हुआ है । विकास क्रम की शृंखला यही बताती है कि सृष्टि के आदि में जीवन वनस्पति के रूप में था, फिर वह क्रमशः सचेतन प्राणियों के रूप में उन्नति करता चला गया । इसका प्रमाण अभी भी समुद्रों में उपलब्ध है । कुछ ऐसे पौधे अभी भी पाए जाते हैं जो वनस्पति भी कहे जा सकते हैं और प्राणधारी भी । उनमें दोनों ही गुण विद्यमान हैं ।

वनस्पति और जीवधारियों के बीच की कुछ जातियाँ समुद्र में पाई जाती हैं । एस्पेरिआपसिस जीव सड़ी लकड़ी से उगने वाले कुकरमुत्ते की तरह का होता है । यह पीले, भूरे और हरे रंग का—लगभग तीन इन्च व्यास का होता है । अमेरिका के पूर्वी तट पर यह लगभग २० प्रकार की जातियों में पाया जाता है ।

हाइड्रा देखने में तैरती हुई सूखी डाली जैसा लगता है । पर छेड़ते ही उसमें हरकत शुरू हो जाती है । इसके कई मुँह होते हैं । हर मुँह पर बाल उगे होते हैं जिनकी संख्या छै से दस तक होती है । इन बालों को वह सिकोड़ और फैला लेता है । असल में यह ही उसके हाथ हैं जिनकी सहायता से वह आहार पकड़ता और मुँह में डालता है । तैरने में यह बाल उसके लिए पैरों का काम देते हैं । समुद्री जन्तु 'केरोपहोलिया' दूर से देखने में ऐसा लगता है मानो पत्थर पर सुन्दर गुलाबी फूल खिला हो । जब जँभाई लेता है तो उस फूल जैसे मुँह को खुलते और बन्द होते देखा जा सकता है । यह पीले हरे और भूरे होते हैं । मुँह पर छोटी-छोटी कई जीभें उभरी होती हैं । इन्हीं से वे अपना आहार पकड़ते हैं । फ्लोरिडा, वेस्टइंडीज, कैलीफोर्निया की खाड़ी में यह कैरोपहोलिया आसानी से पाया जाता है ।

प्रायः छै इन्च लम्बा एल्कोनियम नन्हें असंख्य फूलों से लदी किसी सुन्दर डाली जैसा लगता है । उसके सहस्रों मुख होते हैं । तने जैसा मोटा पेट बीच में होता है । वेस्ट इन्डीज तथा उत्तरी अटलांटिक में यह पाया जाता है ।

आस्ट्रेलिया के वैरियर रीफ नामक क्षेत्र में रंग-बिरंगी घास जैसा एक जल जन्तु होता है—एक्टीनेरिया । इसके हाथ-पैर सदा हिलते रहते हैं और हर घड़ी कुछ पाने पकड़ने और खाने में ही लगा रहता है ।

वनस्पति की जीवधारियों के रूप में विकसित होने की परम्परा यह दर्शाती है कि अपनी उपलब्धियों और विभूतियों

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को परमार्थ प्रयोजनों के लिए समर्पित कर दिया जाए तो उससे कुछ खोता मिटता नहीं है, वरन् नये रूप में मनुष्य का विकास होता है । उसकी विभूतियाँ बढ़ती हैं और उपलब्धियों में अभिवृद्धि होती है । बीज जिस प्रकार अपने को मिटा देने के लिए तैयार होकर ही वृक्ष बनने में समर्थ होता है, बूँद जब मिटती है तभी 'सागर' बनती है उसी प्रकार आत्म विस्तार के इच्छुकों को अपने उद्देश्य में तभी सफलता मिलती है जबकि वे स्वयं को मिटाने का साहस जुटा सकें ।

निश्चय ही घास देखने में तुच्छ-सी प्रतीत होती है, किन्तु घोड़ा, बैल, हाथी आदि सशक्त पशु घास से ही आवश्यक शक्ति प्राप्त करते हैं । २०० ग्राम घास में इतनी शक्ति होती है कि एक मनुष्य डेढ़ घण्टा सफर कर सके । आधा घण्टा लकड़ी चीर सके—तीन घण्टे झाड़ू लगा सके । अनाज जिसे खाकर हम जीते हैं—घास के बीज ही तो हैं ।

७०० बीघे का एक हरी घास का मैदान सूर्य से इतनी शक्ति खींचता रहता है, जितनी एक परमाणु बम में—अर्थात् २०००० टन, टी० एन० टी० के बराबर ।

तीव्र वर्षा की जलधारा के नदियों में द्रुतगति से पहुँचने पर स्वभावत: भयंकर बाढ़ की आशंका रहती है । इस संकट का निवारण घास ही करती है । वह वर्षा के जल को अपने में सोखती उलझाती रहती है । इससे एक तो प्रवाह रुकता है दूसरे घास से ठहरे, रुके हुए पानी को जमीन धीरे-धीरे सोखती रहती है और उसमें देर तक नमी बनी रहती है । वर्षा जनित बाढ़ को रोकने के लिए घास की क्षमता बड़े-बड़े बाँधों से बढ़कर है ।

घास वस्तुत: समस्त प्राणधारियों के लिए जीवन मूरि है । हिमाच्छादित और पहुँच से बाहर उच्च गिरि श्रेणी को कौतूहल और प्रशंसा के साथ देखा जा सकता है और घास की अवज्ञा उपेक्षा होती रहती है ।

इससे क्या—विवेकशील दूरदर्शिता सदा नगण्य समझी जाने वाली घास की जीवनदात्री रीति-नीति के आगे नतमस्तक ही बनी रहेगी ।

परमार्थ कार्यों का साहस जुटा भर लेने की आवश्यकता है । उसके लिए न कोई विपुल साधन चाहिये न अपरिमित-क्षमता ही। परमार्थ प्रयोजन के लिए स्वयं को समर्पित करने की—अपने आपको मिटा देने की सामर्थ्य हो तो अन्य कमियाँ- त्रुटियाँ भी प्रकृति किसी न किसी प्रकार पूरा कर देती है, उदाहरण के लिए श्वास क्रिया गति और जीवन का प्रथम लक्षण है, स्थूल दृष्टि से पौधों में नाक नहीं होती, फेफड़े भी नहीं होते पर यदि सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) से देखें तो पौधे के पत्ते-पत्ते में श्वास छिद्र देखे जा सकते हैं । इन छिद्रों से ही वे श्वास लेते हैं यह अलग बात है कि प्राकृतिक सन्तुलन बनाये रखने के लिए पौधे मनुष्य और अन्य जीवधारियों द्वारा छोड़ी हुई दूषित वायु कार्बनडाइ ऑक्साइड ग्रहण करते हैं और एवज में उनके लिए अमृत तुल्य ऑक्सीजन निकालते हैं । कार्बनडाइ ऑक्साइड मूर्छित और अर्द्धचेतन रखने वाली गैस है इसी का प्रभाव है कि वृक्ष संधियोनि में अचेत और मूर्छित पड़े रहते हैं ।

कोई नाक और मुँह दोनों बन्द कर दे तो मनुष्य मर जाता है । पौधे के किसी पत्ते में छेद कर दिया जाये या उसके दोनों तरफ कागज चिपका दिया जाय तो पत्ता कुछ ही समय में पीला पड़कर गिर जायेगा । यदि तमाम पत्ते न होते तो सम्भवत: पेड़ ही नष्ट हो जाता । मानना चाहिए कि प्रकृति की हर रचना परमात्मा की कृपा और सृष्टि व्यवस्था का अंग है । कोई ऊबड़-खाबड़ बनावट मात्र नहीं । कुछ पौधे जो जल के भीतर रहते हैं साँस उन्हें भी आवश्यक होती है । योरोप के तालाबों में एक पौधा पाया जाता है जिसके पत्तों में झिल्ली नहीं होती । उसके लिए मछलियाँ पानी में मिली हुई वायु के कण अलग कर देती हैं । इसी से वह अपना जीवन चलाता रहता है पर श्वास के बिना जीवित वह भी नहीं रह सकता ?

प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि वृक्ष वनस्पति किस प्रकार अपने जीवन अस्तित्व को परमार्थ प्रयोजनों के लिए घुलाते रहते हैं ?

कुछ समय पूर्व इण्डोनेशिया ने यूनेस्को के तत्वावधान में १५० वन विशेषज्ञों की एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी हुई थी, जिसमें विश्व की घटती हुई वन-सम्पदा पर चिन्ता प्रकट की गई थी । आमतौर से लोग वृक्षों का महत्व नहीं समझते । लकड़ी का लोभ और खेती के लिए अधिक जगह मिलने के लालच में पेड़ों को काटते चले जाते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि इन तुच्छ लाभों की तुलना में वृक्ष विनाश से होने वाली हानि कितनी अधिक भयंकर है ? पैसिफिक साइन्स कान्फ्रेन्स ने संसार को चेतावनी दी कि वृक्ष सम्पदा विनाश का वर्तमान क्रम चलता रहा तो उसके भयानक परिणाम भुगतने पड़ेंगे ।

उपरोक्त गोष्ठी में जापान, आस्ट्रेलिया, कनाडा, अमेरिका, जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैण्ड, नीदरलैण्ड, भारत आदि २० देशों के वन विज्ञानी उपस्थित थे । गोष्ठी में कनाडा के प्रतिनिधि डॉ. व्लादीमीर क्रजीना ने कहा—मनुष्य को साँस लेने के लिए शुद्ध वायु मिलना आवश्यक है । वृक्ष हमारी इस आवश्यकता को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका प्रस्तुत करते हैं । संसार में बढ़ते हुए वायु प्रदूषण का समाधान करने के लिए वृक्षों की रक्षा की जानी चाहिये । यदि हम वन सम्पदा को गँवा बैठेंगे तो फिर शुद्ध साँस का अभाव इतना जटिल हो जायगा कि उसका समाधान अन्य किसी उपाय से सम्भव न हो सकेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

३.१२ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

अन्य देशों के प्रतिनिधियों ने भी जो विचार व्यक्त किए उनसे स्पष्ट था कि वृक्ष-रक्षा एवं अभिवर्धन का प्रश्न उतना उपेक्षणीय नहीं है जितना कि उसे समझा जा रहा है । उसे पशु-पालन के स्तर पर रखा जाना चाहिए । सच तो यह है कि इससे भी अधिक महत्व उसे दिया जाना चाहिये । पशुओं को गँवाकर उनके द्वारा मिलने वाले श्रम, दूध, माँस, चमड़े से एवम् गोबर से वंचित होना पड़ता है । वृक्षों को गँवाने की हानि उनसे भी अधिक है । वायु-शोधन—वर्षा का सन्तुलन और पत्तों से मिलने वाली खाद, धरती के कटाव का बचाव, कीड़े खाकर फसल की रक्षा करने वाले पक्षियों के आश्रय के अभाव में सफाया आदि कितने ही ऐसे संकट हैं, जो वृक्षों के घटने के साथ-साथ बढ़ते ही चले जायेंगे ।

पिछले दिनों कल-कारखानों की वृद्धि को विकास का आधार माना जाता रहा है । खाद्य उत्पादन के लिए कृषि तथा सिंचाई पर भी जोर दिया जाता रहा है । बहुत हुआ तो यातायात के साधनों को बढ़ाने की बात भी आर्थिक प्रगति के लिए जोड़ दी गई । वन सम्पदा की महत्ता समझने की ओर जितना ध्यान देना आवश्यक था उतना दिया ही नहीं । सच तो यह है वनों की जमीन घेरने वाला माना जाता रहा और उन्हें काटकर कृषि करने की बात सोची जाती रही । जलाऊ लकड़ी तथा इमारती आवश्यकता के लिए भी वृक्षों को अन्धाधुन्ध काटा जाता रहा और उनके स्थान पर नये वृक्ष लगाने की ओर उपेक्षा बरती जाती रही । आज हम वन की सम्पदा की दृष्टि से निर्धन होते चले जा रहे हैं और उसके कितने ही परोक्ष दुष्परिणामों को प्रत्यक्ष हानि के रूप में सामने खड़ा देख रहे हैं ।

'सहारा कान्क्वेस्ट' ग्रन्थ के लेखक सेन्टवार्व वेकर ने सहारा रेगिस्तान की २० लाख वर्ग मील भूमि के सम्बन्ध में लम्बा और गहरा सर्वेक्षण करके लिखा है—यह क्षेत्र किसी समय बहुत ही हरा-भरा था, पर लोगों ने नासमझी से उसे उजाड़ दिया । इससे यह रेगिस्तान बन गया । तेज हवा, सूर्य की सीधी धूप और पाले ने अच्छी खासी उपजाऊ मिट्टी को रेत बना दिया । तेज हवाएँ उस धूल को भी इधर से उधर उड़ाने लगीं । सिर्फ ऊसर और पथरीली जमीन ही टिकी हुई है । यह रेगिस्तानी विशाल भूखण्ड अब निकटवर्ती हरी-भरी जमीन को भी महासर्प की तरह निगलता चला जा रहा है । हर वर्ष तीस वर्ग हरी-भरी जमीन उस रेगिस्तान की चपेट में आकर सदा-सर्वदा के लिए मृतक बन जाती है ।

द्वितीय महायुद्ध के पश्चात एक बार अमेरिकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट हवाई जहाज से मिश्र की भूमि से गुजरे, उन्होंने लेबनान के इतिहास प्रसिद्ध सिडार वृक्षों के वन्य प्रदेश की बड़ी प्रशंसा पढ़ी थी । पर जब उन्होंने नीचे झाँककर देखा कि वहाँ नंगे पहाड़ खड़े हैं और जहाँ-तहाँ दस-बीस वृक्ष दीख रहे हैं, तब उन्हें इसका बड़ा दुःख हुआ । संसार में अन्यत्र भी ऐसी ही मूर्खता बरती जा रही है, इसकी विस्तृत जानकारी प्राप्त करके उन्हें और भी अधिक वेदना हुई । उनके आदेश पर राष्ट्रसंघ पर अमेरिकी प्रतिनिधियों ने दबाव डाला कि विश्व खाद्य और कृषि संगठन में वनसम्पदा के संरक्षण को भी महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए वैसा हुआ भी । राष्ट्रसंघ के तत्वावधान में वन सम्पदा बढ़ाने के लिए जो प्रयत्न चल रहे हैं, उन्हीं के अन्तर्गत एक बड़ी आर्थिक सहायता देकर लेबनान में नये सिरे से सिड़ार वन लगाये गए हैं और हजारों एकड़ जमीन फिर से हरी-भरी बनाई गई है । ऐसे ही प्रयास अन्यत्र भी हुए हैं ।

इस्राइल में हरा-भरा क्षेत्र एक तिहाई और सूखा रेगिस्तानी दो तिहाई है । उन लोगों ने इस सूखे भूखण्ड को हरा-भरा बनाने का संकल्प किया है और इन दिनों इस दिशा में अथक परिश्रम किया जा रहा है । पिछले दिनों ही १० करोड़ नये पौधे उन लोगों ने लगाये हैं ।

आइसलैण्ड वाले बहुत दिनों से अपनी वनसम्पदा उजाड़ते चले आ रहे थे । फलस्वरूप वे अपनी उपजाऊ भूमि से हाथ धो बैठे । सन् १९४६ के बाद उनकी आँखें खुलीं और योजनाबद्ध रूप से २० लाख नये पेड़ लगाये । टस्मानिया का भी यही हाल हुआ । उन लोगों ने वृक्ष सम्पदा गँवाई फलस्वरूप रेतीली आँधियों का सर्वनाशी सिलसिला आरम्भ हो गया । घास-पात तक को उन्होंने अपने पेट में निगल लिया । जब जीवन-मरण का सवाल पैदा हुआ तो उन्होंने ऊँचे चीड़ और देवदारू के वृक्ष लगाकर रेतीली हवाओं से रोकथाम की है और १५०० एकड़ जमीन रेगिस्तान के मुँह में से उगलवाई है । स्काटलैण्ड में कुल्विन सेन्डस नामक छै मील लम्बा और दो मील चौड़ा एक छोटा-सा रेगिस्तान था । उन लोगों ने इस अजगर का मुँह कुचलकर रख दिया है और अब वहाँ हरे-भरे उद्यान लहलहा रहे हैं । लीबिया ने अपने रेगिस्तानों को छोटी झाड़ियों से पाट देने का निश्चय किया है और वे उस प्रयास में भली प्रकार सफल हो रहे हैं । आस्ट्रेलिया ने अपने ७ इन्च जितनी स्वल्प वर्षा वाले क्षेत्र में संसार भर से ८३ जाति के ऐसे पौधे मँगाकर वहाँ रोपे हैं, जो सूखी आव हवा में भी पनप सकते हैं । आग की तरह तपने वाले बूमेटा रेगिस्तान का एक बड़ा भाग अब वृक्षारोपण के अभिनव प्रयासों से हरा-भरा बनाया जा चुका है । उस क्षेत्र के एक किसान डेस्मांड फाइलिस ने अपने एकाकी प्रयत्न से ६००० वृक्ष लगाये हैं जो अब २० फुट से भी ऊँचे हो गये हैं । इन वृक्षों ने उस क्षेत्र की भयंकर खुश्की को मनुष्यों और पशुओं के रहने योग्य बना दिया है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मोरक्को ने अपनी कुम्भकर्णी नींद त्यागकर अपनी नष्ट होती वन सम्पदा को सँभाला है । इन्हीं दिनों उन लोगों में ६५ हजार जैतून के, २७०० बादाम के और १३१०० सदाबहार के बड़े वृक्ष लगाये हैं । इस कार्य के लिए उन्हें राष्ट्रसंघ से भी अनुदान मिला ।

चीन अपनी उत्तरी पश्चिमी सीमा को सुरक्षित रखने के लिए फ्रांस की प्रसिद्ध लौह प्राचीर की तरह वृक्षों की हरी दीवार खड़ी कर रहा है । यह दीवार ३००० मील लम्बी और कई मील चौड़ी होगी । वहाँ बंजर प्रदेशों को वृक्षों से पाट देने का कार्यक्रम चल रहा है ।

अब संसार का हर देश समझ गया है कि मनुष्य जीवन के लिए पशुसम्पदा से बढ़कर वनसम्पदा का महत्व है इसलिए उसे राष्ट्रीय सम्पत्ति में उच्च स्थान दिया जा रहा है और उसे बढ़ाने के प्रयास को खाद्य उत्पादन स्तर का महत्व दिया जा रहा है ।

स्काटलैण्ड के वनस्पति विज्ञानी राबर्ट चेम्बर्स ने लिखा है—वन नष्ट होंगे तो पानी का अकाल पड़ेगा । भूमि की उर्वरा शक्ति घटेगी और फसलों की पैदावार कम होती चलेगी । पशु नष्ट होंगे । पक्षी घटेंगे और मछली प्राप्त करना कठिन हो जायगा । वन विनाश का अभिशाप जिन पाँच पुराने प्रेतों की भयंकर विभीषिका बनाकर सामने खड़ा कर देगा वे हैं बाढ़, सूखा, गर्मी, अकाल और बीमारी । हम जान और अनजान में वनसम्पदा नष्ट करते हैं और उससे जो पाते हैं उसकी तुलना में कहीं अधिक गँवाते हैं ।

धर्मशास्त्रों में वट, पीपल, आँवला आदि वृक्षों को देव संज्ञा में गिना है । उनके प्रति किसी समय कितनी गहरी श्रद्धा रही है इसका परिचय इस बात से मिलता है कि अभी भी वृक्षों के साथ लड़कियों का विवाह होने की प्रथा जहाँ-तहाँ पाई जाती है ।

तिरहुत में मंगली लड़की का विवाह पीपल के पेड़ के साथ कर दिया जाता है । ताकि नक्षत्र दोष का अनिष्ट पीपल पर पड़े और मनुष्य वर को किसी विपत्ति का सामना न करना पड़े ।

आन्ध्र के कुडप वंशी ग्रामीणों में कन्या का विवाह बारह वर्ष तक कर देने का रिवाज था, पर यदि किसी कारणवश विवाह न हो सका तो किसी फलदार पेड़ से उसका विवाह कर देते हैं और उसे सुहाग के सभी प्रतीक धारण करा देते हैं । इसके पश्चात् उसका 'पुनर्विवाह' किसी भी आयु में हो सकता है । यदि विवाह न हो तो भी उसे सुहागिन के सभी सामाजिक अधिकार मिल जाते हैं और बिरादरी के लोग विवाह न होने का लांछन नहीं लगाते ।

नेपाल की नेवार जाति के लोग अपनी लड़कियों का विवाह विल्व वृक्ष के साथ करते हैं । उसके पश्चात् जब किसी पुरुष के साथ विवाह होता है तो वह उपपति कहलाता है । उपपति को कोई स्त्री कभी भी बहिष्कृत कर देती है, उसे भृत्य जितने ही अधिकार प्राप्त होते हैं ।

हिसार जिले की घुमकूड बावरिया जाति में और सरगुजा के भीलों में यह प्रथा है कि विवाह की अनिच्छुक लड़कियों का विवाह पीपल के वृक्ष से कर देते है और यह मान लेते हैं कि उसका कुमारी रहने का 'दोष' मिट गया ।

हरियाली को मनुष्य जीवन सहचरी का स्थान मिलना चाहिये और उसके परिपोषण के लिये प्रत्येक नागरिक में व्यक्तिगत रूप से दिलचस्पी उत्पन्न की जानी चाहिये ।

महाकवि अलेग्जेण्डर स्मिथ प्रकृति को असीम प्यार करते थे और विचारशील लोगों को सम्बोधन करके कहते थे—अपनी स्मृति पीछे के लिये छोड़ जाना चाहते हो तो भवन बनाने और पदक प्राप्त करने की अपेक्षा वृक्ष लगाने पर ध्यान दो। वे इन दोनों की अपेक्षा अधिक चिरस्थायी होते हैं ।

संसार में सबसे पुराना वट वृक्ष ताइवान में ढूँढ़ निकाला गया है । ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर अब उसकी आयु ४१२८ वर्ष है । वह ४८ मीटर ऊँचा है । तने की मोटाई का व्यास ४० फीट से अधिक है । चिजायी प्रान्त के मिएन युएह ग्राम के पास की पहाड़ी पर यह उगा हुआ है । वहाँ के निवासियों ने उस महावृक्ष का नाम 'चेनी पौरिस' रखा है ।

यह वृक्ष वृद्ध होने पर भी अभी सैकड़ों वर्षों तक मजे में अपना अस्तित्व बनाये रहने योग्य सुदृढ़ है ।

इससे अधिक सस्ता, अच्छा, ऊँचा, चिरस्थायी एवं अतीव उपयोगी स्मारक और क्या हो सकता है ? मनुष्य अपना नाम चाहने की दृष्टि से ही सही वृक्षारोपण को महत्व दे तो भी उससे बहुत हित साधन हो सकता है । बिहार के हजारीबाग जिले का नामकरण इसी आधार पर हुआ है कि उस क्षेत्र के हजारी किसान ने अनवरत् श्रम करके उस क्षेत्र में हजार बाग लगवाने में सफलता प्राप्त की थी ।

घास एवं वृक्ष मनुष्य परिवार के ही अंग हैं । वे हमें भोजन, अन्न, वस्त्र आदि से लेकर प्राणवायु तक प्रदान करके जीवित रखते हैं । इतने अधिक मार्गों से वे हमारी सहायता करते हैं जिनका मूल्यांकन करना कठिन है ।

पेड़-पौधों की विस्मयजनक गतिविधियाँ

रेल की पटरियों पर एक विद्युत ट्रेन दौड़ी जा रही थी । ट्रेन छोटी-सी थी और उसमें आठ-दस डिब्बे से अधिक डिब्बे नहीं थे । यात्री भी बहुत थोड़े-से थे । ट्रेन चालू कर देने के बाद ड्राइवर भी इंजन छोड़कर पीछे के डिब्बे में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा बैठे थे । गाड़ी अपनी गति से चली जा रही थी कि रास्ते में खड़े एक पेड़ ने हुक्म दिया—रुक जाओ ।

गाड़ी रुक गयी ।

'पीछे की ओर चलो' वृक्ष ने ही आदेश दिया । गाड़ी पीछे चलने लगी । फिर दूसरे किनारे पर खड़े पेड़ ने कहा—'रुक जाओ ।'

गाड़ी फिर रुक गई । पेड़ ने गन्तव्य दिशा की ओर चलने का आदेश दिया तो गाड़ी गन्तव्य की ओर चल पड़ी ।

यह पंक्तियाँ न किसी परी कथा से उद्धृत की गयी हैं और न ही किसी ने इस घटना को स्वप्न में देखा है । अब से कुछ वर्ष पूर्व न्यूजर्सी (अमेरिका) में हजारों दर्शकों ने यह प्रदर्शन देखा और प्रदर्शनकर्ता हैं इलेक्ट्रॉनिकी विशेषज्ञ पियरेणल सांविन । प्रदर्शन से पूर्व सांविन ने घोषणा की थी कि वे अपनी आन्तरिक शक्ति को किसी भी पेड़ पर केन्द्रित करके विद्युत ट्रेन को आगे-पीछे दौड़ा सकते हैं । घोषणा को लोगों ने अविश्वास, कौतूहल और आश्चर्य के साथ सुना तथा हजारों की संख्या में निर्धारित स्थान पर पहुँचे जहाँ सफलतापूर्वक घोषित कार्यक्रम पूरा किया गया । ट्रेन पटरियों पर थोड़ा आगे बढ़ती किनारे पर खड़े वृक्ष में कुछ हल-चल होती और ट्रेन एक विद्युत का झटका खाकर रुक जाती । फिर पीछे दौड़ने लगती ।

पेड़ के संकेतों-निर्देशों पर केवल रेलगाड़ी चल पड़ती हो इतना ही नहीं है । बल्कि ऐसे पेड़ भी हैं जो स्वयं चलते-फिरते और गति करते हैं । 'नेचर मैगजीन' के सितम्बर ६१ अङ्क में श्री हेनरिक हाज ने मैनग्रोव नामक एक ऐसे वृक्ष का उल्लेख किया है जो यायावर जिन्दगी बिताता है, परिव्राजकों की तरह घूम-घूमकर लोगों में कौतूहल, सौन्दर्य और जीवन को मात्र प्रवास मानने की प्रेरणा देता रहता है ।

'दि ट्रि बैट वाक्स' शीर्षक से लिखे इस लेख को पढ़ने के बाद कुछ क्षणों के लिए 'कैटर पिलर' जीव की बात याद आये बिना नहीं रही, यह जीव जब लारवा की स्थिति में होता है तो उसकी आँखों के ऊपर से सींग की तरह बरों की मूँछ के समान दो बाल फूटते हैं । धीरे-धीरे यह बाल ऊपर बढ़ने शुरू होते हैं और कीड़ा एक पौधे की शक्ल में बदल जाता है । वृक्षों में जीवन और प्रकृति में चेतना का दिग्दर्शन कराने वाला यह बहुत ही कौतूहलवर्द्धक उदाहरण है । चेतना शरीर छोड़कर बाहर जाने की अपेक्षा अन्तर्मुखी होकर एक वृक्ष का रूप ग्रहण कर सकती है तो शरीर छोड़कर, कुछ समय चेतन शरीर, परमाणुओं से उसे शरीर, जीन्स प्रसुप्त स्थिति में रहकर नवजीवन धारण की शक्ति संग्रह कर वृक्ष वनस्पति का रूप धारण करते हों तो उसमें आश्चर्य क्या? भारतीय योग दर्शन में जीवन की जड़ अवस्था को ही वृक्ष का रूप बताया है, आत्मचेतना की दृष्टि से मानव सत्ता और वनस्पति सत्ता में कुछ अन्तर नहीं है । यह वृक्ष उस प्रतिपादन की अगली शृंखला को भी पूरा कर देता है । अर्थात् आत्मसत्ता वाली वस्तु को गतिशील होना चाहिये । वृक्षों के गतिशील होने का यह प्रत्यक्ष उदाहरण है ।

इस घुमक्कड़ वृक्ष मैनग्रोव की जन्मभूमि मियामी, फ्लैरिडा तथा बिस्कैनोवी खाड़ी है । फ्लैरिडा के कुछ वृक्ष वहाँ से १००० मील का समुद्री सफर तय करके पेनिनसुला तक तथा कैरेबियन समुद्र से होकर प्रशान्त और हिन्द महासागर के तट तक फैलकर इन्होंने 'चरैवेति-चरैवेति' के शास्त्रीय अभिमत का पालन किया है । सम्भवत: अपने इस गतिशील स्वभाव के कारण ही यह रोग-शोक से मुक्त परमात्मा की सृष्टि के मात्र दृष्टा होने का आनन्द लेते रहते हैं ।

समुद्र का सौन्दर्य बढ़ाने वाले इस मैनग्रोव के लिए जीवन व्यवस्थाएँ समुद्र से उसे स्वयं मिल जाती हैं । खारे पानी में अन्य वृक्ष उसी तरह नहीं पनप सकते जिस तरह हर क्षण सुविधाओं के परावलम्बी थोड़ी-कठिनाइयों से ही घबड़ा उठते हैं दूसरी ओर उसी पानी में यह वृक्ष अपना गुजारा आसानी से कर लेते हैं । शुद्ध पानी की कमी को यह पौधे अपनी पत्तियों में संचित जलकणों से उसी तरह पूरी कर लेते हैं जिस तरह मरुस्थल के ऊँट शरीर में बनी थैली में संचित जल से ।

यह वृक्ष प्रारम्भ में तट के कीचड़ वाले भागों में पैदा होता है । विचारवान् व्यक्तियों के द्वारा इन्द्रिय-लिप्सा और सांसारिक सुखों से विरक्ति की तरह यह पौधे ठण्डक में ठिठुरते रहने की अपेक्षा परिव्राजन की उष्णता का आनन्द लेते हुए वहाँ समुद्र की ओर चल देते हैं । इनकी जड़ों में एक विलक्षण प्रक्रिया होती है ऊपर से हवा कीचड़ के भीतर जड़ को जाती है, जिससे जड़ों में उस तरह की क्रिया होती है जिस तरह रेंगने वाले कीड़े अपनी पीठ वाले हिस्से को उठाकर चिमटी की-सी आकृति बना लेते हैं । फिर सिर की तरफ का भाग आगे बढ़ाते हैं । इसी तरह वे एक लम्बी यात्रा करते रहते हैं । सामान्य अवस्था में मैनग्रोव की जड़ें जहाज द्वारा लंगर डाल लेने के समान कीचड़ को पकड़े रहती हैं और वायु द्वारा कीड़े की तरह जड़ें आगे भी बढ़ती रहती हैं । यह गति यद्यपि मन्द होती है, पर कुछ ही समय में वे जाने कहाँ से कहाँ चले जाते हैं ? बुद्ध द्वारा आपत्तिकालीन प्रव्रज्या आन्दोलन के लिए सैकड़ों परिव्राजक एक साथ धर्म-चक्र-प्रवर्तन के लिए झोंक देने का परिणाम यह हुआ कि उस समय विकराल रूप धारण किए अश्रद्धा, अन्धविश्वास, अधार्मिकता और अपवित्रता का असुर वहीं रोक दिया गया । इस वृक्ष ने भी एक बार द्वितीय विश्व युद्ध के समय अमरीकी सैनिक को बर्बर आक्रमण से रोक दिया । जिस समय अमरीकी नौ सैनिक आगे बढ़े इन वृक्षों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की पूरी की पूरी कालोनियाँ आगे सामना करने के लिए डटी पाई गईं ।

कोई यह न समझ ले कि यह पौधे बौने होते होंगे । इनकी पूरी ऊँचाई सौ-सौ फुट तक होती है । पीले रंग के फूलों से आच्छादित इस वृक्ष के फल जब पकते हैं तो उन फलों में अंकुर भी डाल में लगे-लगे ही फूट पड़ते हैं । जब तक यह अंकुर आठ-दस फुट के नहीं हो जाते तब तक पौधे की डाल से उसी तरह लगे रहते हैं, जिस तरह परिव्राजक योग्य व्यक्तियों को आत्मोत्कर्ष के सन्देश देकर तब-तक पकाते रहते हैं, जब तक उनकी घनिष्टता, श्रद्धा और निष्ठा में परिणत नहीं हो जाती । इस तरह अंकुरित फल एक धड़ाके के साथ टूटता है और १०-१२ इन्च का नुकीला अंकुर तेजी से समुद्र की गहराई में धँसता चला जाता है । यदि उसने धरती पा ली तो वहीं से नये वृक्ष के रूप में पनपना प्रारम्भ कर देता है । कदाचित ऐसा न हुआ तो वे फिर जल की ऊपरी सतह में आकर तैरना प्रारम्भ कर देते हैं । तैरते-तैरते वे एक संगठन बनाकर काम करने की तरह कई ऐसे अंकुरित फल मिलकर कालोनी बना लेते हैं और जहाँ-कहीं उचित स्थान मिला वहीं अपनी जड़ें जमाकर आत्म-विकास प्रारम्भ कर देते हैं ।

बोतल वृक्ष—शिक्षक पेड़

'बाटल ट्री' (बोतल वृक्ष) आस्ट्रेलिया में पाया जाने वाला एक वृक्ष है । बोतलें पैदा होती हों, यह बात नहीं । पर जो बात है वह इससे भी अद्भुत है । बात यह है कि इसके तने की बनावट बोतल की-सी होती है और उसमें पानी की बहुत अधिक मात्रा भरी होती है । अपने इस गुण के कारण यह बहुत लम्बे अर्से तक भी बिना पानी के बना रह सकता है । यही नहीं जल का अकाल पड़ जाये तो कोई भी मनुष्य उससे जल निकालकर बहुत दिन तक अपना काम चला सकता है । एडीनम वृक्ष के तनों में भी पानी बहुतायत में पाया जाता है ।

ऐसे ही केलीफोर्निया के ५०० मील लम्बे और ३० मील चौड़े क्षेत्र, आस्ट्रेलिया एवं तस्मानिया आदि देशों में कुछ पौधों को आकाश नापने का शौक है । यूकेलिप्टस नेगनान्स नामक वृक्ष ३२५ फुट तथा सेक्युआ वृक्ष २९० फुट तक ऊँचे पाए जाते हैं, इसी प्रकार अफ्रीका में पाए जाने वाले वाओबाब नामक वृक्षों का तना इतना मोटा होता है कि उसके किनारे वट सावित्री के दिन कोई भारतीय महिला सूत के सात फेरे लपेटे तो उसके लिए उसे ६३० फीट लम्बे सूत की आवश्यकता पड़ेगी । अनैतिक कमाई खा-खाकर अपना पेट बढ़ा लेने वाले मनुष्यों के समान, यह वृक्ष भी किसी काम के नहीं होते, सिवाय इसके कि उन्हें जलाकर ईंधन का काम ले लिया जाए ।

सभी तेल जड़ या फलों से प्राप्त किये जाते हैं । पर वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि तुलसी वृक्ष की पत्तियों में तैल ग्रन्थियाँ पाई जाती हैं । उन्हीं का परिणाम है कि तुलसी का पौधा दूर तक अपनी सुगन्ध फैलाता और कृमियों को नष्ट करता है । अपनी इस उपकारप्रियता के कारण ही तुलसी एक वन्दनीय पौधा है ।

विश्वास कीजिए कुछ ऐसे वृक्षों पर, जो लोगों को आवाज देकर बुलाते और आतिथ्य करते हैं । अमरीका के उष्ण प्रदेश में जमइका में सीकेलिस नारियल जैसा एक वृक्ष होता है, उसके फल का वजन २० किलो होता है । जब ये पककर तैयार होते और फूटते हैं तो उससे पटाखे की सी धड़ाम की आवाज होती है । गोली की आवाज हो तो लोग डरें और भागें, किन्तु इस धमाके की आवाज सुनते ही बन्दरों के झुण्ड के झुण्ड उधर लपकते और जहाँ वह वृक्ष फूटा था, पहुँचकर उसकी गिरी खाने का आनन्द लेते हैं ।

ग्रीक में लाल लकड़ी (रेडवुड) नामक वृक्षों की ऊँचाई ३७० फीट तक पाई गई है । वृक्षों की ऊपर उठने की यह प्रवृति मानो मनुष्यों को यह प्रेरणा देती हो कि मनुष्य पार्थिव समस्याओं में ही उलझा न रहे । ऊपर देखे, संसार कितना विराट् है । ऊर्ध्वमुखी बने और उसका ज्ञान भी प्राप्त करे ।

इसी प्रकार अफ्रीका में पाये जाने वाले बालसा वृक्ष मनुष्य को इस संसार में हल्का-फुल्का जीवनयापन करने की प्रेरणा देते हैं । २० इन्च व्यास वाले किसी १५ फुट लम्बे रेडवुड के टुकड़े को तौलें तो उसका वजन लगभग १४ टन बैठेगा । पर यदि इतनी ही लम्बाई के बालसा वृक्ष के तने को लें तो यह कुछ पंसेरियों में ही तौला जावेगा । कोई भी व्यक्ति उसे आसानी से कन्धे पर उठाकर एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जा सकता है ।

भयंकर तूफान आए, वर्षा हुई, आँधी चली और आस-पास के बहुत-से पेड़, जो अकेले का दम्भ लिए खड़े थे, उजड़कर नष्ट हो गए । किन्तु इंग्लैण्ड के दो ऐलम-वृक्ष आघातों के बावजूद भी हरे-भरे खड़े हैं । कोई भी तूफान उन्हें धराशायी न कर सका । उसका कारण यह है कि पति-पत्नी की तरह यह दोनों वृक्ष एक-दूसरे से जुड़कर एक हो गये हैं । कहते हैं इन वृक्षों को देखने बहुत-से लोग जाते हैं और वहाँ से एक प्रेरणा और जाग्रति लेकर लौटते हैं कि जिन मनुष्यों के दाम्पत्य जीवन आत्मीयता की ऐसी प्रगाढ़ स्थिति में होते हैं उन्हें संसार की कैसी भी परिस्थितियाँ परास्त नहीं कर सकतीं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फ्लोरिडा अमेरिका में एक अति प्राचीन वट वृक्ष अतीव सजीव प्रेरणाओं के साथ आज भी खड़ा है । इसके तने कई-कई सौ गज की दूरी में फैले हैं, फिर भी वे कहीं से इसलिए नहीं टूटते क्योंकि उनमें से निकल-निकल कर जड़ें पृथ्वी में इस तरह मजबूत होती गई हैं, जैसे ८४ खम्भों वाली दालान की छत को खम्भे साधते हैं ।

कोई इन पेड़ों-वृक्षों से शिक्षा ले या न ले पर यह सच है ।

शास्त्रकार उस अखिल ब्रह्माण्डव्यापी दिव्य-सत्ता की यह विचित्र कलाकृतियाँ देखकर धन्य हो गया । उसकी वाणी इतना ही कह सकी—"**तत्वं वन्दे तदद्भुतम्**" उस अद्भुत तत्व को मेरा बारम्बार प्रणाम है ।

उदाहरणस्वरूप- सुमात्रा (इण्डोनेशिया) के उस कुएँ को ले सकते हैं जिसके अन्दर झाँकने से दर्शक को एक के स्थान पर दो प्रतिबिम्ब दिखाई देते हैं । प्रकाश किरणों में ऐसी अद्भुत क्षमताएँ तो है कि वे किसी वस्तु का प्रतिबिम्ब कहीं भी, कैसा भी, चित्र-विचित्र बना दें किन्तु उसके लिए तरह-तरह के त्रिपार्श्व (प्रिज्म) और लेन्सों का उपयोग आवश्यक होता है । इस कुएँ में कहीं कोई शीशा नहीं जड़ा । आश्चर्य तो यह है कि जो दो प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ते हैं, उनमें से एक तो दर्शक का ही होता है पर दूसरा, किसी अपरिचित का—किस अपरिचित का वैज्ञानिकों के पास उसका कोई उत्तर नहीं है ?

वेलाविस्चिया (दक्षिण अफ्रीका) में संसार का सबसे विचित्र पौधा पाया जाता है, उसकी ऊँचाई कुल १ फुट होती है जबकि तने का व्यास १५ फीट । शतायु जीवी इस पौधे का एक और बड़ा आश्चर्य है—उसकी तीन पत्तियाँ जो जन्म के साथ आती हैं और मृत्यु के साथ जाती हैं । प्रकृति में ऐसा गुण कहीं नहीं पाया जाता जिससे वनस्पतिशास्त्री उसकी संगति मिलाते और इस पौधे के सम्बन्ध में कोई अनूठा सिद्धान्त दे पाते ।

धरती ब्रह्माण्ड की तुलना में छोटी है । रीडर्स डाइजेस्ट प्रकाशन ने एक एटलस प्रकाशित किया है, उसमें विराट् ब्रह्माण्ड का भी नक्शा प्रस्तुत किया गया है उस तमाम नक्शे में समूचे सौरमण्डल के लिए जिसकी लम्बाई-चौड़ाई प्रकाश वर्षों में भी नापी जाती है, कोई स्थान नहीं दिया गया । एक तीर जैसा संकेत भर है और लिखा है हमारा सौरमण्डल यहाँ कहीं है (अवर सोलर सिस्टम इज समव्हेअर हियर) । फिर इस पृथ्वी के अस्तित्व की नगण्यता का तो कहना ही क्या ? उसमें भी इटली जैसे छोटे-से देश की गिनती करना भी व्यर्थ है पर उसी इटली के उसेला नामक स्थान में एक किला देखने जायें तो सारे ब्रह्माण्ड की विचित्रता को उसी किले में उतरा हुआ पायेंगे । इस किले की वैज्ञानिक इन दिनों तत्परतापूर्वक खोज कर रहे हैं पर उसके अद्भुत रहस्य की कोई जानकारी नहीं मिल रही है । सूर्योदय होने को होता है तो यह किला समूचा दिखाई देता है उसी प्रकार सूर्यास्त होता है तो उससे थोड़ी देर पहले भी किला समूचा दिखाई देता है, शेष समय किला एक मात्र खण्डहर के रूप में दिखाई देता है । किन किरणों का खेल है यह जो अपनी इच्छानुसार उसे किले के रूप में प्रस्तुत कर देती हैं अथवा खण्डहर के रूप में, कुछ भी तो पता नहीं चल पाया । वैज्ञानिकों का कथन है कि सूर्य के साथ उदय या अस्त होने वाली किरणें इस पृथ्वी पर पहुँचने से पहले तारों से भरे आकाश में १० हजार प्रकाश वर्ष तक घुस लेती हैं तब पहुँचती है । सम्भव है इस घटना का सम्बन्ध इस ताप से हो पर उसके लिये व्यक्ति को विराट् आँखें चाहिये, चमड़े वाली नहीं ।

प्रकाश तत्व और शब्द तत्व दोनों ही शक्ति के रूप हैं, प्रकाश ही नहीं इटली के ही लुसेरा नामक स्थान में ब्रह्म अपनी शब्द की गोपनीयता का भी आभास कराता है । यहाँ एक ऐसा मकान है जिसमें कोई चिल्लाये या बात करे तो उसकी आवाज ११ बार प्रतिध्वनित होती है पर सूर्यास्त हो जाने के बाद आप कोई बात कहेंगे तो प्रतिध्वनि ११ की अपेक्षा १२ बार आएगी, किस नियम के द्वारा—वैज्ञानिक कहते हैं भाई कुछ अता-पता नहीं, कारण क्या है ?

बिहार राज्य के चम्पारन जिले में एक प्रकार का धान पाया जाता है जिसका उल्लेख करते हुए डा. डाग स्टोरर ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक 'वंडर बुक आफ स्ट्रेन्ज फैक्ट्स' में लिखा है कि यह धान अपना सिर हमेशा पानी की सतह से ऊपर रखता है । यदि कदाचित खेत में बहुत अधिक बाढ़ आ जाये तो धान के पौधे असामान्य गति से बढ़कर दूसरे ही दिन जल की सतह से ऊपर अपना सिर उठा लेते हैं; जबकि जड़ें जमीन में ही लगी रहती हैं । गति की इस असामान्यता का पता इसी बात से लगाया जा सकता है कि यह पौधे एक दो दिन में ही २० फुट तक बढ़ सकते हैं जबकि सामान्य पौधों को इतनी ऊँचाई तक बढ़ने के लिए कई महीनों का समय चाहिये ।

यह प्रमाण दर्शाता है कि वृक्ष भी उसी दिव्य चेतना के प्रकाश पुंज हैं जिसके कि मनुष्य और मनुष्येतर प्राणी । जो शक्तियाँ मनुष्य तथा प्राणियों में दिव्य विलक्षणताएँ उत्पन्न कर देती हैं, वही शक्तियाँ वृक्ष वनस्पतियों को भी प्रभावित करती हैं । पहले कभी तो विज्ञान ही यह मानता रहा था कि पेड़-पौधे भी धूल-पत्थर की तरह निष्प्राण हैं । कुछ वर्षों से ही यह माना जाने लगा है कि वृक्ष वनस्पतियों में भी प्राणचेतना विद्यमान है ।

एक छोटी-सी घटना से प्रेरित होकर हमारे ही देश के एक वैज्ञानिक जगदीशचन्द्र बसु ने यह सिद्ध किया कि पेड़- पौधों में भी जान है । वे भी अनुभव करते हैं । उनमें भी अनुभूति और भावनायें मौजूद रहती हैं ? वे भी मनुष्यों और जानवरों की तरह सुख में सुख तथा दुःख में दुःख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुभव करते हैं । बसु ने 'आप्टिकल लीवर' नामक एक विशेष यन्त्र बनाया था, जिसके माध्यम से पेड़-पौधों की गति, स्पन्दन और सम्वेदनाओं का अध्ययन किया जाता था । पेड़ की पत्ती तोड़ने पर उसे जो पीड़ा होती है, आप्टिकल लीवर ने उसे पकड़ा और बताया, इसी तरह की कई और बातें, प्रक्रियायें 'आप्टिकल लीवर' से देखी जा सकीं ।

परन्तु सर जगदीशचन्द्र बसु के बाद से अब तक विज्ञान ने काफी तरक्की कर ली है और उसी तरह वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में हुई नई-नई शोधों ने वनस्पति संसार के नये रहस्य खोलकर रख दिए हैं । जैसा कि उपरोक्त घटना में ही देखा गया । पेड़-पौधे मनुष्य के संकेतों को समझते हैं और उन्हें प्रेरित किया जाय तो सम्मोहित व्यक्ति की तरह उन पर आचरण भी करते हैं । पियरे पाल सावित ने यही तो किया था । उन्होंने घोषित प्रदर्शन के पूर्व बिजली के एक स्विच का सम्बन्ध अपनी देह के साथ जोड़ा और दूसरे स्विच को गैल्वेनोमीटर से लगाया । इस गैल्वेनोमीटर का सम्बन्ध एक पौधे के साथ जोड़ा गया था । सावित वहाँ बैठे-बैठे संकेत देते और पौधा विद्युत ट्रेन के परिपथ के साथ उलटा सम्बन्ध स्थापित करता, जिससे ट्रेन पीछे की ओर चलने लगती । इस प्रयोग को अमेरिका में टेलीविजन पर भी बताया गया । लोग दंग रह गये यह देखकर कि पौधा भी इतना आज्ञाकारी हो सकता है ।

भारतीय धर्मशास्त्रों में पेड़-पौधों और वनस्पतियों से मनुष्य द्वारा स्थापित किए गए सजीव सम्पर्क की ढेरों घटनाओं का उल्लेख मिलता है । आयुर्वेद शास्त्र के पितामह चरक के सम्बन्ध में विख्यात है कि उन्होंने अपने छोटे-से जीवन में हजारों जड़ी-बूटियों के गुण मालूम किए तथा कौन-सी जड़ी किस रोग में कैसे प्रयोग की जानी चाहिये ? इसका विस्तृत विधि-विधान खोजा । आजकल वैज्ञानिक एक रोग की दवा खोजने अथवा एक औषधि का परीक्षण विश्लेषण करनें में ही जीवन भर गुजार देते हैं तो एक व्यक्ति द्वारा अपने छोटे-से जीवन में हजारों औषधियों का अध्ययन विवेचन कैसे सम्भव है ? विश्वास नहीं किया जाता ।

ऐसा उल्लेख मिलता है कि आयुर्वेद की रचना करते समय चरक जंगल में एक-एक झाड़ी, पौधे और वनस्पति के पास जाते तथा उससे उसकी विशेषताएँ पूछते । वनस्पति स्वयं अपनी विशेषताएँ बता देती । इसी आधार पर हजारों वर्षों या हजार वैज्ञानिकों का कार्य एक अकेले व्यक्ति द्वारा सम्पन्न किया जा सका । पहली बात को जहाँ संदिग्ध समझा जाता रहा है, वहाँ दूसरी को हास्यास्पद कहा जाता है । परन्तु अब, जबकि वनस्पति जगत में हुई अधुनातन खोजों के आधार पर वैज्ञानिक यह कहने लगे हैं कि पेड़-पौधों से न केवल सम्वाद सम्भव है वरन् उनसे इच्छित कार्य भी कराया जा सकता है । पियरे पाल सावित का तो यहाँ तक कहना है कि चोरों से घर की सुरक्षा के लिए भी भविष्य में पेड़-पौधों का स्तेमाल किया जा सकेगा । उसके लिए किसी भी पौधे का सम्बन्ध दरवाजे के साथ जोड़ दिया जायगा और मकान मालिक जब उस पौधे के पास जाकर खड़ा हो जाएगा तो पौधा अपने मालिक को पहचानकर दरवाजा खुलने देगा ।

यहाँ तक तो फिर भी उतना आश्चर्य नहीं होना चाहिये । अमेरिका के ही एक और इलेक्ट्रॉनिकी विशेषज्ञ वैकस्टर ने तो यहाँ तक कहा है कि पेड़-पौधे अपने मालिकों की मृत्यु पर शोक भी व्यक्त करते हैं । पियरे पाल सावित ने तो यहाँ तक कहा है कि पेड़-पौधे न केवल मनुष्यों की मृत्यु पर शोक व्यक्त करते है बल्कि उन्हें मानव कोशाओं की मृत्यु का बोध होता है तो वे उस पर भी अपनी सम्वेदना व्यक्त करते हैं ।

इसके लिए सावित ने अस्सी मील की दूरी पर एक प्रयोग किया । सावित ने जिस पौधे को प्रयोग के लिए चुना था वह अस्सी मील दूर पर एक अनुसन्धान केन्द्र में स्थित था । फिर उसने अपने शरीर को बिजली के झटके दिए । अस्सी मील की दूरी पर स्थित पौधे पर इसकी प्रतिक्रिया नोट की गई जबकि दोनों के बीच कोई सम्बन्ध नहीं था सिवाय इसके कि जब सावित के शरीर को बिजली के झटके दिए जा रहे थे तो वह कल्पना में उन पौधों का ध्यान कर रहा था ।

फिर भी सावित को यह विश्वास नहीं हुआ कि पौधे उसके शरीर पर लगने वाले विद्युत झटकों पर ही प्रतिक्रिया व्यक्त करते थे । सावित ने विचार किया कि सम्भव है पौधे अपने आस-पास की दूसरी किसी घटना पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर रहे हों । अत: अब एक पौधे के स्थान पर तीन-तीन पौधे लिए गये और तीनों पौधों को अलग-अलग कमरों में रखा गया । हर कमरे का माहौल दूसरे के माहौल से बिल्कुल भिन्न था तथा तीनों पौधे एक ही विद्युत पथ से जुड़े हुए थे । उधर अस्सी मील दूरी पर स्थित सावित ने अपना प्रयोग आरम्भ किया । न कोई सम्पर्क न सम्बन्ध सूत्र । केवल विचार शक्ति का उपयोग करना था । सावित ने जब अपना प्रयोग आरम्भ किया तो तीनों ही पौधों पर एक समान प्रतिक्रियाएँ हुई । अब इसमें कोई सन्देह नहीं था कि पौधे अस्सी मील दूर बैठे सावित की अनुभूतियों, सम्वेदनाओं को ग्रहण कर अपनी प्रतिक्रियायें व्यक्त कर रहे थे ।

पेड़-पौधे न केवल मनुष्य के आज्ञा पालन को तत्पर रहते और दु:ख-सुख में सम्वेदनायें व्यक्त करते वरन् उनमें भी भावनाओं का आवेश उमड़ता है । जापान के मनोविज्ञानी डा. केन हाशीमोतो ने 'लाइडिटेक्टर' के माध्यम से इस बात का पता लगाया । 'लाइडिटेक्टर' एक ऐसा यंत्र है जो अपराधियों की झूठ पकड़ने के काम आता है । इसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिद्धान्त है कि व्यक्ति जब कोई बात छुपाता है या झूठ बोलता है तो उसके शरीर में कुछ वैद्युतिक परिवर्तन आ जाते हैं । लाइडिटेक्टर उन परिवर्तनों को अंकित कर लेता है और बता देता है कि व्यक्ति झूठ बोल रहा है अर्थात् मनुष्य की भावनात्मक स्थिति में आने वाले परिवर्तनों को लाइडिटेक्टर बता देता है ।

डॉ० केन हाशीमोतो ने इस मशीन का सम्बन्ध कैक्टस के एक पौधे से जोड़ा इसके बाद यंत्र को चालू कर दिया, यन्त्र ने बड़ी तेजी से कम्पन अंकित किये । हाशीमोतो ने इन कम्पनों को ध्वनि-तरंगों में बदलने के लिए कुछ विशेष इलेक्ट्रॉनिक यंत्रों का सहारा लिया । इन यंत्रों की मदद से कम्पनों को ध्वनि-तरंगों में परिवर्तित किया और उन्हें सुना गया तो लयात्मक स्वर सुने गये । जो स्वर सुने गए उनमें कहीं हर्ष का आवेग था तो कहीं भय की भावना ।

हाशीमोतो ने कैक्टस के पौधे पर इतने प्रयोग किए कि उसे गिनती गिनना तक सिखा दिया । कैक्टस का पौधा हाशीमोतो की आज्ञा पाकर एक से बीस तक गिनती गिनने लगता और यह पूछने पर कि दो और दो कितने होते हैं, स्पष्ट उत्तर देता चार । इस प्रयोग को अन्य कई वैज्ञानिकों ने भी देखा और संसार की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कराया ।

प्रदर्शन के समय पेड़ के सामने प्रश्न रखा गया कि बारह में से चार घटाने पर कितने बचते हैं ? कैक्टस ने जो उत्तर दिया डा. हाशीमोतो ने उसे ध्वनि-तरंगों के रूप में परिवर्तित करके दिखाया । ध्वनि तरंगों को जब हैडफोन पर सुना गया तो स्पष्ट उत्तर सुनाई दे रहा था—आठ । इन प्रयोगों और निष्कर्षों को लेकर जापान ही नहीं संसार के वनस्पति विज्ञान में एक नयी हलचल पैदा हो गई है ।

अब इसमें कोई सन्देह नहीं रह जाता कि चरक ने कभी जड़ी-बूटियों से प्रश्न किया हो और जड़ी बूटियों ने बताया हो कि हम अमुक रोग का उपचार करने में समर्थ हैं । प्रश्न उठता है कि प्राचीनकाल में जब भारतीय विज्ञान इतना विकसित रहा था तो वह लुप्त क्यों हो गया ? इस सन्दर्भ में एक बात स्मरणीय है कि आधुनिक विज्ञान यंत्रों के द्वारा शोध और प्रयोग करता है परन्तु प्राचीनकाल में यही आत्मा की शक्ति सामर्थ्य के बल पर किया जाता था । चेतना तक चेतना की पहुँच सुगम है अपेक्षाकृत चेतन को यंत्रों से सम्बोधित करने के । वहाँ भी चेतना ही काम करती है, परन्तु यांत्रिक व्यवस्था जब बीच का माध्यम बनती है तो चेतना की गति निर्विरोध नहीं रह जाती । प्राचीनकाल में चेतन को चेतन से प्रभावित करने और आत्मिक चेतना से अदृश्य गुह्य रहस्य उद्घाटित करने के जो प्रयोग हुए तथा उनमें जो सफलताएँ मिलीं, उन्हें परम्परागत रूप से दूसरे को प्रत्यावर्तित नहीं किया जा सका ।

डॉ० हाशीमोतो ने जब जापान की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में इस तरह के लेख लिखे तो उनके पास ढेरों पत्र पहुँचने लगे । लोगों ने कैक्टस की इन भौतिक क्रियाओं के पीछे विद्यमान रहने वाले भौतिक कारणों को जानना चाहा तो डा. हाशीमोतो ने एक-दूसरे लेख में लिखा—संसार में ऐसी कितनी ही घटनाएँ घटती हैं जिनके पीछे विद्यमान कारणों पर भौतिक विज्ञान प्रकाश नहीं डाल सकता, क्योंकि वह अभी पूर्ण विकसित नहीं हुआ है । इस गुत्थी को सुलझाने में पूर्व का अध्यात्म विज्ञान ही समर्थ है जो चेतना की सर्वव्यापकता और उसके जीवन्त अस्तित्व को स्वीकारता है । यह कोई विलक्षण घटना नहीं है, विलक्षण इसलिए लगती है कि हमारी जानकारी में अभी आयी है । अन्यथा गैलीलियो के बताने से पूर्व भी पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती थी और बताने के बाद भी । केवल गैलीलियो का यह सिद्ध करना विस्मयकारी और अविश्वसनीय रहा कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है ।

वस्तुत: कैक्टस के पौधे घोर विपरीत परिस्थितियों में स्वावलम्बी जीवन जीने वाले होते हैं । जहाँ पानी का अभाव रहता है वहाँ भी वे जीवित रहते हैं । उनकी आत्मनिर्भरता यह सिद्ध करती है कि जीवन यदि अपनी पर उतर आये—तनकर खड़ा हो जाये तो विपरीत परिस्थितियों के आगे भी उसे पराजित नहीं होना पड़ता ।

अमेरिका के मरुस्थल में और दक्षिणी अफ्रीका में पाये जाने वाले कैक्टस इसी प्रकार के हैं । वे जल के अभाव में जीवित रहते हैं । रेतीली जमीन में हरे-भरे रहते हैं और सब को सुखा-जला डालने वाली गर्मी के साथ अठखेलियाँ करते हुए अपनी हरियाली बनाए रहते हैं ।

विकट परिस्थितियों के बीच रहने के कारण कुरूप भी नहीं होते वरन् बाग उद्यानों में रहने वाले शोभा गुल्मों की अपेक्षा कुछ अधिक ही सुन्दर उगते हैं । रेशम जैसे मुलायम, ऊन के गोले जैसे दर्शनीय, गेंद, मुद्गर, सर्प, स्तम्भ, ऊँट, कछुआ, साही, तीतर, खरगोश, अखरोट, कुकरमुत्ते से मिलती-जुलती उनकी कितनी ही जातियाँ ऐसी हैं जिन्हें वनस्पति प्रेमी अपने यहाँ आरोपित करने में गर्व अनुभव करते हैं । पत्तियाँ इनमें नहीं के बराबर होती है, प्राय: तने ही बढ़ते हैं पर उनकी ऊपरी नोंक पर ऐसे सुन्दर फूल आते हैं कि प्रकृति के इस अनुदान पर आश्चर्य होता है, जो उसने इस वनस्पति को प्रदान किया है ।

पथरीली और रेतीली भूमि में—असह्य सूर्य ताप के बीच, पानी का घोर अभाव सहते हुए भी यह पौधे जीवित रहते और हरे-भरे बने रहते हैं । इन्हें रेगिस्तान का राजा कहा जाता है । पथरीली भूमि में दूसरे पौधे जीवित नहीं रह पाते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्योंकि वहाँ मिट्टी तो होती नहीं । पौधों के लिए आवश्यक पानी कैसे ठहरे ? पानी के बिना पौधे कैसे जियें ?

कैक्टस पौधों की सचेतना ऐसी है कि वे पानी के लिए जमीन पर निर्भर नहीं रहते । जब वर्षा होती है तब सीधे इन्द्र भगवान से अपनी आवश्यकता भर पानी माँग लेते हैं और अपनी कोशिकाओं में भर लेते हैं । प्रधानतया तो यह जल भण्डार तने में ही रहता है पर यदि उस जाति में पत्ते निकले तो उसमें भी उसी तरह की जल संग्राहक कोशिकाएँ रहेंगी । यह तने पत्तियों की आवश्यकता भी स्वयं ही पूरी कर लेते हैं । सूर्यनारायण से आवश्यक प्रकाश प्राप्त करते रहने की क्षमता भी अपने में बनाये रहते हैं । तने में भरा हुआ जल भण्डार इतना प्रचुर होता है कि यदि लगातार छै वर्षों तक पानी न बरसे, इन्द्र देव रूठे रहें तो भी उनका एक तिहाई पानी ही मुश्किल से चुक पाता है ।

सूर्य का ताप उनकी तरलता को भाप बनाकर उड़ा न ले जाय उसके लिए उनका सुरक्षा आवरण बहुत मजबूत होता है । तनों का बाह्यावरण मोटा ही नहीं मजबूत भी होता है और उनमें ऐसे एकमार्गी छेद होते हैं जो सूर्य से प्रकाश तो ग्रहण करते हैं पर अपनी तरलता बाहर नहीं निकलने देते ।

कैक्टस जानते हैं कि अपनी सुरक्षा का प्रबन्ध आप किये बिना गुजारा नहीं । इस दुनिया में उनकी कमी नहीं जो दूसरों का उन्मूलन करके ही अपना काम चलाते हैं । इनके सामने नम्र सरल बनकर रहा जाय तो वे उस सज्जनता को मूर्खता ही कहेंगे और अनुचित लाभ उठायेंगे । भोले कहे जाने वालों का शोषण इसी प्रकार होता रहा है । वे इस तथ्य से अवगत प्रतीत होते हैं । तभी तो अपनी सुरक्षा के लिए—आक्रमणकारियों के दाँत खट्टे करने के लिए उन्होंने उचित व्यवस्था की हुई है । दूसरों पर आक्रमण भले ही न किया जाय पर अपनी सुरक्षा का इन्तजाम रखने और आक्रमणकारियों को बैरंग वापस लौटाने की व्यवस्था तो करनी ही चाहिये । कैक्टस यह प्रबन्ध कर सकने के कारण ही इस दुरंगी दुनिया के बीच जीवित है ।

कैक्टस के तनों पर नुकीले काँटे होते हैं । वनस्पति चर जाने के लालची पशु उनकी हरियाली देखकर दौड़े आते हैं पर जब काँटों की किलेबन्दी देखते हैं तो चुपचाप वापस लौट जाते हैं ।

इन पौधों की रंग-बिरंगी विभिन्न प्रकृति की अनेक जातियाँ पाई जाती हैं । इनमें से फिना मैरी गोल्ड, मिल्कवीड, ओपाईन, पर्सलेन, स्पर्ज, जिकेनियम, डंजी मुख्य हैं । इनमें से कितने ही ऐसे होते हैं जिनकी आकृति सुन्दर प्रस्तर खण्डों जैसी लगती है ।

यह पौधे अब सब जगह शोभा-सज्जा के काम आते हैं । राजकीय उद्यानों में, श्रीमन्तों के राजमहलों में, कलाप्रेमियों में इनका बहुत मान है । इन्हें लगाये बिना कोई वनस्पति उद्यान अधूरा ही माना जाता है । सर्वसाधारण में भी इनकी लोकप्रियता बढ़ी है और हर जगह उन्हें मँगाया सजाया जा रहा है ।

सम्भवतः यह इनका दृढ़ता, कठोरता, स्वावलम्बता और तितीक्षा जैसी विशेषताओं का ही सम्मान है ।

मनुष्य जितना नाजुक बनता जायगा उतना ही दुर्बल बनेगा और परिस्थितियाँ उस पर हावी होंगी । किन्तु यदि दृढ़ता, तितीक्षा, कष्ट सहिष्णुता और साहसिकता अपनाए रहे तो न केवल शरीर वरन् मन भी इतना सुदृढ़ होगा, जिसके सहारे पर विपन्नता का सामना किया जा सके ।

आत्मचेतना का विकास वृक्ष-वनस्पतियों में

शास्त्रकार का कथन है—

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च,
ज्योतिषि सत्वानि दिशोद्रुमादीन ॥
सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं,
यत्किञ्च भूतं प्रणामेदनन्यः ॥

—भक्ति सूक्त २६

तात् ! आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, नक्षत्र, जीव-जन्तु, दिशायें, वृक्ष, नदियाँ, समुद्र तथा और भी जो कुछ भूतजात है वह सब परमात्मा का ही शरीर है । अतएव सबको अनन्य भाव से प्रणाम कर ।

उपरोक्त सूक्त में आचार्य संकेत करते हैं कि एक ही चेतन आत्मा सब में विद्यमान है यह अनुभव करते हुए हमें विराट् ब्रह्म की असीम चेतना अपने चारों ओर फैली देखनी चाहिए और सबके साथ सहृदयतापूर्ण व्यवहार करना चाहिये ।

स्थूल दृष्टि से यह बात कुछ असंगत-सी प्रतीत होती है कि जड़ को भी चेतन माना जाये । नदियाँ, पहाड़, दिशायें, नक्षत्र भी जीवन धारी हो सकते हैं इन्हें थोड़ा जटिल कहा जा सकता है पर वृक्ष-वनस्पति के बारे में तो अब विज्ञान को भी इस बात का संदेह नहीं रहा कि उनमें जीवन नहीं है । जीवनधारियों के सारे लक्षण उनमें पाये जाते हैं ।

प्रकृति ने किसी कर्मवश उन्हें अन्य जीवधारियों का पोषक बनाया पर इस कारण उनके प्रति श्रद्धा और कृतज्ञता न रखी जाए यह मनुष्य के लिए शोभा की बात नहीं । इससे मानवीय बुद्धि का पतन ही होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वृक्ष-वनस्पति के प्रति श्रद्धा और पूज्य भाव हमारे पूर्वजों ने स्थापित किया उस परम्परा को बनाए रखने से हम रूढ़िवादी या अल्प बुद्धि नहीं भाव प्रवण और समर्थ व्यक्ति ही माने जायेंगे ।

कर्मवश मनुष्य कभी क्रूर स्वभाव वाला देखा जाता है तो कभी उसमें सन्तों के गुण और स्वभाव पाये जाते हैं । वृक्षों में भी यह गुण विद्यमान होने से पता चलता है कि वे भी कर्म-बन्धनों से बँधे जीव हैं । उनकी प्रकृति कैसी भी क्यों न होती हो । ऐसे क्रूरकर्मा एक वृक्ष का वृत्तान्त लिखते हुए मेडागास्कर द्वीप की यात्रा करने वाले प्रसिद्ध फ्रांसीसी खोजी डॉ० नेल्सन ने वहाँ पाए जाने वाले मनुष्य भक्षी वृक्ष का उल्लेख किया है । नेल्सन ने लिखा है कि २५ से ३० फुट तक ऊँचे इन वृक्षों में थाली जितना एक बड़ा आकर्षक फूल होता है, दुष्ट और पापी लोग भोले-भाले सज्जनों को मिथ्या आकर्षण में बाँधकर ही तो लूटते हैं । इन वृक्षों का सुन्दर फूल देखकर जो भी पक्षी या मनुष्य वहाँ पहुँच जाता है वृक्ष एक-एक फीट से भी बड़े काँटे उसके शरीर में चुभाकर उसका रक्त चूस लेता है और उसके निर्जीव शरीर को फेंक देता है रक्त चूसने के कुछ समय बाद तक यह फूल आकार में बढ़े हुए रहते हैं । धीरे-धीरे रक्त शरीर में पच जाता है तब ये सामान्य स्थिति में आ जाते हैं । आस्ट्रेलिया, मलाया, श्रीलंका और भारतवर्ष के असम बंगाल क्षेत्र में घट पर्णी नामक वृक्ष भी ऐसा ही होता है इसके फल में एक प्रकार का चिपचिपा तरल द्रव लगा रहता है । कीड़े-मकोड़े, पक्षी उसे खाने बैठते हैं तो फल अपना मुँह बन्द कर लेता है और उस दबाए हुए पक्षी या कीड़े को चूस डालता है । इस तरह के राक्षस वृक्ष संसार के और भी दूसरे भागों में पाये जाते हैं पर इनका उल्लेख कोई आवश्यक नहीं है । दुष्टतायें तो मनुष्य जाति में ही बहुत हैं उन्हें ही ठीक किया जाना चाहिये ।

पौधों में जीवन के अस्तित्व का सबसे बड़ा प्रमाण है वे पौधे, विज्ञान जिन्हें कभी तो पौधे कहता है, कभी जीव-जन्तु । हाइड्रा एक ऐसा ही जन्तु है जो देखने में सूखी लकड़ी-सा लगता है, इसके कई मुँह होते हैं, हर मुँह में कई-कई बाल होते हैं, यह अपना आकार घटा-बढ़ा भी लेता है, इसके मुँह में यह बाल ही इसके लिए हाथ और पैरों का काम दे जाते हैं ।

भारतीय तत्वदर्शियों ने इस सारे गूढ़ ज्ञान के आधार पर वृक्षों को संधियोनि कहा तो इसमें क्या अत्युक्ति । हमें उनके सिद्धान्त को समझना चाहिये । अथर्ववेद में कहा है—

इयं कल्याण्य जरा मर्त्यस्यामृता गृहे ।
यस्मै कृता शये स यश्चकार जजार सः॥

अर्थात्—यह आत्मा जो कल्याण करने वाला है अविनाशी तत्व है और मर्त्य प्राणी के घर शरीर में रहता है । जिसे इस आत्म-तत्व का बोध हो जाता है वह सुख प्राप्त करता है जो उसे प्राप्त करने का पुरुषार्थ करता है वही सब प्रकार से आदरणीय और सम्मानास्पद होता है ।

जो इस आत्म-तत्व को नहीं पाते और जानते वे तो **"समाने वृक्षे पुरुषो निमग्नोऽनीशया शोचति मुह्यमानः ।"** अर्थात्—शरीर तो वृक्ष है उसमें रहने वाला जीवात्मा यदि शरीर में ही आसक्त है तो उसे शोक से कोई बचा नहीं सकता ।

पाप न करें—पौधे बात खोल देंगे

सन् १९२८ में सुप्रसिद्ध वनस्पतिशास्त्री श्री जगदीश चन्द्र बसु ने जब वृक्ष-वनस्पतियों में भी जीवन के अस्तित्व का सिद्धान्त प्रस्तुत किया तो वैज्ञानिक जगत में एक नई हलचल उत्पन्न हो गई । इससे भारतीय तत्वदर्शन की वह मान्यता पुष्ट होती थी जिसमें आत्म-सत्ता को विशाल वनस्पति तथा विराट् जगत में समासीन बताते हुए कहा गया है—

यो देवो अग्नो यो अप्सु योविश्वम् भुवनमावशेष ॥
या ओषधीषु यो वनस्पतिसु देवाय तस्मै नमोनमः ॥

जो आत्मा अग्न, जल, औषधि एवं वनस्पतियों में व्याप्त है जो विश्व ब्रह्माण्ड का मूल घटक है उसे बारम्बार नमस्कार है ।

उक्त धारणा का आधार यह प्रयोग था कि जब पौधों को जीवनदायी तत्व प्रदान किए जाते तब उनमें विकास की गति और जब उन्हें किसी तरह का विष दिया जाता तो उससे उनके द्वारा बनाए गए वैज्ञानिक यंत्र कोशाओं में मरण-क्रिया अंकित करने लगते ।

श्री बसु का यह अनुसन्धान मनुष्य शरीर के बाह्य अध्ययन के ही समान था । अभी वृक्षों में भावना व कल्पनाशील आत्मा का अस्तित्व प्रमाणित करने के लिए बड़ा कार्य शेष था तो भी शरीर विज्ञान के समान ही यह कम महत्वपूर्ण नहीं था । रचना की स्थूल दृष्टि से ही देखा जाए तो मनुष्य शरीर अपने आप में इतना जटिल किन्तु उपयोगी वाहन है कि आज तक सृष्टि का कोई भी रचनाकार इतनी सर्वांगपूर्ण कृति प्रस्तुत नहीं कर सका । स्पष्ट है उसके एक-एक अवयव में निर्माण का जो अन्यतम कौशल छिपा हुआ है वह किसी समर्थ रचनाकार-परमात्मा से ही सम्भव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो सकता है, किन्तु मनुष्य का यह दुर्भाग्य है कि वह विशिष्ट निर्माण विशिष्ट उपयोग की बात विचार तक में नहीं लाता और भौतिक सुखों की मृगतृष्णा में ही गँवाकर पश्चात्ताप करता हुआ एक दिन उसे छोड़ने को विवश होता है ।

शरीर में विद्यमान विलक्षणताएँ और भावनाएँ उसमें अतीन्द्रिय सत्ता का बोध कराती हैं । यही वह तत्व है जिससे विराट् सत्ता की अनुभूति होती है उसी का चिन्तन, मनन तथा निदिध्यासन कर भारतीय तत्वदर्शियों ने कहा कि उसे ही जानो, उसे ही प्राप्त करो । आत्मा को जाने बिना व्यक्ति की क्षुद्रताएँ, तृष्णा और वासनाएँ, अभाव, अशक्ति और अज्ञान विगलित नहीं होते ।

किन्तु कुछ वैज्ञानिकों की यह धारणा कि विचारणाएँ मात्र शारीरिक रसायन का वैसा ही परिणाम हैं जैसे जल में विद्युत या आमाशय में पित्त किन्तु जैसे-जैसे जगदीशचन्द बसु के अनुसंधान को दूसरे वनस्पतिशास्त्रियों, वैज्ञानिकों ने आगे बढ़ाया यह स्पष्ट होता गया कि शरीरों की रचना की भिन्नता के बावजूद भावनाओं की सूक्ष्मसत्ता सर्वव्यापी तत्व है और वह अन्य जीवधारियों में ही नहीं वृक्ष, वनस्पति, खनिज और संसार के प्रत्येक कण में विराजमान है, स्थूल शरीर उसका वाहन मात्र है । वह स्वयं शारीरिक उपादान नहीं ।

१९६९ में 'लाई डिटेक्टर विशेषज्ञ ।' यह एक अति सम्वेदनशील यंत्र है, जिससे व्यक्ति झूठ बोल रहा है या सच इस बात का पता चलता है झूठ बोलते समय शरीर की ग्रन्थियों से कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण रसों का या तो बहुत अधिक मात्रा में स्राव होता है कुछ का बिल्कुल ही नहीं । इसी आधार पर यह यंत्र वस्तुस्थिति का संकेत दे देता है । डॉ० क्लाइड बैक्स्टर ने एक अति सम्वेदनामापी यंत्र एक ऐसे पौधे को पत्ती से जोड़ा जो पानी ग्रहण कर रही थी, उसकी प्रतिक्रिया देखने के लिए वे अभी माचिस जलाने की बात सोच ही रहे थे कि डिटेक्टर ने तुरन्त प्रतिक्रिया दर्शायी, इसका यह अर्थ हुआ कि पौधे ने मन की बात पकड़ ली । आश्चर्यचकित बैक्स्टर ने एक दूसरा यंत्र बनाया जिससे उन्होंने जीवित समुद्री केकड़े को ठण्डे पानी से निकालकर गर्म पानी में डाला जैसे ही उसे गर्म जल में डाला उस यन्त्र ने १/१०० सैकण्ड में एक रेखाचित्र बना दिया वही यंत्र एक-एक कर समीप के कई पौधों के साथ जोड़कर रखा गया था । उन सबने भी नाटकीय प्रतिक्रिया दर्शायी और प्रत्येक यंत्र ने केकड़े से जुड़े यन्त्र के समान ही १/१०० सैकण्ड में वैसा ही रेखाचित्र बना दिया । विज्ञान जगत में यह परीक्षण 'बैक्स्टर इफेक्ट' के नाम से जाना जाता है । उन्होंने यहाँ तक पाया कि यदि कमरे में बैठे किसी व्यक्ति को अँगुली या दाढ़ी बनाते समय ब्लेड लग जाये तो समीपवर्ती पौधा तत्काल प्रतिक्रिया व्यक्त करता है । पोलीग्राफिक (इलेक्ट्रॉड्स) से तीव्र स्पन्दन आयतित कर जाँच करने से पता चलता है कि यही बात बड़े पौधों के बारे में भी है । किसी ऐसे स्थान, जहाँ हत्या हुई हो, पशु मारे जाते हों या शव-दाह किया जाता हो—वृक्ष भय की ऐसी प्रतिक्रिया धारण कर लेते हैं कि उसका प्रभाव लम्बे समय तक उनमें बना रहता है । पशु वध तथा शव-दाह के समीप वाले पौधों में जीवन के प्रति अनुत्साह बना रहता है । वैज्ञानिक तो अब यहाँ तक सोचने लगे हैं कि ऐसा यंत्र निर्मित हो सकता है जो अपराधी का हुलिया तक बता देने में भी सहायक होगा ।

इन शोधों के आधार पर ही वैज्ञानिक बैक्स्टर ने अपना विश्वास व्यक्त किया है कि पौधों में इतनी गहन सम्वेदनशीलता पायी जाती है कि वे अपने समीपवर्ती प्राणियों जिनमें मनुष्य भी शामिल हैं से स्वर में स्वर मिलाने लगते हैं अर्थात् वे न केवल हमारी प्रसन्नता के क्षणों में प्रसन्न होते हैं अपितु शोक की घड़ी में सम्वेदना भी व्यक्त करते हैं । प्रकृति की यह साझेदारी इस बात की द्योतक है कि प्राणिमात्र आत्मीयता के एक घनिष्ट गठबन्धन में जुड़े हुए है सबके प्रति दया, स्नेह, कर्त्तव्य भावना रखकर उसे जितनी शान्ति, सुख और सन्तोष मिल सकता है, घृणा, शत्रुता और परायेपन की घृणित स्वार्थपरता से सैकड़ों साधन उपलब्ध होने पर भी वैसी प्रसन्नता सम्भव नहीं ।

सेन्ट लारेंस ने भी अपनी शोधों में उपर्युक्त तथ्यों को सत्य पाया । वे लिखते हैं कि पौधों में 'इलेक्ट्रोडायनिक' गुण का होना इस बात का प्रमाण है कि वे वातावरण के संकेत व प्रभाव संगठक से भी विस्मयकारक ढंग से ग्रहण करते हैं । यह तो ज्ञात नहीं कि उनमें मनुष्य की तरह का मन होता है या नहीं, किन्तु वे प्रतिक्रिया निश्चित रूप से व्यक्त करते हैं । जिसका अर्थ यह भी हो सकता है कि उनमें भी मनुष्य की तरह का मन हो और वे भी अपने किसी भाग में स्मृति रखने वाला संग्राहक तत्व रखते हों । यदि यह बात पूरी तरह ज्ञात हो जाती है, तब फिर 'कानून और पुलिस से बच सकते हैं, किन्तु परमात्मा से नहीं' यह उक्ति मनोवैज्ञानिक और धार्मिक आस्था के रूप में ही नहीं वरन् वैज्ञानिक तथ्य के रूप में भी स्वीकार की जाने लगेगी । हमारे ऋषि तो इस गूढ़ तत्व के विज्ञ होने के कारण वृक्षों वनस्पतियों से परामर्श और सहयोग तक प्राप्त किया करते थे । पीपल को तो देव वृक्ष तक इसी आधार पर माना गया है कि उसकी सम्वेदनशीलता अन्य वृक्षों की अपेक्षा बहुत अधिक होती है ।

यह तथ्य तब प्रकट हुए जब सेन्ट लारेंस के मन में यह जिज्ञासा पैदा हुई कि क्या पौधे ब्रह्माण्ड की जानकारियाँ देने में भी सहायक हो सकते हैं । यह बात मस्तिष्क में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तब आई जब माइक्रोइलेक्ट्रॉड से पौधे की कोशिका में विद्युत प्रवाहित कर वे उसका अध्ययन कर रहे थे । उन्होंने देखा कि उस स्थिति में उसके 'कोश' का साइटोप्लाज्मा सिकुड़ता है तथा सर्दी, गर्मी, प्रकाश, क्षति, स्पर्श, चमक आदि के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है । ३५०००० पौधों पर प्रयोग कर उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि पौधे सर्वोत्तम मौसम विशेषज्ञ हो सकते हैं तथा वे ब्रह्माण्ड की और भी सूक्ष्मतम हलचलों की जानकारी दे सकते हैं । उनकी इस विलक्षण समझ शक्ति को सेन्ट लारेंस ने मानव मस्तिष्क के समान ही विराट् बताया है । उनकी प्रजनन कोशिकाओं पर पड़ने वाले चुम्बकीय प्रभाव को तो और भी सरलता से मापा जा सकता है और उससे जो नैस्टिक (मलिन) प्रतिक्रिया पैदा होती है उससे उसके भय, निराशा, प्रसन्नता आदि का ही पता नहीं लगाया जा सकता है वरन् उसके आधार पर ब्रह्माण्ड में चल रही आज की घटनाओं को भविष्य की घटनाओं के रूप में जाना जा सकता है ।

२९ अक्टूबर १९७१ में मोजिव रेगिस्तान जो लागबेगास के पास है, ७ मील दूर तक एक-एक परीक्षण किया गया । इसे 'प्रोजेक्ट साइक्लोप्स' नाम दिया गया । पौधों को फैरेडाइज्ड पिंजड़ों में रखा गया ताकि ये पार्थिव प्रभाव से विमुक्त रहें उन्हें 'मेजरिंग सेट' से जोड़ा गया तो हर सेट ने एक ही तरह के विशिष्ट रेखाचित्र प्रदान किए, चुम्बकीय तरंगों से जोड़ने पर यह सिद्ध हो गया कि यह रेखाचित्र ब्रह्माण्ड की किसी प्रतिक्रिया के ही हैं, पर मन की बात न जानने की विज्ञान की असमर्थता और पौधों में प्राणों के अभाव के कारण इन रेखाचित्रों का अर्थ ज्ञात न हो सका । अलबत्ता वैज्ञानिकों ने यह माना कि ये ब्रह्माण्ड के किसी अत्यन्त सूक्ष्म सम्वेदना के स्वर थे और किन्हीं तारों से अथवा क्वासास के संकेत थे ।

इन दिनों विज्ञान की एक नई शाखा 'इकोलोजी' का विकास हो रहा है, जिसकी मान्यता यह है कि संसार का हर कण एक ही जीवित चेतना से पिरोया है, सृष्टि के किसी कोने में भी हलचल हो उसकी प्रतिक्रिया ब्रह्माण्ड के हर कण में होती है । इस विज्ञान के पण्डित डा. इवान एल मैकहर्ग ने वनस्पति विज्ञान की उक्त शोधों का निष्कर्ष निकालते हुए लिखा है—वनस्पति जगत एक दिव्य प्रभा से युक्त है और उसका अध्ययन आलंकारिक रूप में नहीं अपितु यथार्थ और वैज्ञानिक ढंग से यह सिद्ध करता है कि यदि कहीं कोई दिव्य शक्ति है तो वह सर्वव्यापी है । इससे भारतीय तत्वदर्शियों का यह विश्वास भी सत्य होता है कि न केवल चेतन प्राणियों में अपितु वृक्ष वनस्पति में भी अपनी ही आत्मा समाई हुई है । उस दिव्य विराट् का अनुभव करें, धारण करें तो कण-कण में अपना ही प्राण बसता दिखाई देने लगे, उसकी पुलक और प्रसन्नता हमें दिव्य आनन्द का रसास्वादन कराने लगे ।

प्रकृति—उपभोग्य ही नहीं उपास्य भी

मनुष्य की बुद्धि ने जाने वह कौन-सी अभिशापित घड़ी थी जब यह मान लिया प्रकृति जड़ है, उसे चाहे जब जिलाने और चाहे जब सर्वनाश कर डालने का अधिकार है । सेवा, सद्भावना, परिपोषण के रूप में प्रकृति को दिये गये अनुदान किस तरह प्रतिफलित होते हैं यह किसी को देखना हो तो बानमुड़ा के राल्फ सेन्डर का इतिहास पढ़कर देख ले । जिसने केवल मात्र पौधों के प्रति असीम प्यार दुनिया भर के फलफूल एकत्र करने, रोपने की कठिन साधना से भौतिक समृद्धि का शिखर पार कर लिया पर यदि उसके साथ दुर्भावना व्यक्त की जाए तो प्रकृति में इतनी जबर्दस्त सामर्थ्य है कि मनुष्य को परास्त करके ही छोड़ देती है फिर उसे अपने आपमें चाहे जितना शक्तिशाली और सामर्थ्य होने का ही अभिमान क्यों न हो ?

बात अमेरिका के एक छोटे-से नगर की है । कोरेफोर्ड नामक व्यक्ति के घर के साथ लगा हुआ एक सुन्दर बगीचा था । बगीचे की देख-रेख के लिए उनके पिता ने टोनी नामक एक माली नियुक्त रखा । टोनी उस बगीचे की पूरी तरह देखभाल नहीं करता था तो भी चीकू, अमरूद, आम, नासपातियाँ सभी फल देते थे, तब आज तक की तरह रासायनिक खादों का प्रचलन नहीं हुआ था, गोबर की साधारण खाद और थोड़े बहुत पानी से ही बाग में लगाई जाने वाली सब्जियाँ उतनी सब्जी देती थीं जिससे पूरा परिवार भरपेट सब्जी खाता था । फल-फूल मित्रों और सम्बन्धियों में भी बाँटते थे । सब ओर बड़ी प्रसन्नता बिखेर रखी थी थोड़ी-सी मिट्टी के इन थोड़े-से पौधों ने ।

दरवाजे के सहन पर उन्हीं दिनों एक पौधा उग आया । यह पौधा मिस्र जाति का था उससे घर की शोभा निखर उठती थी, दरवाजे पर सघन छाया के अतिरिक्त उसमें नन्हें-नन्हें पक्षी बैठकर प्रातः सायं चहचहाते—तो वहाँ प्राकृतिक संगीत का आनन्द प्रवाहित होने लगता । वसन्त ऋतु में उसमें फूल लद जाते तो उसके आकर्षण से मधुमक्खियाँ, तितलियाँ दूर-दूर से दौड़ी चली आईं ।

विजातीय था तो क्या हुआ, अपनी संतान न थी तो क्या हुआ आखिरकार था तो वह भी प्रकृति का ही एक नन्हा शिशु-छोटा सा घटक । घर वालों ने उस पौधे को निरर्थक त्रास देना प्रारम्भ कर दिया । यह कैसी विडम्बना है कि लोग अपनों से जिनसे फल की आशा हो उनके साथ अत्यधिक मोह दर्शाएँ और विरानों से वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाज शरीर का ही अंग और अंश होते हुए भी, उपेक्षा, अनादर और अविश्वास बरतें? कोरेफोर्ड ने रीडर्स डाइजेस्ट के १९६० के एक अंक में अपनी भूल स्वीकारते हुए लिखा है कि हम लोग पहले तो उसकी छाल छीलकर अपने नाम लिखा करते, पीछे उनमें सैकड़ों कीलें ठोंक दीं । उसकी डालों में बाँधकर पटाखे छुड़ाए पर उस पौधे की मस्ती में रत्ती भर अन्तर नहीं आया वह अपनी स्वाभाविक गति से वैसे ही विकसित होता चला गया जिस तरह मनस्वी व्यक्ति कठिनाई, बाधाओं, प्रतिरोधों की भी परवाह न करते हुए प्रगति पथ पर निरन्तर आगे बढ़ते रहते हैं ।

अन्याय की सीमा यहीं तक नहीं रही इन लोगों ने उसके नीचे आग जलाना, खाना पकाना भी प्रारम्भ कर दिया जिससे पक्षीगण वहाँ से भाग गये । आत्मीयता की भावना से ओत-प्रोत वृक्ष ने अपनी डालें बढ़ाकर उनके आँगन में भी छाया कर दी तो उन लोगों ने न केवल डालें ही छाँट दी अपितु उसे जड़ से सुखा डालने की गरज से उसकी तमाम सारी जड़ें भी काट डालीं । जिस तरह संत और सज्जन गाली देने वाले के प्रति भी विनम्र, हितैषी और मृदुभाषी बने रहते हैं, उसी तरह उस वृक्ष ने इतनी व्यथा सहकर भी अपनी प्रवृत्ति रोकी नहीं । उसे न जाने किस शक्ति का बल था जो निरन्तर बढ़ता ही रहा ।

इस बीच विलक्षण दुर्घटना घटी, अब तक जो वृक्ष वनस्पति, पेड़-पौधे इस परिवार के प्रति आत्मीयता, उदारता और सहयोग का भाव रखते थे अपने एक सजातीय के प्रति दुर्व्यवहार देखकर क्रुद्ध हो उठे अर्थात् उन सबने असहयोग प्रारम्भ कर दिया । चीकू के पौधे कुम्हलाकर सूख गये, अंगूर की बेलों ने फल देना बंद कर दिया, अमरूदों में कीड़े पड़ने लगे और सब्जियों तक ने फल देने से इन्कार कर दिया । लान में लगी दूब ने अपने भाइयों का साथ दिया वह भी पीली पड़ गई ।

फोर्ड परिवार को बड़ी चिन्ता हुई उसने समझा कि पोषक तत्वों के अभाव में ऐसा हो रहा होगा अतएव मिट्टी की जाँच कराई गई, बोतलों में से नया प्लाज्मा तत्व संग्रहीत किया गया, कीटनाशक छिड़के गये, अच्छी बढ़िया खाद दी गई तो भी परिणाम शून्य रहा । न केवल वनस्पतिशास्त्री अपितु रसायनज्ञों, फिजीशियनों तक की सहायता ली गई । उनने जो भी उपाय सुझाये सब प्रयोग में लाए गए किन्तु समस्या अपने स्थान से टस से मस नहीं हुई ।

कोरेफोर्ड ने उस समय की अपनी व्यथा व्यक्त करते हुए लिखा है—उस समय मैं बगीचे में जाता तो मुझें हर पौधा नाराज और बीमार प्रतीत होता, यहाँ तक कि झाड़ियाँ जो मेरे लिए निरर्थक थीं वह तक अप्रसन्न दीखतीं । शायद यह किसी विषाणु (वायरस) के कारण हो, उसकी भी जाँच कराई गई पर था रोग शरीर में नहीं प्रकृति के मन में ही लगता था अन्यथा वैज्ञानिकों के इतने प्रयत्नों का कोई तो प्रतिफल निकलता । प्रकृति के सम्मुख पराजय का इतना बड़ा दृश्य अन्यत्र देखने में नहीं आया, यह बात सम्पर्क में आये प्रत्येक वैज्ञानिक ने स्वीकार की जो पौधे ठीक वैसी ही मिट्टी में अन्यत्र फलते-फूलते उन्हें नर्सरी से लाते ही यह मनोव्यथा लग जाती और पौधा दो दिन में ही कुम्हलाकर अपने भाइयों के सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सम्मिलित हो जाता । प्रकृति में इतना घनिष्ट सहयोग यदि कहीं सर जान स्टुअर्ट मिल को देखने को मिल गया होता तो वे 'प्रकृति में उपयोगितावाद' के सिद्धान्त का प्रतिपादन न करते । बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है यह लिखने की अपेक्षा वह छोटे लोगों में भी सहयोग की प्रवृत्ति है यह प्रतिपादन करते ।

इस बीच पूर्व जन्म के किसी भयंकर अपराध के प्रतिशोध की तरह उस बड़े वृक्ष की जड़ों ने भीतर ही भीतर ऐसा विकास किया कि दरवाजे के खम्भों को ही फाड़ दिया । उससे मकान की चूलें चरमरा गईं । प्रकृति के इस भयंकर प्रतिशोध के कारण फोर्ड परिवार बुरी तरह भयभीत हो उठा । उन लोगों ने अन्यत्र मकान ले लिया और वह घर ही छोड़कर चले गए ।

उन्होंने देखा कल तक जो पेड़-पौधे कुम्हलाए पड़े थे उन सबमें हर्ष की लहर थी, सब में नूतन चेतनता थी, पौधे बढ़ने लगे, फूलने-फलने लगे, पक्षी फिर लौट आये, गिलहरियाँ फिर कुतुर-कुतुर करने लगी, प्रातः-सायं पुनः कलरव गान होने लगा ।

कुछ धार्मिक व्यक्तियों ने कहा फोर्ड ! लगता है तुम पिछले जन्मों में कोई पूँजीपति थे और श्रमिकों का शोषण करते थे या कि मिलावट का, कम तौल का, घटिया माल बेचने वाले दूकानदार थे यह इसका प्रतिफल है, कुछ ने इसे बड़े वृक्ष का शाप बताया । जो भी हो प्रकृति ने यह दिखा दिया कि मनुष्य के लिए वह अपनी इच्छा से ही उपभोग्य हो सकी है उसकी बर्बरता से नहीं । वह इतनी समर्थ है कि मनुष्य उसे जीत नहीं सकता उसकी उपासना से चाहे जितने लाभ ले ले ।

प्रकृति परमात्मा की व्यवस्थापिका शक्ति है । यह भूल नहीं करनी चाहिये कि परमात्मा नहीं देखता तो कुछ भी किया जा सकता है प्रकृति का प्रत्येक तिनका उसका प्रतिनिधि उसकी सहायक शक्ति है यह मानकर कहीं भी कुछ भी पाप करने से डरकर ही रहना चाहिये उसका उपासना के तो और भी सात्विक परिणाम उपलब्ध किए जा सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अद्भुत प्रकृति प्रेमी

अभी तक तो उसे चोट-मोच और छोटे-छोटे विषैले कीड़ों का ही सामना करना पड़ा था, पर आज तो उसे साँप ने ही काट लिया । उसके काम उसकी हिम्मत को लोग कमजोर न साबित करें इस ख्याल से उसने साँप काटे स्थान को चीरकर बहुत-सा खून बहा दिया । सोचा था न विष का प्रभाव रहेगा न लोगों को साँप काटे का पता चलेगा । पर हुआ उलटा । बहुत खून निकल जाने के बाद भी बेहोशी आ गई । लोगों को पता चल गया कि उसे साँप ने काट लिया है ।

लोग उस पर खूब हँसे । जहाँ वह काम करता था वहाँ के अधिकारी उसे पहले ही मना कर चुके थे कि बाग लगाने की धुन उसकी सनक मात्र है । इस निर्जन घनी झाड़ियों वाले स्थान में जहाँ पानी का नितान्त अभाव है पेड़-पौधे उगाना हथेली पर सरसों जमाने की तरह कठिन है । उसकी जिद देखकर ही उसे सरकारी अनुमति मिली थी । इस बार तो उसे चेतावनी भी दे दी गई कि यदि फिर कोई ऐसी घटना घटी तो उसकी सारी योजना अधिकारिक तौर पर रद्द कर दी जाएगी और दी गई पाँच एकड़ जमीन भी छीन ली जाएगी ।

राल्फ संडर अच्छा हो गया । कुदाली कंधे पर रखकर बाग की ओर जाते समय खेतों सम्बन्धी उसके एक अधिकारी ने उसे उक्त सूचना दी, तब उसने हँसकर कहा—"श्रीमान जी ! आपने मनुष्य जीवन के आध्यात्मिक पहलू और उसके साथ पेड़-पौधों की घनिष्टता का रहस्य समझा होता तो यों न टोकते । वृक्षों से मिलने वाली शीतलता, प्रकृति नियंत्रण, फल-फूल, लकड़ियाँ ही कम सुखद नहीं, फिर उसके सम्पर्क में मिलने वाली शांति और मोहकता का वर्णन ही क्या किया जाये । आप नहीं जानते श्रीमान ! यह पेड़-पौधे ही हैं, जो संसार का सौन्दर्य बनाए रखते हैं । मनुष्य द्वारा पैदा किए हुए विष से मनुष्य की रक्षा भी यही करते हैं । वृक्ष हमारे देवता हैं । उनकी उपासना करके हम असंख्य वरदान इसी जीवन में प्राप्त करते हैं । उनकी अर्चना में जितना कुछ समय श्रम लगे वह कभी व्यर्थ नहीं जाता" यह कहकर वह फिर चल पड़ा और अपने काम में जुट गया । जंगल की सफाई, गुडाई, पौधों का रोपना, पहाड़ी से पानी लाकर सींचना कितना परिश्रम करता था वह अपनी इस पौधों की दुनिया के लिए यह वही जानता था ।

इंग्लैण्ड के एक बागवान के घर जन्मे इस महान प्रकृति प्रेमी का नाम आज संसार में सर्वविदित है । जिसने अपने परिश्रम से छोटे-से जाम्बिया को अंतर्राष्ट्रीय ख्याति का देश बना दिया है । प्रति वर्ष १० हजार से भी अधिक विदेशी पर्यटक उनके परिश्रम और भावनाओं से सींचे गये बाग को देखने आते हैं ।

देखने के लिए यही नहीं कि उसमें ५०,००० के लगभग वृक्ष हैं । बल्कि रूस, चीन, चिली, आस्ट्रेलिया इजराइल, इंग्लैण्ड, अमेरिका आदि ३३ देशों से लाई गई २५३८ पेड़-पौधों की जातियाँ भी हैं । यही नहीं उनकी कलाकारिता, सूझ-बूझ और कठोर परिश्रम का फलितार्थ भी है । दर्शक वहाँ से प्रकृति के प्रति श्रद्धा तो लेकर लौटते ही हैं, साथ ही उनमें परिश्रम और पुरुषार्थ का भाव भी जागता है । इस बाग को देखकर, सुनकर सैकड़ों देशों में हजारों लोगों ने कई हजार बाग लगाए हैं । जो भी इसका वर्णन सुनता है, उसे एक बार छोटा-सा ही सही बाग लगाने का मन अवश्य करता है ।

मुंदा-बागा (जाम्बिया) में ४० एकड़ भूमि में फैले इस बाग का निर्माता राल्फ संडर खेलों के सम्बन्ध में इंग्लैण्ड से चिलांगा भेजा गया था । यहाँ पेड़-पौधे न होने से उसे एक अभाव-सा दिखाई दिया । फलस्वरूप उसके गोम्बे नदी के तट पर बाग लगाने की योजना बनाई । प्रारम्भ में ५ एकड़ भूमि में ही उसने काम शुरू किया । कठिनाई से पानी की व्यवस्था की । दूसरे देशों की जलवायु के पेड़-पौधे उगाना बड़ा कठिन था पर परिश्रम से वह सब सम्भव हो गया । उसने दिन-रात काम करके १४ वर्ष में ही एक सुन्दर बाग बना दिया ।

पहले वह अकेला था पर बाद में उसकी हिम्मत ने अनेकों औरों को भी सहयोगी बनने को विवश किया । आज उसकी सिंचाई की सुन्दर व्यवस्था है बिजली है, चिड़ियाघर है और लाखों रुपये की आय भी । दर्शकों के लिए यह भाव-भरे सतत् परिश्रम की प्रेरणा का स्रोत तीर्थ-स्थल की तरह है ।

प्रेम का परिष्कार—पेड़-पौधों से भी प्यार

सम्भव है संसार के किसी और भाग में भी अब ऐसे गुलाब के पौधे हों, जिनमें काँटे न हों, बेर हों पर उनमें भी काँटे न हों, कुमुदनी हो पर दिन में भी खिलती हो, अखरोट के वृक्ष हों जो ३२ वर्ष की अपेक्षा १६ वर्ष में ही अपनी सामान्य ऊँचाई से भी बड़े होकर अच्छे फल देने लगते हों । पर वे होंगे अमेरिका के केलिफोर्निया में विशेष रूप से तैयार किए गए पौधों की ही सन्तान । केलिफोर्निया में यह पौधे किसी वनस्पतिशास्त्री या किसी ऐसे शोध-संस्थान द्वारा तैयार नहीं किये गये । उसका श्रेय एक अमेरिकन सन्त लूथर बरबैंक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को है, जिन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन में प्रेम योग का अभ्यास किया और यह सिद्ध कर दिया कि प्रेम से प्रकृति के अटल सिद्धान्तों को भी परिवर्तित किया जा सकता है । यह पौधे और केलिफोर्निया का लूथर बरबैंक का यह बगीचा उसका प्रत्यक्ष प्रमाण है ।

एक बार एक सज्जन इस बाग से एक बिना काँटों वाला 'सेहुँड़' लेने गए ताकि वे उसे अपने खेत के किनारे-किनारे थूहड़ के रूप में रोप सकें । अमेरिका क्या सारी दुनिया भर में सम्भवत: यही वह स्थान था, जहाँ सेहुँड़ बिना काँटों के थे । बाग का माली खुरपी लेकर डाल काटने चला तो दूर से ही लूथर बरबैंक ने मना किया, बोले—आपसे काटते नहीं बनेगा । लाओ, मैं काट देता हूँ । यह कहकर खुरपी उन्होंने अपने हाथ में ले ली और बोले- माना कि यह पौधे हैं इनमें जीवन के लक्षण प्रतीत नहीं होते तथापि यह भी आत्मा है और प्रत्येक आत्मा प्रेम की प्यासी, भावनाओं की भूखी होती है । हम संसार को कुछ दे नहीं सकते, तो प्रेम और करुणाशील भावनाएँ तो प्रदान कर ही सकते हैं । कदाचित मनुष्य इतना सीख जाये तो संसार में सुख-शांति का वारापार न रहे ।

बरबैंक सेहुँड़ के पास बैठकर खुरपी से सेहुँड़ की डाल काटते जाते थे, पर उनकी उस क्रिया में भी कितनी आत्मीयता और ममत्व झलकता था । यह देखते ही बनता था, जैसे कोई माँ अपने बच्चे को कई बार दण्ड भी देती है पर परोक्ष में उसका हित और मंगल भाव ही उसके हृदय में भरा रहता है, वैसे ही श्री बरबैंक सेहुँड़ को काटते जाते थे और भावनाओं का एक सशक्त स्पंदन भी प्रवाहित करते जाते थे—ऐ पौधे ! तुम यह न समझना कि हम तुम्हें काट-कर अलग कर रहे हैं । हम तो तुम्हारे और अधिक विस्तार की कामना से विदा कर रहे हैं । यहाँ से चले जाने के बाद भी तुम मुझसे अलग नहीं होगे । तुम मेरे नाम के साथ जुड़े हो, तुम मेरी आत्मा के अंग हों । माना लोक-कल्याण के लिये तुम्हें यहाँ से दूर जाना पड़ रहा है, पर तुम मेरे जीवन का अभिन्न अंग हो । जहाँ भी रहोगे हम तुम्हें अपने समीप ही अनुभव करेंगे—ऐसी भावनाओं के साथ बरबैंक ने सेहुँड़ की दो-तीन डालें काट दीं और आगन्तुक को दे दीं, आगन्तुक उन्हें ले गया । इस तरह इस बाग की सैकड़ों पौध सारी दुनिया में फैलीं और बरबैंक के नाम से विख्यात होती गईं ।

यह कोई गल्फ कथा नहीं वरन् ऐसा तथ्य है जिसने सारे योरोप के वैज्ञानिकों को यह सोचने के लिये विवश कर दिया कि क्या सचमुच ही भावनाओं के द्वारा पदार्थ के वैज्ञानिक नियम भी परिवर्तित हो सकते हैं ?

जिस तरह भारतवर्ष में इन दिनों नेहरू गुलाब, शास्त्री गेहूँ आदि नामों से पौधों तथा अन्नों की विशेष नस्लें कृषि विशेषज्ञ वैज्ञानिक अनुसन्धान से तैयार कर रहे हैं, उसी प्रकार बरबैंक पोटेटो (आलू), बरबैंक स्क्वैश, बरबैंक चेरी, बरबैंक रोज, बरबैंक वालनट (अखरोट) आदि सैकड़ों पौधों, फलों, सब्जियों तथा अन्नों की नस्लें बरबैंक के नाम से प्रचलित हैं । इन्हें बरबैंक ने तैयार किया यह सत्य है पर किसी वैज्ञानिक पद्धति से नहीं, यह उससे भी अधिक सत्य है । यह सब किस तरह सम्भव हुआ उसका वर्णन स्वयं लूथर ने अपने शब्दों में 'दि ट्रेनिंग आफ ह्यूमन प्लान्ट' नामक पुस्तक में निम्न प्रकार लिखा है । यह पुस्तक न्यूयार्क की सेंचुरी कम्पनी से १९२२ में प्रकाशित हुई है । लूथर लिखते हैं—

"आत्मचेतना के विकास के साथ मैंने अनुभव किया कि संसार का प्रत्येक परमाणु आत्मामय है । जीव-जन्तु ही नहीं वृक्ष-वनस्पतियों में भी वही एक आत्मा प्रभासित हो रही है—यह जानकार मुझे बड़ा कौतूहल हुआ । मैं वृक्षों की प्रकृति पर विचार करते-करते इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि इनमें जो काँटे हैं वह इनके क्रोध और रुक्षता के संस्कार हैं । सम्भव है लोगों ने इन्हें सताया, कष्ट दिया, इनकी आकांक्षाओं की ओर ध्यान नहीं दिया । इसीलिये ये इतने सुन्दर फूल-फल देने के साथ ही काँटे वाले भी हो गए ।

यदि ऐसा है तो क्या इन्हें प्रेम और दुलार देकर सुधारा भी जा सकता है ? ऐसा एक कौतूहल मेरे मन में जाग्रत हुआ । मैं देखता हूँ कि सारा संसार ही प्रेम का प्यासा है । प्रेम के माध्यम से किसी के भी जीवन में परिवर्तन और अच्छाइयाँ उत्पन्न की जा सकती हैं, तो यह प्रयोग मैंने पौधों पर करना प्रारम्भ किया ।

गुलाब का एक छोटा पौधा लगाया तब उसमें एक भी काँटा नहीं था । मैं उसके पास जा बैठता, मेरे अन्त:करण से भावनाओं की सशक्त तरंगें उठतीं और पास के वातावरण में विचरण करने लगतीं । मैं कहता—मेरे प्यारे बच्चे, मेरे गुलाब ! लोग फूल लेने इस दृष्टि से नहीं आते कि तुम्हें कष्ट दें । वह तो तुम्हारे सौन्दर्य से प्रेरित होकर आते हैं । वैसे भी तो तुम्हारा सौन्दर्य, तुम्हारी सुवास विश्वकल्याण के लिए ही है । जब दान और संसार की प्रसन्नता के लिये उत्सर्ग ही तुम्हारा ध्येय है तो फिर यह काँटे तुम क्यों उगाते हो । तुम अपने काँटे निकालना और लोगों को अकारण कष्ट देना भी छोड़ दो, तो फिर देखना कि संसार तुम्हारा कितना सम्मान करता है । अपने स्वभाव से इस मलीनता और कठोरता को निकाल कर एक बार देखो तो सही कि यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सारा संसार ही तुम्हें हाथों हाथ उठाने के लिये तैयार है या नहीं ।

गुलाब से मेरी ऐसी बातचीत प्रतिदिनं होती । भावनाएँ अन्त:करण से निकलें और वह खाली चली जाएँ, तो फिर संसार में ईश्वरीय अस्तित्व को मानता ही कौन ? गुलाब धीरे-धीरे बढ़ने लगा । उसमें सुडौल डालियाँ फूटीं, चौड़े-चौड़े पत्ते निकले और पाव-पाव भर के हँसते-इठलाते फूल भी निकलने लगे, पर उसमें क्या मजाल कि एक भी काँटा आया हो । आत्मा को आत्मा प्यार से कुछ कहे और वह उसे ठुकरा दे—ऐसा संसार में कहीं हुआ नहीं, फिर भला बेचारा नन्हा-सा पौधा ही अपवाद क्यों बनता ? उसने मेरी बात सहर्ष मान ली और मुझे सन्तोष हुआ कि मेरे बाग का गुलाब बिना काँटों का था ।

अखरोट का धीरे-धीरे बढ़ना मुझे अच्छा नहीं लग रहा था । मैंने उसे पानी उतना ही दिया, खाद उतनी ही दी, सिंचाई और गुड़ाई में भी कोई अन्तर नहीं आने दिया, फिर ऐसी क्या भूल हो गई, जो अखरोट ३२ वर्ष में ही बढ़ने की हठ ठान बैठा । मैंने समझा इसे भी किसी ने प्यार नहीं दिया ।

मैंने उसे सम्बोधित कर कहा—मेरे बच्चे ! तुम्हारे लिये हमने सब जुटाया, क्या उस कर्तव्यपरायणता में जो तुम्हारे प्रति असीम प्यार भरा था, उसे तुम समझ नहीं सकते । तुम मेरे बच्चे के समान ही, तुम्हें मैं अलग अस्तित्व दूँ ही कैसे ? हम तुम एक हो तो हैं । आज माना कि दो रूपों में खड़े हैं, पर एक दिन तो यह अन्तर मिटेगा ही । क्या हम उस आत्मीयता को अभी भी स्थायित्व प्रदान नहीं कर सकते ? तुम उगो और जल्दी उगो, ताकि संसार में अपने ही तरह की और जो आत्माएँ हैं, उनकी कुछ सेवा कर सकें ।

अखरोट बढ़ने लगा और १६ वर्ष की आधी आयु में ही अच्छे-अच्छे फल देने लगा ।'' इसी तरह कद्दू, आलू, नेक्टारीनेस, बेरीज, पापोज आदि सैकड़ों पौधों पर प्रयोग कर श्री बरबैंक ने उन्हें प्रकृति के समान गुणों से पृथक् गुणों वाले पौधों के रूप में विकसित कर यह दिखा दिया कि प्रेम ही आत्मा की सच्ची प्यास है । जिस प्रकार हम स्वयं औरों से प्रेम चाहते हैं वैसे ही बिना किसी आकांक्षा के दूसरों को प्रेम लुटाने का अभ्यास कर सके होते, तो आज सारा संसार ही सुधरा हुआ दिखाई देता । प्रेम का सिद्धान्त ही एकमात्र वह साधन है जिसने छोटे-छोटे बच्चों से लेकर पारिवारिक जीवन और पास-पड़ौस के लोगों से लेकर सारे समाज, राष्ट्र और विश्व को भी वैसे ही सुधारा और सँवारा जा सकता है जैसे बरबैंक ने पेड़-पौधों को विलक्षण रूप से सँवार कर दिखा दिया ।

श्री बरबैंक ने श्री योगानन्द नामक भारतीय योगी से क्रियायोग की दीक्षा ली थी । उनका निधन १९२६ में हुआ, तब लोगों के मुख से एक ही शब्द निकला था—प्रेम-प्रयोगी का निधन सारे विश्व की क्षति है, वह कभी पूरी नहीं हो सकती ।

श्री बरबैंक तत्वदृष्टा थे । प्रेम का अभ्यास उन्होंने पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों तक से करके ही आत्मानुभूति प्राप्त की थी । उसी से वे सिद्ध हो गये थे ! उनकी भविष्यवाणियाँ बहुत महत्वपूर्ण होती थीं । लन्दन से प्रकाशित होने वाली 'ईस्ट और वेस्ट' पत्रिका में उन्होंने 'साइन्स एण्ड सिविलाइजेशन' नाम से लेख प्रकाशित किया । उसमें लिखा था—

''संसार को सुधारने की शक्ति पूर्व में केवल भारतवर्ष के पास है । पश्चिमी देशों को वहाँ की योग-क्रिया और प्राणायाम की विधियाँ सीखने के साथ प्रेम, दया, करुणा, उदारता, क्षमा, मैत्री के भाव भी सीखने और आत्मसात करने चाहिये । मैं देख रहा हूँ कि भारतवर्ष उसके लिए अपने आपके तैयार कर रहा है और एक दिन सारे संसार को ही उसके कदमों में झुककर जीवन जीने की शुद्ध पद्धति और आत्मविज्ञान सीखना पड़ेगा, इससे ही संसार का कुछ वास्तविक भला होगा ।''

१९४८ में लन्दन के एसोसिएटेड प्रेस में एक सामुख्य में भी उन्होंने भावना योग की महत्ता पर प्रकाश डाला था और कहा था ''शीघ्र ही भारतवर्ष में कुछ ऐसे लोगों का उदय होगा, जो फिर ये सारे संसार को मानवता का पाठ सिखायेंगे । उसमें परस्पर प्रेम और आत्मीयता की भावना प्रमुख होगी । उसी से संसार का सुधार होगा, उसी से सुख-समृद्धि की वृद्धि भी होगी ।''

वनस्पति जगत मनुष्य से कहीं अधिक सम्वेदनशील है

निष्कलुष हृदय में दूसरों के दुर्भाव, दुर्विचार उसी प्रकार अनुभव होने लगते हैं जैसे सामने वाला व्यक्ति स्वयं अपने मुँह से उन्हें व्यक्त कर रहा हो । पवित्र अन्त:करण वाला व्यक्ति दूसरों के हृदय की भावनाओं की परख स्वत: ही कर लेता है । नन्हें बच्चे जिन्हें न किसी से लगाव होता है न दुराव, निष्कलुष और पवित्र अन्त:करण व्यक्ति की तरह ही यह ताड़ लेते हैं कि पास आने वाला व्यक्ति या प्राणी शत्रु या मित्र है । भावनाओं या विचारों की यह प्रतिक्रिया जीवन्त प्राणियों पर ही नहीं वृक्ष-वनस्पतियों पर भी पड़ती देखी गई है । भारतीय वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बसु से लेकर विश्व के मूर्धन्य वनस्पतिशास्त्रियों ने इस तथ्य की पुष्टि की है— ''वृक्ष-वनस्पतियाँ भी विचारों एवं संवेदनाओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को उसी तरह ग्रहण करते हैं, जिस प्रकार कि प्राणी समुदाय'' न्यूयार्क के प्रसिद्ध वनस्पतिशास्त्री वेक्स्टर के पौधों पर किये गये अनुभूतिजन्य प्रयोगों से अमरीकी प्रोफेसर मार्केल वोगल विशेष प्रभावित हुए । एक वनस्पतिशास्त्र के प्राध्यापक होने के कारण उन्होंने पेड़-पौधों पर प्रयोग करने में गहरी रुचि ली । अपनी एक शोध सहायिका को उन्होंने सम्बद्ध विषय की रूपरेखा समझाकर आवश्यक निर्देश दे दिया ।

विवियन विले उद्यान के पेड़ से दो हरी पत्तियाँ तोड़ लाईं । एक पत्ती उन्होंने अपने ड्राइंग रूम में, दूसरी को अपने सोने के कमरे में बिस्तर के निकट एक मेज पर रख दिया । पलंग के पास रखी पत्ती को वह नित्य स्नेह भरी निगाहों से देखती, अपनत्व उड़ेलती जैसे कोई व्यक्ति अपने अत्यन्त स्नेहपात्र के प्रति बिखेरता है । मन में वह पत्ती को हरा-भरा बने रहने की कामना करती । दूसरे कमरे में रखी पत्ती को उन्होंने जान-बूझकर उपेक्षित रखा । एक माह बाद उन्होंने अपने मित्र बोगल को एक विशिष्ट प्रकार के फोटो कैमरे के साथ आने को आमन्त्रित किया । बोगल ने दोनों पत्तियों का अलग-अलग फोटो लिया । दोनों ने फोटो का अध्ययन किया । यह देखकर उन्हें भारी आश्चर्य हुआ कि जो पत्ती ड्राइंग रूम में उपेक्षित रखी थी उसका चित्र मुरझाया हुआ आया किन्तु दूसरी पत्ती का चित्र हरा-भरा तथा ताजा लग रहा था ।

इस निष्कर्ष को और भी पुष्ट करने के लिए उन्होंने प्रयोग क्रम को आगे बढ़ाया । पौधों की सम्वेदनशीलता जानने के लिए उन्होंने एक दूसरा प्रयोग किया । एक पौधे को सम्बन्ध गैल्वेनोमीटर के तार से जोड़ दिया । अपनी स्नायुओं को शिथिल करके लम्बी-लम्बी साँस खींचते हुए पौधे के ऊपर हाथ फेरने लगे । उस समय उनके मन में पौधे के प्रति स्नेह भाव उमड़ रहे थे । पोलीग्राफ पर उन्होंने देखा कि तरंगों की रेखा अंकित हो गयी है । विचारों का क्रम चार मिनट तक चलता रहा । वह टूटते ही यंत्र में तरंगों का अंकन बन्द हो गया । गैल्वेनोमीटर का सम्बन्ध पौधे से विच्छेद करके थोड़ी देर के लिए उन्होंने विश्राम दिया । पुनः गैल्वेनोमीटर से जोड़कर पहले वाली विचार शृंखला का प्रयोग आरम्भ किया । पोलीग्राफ पर उसी प्रतिक्रिया की पुनरावृत्ति हुई । इस प्रयोग से निष्कर्ष निकला कि पौधे में न केवल सम्वेदनशीलता होती है वरन् उनसे संचार सम्बन्ध भी स्थापित किया जा सकता है ।

एक अन्य प्रयोग में डॉ० बोगल ने अपने एक मित्र को प्रयोगशाला में बुलाया । कमरे में रखे पौधे का सम्बन्ध पोलीग्राफ से जोड़कर उन्होंने मित्र से किसी विषय पर गम्भीरता से सोचने के लिए कहा । निरन्तर अठारह सैकिण्ड तक यंत्र ने पोलीग्राफ पर अपनी प्रतिक्रिया अंकित की । एकाएक अंकन रुक गया । डॉ० ने मित्र से पूछा—''क्या उन्होंने सोचना बन्द कर दिया है ?'' मित्र ने स्वीकारात्मक उत्तर दिया यह देखने के लिए कि बीच में प्रयोग रोक देने तथा पुनः आरम्भ किये जाने पर प्रतिक्रियाओं में क्या अन्तर आता है, उन्होंने थोड़ी देर के लिए प्रयोग रोक दिया । कुछ समय बाद पौधे को गैल्वेनोमीटर से जोड़कर मित्र को पुनः उसी विषय पर सोचने का निर्देश दिया । उनके आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा कि दुबारा अंकित तरंगों तथा पहले की तरंगों में थोड़ा भी अन्तर न था । डॉ० बोगल ने इस निष्कर्ष के बाद घोषणा की कि पौधे न केवल सम्वेदनशील होते हैं, बल्कि उनमें स्मृति की भी विशेषता पायी जाती है ।

प्रख्यात रूसी मनोवैज्ञानिक डॉ० यन पुश्किन का एक रोचक प्रयोग विवरण वैज्ञानिक पत्रिका 'कोनियासिला' में प्रकाशित हुआ जो इस प्रकार था—

तान्या नामक एक सुन्दर युवा लड़की को सम्मोहित किया गया । पौधे का सम्बन्ध यंत्र से जोड़ा गया । डॉ. पुश्किन ने लड़की से पूछा ''क्या तुम सचमुच ही एक सुन्दर लड़की हो ?'' लड़की ने प्रसन्नता व्यक्त करते हुए सकारात्मक उत्तर दिया । उन्होंने लड़की के व्यक्तिगत जीवन के सन्दर्भ में भी अनेक प्रश्न पूछे । जब तक वह प्रश्नों का सही उत्तर देती रही पोलीग्राफ पर कोई प्रतिक्रिया अंकित नहीं हुई, पर जैसे ही प्रश्नों के बौछार से झल्लाकर उसने गलत उत्तर देना शुरू किया गैल्वेनोमीटर की सुई घूमने लगी तथा पोलीग्राफ पर तरंगें अंकित होने लगीं । लड़की के सामान्य अवस्था में आने पर डॉ० ने गलत उत्तरों के विषय में दुबारा पूछा । उसने स्वीकार किया कि जिन प्रश्नों के उत्तर में यंत्र ने प्रतिक्रिया दर्शायी वे गलत थे । पुश्किन ने कहा कि पौधे तथा मनुष्य के नाड़ी-संस्थान में कहीं न कहीं सूक्ष्म सम्बन्ध है तथा वे झूठ को पकड़ने में भी सक्षम हैं ।

न्यूयार्क के डॉ० क्ल्यू ने एक विचित्र तथ्य का उद्घाटन किया है कि पौधे मात्र विचारों को ग्रहण करने में ही नहीं मनुष्य के कृत्यों की गवाही देने में भी समर्थ हैं । एक प्रयोग में उन्होंने दो पौधों को पोलीग्राफ से जोड़ा । छै व्यक्तियों को कमरे में बुलाकर छै मिली हुई कागज की पर्चियाँ रखीं तथा उनमें से प्रत्येक को कहा कि एक पर्ची उठा लें तथा जैसा निर्देश पर्ची पर लिखा है उसका बिना बताये पालन करें । उन पर्चियों में से एक पर लिखा था कि अवसर देखकर चुपके से कमरे में रखे पौधों में से एक को नष्ट कर दें । यह जानकारी किसी को नहीं थी कि उक्त निर्देश वाली पर्ची किसके पास है जिस व्यक्ति को वह पर्ची मिली उसने चुपके से एक पौधे को नष्ट कर डाला ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक सप्ताह बाद डॉ. ने उन छै व्यक्तियों को पुनः बुलाया तथा शेष एक पौधे के सामने से गुजारा । पाँच व्यक्ति पौधे के सामने से होकर निकल गए पर गैल्वेनोमीटर में कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई । छठे व्यक्ति के आते ही यंत्र की सुई तेजी से घूमने लगी तथा पोलीग्राफ पर तरंगें अंकित होने लगीं । डॉ० क्ल्यू ने उस व्यक्ति से पूछताछ की तो मालूम हुआ कि उसने एक पौधे को नष्ट कर डाला था । गैल्वेनोमीटर की सुई घूमने का यही कारण था ।

एक दूसरे प्रयोग में उन्होंने ड्रेकेनामे सेंजियाना नामक पौधे की एक शाखा को पोलीग्राफ लाइडिटेक्टर के तार से जोड़ दिया । पौधे की जड़ में थोड़ा पानी डाला तथा गेल्वेनोमीटर में हल्की विद्युत तरंगें छोड़ दीं । गैल्वेनोमीटर की सुई में गति आरम्भ हो गई । यह जानने के लिए पौधे के ऊपर सुखद प्रतिक्रिया हुई या यह मात्र एक संयोग था । उन्होंने पौधे की एक शाखा को जलाने का विचार किया । एकाएक उनकी दृष्टि पौधे से जुड़े गैल्वेनोमीटर पर पड़ी । वेक्स्टर यह देखकर विस्मित रह गये कि पौधे को जलाने का विचार आते ही गैल्वेनोमीटर की सुई विपरीत दिशा में नीचे ग्राफ पर ऊर्ध्ववक्र रेखा में तेजी से गति करने लगी । यह प्रतिक्रिया विचारों से हुई अथवा किन्हीं और कारणों से । यह परखने के लिए वेक्स्टर ने माचिस की एक तीली जलायी तथा पौधे की ओर इस प्रकार बढ़ाया जैसे जलाने जा रहे हों, पर उनके मन में पौधे को जलाने का कोई विचार न था । जो पौधा पहले जलाये जाने के भय की प्रतिक्रिया गैल्वेनोमीटर में तेजी से दे रहा था विचार के उलटते ही शान्त पड़ गया । वेक्स्टर ने निष्कर्ष निकाला कि मन में चलने वाले विचारों को पौधा पकड़ने में पूर्णतया सक्षम है ।

एक अन्य प्रयोग में उन्होंने पोलीग्राफ को एक पौधे से जोड़कर उसका सम्बन्ध एक व्यक्ति से कर दिया । उस व्यक्ति से व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित उन्होंने अनेकों प्रश्न पूछे । प्रश्न का उत्तर सही आने पर गैल्वेनोमीटर में कोई गति नहीं होती थी, पर जिस प्रश्न का उत्तर वह हड़बड़ाकर गलत देता था गैल्वेनोमीटर की सुई एकाएक घूमने लगती थी । प्रयोग के उपरान्त उस व्यक्ति ने स्वीकार किया कि जिस प्रश्न का उत्तर उसने गलत दिया, गैल्वेनोमीटर ने उसी पर प्रतिक्रिया व्यक्त की ।

भावनाएँ या विचार व्यक्त हों अथवा अव्यक्त उनका भला-बुरा प्रभाव पड़ना सुनिश्चित है । सूक्ष्म वातावरण में वे बने रहते हैं तथा अनायास ही दूसरों को जाने-अनजाने प्रभावित करते रहते हैं । परिवार इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है । प्रायः बच्चों को सत्याचरण के लिए अभिभावक—माता-पिता शिक्षा देते रहते हैं, पर उन बच्चों की संख्या अत्यल्प होती है जो उन शिक्षाओं का पालन करते हैं । उन्हें झूठ बोलने की कोई ट्रेनिंग नहीं मिलती पर देखा यह जाता है कि अधिकांश बच्चे झूठ बोलने में पारंगत हो जाते हैं । कारणों की खोज करने पर पता चलता है कि अभिभावकों के आन्तरिक विचार उनकी कथनी के विपरीत होते हैं । अव्यक्त होते हुए भी उसका दुष्प्रभाव बच्चे पर पड़ता है । पेड़-पादप तक जब विचारों-भावनाओं का भली-बुरी प्रतिक्रियाओं को ग्रहण करने में समर्थ होते हैं तो भला चेतना सम्पन्न बच्चा उनसे कैसे अछूता रह सकता है ?

न केवल भावनाओं को अपितु विगत कृत्यों को पकड़ने की भी सामर्थ्य पौधों में विद्यमान होती है । अपने प्रयोग शृंखला में डॉ० बेक्स्टर को एक रोचक किन्तु विचित्र रहस्य हाथ लगा । एक कनाडा की महिला उनके प्रयोगों का अध्ययन करने आई । वह स्वयं भी पौधों पर कार्य कर रही थी । डॉ० का प्रयोगशाला में गैल्वेनोमीटर से जुड़े पौधे का निरीक्षण करती वह गुजर रही थी । एक पौधे के समक्ष पहुँचते ही गैल्वेनोमीटर की सुई में एकाएक तीव्र गति आरम्भ हो गई । ग्राफ पर एक विशेष प्रकार की तरंगें अंकित होने लगीं जो यह बताती थीं कि पौधे भयभीत हो गये हैं । डॉ० बेक्स्टर ने उस महिला से पूछा कि क्या वह पौधों को प्रयोग के दौरान नष्ट भी करती है । महिला को भारी अचरज हुआ । उसने बताया कि ठीक उसी समय वह अपने एक प्रयोग के विषय में सोच रही थी जिसमें पौधे की टहनी तोड़कर भट्टी में भूनती थी । डाक्टर ने गैल्वेनोमीटर की सुई में गति का कारण स्पष्ट करते हुए बताया कि मस्तिष्क में उक्त महिला के चल रहे आक्रामक विचारों को पौधे ने पकड़ लिया ।

इन आश्चर्यजनक निष्कर्षों से वैज्ञानिकों को यह विश्वास हो चला है कि जड़ चेतन के बीच ऐसा कोई सूक्ष्म सम्बन्ध है, जो परस्पर एक-दूसरे को प्रभावित करता है । यह विचार भारतीय दर्शन की उस मान्यता की पुष्टि करता है जिसमें ऋषि कहता है—

यो देवोऽग्नौ योऽप्सु यो विश्वं भुवनमाविवेश ।
य ओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमोनमः ॥

—श्वेताश्वतरोपनिषद

अर्थात्—जो चेतना अग्नि में, जल में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, औषधियों एवं वनस्पतियों आदि में संव्याप्त है, उसको नमस्कार है ।

उक्त अनुसंधानों ने वनस्पति विज्ञान के क्षेत्र में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन प्रस्तुत किया है । कोई आश्चर्य नहीं कि पेड़-पौधों के इस तरह के व्यवहार को देखते हुए उन्हें जानवरों, प्राणियों से अलग न माना जाय । भाव-सम्वेदनाओं की दृष्टि से वृक्ष-वनस्पति को यंत्र की श्रेणी का ही कहा जा सकता है । अभी तो यही पता चला है कि दुर्भावनाओं, धमकियों, सद्भावों और दूसरों पर होने वाले अत्याचारों पर पेड़-पौधे भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियाएँ करते हैं । कौन जाने उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिक्रियाओं में उपेक्षा, परामर्श, तिरस्कार या मित्रता की भावनाएँ व्यक्त होती हों और कोई आश्चर्य नहीं कि उनकी बुद्धि, नैतिक चेतना तथा आध्यात्मिकता मनुष्य से अधिक उन्नत स्तर की हो । मनुष्य और वनस्पति में अन्तर है तो इतना भर ही कि वनस्पति मनुष्य की भाषा में बात नहीं कर सकता है ? तो मनुष्य ही वनस्पति-जगत् की भाषा में बात करने में कहाँ समर्थ है ?

वृक्ष-वनस्पति भी परस्पर बातें करते हैं, मूक नहीं हैं

सत्य चाहे कुछ भी हो, जब तक इस स्थूल बुद्धि को कोई ठोस प्रमाण नहीं मिल जाता, उसे संतोष नहीं होता । यों अध्यात्म अवधारणा तो इसे भलीभाँति स्वीकारती है कि इस दृश्य जगत् में जड़-चेतन कहे जाने वाले समस्त प्राणी व पदार्थ चेतना के एक अविच्छिन्न प्रवाह से जुड़े हुए हैं, पर पदार्थ विज्ञान को इतने से संतुष्टि कहाँ ! वह तो प्रत्यक्षवाद के धरातल पर आधारित है और किसी भी तथ्य को स्वीकारने एवं नकारने के लिए तर्कसम्मत सत्य की आवश्यकता अनुभव करता है । यह उचित भी है । आँख जब तक स्वयं सब कुछ देख न ले, किसी अघटित पर विश्वास क्यों करे! पर असत्य यह भी नहीं है कि अपनी सामर्थ्य और सीमा के अन्दर ही इस प्रकार का दावा वह प्रस्तुत कर सकती है, इससे बाहर नहीं ।

विज्ञान के साथ यही हुआ । वृक्ष-वनस्पतियों के संदर्भ में उसने पिछले दिनों अपने अन्वेषण-अनुसंधान द्वारा अध्यात्म विज्ञान की इस मान्यता की तो पुष्टि कर दी कि जीव-जन्तुओं की तरह उनमें भी भाव-सम्वेदनाएँ होती हैं । प्रतिकूल परिस्थितियों में वे भी चिन्ता, भय, शोक, पीड़ा की अनुभूति करते हैं और परिस्थितियाँ अनुकूल होते ही अन्य जीवधारियों की तरह हर्ष व आनन्द की उमंगें उमगती दिखाई पड़ती हैं, पर उसके लिए अब तक असमंजस एक ही था कि पौधे इन हर्ष व विषाद की सम्वेदनाओं को अपने पड़ोसी वनस्पतियों तक पहुँचाते कैसे हैं ? प्राणियों में इस निमित्त बोलियाँ होती हैं, विशिष्ट स्तर की विशेष मुद्राएँ-भाव भंगिमाएँ होती हैं, जिनसे उनमें आगत-अनागत सूचनाओं का आदान-प्रदान होता रहता है, पर पौधे ? उनमें तो ऐसी मुद्राएँ भी नहीं होतीं, फिर जानकारियों के प्रसारण का आधार क्या है ? क्या इसे सूक्ष्म स्तर की कोई विशेष बोली मान ली जाय ? हाँ, वर्तमान शोध इसी निष्कर्ष पर पहुँचा है कि पादप इस प्रकार का विनिमय अपनी विशिष्ट बोली के आधार पर करते और पड़ोसियों को वर्तमान एवं भविष्य सम्बन्धी महत्वपूर्ण जानकारियों से अवगत कराते रहते हैं ।

शेक्सपियर ने 'मैकबैथ' नामक नाटक में जब पहली बार यह कहा था कि पौधे बोलते हैं, तो पश्चिमी जगत ने इसे कवि की कल्पना मात्र माना था, पर सूक्ष्म की ओर निरन्तर बढ़ते विज्ञान ने अब इसे सत्य सिद्ध कर दिखाया है कि उक्त कथन में उतनी ही सच्चाई है, जितनी उदयाचल और अस्ताचल से दिनमान के उगने और डूबने में । यूनिवर्सिटी ऑफ वाशिंगटन, सिटल के प्रो. डेविड एफ. रोएड्स ने इसी बात की पुष्टि अपने प्रयोग परीक्षणों द्वारा कुछ वर्ष की और कहा कि पौधों में सूक्ष्म स्तर के वार्तालाप द्वारा निरन्तर जानकारियों का आदान-प्रदान चलता रहता है, पर वे इतने सूक्ष्म होते हैं, जिन्हें मानवी कान सुन समझ नहीं सकते । इसे एक सुखद संयोग ही कहना चाहिए, जिस मध्य इस अनुपलब्ध की उपलब्धि हुई ।

हुआ यों कि प्रो० रोएड्स के मार्गदर्शन में एक वैज्ञानिक दल पौधों पर तनाव सम्बन्धी अध्ययन करने में जुटा हुआ था । अनेक वर्षों तक इस प्रकार के शोध के दौरान उन्होंने कई महत्वपूर्ण तथ्यों का पता लगाया । शोधकर्मियों ने पाया कि सूखा, कोहरा, खाद की कमी, प्रदूषण आदि तत्व समान रूप से वनस्पतियों को तनावजन्य स्थिति में पहुँचा देते हैं । उन्होंने देखा कि इन परिस्थितियों में पौधे रोगी एवं उन कीटकों के प्रति अधिक सम्वेदनशील हो जाते हैं, जो पादप भक्षी होते हैं । ऐसी दशा में उनका आक्रमण जल्दी और ज्यादा होता है । इसका कारण बताते हुए वे कहते हैं कि इस अवस्था में उनकी नैसर्गिक प्रतिरक्षा प्रणाली ठीक उसी प्रकार लड़खड़ाने लगती एवं कमजोर हो जाती है, जिस प्रकार मनुष्य एवं अन्य जन्तुओं के बरसाती पानी में भीग जाने से उनकी प्रतिरोधी क्षमता प्रभावित होती है । वे कहते हैं कि पानी में भीग जाना उनके रोग का कारण नहीं है, वरन् सच्चाई यह है कि इससे प्रतिरोधी क्षमता में ह्रास आने से रोगाणुओं का आक्रमण जल्दी उन्हें अपनी चपेट में लेता और शिकार बनाता है ।

यह तो वनस्पतियों और प्राणियों में तनाव व रोग के सामान्य एवं सरल कारण हुए, पर अनुसंधानकर्ताओं ने पादपों पर परीक्षण के दौरान एक अन्य ऐसा कारण भी पाया, जो उनमें तनाव पैदा करता था । यह था उनके अन्दर चलने वाला रासायनिक परिवर्तन । विशेषज्ञों ने पाया कि तनाव की स्थिति में वनस्पतियाँ अपने अन्दर अधिकाधिक पोषक तत्व उत्पन्न करती हैं । इसके अतिरिक्त वैसे रसायनों का निर्माण भी करती हैं, जो शत्रुओं के आक्रमण से उनकी सुरक्षा कर सके ।

इतनी जानकारी उपलब्ध करने के उपरान्त उन्होंने एक विशेष प्रकार के पौधे पर परीक्षण आरम्भ किया । उस विशेष जाति के पौधे में से कुछ में वैज्ञानिकों ने भूखे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पादपभक्षी कीड़ों को रख दिया, जबकि अन्यों को इनसे दूर रखा । देखा गया कि कीड़े आरम्भ में बड़ी तेजी से बढ़े, किन्तु तुरन्त ही थोड़े दिनों बाद यह तथ्य भी उजागर हो गया कि अब उनकी वृद्धि उस गति से नहीं हो रही है, जो आरम्भ में थी, साथ ही यह भी ज्ञात हुआ कि पादपभक्षी, पौधों को अब उतना नुकसान नहीं पहुँचा रहे हैं, जितना प्रारम्भ के कुछ दिनों में । विश्लेषण से विदित हुआ कि आक्रमण के कुछ ही दिन पश्चात् पादपों ने प्रोएन्थोसाइनिडिन जैसे ऐसे विषैले और घातक रसायन बनाने आरम्भ किए, जो कीट विनाशक थे ।

अनुसंधानकर्ताओं को आश्चर्य तब हुआ जब कुछ सप्ताह बाद उन्होंने पड़ौस के स्वस्थ पौधों का अध्ययन-विश्लेषण आरम्भ किया । उन्होंने देखा कि सामान्य स्थिति में ऐसे रसायन जिस परिमाण में पौधों में पाए जाने चाहिये, उससे अनेक गुना अधिक पड़ोसी स्वस्थ पौधों में ये विद्यमान थे । इसका एक ही अर्थ निकलता था कि पास के पौधों में आक्रमण का पता उन्हें चल चुका था और उस स्थिति से निपटने की तैयारी में वे जुट चुके थे । उनके लिए आश्चर्य की बात यह थी कि आखिर स्वस्थ पौधों को इसका पता कैसे चला कि बगल में बैरी पहुँच चुके है ? निश्चय ही आक्रान्ताओं के शिकार हुए वृक्षों ने उन्हें यह सूचना दी, जिसकी अग्रिम तैयारी के रूप में उनमें घातक रसायन बनते देखे गए ।

इतना सुनिश्चित हो जाने के उपरान्त अब प्रो. रोएड्स एवं सहयोगियों ने यह जानने का निश्चय किया कि आखिर यह जानकारी पड़ोसियों तक किस माध्यम से पहुँची ? मिट्टी अथवा जड़ से ? प्रयोगशाला के भीतर गमलों एवं बाहर जमीन में लगे पौधों पर अनेकानेक परीक्षण के पश्चात् शोध दल ने पाया कि माध्यम न तो मिट्टी है, न जड़ तो फिर तीसरा माध्यम क्या हो सकता है ? इस सम्बन्ध में विशेषज्ञों का निश्चित मत है कि उन्होंने वाणी द्वारा ही सूचना का सम्प्रेषण पड़ोसियों तक किया । प्रयोग से यह भी सिद्ध हो गया कि उनके वार्तालाप की परिधि की एक निश्चित सीमा है, उसी के अन्तर्गत यह विचार-विनिमय सम्भव हो पाता है । उनके अनुसार यह दायरा सौ गज से भी ज्यादा होता है ।

इसी तथ्य की पुष्टि दो ब्रिटिश वनस्पतिशास्त्रियों ने भी की है । योर्क यूनिवर्सिटी के अन्वेषणकर्ताओं डॉ. साइमन वी० फ्राउलर एवं प्रो० जान एच० लाटन का कहना है कि यदि यह साबित हो जाय कि वृक्ष वनस्पतियाँ परस्पर विचार-विनिमय अथवा वार्तालाप करते है, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं माना जाना चाहिए, क्योंकि जिनमें भाव-सम्वेदनाएँ है, निश्चय ही उनमें इसके सँप्रेषण की भी विधा व क्षमता निसर्ग ने संजोयी होगी । यह बात और है कि उस गहराई और सूक्ष्मता को जानने-पहचानने की ओर हम धीरे-धीरे बढ़ रहे हैं । उनके अनुसार आरम्भ में पौधों में इस प्रकार के किसी संवेगात्मक तत्व से सर्वथा इन्कार किया जाता था, किन्तु कुछ समय पश्चात् विज्ञान ने इसे सिद्ध कर दिखाया । अब यदि उसके अग्रिम चरण में विज्ञानवेत्ता यह प्रमाणित कर दें कि जीवधारियों की तरह उनमें बातचीत की भी सामर्थ्य है, तो आश्चर्य क्या ?

सचमुच हम एक ही चेतना की पृथक्-पृथक् अभिव्यंजना हैं । फिर उनमें यदि कोई सम्पर्क सूत्र हो, तो विस्मय कैसा ! अध्यात्म विज्ञान तो इसे आरम्भ से ही स्वीकारता आया है । अब यदि भौतिक विज्ञान उसी को अपने परिष्कृत यंत्रों और सूक्ष्म स्तर के अनुसंधानों द्वारा सिद्ध कर दे, तो इसे अचम्भा नहीं, वरन् उसी सत्य की पुनरुक्ति भर माना जाना चाहिए, जिसे बहुत पूर्व से चेतना विज्ञान कहता चला आ रहा है ।

जीवन कला में पारंगत— वृक्ष-वनस्पति

सृष्टि के प्रत्येक घटक में न केवल नियम-व्यवस्था और क्रमबद्धता है; वरन् उसकी प्रत्येक इकाई कितनी दूरदर्शिता से काम करती है इसका उदाहरण हम पेड़-पौधों में देख सकते हैं । पेड़-पौधे जितनी दूरदर्शिता और सामाजिकता का परिचय देते हैं उतना शायद मनुष्य भी नहीं दे पाते हों । जैसे मनुष्य समाज में पीढ़ियों का संघर्ष एक सामान्य बात है । पुरानी पीढ़ी के लोग नयी पीढ़ी को उच्छृंखल और गैर-जिम्मेदार समझते हैं तथा उन्हें कोई दायित्व सौंपने से कतराते हैं । नई पीढ़ी के लोग पुरानी पीढ़ी को ज्यादती करने वाला वर्ग समझते हैं और इस कारण दोनों में अपेक्षित सामंजस्य नहीं बन पाता । परिणाम यह होता है कि पुरानी पीढ़ी के अनुभवों का लाभ नई पीढ़ी को नहीं मिल पाता और नई पीढ़ी की शक्ति का कोई सन्तोषजनक सदुपयोग नहीं हो पाता ।

किन्तु पेड़-पौधों में नये और पुरानों में अद्भुत सामंजस्य देखा गया है । वृक्ष की टहनियों में जिन आँखों से नयी पत्तियाँ निकलती हैं, उनका अकस्मात् निर्माण नहीं होता बल्कि वे टहनियों की आँखों के खोल में ढकी रहती हैं । वसन्त ऋतु में जब पुरानी पत्तियाँ गिरती है तो उसके बाद ही नयी पत्तियों की कोपलें फूटने लगती हैं । इससे पूर्व सूख जाने के बाद भी पुरानी पत्तियाँ टहनियों से इसलिए जुड़ी रहती हैं कि नई पत्तियाँ उनका स्थान लेने योग्य बन जाएँ । यही नहीं वे पुरानी पत्तियाँ नयी पत्तियों के लिए भरपूर पोषण भी एकत्रित करती रहती हैं; जिन्हें वे अपनी कलियों के माध्यम से नयी पत्तियों तक पहुँचाती रहती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य समाज में माता-पिता प्राय: अपनी सन्तान के लिए भी धन सम्पत्ति कमाने, जमाकर छोड़ जाने की बात सोचते हैं, जबकि सन्तान को स्वावलम्बी भर बना देना पर्याप्त होता है । अभिभावक अपनी सन्तान के प्रति कहाँ तक जिम्मेदार हैं, इसका एक सुन्दर उदाहरण है— नारियल का पौधा । नारियल का पौधा अंकुरित होने और जड़ पकड़ लेने तक नारियल की गिरी से ही पोषण प्राप्त करता रहता है । जब तक नारियल का पौधा खोपरे की तीन आँखों में से किसी एक को फोड़कर जड़ नहीं पकड़ लेता तब तक गिरी का सफेद, नरम और पौष्टिक गूदा प्रस्तुत रहता है । परन्तु जैसे ही पौधा जड़ पकड़ लेता है, उसे गिरी से पोषण मिलना बन्द हो जाता है । गिरी खिरकर जमीन में मिल जाती है । जैसे उसने अपनी सन्तान को स्वावलम्बी बनाकर शेष सारी सम्पत्ति समाज को सौंप दी हो । सेम, मटर, बादाम, अखरोट आदि के पौधों को भी इतना ही पैतृक सहयोग मिलता है, जबकि उनके बीजों में काफी पोषण शक्ति-सम्पत्ति विद्यमान रहती है ।

अपनी पोषण शक्ति को जमीन में मिलाकर ये पौधे ऐसे पौधों के लिए आहार उपलब्ध कराते हैं, जो कमजोर वर्ग के होते हैं, जैसे—राई, पोस्त, पीपल आदि । इस तरह के कितने ही पौधे हैं, जिनके पास नारियल के बीज जैसी सुविधा नहीं होती है । इन पौधों को अतिरिक्त शक्ति वाले पौधों द्वारा समर्पित सम्पत्ति से धरती पोषण प्रदान करती रहती है । परन्तु ऐसी भी बात नहीं है कि गरीब घरानों में पैदा हुए ये पौधे अपनी गरीबी का ढिंढोरा पीटते हुए निराश, हताश दूसरों का ही मुँह ताकते रहते हों । जिन पौधों को अपने अभिभावकों (बीजों) से इस प्रकार का कोई सहयोग नहीं मिलता, वे आँख खुलते ही अपने पैरों आप खड़ा होना सीख लेते हैं अर्थात् इन पौधों की पत्तियाँ अंकुरित होते ही हरितवर्ण की हो जाती हैं और वातावरण से अपना भोजन आप उपार्जित करने लगती हैं । यदि इन पौधों की पत्तियाँ हरितवर्णी न हों और प्रौढ़ विकसित पत्तियों की भाँति श्रम न करने लगें तो इनकी पौध ही मर जाय और इन पौधों की जाति ही विलुप्त हो जाए ।

इन पौधों की जीवनशक्ति अनुकरणीय कही जानी चाहिये कि ये पैदा होते ही अपना भोजन स्वयं अर्जित करने के लिए जीवन संघर्ष करने लगते हैं ।

मनुष्यों में आमतौर पर यह प्रवृत्ति होती है कि यदि उसकी आमदनी बढ़ जाती है तो वे व्यसनी, अपव्ययी और विलासी जीवन जीने लगते हैं जबकि पेड़-पौधों में ऐसी कोई प्रवृत्ति नहीं होती । उनके पास अतिरिक्त पूँजी जमा हो जाती है तो वे उसे भविष्य के लिए सुरक्षित रख लेते हैं तथा अपनी जाति के विकास में लगाने लगते हैं इस तरह के पौधों में आलू, शकरकन्द, शलजम, गाजर, मूली आदि प्रमुख हैं ।

प्रकृति ने सभी प्राणियों के लिए प्रचुर आहार सामग्री अपने भण्डार में रख छोड़ी है और उस भण्डार को हर किसी के लिए खुला छोड़ रखा है परन्तु मनुष्य को छोड़ कर और कोई दूसरा प्राणी नहीं है जो अपनी आवश्यकता से अधिक सामग्री संचित करते हों अथवा यह आकांक्षा भी रखते हों । प्याज का पौधा जमीन पर ही उगता है, परन्तु वह अपना जीवन केवल पानी से ही चलाता है । यह एक साधारण से प्रयोग द्वारा भी देखा जा सकता है । प्याज की एक पत्ती को पानी से भरी हुई एक बड़े मुँह को बोतल में इस प्रकार रखा जाय कि पत्ती की जड़ तर रहे । यह आवश्यक है कि बोतल को प्रकाश में रखा जाया करे । कुछ दिनों बाद ही उस प्याज की पत्ती से धीरे-धीरे हरी पत्तियाँ और फूल भी निकल आयेंगे ।

प्रयोग और परीक्षणों से इस तथ्य पर पहुँचा गया है कि प्रकृति में सभी प्रकार के साधन उपलब्ध रहने के बावजूद भी पौधे अपने पोषण के लिए, मिट्टी का बहुत थोड़ा-सा अंश ही उपयोग में लाते हैं । अधिकांशत: पानी और कार्बन डाइ-ऑक्साइड से ही पौधों के भोजन की आवश्यकता पूरी हो जाती है । इसी आधार पर अब बिना भूमि के ही—पानी में पौधे उगाये जाने की तकनीक विकसित की जा रही है । पानी में की जाने वाली खेती की इस विधि को 'हाइड्रोयोनिक्स' कहते हैं ।

नदी, तालाब और सोतों के पानी में उगने वाली एक वनस्पति शैवाल की प्राय: कोई उपयोगिता नहीं समझी जाती, उपयोगिता हो भी क्या सकती है क्योंकि उसमें न फल है, न फूल, न जड़ और न ही पत्तियाँ । पानी में इसके केवल बहुशाखी तन्तु ही पाए जाते हैं और यह इतनी गन्दी, चिकनी तथा चिपचिपी होती है कि छूते ही इस तरह हाथ से छोड़ दी जाती है जैसे कोई गन्दा कीड़ा परन्तु वैज्ञानिकों ने इसमें कितने ही उपयोगी तत्व खोज निकाले हैं तथा उसके द्वारा खाद्य संकट को हल्का करने की सम्भावनाएँ भी व्यक्त की हैं ।

यूरोप के कई देशों और जापान में शैवाल के तैलीय भाग से भोजन तैयार किया जाने लगा है । जापान और चीन में शैवाल से तैयार किए गए एक विशेष खाद्य 'कोम्बू' का उत्पादन तो एक प्रमुख उद्योग रूप लेता जा रहा है । पाचन क्रिया को ठीक रखने तथा पाचन-संस्थान सम्बन्धी रोगों को सुधारने के लिए शैवाल को औषधियों के रूप में भी प्रयुक्त किया जाने लगा है । शैवाल में ऐसे अनेक तैल तत्व और खाद्य पदार्थ खोज निकाले गये हैं, जो ब्लड प्रेशर और हृदय विकार के रोगों में अचूक दवा तथा पौष्टिक भोजन का काम करते हैं । चिकनाई युक्त पदार्थ खाने से खून में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गाँठें पड़ जाती हैं । इसी कारण हृदय विकार उत्पन्न होते हैं परन्तु यह एक ऐसी वनस्पति है जिसका तैलीय तत्व (चिकनाई) इस रोग का कारण बनने के स्थान पर उसके कारण को दूर करता है ।

इसके अतिरिक्त समुद्री शैवाल से पोटाश, आयोडीन, आल्जिनिक आदि रासायनिक द्रव्य बनाए जाते हैं । अगर-अगर नामक द्रव्य जिसका उपयोग आइस्क्रीम, मुरब्बा आदि बनाने में किया जाता है—यह शैवाल से ही तैयार किया जाता है । नार्वे, ब्रिटेन, चीन, जापान में शैवाल के उत्पादन तैयार करने वाली कई फैक्ट्रियाँ धड़ल्ले से चल रही हैं ।

प्रकृति के अबोध से अबोध शिशु तक भौतिक नियमों का इतनी दृढ़ता से पालन करते हैं । उसी का परिणाम है कि मनुष्य को छोड़कर प्रकृति की अन्य किसी सन्तान को दुःखी, क्लान्त और खिन्न होते नहीं देखा गया । इसका एकमात्र कारण प्रकृति के आदेशों का पालन है । प्रकृति का दंड भी उन्हीं के लिए प्रस्तुत है जो उसके नियमों को तोड़ते और मर्यादाओं का उल्लंघन करते हैं ।

आकार में छोटे खमीर से भी कुछ प्रेरणा लें

कोई वस्तु देखने में बहुत ही छोटी हो सकती है, उसका आकार विस्तार नगण्य दृष्टिगोचर हो सकता है, उससे उसकी उपयोगिता और क्षमता को नगण्य नहीं आँकना चाहिए । हो सकता है कि कोई व्यक्ति-खमीर जैसी उपेक्षणीय परिस्थितियों में पड़ा हो पर उसकी गतिविधियाँ समाज के लिए उपयोगी भूमिका विनिर्मित कर रही हों ।

पौधों की दुनिया में सबसे छोटा पौधा है 'खमीर' इसे अँग्रेजी में 'यीस्ट' कहते हैं । इसकी संरचना अन्य वानस्पतिक जीव कोशों जैसी ही होती है । वह अण्डाकार भी होता है और गोलाकार भी । आकार में वह एक इन्च का पच्चीसवाँ भाग और वजन में एक ग्राम का दस अरबवाँ हिस्सा । इसे एक भिन्न वर्ग का पौधा मानना पड़ेगा, फफूँद की तरह पराश्रयी-परावलम्बी । इसके अतिरिक्त खमीर एककोशीय है जबकि हर पौधे की रचना अनेक कोशों से मिलकर हुई होती है ।

पेड़ों पर, पत्थरों पर, पानी की सतह पर काई की तरह वनस्पतियाँ उगती हुई आमतौर से देखी जाती हैं, पर खमीर ऐसा पौधा है जो फलों के छिलकों से लेकर पशुओं और मनुष्यों की त्वचा तक पर उगता है । कई दिन स्नान न किया जाय तो पसीनों की परत, हवा, पानी और गर्मी के प्रभाव से वनस्पति की शकल में बदलने लगता है तो बैक्टीरिया की उपस्थिति के अनुरूप वह खमीर बनने लगता है । ऐसी स्थिति में उस शरीर को एक अच्छा-खासा खेत भी कहा जा सकता है ।

शराब बनाने में और रोटियों का फुलाव पैदा करने के लिए खमीर का उपयोग सबसे अधिक होता है । जौ, चावल, अंगूर, महुआ, शीरा आदि कितने ही पदार्थों को सड़ा कर उनमें खमीर पैदा किया जाता है और फिर उसे मिट्टी द्वारा अर्क बनाकर शराब तैयार कर ली जाती है । आटे में इसका थोड़ा अंश मिल जाने से उसमें यह तत्व फैल जाता है । डबल रोटी, बिस्कुट, जलेबी, गोलगप्पे आदि में जो फुलाव दीखता है वह खमीर जन्य ही होता है ।

हालैण्ड वैज्ञानिक ल्यूफेफन हॉक से लेकर बैक्टीरियालाजी के सुप्रसिद्ध अन्वेषक लुई पाश्चर तक अनेक शोधकर्ता 'खमीर' के सम्बन्ध में गहरी खोजें करते रहे हैं और इसके विकास परिष्कार के अनेक आधारों का पता लगाते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मानवी उपयोग में खमीर की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है ।

शराब का नशे के लिए उपयोग बुरा है, पर इस सड़न प्रक्रिया से जो एल्कोहॉल बनता है वह औषधि जगत् की एक महती आवश्यकता है । खमीर का पौधा ही उस उत्पादन का आधार है । आटे में रहने वाली शर्करा का खमीर ही कार्बन-डाइ-ऑक्साइड के रूप में बदलता है, जिससे रोटी फूलती है—सुपाच्य और स्वादिष्ट बनती है ।

खमीर के छोटे से कृमि-कीटक 'खमीर' की उपयोगिता बढ़ाते हैं । यदि उसे सही रूप में प्रयुक्त करने के लिए विशाल परिमाण में उत्पन्न किया जाय तो जीवनोपयोगी महत्त्वपूर्ण निधि हाथ लग सकती है जिसके आधार पर आहार को पौष्टिक एवं सुपाच्य बनाने की आवश्यकता को सरलतापूर्वक पूरा किया जा सकता है ।

यही बात सामान्य समझे जाने वाले मनुष्यों पर भी लागू होती है । यदि उसकी उपयोगिता समझी, बढ़ाई और काम में लाई जा सके तो उसके उपयोगी परिणाम हो सकते हैं ।

आओ हम-आप दोनों जियें

एक समय था जबकि अंजीर केवल अर्जेन्टाइना में पाई जाती थी । वहाँ से स्माइराना नामक अंजीर के कुछ पौधे कैलीफोर्निया (अमेरिका) में लाये गए । इन पौधों को उगाने के लिए बहुतेरे प्रयत्न किए गए, अच्छी खाद दी गई, पानी दिया गया, मिट्टी दी गई पर सब कुछ निरर्थक गया । अंजीर का पौधा बढ़ तो गया, उसमें फूल भी आ गए किन्तु बाँझ । उन फूलों पर फल उतरे ही नहीं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिकों ने परागण (पोलीनेशन) के सारे प्रयत्न कर लिए पर उनकी एक न चली ।

अन्त में अमेरिका के एक वैज्ञानिक उस देश में गए जहाँ से अंजीर का पौधा आया था । पौधे के विकास का सूक्ष्म अध्ययन करते समय उन्होंने देखा कि एक विशेष जाति की बर्र (मक्खी) ही जब इन पौधों पर आती है, तभी 'पोलीनेशन' (पौधों में संयोग) की क्रिया सम्पन्न होती है । इन बर्रों को तब कैलीफोर्निया लाया गया । जैसे ही वह बर्रे इन पौधों के फूलों पर बैठीं 'पोलीनेशन' क्रिया प्रारम्भ हो गई और बाँझ अंजीर के पौधे खूब फलने लगे । यह बर्र भी इस फूल से अपने लिये पर्याप्त पराग प्राप्त करती रहती है । उसका अधिकांश पोषण इन अंजीर के ही फूलों से होता है ।

इस घटना को पढ़कर मुल्कराज आनन्द रचित अँग्रेजी कहानी 'दि लोस्ट चाइल्ड' (खोया बच्चा) की याद आती है, जिसमें यह दिखाया गया है कि जीवन जिस धातु का बना है, वह भौतिक पदार्थों से नहीं, प्रेम, आत्मीयता, सहयोग और सहानुभूति से विकसित होता, फलता और फूलता है ।

यह बच्चा एक अच्छे माता-पिता का है । वे बच्चे को लेकर एक मेले में जाते हैं । बच्चा खिलौने देखता है तो मचल उठता है । माँ के डाँटने पर भी वह जब तक खिलौना नहीं मिल जाता, जिद करता रहता है, फिर वह मिठाई वाले के पास पहुँचता है । वहाँ भी जिद करता है, उसे मिठाई मिल जाती है । इस तरह बच्चा मिठाई, खिलौने, गुब्बारे, बाजे आदि बहुत-सी वस्तुएँ इकट्ठा कर लेता है और खूब प्रसन्न होता है ।

मेले की बात—भीड़ अधिक थी । बच्चा माँ की अँगुली पकड़े चल रहा था । एक ही झोंके में अँगुली छूट गई और वह अपने माता-पिता से अलग-थलग हो गया, बहुत प्रयत्न करने पर भी वे मिल न सके ।

एक सहृदय व्यक्ति ने बच्चे को रोते हुए देखकर अपनी गोद में उठा लिया । उन्होंने समझ लिया बच्चा खो गया है । उसे चुप करने और सन्तोष दिलाने के लिए उन्होंने खिलौने, मिठाई, बाजे तरह-तरह की वस्तुएँ लाकर दीं पर बच्चा चुप न हुआ, प्रसन्न न हुआ । थोड़ी देर पहले तक जो बच्चा इन वस्तुओं के लिये माता-पिता से भी झगड़ रहा था, अब उसे वह वस्तुएँ बिना माँगे मिल रही थीं तो भी वह उन्हें न लेकर अपने माता-पिता को पाने के लिये बेचैन था । उसकी प्रसन्नता लौटी भी तभी जब वे उसे मिल गए ।

उपरोक्त घटना का सार यह है कि संसार कंकड़, पत्थर, लोहे, पीतल, चाँदी और सोने के टुकड़े पर सुख ढूँढ़ता है पर ये पदार्थ उसकी अन्तिम आवश्यकता नहीं । सुखी और प्रसन्न रहने के लिए, विकास और आत्मोन्नति के लिए जो वस्तुयें आवश्यक हैं, वह हैं प्रेम, अपनी तरह के सहयोग और संगठन, मैत्री और उदारता इन्हीं गुणों के आधार पर संसार चल रहा है । यदि इनका अभाव होता है तो संसार का विकास और उसकी प्रसन्नता उसी प्रकार छिन जाती है, जिस प्रकार एक बर्र का सहयोग भर न मिलने से अंजीर बाँझ हो जाती है । जबकि इनके विकास से संसार ऐसे सुखी हो जाता है जैसे खोया हुआ बच्चा अपने माता-पिता को पाकर प्रसन्नता से नाच उठता है ।

'पोलीनेशन' के लिए सहयोग की क्रिया और भी कई पौधों पर विचित्र ढंग से होती है । मक्खियाँ, तितलियाँ तो चाहे जिस पौधे को इस क्रिया में एक फूल का पराग दूसरे फूल में पहुँचाकर करती रहती है, किन्तु अमेरिका में एक ऐसा जंगली पौधा पाया जाता है, जो 'प्रोन्यूबा' नामक एक सफेद पतंगे के बना गर्भ ही धारण (फर्टलाइज) नहीं करता ।

प्रेम, सहानुभूति और दया एक-दूसरे की आत्मिक आवश्यकताओं को पहचानकर सहयोग देने, सहायता देने की पद्धति के पर्याय हैं । उन आवश्यकताओं को अन्तरंग में प्रवेश करके ही जाना जा सकता है । मादा प्रोन्यूबा जब यह पौधा खिलता है तो फूल पर जा बैठती है और अपनी टाँगों की सहायता से पराग को इकट्ठा करके छोटी गेंद का-सा आकार बना लेती है और उसे अपने पैरों में ही चिपका लेती है । फिर वह वहाँ से उड़ती है और दूसरे फूल पर जा बैठती है और गोलाकार बनाए हुए उस पराग को फूल में छोड़ देती है जिससे वह फूल 'फर्टलाइज' हो जाता है । प्रोन्यूबा उसी फूल की 'ओवरी' (गर्भाशय) में बैठकर फिर यह पतंग अपने अंडे दे देती है । यह अंडे काफी बड़े होने तक उसी फूल में पलते रहते हैं । न तो इस फूल के बिना पतंगे का वंश विकास सम्भव है न इस पतंगे के बिना फूल का । यह तो उदाहरण मात्र है, सच तो यह है कि सारा संसार ही प्रेम और सहयोग के द्वारा विकसित हो रहा है । इन गुणों के बिना सृष्टि का चलना एक पल को भी सम्भव नहीं ।

'जूक्लोरेली' एक प्रकार की वनस्पति है, जो अन्य वनस्पतियों के समान खुले आकाश में नहीं जीवित रह पाती । उसकी कोमल-कोशाएँ धूप, शीत और वर्षा के तीव्र आघात सहन करने में वैसे ही असमर्थ होती हैं, जैसे कोमल बच्चे, बीमार और अपाहिज व्यक्ति ।

हाइड्रा एक छोटा-सा जीव है, उसे भोजन की आवश्यकता होती है पर अपने लिए उपयुक्त भोजन की प्राप्ति कर पाना उसके लिए कठिन होता है । प्रकृति ने उसकी परिस्थितियाँ ही कुछ ऐसी बनाई हैं ।

एक वनस्पति दूसरा जीव दोनों इस संसार में दिखाई न देते, यदि सचमुच संसार में 'समर्थ का जीवन' का ही सिद्धान्त काम कर रहा होता । माना कि जीव-मात्र के सुधार के लिये प्रकृति को कठोर और दण्डात्मक प्रक्रिया का भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कभी-कभी संचालन करना पड़ता है पर वह कोमल और सम्वेदनशील अधिक है । अपने प्रत्येक अणु-अणु को वह परस्पर प्रेम-सहयोग और सहानुभूतिपूर्वक जीवन जीने की प्रेरणा देती रहती है । उसका उदाहरण जब इन छोटे-छोटे जीवों और वनस्पतियों पर भी देने को मिलता है, तब विश्वास हो जाता है कि निर्माण ही विश्व का सत्य है ध्वंस नहीं, सहयोगी ही सर्वकल्याण का सर्वोत्तम सिद्धान्त है, उपयोगितावाद नहीं ।

उपरोक्त परिस्थितियों में 'जूक्लोरेली' पौधा 'हाइड्रा' जीव के शरीर में रहने लगता है, वहाँ वह अपने आपको सुरक्षित अनुभव करता है । पर चूँकि वह वनस्पति है, इसलिए उसे भोजन प्रकाश संश्लेषण (फोटो सिंथेसिस अर्थात् सूर्य प्रकाश में होने वाली एक रासायनिक प्रक्रिया) क्रिया से ही मिल सकता है, उसके लिए कार्बन डाइ-ऑक्साइड गैस मिलना आवश्यक हो जाता है, ताकि आवश्यक क्लोरोफिल (हरा पदार्थ) तैयार करके वह अपने सम्पूर्ण अंगों का सेवन कर सके । इस कार्बन डाइ-ऑक्साइड की आवश्यकता को हाइड्रा अपनी छोड़ी साँस से पूरी कर देता है और जूक्लोरेली द्वारा छोड़ी हुई ऑक्सीजन आप ग्रहण कर लेता है । इस तरह परस्पर सहयोग से दोनों प्रसन्नतापूर्वक जीते हैं । फोटो सिंथेसिस क्रिया से हाइड्रा को भी शक्ति मिलती है ।

जीव और वनस्पति में सहयोग को और अच्छी तरह समझना हो तो हमें कृषि-विज्ञान की 'लैग्युमिनौसी' अर्थात् फलियों वाले पौधों जैसे—चना, मटर, सेम, सोयाबीन आदि की रचना जीवन धारण और विकास पद्धति का अध्ययन करना पड़ेगा । इन पौधों की जड़ों में बड़ी-बड़ी गाँठें होती हैं । स्थूल आँख से तो नहीं पर किसी गाँठ को चीड़कर सूक्ष्मदर्शी यंत्र (माइक्रोस्कोप) से देखें तो उसके अन्दर अरबों की संख्या में जीवाणु (बैक्टीरिया) हलचल करते हुए दिखाई देंगे । प्रकृति ने सूक्ष्म से सूक्ष्म जीवों की सुरक्षा के कितने सुदृढ़ खोल तैयार किए हैं, यह देखकर आश्चर्य होता है पर यह सब उसने केवल सुरक्षा के लिए ही नहीं, विश्व में मैत्री और सहयोगी प्रवृत्ति के विकास के लिए किया लगता है, क्योंकि इन गाँठों में रहने से जीवाणु सुरक्षित पड़े रहते हों, इतना ही नहीं जीवाणु और यह पौधे दोनों एक-दूसरे के विकास में पति-पत्नी की तरह, भाई-भाई और पड़ोसी-पड़ोसी के समान महत्त्वपूर्ण सहयोग प्रदान करते हैं ।

पौधों के अच्छे विकास के लिए आवश्यक है कि मिट्टी से नाइट्रोजन की पर्याप्त मात्रा मिले । जड़ें हल्की होने के कारण यह काम नहीं कर सकतीं, इसलिए मात्र नाइट्रोजन चूसकर देने का किराया लेकर यह पौधे उन जीवाणुओं को आजीवन अपने भीतर सुरक्षित स्थान दिए रहते हैं ।

हमारे समाज में बहुत लोग ऐसे हैं, जो शिक्षा, ज्ञान, उपार्जन, शरीर, साधन आदि की दृष्टि से अत्यन्त अविकसित स्थिति में पड़े हैं, प्रकृति का यह सहयोग हमें सिखाता और पाठ पढ़ाता है कि हमें उन सबके प्रति भी श्रद्धा रखनी चाहिए । उनके उत्थान, भरण-पोषण और संरक्षण के लिए जो भी सम्भव सहयोग कर सकते हैं, वह करना चाहिये । सहयोग के सिद्धान्त से समाज के नकारा लोग भी पल जाते हैं और समर्थ लोगों के विकास और सफलता की सम्भावनाएँ बदलती हैं ।

प्रकृति की अनुपम देन— मनोहारी पुष्प

यों तो रंग-बिरंगे, छोटे-बड़े पुष्प सर्वत्र पाये जाते हैं पर नन्दन वन के प्राकृतिक पुष्पोद्यान की छटा निराली है । एक बार अर्जुन ने द्रोपदी को कुछ देने की कामना की । कुछ न कुछ लेने लिए के हठ किया तो द्रोपदी ने कह दिया—आप ला सकते हैं तो मेरे लिये नन्दन वन के वह पारिजात पुष्प ला दें जो जल में नहीं, पत्थरों में पैदा होते हैं, जिनकी सुगन्ध कस्तूरी-मृग से भी मादक होती है, जिनका सौन्दर्य दिव्य सौन्दर्य की अनुभूति करा देता है ।

अर्जुन चले और नन्दन वन पहुँचे । वहाँ के रक्षक से उन्हें युद्ध करना पड़ा, तब कहीं एक फूल द्रोपदी के लिये ला सके ।

महाभारत की इस कथा में सम्भवत: कल्पना अधिक, तथ्य कम जान पड़ता हो, किन्तु यह कल्पना नहीं आश्चर्यजनक रहस्य ही है कि ऐसा नन्दन वन आज भी इसी भारतभूमि में वैसे ही विद्यमान है जैसी महाभारत में कथा आती है । समुद्र-तल से १३२०० फीट ऊँचा यह हिमालय की गोदी में स्थित स्थान आज भी 'फूल घाटी' के नाम से विख्यात है । प्रतिवर्ष हजारों विदेशी पर्यटक यहाँ पहुँचते और जहाँ, वहाँ की मादक छटा को देखकर मुग्ध होते हैं, वहीं यह आश्चर्य भी है कि १०-१५ मील क्षेत्र में प्राकृतिक तौर पर उगते आ रहे इन हजारों प्रकार के चित्र-विचित्र पुष्पों को किसने रोपा ? सारे संसार में ऐसा कोई भी स्थान नहीं जहाँ प्राकृतिक तौर पर इतने अधिक, इतने सुन्दर, इतने वर्णों के पुष्प और कहीं खिलते हों ।

विशेषज्ञों का अनुमान है कि यह फूल प्रकृति की उतनी अधिक देन नहीं हैं जितना इस बात की सम्भावना कि यह पौधे अतीत काल में सुनियोजित ढंग से विकसित किए गए हों । सम्भव है यह कोई राजोद्यान रहा हो, यह भी सम्भव है कि यहाँ कभी किसी महर्षि का तपोवन आश्रम रहा हो । जो भी हो—महाभारत काल के बाद तो यह स्थान उन सैकड़ों रहस्यों की तरह छुपा ही रहा जिनके लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिवर्ष देश-विदेश के सैकड़ों पर्वतारोही भारत आते और हिमालय के आश्चर्य खोजने के प्रयत्न करते हैं ।

जहाँ अनेक धार्मिक व्यक्तियों का यह विश्वास है कि हिमालय में राजाओं द्वारा छिपाए हुए खजाने हैं, यज्ञों के बहुमूल्य पात्र, आभूषण और अस्त्र हैं, वहाँ पर्वतारोहियों का यह कथन है कि हिमालय की प्रत्येक वनस्पति औषधि है । जहाँ धार्मिक लोग विश्वास करते हैं कि वहाँ अभी भी अखण्ड अग्नियाँ स्थापित हैं, ऐसे-ऐसे गुप्त आश्रम हैं, जहाँ अर्द्ध-सहस्र आयु के भी सन्त-महात्मा समाधिस्थ हैं, वहाँ पर्वतारोहियों ने हिममानव की कल्पना ही हिमालय में नहीं की, उनके पदचिह्न भी देखे हैं । आदि साधना-भूमि होने के कारण हमारा भी विश्वास है कि हिमालय में अध्यात्म-विज्ञान की वह अदृश्य तरंगें, वह ज्ञान अब भी विद्यमान है जिसे प्राप्त कर इस भौतिक युग की सम्पूर्ण जड़वादी मान्यताओं, परम्पराओं, सिद्धान्तों को बालू की दीवार की तरह बदला जा सकता है । 'पुष्प घाटी' ऐसे-ऐसे रहस्यों की ही पुष्टि का एक प्रमाण है ।

इस स्थान की सबसे पहली खोज ब्रिटिशकालीन भारतीय सेना के एक कप्तान ने की थी । उसने यहाँ के सैकड़ों प्रकार के फूलों के बीज एकत्रित कर इंग्लैण्ड भेजे । एक पुस्तक भी लन्दन में छापी गई, जिसमें इस फूल घाटी को प्रकृति का अद्भुत चमत्कार कहकर पुकारा गया । तब से अनेक विदेशी खोजी आते रहे और भटक-भटक कर लौटते रहे । पर इंग्लैण्ड की श्रीमती जान लेग को दुबारा यह स्थान फिर मिल गया । उन्होंने यहाँ से लगभग ५०० फूलों के बीज इकट्ठे कर लन्दन भेजे । अब तो वहाँ तक पहुँचने की तमाम सुविधाएँ हो गई हैं इसलिए कोई भी वहाँ जा सकता है, पर अभी हमारे हिमालय में ऐसा बहुत कुछ है जहाँ तक हम नहीं जा सकते । वहाँ जा सके होते और उसके अनन्त रहस्यों में से कुछ का भी पता लगा सके होते तो देखते कि हम जिन वस्तुओं के लिये विदेशों के आश्रित हैं, दूसरों का मुँह ताकते हैं वह और उनसे श्रेष्ठ वस्तुएँ हम अपने ही भीतर से निकाल सकते हैं ।

तीर्थ-यात्रा और आत्मकल्याण के लिए साधनाओं की दृष्टि से अब हिमालय ही एक पुण्य स्थान बचा है । वहाँ चित्ताकर्षक शांति है, अतुलित प्राण और सौन्दर्य भरा है । उसमें जो एक बार इस पुष्प घाटी को ही देख आता है, उसे हिमालय का सौन्दर्य भूलता नहीं । वह वहाँ बार-बार जाता है । पुष्प घाटी तक पहुँचने के लिये जोशी मठ पहुँचना पड़ता है । वहाँ से बद्रीनाथ को जाने वाली सड़क पर मध्य में गोविन्द घाट स्थान पर उतरना पड़ता है । यहाँ से पैदल चढ़ाई है और आगे घाघरिया तक की ७ मील की दूरी को पार करने के लिये पूरा एक दिन लग जाता है ।

घाघरिया से कुल एक घण्टे में मुख्य घाटी पहुँच जाते हैं । उसकी दाहिनी ओर 'कुबेर भण्डार' पर्वत और आगे 'कामेट चोटी' है । बाईं ओर सप्राष्टांग पर्वतों की चोटियाँ हैं । कामेट झरना सामने ही बहता हुआ आ रहा है । म्यूण्डर ग्राम पर पहुँचते ही यह पुष्प घाटी मिल जाती है और अनेक प्रकार के गुलाब, कुमुदिनी, गुलदाऊदी, सिलपाड़ा, जंगली गुलाब, चम्पा, बेला, जुही और कुछ फूल तो ऐसे हैं जिनके नाम वैदिक साहित्य में हैं पर अब उनकी सही जानकारी करना कठिन है । अँग्रेजों ने इनके नाम 'बड आफ पमडाइज, ग्लाडेओली, हिमालयन, आरकिड हिबिस्टकम' आदि रख लिए हैं । कथीड के सफेद व बैंगनी फूलों के गुच्छे बड़े मोहक लगते हैं । बुरांस फूल तो गुलाब के सौन्दर्य को भी मात देता है । जब यह बुरांस पूरी तरह अपनी ऋतु में फूलता है तो यह वन नन्दन वन या स्वर्ग से भी सुहावना प्रतीत होता है । कितना ही देखो—न तो आँखें थकती हैं और न वहाँ से हटने का ही जी करता है । वर्ष भर इसी तरह किसी न किसी फूल की शोभा बनी रहती है । ३००० से अधिक विभिन्न फूल विभिन्न समय में फूलते रहते हैं ।

ब्रह्म-कमल यहीं पाया जाता है । कमल जल में ही हो सकता है पर प्रकृति के संसार में क्या बन्धन ? उसने यहाँ पत्थरों में कमल उगाकर यह दिखा दिया है कि उसकी सत्ता सर्वशक्तिमान है । यह कमल श्वेत रंग का होता है, इसकी सुगन्ध ऐसी जादू भरी होती है कि हल्की-सी महक से ही अनन्त सुख और शांति का आभास होता है इसलिए इसका नाम ब्रह्म-कमल पड़ा है । इसे पाकर ही द्रोपदी की इच्छा पूर्ण हुई थी ।

फूल कहीं भी हो, वह तो प्रकृति का उन्मुक्त सौन्दर्य है । जो लोग अपने घरों के आस-पास थोड़े-से भी फूलों के पौधे लगा देते हैं तो वह स्थान इतना अच्छा और आकर्षक लगने लगता है कि बार-बार वहाँ जाने का मन करता है, फिर एक ऐसे प्रदेश में पहुँचकर जहाँ १० इन्च से लेकर २८ इन्च ऊँचाई के पौधे केवल फूलों से ही आच्छादित हों, उस स्थान के सौन्दर्य का तो वर्णन ही क्या किया जा सकता है यह स्थान तो ईश्वर या उस दिव्य आत्मा के समान है, जिसके इस सौन्दर्य और आनन्द की अनुभूति तो हो सकती है, अभिव्यक्ति नहीं ।

विद्युत ऊर्जा से अभिपूरित वनस्पति जगत

सचेतन प्राणियों में विद्यमान विद्युत चुम्बकत्व एक प्रचण्ड शक्ति है जिससे सभी वस्तुएँ अदृश्य रूप से प्रभावित होती हैं । इसमें होने वाले परिवर्तन ही प्रमुख रूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से विकास या ह्रास की—प्रगति या अवगति की दिशा का निर्धारण करते रहते हैं । यह शक्ति पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा सहित समस्त ग्रह-गोलकों अर्थात् पिण्ड-ब्रह्माण्ड से लेकर अनन्त अन्तरिक्ष में प्रचुर परिमाण में विद्यमान है जिसके फलस्वरूप आकर्षण, विकर्षण, द्वन्द्व-संघर्ष, गति-प्रगति जैसी हलचलें दृष्टिगोचर होती हैं । मनुष्यों में विद्युत चुम्बकत्व विशेष रूप से और अन्य प्राणियों में साधारण रूप से परिलक्षित होता है ।

यही शक्ति पेड़-पौधों में भी विद्यमान है और उसी अदृश्य प्रक्रिया से उनमें वृद्धि या अपघटन होता रहता है । मनुष्यों की भाँति वृक्ष-वनस्पतियाँ भी ब्रह्माण्डीय तरंगों के प्रति संवेदनशील होती हैं और इनसे उनके स्वयं के जैव विद्युत में भी परिवर्तन आता है । इस आधार पर वे प्राकृतिक घटनाओं की भी जानकारी दे सकने में सक्षम होते हैं । इस सन्दर्भ में गहन वैज्ञानिक अनुसंधान भी हुए हैं ।

अनुसंधानों की इसी शृंखला में एक अध्ययन न्यू हैवन, कनेक्टीकट के मूर्धन्य वैज्ञानिकों ने पिछले दिनों मैपल पेड़ पर किया है । लगातार तीस वर्षों तक पौधे को वोल्टमीटर से सम्बद्ध रखकर उसकी विद्युतीय तरंगों को रेखांकित किया जाता रहा । विश्लेषण करने पर विद्युतीय तरंगें अनियमित क्रम में पाई गईं । उनमें स्थानीय तड़ित झंझा और भू-चुम्बकीय क्षेत्र में न्यूनाधिकता के कारण वैद्युतिक गड़बड़ी का स्पष्ट अंकन था जिसे अनियमित तरंग-रचना का आधारभूत कारण माना गया । इसके अतिरिक्त पौधे ने ग्राफ में २४ घण्टे का एक सौर रिद्म, २५ घण्टे का चक्र रिद्म एवं एक लम्बी अवधि के चन्द्र चक्र का भी संकेत किया जो पूर्णिमा के दिन अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँचता था ।

एक अन्य अध्ययन में पाया गया है कि पेड़-पौधे भी मनुष्यों एवं अन्य प्राणियों की तरह अपने अंतराल में भाव सम्वेदनाओं की गंगोत्री से भरे होते हैं । अपने साथ सहानुभूति रखने वालों की ओर आकर्षित होते, पुष्पों को खिलखिलाते एवं क्रूरता-कठोरता बरतने वालों के प्रति विकर्षण का उदासीनता का भाव प्रदर्शित करते उन्हें देखा जाता है । पौधे इस तरह के भावोद्दीपन का प्रदर्शन अपने वैद्युतीय तरंगों में घट-बढ़ के रूप में करते हैं । विज्ञानवेत्ताओं ने इसके मापन के सफल प्रयोग किये हैं । उनका निष्कर्ष है कि वनस्पति समुदाय में सन्निहित प्राण ऊर्जा को बढ़ाया और उनसे संवेदनशील एन्टीना का कार्य लिया जा सकता है ।

इस सन्दर्भ में इण्डियन स्पेस रिसर्च आर्गेनाइजेशन के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ० एस. पी. कोस्टा ने महत्वपूर्ण सफलता पाई है । आरम्भिक प्रयोगों में उसने रेडियो फ्रीक्वैन्सी एन्टीना के रूप में लीव साइप्रस, खजूर आदि का प्रयोग किया, किन्तु बाद में गुलमोहर, कान्हा, बोरलबुरा, नारियल, डेट पाम तथा फर्न जैसे पौधों को चुना और उन्हें माइक्रोफ्रीक्वेन्सी इलेक्ट्रोमैग्नेटिक एन्टीना के निर्माण में प्रयुक्त किया । उनका कहना है कि पौधे अपनी जीवन्त एवं जटिल संरचना के कारण विद्युत उत्पादन में सहायक होते हैं । विद्युत चुम्बकीय तरंगें आसपास के वातावरण में सतत् छोड़ते रहने के कारण इनका सम्बन्ध माइक्रोवेव्स से सरलतापूर्वक हो जाता है । इन्हीं विशेषताओं के कारण अब लता-गुल्मों, वृक्ष-वनस्पतियों का उपयोग माइक्रोवेव कान्टैक्ट सिस्टम के माध्यम से पुलिस अपराधियों के पकड़ने में करने लगी है । टेलीविजन देखने हेतु ग्रीन लीव एन्टीना की प्रणाली क्रियान्वित की जाने लगी है । अति उच्च फ्रीक्वेन्सी वाले रेडियो संकेत ऊँचे वृक्षों की हरी पत्तियों के माध्यम से शीघ्रतापूर्वक उपलब्ध किये जा सकते हैं ।

इस आधार पर यह सम्भावना बनती है कि बड़े पेड़ों की छाया में बैठकर अन्तरिक्ष में दौड़ने वाले अनेक उपयोगी विद्युत प्रवाहों को पकड़ा जा सकता है और उन्हें मानवी मस्तिष्क के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है । सिद्धियों में दूरदर्शन, दूरश्रवण की सिद्धियाँ भी हैं । उन्हें प्राप्त करने के लिए लम्बे आकार के पेड़ों में खजूर, देवदार जैसे वृक्षों के नीचे बैठकर योगाभ्यास करने से इन सिद्धियों को सरलतापूर्वक प्राप्त किया जा सकता है, जो खुले स्थानों में या झाड़ियों में बैठकर मुश्किल से हस्तगत होती है सम्भवतः इसी कारण ऋषिगण सघन वृक्षों के मध्य तप साधना करते थे ।

वृक्षों की समीपता का एक सर्वविदित लाभ ऑक्सीजन की उपलब्धि है । पेड़ों का प्रत्यक्ष लाभ यह भी है कि उनकी समीपता से प्रदूषण की निवृत्ति होती है । दूषित वायु को ग्रहण करने और उसके स्थान पर स्वच्छ वायु प्रदान करने का गुण पेड़ों में है । इसलिए पेड़ों के नीचे झोंपड़े बनाकर उनकी छाया में रहने का एक बड़ा लाभ प्राचीनकाल में प्राप्त किया जाता था ।

मानसिक विशेषताएँ बढ़ाने एवं मनोविकार दूर करने की भी कई वृक्षों में अपनी विशेषताएँ हैं । यज्ञ प्रयोजन में कुछ पेड़ों की समिधाएँ काम आती हैं । यज्ञ के काष्ठ पात्र भी इसी दृष्टि से चुने जाते हैं कि इनका काष्ठ उपयोग में लाने से मानसिक शुद्धि का विशेष लाभ होता है ।

योगाभ्यास के आत्मकल्याण के लिए कुछ विशेष वृक्षों की छाया का उपयोग उपयुक्त माना गया है । कई सिद्धियाँ प्राप्त करने के लिए उस प्रकार की साधना अमुक वृक्ष के नीचे की जाती है । इसके पीछे उन विशेषताओं का समावेश होना चाहिए, जिनका आज के वैज्ञानिक एन्टीना में उपयोग करने लगे हैं । यह एक प्रकार की बिजली की अधिक मात्रा का उन पेड़ों में होना है । हर पेड़ में यह विशेषता नहीं होती । कुछ विशेष वृक्षों में ही यह विशेषता पाई जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जनसंकुल क्षेत्र में रहकर साधनाएँ उतनी सफल नहीं हो पातीं । कारण इसमें तरह-तरह के लोगों से मिलते रहने से चित्तवृत्तियाँ अस्थिर होती हैं, उनमें भटकाव आता है और एकाग्रता भंग होती है । यद्यपि ऐसी परिस्थितियाँ नदी-सरोवर के एकान्त, शान्त तट पर भी रहकर उपलब्ध की जा सकती हैं, किन्तु वहाँ रहकर साधक वन्य प्रदेश का एक महत्वपूर्ण लाभ—वृक्षों के सान्निध्य से वंचित रह जाता है । जो साधना तरुवर-विहीन क्षेत्र में रहकर लम्बे काल में भी उतनी सफल नहीं हो पाती, वैसी साधनाएँ पेड़ों के सम्पर्क में अपेक्षाकृत कम काल में फलीभूत होती देखी जाती हैं । इसका कारण वृक्षों में संव्याप्त विद्युत ही है ।

सर्वविदित है—पक्षीगण पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र के कारण ही दिशा-ज्ञान करने में सफल हो पाते हैं । प्रयोगों के दौरान जब उन्हें इस तत्व (चुम्बकीय तत्व) से रहित क्षेत्र में रखा गया । तो वे दिशा-बोध करने में विफल रहे; किन्तु जैसे ही भू-चुम्बकीय क्षेत्र में लाया गया, उसके सम्वेदी अंग पुनः सक्रिय हो उठे और दिशा-ज्ञान प्राप्त करने में सफल हुए । ऐसा ही लाभ पेड़ों के विद्युतीय क्षेत्र से साधक को मिलता है । इस विज्ञान को यदि भली प्रकार समझा जा सके, तो आध्यात्मिक महत्व के कितने ही लाभ वृक्षों की सहायता से प्राप्त किए जा सकते हैं ।

वनस्पतियाँ ही हैं जो सूर्य की ऊर्जा को अवशोषित करके मनुष्य सहित समस्त प्राणिजगत् का पोषण करती हैं । सूर्य का प्रकाश और उससे उत्पन्न हरीतिमा दोनों ही हमारे स्वास्थ्य संरक्षण, बल, वीर्य और दीर्घजीवन के लिए आवश्यक हैं ।

वनस्पति का विकास हरे रंग को अपनाने के कारण होता है । वनस्पतियाँ हरी होने के कारण शोभायमान ही नहीं जीवित भी हैं । हरा रंग अपने भीतर स्वतः जीवन तत्व की प्रचुर मात्रा भरे हुए है ।

सूर्य किरणों में उपलब्ध सात रंगों में से एक हरा रंग ही ऐसा है जिसमें जीवन के मूल तत्व का पोषण करने की शक्ति है । पौधे इसी रंग के माध्यम से सूर्य से अपने लिए आवश्यक तत्व प्राप्त करते और कार्बन डाइ-ऑक्साइड का सृजन करते हैं । इस क्रिया के बीच उनका ऑक्सीजन छोड़ने का काम भी चलता रहता है यही मनुष्यों की साँस के काम आती है ।

यदि वनस्पति में हरा रंग न हो तो वह क्लोरोफिल के अभाव में सूर्य से अपनी खुराक प्राप्त न कर सके तब फिर इस संसार में वनस्पति रहेगी भी या नहीं यह संदिग्ध है । यदि वह रही भी तो इस योग्य होगी कि शाकाहारी प्राणी उसे खाकर जीवित रहें । क्लोरोफिल के रूप में हरा रंग उस विशाल विश्व में शोभा और शांति भरी हरीतिमा ही नहीं फैलाता, प्राणियों का जीवन आधार भी सिद्ध होता है ।

हम हरी वनस्पतियों के सम्पर्क में रहें । खेतों और बगीचों में काम करें, सघन वनों की सैर करें, अपने घरों को फूल-पौधों और बेलों से हरा-भरा रखें तो हरीतिमा का यह सम्पर्क हमें अधिक जीवन तत्व प्रदान कर सकता है और स्वास्थ्य सम्वर्धन में लाभ मिल सकता है ।

सूर्य के प्रकाश का सम्पर्क हमारी सुदृढ़ता, स्फूर्ति को बढ़ाता है और प्रजनन में समर्थ बल वीर्य की वृद्धि होती है । सन्तानरहित और दुर्बल सन्तान वाले व्यक्ति सूर्य के सम्पर्क में रहें तो वे कष्ट मुक्त हो सकते हैं । दिलीप को सन्तान प्राप्ति के लिए गुरु वशिष्ठ ने उन्हें खुली हरीतिमा में दिन भर घूमते हुए गायें चराने का उपचार बताया था । किसान और वनवासी लोग अपेक्षाकृत कम ही बीमार पड़ते हैं और उन्हें प्रजनन सम्बन्धी कष्ट अवरोध भी नहीं होता । सूर्य ऊर्जा से परिचालित वृक्ष-वनस्पतियाँ विद्युत ऊर्जा से भरे होने के कारण ही अपनी उपयोगिता के लिए प्रख्यात हैं ।

विचित्र एवं अद्भुत वनस्पति जगत

प्रकृति-जगत् अनेक ऐसी विचित्रताओं से भरा पड़ा है जिनका समाधान सामान्य अन्वेषण बुद्धि नहीं कर पाती । ऐसे ही अनेकों उदाहरणों में से कुछ इस प्रकार हैं —

बाई डाँगों अफ्रीका के गाँव मवाई तथा फ्रांस के 'केन्ड्री' स्थान में एक प्रकार का वृक्ष पाया जाता है जो वनस्पति विज्ञान के नियमों का उल्लंघन कर वैज्ञानिकों के लिए आश्चर्य का विषय बना हुआ है । इस वृक्ष की जड़ें कील या चूलनुमा होती हैं । जब कभी तूफान इस पेड़ के पास पहुँचता है तो वृक्ष चूलनुमा जड़ के सहारे लट्टू जैसे चक्कर काटने लगता है जबकि अन्य जाति के हजारों पेड़-पौधे धराशायी हो जाते हैं । जितनी देर तूफान रहता है—वृक्ष नाचता रहता है, तूफान बन्द होने पर उसका नाचना बन्द और उसकी अगली विकास यात्रा प्रारम्भ हो जाती है ।

गर्म प्रदेशों में पाया जाने वाला वृक्ष 'समानी-सनम' वनस्पति जगत में अपने ढंग का अनोखा है । वह रात्रि में बादल की तरह बरसता है । उस क्षेत्र के निवासी उसी से अपनी जल आवश्यकता पूरी करते हैं । यह पेड़ दिन भर अपने डण्ठलों से हवा की नमी सोखता रहता है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपना भण्डार भर लेता है । जैसे ही मौसम की गर्मी शान्त होती है, वह उस भण्डार को खाली करके उस क्षेत्र के प्राणियों की प्यास बुझाता है । सभी रात्रि की प्रतीक्षा में उसके इर्द-गिर्द जमा रहते हैं ।

हिन्द महासागर के रियूनियन द्वीप में कैक्टस जाति का एक विचित्र पौधा पाया जाता है, वह अपने जीवन के अन्तिम दिनों प्राय: पचास वर्ष बाद एक बार ही फूलता है । इसके बाद उसके जीवन का अन्त हो जाता है ।

इसी प्रकार सेग्येरो कैक्टस की रबर की तरह बढ़ सकने वाली चमड़ी केवल एक बार की तूफानी वर्षा में दो सौ गैलन पानी सोख सकती है । इसकी छिछली जड़ों का अव्यवस्थित फैलाव १०० फुट तक के क्षेत्र में होता है ।

एलोविले—नारमैंडी (फ्रांस) में एक ओक का वृक्ष है, जिसकी आयु लगभग १ हजार वर्ष हो चली । वृक्ष की विशालता और उसके तने की राक्षसी मोटाई देखकर एक अँग्रेज के मन में उसको एक जगह खोखला करके गिरजाघर बनाने की बात आई । उसने अपने विचार को क्रियान्वित भी किया । एक दो मंजिला गिरजाघर इस विशाल वृक्ष के तने में बनाया गया जो १६९६ से लेकर अब तक ज्यों का त्यों बना हुआ है । एक ओर गिरजाघर में बैठकर पूजा उपासनाएँ चलती रहती हैं । दूसरी ओर वृक्ष भी ऋतु के अनुसार फलता-फूलता रहता है । तने के भीतर बना गिरजाघर आश्चर्य हो गया पर उस वृक्ष के नियन्ता को किसी ने भी आश्चर्य से नहीं देखा । यह ऐसा ही है जैसे कि लोग विराट् ब्रह्माण्ड में समुद्र की एक बूँद के समान पृथ्वी को ही सब कुछ मानते हैं पर विराट् जगत की कल्पना उन्हें कभी नये ढंग से सोचने की प्रेरणा ही नहीं देती ।

महाराष्ट्र के जलगाँव—अजिष्ठा मार्ग पर पहुर नामक एक छोटा-सा गाँव है । वहाँ से शेंदुर्णी जाने वाली कच्ची सड़क पर ३ मील दूर पर सोय गाँव अवस्थित है । इस गाँव में वाणी सिद्धि का एक अद्भुत चमत्कार नीम का एक पेड़ है जिसकी प्रत्येक डाल के पत्ते कडुवे हैं किन्तु सिर्फ एक डाल ऐसी है जिसके पत्तों का स्वाद अत्यन्त मीठा लगता है । कहते हैं कड़ोवा महाराज नाम के एक साधु ने ईश्वर के अस्तित्व और उसकी शक्ति का परिचय देने के लिए ऐसा किया था ।

अभी-अभी पिछले दिनों विश्व के सबसे बड़े बरगद वृक्ष की जानकारी भारतवर्ष के आन्ध्र प्रदेश के अनन्तपुर जिले में मिली है । कादिरी ताल्लुक में विद्यमान यह वृक्ष ५ एकड़ क्षेत्रों में फैला हुआ है । इसे एक पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित किये जाने की योजना है ।

अमेरिका के कैलीफोर्निया प्रान्त के घने वनों में रेडवुड का एक वृक्ष है, जिसने ४ हजार वसन्त देखे हैं । वह अब भी फल-फूल रहा है । पुराने जमाने में इसकी डालों का प्रयोग तीरकमान बनाने में किया जाता था ।

विश्व का सबसे बूढ़ा देवदार भारत के टिहरी जिले में है यह ७०० वर्ष से जिन्दा है । इसी प्रकार तमिलनाडु में ५०० वर्ष पुराने दो सागौन के पेड़ हैं । पश्चिमी बंगाल के मालदा में ३६ मीटर ऊँचाई का एक आम का पेड़ तथा महाराष्ट्र के चाँदा में ४३ मीटर ऊँचा सागौन का पेड़ है जो सबसे अधिक किसी वृक्ष की ऊँचाई है ।

प्रकृति के नियमों में अपवाद के रूप में पाये जाने वाले ये विचित्र विलक्षण वनस्पति जगत के उदाहरण बताते हैं कि सुनियोजित विधि-व्यवस्था में सृजेता अपना बराबर हस्तक्षेप रखता है । हँसी-मजाक भी करता है एवं इन विचित्रताओं के माध्यम से अपनी नियामक सत्ता का परिचय हर क्षण मनुष्य को दिलाता रहता है ।

ब्राजील के घने जंगलों में 'मोर्नर प्लांट' या 'मोर्नर-ट्री' नामक एक विचित्र ऐसा झाड़ीनुमा पौधा होता है जिससे सारे दिन संगीत के स्वर से निकलते सुनाई पड़ते हैं, पर शाम होते ही इससे रोने-कराहने के स्वर निकलने लगते हैं । इस पेड़ का पता सर्वप्रथम १८७० में एक उच्च वनस्पतिशास्त्री अल्बर्ट फोर्स ने लगाया था, वृक्ष का यह विलाप सारी रात चलता है और सुबह होते ही पुन: संगीत प्रारम्भ हो जाता है, सुरीली झंकार और विलाप के स्वरों का कारण सूर्य के प्रकाश में पौधे के शरीर के सेलों से स्पर्च बनता है । सूर्यास्त के बाद में स्टार्च बनता है और सूर्यास्त के बाद में यही स्टार्च घुलनशील शक्कर में बदल जाता है ।

अमरीका और यूरोप के वैज्ञानिक आजकल समुद्र से ऐसी वनस्पतियों तथा पदार्थ ढूँढ़कर निकाल रहे हैं, जो वास्तविक अर्थों में जीवनदाता हैं । गत वर्षों से चिकित्सा-जगत में 'पेन्सिलीन' की धूम रही है और आरम्भ में उससे हजारों ही मरते हुए व्यक्ति बचाये गये थे, और अब भी करोड़ों मरणासन्न व्यक्तियों पर उसका प्रयोग किया जाता है, जिनमें से बहुसंख्यक बच जाते हैं । पर अब वैज्ञानिकों ने 'पफर' नामक मछली से जो जहर निकाला है, वह शोधित और नियन्त्रित होने पर अमृत का ही काम करता है । इसी प्रकार वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि मृत शरीरों के सड़ने से समुद्र का जल साधारणत: दूषित हो जाता है, पर यदि स्पंज के पास कोई मृत शरीर सड़ता है तो भी वहाँ का जल गन्दा नहीं होता ।

इससे यह अनुमान किया गया है कि स्पंज में कोई रोगाणुनाशक तत्व है, जिसको यदि औषधि रूप में प्रस्तुत किया जायेगा तो कीटाणुओं के कारण उत्पन्न रोगों के लिए वह अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होगा । इस प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य ने पृथ्वी पर पाई जाने वाली जड़ी-बूटियों और जीवों को उपयोग में लाकर अब समुद्र की तरफ ध्यान दिया है । संसार में जितने प्रकार के जीवधारी पाये जाते हैं उनमें से ८० प्रति सैकड़ा समुद्र में ही मिलते हैं । यही बात वनस्पतियों के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है । इसलिये जब खोज करने वाले वैज्ञानिक पूरे उद्योग के साथ समुद्र का मंथन आरम्भ कर देंगे तो न मालूम कैसी-कैसी आश्चर्यजनक औषधियाँ उसमें से मिलने लगेंगी ?

प्रकृति का विलक्षण खेल— प्रार्थना करते पेड़

प्रकृति का जो प्रवाह सुनियोजित क्रमबद्ध रूप से चलता रहता है, उसके विपरीत कभी अपवाद रूप में ऐसे घटनाक्रम घटते देखे जाते हैं, जिन्हें देखकर दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ती है । मनुष्य तो पौधा नहीं है, वह कोई भी करिश्मा अपनी जीवनीशक्ति के सहारे अथवा अचेतन को जगाकर मन:शक्ति के माध्यम से दिखा सकता है । किन्तु यदि ऐसा ही कोई चमत्कार पेड़-पौधे करने लगें व यह करिश्मा प्रकृति के नियमों के विपरीत हो तो क्या कोई जबाव दे पाना वैज्ञानिकों के लिए सम्भव है ? संयोग या अपवाद कहकर किसी घटना को सरलता से नकारा जा सकता है किन्तु जब ऐसे विलक्षण घटनाक्रम कई जगह दिखाई देने लगें तो समष्टिगत बाह्य चेतना के अस्तित्व को स्वीकारना ही पड़ता है । वस्तुत: ऐसी घटनाएँ चुनौती हैं—उस खोजपूर्ण मस्तिष्क के लिए जिसने विज्ञान जगत् के नये-नये आविष्कार सम्पन्न कर दिखाए हैं ।

सर जगदीशचन्द्र बसु ने अपनी पुस्तक 'वनस्पतियों के स्वलेख' में वृक्षों से सम्बन्धित अनेक विस्मयकारी घटनाओं का वर्णन किया है । उन्होंने अपनी उक्त पुस्तक में फरीदपुर पश्चिमी बंगाल के एक अद्भुत ताड़ वृक्ष का वर्णन किया है । यह पेड़ सबेरे अन्य सभी पेड़ों की भाँति जमीन पर सीधा खड़ा रहता, परन्तु शाम को आरती के समय जब मन्दिरों में घण्टे घड़ियाल बजने लगते हैं, तो वह अपनी प्रकृति के विपरीत जमीन पर लेटकर प्रार्थना की मुद्रा में प्रार्थना करने लगता । यह उसका नियमित क्रम था और पूरे वर्ष बिना किसी व्यतिक्रम के चलता रहता । इस विचित्र घटना की जब चर्चा फैली, तो प्रतिदिन दूर-दूर से लोग इस विलक्षण वृक्ष की प्रार्थना को देखने के लिए आने लगे, जिससे वहाँ एक प्रकार से मेला-सा लगने लगा । समीपवर्ती लोगों का कहना था कि इस पेड़ के समक्ष मनौतियाँ मनाने अथवा भेंट चढ़ाने से मनोरथ पूरे होते एवं शारीरिक, मानसिक रोग आश्चर्यजनक ढंग से दूर हो जाते थे ।

यह तो सुना जाता है कि पशु-पक्षी स्नान पसंद होते हैं और अवसर आते ही जलाशयों में स्नान कर लेते हैं, पर अब तक यह नहीं देखा सुना गया है कि वृक्ष-वनस्पति भी स्वयं को शुद्ध पवित्र रखने के लिए ऐसा करते हों । ऐसा ही एक स्नान-पसन्द ताड़ वृक्ष फरीदपुर में था जिसका उल्लेख श्री बसु ने अपनी उक्त पुस्तक में किया है । वह वहाँ एक सरोवर के तट पर लगा हुआ था और प्रतिदिन शाम के समय उसमें स्नान करता था । प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार दिन भर वह पेड़ उदग्र रूप से खड़ा रहता । उसमें कोई हलचल नहीं दिखाई पड़ती, पर जैसे ही संध्या होने को आती वह सरोवर के पवित्र जल में स्नान करने के लिए मचलने लगता । उसकी उस समय की तड़फड़ाहट लोगों को स्पष्ट दिखाई पड़ती । कई प्रयासों के बाद वह स्वयं को पत्तों समेत सरोवर के जल में डुबो लेता । कुछ समय तक जल में निमज्जित रहने के उपरान्त जब उसकी स्नान-क्रिया समाप्त हो जाती, तो वह धीरे-धीरे पुन: अपने को जल सतह से ऊपर कर लेता और अपनी पूर्व स्थिति में आ जाता । ऐसा कौन-सा कारण था, जो उसे अपनी प्रकृति के विपरीत स्नान करने के लिए विवश करता था, ज्ञात न हो सका । उसकी इस प्रकृति के कारण लोग उसे 'स्नान करने वाला ताड़' के नाम से पुकारने और उसकी नित्य पूजा-आरती करने लगे थे ।

ऐसी बात नहीं, कि पेड़ों से सम्बन्धित ऐसी विलक्षण घटनाएँ सिर्फ भारत में ही घटित हुई हों । अन्य कई देशों में ऐसे शुद्ध, पवित्र, धर्मप्रिय व प्रार्थनारत वृक्ष हुए हैं । लिवरपूल (इंग्लैण्ड) के ऐसे ही एक तरुवर का वर्णन करते हुए श्री बसु अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि यह वृक्ष इंग्लैण्ड में तब बड़ी चर्चा का विषय बन गया था और तत्कालीन समय के प्राय: सभी ब्रिटिश पत्रों ने इसका समाचार छापा था । प्रतिष्ठित पत्र 'लिवरपूल मरकरी' ने आश्चर्यजनक घटना नामक शीर्षक से मुख पृष्ठ में सुर्खियों में यह समाचार पापा था कि लिवरपूल में शिप्टन के निकट एक छोटी नदी बहती है । वहाँ एक विलो का पेड़ है, जो काफी मोटा और ऊँचा है । विश्व के अन्य प्रार्थनारत पेड़ों से यह उस मामले में भिन्न था, कि वह यदा-कदा ही प्रार्थना किया करता था । प्रार्थना का ढंग अन्यों की भाँति ही था । वह पूरी लम्बाई में दण्डवत, धरती पर लेट जाता और अभ्यर्थना पूरी होते ही पुन: सामान्य स्थिति में खड़ा हो जाता । एक अन्य विलक्षणता उसके साथ यह थी कि वह सदा प्रात: ही वन्दना करता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी ही एक घटना दक्षिण अफ्रीका की है । 'फरीदपुर का प्रार्थनारत ताड़ वृक्ष' शीर्षक अध्याय में श्री बसु इसका उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि अफ्रीका के एक कृषक के खेत में नारियल के कुछ पेड़ लगे हुए थे । एक बार ये समुद्री तूफान में पड़कर एक ओर कुछ झुक-से गये । तभी से इन वृक्षों को न जाने क्या हुआ कि वे प्राय: प्रतिदिन जमीन पर लेटकर संध्या-वन्दना करने लगे । दिन भर ये सीधे खड़े रहते और शाम होते ही प्रार्थना की मुद्रा में लेट जाते । उनके मालिक किसान का कहना था कि तूफान में पड़कर वृक्षों को जो क्षति उठानी पड़ी, वैसी किसी आगामी क्षति से बचने के लिए ही सम्भवत: उनमें यह बदलाव आया हो और उनकी वृत्ति ऐसी हो गयी हो तब से उनकी 'दैनिक प्रार्थना' का यह क्रम कभी नहीं टूटा ।

ऐसे ही, फ्लोरिडा के समुद्री तटीय क्षेत्र में एक राइजोफोरा का पेड़ है । इसके बारे में कहा जाता है कि जब समुद्र में तेज ज्वार-भाटे आते हैं और इसके कारण जल जब उस वृक्ष के निकट पहुँचता है तो उसकी टहनियों में विलक्षण हलचल दिखाई पड़ने लगती है । शाखाएँ जल को छूने के प्रयास में बार-बार नीचे झुकतीं और ऊपर उठती हैं । यह क्रम तब तक जारी रहता है, जब तक शाखाएँ जल का स्पर्श न कर लें । जड़ पदार्थों में इस प्रकार की गतिविधियाँ विरले में ही देखने को मिलती हैं । पौराणिक गाथा के अनुसार एक बार यमुना के जल ने इस प्रकार का कौतुक दिखाया था और श्रीकृष्ण के चरणों का स्पर्श पाने के बाद ही उसकी लहरें थमीं और अप्रत्याशित रूप से जल स्तर घटता चला गया । पर राइजोफोरा के पत्र-पल्लव क्यों समुद्र-जल का स्पर्श करना चाहते हैं ? यह आज तक नहीं जाना जा सका है ।

यह तो तरुवर की धार्मिक प्रवृत्ति की चर्चा हुई, पर पेड़ को हर्ष और शोक की अनुभूति भी होती है और मनुष्यों की तरह वे इसका प्रदर्शन भी करते हैं, ऐसा कम ही देखने-सुनने को मिलता है । श्री बसु ने ऐसी ही एक घटना का वर्णन 'आम्र-वृक्ष का रुदन' नामक अध्याय में किया है । घटना कलकत्ता के एक उपनगर के एक आम्रवृक्ष की है । यह पूर्णरूप से विकसित एक ४० फुट लम्बा पेड़ था । इसके तने की परिधि लगभग ३८ इन्च थी और पत्र-पल्लवों से लदी इसकी टहनियों का विस्तार करीब सौ वर्ग गज में था । यह प्रतिदिन अपराह्न १ बजे से न जाने क्यों रोना आरम्भ कर देता था ? और मनुष्यों एवं पशुओं की ही भाँति उसके आँसू गिरने लगते थे । फिर शाम पाँच बजते-बजते उसके आँसू पूर्णत: थम जाते और उसका रुदन बन्द हो जाता । पता नहीं इस प्रकार रोकर वह किस दु:ख को अभिव्यक्त करना चाहता था ।

अब मास्को विश्वविद्यालय के रूसी वनस्पति-शास्त्रियों ने यह निर्विवाद रूप से सिद्ध कर दिखाया है कि पेड़-पौधे भी विलाप करते हैं । उन्होंने लिली के पौधों पर प्रयोग-परीक्षण किए । उनके जो आँसू निकले, जब उन्हें चख कर देखा गया तो उनका स्वाद बिल्कुल मानवी आँसू के सदृश्य नमकीन था ।

जो चेतना मनुष्यों व अन्य जीवधारियों में है, वही वृक्ष-वनस्पतियों में भी विद्यमान है । इसीलिए भगवान् कृष्ण ने अश्वत्थ (पीपल) के अंदर स्वयं का वास होने की बात कही है । भारतीय संस्कृति में आम, बरगद, पीपल, शमी जैसे वृक्षों की पूजा की जाती है, उसके मूल में महत्चेतना को स्वीकारने का दर्शन ही है । प्रकृति में परब्रह्म की चेतना के कण-कण में व्याप्त होने की यथार्थता की ही झाँकी दिखाती हैं, ऐसी चमत्कारी घटनाएँ ।

मनुष्य जीवन में वृक्षों का आध्यात्मिक महत्त्व

बहुत समय से हम भारतवासी वनों एवं वृक्षों का महत्व भूल गए हैं । हमारे देश की समग्र सभ्यता, संस्कृति, धर्म एवं अध्यात्म-दर्शन का विकास वनों में वृक्षों के नीचे ही हुआ है । हम सब वैदिक सभ्यता के अनुयायी है और हमारा धर्म भी वैदिक ही है ।

इस वैदिक धर्म एवं वैदिक सभ्यता के प्रणेता ऋषि-मुनियों ने वनों के बीच वृक्षों के नीचे बैठकर ही चिन्तन, मनन एवं ग्रहण किया था । वैदिक ज्ञान के वाङ्मय में आरण्यक ग्रन्थों का विशेष स्थान है । ग्रन्थों का यह आरण्यक नाम ही इस बात का द्योतक है कि इनका प्रणयन वनों में ही किया है । अरण्य का अर्थ वन ही होता है ।

जिन वृक्षों के नीचे बैठकर ऋषियों ने ईश्वरीय ज्ञान की प्राप्ति की और हमारे सामाजिक जीवन की रूपरेखा बनाई, वन के बीच बने आश्रमों के जिन वृक्षों के नीचे गुरुकुलों में राष्ट्र के कर्णधारों, राजाओं, अमात्यों, राजगुरुओं, सेनापतियों, राजनीतिज्ञों, विद्वानों, कवियों, दार्शनिकों एवं कलाकारों का निर्माण किया गया, जो वृक्ष उन गुरुकुलों को भोजन व्यवस्था, छाया तथा निर्माण सामग्री के साधक बने, उन वृक्षों के महत्व का विस्मरण कर देना हम भारतवासियों के लिये कृतघ्नता के समान पाप है । वृक्षों के पूजन एवं आरोपण की जो पुण्य परम्परा भारतीय धर्म-विधान में पाई जाती है वह वृक्षों के प्रति कृतज्ञता की अभिव्यक्ति ही है ।

इस परम्परा को चलाने में ऋषियों का उद्देश्य यह रहा है कि जनसाधारण धर्माचार के माध्यम से वृक्षों के सम्पर्क में आता रहे, जिससे उनके लाभ, उनकी उपयोगिता, उनके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महत्व एवं उनके उपकार से अवगत रहे एवम् उनकी रक्षा करे और उनके उच्छेद करने को पाप समझता रहे ।

किन्तु खेद है कि ऋषियों का यह मन्तव्य आज लीक मात्र पीटने के रूप में रह गया है । वृक्ष पूजा के मूल मन्तव्य को पूरी तरह भुला दिया गया है । अब तो लोगों का दु:साहस यहाँ तक बढ़ गया है कि जिन वृक्षों की पूजा करते हैं, जिन पर जल एवं चन्दन रोली चढ़ाते हैं, जिनको सूत दान करते और हाथ जोड़कर प्रदक्षिणा करते हैं, उन्हें थोड़े-से स्वार्थ के लिए काट तक डालते हैं । वृक्षों के प्रति भारतीयों की यह अधार्मिक बुद्धि शोच का विषय है ।

आज संसार में सबसे अधिक वृक्ष भारतवर्ष में ही काटे जाते हैं । चकबन्दी की चर्चा होते ही बाग के बाग साफ कर दिए गए हैं, जंगल काटकर गिरा दिए गए हैं और नित्य प्रति गिराए जा रहे हैं । वृक्षों के प्रति भारतीयों की यह निर्दयता अशोभनीय है । जीवों की भाँति ही वृक्षों पर भी दया करनी चाहिए । हरे वृक्षों को काटना न केवल वनस्पति के रूप में देश की सम्पत्ति को हानि पहुँचाना है, अपितु यह जीव हत्या के समान एक पाप भी है ।

यदि जड़ जीवन की बात छोड़ भी दी जाये तो भी संसार का अनन्त उपकार करने वाले वृक्षों का ह्रास करना मानव-समाज ही नहीं सम्पूर्ण जीव-जगत् को हानि पहुँचाना है । यदि एक बार वृक्षों को जड़ भी मान लिया जाये तब भी यह सोच सकने का अवसर है कि जड़ होकर भी वृक्ष संसार का कितना उपकार करते हैं और हम चेतन होकर भी उस अनबोल उपकारी पर कुल्हाड़ी चलाते हैं ।

वृक्षों को काटने अथवा नष्ट करने वालों की तुलना दुष्ट तथा क्रूर पक्षी बाज से की गई है, जो सुकुमार पक्षियों को मार डालता है । वेद के ऋषि ने कहा है—

मा काकम्बीरमुद्वृहो वनस्पतिमशस्तीर्वि हि नीनशः ।

मोत सूरो अह एवा चन ग्रीवा आदधते वेः ॥

अर्थात्—जिस प्रकार दुष्ट बाज पक्षी दूसरे पक्षियों की गर्दन तोड़कर उन्हें कष्ट पहुँचाता और मार डालता है, तुम उस प्रकार के न बनो । इन वृक्षों को कष्ट न दो और न इन्हें काटो ही क्योंकि यह वृक्ष पशु-पक्षियों तथा अन्य जीव-जन्तुओं को शरण देते हैं ।

आध्यात्मिक उन्नति के लिए मनुष्य का परोपकारी होना आवश्यक है । मनुष्य का स्वयं परोपकारी होना और किसी परोपकारी के प्रति आदर भाव रखना, श्रद्धा करना अथवा उसकी रक्षा करना भी परोपकार ही है और यदि विचारपूर्वक देखा जावे तो पता चलेगा कि किसी की सेवा करना, भला अथवा सहायता करना एकधा परोपकार करना है, किन्तु किसी परोपकारी, समाजसेवी, दानी, दयालु आदि परमार्थी व्यक्तियों के प्रति श्रद्धा रखना, आपत्ति के समय उनकी रक्षा में सहायक होना, उनके पुण्य कार्यों में सहयोग करना द्विधा परोपकार है । एक तो व्यक्ति रूप में परोपकारी की सेवा करना दूसरे ऐसे व्यक्ति का पोषण, परिवर्धन, रक्षा करना, परोक्ष रूप में उन सब लोगों की सेवा-सहायता में मूल परोपकारी के माध्यम से भागीदार बनना है ।

इस द्विधा परोपकार का पुण्यफल पाने के लिए मनुष्यों को वृक्ष जैसे नि:स्वार्थ परोपकारी की हर प्रकार से सेवा, सहायता तथा सुरक्षा करनी चाहिये । वृक्षों के परोपकार का यदि लेखा-जोखा लिया जाये तो पता चलेगा कि जीव-जन्तुओं तथा पक्षियों को शरण तथा भोजन-वास देने के अतिरिक्त वृक्ष मनुष्य जीवन के प्राय: सभी क्षेत्रों में किसी न किसी रूप में उपयोगी होते है। छाया, फल-फूल, ईंधन, कोयला, इमारती लकड़ी, गंध, औषधियाँ, गोंद, लाख, राल, शहद आदि न जाने जीवनोपयोगी कितनी चीजें वृक्षों से ही पाई जाती हैं । मेवे, मसाले आदि सब वृक्षों से ही मिलते हैं । अब तो कागज एवं कपड़ा भी वृक्षों के गूदे छाल, पत्तियों तथा रेशों से बनने लगा है । हल से लेकर खुरपी तक और बैलगाड़ी से लेकर हवाई जहाज तक के निर्माण में वृक्षों से प्राप्त होने वाली लकड़ी का विशेष स्थान है ।

धार्मिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्र में उपयोग होने वाली अधिकांश वस्तुएँ काठ की ही बनती हैं । यज्ञ के उपकरण, उपादान तथा सामग्री वृक्षों की सहायता से ही उपलब्ध की जाती है । प्राणरक्षक ऑक्सीजन गैस का देना और घातक कार्बन डाइ-ऑक्साइड गैस का शोषण करना वृक्षों का ही पुण्य कार्य है । यदि ऐसा न हो तो पृथ्वी पर प्राणियों का जीवन असम्भव हो जाये । वृक्ष मेघों के बनने और बरसने में किस सीमा तक सहायक होते हैं ? इस सत्य को विज्ञान का बाल-विद्यार्थी तक जानता है । जंगल न केवल बाढ़ रोकने के लिए पुण्य कार्य का सम्पादन करते हैं बल्कि वे धरती के क्षरण तथा मरुवर्धन को भी रोकते हैं । पृथ्वी की उर्वरा शक्ति में वृक्ष अनेक प्रकार से सहायक होते हैं । उनसे उपकारी वृक्षों को पालना, उनकी रक्षा करना तथा उनको लगाना कितना महान् पुण्य हो सकता है और इनका काटना तथा उजाड़ना कितना जघन्य पाप हो सकता है इसको कोई भी आध्यात्मिक उन्नति का आकांक्षी व्यक्ति सहज ही में समझ सकता है । प्राणिमात्र के परमोपकारी वृक्षों को पालपोष तथा आरोपण करके अध्यात्म दिशा में उल्लेखनीय लाभ उठाया जा सकता है ।

पूर्वकाल में गुरु-आश्रम तथा गुरुकुल में वन वृक्षों के बीच ही स्थापित किये जाते थे । विद्यार्थी स्वयं अपने हाथों से वृक्षों को लगाते तथा सींचते थे । उन्हीं के नीचे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बैठकर पढ़ते तथा उन्हीं की छाया में शयन भी करते थे । ऐसे नियम का कारण यही था कि जहाँ इस प्रकार वे प्रकृति के संसर्ग में रहकर मन, बुद्धि तथा आत्मा से शुद्ध रहते थे वहाँ शरीर से स्वस्थ भी रहते थे । वृक्ष साधकों की आध्यात्मिक भावनाएँ जगाने बढ़ाने तथा स्थिर रखने में स्वाभाविक रूप से सहायक होते थे । यही कारण है कि उन दिन वृक्षों के बीच स्थापित गुरुकुलों से पढ़कर निकलने वाले स्नातक एवं आचार्य बड़े ही स्वस्थ, सुन्दर, सबल, विद्वान तथा चरित्रवान होते थे । अरण्य-विद्यालयों में शिक्षित एवं दीक्षित विद्यार्थी काम, क्रोध, मोह, लोभ आदि किसी प्रकार के विकारों से आजीवन परास्त नहीं होते थे । वृक्षों का यह उपयोगी आध्यात्मिक महत्व आज भी कम नहीं है । उनके उन दिव्य गुणों में किसी प्रकार की कमी नहीं आई है । आज भी विद्यालयों, गृहों तथा धार्मिक स्थानों को यथासम्भव हरे-भरे वृक्षों से संकुल रखने का प्रयत्न किया जाता है । कमी केवल यह हो गई है मनुष्य ने वृक्षों के इस आध्यात्मिक महत्व को भुला दिया है । वह उन्हें और अधिक पालने-पोषने तथा लगाने में पुनः प्रवृत हो जाये तो वनस्पति के अधिकाधिक सम्पर्क मात्र से ही वह न जाने कितना आध्यात्मिक लाभ उठा ले ।

फूलों, फलों एवं हरीतिमा से भरी हुई वृक्षावली मनुष्य की सौन्दर्य चेतना को उद्‌बुद्ध करने में सबसे अधिक सफल सहायक है । संसार का सारा सौन्दर्य प्रकृति की सुन्दरता का ही प्रतिबिम्ब है । जिस समय फली-फूली एवं रंग-बिरंगी प्रकृति पर मनुष्य की दृष्टि पड़ती है, उस समय उसकी आत्मा में जो सात्विक सौन्दर्यानुभूति होती है, वह आध्यात्मिक अनुभूति ही होती है । उस समय उसके प्राणों में स्वयं परमात्मा ही सौन्दर्य बोध में प्रबुद्ध हुआ करता है । निःसन्देह यदि मनुष्य की वह सौन्दर्यानुभूति स्थायी हो जाये तो उसकी पावन पुलक उसे जीवनमुक्त ही बना दे । प्राकृतिक सौन्दर्य जहाँ मनुष्य को प्रसन्न बनाता है, वहाँ उसके मन, बुद्धि तथा आत्मा को निर्विकारता भी प्रदान करता है, मनुष्य की यह त्रिविधि निर्विकारता आध्यात्मिक उन्नति की आधारभूत भूमिका है ।

वृक्षों के इसी अनिवर्चनीय महत्व के कारण भारतवर्ष के अध्यात्मप्रणेता ऋषि-मुनियों ने वृक्षारोपण एवं उनके पालन-पोषण को एक धार्मिक पुण्य तथा उनके उन्मूलन एवं विनष्ट करने को भयानक पाप बतलाया है । वृक्षों का महत्व बतलाते हुए विष्णु-स्मृति में वर्णन किया है—

वृक्षारोपयितुर्वृक्षाः परलोके पुत्रा भवन्ति ।

वृक्षप्रदो वृक्षप्रसूनैर्देवान् प्रीणयति फलैश्चातिथीन् छाययाचाभ्यागतान् देवे वर्षन्युदकेन पितृन् ।

पुष्पप्रदानेन श्रीमान् भवति ।

कूपारामतड़ागेषु देवतायतनेषु च ।

पुनः संस्कारकर्त्ता च लभते मौलिकं फलम् ॥

अर्थात्—जो मनुष्य वृक्ष लगाता है, वे वृक्ष परलोक में उसके पुत्र बनकर जन्म लेते हैं । वृक्षों का दान देने वाला उसके फूलों से देवताओं को प्रसन्न करता है । फलों द्वारा अतिथियों को सन्तुष्ट करता है और वर्षा में छाया द्वारा पथिकों को सुख देता है तथा जल द्वारा पितरों को प्रसन्न करता है । पुष्पों फूलों का दान करने वाला श्रीमन्त और कुआँ, तालाब तथा देवस्थानों का संस्कार कराने वाला नया बनवाने के समान पुण्यफल प्राप्त किया करता है ।

इस प्रकार वृक्षारोपण तथा पोषण के आध्यात्मिक महत्व को समझते हुए प्रत्येक धर्मप्रेमी तथा आध्यात्मिक जिज्ञासु को अपने जीवन में अनेक वृक्ष लगाने चाहिये और उन्हें पुत्र की तरह प्रेम से पालन करना चाहिये और जहाँ तक सम्भव हो किसी लाभ, लोभ अथवा आवश्यकता से कोई हरा वृक्ष तो काटना ही नहीं चाहिये । जिनके लिए सम्भव हो खाली जमीन पर वृक्ष लगाकर एक श्रेष्ठ पुण्य परमार्थ उपार्जित करना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चेतना का सहज स्वभाव—स्नेह-सहयोग

सहयोग-सहकार प्रगति का मूल आधार

प्रकृति का प्रत्येक घटक अपने एक निश्चित नियम के अनुसार जन्म लेता है और विकास करता है । यह नियम व्यवस्था किन्हीं विशिष्ट क्षेत्रों के लिए ही लागू नहीं होती बल्कि जहाँ कहीं भी प्रगति, विकास और गतिशीलता दिखाई देती है, वहाँ यही नियम काम करते दिखाई देते हैं ।

समझा जाता है कि मनुष्य ने इस प्रकृति में अन्य सभी प्राणियों से अधिक उन्नति तथा विकास किया है । उस उन्नति और विकास का श्रेय उसकी बुद्धिमत्ता को दिया जाता है । मनुष्य की बुद्धिमत्ता को उसकी प्रगति का आधार मानने में कोई हर्ज भी नहीं है, क्योंकि उसने बुद्धिमत्ता से ही अन्य प्राणियों की तुलना में इतनी अधिक उन्नति की है जिससे सृष्टि का मुकुटमणि बन सकने का श्रेय उसे प्राप्त हो सका । इस मान्यता में यदि कुछ तथ्य है, तो उसमें एक संशोधन यह और करना पड़ेगा कि बुद्धिमत्ता उसे सहकारिता के आधार पर ही उपलब्ध हुई है । क्या मनुष्य ने उन्नति अपनी मस्तिष्कीय विशेषता के कारण की है ? मोटी बुद्धि ही इस मान्यता का अन्धसमर्थन कर सकती है । सूक्ष्म चिन्तन का निष्कर्ष यही होता है कि कोई न कोई आत्मिक सद्गुण ही उसके मस्तिष्क समेत अनेक क्षमताओं को विकसित करने का आधार हो सकता है । महत्त्वपूर्ण प्रगति न तो शरीर संरचना के आधार पर सम्भव होती है और न मस्तिष्कीय तीक्ष्णता पर अवलम्बित रहती है । उसका प्रधान कारण अन्तःकरण के कुछ भावात्मक तत्व ही होते हैं । उन निष्ठाओं की प्रेरणा से इच्छाशक्ति जागती है । सक्रियता एवं तत्परता उत्पन्न होती है, मस्तिष्क तथा शरीर के कलपुर्जे एकजुट होकर काम करते हैं और निष्ठा के अनुरूप दिशा में कदम तेजी से बढ़ाते चले जाते है । व्यक्ति सदा से इसी आधार पर ऊँचे उठते और नीचे गिरते रहे हैं ।

मनुष्य की बुद्धिमत्ता, शारीरिक चेष्टा और प्रयत्न परायणता के मूल में जो अत्यन्त प्रेरक दिव्य प्रवृत्ति झाँकती है उसे सहकारिता कह सकते हैं । वस्तुतः यही मानव प्राणी की सबसे बड़ी विशेषता है । अन्य प्राणियों में यह वृत्ति यत्किंचित्त पाई जाती है, पर प्रायः वह शरीर समीपता तक ही सीमित रहती है । मानसिक आदान-प्रदान कर सकने योग्य उनकी स्थिति नहीं है । कुछ पशु-पक्षी जोड़े बनाकर समूह में साथ-साथ रहने के अभ्यस्त तो होते है, इससे उन्हें सुरक्षा में सहायता मिलती है, कुछ और छोटे-मोटे शारीरिक आदान-प्रदान कर लेते हैं, पर मानसिक और भावात्मक आदान-प्रदान उनसे बन नहीं पड़ता । सहकारिता वृत्ति का सीमित प्रयोग कर सकने के कारण ही अन्य प्राणी सृष्टि के आदि से लेकर अब तक जहाँ के तहाँ पड़े हैं, जबकि मनुष्य उस दिव्य प्रवृत्ति को अधिकाधिक विकसित करते हुए उन्नति के उच्च शिखर तक पहुँच सकने में सफल हो गया ।

दो जड़ पदार्थ अथवा अविकसित प्राणी मिलकर दो की संख्या ही बनाते हैं । दो बैल मिलकर एक ही अपेक्षा दूना वजन भी खींच सकते हैं । एक की अपेक्षा दो रुपये हों तो दूना सामान खरीदा जा सकता है । किन्तु भाव प्रधान मनुष्य प्राणी का जहाँ सघन सहयोग आरम्भ होगा वहाँ यह नियम बदल जाएगा और एक-एक मिलकर ग्यारह की संख्या बन जाएगी । १ और १ के अंक नीचे-ऊपर रहें तो उनका जोड़ २ होगा किन्तु अंकों को बराबर लिख दें तो संख्या ११ बन जाएगी । अंकगणित का यही सिद्धान्त भाव प्रधान मनुष्य पर लागू होता है । दो बुद्धिमान चीते मिलकर वन की सुव्यवस्था बिगाड़ सकते हैं, पर बना नहीं पाते, क्योंकि भावात्मक सहयोग के अभाव में एक-दूसरे को नीचा दिखाने का ताना-बाना बुनने के अतिरिक्त कुछ कर नहीं सकते, एक-दूसरे से आत्मरक्षा करने और आक्रमण का अवसर ढूँढ़ने के अतिरिक्त और वे कुछ सोच ही नहीं सकते । यदि सिंहों में- हाथियों में भावात्मक एकता की- सहकारिता की वृत्ति रही होती और मनुष्य उस दिव्य अनुदान से वंचित रहा होता तो निश्चित ही वे बलिष्ठ प्राणी संसार पर शासन कर रहे होते और मनुष्य उनकी कृपा के लिये लालायित रहता हुआ किसी प्रकार जिन्दगी के दिन पूरे कर रहा होता ।

मानवी विकास के इतिहास पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट है कि आदिमकाल में वह भी अनगढ़ वानरों की तरह-सा पशु मात्र था । उनकी बुद्धि कुछ पैनी तो थी, पर उतने तीखे मस्तिष्क तो अन्य अनेक प्राणियों के भी पाए जाते हैं । चमगादड़, कुत्ता, चींटी, मधुमक्खी, मकड़ी जैसे प्राणियों की इन्द्रिय शक्ति मनुष्य की तुलना में कहीं अधिक विकसित है और ऋतु परिवर्तन जैसी सूक्ष्म सम्भावनाओं को समझने की दृष्टि से कितने ही जीव मनुष्य से आगे हैं । पर वे कोई खास विकास नहीं कर सके जबकि मनुष्य दिन-दूनी रात चौगुनी प्रगति करता चला जाता है । तथ्यों की गहराई में प्रवेश करते हुए मनुष्य की एक ही सर्वोपरि विशेषता उभरकर आती है—सहकारिता की प्रवृत्ति । एक-दूसरे के प्रति आत्मीयता की, ममता की, सहायता की जो सद्भावनाएँ उमड़ती हैं, उसके समन्वय को सहकारिता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कहते हैं । उसमें आदान-प्रदान का, परस्पर मिल-जुलकर रहने का, मिल-बाँटकर खाने का व्यवहार अनिवार्य रूप से जुड़ा रहता है । यही है मानवी प्रगति का मूलमन्त्र । जहाँ भी इस प्रवृत्ति का जितना अधिक उपयोग हुआ है, वहाँ उसी अनुपात से सर्वतोमुखी प्रगति की गति तीव्र हुई है । जहाँ इसकी जितनी न्यूनता रही है वहाँ उतनी ही मात्रा में जड़ता छाई रही है । संसार के अनेक क्षेत्रों में मनुष्य अभी भी आदिम अवस्था में पाए जाते हैं, उनकी अवगति में भावात्मक सहकारिता की न्यूनता ही प्रधान अवरोध बनकर खड़ी दृष्टिगोचर होती है ।

आदिमकाल में मनुष्य भी बन्दरों की तरह चीं-चीं बोलता था । उसने अपने मुँह से निकलने वाले कई शब्दों को अलग किया और हर उच्चारण के साथ एक जानकारी जोड़ी । यह उसकी बुद्धिमत्ता कही जा सकती है । इसमें चार चाँद तब लगे जब उसने उच्चारण के साथ जुड़े हुए संकेतों की जानकारी दूसरे साथियों को कराई । यहाँ से शब्द विज्ञान का प्रवाह चल पड़ा । पीढ़ियों तक-सहस्राब्दियों तक इस दिशा में प्रगति होती रही और आज हम उच्चारण क्षमता का पूरा-पूरा लाभ उठाते हैं । आरम्भिक लिपि भी आड़ी-टेढ़ी लकीरों के साथ अमुक जानकारियाँ जोड़ने के रूप में आरम्भ हुई, पीछे अक्षरों का, स्वर-व्यंजनों का अंक विद्या तथा रेखागणित का आविर्भाव हुआ और क्रमशः सर्वांगपूर्ण शिक्षा-विज्ञान बनकर खड़ा हो गया । आज हमारी लेखनी और वाणी इतनी विकसित है कि उसके सहारे अति महत्त्वपूर्ण जानकारियों का विश्व के एक कोने से दूसरे कोने तक आदान-प्रदान अति सरल हो गया है ।

कृषि, पशुपालन, चिकित्सा, विज्ञान, शिक्षा, शिल्पकला, व्यवसाय, उद्योग, परिवार, समाज, शासन आदि ज्ञान-विज्ञान की अगणित उपलब्धियाँ हमारे सामने प्रस्तुत हैं और हम देवोपम साधन सम्पन्नता का उपभोग कर रहे हैं । यह सारा वैभव-चमत्कार सहकारिता की सत्प्रवृत्ति का है । एक आदमी दूसरे के साथ सघन आत्मीयता स्थापित न करता, दूसरों के सुख-दुःख में भागीदारी करने में उत्साह न रहता तो सहयोग की इच्छा ही न उठती और आदान-प्रदान का सिलसिला न चलता । इस स्थिति से उस प्रगति की कल्पना भी नहीं की जा सकती है, जिसके कारण मनुष्य जीवन को सुरदुर्लभ विभूतियों से भरा-पूरा माना जाता है । यथार्थ यह है कि सहयोग और उत्कर्ष एक-दूसरे पर पूरी तरह निर्भर हैं । एक के बिना दूसरे की न आशा की जा सकती है और न सम्भावना ही बनती है ।

एकाकी मनुष्य जीवन भर रह सकता है । उल्लास एवं उत्कर्ष के लिए उसे साथी ढूँढ़ने पड़ते हैं और समूह में रहने की व्यवस्था जुटानी पड़ती है; इसके अतिरिक्त स्नेह, सद्भावना, आत्मीयता एवं घनिष्टता के इतने गहरे पुट लगाने पड़ते हैं कि एक-दूसरे के लिये तत्पर रहें । दूसरे के दुःख उत्सर्ग हेतु बँटाने और अपने सुख को दे डालने में प्रसन्नता अनुभव करें । ऐसी स्थिति जो जितनी अधिक और जितने अच्छे स्तर की बना सकता है, वह उतना ही सुखी, समुन्नत एवं सुसंस्कृत पाया जाता है । अनेकानेक सद्गुण इसी सहयोग रूपी कल्पवृक्ष के पत्र-पल्लव समझे जा सकते हैं, जिनका जितना ध्यान इस प्रवृत्ति को विकसित करने वाले आधार खड़े करने की ओर है वे अपनी, अपने सम्पर्क परिकर की उतनी ही महत्त्वपूर्ण सेवा कर रहे होते हैं ।

मनुष्य जन्मजात रूप से बुद्धिमान नहीं होता । पशुओं के बच्चे बिना सिखाये माता के थन और अपनी खुराक आप ढूँढ़ लेते हैं, जबकि मनुष्य का बच्चा कई वर्ष का होने तक पेट भरने तक में पराश्रित रहता है । भेड़ियों की माँद में पाया गया तीन वर्षीय रामू भेड़ियों की तरह ही चलता, बोलता, खाता, सोता । शिकारियों ने उसे पकड़ा और लखनऊ मेडीकल कॉलेज में उसके सुधार का उपक्रम हुआ तो वह भी मनुष्य सभ्यता को बहुत थोड़ा ही अपना सका । यदि जन्म-जात बुद्धिमत्ता मनुष्य को मिली होती तो घने जंगलों में रहने वाले पिछड़े हुए आदिवासी अपनी सहजवृत्ति से अन्य लोगों की तरह सभ्य हो गये होते । वस्तुतः मनुष्य को बुद्धिमत्ता सहित जितनी भी उपलब्धियाँ मिली हैं उन सबकी जननी सहकार प्रवृत्ति ही है ।

धर्म और अध्यात्म का सारा कलेवर वैयक्तिक और सामाजिक नैतिकता को अधिकाधिक परिष्कृत करने के लिए खड़ा किया गया है । नीतिशास्त्र की मर्यादाओं में बँधकर ही वैयक्तिक और सामूहिक सुख-शान्ति का प्रगति व समृद्धि का पथ-प्रशस्त होता है, यह तथ्य सर्वमान्य है । आचार संहिता में व्यतिरेक पड़ते हैं तो सर्वत्र असुरक्षा, आशंका और आतंक का वातावरण छा जाता है । इतना समझ लेने के बाद गहराई की एक सीढ़ी और उतरा जाय तो पता चलेगा कि यह सब कुछ मात्र सहयोग की वृत्ति को सुदृढ़ बनाने और उसके मार्ग में आने वाली बाधाओं को हटाने भर के लिए है । धर्मशास्त्र, अध्यात्मशास्त्र, आचारशास्त्र, समाजशास्त्र, दर्शनशास्त्र आदि मानवी चेतना को प्रभावित करने वाली सभी चिन्तन धाराएँ मिल-जुलकर एक ही घेराबन्दी करती हैं कि मनुष्य पारस्परिक सहयोग की दिशा में अधिक उत्साह के साथ अग्रसर हो और इस मार्ग में जितने भी व्यवधान आते हैं, उन्हें हटाने के लिये पूरी तरह सचेष्ट रहे ।

सारा विश्व एक शरीर

मनुष्य ही क्यों, समस्त विश्व की अन्य इकाइयाँ भी आपस में और एक-दूसरे से सहयोग-सहकार बरत कर ही अपने अस्तित्व की रक्षा तथा उसका विकास करती हैं। एक शरीर में विद्यमान भिन्न-भिन्न अंगों का महत्त्व और

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयोगिता उनके सामर्थ्यगत स्वरूप के कारण है । अँगुली, हथेली, हाथ, पैर, पेट, छाती, गर्दन, सिर आदि अंग अलग-अलग कट-पिटकर बेजान अंग ही रह जायेंगे उनसे न कोई काम किया जा सकता है तथा न उनकी कोई महत्ता सिद्ध होती है ।

इन तमाम अंगों की महत्ता तभी है जब तक कि वह शरीर में जुड़े रहें । समस्त विश्व को यदि एक शरीर कहा जाय तो उसमें मनुष्य का स्थान एक अंगुली के बराबर ही समझा जा सकता है । अंगुली का महत्व तभी तक है जब तक कि वह शरीर के साथ जुड़ी हुई है ।

असंख्य आत्माओं में जममगाने वाली चेतना की ज्योति का केन्द्र एक ही है । पानी की प्रत्येक लहर पर एक सूर्य चमकता है, पर वस्तुत: एक ही सूर्य की प्रतिच्छवियाँ हैं । समुद्र की हर लहर का अस्तित्व भिन्न दिखाई पड़ने पर भी वस्तुत: विशाल सागर की हिलोरें ही हैं । इस समस्त विश्व में केवल एक ही समष्टि आत्मा है— जिसे परमात्मा के नाम से पुकारते हैं । सबमें वही प्रतिभाषित हो रहा है । माला की मणियों के मध्य पिरोये हुए धागे की तरह प्रथक दीखने वाले प्राणियों को परस्पर एक सूत्र में बाँधे हुए हैं ।

इस बन्धन में बँधे रहना ही श्रेयस्कर है समग्र का परित्याग कर जब हम पृथक होते हैं, अपने अहंकार की पूर्ति के लिए अपना वर्चस्व प्रकट करने और अलग रहकर अधिक सुविधा प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं तब हम भारी भूल करते हैं । पाते कुछ नहीं खोते बहुत हैं । समग्रता के वैभव से लाभान्वित होने की सुविधा खो बैठते हैं और एकाकीपन के साथ मिलने वाली तुच्छता- हर दृष्टि से अपर्याप्त सिद्ध होती है ।

अंगुली हाथ से अलग कट कर रहने की तैयारी करते समय यह सोचती है कि मैं क्यों सारे दिन हाथ का आदाब बजाऊँ, क्यों उसके इशारे पर नाचूँ । इसमें मेरा क्या लाभ ? मेरे परिश्रम और वर्चस्व का लाभ मुझे क्यों न मिले ? यह अलग रह कर ही हो सकता है । इसलिए अलग ही रहना चाहिए । अपने श्रम और उपार्जन का लाभ स्वयं ही उठाना चाहिए । यह सोच कर हाथ से कट कर अलग रहने वाली अंगुली कुछ ही समय में देखती है कि उसका अनुमान गलत था । शरीर के साथ जुड़े रहने पर उसे जो जीवन- दाता रक्त मिलता था वह मिलना बन्द हो गया । उसके अभाव में वह सूख कर सड़ गई । उस सड़े टुकड़े को छूने से भी लोगों ने परहेज किया जबकि हाथ के साथ जुड़े रहने पर वह भगवान का पूजन किया करती थी । हाथ मिलाते समय बड़ों के स्पर्श का आनन्द लेती थी । महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखती थी । बड़े काम करने का श्रेय प्राप्त करती थी । पृथक होने के साथ-साथ वह सारी सुविधायें भी समाप्त हो गईं । अंगुली नफे में नहीं घाटे रही ।

फूल का अपना अलग ही महत्व है पर वह नहीं जो माला में गुँथे रहने पर होता है । एकाकी फूल किसी महापुरुष या देवता के गले में नहीं लिपट सकता । यह आकांक्षा तो सूत्रात्मा को आत्मसमर्पण कर माला में गुँथने के बाद ही पूरी हो सकती है । व्यक्तिवादी, एकाकी स्वार्थी-संकीर्ण मनुष्य समूहगत चेतना से अपने को अलग रखने की सोच सकता है । अपने ही लाभ में निमग्न रह सकता है, दूसरों की उपेक्षा कर सकता है, उन्हें क्षति पहुँचा सकता है और इस प्रकार अपने उपार्जन को, शोषणात्मक उपलब्धियों को अपने लिए अधिक मात्रा में संग्रह कर सकता है, पर अन्तत: यह दृष्टिकोण अदूरदर्शितापूर्ण सिद्ध होता है । पृथकता के साथ जुड़ी हुई दुर्बलता उसे उन सब लाभों से वंचित कर देती है, जो समूह का अंग बनकर रहने से ही मिल सकते थे ।

समुद्र की हर लहर अपना सरंजाम अलग खड़ा करे तो वे तनिक जल के रूप में बिखर जाएँगी और ज्वार-भाटे के समय जो उनका गौरव देखकर लोग आश्चर्यचकित रह जाते थे, उससे उन्हें वंचित ही रहना पड़ेगा । नौकाओं को पलट देने की शक्ति-गरजती हुई ध्वनि फिर उनमें कहाँ रहेगी । किसी गड्ढे में पड़ी सूख जायेंगी । अपने स्वरूप को भी स्थिर न रख सकेंगी । सूखने के बाद उनका अस्तित्व, उनकी सरसता की चर्चा का अस्तित्व भी मिटा देगा । वहाँ सूखा नमक भर श्मशान की राख की तरह पड़ा होगा ? लहरें समुद्र से पृथक अपने अस्तित्व का स्वतंत्र निर्माण करने की एषणा महत्वाकांक्षा में, आवेश में भटकने का ही उपक्रम करती हैं । लाभ के लोभ में घाटा ही वरण करती हैं ।

ईंटों के समन्वय से भवन बनते हैं । बूँदों के मिश्रण से बादल बनते हैं । परमाणुओं का सहयोग पदार्थ की रचना करता है । अवयवों का संगठित स्वरूप शरीर है । पुर्जों की घनिष्टता मशीन के रूप में परिणत होती है । पंचतत्वों से मिलकर यह विश्व सृजा है । पंचप्राण इस काया को जीवित रख रहे हैं । दलबद्ध योद्धा ही समर्थ सेना है । कर्मचारियों का गठित स्वरूप ही सरकार चलाता है । यदि इन संघटकों में पृथकतावादी प्रवृत्ति पनपे और डेढ़ चावल की खिचड़ी अलग-अलग पकने लगे तो जो कुछ महान दिखाई पड़ता है तुच्छ में बदल जाएगा ।

तुच्छता अपना अस्तित्व तक बनाए रख सकने में असमर्थ है । प्रगति भी पारस्परिक सहयोग पर निर्भर है । दूसरों को पीछे छोड़कर एकाकी आगे बढ़ जाने की बात सोचने वाले-उन संकटों से अपरिचित रहते हैं, जो एकाकी के अस्तित्व को ही संकट में डाल सकते हैं । अँगुली हाथ से कटकर अलग से अपने बलबूते पर प्रगति करने की कल्पना भर सकती है । व्यावहारिक क्षेत्र में उतरने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर कडुवी सच्चाई सामने आती है, पृथकता लाभदायक दीखती भर है वस्तुत: लाभदायक तो सामूहिकता ही है ।

एक ही आत्मा सबमें समाई हुई है । इस तथ्य को गम्भीरतापूर्वक समझना चाहिये और एक ही सूर्य की असंख्य लहरों पर चमकने के पीछे सन्निहित वस्तुस्थिति पर ध्यान देना चाहिये । हम सब परस्पर सघनतापूर्वक एक-दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं । मानवीय प्रगति का गौरवशाली इतिहास उसकी सामूहिक प्रवृत्ति का ही सत्परिणाम है । बुद्धि का विकास भी सामूहिक चेतना के फलस्वरूप ही सम्भव हुआ है । बुद्धि ने सामूहिकता विकसित नहीं की, सहयोग की वृत्ति ने बुद्धि का विकास सम्भव किया है ।

सामूहिक का अर्थ है—सहयोग । यों उसका मखौल तो कागजी संस्थाएँ खड़ी करके भी लोग उडाते रहते हैं, उससे विनोद-कौतूहल पर होता है, कोई बड़ा प्रयोजन सिद्ध नहीं होता । शक्ति तो सहयोग के बल पर उत्पन्न होती है । बिजली के ठण्डे-गर्म तार अलग-अलग पड़े रहें तो वे व्यर्थ हैं, पर जब वे मिल जाते हैं, तो 'करेंट' चालू हो जाता है । एकाकी व्यक्ति की अपनी थोड़ी-सी सीमा-मर्यादा है, अपने बलबूते पर भी कुछ तो ही सकता है, पर वह होगा नगण्य ही । बड़ी सम्भावना तो सम्मिलित शक्ति के द्वारा ही मूर्तिमान होती है । एक-एक सैनिक अलग-अलग फिरे तो उनके छुट-पुट कार्य एक सुगठित सैन्य टोली जैसे नहीं हो सकते ।

विकास ही नहीं आनन्द का भी आधार

कई तरह की योग्यताएँ मिल-जुलकर अपूर्णता को पूर्ण करती हैं । परिवार को ही लें उसमें कई स्तर के कई विशेषताओं के मनुष्य मिल-जुलकर रहते हैं तो एक अनोखे आनन्द का सृजन करते हैं । पति-पत्नी की योग्यताएँ भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं, जब वे मिल-जुलकर एक हो जाते हैं तो दोनों को ही लाभ होता है, दोनों ही अपने अभावों की पूर्ति करते हैं । वृद्धों का अनुभव, बालकों का विनोद, उपार्जनकर्ताओं का धन आदि मिलकर ऐसा सन्तुलन बनता है, जिसमें परिवार के सभी सदस्यों का हित-साधन होता है । सभी एक-दूसरे के सहयोग का लाभ उठाते हुए आनन्द में रहते और उत्साह पाते हैं । यदि परिवार के सदस्यों में सहयोग न हो मात्र एक सराय में रहने वाले अजनबी मुसाफिरों की तरह निर्वाह करें, तो उनका असहयोग और मनोमालिन्य उस समूह को आनन्द रहित, नीरस और समस्याओं से भरा हुआ बना देंगे और उसका बिखर जाना ही श्रेयस्कर प्रतीत होगा ।

पारस्परिक सहयोग की अविच्छिन्न प्रक्रिया ही विकास का ही नहीं आनन्द का भी आधार है । भौतिक जगत में पग-पग पर इस तथ्य को अनुभव किया जा सकता है । परमाणु जिसे सबसे छोटी इकाई माना जाता है एकाकी नहीं है वरन् न्यूट्रॉन, प्रोटॉन आदि अपने सहयोगियों के आधार पर ही सृष्टि का क्रिया-कलाप संचालित किए रह सकने में समर्थ होता है । आकाश में ग्रह, नक्षत्र पारस्परिक आकर्षण में जकड़े रहने के कारण ही आकाश में अधर लटके हुए हैं । पंच तत्वों का सम्मिश्रण यदि न हो तो इस विश्व का अस्तित्व ही प्रकाश में न आये । हर कोई जानता है कि विवाह बन्धन के साथ कितने उत्तरदायित्व, बन्धन और कर्त्तव्य जुड़े हुए हैं । जिन्हें निवाहते- निवाहते आदमी का कचूमर निकल जाता है । नारी को प्रसव की विकट पीड़ा, शिशु-पालन का कठिनतम कार्य और पति तथा ससुराल वालों को प्रसन्न रखने में लगभग आत्मसमर्पण जैसी तपस्या करनी पड़ती है । नर को भी कम भार- वहन नहीं करना पड़ता । इन कठिनाइयों से परिचित होते हुए भी हर कोई विवाह की आशा लगाए बैठा रहता है और वैसा अवसर आते ही हर्षोल्लास अनुभव करता है । जिन दाम्पत्य जीवन में सघन आत्मीयता विकसित होती है, उन्हें वहाँ पारस्परिक सान्निध्य स्वर्गोपम प्रतीत होता है । अगणित कठिनाइयों को वहन करते हुए हर घड़ी आनन्द उमड़ता रहता है । यह सब देखते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि व्यक्तियों की आत्मिक घनिष्टता कितनी तृप्ति और कितनी शांति प्रदान करती है ।

पति-पत्नी का तो उदाहरण मात्र दिया गया है । रिश्ते कुछ भी क्यों न हों- पुरुष-पुरुष और नारी-नारी के बीच भी ऐसी आन्तरिक सघनता हो सकती है । उस मित्रता को किसी भी रिश्ते का नाम दिया जा सकता है । यही 'प्रेम' है । प्रकृति के अनुरूप व्यक्तियों से आरम्भ होकर यह मनुष्य समाज, प्राणिमात्र और तदन्तर विश्व-ब्रह्माण्ड में संव्याप्त जड़-चेतन में प्रेम फैलता, विकसित होता चला जाता है । आनन्द का उद्भव और विस्तार यहीं से होता है । अन्त:-करण की कोमलता, मृदुलता, सरलता और सरसता ही वस्तुत: मानव जीवन की सबसे बड़ी सम्पदा है, जो स्नेहसिक्त है; जो प्रेमी है, जो सहृदय और उदार है, उसे ही आत्मिक विभूतियों से सुसम्पन्न सिद्ध पुरुष कहना चाहिये । ऐसा व्यक्ति ही महामानव, देवदूत और दिव्य-सत्ता सम्पन्न कहलाता है । आत्मा और परमात्मा का मिलन-संयोग जिसे प्राप्त हो गया, समझना चाहिये कि उसने पूर्णता का लक्ष्य प्राप्त कर लिया । अभाव तो एकाकीपन में ही है ।

माता के उदर में रखे बिना, अपना रक्त, माँस दिये बिना, दूध पिलाये और पालन किये बिना भ्रूण की जीवन प्रक्रिया गतिशील नहीं हो सकती । बालक भोजन, वस्त्र आदि की सुविधाएँ स्वयं उपार्जित नहीं कर सकता, उसे इसके लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभिभावकों की सहायता अभीष्ट होती है । छात्र अपने आप पढ़ तो सकता है पर उसे पुस्तक,फीस आदि का खर्च पिता से और शिक्षण-सहयोग अध्यापक से प्राप्त करना पड़ता है इसके बिना शिक्षाक्रम मात्र एकाकी पुरुषार्थ से नहीं चल सकता । माता-पिता अपनी सन्तान का पालन-पोषण करते हैं, वे बच्चे बड़े हो जाने पर अपने बच्चों के लालन-पालन की जिम्मेदारी उठाते हैं । यही क्रमानुगत परम्परा चलती रहती है । अध्यात्म मार्ग की प्रगति प्रक्रिया भी इसी प्रकार चलती है । गुरु अपने शिष्य को अपनी तप-पूँजी प्रदान करता है, तदुपरान्त शिष्य भी उसे अपने लिए दाबकर नहीं बैठ जाता वरन् उस परम्परा को अग्रगामी रखते हुए अपने छात्रों की सहायता करता है ।

प्रकृति के विभिन्न क्रिया-कलापों को देखें तो उनमें भी सहयोग और सहकार के आधार पर ही सामंजस्य स्थिर हुआ दिखाई देता है । समुद्र बादलों को देता है-बादल जमीन को देता है—जमीन नदियों के द्वारा उस जल को पुनः समुद्र में पहुँचा देती है । यही काम विश्व की स्थिरता और हरीतिमा, शांति और शीतलता का आधार है ।

संघर्ष नहीं सहयोग ही आगे बढ़ाता है

वर्तमान मनुष्य की सभी आवश्यकताएँ, आकांक्षाएँ यह अपेक्षा करती हैं कि दूसरों का समुचित सहयोग प्राप्त हो । यदि वह उपलब्ध न होगा तो कोई कितना ही बुद्धिमान या साधनसम्पन्न क्यों न हो एक कोने में ही पड़ा सड़ता रहेगा । संघशक्ति को इस युग की सबसे बड़ी शक्ति माना गया है । पारस्परिक सहयोग के आधार पर मिल-जुलकर किये गये काम चाहे वैयक्तिक लाभ के हों अथवा सामूहिक लाभ के क्रमशः सफल होते चले जाएँगे ।

इसके विपरीत जहाँ सहकारिता का, सहयोग-सद्भाव का अभाव होगा वहाँ प्रगति का चक्र उतना ही लड़खड़ाता जाएगा । दुर्भाग्य से इन दिनों यह समझा जाने लगा है कि संघर्ष के द्वारा ही अभीष्ट लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है । उपयोगिता पर आधारित अपनी आवश्यकताओं, लक्ष्यों को प्राप्त करने की मान्यता के कारण संघर्ष को इन दिनों बहुत महत्त्व दिया जाता है । लड़-झगड़कर अपना अभीष्ट लाभ प्राप्त करने की बात सोची जाती है । गुण्डागर्दी और आतंकवाद के आधार पर जल्दी अधिक लाभ मिलने की बात सूझती है और लड़ाकूपन का परिचय देकर शूर-वीर कहलाने की इच्छा रहती है । यहाँ ध्यान रखने की बात इतनी ही है कि लड़ाई अपवाद है आवश्यकता नहीं । उसकी उपयोगिता उतनी ही है जितनी आटे में नमक । अवांछनीय परिस्थितियों से निपटने के लिए उसे कभी-कभी ही काम में लाने की आवश्यकता पड़ती है और पड़नी भी चाहिए । यदि यह मात्रा बढ़ेगी तो यह संघर्षशीलता सामने वाले की अपेक्षा आक्रमणकर्त्ता का ही अधिक अहित करेगी ।

वस्तुतः संघर्ष एक दुर्घटना मात्र है, जो अनावश्यक विकृतियाँ अथवा अवांछनीय असावधानियाँ एकत्रित होने के फलस्वरूप ही प्रस्तुत होती है । अनौचित्य की प्रतिक्रिया को संघर्ष कहा जा सकता है । यह प्रकृति नहीं विकृति है । सृष्टि संचालन प्रकृति करती है, विकृतियाँ तो केवल अवरोध उत्पन्न करती हैं । इसलिए उन्हें हटाने के लिए संघर्ष की आवश्यकता पड़ती है । इन्हें अपवाद कह सकते हैं । अवरोध सामान्य प्रवाह में व्यतिरेक उत्पन्न होने का नाम है । व्यतिरेक सृजनात्मक उद्देश्य पूरा नहीं करते, उनसे सतर्कता की तीक्ष्णता भर पैदा होती है । शान चढ़ाने वाला पत्थर तलवार का प्रयोजन पूरा नहीं करता । तलवार तो मजबूत लोहे से बनती है । पत्थर तो धार तेज के काम भर आता है । संघर्ष को अधिक से अधिक तेज करने वाले पत्थर की संज्ञा दी जा सकती है ।

सहयोग वह तथ्य है जिस पर प्रगति की समस्त सम्भावनाएँ आधारित हैं । मानव जाति की प्रगति का इतिहास एक शब्द में कहना हो तो उसे पारस्परिक सहयोग ही कह सकते हैं । दुर्बलकाय एक बन्दर वंशीय नगण्य से प्राणी को सृष्टि का मुकुट मणि बना देने का श्रेय उसकी सहकारी मनोवृत्ति को ही दिया जा सकता है । यों लोगों को यह कहते भी सुना जाता है कि मनुष्य की बुद्धिमत्ता, मननशीलता ने उसे प्रगति के पथ पर आगे बढ़ाया है, पर यह बात सही नहीं है । तथ्य यह है कि सहयोग के आधार पर एक-दूसरे के सहयोग के साथ घनिष्टता स्थापित करते हुए पारस्परिक आदान-प्रदान का क्रम चला और उससे मस्तिष्कीय विकास का द्वार खुला ।

बोलना, सोचना, पढ़ना, लिखना, कृषि, पशुपालन, अग्नि-उपयोग, उपकरण-निर्माण, वस्त्राच्छादन आदि उपलब्धियों को प्रगति का आरम्भिक चरण माना जाता है, इन्हीं सीढ़ियों पर चढ़ते हुए मनुष्य ने आगे बढ़ने और ऊँचे उठने की राह पाई है । यह सब किसी एक मनुष्य के प्रयास का फल नहीं है । इसमें सहस्रों वर्ष लगे हैं और एक के अनुभव का दूसरे ने लाभ उठाया है । एक की उपलब्धियाँ दूसरे ने सीखी हैं और जो मार्ग मिला उन पर क्रमशः आगे कदम बढ़ाया है । आज हम जहाँ हैं वहाँ तक पहुँचने की लम्बी मंजिल इसी प्रकार पार हुई है ।

परिवार निर्माण की सारी आधारशिला पारस्परिक सहयोग पर रखी हुई है । पति-पत्नी के बीच, सन्तान अभिभावक के बीच, भाई-बहिन के बीच जो घनिष्टता पाई जाती है, उसमें स्वार्थ-साधन की मात्रा स्वल्प और एक-दूसरे के साथ उदार सहयोग करने की मात्रा अधिक रहती है । यदि स्वार्थ सिद्ध की ही प्रधानता रहती तो वे सम्बन्ध क्षणिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहते, तात्कालिक स्वार्थ सिद्ध होते ही बिखर जाते । निम्न कोटि के प्राणियों में ऐसा ही होता है । उनका पारिवारिक सहयोग अत्यन्त स्वल्प रहता है । कामोन्माद के कारण नर-मादा कुछ ही क्षणों के लिए पति-पत्नी बनते हैं और वह आवेश उतरते ही दोनों अपरिचित बन जाते हैं । तनिक-सा स्वार्थ व्यवधान पड़ने पर ही इस क्षण के पति-पत्नी अगले ही क्षण एक-दूसरे पर प्राणघातक आक्रमण करने में नहीं चूकते । सन्तान को मादा सँभालती है और वह भी तब तक जब तक वह अपने पैरों खड़ा नहीं हो जाता है । इसके बाद बच्चा स्वावलम्बी हो जाता है तो न माता को सन्तान से स्नेह रहता है और न सन्तान माता से कोई रिश्ता रखती है । बाप सन्तान पालन में यत्किंचित ही सहयोग देता है । माता को प्रकृति ने यह क्षणिक वात्सल्य इसलिए दिया है कि उस प्राणी का वंश नष्ट न होने पावे । विवेकपूर्ण सहयोग के आधार पर इन प्राणियों का परिवार नहीं बनता । यदि बना होता तो उसमें स्थिरता और सघनता का क्रम आगे भी चलता रहता । पर वैसा प्राय: देखने में नहीं आता इसलिये कहा गया है कि कुछ प्राणी सहयोग भावना से युक्त भी पाए जाते हैं और उससे अपनी सुरक्षा का लाभ लेते हैं किन्तु इन्हें अपवाद ही कहना चाहिये ।

मनुष्य की विशेषता उसकी सहयोगपरक सत्प्रवृत्ति ही है । उसी ने परिवार बसाये । उनमें सरसता और उदारता का समावेश किया । इससे कुटुम्ब का छोटा-बड़ा हर सदस्य लाभान्वित हुआ । यह प्रवृत्ति आगे चलकर सामाजिकता के रूप में विकसित हुई । समाज व्यवस्था, शासन व्यवस्था की संरचना, परिवार पद्धति की आचार- संहिता के आधार पर ही बन सकी है । अर्थतन्त्र का पूरा ढाँचा सहकारिता ही है । वस्तुओं का उत्पादन और विनिमय वितरण क्रम ही धीरे-धीरे वर्तमान अर्थव्यवस्था तक बढ़ता आया है । शिल्प, चिकित्सा, शिक्षा, कला-कौशल और विज्ञान के चरण यकायक नहीं उठे हैं । अमुक आविष्कार का श्रेय अमुक व्यक्ति को मिला यह दूसरी बात है, पर वस्तुत: सफल आविष्कार की पृष्ठभूमि बहुत पहले से ही बनने लगी थी और उसमें से अनेकों का चिन्तन एवं प्रयास जुड़ते हुए वह आधार बन सका था, जिसके सहारे उसे अन्तिम रूप से उद्घोषित किया गया । धर्म, दर्शन, अध्यात्म जैसी उच्चस्तरीय भावनात्मक चेतनाएँ किसी एक व्यक्ति की कृति नहीं है । इनके क्रमिक विकास में अनेकानेक पीढ़ियों की सहस्राब्दियाँ नियोजित हुई हैं । यह सब सहयोग का ही परिणाम है ।

संघर्ष और विघटन से अंतत: विनाश

यदि पिछली पीढ़ी वाले अपनी ज्ञान सम्पदा अगली पीढ़ी को सौंप न जाते तो ज्ञान और सभ्यता का विकास वर्तमान शिखर को छू नहीं सकता था, क्योंकि संघर्ष दो व्यक्तियों-घटकों के आपसी सम्बन्ध सूत्रों को तोड़ता और उन्हें दूर हटाता है । इस विघटन के पीछे सर्वनाश ही जुड़ा रहता है, जबकि जीवन का उत्कर्ष और सौन्दर्य का आधार संगठन-सहयोग की दिव्य प्रवृत्तियों से जुड़ा है । छोटे-छोटे जीवकोश से मिलकर यह शरीर बना है और नगण्य जितने नन्हें परमाणुओं का एकत्रीकरण विभिन्न वस्तुओं की संरचना कर सकने में समर्थ हुआ है ।

ब्रह्माण्ड के ग्रह-नक्षत्र और उपग्रह परस्पर मिल-जुलकर ही इस अनन्त अन्तरिक्ष में अपनी सत्ता बनाए हुए हैं, यदि उनका विघटन हो जाए- एकाकी रहने की स्थिति आ जाये तो पारस्परिक आदान-प्रदान के आधार पर खड़ा हुआ संसार का सारा ढाँचा ही चरमरा जाय । फिर ग्रह-नक्षत्रों की वह स्थिति न रहेगी जो आज है । एकाकी भटकने वाले उल्का पिण्ड अपनी सीमित शक्ति, सीमित स्थिति एवं सीमित कक्षा में किसी प्रकार जीवित रह भी सकें तो भी उनकी सारी विशेषता तो नष्ट हो ही जायेगी । वे मृतक पिण्ड मात्र बनकर रह जाएँगे । पारस्परिक आकर्षण की सघन श्रंखला में बँधकर ही वे अपनी धुरी और अपनी कक्षा में भ्रमण कर रहे हैं । उनकी विशेषताओं का विनिमय ही उनमें हलचलें बनाए हुए है, अन्यथा वे हर दृष्टि से स्तब्ध हो जाएँगे, उनका सारा पदार्थ अनन्त अन्तरिक्ष में धूल बनकर बिखर जाएगा ।

जीवाणुओं का विघटन ही मृत्यु है । जब तक शरीर के यह छोटे घटक मिल-जुलकर काम करते हैं—एक-दूसरे के पूरक एवं सहयोगी बनकर रहते हैं, तभी तक जीवन की सत्ता है । विघटन आरम्भ हो तो उसका परिणाम मृत्यु के रूप में सामने आ खडा होगा । पदार्थ कोई भी क्यों न हो परमाणुओं की अमुक स्थिति के ऊपर ही उनका अस्तित्व निर्भर है । संगठन क्रम में अव्यवस्था उत्पन्न होते ही वस्तुएँ सड़ने-टूटने या नष्ट होने लगती हैं, उनका स्वरूप देखते-देखते विकृत हो जाता है ।

मनुष्य समाज की विकासोन्मुख स्थिति का एकमात्र आधार संगठन है । दाम्पत्य-जीवन में दो व्यक्तियों का सघन सहयोग कुटुम्ब का निर्माण करता है । मिल-जुलकर कई छोटे-बड़े व्यक्ति साथ-साथ रहें, इसी का नाम तो परिवार है । परिवारों में एक-दूसरे के साथ सहयोग करना और पारस्परिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक आदान-प्रदान करना— यही है समाज में विविध-विधि क्रिया-कलापों के संचालन की धुरी । सारा अर्थतन्त्र इसी आधार पर खड़ा हुआ है । उत्पादन, वितरण और विनिमय की पद्धति अपनाकर ही अनेकानेक उद्योगों का आविर्भाव हुआ है ।

समाज के नियमोपनियम पालन करने की प्रवृत्ति ने स्थिरता एवं सुव्यवस्था को जन्म दिया है । भाषा, कला,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संस्कृति, धर्म, अध्यात्म, शिक्षा, शासन, न्याय, विज्ञान, शिल्प, उद्योग, चिकित्सा, यातायात आदि उस संसार को सुविकसित बनाने वाली स्थापनाएँ ही मानवी प्रगति की आधारशिलाएँ हैं । इनका आविष्कार और विकास तभी सम्भव हुआ जब मनुष्यों ने परस्पर मिल-जुलकर इस दिशा में अनवरत् प्रयास करने का संकल्प किया और अपनी उपलब्धियों का लाभ अपने सहकालीन तथा उत्तराधिकारी अन्यान्य व्यक्तियों के हाथ में थमाया । यदि यह सम्भव न होता तो जिस बुद्धिमत्ता पर गर्व किया जाता है उसे प्राप्त कर सकना मनुष्य के लिए कदापि सम्भव न हुआ होता । अविकसित स्थिति में वन्य पशुओं की स्थिति में ही हमें रहना पड़ता यदि सहकारिता की प्रवृत्ति का दैवी वरदान साथ लेकर मानव प्राणी जन्मा न होता ।

जो जातियाँ, जो देश, जो समाज, जो परिवार, जो वर्ग जिस हद तक संगठित होते हैं वे उसी अनुपात से समर्थ बनते, सफल होते और प्रगति करते देखे जाते हैं, प्रसन्न भी वे ही रहते हैं और श्रेय-सम्मान भी उन्हीं को मिलता है । एकाकी व्यक्ति कितना ही समर्थ या सुयोग्य क्यों न हो आखिर रहेगा तो एक ही । एक की क्षमता निश्चित रूप से स्वल्प होती है । मेल-मिलाप से बनने वाला समूह ही विशिष्ट एवं समर्थ शक्ति के रूप में उन्नतिशील बनता है और बड़े प्रयोजनों को सिद्ध कर सकने में सफल होता है । इस तथ्य को मानवकाल के अद्यावधि इतिहास का कोई पृष्ठ उलटकर भली प्रकार जाना-समझा जा सकता है । उत्थान और पतन के अगणित घटनाक्रमों में अन्य तथ्य भी अपना कार्य करते दिखाई पड़ेंगे, पर सर्वोपरि आधार यही रहा होगा कि लोगों में सहयोग की प्रवृत्ति किस सीमा तक रही । असहयोग की विषाक्तता पतन और पराजय के रूप में उभरी हुई कहीं भी देखी जा सकती है ।

भगवान राम और कृष्ण ने अवतार लेकर लोक-शिक्षण के अनेकानेक आधार जन-साधारण के सम्मुख प्रस्तुत किए हैं । उनका प्राथमिक प्रतिपादन संगठन का ही है । भगवान राम ने लंका विजय की । उसमें प्रमुख योगदान रीछ, वानरों का उपलब्ध किया गया । इस क्रिया-कलाप में बताया गया है कि न्याय पक्ष आदि संगठित जाय तो साधन और सामर्थ्य की मात्रा स्वल्प रहने पर भी विशालकाय विभीषिकाओं पर विजय प्राप्त की जा सकेगी । ठीक इसी प्रकार भगवान कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत उठाते समय ग्वाल-वालों को लाठी लगाकर उस प्रयोजन में भावभरा योगदान करने के लिए तैयार किया । महान प्रयोजन पूरा कर सकने में कोई अकेला व्यक्ति सफल नहीं हो सकता । उसके पीछे संगठित जन-शक्ति होनी ही चाहिये । यही है गोवर्धन उठाने के प्रकरण का सारभूत निष्कर्ष ।

पाण्डव पूर्ण समर्थ थे, कृष्ण भी कम बलवान नहीं थे । फिर भी महाभारत में कौरवों की विशाल सेना के समकक्ष प्रतिद्वन्द्वी सेना जुटाने के लिए भागीरथ प्रयत्न किए गए । संसारभर के भावनाशील लोगों को न्याय पक्ष का साथ देने के लिए सहमत किया गया । अनीति पक्ष के मुकाबले में लगभग उतनी ही बड़ी नीति समर्थक सेना खड़ी कर लेने से ही महाभारत सम्भव हुआ । यदि मात्र कृष्ण और पाण्डव लड़ने लगते तो सम्भव है युद्ध जीत जाते, पर महाभारत के माध्यम से संगठन की शक्ति को समझने-समझाने का महत्त्वपूर्ण प्रयोजन तो पूरा हो ही न पाता । असुर संहार से भी बढ़कर आवश्यकता देव संगठन की रहती है । उसके बिना शान्ति और प्रगति के स्वप्न साकार हो ही नहीं सकते ।

विनोद भी एकांगी नहीं हो सकता, भावनात्मक उल्लास की अनुभूति भी छोटे वर्ग में सीमित रहकर नहीं हो सकती । रासलीला में गोप-गोपियों का सामूहिक हास-विलास यह बताता है कि ममता और आत्मीयता का क्षेत्र अधिकाधिक विस्तृत होना चाहिये । ''अधिक लोगों का अधिक लाभ'' वाला सिद्धान्त अध्यात्म धर्म और दर्शन के क्षेत्र में भी प्रधानता प्राप्त है । सबमें अपने को और अपने में सबको समझने की दृष्टि रखकर मनुष्य का व्यक्तित्व अधिकाधिक विकसित एवं परिष्कृत बनता चला जाता है । आत्म-विस्तार की चरम अवधि तक जा पहुँचने का नाम ही आत्म-साक्षात्कार, ईश्वर-दर्शन, जीवन-मुक्ति अथवा लक्ष्य-प्राप्ति के आकर्षक नामों में अलंकारिक प्रतिपादनों के साथ प्रस्तुत किया गया है । संगठन का महत्त्व जितना अधिक और जितनी जल्दी समझा जा सके उतना ही लाभ है । **'संघ-शक्ति कलौयुगे'** सूत्र में सार रूप में यही बताया गया है कि इस युग में संसार का सबसे बड़ा, मनुष्य का सबसे प्रखर बल संगठन ही है । जो उसके लिए प्रयत्नशील रहेगा वह सुखी बनेगा और जिसने इसकी अवज्ञा-उपेक्षा की उसी की प्रतिगामिता चूर्ण-विचूर्ण करके रख देगी । संकीर्णतारत, विघटनवादी नर-पशुओं को सृष्टि के अवांछनीय तत्वों की तरह नियति का कोपभाजन ही बनना पड़ेगा । उन्हें पतन और पराभव के गर्त में गिरकर नष्ट-भ्रष्ट ही होना पड़ेगा ।

संगठन के शाश्वत सत्य को इन दिनों तो और भी अधिक प्राथमिकता मिलनी चाहिये । मानव समाज की प्रस्तुत विश्वव्यापी जटिल समस्याओं एवं विभीषिकाओं को हल करने के लिए जिन साधनों या उपायों की खोज की जा रही है वे अपर्याप्त हैं । अभीष्ट सफलता तो केवल मानवी एकता की समस्या का हल करने से ही सम्भव होगी ।

ज्ञान और विज्ञान की प्रगति ने दुनिया को इतना छोटा बना दिया है जितनी कि वह पहले कभी नहीं रही । अब विश्व के किसी भी कोने में घटित होने वाली घटनाएँ समस्त संसार को प्रभावित करती हैं । द्रुतगामी वाहनों ने वर्षों की पैदल यात्रा को कुछ घण्टों की बनाकर रख दिया है । उद्योग, व्यवसाय, शिक्षा, कला, शिल्प आदि क्षेत्रों में देश एक-दूसरे पर निर्भर होते चले जाते हैं । अरब देशों का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तेल दूसरे देश न खरीदें अथवा बेचने वाले अपना विक्रय बन्द कर दें तो इसका परिणाम दोनों ही पक्षों के लिये भयंकर होगा । यही बात अन्यान्य आदान-प्रदानों के सम्बन्ध में लागू होती है ।

साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, अधिनायकवाद के दिन अब लद गये । जन-चेतना इतनी प्रबल हो गई है कि निहित स्वार्थों द्वारा इन अनाचारों को थोपा जाना जनता द्वारा सहन नहीं किया जाएगा । इसी प्रकार अनीति के विरुद्ध भड़कने वाले विद्रोह को भी अब सैन्य बल से दबाया जा सकना सम्भव नहीं रहा । यह प्रयोग तभी तक सफल होते हैं जब तक जन-जाग्रति नहीं होती और जनशक्ति नहीं उभरती । इन दिनों पिछड़े हुए और समुन्नत वर्गों के बीच खाइयाँ इतनी चौड़ी हो गई हैं कि उनके गर्त में अब तक की मानवी प्रगति को डूबते देर नहीं लगेगी ।

रक्त विकृत हो जाने पर शरीर में खाज-खुजली, फोड़े-फुन्सी, दाग-चिकत्ते ढेरों की संख्या में उगते हैं । एक-एक फुन्सी की दवा-दारू करते रहने से कुछ काम नहीं चलता । एक के अच्छे होने से पहले ही दूसरी नयी फुन्सियाँ उठ आती हैं । संसार के सामने प्रस्तुत अनेकानेक विभीषकाओं को इन अलग-अलग उपायों से हल करने के प्रयत्न किए जा रहे हैं । स्वास्थ्य सुधार, शिक्षा संवर्धन, आजीविका उत्पादन, शस्त्र सैन्य आदि आधारों पर सर्वत्र ध्यान दिया जा रहा रहा है । कई तरह की योजनाएँ सोची, बनाई और चलाई जा रही हैं, पर परिणाम नहीं के बराबर ही निकलता है । गुत्थियाँ जितनी सुलझती हैं । उससे कहीं अधिक उलझ जाती हैं । विभीषिकाएँ हल्की होने के स्थान पर और भी अधिक ऊपर उभर आती हैं । रक्त की विकृति का निराकरण किए बिना फुन्सियों का उठना रुकेगा नहीं । विपत्तियों के मूल कारणों को देखे, सँभाले बिना विपत्तियाँ क्रमशः और भी अधिक सघन होती चली जाएँगी ।

युग ने भौतिक क्षेत्र में आश्चर्यजनक प्रगति की है यह एक सर्वमानय तथ्य है, पर यह हुई ऐसी ही है जैसा कि एक हाथ या एक पैर का मोटा होना और दूसरे का पतला रह जाना । संगठन के आध्यात्म तत्व को भी इसी क्रम से विकसित किया जाना चाहिये । आत्मीयता का-एकता का क्षेत्र इसी अनुपात से बढ़ाया जाना चाहिये । सन्तुलित प्रगति का लाभ उसी स्थिति में प्राप्त किया जा सकेगा ।

जियो और जीने दो की प्रकृति प्रेरणा

मनुष्य की मूलसत्ता सहयोगपरायण और सृजनात्मक है । इन्हीं दो मूल प्रवृत्तियों की प्रगति का आधारभूत कारण कह सकते हैं अन्यथा शारीरिक दृष्टि से अन्य कितने ही प्राणियों की तुलना में उसका पिछड़ापन स्पष्ट है । मानसिक विकास सहकारिता का परिणाम है अन्यथा चतुरता और कुशलता की दृष्टि से सहस्रों जातियों के प्राणी उससे आगे हैं और कितनी ही क्षमताओं में बाजी मारते हैं ?

सहकारिता की प्रवृत्ति ने मिल-जुलकर कबीले बनाये, परिवार बसाए, समाज की संरचना की, उत्पादन बढ़ाया, अर्थतन्त्र खड़ा किया और शासन की स्थापना की । सुरक्षा, कृषि, उद्योग, शिक्षा, संस्कार आदि कितनी ही गतिविधियों का सृजन, संचालन हुआ । ज्ञान-विज्ञान के अनेकों स्रोत उभरे, विनोद, कला, धर्म, अध्यात्म, भाषा, साहित्य आदि को सहकारिता का ही अनुदान कहा जा सकता है ।

सृजन की वैसी सुविकसित प्रवृत्ति और किसी प्राणी में नहीं पाई जाती जैसी कि मनुष्य में । अन्य प्राणी अपने निवास-स्थल का निर्माण करने भर की सीमा में इस प्रवृत्ति का योगदान यत्किंचित दे पाते हैं, किन्तु मनुष्य ने शरीर सुविधा से आगे बढ़कर अनेकों प्रकार के सृजन किये हैं । भाषा, साहित्य, संगीत कला जैसे कार्य ऐसे नहीं हैं जिनके बिना उसका दैनिक निर्वाह सम्पन्न न हो सके । विज्ञान के छोटे-बड़े आविष्कार, शोध प्रयोजनों में संलग्न रहकर उसने प्रकृति की सूक्ष्म शक्तियों को खोज निकाला है और थल से आगे बढ़कर जल में,आकाश में अपनी गति बनाई है । आदिमकाल की ऊबड़-खाबड़ धरती आज सुरम्य उद्यान की तरह सजी पड़ी है । प्रकृति के सौन्दर्य को निखारने और उसे कामधेनु की तरह अनेकानेक अनुदान देने की वर्तमान स्थिति तक पहुँचाने में मानवी श्रम एवं कौशल का ही नियोजन हुआ है । उद्योग, व्यवसाय, समाज, शासन, शिक्षा, कला, विज्ञान, संचार, वाहन जैसे अनेक ऐसे क्षेत्र प्रगति के उच्च शिखर पर जा पहुँचे हैं जिनका आदिमकाल में अता-पता भी नहीं था । तब उनकी कल्पना तक सम्भव नहीं थी । यह सब मानवी सृजन शक्ति का चमत्कार ही कहा जा सकता है ।

इस तथ्य को समझने के लिए हमें मनुष्य शरीर की आन्तरिक स्थिति का भावनापूर्वक विचार करना चाहिये।

यह समझना भूल है कि व्यक्ति एकाकी भी पर्याप्त है । उसकी सारी विशेषताएँ सहयोग, संगठन प्रक्रिया पर टिकी हुई है वस्तुतः वह अनेक अंग-प्रत्यंगों का-कोशिकाओं और नाड़ी तन्तुओं प्रभृति अनेक घटकों का समूह मात्र है । इनमें से एक भी पुर्जा यदि अस्त-व्यस्त हो जाय तो देखते-देखते सुदृढ़ प्रतीत होने वाला काय- कलेवर आधि-व्याधियों से ग्रस्त दीन-दुर्बल हो जाता है ।

सारे परमाणु आकार रूप, भार आदि में समान होते हैं, लेकिन अलग-अलग तत्वों के परमाणुओं के गुण, आकार और रूप मात्रा आदि अलग-अलग होते हैं । जो दो परमाणु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिलते हैं तो वे पूर्ण संख्या मे मिलते हैं, खण्डों में नहीं । परमाणु के खण्ड नहीं होते, पर परमाणु न उत्पन्न किये जा सकते हैं और न वे नष्ट होते हैं ।

डाल्टन के परमाणु सिद्धान्त अर्वाचीन शोधों ने बहुत अंशों में झुठला दिये हैं । डाल्टन की कल्पना थी कि परमाणु विभाजित नहीं हो सकते परन्तु अब द्रव्य को परमाणुओं से भी सूक्ष्म कणों से बना हुआ ज्ञात किया गया है । परमाणु धन और ऋण विद्युत कणों के बने होते हैं जिन्हें प्रोटोन और इलेक्ट्रोन कहते हैं । अतः परमाणु इलेक्ट्रोन और प्रोटोन आदि में विभक्त हो सकते हैं । यह भी आवश्यक नहीं कि किसी तत्व के समस्त परमाणु समान हों और यह भी आवश्यक नहीं कि दो विभिन्न तत्वों के परमाणु भिन्न-भिन्न ही हों, वे समान भी हो सकते हैं ।

रेडियम और उसकी किरणों को आरम्भ में स्व निर्भर माना गया था पर अब उसके अन्तर्गत भेद-प्रभेदों की परतें स्पष्ट होती चली जा रही हैं । आज की रेडियम सम्बन्धी मान्यता में उसके तीन विभाजन हैं—(१) अल्फा (२) बीटा (३) गामा । किरणों की विविधत प्रकृति में रेडियम विभक्त हैं । उसकी अपनी-अपनी विशेषता और क्षमता है फिर भी वे तीनों परस्पर मिली-जुली ही रहती हैं और उनका समन्वय ही रेडियम का समग्र अस्तित्व विनिर्मित करता है ।

धातु कण और प्राणियों के मूल उत्पादन तत्व भी अब इस रूप में देखे-समझे जाने लगे हैं कि वे न केवल जीवन्त ही हैं, वरन् परस्पर सहयोग भी करते हैं और मिल-जुलकर एक अस्तित्व का परिचय भी देते हैं । पदार्थों के समस्त रूपों में धातुओं के कण ही सबसे भारी होते हैं, तब भी उनमे जीवन विद्यमान है । भारतीय विज्ञानप्रवेत्ता प्रो.जे.सी.बोस ने रायल इन्स्टीट्यूशन के सामने यह प्रमाणित किया था कि माँसपेशियों की तरह धातुओं में भी हल्के किस्म का जीवन विद्यमान है । उन्होंने विभिन्न वनस्पतियों में जीवन ही नहीं सम्वेदना भी सिद्ध की और प्रमाणित किया कि मिट्टी पत्थर भी निर्जीव नहीं हैं । उर्वरा भूमि तो अनेक प्रकार के वैक्टीरिया जैसे सूक्ष्मकृमियों को जन्म देती रहती है और उनका पोषण करती है, इन्हीं का अग्रिम विकास धरती पर उगी वनस्पतियों के रूप में दिखायी देता है ।

रसायन क्षेत्र पर दृष्टिपात करें तो भी यह संगठन और सहयोग का—परस्पर मिलन और समन्वय का सिद्धान्त मूर्तिमान होता दीखता है ।

दो तत्वों का सम्मिश्रण ऐसा भी हो सकता है जिसमें वे परस्पर पूरी तरह आत्मसात् हो जाएँ और अपना-अपना अस्तित्व खोकर एक नये यौगिक के रूप में विकसित होने लगें । यथा मैग्नीशियम को हवा में जलाने से सफेद राख बनती है । इस राख को एक यौगिक कह सकते हैं क्योंकि उसमें आक्सीजन और मैग्नीशियम का सम्मिश्रण पाया जाता है । इसी प्रकार पानी भी तत्वों से मिलकर बनता है, उसमें हाइड्रोजन- ऑक्सीजन का सम्मिश्रण है । कोयले को जलने से कार्बन डाइ-ऑक्साइड बनती है । वह भी एक यौगिक है ।

रासायनिक प्रीति उसे कहते हैं, जिसमें दो पदार्थ मिलकर एक-रस हो जाते हैं, यह भी एक यौगिक प्रक्रिया ही है । दो के मिलने से तीसरी वस्तु बनने की यह भी एक प्रक्रिया है ।

यथा—लोहा और गंधक गर्म करने पर मिल जाते हैं और यौगिक बनाते हैं । गंधक और पारा मिला देने पर भी ऐसा ही मिश्रण होता है । यह मिलन कई प्रकार का होता है । सोडियम के टुकड़े को पानी में डालने पर दोनों के कणों में पारस्परिक मिलन होता है और उसमें हाइड्रोजन गैस बनती है । नमक के घोल और सिल्वर नाइट्रेट का घोल मिलाने से सिल्वर क्लोराइड बनता है । ताँबा और नाइट्रिक एसिड मिलने से ताम्र नाइट्रेट बनना आदि ।

मिश्रण उसे कहते हैं जिसमें कुछ पदार्थ आपस मे मिलकर ऐसे दीखते हैं मानो वे परस्पर घुल-मिल गये पर वस्तुतः ऐसा नहीं होता, उसमें पृथकता बनी रहती है । कोई अपना अस्तित्व नहीं खोता और न उनके मिलने से कोई तीसरी चीज बनती है । आवश्यकतानुसार उन्हें पृथक भी किया जा सकता है । बाहर से एकता भीतर से पृथकता की यह मिश्रण पद्धति रसायन क्षेत्र में आसानी से देखी जा सकती है ।

नमक, मिट्टी और लोहे के बुरादे को मिलाकर एक मिश्रण बनाया जा सकता । खड़िया, कोयला, शक्कर आदि मिलकर एक चीज बन सकती है । अल्कोहॉल, जल और नारियल का तेल मिलाकर एक नई जैसी चीज का अस्तित्व सामने आता है । गंधक, शीरा और कोयला मिलाने से बारूद बनती है । यह मिश्रण प्रयोगशाला में आसानी से पृथक किये जा सकते हैं ।

जीवरसायन (डी० एन० ए०) भी न्यूक्लिओटाइप वर्ग के चार अन्य रसायनों का सम्मिश्रण है । इनके नाम हैं, (१) एडिनिन (२) गुआनिन (३) लाइमिन (४) साइटोसीन । न्यूक्लिक एसिड के विभिन्न खण्डों को जो विभिन्न गुणों को निर्धारित करते हैं, जीन कहते हैं । रासायनिक दृष्टि से प्रत्येक जीन न्यूक्लिक एसिड का बना होता है ।

राइजोबियम जाति के जीवाणु बैक्टीरिया और दलहन जाति के पौधों की जड़ें इन जीवाणुओं को रहने के लिये स्थान और शरण देती हैं । नेत्रजन (नाइट्रोजन) खींचकर पौधों को देते हैं । जिससे पौधों को पोषण मिलता है । दोनों बढते और विकसित होते हैं । प्रकृति की इस परोपकारी वृति को सिम्बायोसिस कहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

४.१० दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

किसी गाँव में आग लग गई । सब लोग सकुशल निकल गए पर एक अन्धा, एक लँगड़ा व्यक्ति दो ही रह गये । वे भाग नहीं सकते थे । अन्धा देख नहीं सकता था, लँगड़ा चल नहीं सकता था । दोनों ने ऊपर के सिद्धान्त को अपनाया । अन्धे ने लँगड़े को कन्धे पर बैठा लिया । लँगड़ा अन्धे को रास्ता बताने लगा और परस्पर सहयोग के आधार पर वह दोनों भी सकुशल बाहर निकल आए । एक दूसरे के हित में परस्पर सहयोगी होने के इस सिद्धान्त को मनुष्य ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में लागू कर लिया होता तो छोटी -छोटी क्षमताओं के लोग भी सन्तोष और सुविधा का जीवन जीते हुए अन्धे और लँगड़े की तरह सांसारिक कठिनाइयों से पार हो जाते ।

सेलूलाइटिक फफूँद की दो जातियों में एक जाति बलवान होती है, दूसरी निर्बल जो निर्बल होते है वह अपने आहार सेलूलोज को तोड़-फोड़ नहीं सकते । अब शक्तिशाली फफूँद सेलूलोज को तोडना प्रारम्भ करते है और उसमें कार्बनिक अम्ल पैदा कर देते हैं । यह कमजोर सेलूलाइटिक फफूँद के लिए आहार का काम देता है यदि बलवान फफूँद इस निर्बलों को सहारा न देते तो उनकी एक जाति कभी की नष्ट हो गई होती ।

परिवार में बच्चे, बूढे, विधवाएँ और कई लोग बीमार तथा अपाहिज भी होते हैं, समाज में कई निर्धन, रोगी, अभावग्रस्त लोग होते हैं । उनके प्रति साधन सम्पन्न शक्तिशाली लोगों का कर्तव्य भी ऐसा ही होता है । यदि सम्पन्न और सशक्त लोग कमजोर और निर्बलों की असुविधाएँ और अभाव दूर करने में थोडी-सी भी शक्ति खर्च कर सके होते तो आज समाज में कहीं भी विषमता न होती । प्रकृति का यह (२) प्रोटोकोआपरेशन, सिद्धान्त ही विश्वशान्ति का आधार बन सकता है ।

जीव जगत में (३) कम्पेन्सलिज्म का एक, सिद्धान्त भी जियो और जीने दो की समाजवादी व्यवस्था का आदर्श उदाहरण है । कुछ खास किस्म के सूक्ष्म जीवाणुओं में अपने विकास के साधनों का ज्ञान नहीं होता । उन्हें अपनी आजीविका और विकास के लिए साधनों की वैसे ही आवश्यकता पड़ती है, जैसे समाज के अनेक पिछडे,पद-दलित, अपंग, आदिवासी, स्त्रियों व हरिजनों को शिक्षा, ज्ञान सम्वर्धन, स्वास्थ्य, उद्यम-उद्योग आदि के साधनों की आवश्यकता होती है । इस आवश्यकता को दूसरे महत्त्वपूर्ण जीवाणु 'विटामिन' और 'एमीनो एसिड' बनाकर पूरा कर देते हैं । शिक्षित, सम्पन्न और प्रतिभावान लोगों ने पिछड़े समाज को ऊपर उठाने के लिए इस सिद्धान्त के आधार पर अपने साधनों का एक अंश भी जुटा दिया होता तो आज संसार में कोई भी पिछड़ा और पददलित नहीं होता । सब लोग सुखी होते । 'एरोब्ज' और 'एनारोब्ज' जीवाणु इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि मनुष्य को अपने ही नहीं दूसरों के विकास का भी सदैव ध्यान रखना चाहिए ।

गैसों की विधि व्यवस्था को गौर से देखा जाय तो उनमें से पारस्परिक सहयोग के कारण उत्पन्न होने वाली क्षमता और विशेषता का परिचय पग-पग पर प्राप्त होता है । नाइट्रोजन जीवधारियों और पौधों के शरीर की वृद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक तत्व हैं । वह वायुमण्डल में प्रचुर मात्रा में विद्यमान भी है पर आश्चर्य इस बात का है कि शरीर या पौधे हवा से नाइट्रोजन को सीधा ग्रहण नहीं कर सकते ।

वायुमण्डल का नाइट्रोजन विद्युत प्रभाव से ऑक्सीजन में मिलकर नाइट्रिक ऑक्साइड बनाता है । जो मेघ जल से मिलकर नाइट्रिक अम्ल बनाती है और पृथ्वी तल पर गिरकर धरती के अन्य लवणों से क्रियान्वित होकर नाइट्रेट में परिणत होती है । इतनी लम्बी प्रक्रिया में से गुजरने के बाद तब कहीं नाइट्रोजन इस योग्य बनती है कि उसे प्राणियों के शरीर और पौधे सोखकर आत्मासात् कर सकें ।

पौधों के नाइट्रेट लवणों से प्रोटीन बनाते हैं । वनस्पति उसकी पत्ती, फल, फूल खाकर उसके उस तत्व को प्राणी अपने शरीर में ग्रहण करते हैं । जानवर मल और मूत्र के द्वारा बहुत-सा नाइट्रोजन धरती को लौटा देते हैं, जो उनके शरीर में बचा रहता है, वह मरने के बाद सड़ने या जलने पर फिर लौटकर धरती को या वायुमण्डल को मिल जाता है । इस प्रकार वायुमण्डल का नाइट्रोजन जल, वनस्पति, प्राणी, धरती और फिर वायुमण्डल में भ्रमण करके एक सुव्यवस्थित चक्र की तरह घूमता रहता है ।

आकाश स्थित नाइट्रोजन वायु का बादल-बिजली की सहायता से वर्षा के साथ खाद बनकर धरती पर आना, पृथ्वी के संयोग से उसका वनस्पति के रूप में उगना, वनस्पतियों का प्राणियों द्वारा भक्षण किया जाना और उसका प्रोटीन जैसे उपयोगी पदार्थों में परिवर्तित होना । मल-मूत्र द्वारा उसका धरती पर आना, वस्तुओं की सड़न से उसका फिर आकाश में लौटना यह एक ऐसा चक्र है जो निरन्तर चलता रहता है । इसे जीवन-चक्र भी कह सकते हैं । इसे धरती पर सजीवता बनाये रखने में नाइट्रोजन की महान् भूमिका भी कह सकते हैं ।

इसके अतिरिक्त पौधों को नाइट्रोजन प्राप्त होने का एक और भी तरीका है । सेम, बटला, मटर जैसी जाति के पौधों की पतली जड़ों में अत्यन्त सूक्ष्म बैक्टीरिया रहते हैं । उनमें यह विशेषता है कि वे वायुमण्डल से सीधे नाइट्रोजन लेते हैं और उसे नाइट्रेट बना देते हैं । जिन्हें पौधे आसानी से आत्मसात् कर लेते हैं ।

सभी प्राकृतिक तत्व इस ईश्वरीय नियम का पालन करते हैं तो मनुष्य को भी क्यों न करना चाहिये ? नाइट्रोजन गैस प्रकृति का एक ऐसा ही तत्व है, जो मनुष्य को एक महत्वपूर्ण पाठ पढ़ाता है । उससे मनुष्य को यह शिक्षा मिलती है कि बड़ी शक्तियों को सदैव क्रियाशील रहकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार की भलाई में जुटे रहना चाहिये । नाइट्रोजन एक गैस है, अनादिकाल से अकाश में व्याप्त इस प्राकृतिक तत्व ने अपने लिए वायुमण्डल में ८० प्रतिशत स्थान बनाया है । शेष २० प्रतिशत आक्सीजन और दूसरी गैसें हैं । प्रकृति और परमात्मा की तरह दोनों गैसें इस प्रकार घुली-मिली हैं कि उन्हें बिना किसी उत्प्रेरक (कैटालिसिस) से अलग करना कठिन हो जाता है, जिस प्रकार पति-पत्नी दो भिन्न रूप होते हुए भी उद्देश्य और विचारों से परस्पर घुले रहते हैं पर यदि कपट, ईर्ष्या या द्वेष का बीज बीच में आ गया तो दोनों में जो अभिन्नता थी, वह नष्ट हो जाती है । दोष-दुर्गुण ही हैं, जो मानवीय जीवन के सुख, प्रेम और विश्वास में खाई पैदा कर देते हैं ।

नाइट्रोजन और आक्सीजन को वर्षा काल में विद्युत अलग करती है । बादल आये, हवा चली, उसमें रगड़ से विद्युत चमकी और उसने उत्प्रेरक (कैटालिसिस) का काम किया । जिस प्रकार परमात्मा की इच्छा से यह पंचतत्वों वाला भौतिक शरीर अस्तित्व में आ जाता है और फिर अपने विकास के प्रयत्नों में जुट जाता है उसी प्रकार बिजली चमकने से आक्सीजन और नाइट्रोजन दोनों में प्रतिक्रिया होती है और नाइट्रोजन पंचपोषित (नाइट्रोजन पेण्टा आक्साइड) बन जाता है और इस प्रकार नाइट्रोजन अपनी जीवन-यात्रा के लिए सुचारु रूप से निकल पड़ता है ।

मनुष्य की उत्पत्ति भी इसी प्रकार ईश्वरीय इच्छा या संयोग है । हमें मालुम नहीं कि नाइट्रोजन में क्या किसी प्रकार का जीवन है ? पर मनुष्य के सम्बन्ध में ऐसा कोई धोखा नहीं है । उसे जो शक्तियाँ, सुविधायें और सामर्थ्य उपलब्ध हैं उन्हें देखकर सहज ही में विश्वास हो जाता है कि उसका जन्म किसी विशेष उद्देश्य के लिए हुआ है ।

बिना कोई लक्ष्य बनाये मनुष्य अन्तरिक्ष कीट (क्षुद्र ग्रहों) की तरह इधर-उधर भटकता, आप भी मरता और दूसरों के लिए भी संकट उत्पन्न करता है । योजनाबद्ध जीवन जीने वाले मनुष्य यदि अपना आध्यात्मिक लक्ष्य न भी पूरा कर सके तो भी वह बिना औरों को हानि पहुँचाए उन्नति करते रहते हैं । अपनी उन्नति का लाभ वह कई समान विचारधारा वाले मित्रों को भी देते रहते हैं ।

पंचपोषित नाइट्रोजन (नाइट्रोजन पेन्टा आक्साइड) जल मे मिलकर शोरे का तेजाब (नाइट्रिक एसिड) बन जाता है । जिन्हें संसार की कुछ सेवा करनी होती है वह परिस्थितियों से डरते या समय नहीं गँवाते वरन् जो भी उन्हें मिलता उसी से मिलकर कोई न कोई अच्छाई ग्रहण कर अपनी शक्ति बढ़ाते और अपना उद्देश्य पूरा करते रहते हैं । गुणी मनुष्य को पाने की सभी की इच्छा की तरह इस शोरे के तेजाब (नाइट्रिक एसिड) को पृथ्वी सोख लेती है । पृथ्वी कोई एक वस्तु, पदार्थ या धातु नहीं वह भी तो अनेक खनिज, लवण और धातुओं का सम्मिश्रण है ।

शोरे का तेजाब पृथ्वी में पाए जाने वाले लवण साल्ट्स से प्रतिक्रिया (रि-एक्शन) करता, उससे नाइट्रेट लवण बन जाता है । नाइट्रोजन का इतना सब कुछ परिश्रम पृथ्वी की सतह तक पहुँचने के लिए होता है । महापुरुष संसार का उपकार करने के लिए छोटे से छोटे व्यक्ति का भी विश्वास प्राप्त करते हैं और तब उनके अंत:करण में प्रविष्ट होकर अपनी विशेषताओं के बीज प्रकट कर उसके विकास में सहायक होते हैं । यह अनुभूति नाइट्रोजन की इस अवस्था से सहज ही में मिलती है ।

पौधों की जड़ें इस समय पास होती हैं, वह नाइट्रोजन लवण से नाइट्रोजन उसी तरह खींच लेती हैं जिस प्रकार किसी महापुरुष के सम्पर्क में आने से चतुर लोग उनके स्वभाव की बारीकियों को पढ़कर अपने जीवन में धारण कर लेते हैं और अपनी योग्यता, महत्ता एवं उपयोगिता बढ़ा लेते हैं । जड़ें नाइट्रेट लवण से खींचे हुए नाइट्रोजन का लाभ अपनी मोटाई बढ़ाने में नहीं करतीं वरन् सन्त पुरुष जिस तरह धन, सम्पत्ति, तप और योग्यता का लाभ सारे संसार को देते रहते हैं, उसी प्रकार जड़ें नाइट्रोजन को सारे वृक्ष-तने, डालों, पत्तियों और फल-फूल में पहुँचती रहती हैं ।

मनुष्य मर जाते हैं पर उनके कारण शरीर कभी नष्ट नहीं होते, सच पूछा जाय तो महापुरुषों के शरीर हाड-माँस के नहीं गुणों के बने होते हैं और जन्म-जन्मांतरों तक बरतते रहते हैं । नाइट्रोजन जिसे पत्तियों, फल- फूलों, टहनियों ने सोख लिया था, उनके सूख जाने पर भी विद्यमान रहता है । पत्ते आदि सूखकर पृथ्वी पर गिर जाते हैं या हरे होने पर जानवरों द्वारा चर लिये जाते हैं । दूसरी अवस्था में वह शरीर के उपयुक्त न होने पर मल-मूत्र के द्वारा अमोनिया के रूप में बाहर निकल आता है मृत्यु हो जाने पर भी वह जानवरों के शरीर से बाहर आ जाता है, पहली अवस्था में भी वह पृथ्वी में आ जाता है और इधर-उधर बिखर जाता है ।

कुछ समय में लोग कई बार ऐसे हतवीर्य हो जाते है कि अपने हाथ-पाँव भी डुलाना बन्द कर देते हैं और विनाश को निमंत्रण दे लेते हैं पर नाइट्रोजन ऐसी अवस्था में भी धैर्य नहीं खोता । बाहर से जान पड़ता है कि पत्ते सूख गये और नाइट्रोजन समाप्त हो गया, लेकिन ऐसा नहीं होता । वह इस विषम स्थिति में अपने सहारे की खोज करते रहते हैं । 'जिन खोजा तिन पाइयाँ' वाली कहावत चरितार्थ होती है । वर्षा का पानी गिरा और नाइट्रोसीफाइंग वैक्टीरिया नामक जीवाणु पत्तों को सड़ाकर नाइट्रोजन को अमोनियम नाइट्रेट या नाइट्रेट लवणों में बदल दिया । उपकारी मनुष्य को एक-एक अनेक सहयोगियों की तरह एक दूसरा वैक्टीरिया जिसे डिनाइट्रीफाइंग कहते हैं, से भेंट होती है और वह अमोनियम नाइट्रेट या नाइट्रेट लवणों को नाइट्रोजन में बदल देता है और इस तरह वह नाइट्रोजन पुन: वातावरण (एटमोस्फियर) में विलीन हो जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाइट्रोजन मरुत देव की त्रिकोणात्मक शक्ति का एक अंश है । हमारे वेदों और उपनिषदों में मरुत देवता के गुण की प्रशंसा की गयी है । उसका कारण यही है कि उनकी यह शक्ति ही पृथ्वी पर वृक्ष और वनस्पति को जीवन देती रहती है । काल चक्र रुक सकता है । पर वह शक्ति अपने नियत वृत्त का उल्लंघन यों नहीं करती कि उससे सारे प्राणी जगत को पोषण और शक्ति मिलती है ।

ब्रह्माण्ड की एक विलक्षण शक्ति के रूप में नाइट्रोजन का आमन्त्रण और जीवन-वृत्त बनाकर प्राणी मात्र के कल्याण के लिए आवागमन के चक्र में पड़े रहने से मनुष्य को बड़ी प्रेरणाएँ मिलती हैं । हम भी किसी अज्ञात शक्ति की इच्छा और अंश से जीवन धारण कर रहे हैं । पर हम न तो मनुष्य शरीर में आने के उद्देश्य को पहचानते हैं । न उसे पूरा करते हैं । होना यह चाहिए था कि सांसारिक प्रपंच में उतना फँसते कि जितना आत्म-विकास के लिए आवश्यक होता । सेवा, औरों का उत्थान और आत्मिक-प्रगति के लिए सहयोगी तत्वों का अर्जन नाइट्रोजन की तरह मनुष्य को भी इन तीनों में समरूप बने रहकर अपना लक्ष्य पूरा करना चाहिए पर ऐसा होता कहाँ है । हम तो अपने स्वार्थों का इन्द्रिय सुखों की अधोगामी मृगमरीचिका में भटकते रहते हैं ।

सहअस्तित्व का परस्पर सहयोग का अनोखा उदाहरण है । कीड़े पौधों को खुराक देते हैं और पौधे कीड़ों को । इस प्रकार दोनों एक दूसरे के लिए जीवन प्रदान करते रहते हैं ।

पृथ्वी में भी कुछ ऐसे सूक्ष्म कीड़े रहते हैं जो पदार्थों में से नाइट्रोजन बनाते हैं और वायुमण्डल से जितना अंश धरती निवासियों को प्राप्त होता है । उसे वापस करते रहते हैं ।

वायुमण्डल में नाइट्रोजन का बहुत बड़ा भण्डार है । धरती की सतह से २०० मील की ऊँचाई में जो वायु का आवरण है । उसमें ७८ प्रतिशत नाइट्रोजन गैस का भाग है । जिस तरह आक्सीजन साँस नलिका से फेफड़े तक जाकर रक्त की अशुद्धि दूर कर उसे शुद्ध बनाती है । उसी तरह नाइट्रोजन मनुष्यों, पेड़-पौधों तथा अन्य जीवधारियों के भोजन की व्यवस्था जुटाती है । आटा ऐसे ही कच्चा नहीं खाया जा सकता, उसकी रोटी बनाकर खाने से काम चलता है । उसी तरह नाइट्रोजन सीधा भोजन नहीं है । उसके कारण प्रोटीन तथा दूसरे पदार्थ बनते हैं और वे एक दूसरे के आहार का प्रयोजन पूरा करके जीवन-रक्षक ही सिद्ध होते हैं । चाहे जन-जीवन की बात हो, चाहे प्रकृतिगति जड़ समझे जाने वाले पदार्थों की, सबके मूल में एक ही प्रधान तथ्य काम करता दिखाई पड़ेगा— संगठन और सहयोग । जहाँ इस प्रक्रिया को जितना अधिक अपनाया जाएगा वहाँ उतना ही अधिक उत्कर्ष दिखाई पड़ेगा । जहाँ उसमें न्यूनता पड़ेगी वहीं अवांछनीय एवं असुखकर परिस्थितियाँ उत्पन्न होंगी ।

जीव-जन्तु वृक्ष-वनस्पतियों में

यह तो छोटे एककोशीय सूक्ष्मदर्शी यंत्र से दिखाई देने वाले जीवों की बात हुई । वह जीव-जन्तुओं तथा वृक्ष-वनस्पतियों में भी सहयोग-सहकार की अक्षम, असमर्थ और कष्टपीड़ितों का सहयोग करने की प्रवृति पायी जाती है तभी तो पृथ्वी पर कमजोर से कमजोर और क्षुद्र से क्षुद्र प्राणियों का अस्तित्व विद्यमान है ।

मध्य योरोप की नदियों में एक 'रोडियश' नामक मछली पायी पाई जाती है । यह मछली इतनी कमजोर और क्षुद्र होती है कि इसके लिए खुले स्थान पर अंडे देना एक प्रकार की आफत है, जो भी जीव उधर से गुजरता है, वही उन्हें साफ कर जाता है ।

कुछ ऐसे वृक्ष होते हैं, जो अपनी सीमा में छोटे-छोटे पौधों को पनपाते हैं । सारे जंगल में दो-चार ऐसे हिंसक जन्तु भी होते हैं, जो छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं को खा डालते हैं । अफ्रीका के कुछ पौधे ऐसे धोखेबाज होते है कि उनमें कोई चिड़िया आश्रय के लिए आई और उन्होंने अपने नुकीले पत्तों से उसे जकड़कर खून पी लिया । समुद्र में एक-दो मछलियाँ, एक-दो जन्तु जैसे मगर व घड़ियाल ऐसे भी होते हैं, जो किसी को पनपता देख नहीं सकते, अपने से कम शक्ति का जो भी दाँव में आ गया, उसी को चट कर लिया ।

विविधा-विपुला प्रकृति में ऐसे दुष्ट प्रकृति के जीव-जन्तु हैं तो पर उनकी संख्या, उनका औसत थोड़ा है पर मनुष्य जाति के दृष्टिदोष को क्या कहा जाए जो इन दो-चार उदाहरणों को लेकर उपयोगितावाद जैसा मूखर्तापूर्ण सिद्धान्त ही तैयार कर दिया । ढूँढ़े तो अधिकतर संसार आओ हम सब मिलकर जिएँ के सिद्धान्त पर फल-फूल रहा है । यदि छोटों को मारकर खा जाने वाली बात ही सत्य रही होती तो कुछ ही शताब्दियों में विश्व की आबादी दो गुनी से भी अधिक न हो गई होती ।

प्रस्तुत प्रसंग यह बताता है कि संसार के अबुद्धिमान जीव-जन्तु भी परस्पर मिलकर रहना कल्याणकारक मानते हैं । जहाँ रोडियश मछली पाई जाती है, वहीं एक सीप नामक जीव भी पाया जाता है । सीप के शरीर को कछुये की सी तरह का एक मोटा और कड़ा आवरण घेरकर रखता है, जिससे वह अपने अंडों की सेवा नहीं कर सकता । ऐसी स्थिति में रोडियश मछली और सीप दोनों मिलते हैं और 'आओ हम आप दोनों मिलकर जिएँ' के अनुसार समझौता कर लेते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोडियश अपने अंडे सीप के खोल में प्रविष्ट कर देती है, इसी समय सीप अंडे देती है, वह रोडियश अपने शरीर से चिपका लेती है । रोडियश घूम-घूमकर अपने लिए भोजन इकट्ठा करती है उसी के दाने-चारे पर सीप बच्चे पल जाते हैं, जबकि उसके अपने बच्चों को सीप पाल देती है । लगता है, विभिन्न जातियों में सहयोग और संगठन की आचारसंहिता भारतीय समाजशास्त्रियों ने प्रकृति की इस मूक भाषा को पढ़कर ही तैयार की थी । आज भी उसका मूल्य और महत्त्व सामाजिक जीवन में उतना ही है । इस सिद्धान्त के आधार पर ही संसार सुखी रह सकता है । शोषण, छल, कपट, बेईमानी, अनीति और मिलावट पर नहीं । वह यदि दूसरे के साथ यह दुष्टता करेगा तो शेष वातावरण उसके लिए भी वैसा तैयार मिलेगा ।

यह उदाहरण कोई अपवाद नहीं । ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं । 'एलगी' जाति के प्रोटोकश पौधे और फंगस जाति के 'एस्कोमाइसिटीज' पौधे भी आपस में मिलकर एक-दूसरे को बहुत सुन्दर ढंग से पोषण की वस्तुएँ प्रदान करते हैं । हमें शिक्षक ज्ञान देता है, शिक्षा देता है पर हमें अपनी अनपढ़ धर्मपत्नी या अशिक्षित पड़ोसी के लिए एक घंटा भी नहीं निकाल सकते । हमारे माता-पिता जब हम बच्चे थे, तब आधे पेट गीले वस्त्रों में सोकर हमारी परवरिश करते थे, पर आज जब वे वृद्ध हो गये तब हम उनकी कितनी अवहेलना करते हैं, नाई, धोबी, तेली कुम्हार, दुकानदार, ठेल वाला सारा संसार यों कहिए, अपनी सेवाएँ हमें देने को तत्पर है, तब यदि हम दूसरों को धोखा देने की बात सोचें, कृतघ्नता दिखाएँ तो ऐसे व्यक्ति से नीच और घृणित कौन होगा ?

पौधों का क्या अस्तित्व पर वे मनुष्य जाति से अच्छे हैं । ऊपर के दोनों पौधे मिलकर एक चपटे आकार का ढाँचा बना लेते हैं, उसे जूलौजी में 'लाइकन' कहते हैं । इसमें से होकर एलगी की जड़ें फंगस के पास पहुँचती हैं और फंगस की एलगी के पास एलगी के पास जिस तत्व की कमी होती है, उसे फंगस पूरा कर देता है और फंगस की कमी को एलगी । दोनों के आदान-प्रदान में यह थैला भी विकसित होता रहता है । औरों के कल्याण में अपना कल्याण, सबकी भलाई में अपनी भलाई अनुभव करने वाले समाज इसी तरह विकास और वृद्धि करते हैं और अपने साथ उन छोटे-छोटे दीन-हीन व्यक्तियों को भी पार कर ले जाते हैं, जो सहयोग के अभाव में दबे पड़े पिसते रहते हैं ।

'स्कारपियन' मछली अपने शरीर के ऊपर छोटे-छोटे हाइड्रा जाति के जीवों को फलने-फूलने देती है, वे छोटे-छोटे जन्तु हजारों की संख्या में एक सिरे से दूसरे सिरे तक पूरी तरह से फैले रहते हैं । देखने में यह हरे रंग के होते हैं । मछली के शरीर के ऊपर इनका पूरी तरह पोषण होता रहता है ।

हर कोई लाभान्वित

बेहरिंग के काफिले ध्रुवप्रदेश में चला करते हैं । प्राकृतिक जीवन के अभ्यस्त यह काफिले वहाँ की सारी कठिनाइयों का मुकाबला बड़ी आसानी से कर लेते हैं किन्तु जो सबसे बड़े आश्चर्य की बात है वह यह कि यह काफिले वहाँ की छोटी-छोटी लोमड़ियों से मात खा जाते हैं । उनकी इस आप-बीती को सुप्रसिद्ध लेखक स्टेलर ने बेहरिंग के काफिलों का युद्ध कहा है और बताया है कि प्रारम्भ में यह काफिले जिस स्थान पर डेरा डालते, वहाँ की लोमड़ियाँ आती और उनका खाना चुरा ले जातीं । निदान खाने को पत्थरों से ढँककर रखा जाने लगा । पत्थर भी इतने वजनदार रखे जाते कि बड़ी से बड़ी लोमड़ी भी उन्हें उठाकर अलग न कर सकती । काफिले वाले असमंजस में थे कि तब भी उनका खाना चोरी गया मिलता और पत्थर उस स्थान से दूर फेंका मिलता ।

ऐसा लगा कि कोई बड़ा जानवर आता है अतएव ताक की गई । बात बड़ी विचित्र निकली, एक साथ कई लोमड़ियों का झुण्ड आया, उनमें से एक ऊँची टेकरी पर खड़ी हो गई, एक दूसरी तरफ । यह थीं चौकीदार, उनका काम किसी भी सम्भावित हमले की सूचना अपने साथियों को देना होता था । शेष लोमड़ियाँ आगे बढ़ीं और एक साथ शक्ति लगाकर वजनदार पत्थर को उठाकर अलग कर दिया और खाना चुरा ले गईं ।

अब काफिले वालों ने एक के ऊपर एक पत्थर रखकर ऊँचा खम्भा उठाया और उसके ऊपर खाना रखा पर लोमड़ियों से वह तब भी न बच सका । अब लोमड़ियों ने अपनी पीठ पर चढाकर किसी चुस्त लोमड़ी को ऊपर चढ़ा दिया, उसने ऊपर से खाना गिराया । गिरे हुए खाने को सबने उठाया और फिर ऊपर चढ़ी लोमड़ी को उतारा और दूर एकान्त में जाकर सारा खाना बाँटकर खा लिया ।

इस घटना की समीक्षा करते हुए स्टेलर ने लिखा है, यह आश्चर्य की बात है कि लोमड़ी जैसे छोटे जीव ने सहयोग और सहकारिता के महत्त्व को समझा और उसका लाभ उठाया, जबकि मनुष्य बुद्धिशील प्राणी परस्पर स्पर्धा रखता, ईर्ष्या, द्वेष और मनोमालिन्य रखता है । यह वृत्तियाँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं । सुख और शान्ति, समृद्धि और सम्पन्नता का राजमार्ग यह है कि मनुष्य भी मिल-जुलकर रहना सीखें अपने हित को दूसरे के हित से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जुड़ा हुआ मानकर एक-दूसरे के साथ सहयोग करना सीखें । यही वृत्ति सामाजिक जीवन को व्यवस्थित बना सकती है ।

अमरीका के पश्चिमी इलाकेलावा, प्रेग्यु-लावा, सवान्नाह की चिड़ियों का सामाजिक जीवन मनुष्य को पारस्परिक सहयोग की महत्त्वपूर्ण प्रेरणा देता है । यह पक्षी अपने भोजन के लिए एकान्त में घूमते हैं पर उदर-पोषण की आवश्यकता पूरी हुई कि सामाजिक जीवन का आनन्द लेने के लिए इकट्ठे हो जाते हैं और फिर उनमें तरह-तरह के खेल-कूद होते हैं । उसे देखकर ऐसा लगता है कि मनुष्य को क्लबों की प्रेरणा शायद इन पक्षियों ने ही दी हो । सच पूछा जाए तो सारा मनुष्य समाज एक क्लब है । यदि लोगों ने पेट और प्रजनन को एक साधारण कर्तव्य मानकर उसी के लिए लड़ाई-झगड़े बढ़ाए न होते, जीवन को इन पक्षियों की तरह क्रीड़ा समझा होता और हिल-मिलकर खेला होता तो आज जो असंख्य सामाजिक समस्याएँ शान्ति और व्यवस्था में संकट उत्पन्न कर रही हैं न होतीं, मनुष्य हँसी-खुशी का जीवन जी रहा होता ।

मनुष्य में सहयोग की भावना ही परस्पर श्रद्धा, अनुशासन, प्रेम और कर्तव्यनिष्ठा के भाव भरती है । सहानुभूतिविहीन जीवन कष्ट और उलझन का ही नहीं हिंसा और बर्बरता का भी जीवन बन जाता है । ऐसा तो असभ्य जंगली जानवर तक नहीं पसन्द करते, मनुष्यों को क्यों पसन्द करना चाहये ?

प्रिंस क्रोपाटिकन ने अपना सारा जीवन प्रकृति के अध्ययन में लगाया । उन्होंने जीव-जन्तुओं के व्यवहार से जो निष्कर्ष निकाले हैं, उन्होंने 'संघर्ष नहीं सहयोग' पुस्तक में एकत्रित कर बताया है कि मनुष्य जाति की सुख-समुन्नति स्पर्धा में नहीं भावनाओं के विकास में है । भावनाओं के विकास मे वह अभावपूर्ण जीवन में आनन्द और उल्लास, हँसी और खुशी प्राप्त कर सकता है । उन्होंने लिखा है, ध्रुव प्रदेश के राजहंस परस्पर कितने प्रेम और विश्वास के साथ रहते हैं, उसे देखकर मानवीय बुद्धि पर तरस आता है और लगता है कि मनुष्य ने बुद्धिमान होकर भी जीवन की गहराई पहचानी नहीं । कई बार कोई राजहंसिनी अपने बच्चों को घमण्ड में या आवेश में ठुकरा देती है तो उन पिता रहित बच्चों को बगल की मादा अपने साथ मिला लेती है, उसके अपने भी बच्चे होते हैं पर वे सब बच्चे इस तरह घुल-मिल जाते हैं मानो वे दो पेट से पैदा हुए न होकर एक ही नर और मादा की सन्तान हों । मादा उन सबको समान दृष्टि से प्यार देती है और उनकी साज-सँभाल तब तक रखती है जब तक वे बड़े नहीं हो जाते । बड़ी बतखें घर बनाने की अभ्यस्त नहीं होती, इसलिए उन्हें अपने अण्डे रखने की दिक्कत आती है । संसार में अभाव न हों तो गति कहाँ से आये ? प्रगति के लिए तो कठिनाइयाँ आवश्यक भी हैं मनुष्य उसे नहीं समझता जबकि मनुष्येतर प्राणी उसे समझकर अपने जीवन को ह्रास, उल्लासमय तथा निर्द्वन्द्व बनाए रखते हैं । बड़ी बतखें अपनें अंडे इकट्ठा एक ही स्थान पर रख देती हैं और क्रम-क्रम से बैठकर उन्हें सेती रहती हैं । इससे कई बतखें का परिश्रम बचता है, परेशानी बचती है । संगठित परिवारों की परम्परा भारतीय जीवन पद्धति का ऐसा ही आदर्श है पर आज तो हमीं लोग उसे भूलते जा रहे हैं और एकान्तवाद की पीड़ाओं से जकड़ते चला जा रहे हैं ।

परस्पर सहयोग की महत्ता समझने वाले लोग देश और जातियाँ अपराजेय होती है, वे कहीं भी चली जाएँ वहीं अपना प्रभाव स्थापित कर लेती हैं । एक बार फोरल नामक प्राणि विशेषज्ञ ने एक स्थान की चींटियों के झुण्ड को एक थैले में भरा और उसे एक ऐसे स्थान पर लाकर छोड़ दिया जहाँ बहुत-से चींटी भक्षी, ग्रास हापर्स तथा पतंगे रहते थे, बर्र, मकड़ियाँ और गुबरैला की जहाँ जमातें लगी थीं । इनमें से एक भी जीव ऐसा न था जो चींटियों से कई गुना बलवान न रहा हो । चींटियों के वहाँ पहुँचते ही बर्रों ने युद्ध ठान दिया पर संगठित चींटियाँ घबराई नहीं, उनमें से कितनी ही शहीद हो गईं, पर उनके संगठित हमले के आगे बर्रें न टिक सकीं । गुबरैले यह देखकर बिना प्रतिरोध वहाँ से खिसक गये । पतंगों और ग्रास हापर्स ने अपने बने बनाये किले चींटियों के लिये खाली कर दिये ।

निर्वासित चींटियों ने संगठित शक्ति के बल पर वहाँ भी पहले जैसा ही साम्राज्य स्थापित कर लिया ।

यह उदाहरण मनुष्य जाति के देश और समाज के सुख-समुन्नति के आधार हैं, जो भी इसे समझ पाया निहाल हो गया, सर्वसमर्थ हो गया, जिसने सहयोग के महत्त्व को भुलाया वह टूट गया और जीवन के मोर्चे पर हार गया समझना चाहिये ।

जीव-जन्तुओं से भी कुछ सीखें

बन्दर के जीवन में स्नेह और सहानुभूति का वर्णन करते हुए सुप्रसिद्ध जीवशास्त्री बेट्स एक घटना का उदाहरण देते हुए लिखते हैं—एक बार बन्दरों के एक उपनिवेश में एक शिशु बन्दर बीमार पड़ गया । दिन भर दूसरे बन्दर तो इधर-इधर उछलते-कूदते रहे किन्तु एक बन्दरिया अपने बच्चे को छोड़कर कहीं नहीं गई । सम्भवतः अन्य बन्दरों के साथ अपने दल में उसे न पाकर किसी बन्दर का ध्यान उधर गया होगा । वह खोजता हुआ बन्दरिया के पास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पहुँचा । हाथ पकड़कर और सूँघकर उसने वास्तविकता का पता लगाया । अपने दल में लौटकर उसने न जाने किस विचित्र खीं-खीं की आवाज में सभी सदस्यों को बात बताई, उनका राजा तुरन्त उठकर बन्दरिया के पास गया । कई बन्दर इधर उधर से फल तोड़कर लाए । सभी बन्दर उस बन्दरिया के किनारे उसे घेरकर बैठ गए । इसके बाद बच्चा जब तक स्वस्थ नहीं हो गया उसके पास कुछ न कुछ बन्दर बैठे ही रहे । परस्पर आत्मीयता का यह उत्कृष्ट उदाहरण था जो सृष्टि के अबुद्धिमान मानवेतर प्राणियों में तो पाया जाता है, किन्तु एक है विचारशील मनुष्य, जो अपने ही पिता-माता, भाई-भावज, बहिनों, चाचा-ताऊ और अन्य कुटुम्बियों के साथ प्रेमपूर्वक नहीं रह सकता । पारिवारिक कलह तो अब गृहस्थों में सामान्य बात हो गई है । स्थिति अब परस्पर मारपीट, हत्या और मुकदमेबांजी तक पहुँच गई है । मनुष्य जाति को इस कलंक से बचना चाहिये और इन छोटे-छोटे प्राणियों से ही मानवता का आदर्श सीखना चाहिये ।

कृतज्ञता मनुष्य जाति का एक ऐसा गुण है कि यदि लोग दूसरे लोगों के उपकार, उनकी सेवाओं के प्रति थोड़ा-सी भी श्रद्धा और सम्मान का भाव रखें तो संसार से कलह और झगड़ों की ९० प्रतिशत जड़ तुरन्त नष्ट हो जाए । कृतज्ञता आत्मा की प्यास और उसकी चिरंतन आवश्यकता है, लगता है यह आदर्श भी मनुष्य को अन्य जन्तुओं से ही सीखना पड़ेगा । मासिक कल्याण के एक अंक में कृतज्ञता की एक बहुत ही मार्मिक घटना छपी थी । एक डाकिया प्रतिदिन डाक लेकर जंगल से गुजरता था और दूसरे गाँव डाक बाँटने जाया करता था । एक दिन उसने देखा पेड़ की एक डाल में छोटे से छेद से निकलने के प्रयास से एक बन्दर फँस गया है । दूसरे बन्दर कें-कें तो कर रहे थे, आपत्तिग्रस्त बन्दर भी बुरी तरह चिल्ला तो रहा था किन्तु उस संकट से छूटना उसके लिए सम्भव नहीं हो पा रहा था । इसी बीच डाकिया उधर से निकला, उसे बन्दर की यह दशा देखकर दया आ गई । उसके पास कुल्हाड़ी थी । पहले तो वह कुछ भयभीत हुआ पर पीछे 'हित अनहित पशु पच्छिक जाना' वाली उक्ति उसे याद आई उसने अनुभव किया जब मैं भलाई करना चाहता हूँ तो बन्दर बुराई क्यों करेंगे ? जन्तुयोनि में पड़ी हुई चेतना आखिर आत्मा ही तो है—आत्मभावना का स्मरण कर वह वृक्ष पर चढ़ गया और सावधानी से छेद बड़ा कर उसने फँसे हुए बन्दर को बाहर निकाला लिया । बन्दर बड़ी खुशी-खुशी वहाँ से चले गए उन्होंने डाकिये को न डराया न काटा डाकिया अपनी राह चला गया ।

एक सप्ताह भी न बीता था कि एक दिन उसे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि ठीक उसके आने के समय वहाँ बीसियों बन्दर रास्ते के इधर-उधर बैठे हैं, पहले तो पोस्टमैन डरा पर चूँकि कुल्हाड़ी हाथ में थी इसलिए वह निशंक चला ही गया । जैसे-जैसे वह आगे बढ़ा बन्दर इकट्ठे होते गए और डाकिया डरता गया किन्तु पास पहुँच कर उसे आश्चर्य हुआ कि यह सभी बन्दर अपने-अपने एक-एक हाथ में जंगली प्रदेश में पाया जाने वाला एक-एक लाल रंग का दुर्लभ फल लिए हुए हैं । डाकिये के पास आते ही उन सबने उसे घेर लिया और अपने-अपने फल उसके हाथ में देकर पल भर में इधर-इधर तितर-बितर हो गए । डाकिये के आँखों में आँसू आ गए, उसने अनुभव किया कि आखिर यह जीव भी तो आत्मा ही है, यदि मनुष्य जीव मात्र के प्रति दया का व्यवहार करे तो संसार स्वर्ग बन जाये और नहीं तो कृतज्ञ तो एक-दूसरे के प्रति होना ही चाहिये ।

श्री सुरेश सिंह लिखित पुस्तक जीवजगत में मगर के गुणों का वर्णन करते हुए लिखा है कि उदारता के गुणों से तो यह धोखेबाज और मक्कार जीव भी रिक्त नहीं । जलाशय में घूमते-घामते, शिकार आदि खाने के बाद कई बार जब वह बाहर निकलता है तो अपना मुँह खोलकर लेट जाता है । पास- पडोस के पक्षी उसके दाँतों और मुँह में लगे चारे को देखकर दौड़ पड़ते हैं और मुँह में घुस कर दाँत कुरेद-कुरेद कर आहार ग्रहण करने लगते हैं । मगर चाहे तो मुँह बन्द करके उन्हें एक बार में गड़प कर सकता है किन्तु ऐसा पाप उसे भी पसन्द नहीं । शरणागत पक्षियों की सेवा तब तक करता जब तक कि पक्षी अपने आप न उड़ जाएँ । इस बीच मगर धोखे से भी मुँह बन्द नहीं करता ।

बाघ बड़ा उत्पाती जीव है, भूख लगने पर प्राकृतिक प्रेरणा से उसे आक्रमण भी करना पड़ता है । किन्तु उस जैसा एकनिष्ठ पतिव्रत और पत्नीव्रत देखते ही बनता है । अपना अधिकांश जीवन जंगलों में व्यतीत करने वाले जंगली जानवरों की प्रवृत्तियों के समीप रहकर अध्ययन करने वाले डॉ० स्टेफर्ड ने एक बहुत ही रोचक घटना दी है । दक्षिण अफ्रीका के जंगल के एक बाघ ने अभी कुछ ही दिन पूर्व अपना जोड़ा चुना था । बाघिन-वधू बीमार पड़ गई और उसी अवस्था में एक दिन उसकी मृत्यु भी हो गई । उस जंगल में और भी अनेक बाघ कुमारियाँ उसे मिल सकती थीं, किन्तु उस बाघ ने फिर किसी को अपना साथी नहीं चुना । बहुत दिन पीछे उसे एक ऐसी मादा मिली जो स्वयं भी एकाकी जी रही थी, उसके पति का सम्भवत: देहावसान हो गया था । दोनों विधुरों ने अपना युगल फिर से स्थापित कर लिया पर सामान्य स्थिति में वे सदैव एकनिष्ठ ही रहते हैं । कोई भी जोड़ा दूसरे को बुरी दृष्टि से नहीं देखता होगा । बाघ- बुरा हिंसक दृष्टि से, किन्तु अपनी सच्चरित्रता के कारण वह सशक्त और समर्थ भी इतना होता है कि जंगल के दूसरे जीव उसको दूर से ही नमस्कार करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आज रिश्वत और हराम की कमाई खाने वाले कायरों की बाढ़ आ रही है, तब शेर का उदाहरण यह बताता है कि जंगल का राजा समाज का सच्चा नेता-मुफ्तखोर नहीं नीति और परिश्रम से उपार्जित धन खाने वाला ही हो सकता है । शेर कभी भी दूसरे का मारा शिकार नहीं करता, भले ही वह बूढ़ा क्यों न हो गया हो । मनुष्य को भी आजीविका नीति उपार्जित खानी चाहिये और उसे इस प्रकार अपने को शेर जैसे खरा सिद्ध करना चाहिये ।

स्वास्थ्य के लिए दुनिया भर की औषधियाँ टॉनिक और तरह-तरह के संतुलित आहार खोजने वाला मनुष्य चाहे तो घोड़े को देखकर जान सकते हैं कि शक्ति अधिक संख्या के व्यंजनों में नहीं रूखे-सूखे भोजन में है । घास खाने वाले एक जर्मनी के घोड़े को १० वर्ष तक केवल सूखी हरी घास दी गई और उसे किसी भी प्रकार सहवास से अलग रखा गया । अरबी नस्ल के इस घोड़े को परीक्षण के तौर पर एक-एक कर ऊपर तक पत्थर के कोयले से भरे पाँच बैगनों के साथ जोड़ दिया गया । उसे घोड़े ने एक मील तक खींच कर अपनी अद्वितीय सामर्थ्य का परिचय दिया ।

मनुष्य विश्वासघात करता है तो यह देखकर लज्जा आती है कि जीवनभर दूसरों का बोझा ढोने वाले बैल जिनमें बुद्धि और विवेक के नाम पर कुछ भी तो नहीं होता, वे परस्पर ऐसी प्रगाढ़ मैत्री का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं कि दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ती है । डॉ० मूर ने हैम्बर्ग के एक जोड़ी बैलों का हृदयस्पर्शी वर्णन 'दो बैलों की कहानी' नामक सत्य घटना में दिया है और लिखा है कि एक किसान के यह दोनों बैल काम तो साथ करते ही थे, खाने-पीने से लेकर यात्रा करने तक सदैव साथ रहते थे । कभी-कभी उन्हें अलग होना पड़ता तो दोनों तब तक भोजन नहीं करते थे जब तक कि दूसरा नहीं आ जाता । एक दिन अचानक एक बैल एक खंदक में गिर गया । निकल तो आया वह पर उसके चारों पैर टूट गए । उसकी मरहम-पट्टी की गई, बुखार ले आया उसे चिकित्सा के इन दिनों में दूसरे ने एक भी तिनका मुँह में नहीं दिया । हजारों लोग यह दृश्य देखने आते और कहते न जाने क्या है, आत्मा की गहराई में और चेतना के विज्ञान में, जो मनुष्य समझ नहीं पाता । लगता था दोनों दो सहोदर भाई रहे हों । बीमारी १० दिन चली, दस दिन पीछे लूला बैल संसार से चल बसा, इतने दिन तक कुछ ना खाने-पीने के कारण दूसरा भी भी बिल्कुल दुर्बल हो गया था, आटा-चूना, दलिया सब कुछ देकर आकर्षित करने का प्रयास किया किसान ने, किन्तु उस बैल ने खाना तो दूर जिस दिन पहला बैल मरा जल भी छोड़ दिया और तीन दिन पीछे उसने भी इस संसार विदा ले ली । बैल चला गया पर वह एक पाठ छोड़ गया कि मैत्री हो तो ऐसी हो ।

लोगों को असीमित साधन जुटाते देखकर लगता है कि मनुष्य कृत्रिम साधनों की बदौलत ही जी रहा है, कदाचित यह साधन न मिलें तो उसका जीवित रहना दूभर हो जाए, किन्तु जीव-जन्तु अपवाद हैं और उनकी जीवन शैली यह बताती है कि यदि प्राकृतिक जीवन जिया जाए तो ऐसी क्षमताएँ अपने आप अन्दर से उपज पड़ती हैं जो कठिन से कठिन विपरीत परिस्थिति में भी मनुष्य का कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं । ऊँट एक अच्छा उदाहरण है । वह एक बार में ७० लीटर तक पानी पी जाता है पर फिर कई-कई दिनों तक पानी न भी मिले तो भी कोई कष्ट नहीं होता, उसकी घ्राणेन्द्रिय इतनी सूक्ष्म होती हैं कि वह केवल सूँघकर ही पानी का पता लगा लेता है, सिद्धियों की ओर सम्भवत: भारतीय यह अलौकिकताएँ देखकर ही आकर्षित हुए और हठयोग तथा तितीक्षा द्वारा अपने शरीर के अन्दर की वह क्षमताएँ जगा डालीं जो सामान्य व्यक्ति के लिए आठवें आश्चर्य से बढ़कर विस्मयबोधक लगती हैं ।

छोटे-छोटे अभावों का रोना रोने वाले आदमियों के लिए दीमक ही योग्य शिक्षक है, जन्म से ही अंधे यह छोटे-छोटे जीव जीवन भर अविराम काम करते हैं और ऐसे विलक्षण काम करते हैं कि देखकर आश्चर्य होता है । १० से १३ फुट तक ऊँचे मकान उठाना, इन्हीं का काम है, उन पर वर्षा, आँधी, तूफान और ऊपर से वृक्ष कटकर गिर पड़े तो भी इनका कुछ बिगड़ेगा नहीं । पुलों के निर्माण से लेकर सड़कें बनाने और सारे दीमक राज्य को अनुशासन एवं नियम व्यवस्था में रखने के उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य वे पूरा करके मनुष्य को बताती हैं कि अनुशासन, नियमबद्धता और तत्परतापूर्वक काम किया जाय तो संसार का छोटा से छोटा व्यक्ति भी असाधारण कार्य सम्पादित कर सकता है ।

कितना अच्छा होता ! मनुष्य अपने इन छोटे भाइयों से कुछ सीखता और अपना समस्त जीवन सुखी बनाता ।

मूर्धन्य मनीषी अल्बर्ट श्वाइत्जर ने अपनी कृति 'हम वी से एनीमल्स' में लिखा है कि बतखों का झुण्ड प्रतिदिन आता और रात्रि में उसी तलैया में विश्राम करता । सबेरा होने पर वे सब बतखें उसमें स्नान करतीं और दिन भर के लिए दाने-चारे की खोज में उड़कर वहाँ से चल देतीं । तालाब की सारी हलचल समाप्त हो जाती, वह दिन भर सूना पड़ा रहता ।

पास में ही एक बगीचा था । उसमें रहता था एक माली । फूल-पौधों की कतर-ब्योंत करते-करते काटना जैसे उसका स्वभाव बन गया था । उसने एक दिन एक बतख को पकड़ लिया और उसके पंख काट डाले । उड़ान का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय आया तो उस बतख ने बहुतेरा प्रयत्न किया कि और सब बतखों के साथ वह भी उड़ चले किन्तु वह बेचारी उड़ न सकी । उड़ा हुआ शेष बतखों का झुण्ड कुछ देर तक तो वहीं मँडराता रहा, पीछे पूरा झुण्ड नीचे उतर आया । वे जख्मी बतख के आस-पास उड़तीं और उसे उड़ने को प्रेरित करती रहीं पर बेचारी का एक पंख ही नहीं था, क्या करती उड़ नहीं सकी ।

पूरा झुण्ड तालाब में उतर आया । वे कई दिन तक भूखे-प्यासे वहीं बने रहे । उनका उड़ने का बार-बार मन भी करता रहा, किन्तु नन्हें जीव भला अपने साथी को छोड़कर कैसे चले जाते ? यह तो मनुष्य ही इतना स्वार्थी और छली है कि अपने सुख, अपने हित के लिए न तो जीव-जन्तुओं को छोड़ता है और ना ही अपनी जाति को । फिर भी दम्भ कि वह अपने आपको सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी समझता है ।

बतखें उड़ीं पर उस दिन जिस दिन इस बतख को नये पंख आ गये, तब तक वे बेचारी वहीं चक्कर काटतीं रहीं ।

डॉ० हिल्बर्ट सिंग्लर एक प्रख्यात जीव-विज्ञानी के रूप में जाने जाते हैं । जीव-जन्तुओं के अध्ययन के लिए एक बार जंगल गये । पेड़-पौधों के प्राकृतिक सौन्दर्य का अवलोकन करते हुए वे वन में घूम रहे थे कि एकाएक उनकी दृष्टि एक मार्मिक दृश्य पर पड़ी । 'जे' नामक एक पक्षी एक-दूसरे पक्षी की चोंच में दाना अपनी चोंच से दे रहा था । ध्यान से देखने पर उन्होंने पाया कि दूसरे पक्षी का जबड़ा टूटा हुआ था तथा उसके हाव-भाव से स्पष्ट था कि उसके जबड़े में तकलीफ है । वह दाने को अपनी चोंच से उठा पाने में असमर्थ लग रहा था । इस मार्मिक दृश्य से उनका हृदय उद्वेलित हो उठा ।

वैज्ञानिकों की एक गोष्ठी में डॉ० सिंग्लर ने उक्त घटना का उल्लेख करते हुए कहा, 'मानवोचित गुणों दया, करुणा, सेवा, सहयोग के आधार पर ही मनुष्य को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी कहा गया है । किन्तु अन्य प्राणी भी इन प्रवृत्तियों से रहित नहीं हैं । परमात्मा ने उन्हें भी सहयोग, सहानुभूति, संवेदना से युक्त कर रखा है । आज मनुष्य अपनी मूल प्रवृत्तियों से अलग भले ही हट गया हो किन्तु ये नगण्य प्राणी अपनी संवेदनशीलता से मनुष्य को चुनौती देते हैं ।

परमात्मा ने मनुष्य को अन्य प्राणियों की तुलना में अतिरिक्त क्षमताएँ-विशेषताएँ दीं, सोचने-विचारने के लिए बुद्धि दी कि वह अपने छोटे-से परिवार ही के भरण-पोषण तक उलझकर न रह जाए, मानव समूह से भी आगे बढ़कर प्राणिमात्र की समस्याओं को हल करे, उनकी देख-रेख एवं सहयोग करे । किन्तु देखा यह जा रहा है कि अन्य जीव-जन्तुओं को सहयोग करना तो दूर रहा वह अपने सजातीय मनुष्य तक अपनेपन का विस्तार न कर सका । व्यक्तिगत स्वार्थों की पूर्ति में लगी बुद्धि संवेदनाओं को रौंदती चली गई और मनुष्य अपनी गरिमा को खो बैठा ।

सृष्टि के अन्य प्राणियों ने परमात्मा द्वारा प्रदान की गई क्षमता का भरपूर उपयोग किया । कभी-कभी तो इनकी करुणा, सहयोग एवं मैत्री की प्रवृत्ति को देखकर हैरत में पड़ जाना पड़ता है ।

आस्ट्रेलिया के जंगलों में पाए जाने वाले चिम्पाजी को एक अमेरिकी पर्यटक ने एक मिठाई का डिब्बा दिया । डिब्बे को खोलकर खाने की बजाय वह लेकर जंगल की ओर चला । कौतूहलवश उक्त पर्यटक ने चिम्पाजी का पीछा किया । आगे बढ़ने पर देखा कि चिम्पाजी एक स्थान पर रुक गया तथा मुँह से विचित्र प्रकार की आवाज निकाली । फलस्वरूप सात-आठ चिम्पाजी दौड़ते हुए चले आए । वे अलग-बगल की झाड़ियों में छिपे थे । डिब्बे को जमीन पर उलट दिया । एक घेरे में बैठकर सभी मिठाई को खाने लगे । किसी प्रकार का झगड़ा आदि उन्होंने नहीं किया । बिना किसी ईर्ष्या भाव के सबने मिठाई खाई ।

जानवरों में इतनी एकता, सामूहिकता एवं सहयोग, करुणा, दया की भावना देखी जा सकती है तो मनुष्य की क्षमता-योग्यता तो और भी बढ़ी-चढ़ी है । शक्ति-सामर्थ्य एवं बुद्धि जैसी विभूतियाँ मनुष्य के पास ऐसी हैं कि उनका सदुपयोग मानवीय गुणों के पोषण, अभिवर्द्धन एवं प्रसार के लिए कर सके तो मनुष्य ही नहीं अन्य प्राणियों के दुःख-दर्द निवारण का ठोस आधार बन सकता है ।

मनुष्य की महत्ता का प्रतिपादन उसकी शक्ति बुद्धि-बल के आधार पर नहीं किया गया है वरन् उसकी भाव-सम्वेदनाओं, करुणा, दया, सेवा, सहयोग जैसे श्रेष्ठ गुणों के आधार पर किया गया है । आवश्यकता इसकी है, कि मनुष्य अपनी गरिमा समझे तथा उसके अनुरूप आचरण करे । सामान्य जीवों से भी इसकी प्रेरणा ली जा सकती है ।

परिस्थितियाँ, जो निर्बल को भी साहसी बना देती हैं

कठिनाइयाँ और प्रतिकूल परिस्थितियाँ आती हैं तो उनके साथ व्यक्ति में एक ऐसी व्यग्रता, उत्कण्ठा और साहस का भी अनायास प्रादुर्भाव होता है, जो उसे सहज ही उन परिस्थितियों से उबार लेता है । प्रकृति की सुरक्षा प्रेरणा मनुष्य में ही नहीं अन्य प्राणियों, पशु-पक्षियों और निर्बल कीड़े-मकोड़े तक में पायी जाती है । ऐसी कई घटनाएँ जानने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में आई हैं, जब इस प्रकृतिदत्त प्रेरणा प्रवाह से असहाय, अशक्त और कुछ न कर सकने की स्थिति में भी जानवरों ने चौंका देने वाला संघर्ष किया और उन्हें परास्त किया ।

टेक्सास (अमेरिका) के प्राणीशास्त्र विशेषज्ञ एच. सी. हॉन ने एक ऐसी ही घटना का उल्लेख एक निबन्ध में किया था । किसी दिन वे जीव-जन्तुओं की विभिन्न प्रवृत्तियों का अध्ययन करने के लिए टेक्सास के निकटवर्ती जंगलों में गये हुए थे । एक झाड़ी के पास उन्होंने चूहों की चीख और सरसराहट सुनी । दौड़कर वे उस स्थान पर पहुँचे तो देखा कि पाँच फुट लम्बे एक साँप के मुँह में दबा हुआ चूहा मुक्त होने का प्रयत्न कर रहा है । वह छटपटाते हुए चीख भी रहा था । तभी एक दूसरा चूहा, पास के बिल से निकला और साँप पर हमला करने लगा । वह कभी उसकी दुम काटता, कभी पीठ । साँप के देह पर जगह-जगह काटते-काटते चूहे ने आखिर उसकी दुम पकड़ ली और मुँह में दबाने लगा । साँप ने पलटे खाए, फुफकार मारी मगर सब व्यर्थ । अन्त में साँप ने घबड़ाकर आक्रमणकारी चूहे का सामना करने के लिए मुँह में दबे हुए चूहे को छोड़ दिया । जैसे वह चूहा मुक्त हुआ और साँप पीछे मुड़ा दोनों बड़ी तेजी से भागकर बिल में घुस गए । निर्बल कहे जाने वाले प्राणी भी अपने परिवार के संकटग्रस्त साथियों को देखकर उत्तेजित हो उठते हैं । ऐसे अवसरों पर वे बड़े साहस से काम लेते हैं । तब उनसे कई गुना शक्तिशाली पशु को भी उनके सामने घुटने टेक देने पड़ते हैं ।

बम्बई के नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी की ओर से प्रकाशित एक पत्रिका में काटन फ्रोजर ने एक और ऐसी ही घटना का वर्णन किया था । उन्होंने एक बार देखा कि एक बड़े पीपल के वृक्ष पर ऊँची शाखाओं से लिपटे हुए एक साँप पर पाँच-छह तोतों ने आक्रमण किया । शायद उस साँप ने किसी तोते को अपना आहार बना लिया था । भिन्न-भिन्न दिशाओं से तोतों ने प्रहार करना आरम्भ किया । वे अपनी पैनी चोंच से साँप पर हमला करते और उड़ जाते । बेचारा साँप तिलमिलाकर रह जाता । कुछ समय बाद तोतों ने युद्ध रचना बदली और साँप पर तीव्र आक्रमण किया । एक तोते ने उसे बीच से दबोचकर खींच लिया । इतने में ही साँप की दुम डाल से छूट गयी और वह नीचे पथरीली जमीन पर बड़ी जोर से गिरा । घायल तो वह पहले ही हो चुका था । जमीन पर गिरते ही उसके प्राण पखेरू उड़ गये । उत्पीड़न और प्रतिशोध के लिए भी कई बार निर्बल पशु-पक्षी आश्चर्यजनक रूप से साहसी बन जाते हैं ।

खरगोश यों तो बड़ा डरपोक और भीरु पशु होता है । परन्तु मादा खरगोश अपने बच्चों पर किसी प्रकार का संकट आते देख बड़ी खुँखार होती देखी गयी है । नयी दिल्ली से प्रकाशित होने वाले नवभारत साप्ताहिक में एक बार ऐसी घटना का विवरण छपा था । किसी शिकारी कुत्ते ने आसन्न प्रसूता मादा खरगोश के बच्चों को पकड़ने के लिए उन पर आक्रमण किया । उन बच्चों की माँ वहीं उपस्थित थी । नवजात शिशुओं पर संकट आया देख उसने शिकारी कुत्तों के मुँह पर अपनी पिछली टाँगों से इतना करारा प्रहार किया कि बेचारे कुत्ते भागते ही बने ।

इसी प्रकार एक बार मौका पाकर एक लोमड़ी ने बतख के बच्चों को धर दबोचा । बच्चे बुरी तरह चीखने लगे । उनकी चीख-कराह सुनकर पास से ही बच्चों की माँ दौड़ी आई और अपनी चोंच से लोमड़ी को नोंचने लगी । उसके अंग-प्रत्यंग आक्रमणकारी लोमड़ी का सामना कर रहे थे । पंख लोमड़ी के मुँह पर तमाचे जड़ रहे थे । घबराकर लोमड़ी ने बच्चों को छोड़ दिया । किसी सुरक्षित स्थान पर अपने बच्चों को ले जाने की बजाय बतख अब भी लोमड़ी पर प्रहार करती रही । अभी भी उसका क्रोध शान्त नहीं हुआ था । इस अप्रत्याशित आक्रमण का मुकाबला करने की हिम्मत लोमड़ी में कहाँ से आती ? उसे दुम दबाकर भागना ही पड़ा ।

संकटग्रस्त अवस्था में खूँख्वार आक्रमणकारी पशुओं का सामना करने का बल निरीह और अल्पशक्ति वाले जानवरों में जाने कहाँ से आ जाता है ? आगरा (उ. प्र.) के निवासी कृषक की आँखों देखी घटना का विवरण प्रांत की पत्रिकाओं में छपा था । उक्त कृषक की कुछ गायें जंगल में चर रही थीं । तभी पास की झाड़ी से एक चीता निकला और गाय पर हमला बोल दिया । चीते की गन्ध पहचानकर ही गाय ने जोर से हुँकार भरी और उसका आक्रमण होने से पूर्व ही चीते पर प्रत्याक्रमण कर दिया । हुंकार सुनकर पास में ही चर रही एक गाय चुपचाप चीते के पीछे पहुँची और उसकी पीठ पर इतनी जोर से सींग से प्रहार कर उछाला कि चीता चारों खाने चित गिरा । सँभलकर उठने से पूर्व पहले गाय ने हमला किया और अपने सींग उसके पेट में घुसेड़ दिए ।

मात्र बाहरी आक्रमण या अन्य पशु-पक्षियों द्वारा उत्पन्न की गई घातक परिस्थिति ही नहीं, प्राकृतिक और आसन्न आपदाएँ भी इनमें अद्भुत शौर्य-साहस पैदा कर देती हैं । वे प्राणी जो आग और पानी के पास जाने से डरते हैं तीव्र लपटों और भयंकर बाढ़ों को पार करते देखे गये हैं । मद्रास के एक सरकस की घटना है । असावधानी के कारण सरकस के तम्बू में आग लग गयी । तीव्र लपटों और भीषण शोलों से स्वयं को बचाने में सब भागदौड़ करने लगे । दर्शक और सरकस के कर्मचारी अपने स्वजन-बान्धवों और सम्पत्ति-साधनों की चिन्ता छोड़कर भागने लगे । ऐसी दशा में निरीह पशु प्राणियों की किसे चिन्ता होती ? बेचारे जानवर भी अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जान बचाने की कोशिश में भाग-दौड़ करने लगे और सब तो जैसे तैसे निकल गये परन्तु पिंजड़े में बन्द शेरनी छटपटाती रही । शेर आग से बड़ा डरा रहता है । उसके साथ बच्चे भी थे । स्वयं अकेली का कोई बस न चलते देख शेरनी ने पिंजड़े में ही एक जोर की छलाँग लगायी और बाहर आ गयी । अपने एक बच्चे को मुँह में दबाकर वह तेजी से बाहर भागी ।

सुरक्षित स्थान पर बच्चे छोड़कर फिर वह आग की लपटों में घुसी । दूसरा बच्चा अभी पिंजड़े के आस-पास ही चक्कर काट रहा था । वह उसे भी मुँह में दबाकर पहले वाले स्थान पर पहुँच गई । अपने परिजनों और सन्तानों की चिन्ता छोड़कर खुद को बचाने के लिए सचेष्ट समझदार मनुष्यों को शेरनी अपनी अपेक्षा ऊँचे आसन पर बैठी दिखाई दी । इस प्रकार आग से घबड़ाने वाली जंगल की साम्राज्ञी शेरनी का यह साहसपूर्ण कृत्य कइयों ने अपनी आँखों से देखा ।

उपरोक्त घटनाएँ सिद्ध करती हैं कि साहस और शौर्य प्रत्येक प्राणी में प्रचुर और प्रचण्ड मात्रा में विद्यमान है । दूसरे संस्कारों की प्रबलता के कारण भले ही वह हर समय सामने न आए, परन्तु है अवश्य । सृष्टि की सर्वोत्कृष्ट कृति और परमात्मा के सर्वाधिक सन्निकट होने के कारण मनुष्य में ये गुण और भी अधिक मात्रा में होना चाहिये ।

विशेष परिस्थितियों में आकस्मिक रूप से परिजनों, साथियों के प्रति प्रेम और वात्सल्य की प्रेरणा निर्बल, असहाय और दयनीय स्थिति वाले पशु-पक्षियों को भी इतना साहसी बना देती है तो क्या कारण है कि मनुष्य पग-पग पर शौर्यहीन, कायर और भीरु बना रहता है । निस्सन्देह इसका कारण आत्म-अविश्वास और अत्यधिक स्वार्थलिप्सा ही है । जब व्यक्ति को केवल अपनी ही चिन्ता, अपना ही हित भला दिखाई देता है तो वह दुनिया का सबसे निर्बल और असहाय मनुष्य बन जाता है और उसका सम्पूर्ण जीवन अस्वाभाविकताओं से भरे संघर्षों का अभिशाप बन जाता है ।

शौर्य और साहस का अभाव, स्वार्थलिप्सा और पद-पद पर पाने वाले संघर्ष वस्तुत: मनुष्य के मूल स्वभाव के प्रतिकूल ही तो हैं । यदि हम इन अस्वाभाविकताओं को दूर कर सके तो शौर्य, साहस और पराक्रम कोई प्राप्तव्य गुण नहीं रह जायेगा । वह तो इस अंधेरे के दूर होते ही स्वयं आ जाएगा ।

सहकार पर ही टिका है मानवी अस्तित्व

रूस के प्रख्यात मनीषी प्रिंसक्रोपाटकिन ने अपनी कृति 'म्यूचुअल एड' में कहा है कि सृष्टि में संघर्ष का नहीं वरन् पारस्परिक सहयोग-सहकार का ही अस्तित्व है । मनुष्य सहित समस्त प्राणिसमुदाय का वास्तविक अभ्युदय मिल-जुलकर रहने और एक-दूसरे के सुख-दु:ख में साथी बनकर रहने में ही सन्निहित है । संघर्ष से तो अराजकता, अव्यवस्था फैलती है और विकसित जातियाँ भी नष्ट हो जाती हैं । मरने-मारने पर उतारू जातियाँ आपस में ही लड़-भिड़कर समाप्त हो जाती हैं । इतिहास साक्षी है कि कितनी ही बलिष्ठ और समर्थ जातियाँ केवल इस कारण विलुप्त हो गईं कि उनमें छीना-झपटी की, मारा-मारी की हिंसात्मक प्रवृति का बाहुल्य हो गया था ।

आदिमकालीन नर-वानर की तुलना में आज के प्रगतिशील मनुष्य में जमीन-आसमान जैसा अन्तर हो गया । इसका प्रमुख कारण उसका सहकारी स्वभाव है । मिल-जुलकर रहने की इच्छा ने ही परिवार बसाये, समाज, समुदाय बनाये, संगठन खड़े किये । शासनतन्त्र का सशक्त ढाँचा विनिर्मित किया । कारखाने, उद्योग चल पड़े । यदि सहकारिता को मानव स्वभाव में से निकाल दिया जाय तो वह मात्र लड़ने-भिड़ने और स्वच्छन्दता अपनाने वाले प्राणियों की तरह अविकसित रह जाता । परस्पर सहयोग का ही प्रतिफल है कि समाज, शासन, उद्योग, व्यवसाय आदि वर्तमान स्थिति तक पहुँचे । अलग-अलग व्यक्ति यदि उन्हें अपने ढंग से करते तो शायद इनमें से एक भी काम न बन पड़ता । मिलजुलकर कर काम करना और संयुक्त शक्ति का उपयोग कर सकना जहाँ भी सम्भव होगा, वहाँ समर्थता रहेगी और सफलता मिलेगी ।

वर्तमान समाज व्यवस्था में प्राय: बड़े शहरों की घनी बस्तियों में सहयोग-सहकार के भाव समाप्त होते जा रहे हैं । एकता के बन्धन टूटते जा रहे हैं । एक-दूसरे की सहायता करना तो दूर वे पड़ोसी तक को नहीं जानते । अन्यान्यों की आवश्यकताओं की चिन्ता न करते हुए अपने व्यक्तिगत स्वार्थों की जिस-तिस प्रकार पूर्ति करना ही आधुनिक जीवन की तथाकथित सभ्य-सम्पन्नों की प्रवृत्ति बनती जा रही है । सुप्रसिद्ध विचारक प्लिमसोल का कहना है कि सम्पन्नता ने आज मनुष्य का गला घोंट दिया है । सहानुभूति की भावना न केवल संकुचित हो गई है, वरन् कुंठित भी हो गई है । निर्धन एवं पिछड़ों की सहायता करना तो दूर उनके साहसिक कार्यों, कष्टमय जीवन की दिन-रात की बहादुरी और हृदय की कोमलता की कदर करना तक उन्हें नहीं आता । इसके विपरीत श्रमिकों में, निर्धनों में एक-दूसरे की सहायता करने की भावना आज भी कूट-कूट कर भरी है । दूसरों की सहायता करने में वे अपने प्राणों पर भी खेल जाते हैं । इस सन्दर्भ में उन्होंने एक बहुत ही मर्मस्पर्शी घटना का उल्लेख किया है ।

फ्रांस की जेल से एक बार एक कैदी भाग गया और दिन भर अपने आपको खेतों में छिपाए रखा । पुलिस उसकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तलाश कर रही थी । दूसरे दिन वह एक शहर के पास खुदी हुई खाई में जा छिपा । वह वहाँ कुछ समय तक ही बैठ पाया था कि पास के मुहल्ले में आग लग गई । उसने देखा कि एक महिला जलते हुए मकान से बाहर निकल रही है और जोर-जोर से सहायता के लिए लोगों को पुकार रही है । उसका एकमात्र बच्चा जलते हुए मकान की दूसरी मंजिल में फँस गया था । कैदी ने स्त्री की करुणा, किन्तु नैराश्यपूर्ण पुकार सुनी और जब देखा कि सभ्य-सम्पन्न पड़ोसियों में से कोई भी उसकी मदद करने और बच्चे को बचा लेने के लिए आगे नहीं आ रहा । तो वह अपने को नहीं रोक सका । भागता हुआ आग के भीतर लपका और अन्दर जाकर उस बच्चे को सुरक्षित बचा लाया और उसकी माँ को सौंप दिया । बाहर निकलते समय कैदी के कपड़ों में आग लग चुकी थी और उसका चेहरा बुरी तरह झुलस गया था । पुलिस भी तब वहाँ मौजूद थी, जिसने उसे पुनः गिरफ्तार कर लिया । उसका अपराध मात्र इतना था कि मालिक द्वारा नौकरी से निकाल दिए जाने के कारण जब परिवार को भूखों मरने की नौबत आ गई तो उसने कहीं से खाना चुरा लिया था । विडम्बना वही है कि समाज के सफेदपोश वर्ग के निष्ठुर धनिक किन्तु अपराधी तो पकड़े नहीं जाते व ऐसे भावसंवेदना के धनी छोटे-से अनजाने में किए अपराध पर कानून की बेड़ियों में जकड़ दिए जाते हैं ।

पाश्चात्य मनीषी जोसेफ जी फीतेसाज का कहना है कि श्रमिक जातियाँ, पहाड़ी वन्य जातियाँ, एस्किमो आदि इसलिए आज भी जीवित बनी हुई हैं कि उनमें व्यापक रूप से आपसी सहयोग बना हुआ है, अन्यथा विषम परिस्थितियों की कठिनाइयों के कारण वे कब की दम तोड़ गई होतीं । उनके अनुसार कितनी ही सभ्य एवं समुन्नत मानव जातियाँ केवल इसलिए मिट गईं कि उनने संकीर्ण स्वार्थपरता का रास्ता अपनाया और परस्पर संघर्ष करने लगे यद्यपि यह परम्परा परिवर्तित रूप में कहीं-कहीं अब भी विद्यमान है किन्तु मिल-जुलकर रहने और मिलबाँटकर खाने की, सहकारिता की भावना जितनी अधिक श्रमिकों, खनिकों के निर्धनों में है, सम्पन्नों में उसके कदाचित ही दर्शन होते हैं । बहुत-से धनी यह नहीं समझ सकते हैं कि अत्यधिक निर्धन आपस में एक-दूसरे की किस प्रकार सहायता कर सकते हैं । कारण कि वे यह नहीं जानते कि निर्धनतम जातियों के परिवार का जीवन-मरण कितनी-सी खाद्य सामग्री या पैसे पर निर्भर रह करता है, जिसकी पूर्ति प्रायः वे पारस्परिक सहयोग से कर लेते हैं । फीतेसाज ने अपने जीवन-चरित्र में जिन संकटपूर्ण विषम परिस्थितियों का वर्णन किया है, उनके अनुसार कोई विरला ही मजदूर परिवार होता है जिसे अपने जीवनकाल में उनका सामना न करना पड़ा हो । विभिन्न परिस्थितियों में भी यदि वे सभी नष्ट नहीं हो जाते, तो इसका प्रमुख कारण उनका पारस्परिक सहयोग ही है । अपने स्वयं के बारे में वे लिखते हैं कि उन दिनों जब मेरा परिवार भूखों मरने ही वाला था । उस वक्त एक वृद्ध परिचायिका ने जो स्वयं अत्यन्त निर्धन थी, कुछ रोटियाँ, थोड़ा कोयला और बिस्तर लाकर पूरे परिवार की काल के मुँह में समाने से रक्षा की थी । वृद्धा इन वस्तुओं को किसी से उधार माँगकर लाई थी । यदि वह न होती तो और अथवा कोई पड़ोस वाले ही पीड़ित कुटुम्ब की सहायता कर देते । मैक्सिम गोर्की तथा कार्ल मार्क्स ने ऐसी ही गरीबी स्वीकार करके औरों के साथ, शोषितों के साथ रहकर जीना पसन्द किया था, नहीं तो उनकी प्रतिभा उन्हें महलों का वैभव भी दे सकती थी । सहयोग-सहकार एक मानवी सद्गुण है एवं जब तक वह है मानवता जीवित रहेगी ।

विकासवाद, 'ओरीजिन ऑफ स्पीसिजी डीसेन्ट ऑफ मैन' जैसी प्रसिद्ध कृतियों के रचयिता एवं जीवन के लिए संघर्ष को अनिवार्य मानने वाले विख्यात वैज्ञानिक डार्विन ने अपनी तीसरी कृति में स्वयं लिखा है कि सामाजिकता ही मानवी विकास का प्रमुख कारण है । यद्यपि उसमें कई कमियाँ हैं किन्तु सहकार भाव के कारण असीम सम्भावनाएँ हैं । प्रकृति के अन्य प्राणियों की अपेक्षा आत्मरक्षा के साधन उसके पास नहीं हैं, फिर भी अपनी बौद्धिक शक्तियों एवं अन्य सामाजिक गुणों द्वारा वह इन कमियों की क्षतिपूर्ति सरलतापूर्वक कर लेता है । एक-दूसरे की सहायता करके उसने इन शक्तियों को प्राप्त कर लिया है । मनीषी रूसो का कहना है कि प्रकृति में सर्वत्र प्रेम, शक्ति और सहयोग ही कूट-कूट कर भरा है किन्तु मनुष्य ही उसे नष्ट कर संकट मोल लेता रहता है । उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दिनों में इस सन्दर्भ में प्रख्यात रूसी वैज्ञानिक प्रोफेसर केसलर ने प्रकृतिवादियों के एक सम्मेलन में कहा था कि सहयोग प्रकृति का एक अटल नियम एवं विकास का मुख्य अंग है । संघर्ष की अपेक्षा कहीं अधिक कारगर रूप से इसे प्रयुक्त होते हुए देखा जा सकता है । मानव जाति के विकास में पारस्परिक सहयोग का कितना अधिक हाथ रहा है ? यह किसी से भी छिपा नहीं ।

मनुष्य में साथ-साथ रहने और एक-दूसरे की सहायता करने की प्रकृति उतनी ही पुरानी है, जितना कि उसका धरती पर आगमन । समय-समय पर इतिहास में उतार-चढ़ाव होते रहे, मनुष्य पर आपदाओं के प्रहार होते रहे । कितने ही देश युद्धों के कारण बरबाद हो गये और मानव जाति दरिद्र बन गई फिर भी जिन समुदायों में सहकारी प्रवृत्ति जीवित रही, वे समय के अनुकूल नवीन संरचना खड़ी करने में समर्थ हुए । विषम एवं विपन्न परिस्थितियों में भी मानव की रचनात्मक प्रतिभा की प्रेरणा एवं सुविधाएँ आपसी सहयोग की प्रवृत्ति से ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिली हैं । आशा रखनी चाहिए कि आने वाले दिनों में सहयोग-सहकार की भावना का इतना अधिक विस्तार होगा कि समस्त मानव जाति भिन्न-भिन्न धर्मों, भाषाओं और जाति वर्गों के भेद को भूलकर उसे अपनी जीवनमूरि बना लेगी ।

अति विलक्षण अचेतन की माया

विश्व के अगणित जीव-जन्तुओं में विविध प्रकार की ऐसी समता पाई जाती है जिनसे मनुष्य वंचित रहता है । उदाहरण के लिए चमगादड़ के ज्ञानतन्तु राडार क्षमता सम्पन्न होते हैं । वह अपनी इस क्षमता के आधार पर विभिन्न वस्तुओं से निकलने वाली विद्युत तरंगों को भलीभाँति पहचान लेता है और घने अन्धकार में भी अपने आसपास की वस्तुओं का स्वरूप एवं उनका स्थान समझकर बिना किसी से टकराये उड़ता रहता है ।

समुद्र में एक मछली पायी जाती है जिसे डॉल्फिन कहा जाता है । इस मछली के शरीर से एक प्रकार की रेडियो तरंगें निकलती हैं, जो पानी के भीतर ही दूर तक फैल जाती हैं और उस क्षेत्र के जीव-जन्तुओं से टकरा कर उसी के पास वापस लौट आती हैं । इस क्षमता के आधार पर मस्तिष्क क्षण में यह जान लेता है कि कौन-सा जीव किस आकृति-प्रकृति का है और कितनी दूर है । उसी आधार पर डाल्फिन मछली अपने बचाव तथा आक्रमण की योजनाबद्ध तैयारी करती है ।

विकासवाद के अनुसार कई जीव-जन्तुओं ने आवश्यकतानुसार अपने शरीर में ऐसी विशेषताएँ उत्पन्न कर लीं, जो आरम्भ में नहीं थीं । जैसे मेढ़क ने जल में प्रवेश करने पर गोताखोरों के द्वारा चढ़ाए जाने वाले चश्मे की तरह एक आवरण विकसित कर लिया, जो पहले नहीं था । रावन प्लांट और ग्रेट मुलर पौधों ने पशुओं द्वारा चरे जाने से आत्मरक्षा के लिए नोंकदार काँटे विकसित किए हैं । तितलियों के बच्चे और रेशम के कीड़े अपने शरीर से रस निकालकर उस पर पत्तियाँ चिपका लेते हैं और आत्मरक्षा की सुविधा उत्पन्न करते हैं । कछुए ने मगरमच्छों से अपने स्वादिष्ट माँस को बचाने के लिए चमड़ी को काफी मोटा और सख्त बना लिया । ह्वेल मछली ने पनडुब्बियों की सारी खास-खास विशेषताएँ अपने शरीर में उपस्थित करा रखी हैं । लगता है कि मनुष्य ने ह्वेल की शरीर रचना देखकर ही पनडुब्बियों का विकास किया है ।

गिलहरी ने अपने गालों में दो जेबें विकसित की हैं । ताकि वह उनमें उपलब्ध खाद्य-सामग्री जल्दी से जमा कर सके । बन्दर के गले में भी ऐसी ही थैलियाँ होती हैं ताकि उसमें वह अपने बचे हुए भोजन को रख सके । आहार उपलब्धि की दृष्टि से असुविधा का समय पास आते ही चीटियाँ तथा दूसरे कीड़े अपने लिये आहार जमा करने लगते हैं । उनका भविष्य ज्ञान बिल्कुल सही होता है ।

दीमक और चींटियों के झुण्ड की लड़ाई देखते ही बनती है, उनकी मोर्चाबन्दी आक्रमण तथा बचाव से ढंग से योद्धा मनुष्यों को बहुत सीखने के लिए मिल सकता है । अफ्रीका का काटन रले जाति का खरगोश हिंसक जन्तुओं का खतरा देखकर अपनी पिछली टाँग एक खास तरीके से जमीन में मारता है, उससे एक विद्युत धारा उत्पन्न होती है जो भूमि के ऊपर वाली परत पर दूर तक फैल जाती है । दूसरे खरगोश उसको तुरन्त सुन लेते हैं और सजग होकर अपने बचाव की तैयारी भी करने लगते हैं । खरगोश ही नहीं दूसरे अन्य कई जानवर भी इस तरह के संकेतों को समझकर उनसे लाभ उठाते हैं तथा बचने की व्यवस्था बना लेते हैं ।

मनोवैज्ञानिक भी अब इस बात को स्वीकार करने लगे हैं कि अचेतन मस्तिष्क कहीं अधिक रहस्यपूर्ण और विलक्षण क्षमताओं से सम्पन्न है । अभी उसके क्रिया-कलापों का सात प्रतिशत भाग ही मनोवैज्ञानिक जान पाये हैं और उस आधार पर यह कहा जाता है कि शरीर यात्रा की स्वसंचालित गतिविधियों तथा रक्त-परिभ्रमण, हृदय-स्पन्दन, पाचन, उत्सर्जन आदि क्रियाओं का संचालन-नियमन यह अचेतन मस्तिष्क ही करता है । अभिरुचि, प्रकृति, स्वभाव और आदतों की जड़ भी इसी अचेतन मस्तिष्क में जड़ जमाए रहती है । अचेतन मस्तिष्क के सम्बन्ध में भी इतना जाना ही जा सका है । आगे चलकर परामनोविज्ञान और अतीन्द्रिय विद्या की खोज आरम्भ हुई तो पाया गया कि मस्तिष्क तो सर्वाधिक रहस्यमय, विलक्षण और चमत्कारपूर्ण है ही, अचेतन मस्तिष्क उससे हजार-लाख गुना रहस्यपूर्ण है । यह संसार का सबसे अधिक रहस्यमय, अद्भुत और शक्तिशाली यंत्र है । यदि उसमें सन्निहित सम्भावनाओं को पूरी तरह समझा जा सके और उन्हें साकार किया जा सके तो इतना बड़ा चमत्कार उत्पन्न हो सकता है कि कुछ ही वर्षों में अब तक हुई प्रगति से हजार गुना प्रगति सम्भव हो सकती है और तब जो दुनिया विनिर्मित हो सकती है, वह अबकी अपेक्षा लाख गुना उन्नत और विकसित स्थिति की हो सकती है ।

यों पदार्थ विज्ञान के क्षेत्र में ही अब तक जितना जो कुछ खोजा और जाना जा सका है, उससे बहुत अधिक खोजना और जानना शेष है । मानवीय शरीर के बारे में ही अभी बहुत कम खोजा जा सका है । वह अभी स्थूल जानकारी ही है वह भी इतनी विलक्षण है कि उसे जानकर सहज ही आश्चर्य होता है । मस्तिष्क विद्या न्यूरोलाजी, साइकोलाजी का क्षेत्र उससे भी गहन है । इसके बाद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अतीन्द्रिय विद्या आती है, जिसका सम्बन्ध अचेतन मस्तिष्क से है ।

यदि इस शक्ति केन्द्र को समझा जा सके तो यहाँ सब कुछ देवलोकों के अद्‌भुत वर्णन, चित्रण जैसा दिखाई पड़ता है । अतीन्द्रिय विद्या के शोधकर्ताओं का कथन है कि चेतन मस्तिष्क की सक्रियता-अचेतन की क्षमता तरंगों को काटती है । इसलिए यह अविकसित स्थिति में ही पड़ा रहता है । यदि बौद्धिक संस्थान की गतिविधियाँ मंद से शिथिल की जा सकें तो उसी अनुपात से अचेतन केन्द्र जाग्रत हो सकता है । सामान्यत: हमारे चेतन मस्तिष्क में प्रतिक्षण कोई न कोई विचार, कोई न कोई कल्पनाएँ और आकांक्षाएँ उठती हैं । एक क्षण भी ऐसा नहीं बीतता जिसमें मस्तिष्क शान्त या शून्य हो । हर समय चेतन मस्तिष्क व्यस्त और सक्रिय रहता है । यहाँ तक कि सोते समय भी वह स्वप्न देखता रहता है । यदि इस मस्तिष्क को कुछ समय के लिए शान्त, शिथिल और शून्य किया जा सके तो अचेतन को कार्य करने का अवसर मिल जाता है और वह अपनी विभूतियों से लाभान्वित कर सकता है ।

मनोविज्ञान तो अब इस निष्कर्ष पर पहुँचा है, लेकिन यों योग विद्या के आचार्य बहुत पहले से ही इस निष्कर्ष पर पहुँचे चुके हैं । इतना ही नहीं उन्होंने प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि जैसी साधनाओं के माध्यम से चेतन मस्तिष्क, को शिथिल, निष्क्रिय एवं शून्य स्थिति में ले जाने में भी सफलता प्राप्त कर ली थी । यह सफलता आज भी प्राप्त की जा सकती है जो अनेक चमत्कारों की जननी है । दूरदर्शन, दूरश्रवण, विचार प्रेषण, भविष्य ज्ञान, अदृश्य का प्रत्यक्ष आदि कितनी ही ऐसी विशेषताएँ प्राप्त की जा सकती हैं, जो साधारणतया मनुष्यों में नहीं होतीं ।

अचेतन मस्तिष्क को यदि विकसित किया जा सके, उसे थोड़े समय के लिए भी सक्रिय होने का अवसर मिल सके तो व्यक्ति अपने शरीर, मन, स्वभाव, प्रकृति आदि का काया-कल्प करा सकता है । यह सम्भावनाएँ योगसाधना द्वारा प्रत्यक्ष की जा सकती हैं । योग साधना का मूल उद्देश्य ही चित्त वृत्तियों का निरोध है ।

चेतना मस्तिष्क को निष्क्रिय और शिथिल बनाने का अर्थ यह नहीं है कि बुद्धि से कोई काम ही न लिया जाय । यह समझना गलत होगा । योग साधना विद्यार्जन, ज्ञान साधना या बौद्धिक विकास के प्रयत्नों पर प्रतिबन्ध नहीं लगाती । उसमें मानसिक उत्कर्ष, विद्याध्ययन, कलाकौशल आदि के विकास और सम्वर्धन की पूरी छूट है । प्रतिबन्ध केवल इस बात का है कि मन:क्षेत्र को उत्तेजित, विक्षुब्ध एवं अशांत न होने दिया जाए । अनासक्ति, स्थित प्रज्ञा आदि पर योगशास्त्रों में बहुत जोर दिया गया है । उनका तात्पर्य इतना ही है कि अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियाँ, सदैव आती-जाती रहती हैं । इनसे क्षुब्ध न होने और संतुलित बने रहने के लिए यदि मन को साध लिया जाय---वह स्थिति अचेतन मन की दिव्य क्षमता को काटने वाली उथल-पुथल भरी ऊष्मा को भी नहीं बढ़ने देती । यही मानसिक सन्तुलन योग का प्रथम चरण है ।

दूसरे चरण में चेतन मस्तिष्क की सभी गतिविधियों को रोककर उस संस्थान में कार्य करने वाली शक्ति को अचेतन मस्तिष्क का विकास करने में लगाना होता है । इस साधना में एकाग्रता को बढ़ाना होता है और मन में उठने वाले विभिन्न विकल्पों के रोककर उसे एक केन्द्र पर स्थिर रखने का प्रयत्न करना पड़ता है । योग साधना में इसके लिए ध्यान को सर्वोत्कृष्ट माध्यम बताया गया है । ध्यान के द्वारा योगीजन अपनी एकाग्रता को बढ़ाते हुए चित्त को जाग्रत अवस्था में ही संकल्पपूर्वक लय कर देते हैं । इस स्थिति को समाधि कहा गया है और यह स्थिति प्राप्त करने के लिए प्रत्याहार, धारणा, ध्यान आदि भूमिकाएँ पार करनी पड़ती हैं । इन साधनाओं के द्वारा सचेतन बुद्धि संस्थान में लगी हुई चिन्तन और संकल्प की क्षमता को जब अचेतन के साथ जोड़ दिया जाता है तो उसकी अद्‌भुत और अनुपम दिव्यताएँ जाग्रत होना आरम्भ कर देती हैं । इस दिशा में जो जितनी सफलता प्राप्त करता चलता है, उसे उतना ही समर्थ और सिद्ध पुरुष कहा जाता है । इन प्रयोगों को यदि व्यवस्थित और वैज्ञानिक ढंग से किया जा सके तो नि:सन्देह मनुष्य साधारण न रहकर असाधारण बन जाता है ।

पशु-पक्षी तो प्रकृति प्रेरणा से अचेतन क्षेत्र से ही संचालित होते हैं, किन्तु मनुष्य तो उनसे अपने को श्रेष्ठ कहता है, अत: उस क्षेत्र की क्षमता को जानना और अर्जित करना ही चाहिए अन्यथा मनुष्य से तो चींटी ही अच्छी है जो अपनी अक्ल का भरपूर उपयोग करती है ।

जब पृथ्वी के अन्य जीव-जन्तुओं से हम मनुष्यों की तुलना करते हैं तो स्पष्ट जान पड़ता है कि ज्ञान-विज्ञान का अहंकार रखने वाला मनुष्य अभी अपने सामाजिक संगठन और व्यवहार में उस स्तर तक भी नहीं पहुँचा है जहाँ तक कि कितने ही छोटे जीव-जन्तु, कीड़े-मकोड़े लाखों वर्ष पहले पहुँच चुके हैं । चींटियों, मधुमक्खियों, दीमकों, बर्रों का आन्तरिक संगठन, अनुशासनप्रियता और नागरिकता की भावना मनुष्यों की अपेक्षा बहुत उच्चकोटि की होती है और उसी के आधार पर वे इतने लम्बे काल से अपनी रक्षा करते आए हैं ।

अभी तक प्राणिशास्त्र की खोजों से जहाँ तक जाना जा सका है, मनुष्य की उत्पत्ति को दस लाख वर्ष से अधिक समय नहीं हुआ । जैसी स्थिति में आजकल घोर जंगली मनुष्य रहते हैं, उसको प्राप्त किये हुये तो लाख-दो लाख वर्ष का समय ही गुजरा होगा ।

इसके विपरीत चींटी और मधुमक्खी आदि के विषय में बहुत जाँच-पड़ताल करके जगत प्रसिद्ध वैज्ञानिक जूलियन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हक्सले और व्हीलर आदि ने यह निर्णय किया है कि उनका विकास २५ लाख वर्ष पूर्व हो चुका था और तब से उनमें कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ है । इनके संगठन का वर्णन करते हुए एक विद्वान डॉ० स्टाकर्ड हेथम ने लिखा है—

"समस्त सामाजिक कीड़ों में चींटियाँ सबसे अधिक सफल और कदाचित सबसे ज्यादा विचित्र हैं । उनकी समस्त जातियों की संख्या लगभग तीन हजार है । कुछ जातियाँ ऐसी होती हैं, जिनके बिलों में रहने वाले कुल जीवों की संख्या एक सौ के आस-पास ही होती है और किसी-किसी जाति के बिल में पाँच लाख तक प्राणी रहते हैं । अंडा देने वाली थोड़ी-सी 'रानियों' को छोड़कर सभी कोई चींटी बहुत बड़ी नहीं होती । सबसे बड़ी 'नपुंसक' चींटी की तोल भी कभी एक ग्राम (तीस रत्ती) से अधिक नहीं होती । दूसरे शब्दों में एक एक मामूली आदमी के वजन के बराबर होने के लिए एक लाख से अधिक चींटियाँ तराजू के पल्ले में चढ़ानी पड़ेंगी । यह तो सबसे बड़ी चींटी की बात हुई । जिनको आहार ढोने और शत्रुओं से युद्ध करने के लिए अपने शरीर को विशेष रूप से बड़ा और और मजबूत बनाना पड़ता है । छोटी चींटियाँ तो इससे बहुत हल्की होती हैं ।"

इन चींटियों में जो अनेक रहस्यपूर्ण प्रवृत्तियाँ देखने में आती हैं, उनमें सर्वाधिक महत्त्व की बात उनकी योजना व्यवस्था है । भोजन इकट्ठा करने का काम प्राय: श्रमिक चींटियाँ करती हैं । पर प्रत्येक समुदाय में अथवा एक 'बस्ती' में रहने वाली समस्त चींटियों का 'पेट' एक ही माना जाता है । इसलिए श्रमिक चींटियाँ जितनी आहार सामग्री पाती हैं, उसे अपने गले के नीचे के थैले में भर लेती हैं । उसमें से वे अपने हिस्से का थोड़ा-सा अंश अपनी पाकस्थली में पहुँचा देती हैं और शेष में से एक-एक बूँद अन्य सबको बाँट देती हैं । इसकी जाँच करने के लिए वैज्ञानिकों ने आहार ढूँढ़ने वाली चींटियों के मार्ग में चीनी का गाढ़ा शर्बत रख दिया और उसमें कोई रासायनिक नीले रंग का पदार्थ मिला दिया । श्रमजीवी चींटियों ने शर्बत को खा लिया और बिल में पहुँचकर उसके समस्त निवासियों, बच्चों तक को वही खाया हुआ शर्बत बाँट दिया । फल यह हुआ कि 'बस्ती' में रहने वाले समस्त प्राणियों के पेट में से थोड़ी नीलिमा झलकने लगी । इस प्रकार समस्त समुदाय का पेट पालन हो जाता है । यदि मनुष्य समाज ने इस सिद्धान्त को समझकर व्यवहार रूप में पालन करना आरम्भ कर दिया होता तो आज कहीं भी इतने चोर, डाकू, उठाईगीर, ठग, लुटेरे आदि नहीं मिलते ।

यह तो स्पष्ट ही है कि व्यक्ति जब तक जीवित रहेगा, अपनी भूख-प्यास की पूर्ति करने की समस्या तो उसे सुलझानी ही पड़ेगी । यदि उसका पेट सीधी तरह नहीं भरेगा तो असदाचरण का आश्रय लेगा । समाज के भले-बुरे का ख्याल छोड़कर जैसे बनेगा, वैसे अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रयत्न करेगा । इससे समाज का और उसका दोनों का ही अकल्याण होगा । समाज के सब सज्जन, परिश्रमी और साधन-सम्पन्न लोगों को शंकाकुल रहना पड़ेगा और उन कुमार्गगामी अपराधियों को सदैव शारीरिक और मानसिक कष्ट सहना करना पड़ेगा । समाज उनको चाहे बाहर रखकर खिलाए और चाहे जेल में रखकर, बिना खाए तो वे कभी रहेंगे नहीं । इसलिए यदि मनुष्य चींटी और मधु-मक्खियों के समतुल्य भी समझदारी से काम लेता तो आज उसकी अवस्था कहीं अधिक सुरक्षित होती ।

चींटी की कुछ इन्द्रियजन्य शक्तियाँ भी मनुष्य से कहीं उच्चकोटि की होती हैं । वे अपने मुख के सामने के बालों से स्पर्श और घ्राण का काम लेती हैं । हमको जो गन्ध आती है, उसके द्वारा किसी वस्तु के रूप का ज्ञान कदापि नहीं हो सकता, पर चींटियाँ गन्ध से पदार्थ के रूप को भी समझ लेती हैं । जब चींटियों की विभिन्न 'बस्तियों' के बीच लड़ाई हो जाती है, तो भी वे गन्ध के सहारे ही मित्र और शत्रु की पहचान कर लेती हैं अन्यथा न तो उनकी वेषभूषा भिन्न प्रकार की होती है और न वे अपने दल का कोई विशेष रण-घोष ही करती हैं । इसलिए यही मालूम पड़ता है कि इस मसले को वे अपने मुँह के बालों द्वारा स्पर्श करके ही हल करती हैं । वे जिस रास्ते पर होकर एक बार निकल जाती हैं, उसे अपने पैरों की गन्ध के द्वारा ही फिर पहचान लेती हैं और इसी उपाय से दूर तक इधर-उधर घूमकर फिर अपने घर को वापस आ सकती हैं ।

कई प्रकार की चींटियों में 'समझ' के भी कुछ लक्षण दीख पड़ते हैं । ड्राइवर श्रेणी की चींटी रास्ते में कोई छोटा नाला-नाली आ जाने पर उसका पुल बाँधकर शेष समस्त दल को पार पहुँचा देती हैं । वह इस प्रकार कि प्रत्येक श्रमिक चींटी एक छोटा तिनका मुँह में पकड़ लेती है और तब वे एक-दूसरे के तिनके को पकड़ती हुई नाले के आर-पार पर जीवित लड़ी बन्द पुल बना लेती हैं । बेट नामक वैज्ञानिक ने अपने निरीक्षण के आधार पर लिखा है कि 'दक्षिण अमरीका' के एक नगर में चींटियों ने ट्राम की पटरी को पार करने के लिए ऐसा ही पुल बनाया था । पर जब उसमें से बहुत-सी ट्राम से कुचल गईं तो उन्होंने बजाय पुल बनाने के पटरी नीचे से खोदकर सुरंग बनाई । जब श्री बेट ने सुरंगों इन बन्द कर दिया तो उन्होंने पटरी के पार जाना बन्द कर दिया और नई सुरंगें खोदकर ही उस पार गईं । इसी प्रकार एक वृक्ष पर चींटियों का चढ़ना रोकने के लिए उसमें तने के चारों तरफ दो-चार इन्च चौड़ा चिपकने वाला 'लासा' लगा दिया गया । चींटियों ने इधर-इधर से मिट्टी, पत्थर के छोटे कण लाकर लासे पर डालकर उसे पाट दिया और उस पार पहुँच गईं ।

चींटियों की स्वच्छता-भावना भी बहुत ऊँचे दर्जे की होती है । वे अपने शरीर की बहुत अधिक सफाई करती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । श्री मेककुक ने चींटियों ने एक जोड़े का निरीक्षण करके बतलाया कि उनमें से एक तो पृथ्वी पर लेट गई और दूसरे ने उसे चाटकर साफ करना आरम्भ किया । पहले उसने चेहरे को साफ किया, फिर छाती को खूब चाटा । इसी प्रकार कूल्हा, उदर और टाँगों को भी चाट कर पूरी तरह साफ किया, इस तमाम समय में सफाई कराने वाली चींटी ऐसी शान्ति और संतोष के साथ पड़ी रही, जिससे विदित होता था कि वह अपने साथी के काम से बहुत संतुष्ट और प्रसन्न है ।

'फसल जमा करने वाली चींटियाँ' होती हैं, जो अपने बिलों में खेती से अनाज या घास आदि के बीज इकट्ठा करती हैं । ये अक्सर शुष्क अथवा मरुभूमि के प्रदेशों में रहती हैं । इन प्रदेशों में अक्सर बहुत समय तक सूखा पड़ जाता है और खाद्य सामग्री का अभाव हो जाता है । इसलिए ये चींटियाँ अपने बिलों के भीतर अधिक से अधिक तरह-तरह के बीज जमा कर लेती हैं और अभाव के दिनों में उन्हीं को खाकर गुजर करती हैं । हमारे देश में पुराने समय में अकाल के दिनों में अनेक बार लोग ने इन चींटियों के बिलों को खोदकर एक-एक दो-दो मन अनाज निकाला था ।

'लेसियन्स' नाम की अमरीका की चींटी एक अन्य छोटे कीड़ों को पालती हैं और उन्हें अनाज तथा पौधों की जड़ों के पास ले जाकर छोड़ देती हैं, वहाँ वे उसके रस को चूस लेते हैं । कुछ समय चींटी उस कीड़े को अपने बालों में थपथपाती हैं, जिससे वे रस को उगल देते हैं और चींटियाँ उसे चाट लेती हैं । इस प्रकार वे इन जीवों से वही काम लेती हैं । जैसा मनुष्य गायों और भैंसों को पालकर उनका दूध दुहकर लेते हैं ।

इस प्रकार चींटियाँ, मधुमक्खियाँ और दीमक आदि जीव बहुत छोटे और नगण्य जान पड़ने पर भी सामूहिक शक्ति का इतना अधिक विकास कर चुके हैं कि बड़े-बड़े जीव भी उन पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते, वरन् जैसा मशहूर वे साँप और हाथी जैसे जोरदार जीवों को भी अपनी सामूहिकता के बल पर 'भगा देते हैं या मार देते हैं ।' वे सदा अपने सामुदायिक नियमों का पूरी तरह पालन करते हैं और फलस्वरूप किसी को भूखा-नंगा नहीं रहना पड़ता । यदि मनुष्य इन जीवों से इस विषय में प्रेरणा ले सका होता तो आज बहुत-सी समस्याएँ हल हो गई होतीं ।

चींटियों की अनुकरणीय समाज व्यवस्था

मनुष्य में बुद्धिमत्ता तो है पर उसका विकास तभी होता है, जब दूसरों की सहायता मिले । पढ़ाए प्रशिक्षित किए बिना, कोई मनुष्य या बालक क्रिया-कुशल नहीं हो सकता । यदि उचित सहयोग-सम्पर्क न मिले तो जन्मजात बुद्धिमत्ता रहने पर भी मनुष्य अविकसित परिस्थितियों में पड़ा रह सकता है अथवा कुसंग में कुमार्गगामी हो सकता है ।

इस दृष्टि से चींटियाँ मनुष्य से कहीं आगे हैं, उन्हें प्रकृति ने ऐसी अद्भुत सूझबूझ दी है कि बिना किसी शिक्षा-दीक्षा के वे इतना सुन्दर, सुव्यवस्थित जीवनयापन करती हैं कि उनकी सुरुचि, अनुशासनशीलता और बुद्धिमत्ता पर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

मनुष्य के लिए यदि चींटी बन सकना सम्भव रहा होता तो वह उनके वर्ग में सम्मिलित होकर देखता कि चींटियों की सभ्यता और संस्कृति मनुष्य समाज की अपेक्षा कितनी अधिक प्रगतिशील और बढ़ी-चढ़ी है ।

चींटियों की बाहर से छोटी-सी बाँबी देखकर यह अनुमान लगाना कठिन है कि इसके भीतर अत्यन्त सुव्यवस्थित रूप से लम्बी-लम्बी सड़कें, गलियाँ, दरवाजे कोठे-कमरे और अन्त:पुर बसे हुए हैं । किसी कुशल शिल्पी के तत्वावधान में यह सब बनाया गया प्रतीत होता है । जरा से बिलों के भीतर उतरकर यह देखा जा सकता है कि उनके भीतर कितनी सघन बस्तियाँ बसी हुई हैं और कितनी बड़ी आबादी का निवास है । प्राय: एक बड़े टीले के नीचे बने हुए चींटियों के उपनगर की निवासी चींटियाँ इतनी होती हैं जितनी दिल्ली बम्बई की ।

अपने गाँव नगर निवासियों के हर चींटी भली प्रकार पहचानती हैं । एक भी बाहर वाली घुस आवे तो उसे तुरन्त पहचान लिया जायेगा और मार-कूटकर उसे वापस खदेड़ दिया जाएगा ।

एक भी चींटी कभी बेकार नहीं बैठती । उन्हें आराम हराम है । वे समूह बनाकर काम करती हैं और हर दल अपने क्रिया-कलाप में कीर्तिमान स्थापित करने के लिये पूरे उत्साह, धैर्य और सन्तोष के साथ लगा रहता हैं । मानो कर्म की सुव्यवस्था ही एकमात्र उनकी महत्वाकांक्षा हो । गौर से देखें तो प्रतीत होगा कि उनका एक दल एक रास्ते जा रहा है तो दूसरा दल उसी मार्ग में वापस लौट रहा है । लौटने वालियों के मुँह में अनाज, कीड़ा, घास-फूस, मिट्टी आदि कुछ न कुछ जरूर होगा । यह संग्रह अपने लिए नहीं पूरे परिवार के लिए करती हैं । खाद्यसंग्रह, गृहनिर्माण प्राय: इस भाग-दौड़ का उद्देश्य होता है । घायलों और बीमारियों की सेवा-सहायता से लेकर अंडे बच्चों के परिषोषण तक के लिए भी उनकी गतिविधियाँ चलती हैं । बिल में पानी भर जाने या कोई संकट उपस्थित होने पर वे नया स्थान ढूँढने, बनाने और स्थानान्तरण के साथ-साथ संग्रहीत माल-असबाब ढोने की आपत्तिकालीन व्यवस्था भी बनाती हैं । कहीं चीनी का बड़ा भण्डार दीख पड़े या कोई स्वादिष्ट कीड़ा हाथ लग जाये तो फिर दैनिक कार्यों को बदलकर वे फिर जल्दी-जल्दी उस लाभ से लाभान्वित होने का प्रयत्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करती हैं । माल मिलते ही वे तत्काल उसे खाने नहीं बैठ जातीं वरन् उसमें से क्वचित जलपान करके बिल में जमा करने के लिए जुट जाती हैं और सुविधानुसार उसे स्वाद और सन्तोषपूर्वक खाती हैं ।

चीटियों के तीन वर्ग हैं—(१) रानियाँ, (२) राजा लोग, (३) बाँदियाँ । रानी एक ढेर में चार-पाँच से अधिक नहीं रहतीं । वे औसत चींटी से मोटी-तगड़ी होती हैं, उनका कार्य केवल बच्चा उत्पन्न करना होता है । प्राय: सारा समय उनका इसी में व्यतीत होता है । अस्तु बाहर निकलने, घूमने को भी फुरसत नहीं होती । नर्सें, दाइयाँ, रसोइया, चौकीदार उनके पास मुस्तैदी से अपने ड्यूटी पर तैनात रहते हैं ।

अंडों को सेने का काम बाँदियाँ करती हैं । प्रसव होते ही वे उन्हें सुरक्षित स्थान पर ले जाती हैं और जब तक बच्चे बड़े न हो जाएँ तब तक बाँदियाँ उनका अपने निज के बच्चों जैसा ही लालन-पालन करती हैं । अंडे में से एक नन्हीं-सी 'इली' निकलती है यह जमीन पर पड़ी कुनमुनाती रहती है । भूखी होने पर मुँह खोलती है तो मौसियाँ तुरन्त उनके मुँह में कोमल और सुपाच्य ग्रास रख देती हैं । उपयुक्त समय पर वे इन बच्चों को सहारा देकर घुमाने भी ले जाती हैं ।

बाँदियाँ न विवाह करती हैं, न बच्चे देने के झंझट में पड़ती हैं । उन्हें नियत कर्तव्य पालन में गृहस्थी बसाने से अधिक सन्तोष रहता है ।

राजाओं के पंख उगते हैं वे बिलों से निकलकर उड़ान भरते हैं । जैसे ही वे उड़े कि पक्षी उन पर झपट पड़ते हैं और बात ही बात में उन्हें उदरस्थ कर जाते हैं । कुछ के पंख टूट जाते हैं और भारी होने के कारण घर पर लौटने में असमर्थ रहकर प्राण गँवाते हैं । जो लौट आते हैं वे अपने पर नोंच फेंक देते हैं और अन्य साथियों की तरह रहने में ही कल्याण मानते हैं । व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा कितनी महँगी पड़ती है, उसे वे अनुभव द्वारा भली प्रकार सीख लेते हैं और फिर अकेले आकाश छूने की सनक को सदा के लिए त्याग देते हैं ।

चीटियाँ सदा एक ही स्थान पर नहीं रहतीं । जब उनका नगर बस जाता है उसमें निवास, आवास, गोदाम, चिकित्सालय, विश्रामगृह, सड़कें, गलियाँ आदि सभी कुछ बन जाता है और खाने के लिए पर्याप्त खाद्य भण्डार जमा हो जाता है तो नर चीटियाँ यह अनुभव करती हैं कि अब दल में निठल्लापन आ जायेगा और आरामतलबी से श्रमशीलता की आदत घट जाएगी । इस संकट को टालने के लिए तो राजा लोग नए नगर बसाने, नया क्षेत्र ढूँढ़ने के लिए निकल पड़ते हैं और जब उपयुक्त भूमि मिल जाती है तो रानियों को साथ लेकर नई जगह में चले जाते हैं । बाँदियाँ वफादार साथी की तरह उनके पीछे चल पड़ती हैं और नये सिरे से नया नगर बसाने और आवश्यक उपकरण जुटाने में लग जाती हैं, इस प्रकार अमीरी और आरामतलबी से उत्पन्न होने वाले संकटों से वे बचकर अपनी कर्म-निष्ठ बनाए रहती हैं । पुराना नगर छोड़ने और नया देश बसाने का उनका यह क्रम निरन्तर चलता ही रहता है, वे एक जगह बहुत समय नहीं रहती ।

अमेरिका में पाई जाने वाली अट्टा चींटी खेती-बाड़ी भी करती हैं, वह अपने रुचि के बीज जमा करने पास की नम जगह में गाड़ती हैं और उगने वाली फसल की निराई-गुड़ाई करती रहती हैं । जब फसल पकती है तो उसका एक-एक दाना वे अपने बिलों में जमा कर लेती हैं । ये चींटियाँ पास-पड़ोसी के किसानों की फसल पर भी चढ़कर पके हुए बीज तोड़तीं और ढोकर घर में जमा करने में भी प्रवीण होती हैं ।

चींटी ही नहीं दीमक भी अपने आकार-प्रकार को देखते हुए उतनी कर्मशील और दूरदर्शी है कि उसके क्रियाकलाप से मनुष्य कुछ सीख-समझ सकता है और अपनी वैयक्तिक एवं सामाजिक स्थिति में उपयोगी सुधार कर सकता है ।

दीमकों में अधिकांश अन्धी होती हैं तो भी उनकी घ्राणशक्ति लगभग आँखों जैसी ही सहायता करती हैं और वे बिना भटके अपना जीवनक्रम चलाती रहती हैं । आँखों वाली दीमकें उनकी कठिनाई को समझती हैं और स्वयं हटकर उनके लिए रास्ता देती हैं और समय पर उन्हें अतिरिक्त सहायता पहुँचाती हैं ।

दीमकों के बिलों के ऊपर जो मिट्टी का आच्छादन होता है, वह इतनी मजबूती और कुशलता से बना होता है कि वर्षा का पानी उसमें प्रवेश करके उनमें निवास करने वाली दीमकों की कोई क्षति नहीं कर पाता । छोटे-मोटे नाले झरनों के ऊपर से वे ऐसे मजबूत पुल बनाती हैं कि वर्षों तक उस रास्ते उनका आना-जाना इधर-उधर हो सके । इस प्रकार के जल अवरोध को दूर कर सकने में भी सफल होती हैं । छोटी-सी चींटी एवं दीमक की यह गतिविधियाँ लम्बे-चौड़े आकार वाले मनुष्य के लिए अनुकरणीय हैं ।

मनुष्य जाति जैसे आचार-विचार और रहन-सहन छोटी-छोटी पिपीलिकाओं में देखकर स्वभावत: आश्चर्य होता है । जीव-जन्तुओं की 'हीमेनोटेरा' शाखा में जिसमें बर्र, ततैया और मक्खियाँ भी पाई जाती हैं । चींटी उसी प्रकार सबसे ज्यादा समझदार है जिस तरह विश्व की समस्त जातियों में भारतीयों का आत्मज्ञान । संगठन, सूझबूझ, विचार शक्ति और अन्त:प्रेरणा के साथ-साथ कर्तव्य पालन की मर्यादा, परस्पर हित-अहित का ध्यान जितना यह चीटियाँ रखती हैं उतना ही मनुष्य भी रखता होता तो वह दुनिया का सबसे अधिक सुखी प्राणी होता । आज की तरह अशिक्षा, जनसंख्या, बेकारी, अपराध आदि समस्याओं में वह फिरता नहीं । माना कि चींटियों को भगवान ने 'वाक्' नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिया तथापि उनके सिर में पाए जाने वाले ज्ञानतन्तु इतने सजग होते हैं कि एक-दूसरे के सिर पर स्पर्श करते ही उनके विचार वे आसानी से ग्रहण कर लेती हैं । परावाणी का ज्ञान भारतीयों ने सम्भवत: चीटियों से ही प्राप्त किया और ऐसी योग साधनाएँ विकसित कर डालीं जो मस्तिष्क के ज्ञान तन्तुओं को इतना सजग कर देती हैं कि किसी के भी मन की, अन्त:करण की भाव लहरियों को आकाश के माध्यम से ही पकड़ा जा सके, भले ही कोई मुँह से कुछ बताये या नहीं ।

यह तो है कि स्वार्थ और अहंकारवश यह चीटियाँ भी लूटमार करती हैं । पड़ोसी चीटियों की कालोनियों पर आक्रमण करके सामान छीन ले जाती हैं, पर उसमें भी उनका अनुशासन और नैतिकता मनुष्यों से बढ़कर होती है । जीवशास्त्री डॉ० डगलस ने अफ्रीका के जंगलों में हुए चीटियों के युद्ध का बड़ा रोचक वर्णन किया है और लिखा है कि महायुद्ध जैसा यह हमला चीटियों के दो दलों में १७ दिन तक चला । प्रतिदिन प्रात:काल से आक्रमण प्रारम्भ होता और सायंकाल को जाकर युद्ध विराम होता है । जिस तरह मनुष्यों के युद्ध में संचार, निर्माण, सप्लाई, एम्युनिशन आदि अलग-अलग विभाग काम करते हैं, उसी प्रकार चीटियों के दोनों दलों में रसद पहुँचाने वाले अलग, निर्माण कार्य वाले अलग, सन्देश ले जाने वाले अलग विभाग काम कर रहे थे । लड़ने वाली चीटियाँ सेंग्विन कहलाती हैं । और तो और रात में उनका जासूसी विभाग भी सक्रिय रहता । अनेक दुश्मन चीटियाँ बन्दी बनायी जातीं और उनके साथ ठीक कैदियों जैसा व्यवहार होता । लूट में एक-दूसरे का माल मिलता वह जमा किया जाता । जब तक एक दल की चीटियाँ और उनकी रानी मार नहीं डाली गई तब तक युद्ध अविराम चलता रहा और फिर जीते पक्ष की चीटियों का विजयोल्लास देखते ही बनता था । खूब शराब पी गई, दुम हिला-हिलाकर चीटियाँ नाचीं कूदीं । यह उत्सव कई दिन तक चलता रहा । विजित चीटियाँ जो बचीं दास बनाकर रखी गईं और उन्हें मजदूरी का काम सौंपा गया । मनुष्य जाति में भी सब कुछ इसी प्रकार का चलता है । यदि मनुष्य आत्मतत्व को नहीं पहचानता और सामान्य प्राकृतिक जीवों की भाँति स्वयं भी जिन्दगी जीता है, तो उसे भी जीव-जन्तुओं का एक वर्ग ही माना जाएगा । ऊपर 'शराब' शब्द को प्रयोग किया गया है सो यों ही निरर्थक में नहीं । मनुष्य जाति अपने मद्यपान की बुराई को सम्भव है यों समझ न पाती हो कि उसकी बुद्धि अपने दोष को दोष नहीं विशेषण मानती है, सम्भवत: इसीलिए आज शराब सभ्यता का प्रतीक मानी जाने लगी है किन्तु उससे होने वाली बीमारियाँ, जातीय समर्थता का विनाश, आर्थिक अपव्यय, बौद्धिक क्षमता का नाश और फिर वंशानुगत कुसंस्कारों की जड़ें आदि ऐसी भयंकर हानियाँ हैं, जिन पर लोग गौर नहीं करते । चीटियाँ भी कई बार ऐसी बेवकूफी करती हैं, उसका मूल्य कितना भयंकर चुकाना पड़ता है यह कभी मनुष्य को पता चले तो एक बार तो वह भी शराब पीने से डरे बिना रहे नहीं ।

चीटियों के लिए शराब की ठेकेदारी एक प्रकार का 'भुनगा' करता है । शैतान किस प्रकार क्षणिक सुख और उत्तेजना की मृगतृष्णा में फँसाकर मनुष्य को शराब पिलाता है । उसका रोचक उदाहरण देखना हो तो चीटियों के पास-पड़ोस में रहने वाले इस सुनहरे रंग के भुनगे को ढूँढ़ना पड़ेगा । इसके शरीर में सुनहरे बालों के गुच्छे होते हैं । उनमें से एक विशेष प्रकार का खुशबूदार द्रव्य निकलता है । भुनगा पहले तो एक विशेष प्रकार की मनमोहक संगीत ध्वनि करता है । कर्णेन्द्रिय की तृष्णा चीटियों के उधर खींच ले जाती है । झुण्ड की झुण्ड चीटियाँ उसके पीछे चल देती हैं । भुनगा बीन बजाता आगे बढ़ता है, सम्मोहित चीटियाँ पीछे-पीछे । अब भुनगा अपने शरीर से वह मादक पदार्थ निकालता है जिसे अपनी प्यारी शराब बनाकर चीटियाँ पीने लगती और पी-पी कर झूमने लगती हैं । सिर पर सवार शैतान उचित-अनुचित सोचने नहीं देता, उसी प्रकार चींटियाँ भी होश-हवाश खोकर पीती हैं और इतना अधिक पी लेती हैं कि बेहोश तक हो जाती हैं । अब भुनगा उनको इस प्रकार शिकार बनाता है जैसे बीमारियाँ शराबी मनुष्य के शरीर को । इस दृष्टि से मनुष्य भी चीटियों जैसा मूर्ख प्राणी कहा जाए तो कुछ अत्युक्ति नहीं । चीटियों में तो भी ऐसा होता है । उनकी समझदार रानी शराबी चीटियों के उस शरारती भुनगे के इन्द्रजाल में न फँसने की चेतावनी देती रहती है । पर मनुष्य-समाज में ऐसे समझदार और सेवाभावी लोग कहाँ जो मनुष्य को इस बुरी लत में बचा लें ।

कई भुनगे शिकारी नहीं होते वे चीटियों को ऐसे ही शराब पिलाते रहते हैं पर उससे भी चीटियों में कर्तव्य विमुखता, क्रूरता ऐसी ही पैदा होती है जैसे किसी भी शराबी मनुष्य में । ऐसी शराबी चीटियाँ तक जब अपने दल में बुरी मानी जाती हैं तो शराबी मनुष्य को यदि बुरा कहा जाए तो उसमें क्या आश्चर्य ?

मनुष्यों की दुनिया बड़ी विचित्र है । चीटियों की भी उससे कम नहीं । मनुष्य के हर काम में समझदारी दिखाई देती है किन्तु यदि ध्यान से देखा जाए तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चींटियों का रहन-सहन उनसे भी समझदारी का दिखेगा । यह विधिवत घर बनाकर रहती हैं । कहते हैं एम्पायर स्टेट बिल्डिंग की संसार की सबसे बड़ी आठ सौ से अधिक कमरों वाली इमारत है, पर चींटियों का हर किला ऐसा ही विशाल होता है । स्थापत्य कला में चींटियाँ मनुष्य से थोड़ा ही पीछे हैं । पानी निकालने और वर्षा के दिनों में बिल के अन्दर पानी सुरक्षित रहने के लिए यह बढ़िया घर बनाती हैं ।

पौष्टिक आहार की आवश्यकता को यह अच्छी तरह समझती है, सो वन की पंक्तियाँ इकट्ठी करने से लेकर कुछ चींटियों का दूध निकालकर पीने-पिलाने का चींटियों को विलक्षण ज्ञान होता है । मनुष्य को पशुपालन-कुशलता पर गर्व हो सकता है । पर चींटियों में और मनुष्यों में इस दृष्टि से ज्यादा अन्तर नहीं । दूध (हनीड्यू) देने वाले चींटियाँ गायों की तरह सफेद होती हैं । उनकी सुरक्षा और विकास के लिए चींटियाँ विशेष व्यवस्था रखती हैं । उन पर सन्तरी तैनात होते हैं, जो बिलकुल चरवाहों जैसा काम करते हैं । कृषक चींटियाँ खेती करती हैं । भंगी सफाई, सिपाही रक्षा और चौकीदारी का काम करते हैं तो शिल्पकार चींटियाँ घर आदि बनाने का । इतना होने पर भी वे एक कुटुम्ब के सदस्यों की भाँति ऊँच-नीच और छूत-अछूत का भेदभाव किये बिना संगठित जीवनयापन करती हैं । आलसी और अकर्मण्य को अपने बच्चे भी अच्छे नहीं लगते, सो चींटियों के यहाँ भी आलसी नर अधिकांश मार ही डाले जाते हैं । मनुष्य समाज में लोग अपनी अभावजन्य स्थिति के कारण नष्ट होते हैं ।

कहते हैं चींटियों से हाथी भी डरते हैं, यह बात सच है । उष्ण कटिबन्ध में पाई जाने वाली पैरासोल चींटियाँ क्रोध के समय बड़ी भयंकर और हाथी को भी मार डालने वाली होती हैं पर इन्हीं चींटियों की विशेषता है कि वे बागवानी का भी शौक रखती हैं और अपनी उपयुक्त बढ़िया फलों और छाया वाले पौध लगाकर उनका विधिवत पालन-पोषण करती हैं ।

चींटियों का जीवन-व्यापार और मनुष्य जाति का जीवन-व्यापार एक स्थान पर लिखकर तुलना करते हैं तो लगता है शरीर के आकार-प्रकार में अन्तर होने पर भी मानसिक और बौद्धिक क्षमताएँ एक ही तत्व के गुण प्रतीत होते हैं । शास्त्रकार का कथन है कि जीव मात्र आत्मा के टुकड़े हैं गलत नहीं है । यदि मनुष्येतर दुनिया का सूक्ष्म अध्ययन करें तो पता चलेगा कि आत्मचेतना ही है जो कहीं तो विराट् सूर्य रूप में अपनी सृष्टि के साथ क्रीड़ा करती है तो वही कहीं मनुष्य बन जाती है, कहीं चींटी और दीमक । जीव मात्र में एक ही आत्मा देखने और जानने वाला ही सच्चा योगी, पण्डित और ज्ञानी हो सकता है ।

यह संसार केवल मनुष्य के लिए ही नहीं है

परमात्मा ने मनुष्य को अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक बुद्धि, अधिक प्रतिभा और अधिक मेधा क्या प्रदान की कि वह अपने को सृष्टि का अधिपति ही समझने लगा । जबकि यह सिवा मिथ्याभिमान के कुछ नहीं है । स्मरण रखा जाना चाहिए कि यह संसार मनुष्य के लिए ही नहीं बना है । इसमें अनेक प्राणियों के निवास और निर्वाह की व्यवस्था तथा परिस्थितियाँ परमात्मा ने बनाई हैं और उन परिस्थितियों में अन्य प्राणी भी अपनी आवश्यकता पूरी करते हैं । एक संयुक्त परिवार में जैसे सदस्यों की अलग-अलग इच्छाएँ पूरी करने के लिए अलग-अलग व्यवस्था कर पाना सम्भव नहीं होता । सभी के लिए सम्मिलित व्यवस्था की जाती है और सभी सदस्यों को अधिकतम सुविधाएँ प्राप्त हों यह ध्यान रखा जाता है, उसी प्रकार परमात्मा ने अपने प्राणिपरिवार के लिए संयुक्त व्यवस्था की है । उस व्यवस्था से किसी को शिकवा-शिकायत करना अनुचित है ।

पृथ्वी पर करीब चार अरब मनुष्य रहते हैं । यह संख्या अपने आप में बहुत बड़ी दीखती है, लेकिन अन्य प्राणियों को देखते हैं कि उनकी संख्या का पता चलता है तो मनुष्य एक अल्पसंख्यक प्राणी भर है । सभी देशों में रहने वाले समस्त धर्मानुयायी, भाषा-भाषी और विभिन्न संस्कृतियों वाले मनुष्यों की इस संख्या से हजारों गुना चींटी, मच्छर जैसे कीड़े थोड़े-से क्षेत्र में ही मिल जाएँगे । ये तो छोटे-छोटे प्राणी हैं । बड़े और विशालकाय प्राणियों में हाथी, मेंड़ा, सिंह, हरिण जैसे प्राणी भी मनुष्य की अपेक्षा कहीं अधिक हैं । अन्य पशु-पक्षियों का तो कहना ही क्या ? उड़ने वाली चिड़ियों की जाति और संख्या मनुष्य की सभी जातियों और समाज संख्याओं की अपेक्षा कहीं अधिक है ।

इस स्थिति में यह सोचना और समझना कि इस पृथ्वी पर केवल मनुष्य का ही अधिकार है, सृष्टि के विधान को, परमात्मा के नियमों को चुनौती देने जैसा है, अपने आपको सबसे बड़ा, सर्वोपरि और सर्वश्रेष्ठ समझना तथा सृष्टि पर केवल अपना ही एकाधिकार मानकर उसके अनुसार व्यवहार करना उद्धत अहंकार के अतिरिक्त और कुछ हो नहीं सकता । अपने सोचने-समझने के ढंग में परिवर्तन करना चाहिये और रीति-नीति में तथ्य तथा विवेक का समन्वय करना चाहिये । यह मानना चाहिये कि मनुष्य भी परमात्मा के अगणित असंख्य पुत्रों में से एक है, उसे अन्य प्राणियों की अपेक्षा कुछ विशेषताएँ, कुछ सुविधाएँ, कुछ योग्यताएँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक मिली, यह बात सच है । इन कारणों से उसे ज्येष्ठ और श्रेष्ठ भी कहाँ जा सकता है, पर इस श्रेष्ठता की सार्थकता उत्कृष्ट सौजन्यता में हैं न कि उद्धत अहंकार में । छोटे भाई के प्रति बड़े भाई के जो कर्तव्य होते हैं, अग्रज को अनुज के प्रति जिस उदारता, स्नेह का परिचय देना चाहिये उसी स्तर की उदारता मनुष्य को भी अपने छोटे भाइयों से बरतनी चाहिये । इसी में मनुष्य का बड़प्पन, उसकी श्रेष्ठता का परिचय छिपा हुआ है । उसका बड़प्पन उसकी मनुष्यता के साथ जुड़ा हुआ है और वह सहयोग तथा विवेक जैसी सत्प्रवृत्तियाँ अपनाकर ही श्रेयभाजन बन सकता है ।

यदि संख्या, शक्ति और क्षेत्र की दृष्टि से मनुष्य का मूल्यांकन किया जाए और पृथ्वी पर यह अपने अधिकार का दावा करे तो औचित्य की दृष्टि से, अपने मापदण्डों के ही आधार पर वह सृष्टि के कई प्राणियों से पिछड़ जाएगा । बुद्धि के अलावा मनुष्य में ऐसी और कौनसी विशेषता है, जिसके आधार पर वह अन्य प्राणियों की तुलना में इक्कीस सिद्ध हो सके । सही बात तो यह है कि छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़ों में भी ऐसी अगणित विशेषताएँ हैं, जो अपने क्षेत्र में कई तरह से मनुष्य को भी चुनौतियाँ दे सकती हैं और मनुष्य को पिछड़ा हुआ सिद्ध करती हैं ।

उदाहरण के लिए मधुमक्खियों के जीवन-चक्र का ही बारीकी से अध्ययन किया जाय तो उनकी बुद्धिमत्ता और क्रिया-कुशलता को देखकर दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ेगी । पहाड़ी मधुमक्खी मैदानी मधुमक्खी की अपेक्षा बड़ी होती है, उनके छत्ते भी बड़े होते हैं । एक छत्ता प्राय: ७ फुट लम्बा और ४ फीट चौड़ा होता है । उन छत्तों से वर्ष भर में २५ से ४० किलोग्राम तक शहद प्राप्त होता है । सबसे छोटी मधुमक्खी जिन्हें 'लिटिलबीज' कहा जाता है, हथेली के बराबर छत्ता बनता है । एक वर्ष में उनसे अधिकतम एक पौंड शहद मिलता है । अब आइए देखें इनका परिवार और परिवार की व्यवस्था । बड़े छत्ते में लगभग २० हजार मक्खियाँ रहती हैं । ये सभी मक्खियाँ रानी मक्खी का अनुशासन मानती हैं । वही प्रजनन और परिवार की वृद्धि का काम करती हैं । जब रानी मक्खी बूढ़ी हो जाती है तो वह अंडे देना बन्द कर देती है और उसे अपना सिंहासन खाली करना पड़ता है । नई रानी के कार्य और अभिषेक का दायित्व भी बूढ़ी रानी ही निभाती है । जब तक वह अंडे देती रहती है तब तक सूतिका-गृह में ही रहती है । अंडे देना बन्द करने के बाद वह पहली बार सूतिका-गृह छोड़कर बाहर आती है और यह देखती है कि २० हजार मक्खियों के इस परिवार में कौन-सी मक्खी निरन्तर अंडे देते रहने की क्षमता से सम्पन्न है । यह चुनाव वह लगभग दस दिन में पूरा करती है ।

रानी मक्खी एक दिन में लगभग १००० अंडे देती है और अधिकतम दो वर्ष तक जीवित रहती है । प्रौढ़ होते ही वह प्रतिदिन अंडे देने लगती है लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उसे प्रतिदिन नर समागम करना पड़ता है, रानी मक्खी जीवन में केवल एक बार ही नर समागम करती है और उसी में प्राप्त शुक्राणुओं को अपने पेट की विशिष्ट थैली में रख लेती है । अंडे देने के बाद रानी का दायित्व समाप्त हो जाता है । उनके पालन-पोषण का काम अन्य मक्खियाँ सँभालती हैं । रानी के लिए तो अंडे भर देने का काम होता है । अंडा तीन दिन के बाद लारवा बनता है । उसके हाथ, पैर, मुँह आदि कुछ नहीं होते । इन लारवाओं को दाई मक्खियाँ अपने सिर की ग्रन्थियों से निकलने वाला दूध पिलाकर पालती हैं । लारवा तीन दिन के बाद प्यूपा बन जाता है और उसमें से मक्खी निकल आती है ।

इस प्रकार मधुमक्खियों का परिवार निरन्तर बढ़ता रहता है और उसका प्रत्येक सदस्य छत्ते का विस्तार करने में लगा रहता है । खोजी मक्खियाँ दूर-दूर तक जाकर यह पता लगाती हैं कि इस समय कहाँ पर शहद देने योग्य फूल खिले हैं ? उसकी सूचना वे छत्ते की अन्य मक्खियों को भी देती हैं और तभी यह तय हो जाता है कि अगले दिन कहाँ और किस दिशा में शहद इकट्ठा करने के लिए जाना है । मधु संचय के अतिरिक्त यह मक्खियाँ छत्ते की सुरक्षा का भी उत्तरदायित्व सँभालती हैं और छत्ते को छेड़ने वाले शत्रुओं पर हमला करती हैं । छोटे-मोटे शत्रु तो इन हमलों में अपने प्राण ही गँवा बैठते हैं । इतनी बुद्धिमत्ता, सूझबूझ, संगठन और एकता मनुष्य में आ जाए तो सम्भवत: वह दुनिया ही नहीं समूचे विश्व-ब्रह्माण्ड पर अपना सुव्यवस्थित शासन स्थापित कर ले ।

किसी ठीक-ठिकाने पर रहने और योजना-पूर्वक अपनी बस्ती बसाने में मनुष्य या मधुमक्खी ही सक्षम नहीं है, टरमाइड्स जाति का एक क्रीड़ा आथ्रोपादा जमीन के भीतर बहुत ही कुशलता के साथ घर बसाकर रहता है । यह कीड़ा जमीन के भीतर शहर बसाकर रहता है । वह चींटी और दीमक से भी बुद्धिमान है । इस जाति के कीड़ों द्वारा आपस में जिस ढंग से श्रम का वर्गीकरण करते हैं वह अपने आप में अद्वितीय और अनूठा है । ये कीड़े लाखों की संख्या में इकट्ठे रहते हैं और इतने सुयोजित ढंग से कि क्या मजाल तनिक भी अव्यवस्था फैल जाए । ये अपने समुदाय की रानी के आदेश-निर्देशों का पालन करते हैं । कुछ कीड़े भोजन एकत्रित करने का काम करते हैं कुछ निर्माण कार्य में लगते हैं और किन्हीं को प्रजनन कार्य सौंपा जाता है ।

दीमक लकड़ी खाती है किन्तु उसे पचा पाना दीमक के वश की बात नहीं होती । इस कार्य में सहयोग करता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है एक अति सूक्ष्म जाति का जन्तु फलेजीमेर, जो उसके पेट में घुसकर आँतों में जा बैठता है । दीमक को इस घुस-पैठ की जानकारी होती है और वह फलेजीमेर को निर्विरोध आँतों में घुसने देती है । उसे पता रहता है कि यह जन्तु आँतों में है अथवा नहीं ? यदि फलेजीमेर आँतों में न हो तो दीमक लकड़ी न खाकर और कोई वस्तुएँ चाटकर क्षुधा बुझाती है । मनुष्यों में से किसे यह पता होता है कि उसके पेट में या आँतों में क्या है ?

समय की पाबंदी का कोई व्यक्ति शायद ही इतना ध्यान रखता है जितना कि ये छोटे-छोटे जन्तु प्रत्येक कार्य समय पर करते हैं । मधुमक्खी निश्चित समय पर अपने छत्ते से शहद इकट्ठा करने के लिए उड़ती हैं, उससे एक मिनट भी आगे पीछे नहीं होतीं । मनुष्य समझता है कि उसमें देखने-समझने की अधिक क्षमता है, उसकी इन्द्रिय चेतना अन्य प्राणियों की अपेक्षा अधिक तेजस्वी है, लेकिन कई प्राणी इन्द्रिय संवेदना के क्षेत्र में मनुष्य को बहुत पीछे छोड़ देते हैं । उदाहरण के लिए, कुछ कीड़ों की आँखें मनुष्य की तरह पूरे एक गोल में नहीं रखी होतीं और उनकी आँखों में हजारों लेन्स लगे होते हैं । उनके द्वारा पृथक्-पृथक् बिम्ब मस्तिष्क में उतरते हैं, उनका सम्मिलित अनुभव कर कीड़े मनुष्यों से भी ज्यादा व्यापक क्षेत्र में देख और समझ लेते हैं, कीड़ों के कान नहीं होते, वे कान का काम अगली टाँगों के जोड़ों में रहने वाली ध्वनि ग्रहण शक्ति द्वारा पूरा कर लेते हैं । तितलियाँ पंखों से सुनने का काम लेती हैं । झींगुरों की आवाज उनके मुँह से नहीं टाँगों के रगड़ने से उत्पन्न होती है । स्वाद ग्रहण करने में तितलियाँ मनुष्य से कई गुना अधिक आगे हैं । वे नमक और चीनी के स्वाद को मनुष्य की तुलना में दो सौ गुना अधिक बारीकी से समझ लेती हैं । अब से २० करोड़ वर्ष पहले इस पृथ्वी पर पतंगे ही पतंगे भरे पड़े थे । अन्य जीवों की तो उत्पत्ति तो बहुत पीछे जाकर हुई । अभी भी समस्त प्राणियों में छोटे-छोटे जीव-जन्तुओं की संख्या, कुल प्राणियों की संख्या का अस्सी प्रतिशत है । हिमाच्छादित पर्वत शिखरों से लेकर जलते हुए रेगिस्तानों तक में एक जैसे सूक्ष्म और छोटे-छोटे जीव-जन्तु पाए जाते हैं । ये प्राणी उत्तरी ध्रुव की ठण्डक और उबलते झरनों के जल छिद्रों में रहने योग्य स्थिति आश्चर्यजनक ढंग से बना लेते हैं । मनुष्य में कहाँ है वैसी क्षमता ? वह कहाँ विभिन्न ऋतुओं के अनुरूप अपने को रख सकता है या जी सकता है ?

प्रकृति ने अन्य अनेक तरह के प्राणियों को भी इस तरह की विशेषताएँ, विभूतियाँ दे रखी हैं जो सामान्यत: मनुष्य के पास नहीं होतीं । मनुष्य को यह गुमान नहीं करना चाहिये कि नियति ने उसे ही समस्त विभूतियाँ और सम्पदाएँ दे रखी हैं । उसने आवश्यकतानुसार सभी को उपयुक्त शक्तियाँ विशेषताएँ बाँट रखी हैं । मनुष्य इन्हीं अर्थों में श्रेष्ठ हो सकता है कि उसमें चेतना के विकास की अपूर्ण सम्भावनाएँ हैं । यदि इस चेतना को समीम से असीम बनाया जा सके और आत्मविस्तार की उदात्त दृष्टि अपनाई जा सके तो प्रतीत होगा कि यह सुन्दर संसार केवल मनुष्यों के लिए ही नहीं जीवधारियों के लिए भी बना है । इन जीवों की विशेषता है कि वे मिल-जुलकर रहते और एकजुट होकर काम करते हैं । अपनी इसी संगठित शक्ति के कारण दीमकों, टिड्डियों और चिड़ियों का विशालकाय क्षेत्रों को वीरान करतें देखा गया है । जिस और भी वे दल–बल के साथ चल पड़ती है, उसी ओर सफाया कर देती हैं । दुश्मन भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ पाते ।

यह अन्धी चींटियाँ सदैव समूहों में ही चलती हैं । इनका कोई स्थायी घर नहीं होता । खानाबदोशी की तरह यह प्रतिदिन सुबह से शाम तक भोजन की तलाश में घूमती रहती हैं और जहाँ भी रात्रि हो जाती है, वहीं अस्थायी निवास बना लेती हैं । इनके भय से जंगल के हिंसक पशु भी भयभीत रहते हैं । कारण कि ये उन पर एक साथ टूट पड़ती हैं और देखते-देखते ही उनको चट कर जाती हैं । शेर, भालू, घोड़े, बैल, भैंसे, बड़े जानवरों को यह चींटी दल एक घन्टे के अन्दर ही उदरस्थ कर जाता है । मनुष्य को खाने में इन्हें आधे घन्टे से भी कम समय लगता है इनकी संघ शक्ति देखते ही बनती हैं । इनकी पकड़ में जो भी प्राणी आ जाता है उसका मात्र अस्थि-पिंजर ही शेष मिलता है ।

अपने यात्रा के समय सामन आये संकटों, विभिन्न परिस्थितियों का सामना मिल-जुलकर एक साथ यह किस सुनियोजित और संगठित ढंग से करती हैं, उस देखकर, मूर्धन्य वैज्ञानिक इंजीनियर भी आश्चर्यचकित रह जाते हैं । रास्ते में जब भी कभी नदी-नाले और कोई जल स्रोत पड़ जाते हैं तो इनका इंजीनियर दल सक्रिय हो जाता है । और पैर से पैर मिलाकर हजारों चींटियाँ तुरन्त पुल बना देती हैं जिस पर ये चींटियाँ एक दूसरे से लिपटते हुए एक गेंद के आकार में गोल हो जाती हैं और बहते-बहते दूसरे तट पर पहुँच जाती हैं । इसी प्रकार शिविर निर्माण में भी यह एक-दूसरे का सहयोग करती हुई सुन्दर कोठरियों का निर्माण करती हैं ।

मनुष्य की बुद्धिमत्ता, शारीरिक चेष्टा और प्रयत्न-परायणता के मूल में जो अत्यन्त प्रेरक दिव्य प्रवृत्ति झाँकती हैं, उसे सहकारिता कह सकते है । वस्तुत: यही मानव प्राणी की सबसे बड़ी विशेषता है । परस्पर सहयोग की इस महत्ता को समझने वाले लोग देश और जातियाँ ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपराजेय होती हैं । वे कहीं भी चली जाएँ वहीं अपना प्रभाव स्थापित कर लेती हैं ।

कीड़ों की अपनी विशेषता है । उनके फेफड़े नहीं होते पर साँस लेते हैं । वे सुन सकते हैं पर कान नहीं होते, वे सूँघ सकते हैं पर नाक नहीं होती । दिल उनके भी होता है पर उनकी बनावट हमारे दिल से सर्वथा भिन्न प्रकार की होती है

साधारणतः कीड़े अन्डों द्वारा जन्मते है, कुछ कीड़े ऐसे भी हैं जो सीधे बच्चे ही देते हैं । यद्यपि वे बच्चे आरम्भ में बहुत ही छोटे होते हैं । रंग-फर्ड जाति का कीड़ा सीधे माँ के द्वारा ही जन्मता है, बाप का योगदान उसके जन्मने में नहीं होता है । कुमारी एफिड अपने बलबूते पर बच्चे जनने लगती है । कुमारी व्रत निवाहते हुए भी वह जननी का पद प्राप्त कर लेती है ।

प्राचीनकाल के जीव अवशेषों का अध्ययन करने से पता चलता है कि प्राणियों की उत्पत्ति युग में प्रायः सभी प्राणी बहुत विशालकाय होते थे । ड्रेगन फ्लाई का एक पंख ही ढाई फुट का होता था । अभी भी 'वाकिंग स्टिक' नामक कीड़ा संसार का सबसे बड़ा कहा जाने योग्य माना जाता है । इसके पंख १५ इंच लम्बे होते हैं । हिन्दुस्तान में पाया जाने वाला सबसे बड़ी किस्म का टिड्डा एटलस है, उसके पंख १२ इंच के होते हैं ।

कीट-पतंगों में से कुछ हमारे लिए हानिकारक भी हैं, पर इनमें से अधिकांश ऐसे है जो अन्य वनस्पति आदि के उत्पादन में उनके फलने-फूलने में, रोग फैलाने वाले कीड़ों का सफाया करने में बहुत सहायक होते हैं । वे हमारे लिए आर्थिक दृष्टि से बहुत ही उपयोगी कहे जा सकते हैं । इनमें मधुमक्खी, लाख का कीड़ा तितली, भौंरे, चींटी, सर्प, मकड़ी, छिपकली आदि की गणना की जा सकती है ।

दृष्टिकोण की संकीर्णता से मनुष्य जाति भी अपनी नहीं रहती । देश, जाति, धर्म, वंश आदि के नाम पर बँटकर वह दूसरों के लिए आक्रमणकारी बनता है । चोर, डाकू, ठग और दुष्ट मनुष्य होते हुए भी मनुष्य का घात करते हैं । गाँव मोहल्ले में, घर-परिवार में कटा-छनी मची रहती है । मनुष्य का अपनापन संकीर्ण व्यक्तिवाद तक ही सीमित रहता है । माता-पिता, भाई-बहिन और पुत्री तक का शोषण किया जाता रहता है ।

यदि ससीम से असीम बना जा सके और आत्मविस्तार की उदात्त दृष्टि अपनाई जा सके तो प्रतीत होगा कि यह सुन्दर संसार असंख्य जीवधारियों के लिए बना है । इन्हीं जीवों में से एक अल्पसंख्यक प्राणी मनुष्य है । दूसरों के साथ हिल-मिलकर रहने और मिथ्या अहंकार से बचे रहने में ही उसकी वह बुद्धिमत्ता है, जिसके कारण उसे बड़ा बनाया गया है ।

अन्य प्राणधारी भी विभूतियों से रहित नहीं

मनुष्य अपने को ही महत्वपूर्ण मानता रहे और दूसरे प्राणियों को तुच्छ समझे यह उचित नहीं । सोचने की क्षमता, सूझ-बूझ बेशक मनुष्य में अधिक है और इन दो कारणों से उसने उन्नति भी बहुत की है पर इसका अर्थ यह नहीं कि अन्य जीव कूड़ा-करकट ही हैं । भगवान ने उन्हें भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ दी हैं । जिनसे मनुष्य सर्वथा वंचित है । अपने इन ईश्वरीय अनुदानों के कारण वे मनुष्य की तुलना में कई अभाव रहते हुए भी सुख-सुविधा भरा जीवन जीते हैं । एक किस्म के खिलौने मनुष्य को दिये है तो दूसरी किस्म के खिलौने भगवान ने अपने इन छोटे बच्चों को, अन्य जीवों को भी दे रखे हैं और खाली हाथ उन्हें भी नहीं रहने दिया गया है ।

जीवविज्ञानी जर्मन वैज्ञानिक डाक्टर फैवर ने यूरोप भर में घूमकर विभिन्न जातियों के टिड्डे, झींगुरों की ध्वनियों का टेप संग्रह किया है । उनने ४०० प्रकार के शब्द पाये जो निरर्थक नहीं सार्थक थे और सुरुचि पैदा करते थे, उन्होंने १४ प्रकार के प्रणयगीत भी इकट्ठे किये जिसमे प्रणय निवेदन के उतार-चढ़ाव, आग्रह, अनुरोध, आकर्षण, निषेध, मनुहार, प्रलोभन, सहमति, असहमति की मनःस्थिति की जानकारी सन्निहित थी । इसके अतिरिक्त वे अन्य मनोभाव अपने वर्ग तक पहुँचाने के लिए अपनी अन्तः अभिव्यक्ति के लिए यह ध्वनि प्रवाह उत्पन्न करते हैं । इसका विस्तृत विश्लेषण और विवरण डाक्टर फैवर ने तैयार किया है । ग्राईलस, कम्पोस्टिस, ग्राइवो, मेकूलेटस जाति के झीगुरों की शब्दावली और भी अधिक विकसित पाई गई ।

कार्ल बाल फ्रश का मधुमक्खियों सम्बन्धी अध्ययन अति विशाल है । रानी मधुमक्खी जब ऋतुमती होती है तो उसके शरीर से निकलने वाले आक्सोइका और ड्रनोइक द्रव हवा में उड़कर नरों तक सन्देश और आमन्त्रण पहुँचाते हैं ।

कुछ लघुकार्य कीट-पतंग केवल अपने नेत्र संचालन और मुख-मुद्रा में थोड़ा हेर-फेर करके अपनी मनःस्थिति से साथियों को अवगत कराते हैं । प्रो० रार्बट हिण्डे ने कितनी ही चिड़ियों को केवल नेत्र संकेतों से वार्तालाप करते देखा है । एक दूसरे के विचारों के आदान-प्रदान की आवश्यकता वे आँखों में रहने वाली सम्वेदना से कर लिया करते हैं । जुगनू अपने मनोभाव पूँछ में से प्रकाश चमकाकर प्रकट करते हैं । प्रकाश के जलने-बुझने का क्रम उस वर्ग के दूसरे जुगनुओं के चमकते हुए प्रकाश के माध्यम से पारस्परिक परिचय तथा एक दूसरे की स्थिति समझने का अवसर मिलता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेढकों का टर्राना एक स्वर से नहीं होता और न निरर्थक । वे अपनी स्थिति की सूचना इस टर्राहट के द्वारा साथियों तक पहुँचाते हैं । इसलिए इसे टरनि में कितने ही प्रकार के उतार-चढ़ाव पाये जाते हैं । पक्षियों में कौए की भाषा अपेक्षाकृत अधिक परिष्कृत है । वे अपने वर्ग की ही बात नहीं समझते वरन् आस-पास रहने वाले अन्य पक्षियों की भाषा भी बहुत हद तक समझ लेते हैं और उस जानकारी के आधार पर चतुरतापूर्वक लाभ उठाते है ।

आमतौर से छोटे जीव-जन्तुओं के पारस्परिक संवाद के विषय होते हैं, सहायता की पुकार, खतरे की सूचना, क्रोध की अभिव्यक्ति, हर्षोल्लास का गीत-राग, व्यथा-वेदना का क्रन्दन, ढूँढ़-तलाश । इन प्रयोजनों के लिए उन्हें अपने वर्ग के साथ सम्बन्ध जोड़ना पडता है । ऐच्छिक या अनैच्छिक कुछ भी हो, यह विचार-विनिमय उनके लिए उपयोगी ही सिद्ध होता है । यदि इतना भी वे न कर पाते तो सामाजिक जीवन का सर्वथा अभाव, नितान्त एकाकीपन उन्हें और भी अधिक कष्टमय स्थिति में धकेलता ।

नीलकण्ठ पक्षी द्वारा मछली का शिकार देखते ही बनता है । वह पेड़ की डाली पर बैठा हुआ घात लगाये रहता है और जहाँ मछली दिखाई पडी कि बिजली की तरह टूटता है और पानी में गोता लगाकर मछली पकड़ लाता है । आश्चर्य इस बात का है कि जिस डाली पर से जिस स्थान से वह कूदा था लौटकर ठीक वहाँ वापस आता है और वहीं बैठता है । यह स्प्रिंग पद्धति का क्रिया-कलाप है । दीवार पर फेंककर मारी गई गेंद लौटकर फेंकने के स्थान पर ही आती है । नीलकण्ठ प्रकृति के उसी सिद्धान्त का जीता जागता नमूना है ।

तोता, मैना, बुलबुल, रोबिन, चटक, कनारी, कुलम जैसे कितने ही पक्षी मनुष्य की बोली की नकल उतारने में सक्षम होते हैं। पढ़ाये हुए तोता, मैना, राधा, कृष्ण, सीताराम, कौन है ? क्यों आये आदि कितने ही शब्द याद कर लेते हैं और समय-समय पर उन्हें दुहराते रहते है । अमेजन जाति का तोता तो १००शब्दों तक की नकल उतार सकता है । आस्ट्रेलियाई तोते १० तक गिनती गिन ही नहीं लेते वरन् उन संख्याओं को पहचान भी लेते है ।

हाथी की दृष्टि बहुत मन्द होती है । प्राणियों के समीप में उपस्थिति वह गंध के आधार पर ही भाँपता है । कुत्ता अपने प्रिय या परिचित व्यक्ति की ढूँढ़-खोज गंध के आधार पर करता है । हवा का रुख विपरीत हो और गंध का प्रवाह उल्टा हो जाय तो सौ गज दूर खड़े मालिक को पहचाना भी उसके लिए कठिन होगा । पक्षियों की पहचान रंगों पर निर्भर है । उनके नेत्र रंगों के बहुत छोटे अन्तर को भी पहचानते हैं और उसी आधर पर अपने आवागमन की राह निर्धारित करते हैं ।

सील मछली अपने बच्चे की नन्हीं-सी आवाज हजारों अन्य मछलियों के कोलाहल में से पहचान लेती है । मोटे तौर से उस समूह में एक ही शकल के अनेक शिशु वयस्क होते है पर सील अपने बच्चे की आवाज सुनते ही तीर की तरह उसी पर जा पहुँचती है । बीच के व्यवधान को हटाने में अपने पराये की ठीक पहचान करने में उससे जरा भी भूल नहीं होती ।

जीवधारियों की इन विशेषताओं को देखते हुए यही मानना पड़ता है कि वे भी मनुष्य की तरह ही भगवान को प्रिय हैं और उन्हें भी कितनी तरह की विशेषताएँ, विभूतियाँ दी गयी हैं। अपने उन छोटे भाइयों के प्रति न तुच्छता का भाव रखा जाय और न उन्हें सृष्टि का निरर्थक निर्माण समझा जाय । मनुष्य की तरह ही वे भी अपने स्थान पर महत्वपूर्ण हैं ।

प्रकृति पाठशाला में कला-संकाय

मनुष्य की कोमल भावनाओं, सूक्ष्म अभिव्यक्ति के तीन माधन तीन कलाएँ हैं—(१) नृत्य (२) संगीत और (३) अभिनय । इनमें आत्मा की स्वभाविक अभिव्यक्ति होती है, साथ ही जीवनसत्ता के ललित और आल्हादकारी गुण का भी पता चलता है । इन्हें मनुष्य की बुद्धि और प्रगतिशीलता का एक मापदण्ड भी कहा जा सकता है पर जीवन मनुष्य की ही विरासत नहीं, वह विराट रूप में बिखरा पड़ा है । जिसमें जीव-जन्तु भी आते हैं । विभिन्न कलाओं द्वारा पशु-पक्षी भी अपनी प्रमोदप्रियता का परिचय देते रहते हैं । कभी-कभी तो ऐसा विश्वास होने लगता है कि मनुष्य को ललित कलाएँ सिखाई ही अन्य जीवों ने हैं, क्योंकि उनमें से कई यह कलाएँ अत्यन्त प्रौढ़ किस्म की होती है ।

नृत्य कला प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों तथा भावनाओं की अभिव्यक्ति का एक गूढ़ विज्ञान है । विश्व के अनेक प्रकार के नृत्य विख्यात श्रेणी में आते हैं । इनमें भारत के भारतनाट्यम, कचिपुड़ि, कत्थक, रूस का बैले तथा ब्रिटेन के काकटेल प्रमुख हैं, किन्तु आश्चर्य तब होता है, जबकि प्रकृति के परिन्दों में भी न केवल उन्नत श्रेणी के अपितु विलक्षण अभिव्यक्ति और भंगिमाओं के नृत्यों की परम्परा पाते हैं । मोर इस कला में बादशाह माना जाता है ।

यह न केवल ऋतु-नृत्य में ही प्रवीण होते हैं, अपितु संवादी, आक्रमण, भय आदि अवस्था में भी वे नृत्य कला का उपयोग करते हैं, ऋतुकाल का नृत्य जो विशुद्ध प्रेम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भावना से प्रेरित होता है । न्यूनतम ५ मिनट से एक घन्टे तक भी चलता है । अपने भोजन या प्रणय क्षेत्र में किसी सजातीय या विजातीय को पाकर वे बहुत तेजी से पंख थरथराकर तथा सीधी चोंच से प्रहार करते हुए नृत्य करते हैं । मोरों में ईर्ष्यावश भी नृत्य होते हैं । यह किसी दूसरे मोर को नाचता देखकर तब किये जाते हैं । जब दूसरे मोर को यह आशंका हो जाती है कहीं मादा उसी की ओर आकृष्ट न हो जाए । अन्य नृत्यों को छोड़कर प्रायः बादलों की गरज, चमक के समय प्रातः और सांयकाल मोर नृत्य होते हैं । काली घटा देखकर मोर बहुत प्रसन्न होता है और कुहू-कुहू कर नाचने लगता है । मनुष्यों में भी अनेक प्रकार के नृत्यों की परम्परा है । भाव प्रदर्शन दोनों में समान है फिर मनुष्य को ही उन्नत श्रेणी का क्यों माना जाए मार्मदर्शक इस जीव प्रकृति को ही क्यों न माना जाय ?

ध्रुवों की खोज करने वाले वैज्ञानिक बताते हैं कि पेन्गुइयन की सामाजिक व्यवस्था बहुत विकसित किस्म की है । नर को विवाह की इच्छा होती है तो वह अपने मुँह में एक पत्थर लेकर इच्छित मादा के पास जाता है और इस बात का संकेत देता है कि वह उसके लिए पत्थरों का सुन्दर महल बनाने को तैयार है । यदि मादा वह पत्थर स्वीकार कर ले तो विवाह पक्का फिर सभी पेन्गुइयन इसी खुशी में नाचते गाते हैं । देखने वालों का यहाँ तक कहना है कि इस विवाह नृत्य में नर पेन्गुइयन मादा की विधिवत पीठ थपथपाकर 'एक्शन-साँग' का दृश्य प्रस्तुत करते हैं । बहुत बार ऐसा भी होता है मादाएँ पत्थर लाने वाले नर से सन्तुष्ट नहीं होती उस स्थिति में वे पत्थर स्वीकार करने की अपेक्षा मुँह फेर कर खड़ी हो जाती हैं । मनुष्य की अपेक्षा यह कितने भले हैं ? मनुष्य तो अपने सामाजिक दायित्वों में भी स्वार्थपरता और अहंप्रदर्शन जोड़ने से नहीं चूकता । विवाहों पर दहेज की माँग, जेवर, आतिशबाजी, नशेबाजी ऐसी ही दुष्प्रवृत्तियाँ हैं । अन्य जीव तो उनसे मुक्त ही हैं ।

हम समझते हैं कला का वरदान मात्र मनुष्य जाति को ही मिला है । बच्चे को सुलाने के लिए लोरी गाना, मेलों के प्रयाण पर गाये जाने वाले गीत, धान रोपाई के गीत, सावन के मल्हार और ब्याह-शादियों पर गाये जाने वाले मनुष्य की उदात्त कला-संस्कृति के प्रतीक माने जाते हैं । लगता है यह उपहार केवल मनुष्य को ही उपलब्ध है । यह गीत तो आत्मा और मन के आल्हाद और प्रसन्नता के प्रदर्शन मात्र हैं और मनुष्येतर जीव भी इस कला में कम पटु नहीं । कोयल के वसंत गान से तो सभी परिचित हैं किन्तु अपने घोंसला का निर्माण करते समय 'राबिन' पक्षी तथा 'ओरिओल' के गीत कहीं उससे भी अधिक मन-मोहक होते हैं । 'दरजी' 'बया' और बुनकर पक्षी भी गायकों की श्रेणी में आते हैं । यह सब विशेष प्रकार की लय और ताल में गीत गाते हैं । स्काई लार्क के प्रभात गीत तो शेक्सपियर के लिये प्रेरणा स्रोत ही बन गये थे । शेक्सपियर इसे 'प्रभात-दूत' कहा करते थे और उसके मधुर संगीत में तन्मय हो जाने के बाद ही साहित्य साधना किया करते थे । बालजाक को रात में पपीहे का स्वर सुनने को मिल जाता तो वे एक तरह साहित्य साधना में समाधि ही लगा जाते । भावनाशील व्यक्तियों ने सदैव ही जीवों से प्रेरणाएँ पाई हैं । प्रातःकाल उनका चहचहाना, सायंकाल ढलते हुए सूर्य का बंदन करना देखकर हृदय उमड़ने लगता है । यदि मनुष्य ने अपना जीवन कृत्रिम नहीं बनाया होता, उसने भी उनकी तरह अपने को बंधन मुक्त रखा होता तो उसका भी जीवन कितना रसमय रहा होता, यह स्पष्ट अनुभव किया जा सकता है ।

एक बार तो ह्वेल मछली के संगीत को टेप करने का भी प्रबन्ध किया गया । उसके जो परिणाम प्राप्त हुए वे और भी आश्चर्यजनक हैं—सर्वप्रथम एक ह्वेल मछली ने संगीतमय ध्वनि से नौ बार क्लिक-क्लिक की ध्वनि की । इसके बाद एक दूसरी ह्वेल ने वैसी ही ध्वनि सात बार की । फिर दोनों ने ९ बार वही ध्वनि समवेत दुहराई, इसके बाद क्रमशः १४९ तथा ७ बार ध्वनि टेप की गई । इस संगीत ध्वनि के समय का दृश्य इस बात का साक्षी है कि मछलियों के पास अक्षरों और शब्दों का सुविस्तृत भण्डार भले ही न हो पर उन्होंने अपने विचार-विनिमय में कोई दिक्कत नहीं होती । पहले दोनों ह्वेलें एक नर, एक मादा अलग-अलग स्थानों में थी, ९ और ७ की ध्वनि से उन्होंने अपने मिलने का स्थान तय किया । १४ बार क्लिक की आवाज के द्वारा उन्होंने कोई बात तय की, फिर ७ और ९ क्लिक के बाद दोनों दो भिन्न दिशाओं की ओर मुड़ गईं । इनके संगीत में कुछ ऐसा आकर्षण होता है कि इनका शिकार स्वयं ही इनकी ओर चला आता है ।

जापान की एक फर्म ने तो अत्यन्त सम्वेदनशील इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की सहायता से ऐसे विशेष संगीत रिकार्ड तैयार किए हैं, जो कुत्तों और बिल्लियों का क्रोध शान्त करने, उनको मानसिक शान्ति प्रदान करने में सहायक होते हैं । इन रिकार्डों का व्यावसायिक उत्पादन प्रारम्भ भी कर दिया गया है और अमेरिका उनका सबसे बड़ा खरीददार है । संगीत आत्मा की अदम्य आकांक्षा है । ऐसा लगता है उसका संगीत से कोई सनातन सम्बन्ध है, तभी वह इतना रस आता है । आज जबकि भौतिक आकर्षणों की दौड़ में हर व्यक्ति बुरी तरह परेशान है, तब उसके मन और अन्तःकरण को इसी तरह संगीत माध्यमों से राहत पहुँचाई जा सकती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दक्षिणी अफ्रीका में पाये जाना वाला एक पक्षी तो नृत्य में इतना पटु होता है कि उसका नाम ही 'दि डान्सर्स' पड़ गया है । न्यूजीलैण्ड में पाई जाने वाली वर्ल्ड आफ पैराडाइसों में तो विवाह के अवसर पर विधिवत का स्वयँवर होता है । एक विशेष ऋतु में सभी विवाह योग्य युवक पक्षी एक ओर पंक्तिबद्ध खड़े हो जाते हैं, युवतियाँ उसी तरह दूसरी ओर, बालक व वृद्ध पक्षी दर्शन के रूप में तीसरी पंक्ति में । अब कोई एक पक्षी बाहर निकलकर नाचना प्रारम्भ करता है । युवतियाँ ध्यान से उसका अंग परिचालन देखती हैं, जिस युवती को वह नृत्य पसन्द आ जाता है, वह बाहर आकर उसकी चोंच में चोंच डालकर अपनी सहमति व्यक्त करती है फिर दोनों मिलकर नाचते और गाते हैं । इस तरह वे अपना-अपना जोड़ा बना लेते हैं, जबकि मनुष्य की दाम्पत्य बनाने की परम्परा कितनी जटिल हो गई है कि आये दिन गृहस्थ जीवनों में विग्रह-विद्रूप खड़े होते रहते हैं, उनसे मुक्ति के लिए मनुष्य जाति को बहुत कुछ इन जीवों से सीखना पड़ेगा ।

नृत्य कला में यों प्रवीण मोर को माना जाता है किन्तु कला पारखी मकड़े के नृत्य को अधिक उत्कृष्ट मानते हैं । भले ही अपनी नैसर्गिक सुन्दरता के अभाव में वह किसी का ध्यान आकृष्ट न कर पाता हो । मकड़े प्रायः अपनी मादा को प्रसन्न करने के लिये नाचते हैं, किन्तु यह जोखिम बड़ा घातक होता है । यदि मकड़ी अप्रसन्न हो गई तो बेचारे को जान से भी हाथ धोना पड़ता है । मकड़े के सिर पर एक श्वेत कलंगी जैसी होती है, नृत्य करते समय वह मकड़ी को इसे दिखाने में सफल हो जाता है तो मकड़ी निश्चित रूप से प्रसन्न होती है । आठ-दस मकड़ों का सामूहिक नृत्य तो और भी दर्शनीय होता है ।

जीव-जन्तुओं के अधिकांश नृत्य मादा को रिझाने या उनके सामूहिक विवाह के अवसरों पर ही होते हैं । इस कला में बिच्छू भी प्रवीण होता है । बिच्छुओं में नर व मादा के साथ-साथ नृत्य करने की परम्पस है । जब तक थक कर चकनाचूर न हो जाएँ तब तक इनका नृत्य चलता रहता है । यह आगे-पीछे कदम बढ़ाकर नाचते हैं ,गोल चक्कर में नहीं ।

नृत्य कला एक महत्वपूर्ण व्यायाम भी है, इससे योगासनों के लाभ भी मिलते हैं, यदि इसे विशुद्ध कला की दृष्टि से विकसित किया जाए । मेफ्लाई नाम की मक्खी का नृत्य ऐसा ही होता है, वह उड़कर, उठकर, लेटकर नाना प्रकार से नृत्य करती है, यह मक्खियाँ खा-पी नहीं सकती क्योंकि इनके मुख ही नहीं होता । शुतरमुर्ग के लिए तो नृत्य पूरी तपश्चर्या है, वे अपनी प्रेयसी को प्रसन्न करने के लिये एक पैर से भी थिरकते हैं इतने पर भी वे प्रसन्न न हो तो उस टाँग को भी तोड़कर नृत्य करना पड़ता है, तब कहीं देवी प्रसन्न होती है ।

वर्षा ऋतु में जब पानी बरसता है तो मोरों की तरह बतख भी पानी में तैरते हुये नृत्य करते हैं । मछलियाँ भी श्रृंगारिकता की ही भावना से नृत्य करती हैं पर इनकी मुद्राएँ और हाव-भाव उतने सूक्ष्म होते हैं, जैसे भारतनाट्यम और कत्था-कली । घोंघे को यों सुस्तों का बादशाह कहा जाता है । एक स्थान पर पड़े रहना ही उनका काम है । किन्तु किसी ने नृत्य-गीत को सच ही प्रकृति की नैसर्गिक चेतना कहा है इससे मानव मन के लालित्य का पता चलता है । सदियों से इस कला का सांस्कृतिक परम्परा के रूप में विकास किया गया है । अब यह मनोरंजन का मूल साधन बन गया है । किन्तु यदि उसका उद्देश्य मात्र श्रृंगारिकता रहे तो मनुष्य और जीवों में अन्तर ही क्या रहे ? वह तो घोंघा जैसा आलसी प्राणी भी कर लेता है । घोंघा मादा के आस-पास घूमकर गुनगुनाता हुआ नृत्य करता है किन्तु यदि उसे कला-साधना का रूप दिया जाए तो उसके माध्यम से सूक्ष्म भावों का भी प्रदर्शन सम्भव है । जैसा कि भारतीय नृत्यों की शैली से स्पष्ट है ।

नृत्य-गीत ही नहीं, मनोविनोद और क्रीड़ा का स्वाभाविक जीव-गुण भी इन पक्षियों में पाया जाता है और बन्दरों को अपने बच्चों से खेलते कभी भी देखा जा सकता है । तोता और कनेरियाँ पेड़ में लटक-लटक कर झूलते और विचित्र तरह से कह-कहाकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हैं । पीलक, बया परस्पर एक-दूसरे से ठिठोली करते देखे जा सकते हैं । न्यूनाधिक मात्रा में यह गुण हर जीव में होता है ।

अमेरिका में पाई जाने वाली 'मार्किंग चिड़िया' अपनी विनोदप्रियता के लिए विख्यात है । यह न केवल मनुष्यों की अपितु दूसरे पशु-पक्षियों की आवाज की भी नकल उतारने में बहुत पटु होती है । उसके इस स्वभाव का बूढ़े-बच्चे सभी आनन्द लेते हैं । वह स्वयं भी इससे बड़ी प्रसन्न होती है ।

एक बार इंग्लैण्ड में एक पक्षी ने वहाँ के लोगों को असमंजस में डाल दिया । वे लोग जब प्रातःकाल मीठी नीद में सो रहे होते तो वृक्षों की ओर से मनुष्यों की-सी खिल खिलाकर हँसने की, कभी-कभी तो अट्टहास की ध्वनि आती और उनकी नींद टूट जाती । लोग परेशान थे आखिर यह हँसता कौन है, पीछे पता चला कि यह और कोई नहीं 'कूकाबड़ा' पक्षी है, जो कुछ दिन पहले ही आस्ट्रेलिया से इंग्लैण्ड आ गए थे ।

एक मनुष्य है जो दूसरों को समुन्नत देखकर ईर्ष्या, विद्वेष, राग-दोष और तृष्णा की कीचड़ में सड़ता रहता है, दूसरी ओर यह जीव हैं । कितने आनन्द और उल्लास का उन्मुक्त जीवन जीते हैं । जीवन समस्या रहित है उसमें कुछ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी जटिलता नहीं । समस्याएँ तो मानवीय दुर्गुण और मनोविकार हैं, उनसे मुक्ति पाना है तो मनुष्य को भी ऐसा ही सहज और सरल जीवनक्रम अपनाना पड़ेगा ।

नृत्य-गीत, मनोविनोद की भाँति अभिनय भी आत्माभिव्यक्ति का एक साधन है । यह अलग बात है कि मनुष्य अपनी इस कला में बहुत निष्णात हो गया है पर यह भी सच है कि झूठी अभिनय बुद्धि के कारण सर्वत्र अभिनय ही अभिनय शेष रहा है । यथार्थ से मनुष्य कोसों दूर हटता जा रहा है । पति-पत्नी के सम्बन्धों, बच्चों के पालन-पोषण, समाज के दायित्वों के निर्वाह में कलाबाजी अधिक, सच्चाई और ईमानदारी कम है यदि अभिनय का उद्देश्य सत्य की प्रतिष्ठा, मानवीय मूल्यों के प्रति सम्वेदना जाग्रत करना न होकर मात्र मिथ्या प्रदर्शन और दूसरों को भ्रम में डालना ही हो तब यह जीव ही हमसे अच्छे ।

मेन्टिस कीड़ा यह जानता है कि उसका रंग हरा होता है, तभी तो वह हरे पत्तों के बीच अपनी दोनों टाँगें इस प्रकार ऊपर करके लेट जाता है मानो किसी पौधे की जड़ से दो किल्ले फूटे हों । कीड़े के शक्ल में तो ऐसा लगता है मानो वह किसी से प्रार्थना कर रहा हो पर यह वास्तव में शिकार पकड़ने के लिये उसका बगुला-भक्तपना है । मृतक की-सी स्थिति में पड़े इस कीड़े के समीप से कोई शिकार निकला तो वह अत्यन्त द्रुतगति से उठ खड़ा होता है और चिमटे की शक्ल की अपनी दोनों टाँगों में उसे धर दबोचता है ।

स्पाइडर केकड़े पानी के पौधों या जलकाई को अपने शरीर में लगा लेते हैं । उनमें से कई पादप तो विधिवत जड़ पकड़ लेते हैं । इस तरह वह एक हरी-भरी पहाड़ी का लघुसंस्करण प्रतीत होने लगता है और तब क्या मजाल जो कोई भी व्यक्ति जानवर इन्हें बहुत पास से पहचान ले ।

दण्डकीट और अमेरिकी वाकिंग स्टिक के नामकरण से ही यह पता चलता है कि वे लकड़ी की टहनियों के बीच किस तरह सादृश्य बना लेते हैं कि उनके और लकड़ी के मध्य अन्तर करना भी सम्भव नहीं रह जाता । 'माथ' का नन्हा बच्चा तो अपने अस्तित्व की रक्षा भी केवल इसी कारण कर पाता है । यदि वह लकड़ी की किसी टहनी में चिपक कर स्वयं भी पूर्ण विकसित होने तक उसकी एक नन्हीं डाली न बना रहे तो कोई भी जीव उसे विकास के प्रारम्भिक चरण में ही सफाचट कर डाले ।

कैलीमा तितली, यलावर फ्लाई तथा कुछ रंगीन सर्पों में अपने रंग की प्रकृति में छिप जाने की प्रवृत्ति होती है । कुछ जीव तो इस कार्य के लिये विधिवत् मनचाहा रंग भी उत्पन्न कर शरीर की स्थिति के अनुरूप रंगीन वातावरण में डालने तक की क्षमता रखते हैं ।

कुछ जीवों में गोल छल्ले की आकृति में, कुछ में ढेले की शक्ल में लुढ़क जाने की प्रवृत्ति होती है । इनमें घिनहरी (गिजाई) काँतर कंगारू वर्ग का आर्मीडल्ली आदि प्रमुख होते हैं । भूरे बटेरे में भी छिपने की ऐसी प्रवृत्ति पाई जाती हैं । कई बार खोजी इनके आस-पास ही चक्कर काटते रहते हैं और यह साँस साधे मिट्टी बने पड़े रहते हैं किन्तु वहाँ से जरा-सा हटे कि फुर्र से उड़कर भाग जाते हैं । मनुष्य का जीवन कलाओं को समर्पित रह तो उसे सर्वत्र आनन्द-आमोद छलकता दिखाई देता रह सकता है । किन्तु यदि वह इन्हें भी स्वार्थ साधना, मिथ्या प्रदर्शन के लिये अपनाता है तो इससे बढ़कर दुर्बुद्धि और क्या हो सकती है ।

अन्यथा मनुष्य एक निरीह प्राणी ही है

किन बातों में मनुष्य सृष्टि के अन्य प्राणियों की तुलना में श्रेष्ठ है ? इस प्रश्न का समाधान खोजने से पूर्व उसकी विशेषताओं को सृष्टि के दूसरे प्राणियों की विशेषताओं से तुलना कर देख लेना चाहिये । आरम्भ में शरीरबल को ही लें । शारीरिक शक्ति की दृष्टि से मनुष्य संसार के अधिकांश प्राणियों की तुलना में कमजोर ही नहीं, नगण्य भी है । छोटे-छोटे जानवरों तथा कीड़े-मकोड़ों, चिड़ियों जैसे पक्षियों को छोड़कर और कोई प्राणी नहीं है जिनसे वह अधिक शक्तिशाली हो । भागने में वह एक खरगोश से भी पीछे रह जाता है, लड़ाई का बाहुबल आजमाने का मौका आये तो उसे एक छोटा-सा कुत्ता भी पराजित कर सकता है । अच्छे से अच्छा पहलवान भी शेर के सामने टिक नहीं सकता है । यह बात और है कि कुछ लोग लम्बे समय तक अभ्यास करने के बाद इन क्षेत्रों में कीर्तिमान स्थापित कर लें ।

शरीर को साधने और उसका सन्तुलन बनाने में तो मनुष्य बन्दर से भी मात खा जाता है । वर्षों तक अभ्यास करने के बाद सरकस के कलाकार एक झूले पर झूलते हुए दूसरे झूले पर पहुँच जाते हैं, किन्तु बन्दर यदि सोते-सोते भी किसी डाली से अकस्मात् गिर जाय तो अर्धनिद्रित अवस्था में भी वह नीचे वाली टहनी को तुरन्त पकड़ लेता है और अपनी रक्षा कर लेता है ।

शारीरिक शक्ति और सन्तुलन साधने में तो वह अपने से क्षुद्र कितने ही प्राणियों से पिछड़ा हुआ है। फिर क्या यह कहा जाय कि मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जो समूह बनाकर समाज में रहता है और सहजीवन का सिद्धान्त अपनाता है । इस मामले में भी झुण्ड बनाकर रहने वाले हरिणों, जंगली सूअरों, हाथियों यहाँ तक कि चींटियों से भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिछड़ा हुआ है । कई जंगली जानवर समूह बनाकर रहते और सामूहिक जीवन व्यतीत करते हैं । इस जीवन-शैली के वह इतने अभ्यस्त हो जाते हैं कि अकेले रहना उन्हें पसन्द ही नहीं आता । ऐसा भी नहीं है कि वे समूह में रहकर केवल अपना ही स्वार्थ पूरा करते हों, अपने कमजोर साथियों और आश्रित बच्चों की वे खूब चिन्ता करते हैं और समूह के किसी एक सदस्य पर आपत्ति आते ही मिलकर उस संकट का मुकाबला करते हैं ।

सामूहिक जीवन का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण चींटियों का कहा जा सकता है । बहुत छोटी-सी और क्षुद्र प्रतीत होने वाली चींटियाँ आपस में मिलकर समझौता कर लें तो साँप से लेकर हाथी तक को परेशान कर डालती हैं । मिल-जुल कर काम करने और संगठित शक्ति का महत्त्व समझने में मधुमक्खियाँ भी बेमिसाल हैं जो अलग-अलग जाकर पुष्पों से मधु संचित करती हैं और एक छत्ते में लेकर संग्रहीत करती हैं ।

फिर क्या बुद्धि की तुलना में वह अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ है ? इस प्रश्न का उत्तर जानने से पहले थोड़ा ठहरना होगा । निस्सन्देह मनुष्य को जो बुद्धि-बल मिला है, वह अन्य किसी जीव-जन्तु के पास नहीं है । उससे भी बड़ी बात यह कि वह अपने बुद्धिबल का उपभोग स्वतंत्र रूप से किसी भी दिशा में कर सकता है, जबकि उन प्राणियों को जिन्हें थोड़ी-बहुत बुद्धि मिली है । प्रकृति की प्रेरणा तक ही सीमित रहने की छूट मिली हुई है ।

सभ्यता और विज्ञान के स्वतंत्र प्रयोगों द्वारा प्राप्त की गई वर्तमान अवस्था मनुष्य की बुद्धिमत्ता का ही परिणाम है । इसी बुद्धिमत्ता के कारण उसने ऐसे-ऐसे दाँव-पेच सीखे जिनके द्वारा वह अपने से शक्तिशाली प्राणियों को भी नियंत्रित कर लेता है, कोयल से भी अधिक मीठे स्वरों का संगीत जब चाहे तब सुन सकता है, चील को दिखाई देने वाली दूरी से भी असंख्य गुनी दूरी की वस्तुएँ दूरबीन द्वारा स्पष्ट देख लेता है और बारीक से बारीक चीजों को जिन्हें सृष्टि का कोई प्राणी नहीं देख पाता, देख लेता है ।

इसे मस्तिष्क का ही कमाल कहना चाहिये कि मनुष्य ने अपने से बलवान प्राणियों पर भी सहज ही विजय प्राप्त करने वाले अस्त्र-शस्त्र बना लिए । खरगोश, हरिण और अन्य तेज दौड़ने वाले पशुओं से भी अधिक तीव्र गति से दौड़ने वाली कारें बना लीं तथा ऐसे अंतरिक्षयान निर्मित कर लिए जिनकी बराबरी कोई भी नहीं कर सकता ।

निस्संदेह बुद्धिबल के कारण मनुष्य ने अन्य सभी क्षेत्रों में सभी प्राणियों को पीछे छोड़ दिया । परन्तु यहीं एक क्षण रुकना पड़ता है । यह जानने के लिए कि मस्तिष्कीय क्षमता में वह स्वयं अपने बनाये यांत्रिक उपकरणों से पिछड़ गया है । औद्योगिक क्रान्तियों ने जिस तरह मनुष्य की माँसपेशियों का काम मशीनों को सौंपकर उसे श्रम से मुक्त करना आरम्भ किया, उसी तरह अब एक कम्प्यूटर क्रान्ति की सम्भावना भी व्यक्त की जा रही है, जिसके बाद मनुष्य सोचने-समझने और मानसिक श्रम के तमाम कार्य उन कम्प्यूटरों को सौंपकर निश्चिंत हो जायेगा ।

इलेक्ट्रॉन की तरंगें-अर्थात् परमाणु की नाभि के चारों ओर चक्कर लगाने वाले ऋण आवेश वाले कणों का नियमन कर उनका उपयोग इस मशीनी मस्तिष्क में किया जाता है । आरम्भ में जब कम्प्यूटरों का प्रचलन हुआ था तो मामूली गणना करने वाले कम्प्यूटरों का आकार एक बड़े कमरे के बराबर होता था । शुरू-शुरू के रेडियो सेट भी बहुत भारी भरकम थे, जिन दिनों उनका प्रचलन हुआ था उन दिनों किसी को यह कल्पना भी नहीं थी कि किसी दिन इन्हें जेब में रखकर भी घूमा जा सकता है । लेकिन विज्ञान के क्षेत्र में इलेक्ट्रॉनिक्स की सूक्ष्मता का दौर आरम्भ होने के बाद जेबी ट्रांजिस्टरों के साथ जेबी कम्प्यूटरों की भी कल्पना की जाने लगी । इस दिशा में कुछ जापानी वैज्ञानिकों ने कार्य किया तो चौथाई वर्ग इन्च के आकार वाले सिलिकॉनचिप—एक तत्व जो २६०० डिग्री सेण्टीग्रेड ताप को भी सहन कर जाता है, ऐसे कम्प्यूटर बनाने की सम्भावना मूर्त होती दिखाई दी अर्थात् अँगूठी जितना बड़ा कम्प्यूटर जेब में रखना सम्भव हो गया ।

अँगूठी के बराबर कम्प्यूटर तैयार कर लिए गए हैं और ये केवल संगणक का जोड़, बाकी, गुणा, भाग का ही काम नहीं करते बल्कि ३२ हजार तरह के मस्तिष्कीय कार्य करने लगे हैं । अँगूठी जितने आकार के कम्प्यूटर से अगले दशक तक १० लाख विभिन्न काम लेने की बात सोची जा रही है । इनका मूल्य भी कोई विशेष नहीं होगा । आरम्भ में जिस प्रकार बड़े-बड़े रेडियो सेट ७००-८०० रुपये में बिकते थे परन्तु अब ५०-६० रुपये तक के जेबी ट्रांजिस्टर बनने लगे हैं । उसी प्रकार इन कम्प्यूटरों का निर्माण व्यय भी बहुत कम रह जाएगा ।

हाल ही में एक टैक्सी मीटर का आविष्कार भी हो गया है, जो किराया बताने के साथ-साथ प्रत्येक सवारी पर लगने वाला किराया भी बता देता है । निकट भविष्य में कारों के ऊँघते ड्राइवरों को जगाने, नशे की हालत में या मोड़ों पर सचेत करने तथा इन्जन की खराबी मालूम करने वाले कम्प्यूटर उपकरण भी तैयार हो रहे हैं । इसी प्रकार पोर्टेबल टेलीफोन भी तैयार हो गये हैं, जिन्हें सुविधानुसार जेब में डालकर कहीं भी ले जाया जा सकता है और किसी भी व्यक्ति से जब चाहे सम्पर्क किया जा सकता है । फिर चिट्ठी लिखकर डाक में डालने की भी आवश्यकता नहीं रहेगी, जहाँ चिट्ठी लिखकर कम्प्यूटर को सौंपी कि तत्क्षण अभीष्ट पते पर उसी प्रकार की चिट्ठी छप कर बाहर आ जाएगी । कार्यालयों में फाइलों का अम्बार लगाने की आवश्यकता नहीं रहेगी, क्योंकि सारे भारत के सभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्यालयों में जितने रिकार्ड हैं वे सभी रिकार्ड एक छोटे-से कम्प्यूटर में सुरक्षित रखे जा सकेंगे । फाइलों का नष्ट होने, खोने या समय पर न मिलने का भी डर रहता है परन्तु कम्प्यूटर से जब भी चाहें बटन दबाते ही अभीष्ट जानकारी प्राप्त की जा सकेगी ।

जिन किन्हीं भी तकनीकी दक्षताओं के कारण मनुष्य अपने आपको बुद्धिमान समझ बैठा है और इस कारण अपने आप को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी समझ रहा है, ये दक्षताएँ तो कम्प्यूटर में ही विकसित हो रही हैं । दूसरे शब्दों में मनुष्य की बुद्धिमत्ता का दम्भ उसका स्वयं का बनाया हुआ मशीनी मस्तिष्क तोड़ चुका है और अगले दिनों वह मस्तिष्क रेडियो, ट्रांजिस्टर की तरह सर्वसुलभ हो जाएगा ।

बुद्धि के क्षेत्र में भी मनुष्य हार गया । मजे की बात यह है कि उसे किसी दूसरे प्राणी ने नहीं हराया, बल्कि स्वयं उसके द्वारा निर्मित यंत्र ने ही उसे यह शिकस्त दी । तो क्या यह सिद्ध हो गया कि मनुष्य के पास अपने आपको सर्वश्रेष्ठ कहने के लिए कोई आधार बचा ही नहीं है ? शारीरिक शक्ति, मानसिक शक्ति और बुद्धि बल के रूप में तो निश्चित ही ऐसा आधार नहीं है, जिसके कारण वह अपने आपको सर्वश्रेष्ठ कह सके ।

परन्तु जिन आधारों पर मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है वे शाश्वत हैं । यह अलग बात है कि उस आधार को भुला दिया गया और श्रेष्ठता के दम्भ को बनाए रखने के लिए दूसरे सस्ते कारण खोज लिए गए । वे आधार, वे मूल्य शाश्वत हैं । मनुष्य उन्हें आज भी अपनाए तो परमात्मा के युवराज होने का आत्मगौरव यथास्थान है । आवश्यकता इस बात की है कि उन मूल्यों को पहचाना जाय । प्रश्न उठना स्वभाविक ही है कि क्या हैं वे मूल्य ? सहज उत्तर है जिस उद्देश्य से परमात्मा ने मनुष्य को इस सृष्टि पर भेजा है, उसे पूरा करने के लिए कटिबद्ध हुआ जाए । अपने जीवन को तुच्छ स्वार्थों और संकीर्ण उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ही नष्ट न किया जाय वरन् मानवीय जीवन को सार्थक बनाने वाले आदर्शों को ही अपनाया जाए । अब तक यह बात इतिहास द्वारा ही प्रमाणित थी कि वे ही लोग सार्थक जीवन व्यतीत करते हैं, जो अपने लिए नहीं औरों के लिए, स्वार्थों के लिए नहीं आदर्शों के लिए जिए हैं । अब यह बात विज्ञान सिद्ध भी हो गई है कि बलवान और बुद्धिमान होना उतना अर्थ पूर्ण नहीं है जितना कि मनुष्य होना । मनुष्यता को तिलांजलि देकर मनुष्य का बलवान होना भी निरर्थक है और बुद्धिमान होना भी । मनुष्यता का वर्णन करने पर ही मनुष्य का मनुष्य होना ही गरिमामय है अन्यथा मनुष्य तो बेचारा एक निरीह सबसे अशक्त प्राणी है ।

मनुष्य न तो सर्वोपरि है और न सर्वशक्तिमान

मनुष्य अपने को सब बातों में अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ और विकसित मानता है, यह उसकी अहंमान्यता एक सीमा तक ही सही है । उसका मस्तिष्क अधिक विकसित है, इसलिए वह अनेक दिशा में पक्ष-विपक्ष की बातें सोच सकता है और अनेक स्तर के निष्कर्ष निकाल सकता है । उसे हँसने की, बोलने की, लिखने की विशेषताएँ भी मिली हैं । कृषि, पशुपालन, शिल्प, व्यवसाय, संचार जैसे साधन उसने सीखे और विकसित किये हैं । विज्ञानक्षेत्र, अर्थक्षेत्र, युद्धक्षेत्र आदि में उसकी उपलब्धियाँ निस्संदेह अन्य प्राणियों से अधिक हैं, किन्तु उसका यह दावा करना गलत है कि सभी बातों में वह बढ़ा-चढ़ा है ।

छोटे-छोटे जीव जिन्हें आमतौर से तुच्छ और नगण्य समझा जाता है, अपनी विशेषताओं के क्षेत्र में मनुष्य से कहीं आगे हैं ।

मनुष्यों को गर्व हो सकता है कि वे दुनिया भर में छाए हुए हैं और उनकी संख्या ४०० करोड़ है । इस अहंकार को टिड्डी दल चुनौती दे सकता है और कह सकता है कि हमारी संख्या एवं शक्ति इतनी अधिक है; जिसका सामना तुम मनुष्यों की बुद्धि और सामर्थ्य नहीं कर सकती ।

टिड्डी दल छोटे भी होते हैं और बड़े भी । औसतन प्रत्येक दल का वजन ८०००० टन होता है । एक वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में उनकी संख्या ८ करोड़ ३० लाख कूती गई है, जिनका वजन ४०८ मीट्रिक टन बैठेगा । रेगिस्तानी टिड्डियाँ जब धावा बोलती हैं तो प्राय: १ करोड़ १० लाख वर्ग मील क्षेत्र को प्रभावित करती हैं । जिसमें भारत ही नहीं दूसरे देश भी चपेट में आते हैं । ये दल बहुत लम्बी उड़ानें उड़ते हैं । तुर्की से तंजानियाँ तक उनकी उड़ानें देखी गई हैं ।

सन् १९५४ में एक टिड्डी दल ने मोरक्को की लगभग ८ करोड़ की फसल चट कर ली थी । सन् १९५८ में इथोपिया का १६७००० टन अनाज वे साफ कर गई थीं । पिछली शताब्दी में ईरान, पाकिस्तान, भारत और अरब देशों को टिड्डियों ने भारी क्षति पहुँचाई है । सन् १९५२ में भारत में सबसे बड़ा टिड्डी दल आया था, उसने ४५१५० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में तहलका मचा दिया था । जब भी वे आती हैं, करोड़ों रुपये की फसल नष्ट कर देती हैं । सन् १९४२ में जो टिड्डी दल अरब में उत्पन्न हुआ था । उसने १५ वर्ष तक समीपवर्ती देशों पर तबाही बरसाई । टिड्डी पीड़ित २० देशों ने अपना एक संगठन डेजर्ट लोकस्ट कन्ट्रोल कमेटी बनाई । टिड्डी विशेषज्ञ ओ. वी. लीन के नेतृत्व में इन शत्रुओं से बचाव के उपाय खोजे और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्यान्वित किए गए, किन्तु बहुत हाथ-पैर पीटने पर भी कहने लायक सफलता नहीं मिली । इन देशों का संग्रह किया हुआ चंदा १३ लाख ७३ हजार डालर और अमेरिका का दिया अनुदान ४० लाख डालर ऐसे ही रसायन छिड़कने में, ९०००० वर्ग मील का हवाई दौरा करने और तरह-तरह के उपाय खोजने में बर्बाद हो गया । जार्ज पोपोफ की टिड्डी शोध के अनुसार मादा टिड्डी एक बार में १२० तक अंडे देती है । उनमें से दो सप्ताह में बच्चे निकल आते हैं । जब मादा प्रजनन पर उतरती है तो एक वर्ग फुट जमीन में ५००० तक अंडे दे जाती है । बच्चे आरम्भ में ही २ से १० मील तक की प्रतिदिन उड़ान उड़ लेते हैं । जवान हो जाने पर तो उनकी उड़ान कई गुनी तेज हो जाती है । क्या मनुष्य इन सब क्षमताओं से अधिक होने का दावा कर सकता है ? क्या इन बातों से मनुष्य जाति टिड्डी दल से आगे गिनी जा सकती है ।

युद्धकौशल और आत्मरक्षा के प्रयत्नों में छिपकली मनुष्य जाति के बड़े-बड़े सेनापतियों और छापामारों को चुनौती देती है । समय पड़ने पर वह प्रबल शत्रु को ऐसा चकमा देती है कि प्रस्तुत प्राणसंकट से वह सहज ही बच निकले । छिपकली की पूँछ दुधारे शस्त्र का काम करती है । गोह गिरगिट जाति की बड़ी छिपकलियाँ अपनी पूँछ का ऐसा प्रहार करती हैं जैसा कि गधे-घोड़े दुलत्ती झाड़ते हैं । उसकी करारी चोट खाकर शत्रु तिलमिला उठता है और उसे भागते ही बनता है ।

शत्रुओं से निपटने के लिए मनुष्य युद्ध सामग्री, सैन्य सज्जा के अनेकानेक अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण कर रहा है । जिनमें विषाक्त गैसें और अणु-आयुध भी सम्मिलित हैं । एक देश दूसरे देश को अपना शत्रु मानता है और उसका अस्तित्व मिटा देने के लिए बड़े-चढ़े दावे पेश करता है । क्या यह धमकियाँ सफल हो सकती हैं, यह पूछने के लिये चूहा चुनौती देता है और अँगूठा दिखाता है कि तुम मनुष्य प्राणी मुझे अपना शत्रु मानते हो और मेरी हस्ती दुनिया से मिटा देने के लिए पीढ़ियों से सिर-तोड़ प्रयत्न कर रहे हो पर इसमें कितनी सफलता मिली ? यदि तुम मुझ साधनहीन चूहे का कुछ नहीं बिगाड़ सकते तो शत्रु देशों का क्या कर लोगे ? तुम्हीं सब कुछ तो नहीं हो मारने वाले से बचाने वाला ईश्वर बड़ा है । यह क्यों भूल जाते हो ?

संसार भर में प्रायः ३ करोड़ ६० लाख टन अनाज चूहे खा जाते हैं और इससे भी अधिक उनके द्वारा बर्बाद किया जाता है । घरेलू मुर्गियों के अंडे-बच्चे चुराने में ये बहुत घाघ होते हैं । कुत्ते-बिल्लियों के छोटे बच्चों पर यहाँ तक कि सोते हुए मनुष्य के बच्चों पर भी घातक आक्रमण करते हैं । यों चूहा शाकाहारी माना जाता है पर जब उसे माँस हाथ लग जाय तो छोड़ता उसे भी नहीं ।

चूहों से कैसे निपटा जाय यह पेचीदा प्रश्न है । इस दिशा में मनुष्य का बुद्धिकौशल लगातार मात खाता चला आता है । चूहेदान पिंजड़े दो-चार दिन काम करते हैं । अपने साथियों की दुर्गति देखकर वास्तविकता समझने में उन्हें देर नहीं लगती । पीछे पिंजड़े में कुछ भी रखते रहिए एक भी उसमें नहीं फटकेगा । जो उधर ललचा रहा होगा उसे भी साथी लोग सावधान कर देते हैं । अजनबी घर में पहुँचकर बिल्ली उन्हें दबोच सकती है पर जब वह उसी घर में रहने लगती है तो चूहे वे दाँव-पेच निकाल लेते हैं, जिनसे उन पर कोई विपत्ति न आवे । कहीं-कहीं तो मजबूत चूहे मिलकर कमजोर बिल्ली पर आक्रमण तक कर बैठे हैं । साधारणतया अभ्यस्त चूहे बिल्ली से डरते नहीं वरन् अँगूठा दिखाते हुए आँख-मिचौनी खेलते रहते हैं । गोदामों की सुरक्षा के लिए नेवले, साँप, बीजल, फेरेट पाले गये ताकि वे चूहों से निपट सकें पर इसका भी कोई बहुत अच्छा परिणाम न निकला ।

चूहों से फैलने वाली बीमारी पिछले दिनों प्लेग ही मानी जाती थी पर अब पता चला कि वे टाइफस ट्रिक्रिना-लेप्टोस्पाइरोसिस सरीखे अन्य कई भयानक रोग भी पैदा करते हैं ।

चूहों को मारने के लिए पिछले दिनों कई विष प्रयुक्त होते रहे हैं । स्ट्रिक्लीन-जिंक फॉस्फाइड वारफैरिन आदि का प्रयोग किया जाता रहा है । इन्हें उपयुक्त मात्रा में खा लेने पर तो वे मर जाते हैं पर यदि थोड़ी मात्रा में ही खायें तो उनका शरीर इन विष रसायनों से आत्मरक्षा करने में अभ्यस्त हो जाता है । फिर वे मजे से उसे खाते रहते हैं । उनकी पीढ़ियाँ इस प्रकार की बन जाती हैं कि इन घातक विषों का भी उन पर कुछ भी अधिक प्रभाव नहीं पड़ता ।

बम्बई की रिपोर्ट है कि अकेले बोरीबन्दर स्टेशन पर एक वर्ष १६०० बोरी बिखरा और कूड़ा-कचरा मिला हुआ अनाज नीलाम करना पड़ा । यह करतूत चूहों की थी । बम्बई के अस्पतालों में एक साल २० हजार मरीज चूहों के काटने पर घावों की मरहम पट्टी कराने गए थे । इनमें से कई सौ तो जान ही गँवा बैठे । सन् १९४७ में भारत में जो प्लेग फैला था उसमें एक करोड़ के करीब मरे थे । यह चूहों की कृपा का ही फल था ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने चूहों से होने वाली आर्थिक और शारीरिक हानि का जो विवरण प्रकाशित किया है, उससे स्पष्ट है, उनके द्वारा मनुष्यों को पहुँचाई जाने वाली क्षति नगण्य एवं उपेक्षणीय नहीं है ।

प्रयोगशाला से निकाले गये निष्कर्ष के अनुसार औसत चूहा २४ घन्टे में १२ ग्राम अनाज खाता है । खेतों में घुसकर वह ४० ग्राम अनाज उगा सकने वाले अंकुरों का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कतरव्योंत कर देता है । पहनने के कपड़े, बोरी, कंबल आदि के बीच वे छिपे बैठे रहते हैं और काट-काट कर उनका सत्यानाश करते हैं । दरवाजे, खिड़कियाँ, अलमारियाँ यदि लकड़ी के हैं तो उनके बीच में से छेद बनाकर आवागमन का रास्ता बना लेना उनके बायें हाथ का खेल है । घरों में रखे खाद्य-पदार्थ ही नहीं खेतों में उगे हुए साग-भाजी, फल-फूल खाना और काटकर छितरा देना उनका प्रिय विनोद है । अनाज खाने के साथ-साथ वे अपनी जहरीली विष्टा भी उसी में छोड़ जाते हैं, जिसे यदि अलग न किया जाए तो कितनी ही बीमारियों का शिकार बनना पड़ता है ।

धरती केवल मनुष्यों के लिए ही नहीं बनाई गई है, उस पर रहने का और निर्वाह-साधन प्राप्त करने का अन्य प्राणियों को भी अधिकार है । मनुष्य चाहता है कि उसे ही धरती की सारी उपलब्धियाँ मिल जाएँ, अन्य प्राणी जो कुछ प्राप्त करते हैं, वह उनसे छीन लिया जाय । इस दृष्टि से उसने चूहों को अपना प्रतिद्वन्द्वी, हानिकारक शत्रु माना और उसके विनाश के लिए जो कुछ सम्भव हुआ वह सब कुछ किया । पर प्रकृति उसके मनोरथ पूरे नहीं होने दे सकती । उसे मनुष्य की तरह अन्य प्राणियों के अस्तित्व की भी रक्षा करनी है । इसलिए उनकी सुरक्षा के लिए भी कुछ न कुछ व्यवस्था जुटा ही देती है ।

चुहिया छह महीने में वयस्क हो जाती है और बच्चे देने लगती है । वह एक बार में प्रायः एक दर्जन बच्चे देती है । यदि सब जीवित रहें तो एक चुहिया के बच्चे दस वर्ष भीतर संसार के कोने-कोने में भरे हुए पड़ दिखाई सकते हैं ।

प्रकृति मनुष्यों से कहती है तुम्हारे और बिल्ली, उल्लू आदि माँसाहारी जीवों के प्रयत्नों को निष्फल बनाने के लिए मैंने चुहिया को पर्याप्त प्रजनन शक्ति दे रखी है, उसके रहते तुम कभी भी उस प्राणी का अस्तित्व समाप्त न कर सकोगे ।

अच्छा होता मनुष्य अपने को संसार के जीव परिवार का एक छोटा सदस्य मानता और सर्वोपरि सर्वाधिकारी का दावा न करके इस तरह रहता, जिससे पारिवारिक सन्तुलन की सुन्दरता बनी रहती ।

छोटे कीड़े-मकोड़ों की दुनिया हम से कम रोचक नहीं

कीड़े-मकोड़े हमें अपनी तुलना में दयनीय स्थिति में पड़े हुए दिखाई पड़ते हैं, पर वस्तुस्थिति वैसी है नहीं । हमारी अपनी दुनिया है और कीट-पतंगों की अपनी । हमें अपनी चेतना के अनुरूप जिस दुनिया का ज्ञान एवं अनुभव है वह हमारे लिए विभिन्न प्रकार की अनुभूतियाँ और परिस्थितियाँ प्रस्तुत करती रहती हैं । हम अपनी दुनिया को जानते और समझते हैं, उसे परिपूर्ण मानते हैं, जो उसमें लाभ-हानि हैं उन्हें ही सर्वांगीण मानते हैं, पर यह मान्यता मिथ्या है । वस्तुतः भगवान् ने हर प्राणी का एक संसार बनाया है, वह उसमें खोया रहता है और अनुभव करता है कि न केवल उसका कार्यक्षेत्र पूर्ण है वरन् उसकी चेतना भी उसके लिए पर्याप्त सुखद है । उसे जो ज्ञान मिला है वह उसके अपने संसार के साथ मनोरंजक सम्बन्ध बनाए रहने के लिए पर्याप्त है ।

शरीर में अगणित जीवाणु काम करते हैं । वे जड़ नहीं हैं; चेतनसत्ता उनमें काम करती है । उस चेतना के द्वारा वे जीवकोश अपने निर्धारित कर्त्तव्यों को भली प्रकार पूरा कर लेते हैं । उपयोगी से लाभ उठाना और अनुपयोगी को मार-पछाड़कर दूर कर देना उनका दैनिक कृत्य है । पारस्परिक सहयोग के विधान से वे पूर्ण परिचित हैं और उसका समुचित व्यहार करते हैं । जन्मने, प्रौढ़ होने, मरने, पुरुषार्थ करने, सन्तानोत्पादन करने, उत्तराधिकारियों को प्रशिक्षित करने आदि का कैसा सुन्दर क्रम जीवाणु जगत में चल रहा है, उसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । यदि हम जीवाणु होते और किसी शरीर के एक घटक बनकर रह रहे होते तो अनुभव करते कि अपना कार्यक्षेत्र इतना ही सुखद एवं सुविधाजनक है जितना कि मनुष्य अपने कार्यक्षेत्र को अनुभव करता है । शक्ति और अनुभूति मनुष्य को अपने ढंग का काम चलाने के लिए मिली है और जीवाणुओं को अपने ढंग की, दोनों का निर्माण पृथक्-पृथक् कार्यों के लिए हुआ है । अस्तु उन्हें शरीर और अनुभूतियाँ भी उसी स्तर का निर्वाह करने योग्य मिली हैं । यदि हम जीवाणु होते तो मनुष्यों से कोई शिकायत न करते कि आप इतने सुविकसित हैं और हम इतने पिछड़े । हमें भी हाथी से कहाँ कुछ शिकायत है कि आपको इतना बड़ा शरीर, इतना बल मिला है, आप इतना अधिक भोजन खाते रहने में समर्थ हैं जबकि हम मुट्ठी भर अनाज भी ठीक से नहीं पचा पाते ।

कीड़े-मकोड़ों की दुनिया दयनीय नहीं है । उन्हें बेचारे समझना गलत है । अपनी दुनिया में वे अपने ढंग का पूरा-पूरा कौशल दिखाते हैं और उस स्थिति में सम्भवतः उतने ही रुष्ट-तुष्ट रहते हैं जितने कि हम मनुष्य अपने कार्यक्षेत्र में उपलब्ध शरीर और मन के सहारे सुखी-दुःखी रहते हैं ।

मकड़ी छोटा-सा घिनौना जीव है पर उसके सम्बन्ध में उपलब्ध तथ्य कम मनोरंजक नहीं हैं । ब्रिटिश कीटविज्ञानी जोसेफ आरेल्ड ने हिसाब लगाया है कि उस देश के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चारागाहों में प्रति एकड़ पीछे २२ लाख मकड़ियाँ रहती हैं । इनकी छोटी-बड़ी ५५० किस्में गिनी जा चुकी हैं । उनका आधा समय शिकार पकड़ने और खाने में लगता है । वे बहुत खाती और बहुत पचाती हैं । इंग्लैण्ड की मकड़ियाँ जितने कीड़े खाती हैं उनका वजन उससे भी अधिक बैठेगा जितना कि उस देश में मनुष्यों का वजन है ।

तपते हुए रेगिस्तानों में, हिमाच्छादित पर्वत शिखरों पर, कोयले की गहरी खदानों में, मरुस्थलों और दलदलों में, अँधेरी गुफाओं में, सर्वत्र मकड़ी को अपने सुरक्षित जाले में विराजमान पाया जा सकता है ।

संसार भर में ५० हजार जाति की मकड़ियाँ गिनी गई हैं, इनमें पिन की नोंक के बराबर छोटी से लेकर माइगेल जैसी दैत्याकार सम्मिलित हैं । दक्षिणी अमेरिका में पाई जाने वाली 'माइगेल' चिड़ियों, छिपकलियों, गिरगिटों, गिलहरियों और चूहों, मेढ़कों को सहज ही उदरस्थ कर लेती हैं । ब्लैक विडो, शूवेटन, आवरग्लेस जैसी मकड़ियाँ जहरीले साँपों से भी अधिक विषैली होती हैं ।

मकड़ी के पिछले भाग में छह रस स्रावी ग्रन्थियाँ होती हैं, उसी से वे रस निकालती हैं जो सूखते-सूखते रेशम जैसा धागा बन जाता है । इसी को कुशलतापूर्वक घुमा-फिराकर वे जाला बुनती हैं, जिससे वे अपने निवास, विश्राम की और शिकार पकड़ने की आवश्यकता पूरी करती हैं । नदी, नाले, पार करने के लिए वे तार के पुल बनाती हैं । इसके लिए वे किसी ऊँचे पेड़ पर चढ़ जाती हैं और अनुकूल हवा की प्रतीक्षा करती हैं । अवसर मिलते ही वे तार बुनना शुरू कर देती हैं और उसी से अपने को बाँध कर पतंग की तरह उड़ती हुई इस पार से उस पार जा पहुँचती हैं । कुछ तो तालाबों की सतह पर अपना जाल बिछाती और भुनगे पकड़ती देखी गई हैं ।

मादा मकड़ियाँ नर से मजबूत, बड़ी और खूँख्वार होती हैं । उनका ऋतुकाल आने पर मादक गन्ध से आकर्षित होकर मकड़े निकट आते तो हैं पर अपनी जान की खैर मनाते हुए ही फूँक-फूँककर कदम धरते हैं । दूर रहकर वे नाचते-कूदते हैं और प्रणय-प्रस्ताव करते हैं । मकड़ी को प्रस्ताव स्वीकार हुआ तो उसे समीप बुलाती है और अपना काम बनाकर उस अभागे को तत्काल उदरस्थ कर लेती है । यदि प्रस्ताव स्वीकार नहीं हुआ तो तुरन्त उसका झटका कर देती है । चतुर मकड़े छोटी मकड़ियों को पालकर उनके युवा होने की प्रतीक्षा करते हैं । इस स्नेह-सान्निध्य के सहारे वे अपनी जान बचा लेते हैं और गृहस्थ भी भोग लेते हैं ।

मकड़ी का जाला संसार का सबसे मजबूत किस्म का धागा है । अमेरिका में आँखों के आपरेशन में सिलाई के लिए इसी प्रकार से अर्जियोपे जाति की मकड़ी के जाले से बना धागा काम में लाया जाता है । आस्ट्रेलिया के आदिवासी एक बडी जाति की मकड़ी के जाले से मछलियाँ और चिड़ियाँ पकड़ने के कई तरह के मजबूत जाल बुनते हैं । वे मुद्दतों चलते हैं और सहज ही नहीं टूटते ।

घरेलू झींगुर रात को जब अपना आरकेस्ट्रा बजाता है तो लगता है स्वर ताल का समग्र ज्ञान रखने वाला कोई कुशल कलावन्त सधे हुए हाथ से वायलिन के स्वर झंकृत कर रहा है और साथ ही उसके सहायक अन्य बाजे बजा रहे हैं । उसकी ध्वनि इतनी तीव्र होती है मानो वाद्ययंत्र के साथ शक्तिशाली लाउडस्पीकर फिट कर दिया हो । यह ध्वनि-विस्तार-यंत्र सहित वायलन उसकी पीठ पर लदा होता है ।

झींगुर की पीठ पर दो चौड़े भूरे रंग के पंख होते हैं । इन्हीं के सहारे वह कुलाँच भरता है । इन पंखों में कुछ धारियाँ होती हैं, इन्हीं को परस्पर घिसकर वह अपना संगीत प्रवाह निस्रत करता है । यही वह उपकरण है जिससे कई प्रकार की स्वर धाराएँ निकलती हैं । मोटे रूप से एक जैसी ध्वनि सुनाई पड़ती है पर ध्यान देने पर प्रतीत होता है कि इसमें एक नहीं कितने ही उतार-चढ़ाव भरे स्वर हैं । उनमें मुख्यतया तीन और विशेषतया सत्रह स्वर सुने जा सकते हैं । कभी धीमी, कभी तीव्र आवाज उनमें से निकलती है और वे सदा एक जैसी नहीं होतीं वरन् राग-रागनियों की तरह अपने धाराप्रवाह में हेर-फेर उत्पन्न करती है ।

भारतीय संगीतशास्त्र में ऋतु एवं समय के अनुरूप राग-रागनियाँ गाये-बजाये जाने का अनुशासन है । अब वह परम्परा संगीतज्ञों ने छोड़ना शुरू कर दिया है पर झींगुर अपने लिए प्रकृति द्वारा निर्धारित संगीत परम्परा का पूरी तरह पालन करते हैं । उनके गीत वातावरण के तापमान का प्रतिनिधित्व करते हैं । ५५ अंश फारनेहाइट से कम तापमान पर झींगुर मौन साधे रहते हैं । १०० से ऊपर यह गर्मी निकल जाय तो भी वे चुप हो जाते हैं । ५५ और १०० डिग्री के बीच का तापक्रम रहेगा तो ही वे अपना वायलिन बजायेंगे । उनका संगीत न निरुद्देश्य होता है और न स्वर ताल से रहित । इस गायन में उनकी प्रसन्नता, कठिनाई, क्षुधा, भय, आक्रोश, प्रणय निमन्त्रण आदि के भाव भरे रहते हैं । स्वर ताल में ऐसी क्रमबद्धता रहती है कि वे संगीतशास्त्र की परीक्षा में शत-प्रतिशत नम्बरों से उत्तीर्ण हो सकते हैं । उनकी झंकार एक मील की दूरी तक टेप की गई है ।

मादा और बच्चों को यह कला नहीं आती, केवल प्रौढ़ झींगुर ही अपना राग अलापते हैं । विभिन्न देशों के वातावरण के अनुरूप उनकी आवाजों में अन्तर आ जाता है । न केवल उनका रंग-रूप वरन् ध्वनि प्रवाह भी बदल जाता है । प्रकृति-विज्ञानी झींगुरों के स्वर का अध्ययन करके वातावरण का तापमान सही-सही बता देते हैं । इतना ही नहीं निकट भविष्य में वर्षा होने न होने, मौसम में उतार-चढ़ाव आने, आँधी-तूफान की सम्भावना,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शकुन-अपशकुन आदि का निष्कर्ष निकालते हैं मानो झींगुर मात्र कीटक न होकर कोई निष्णात भविष्यवक्ता हो ।

कीट-पतंग हमें गूँगे, बहरे दिखाई पड़ते हैं पर वस्तुत: वैसा है नहीं वे आपस में घुल-घुल कर बातें करते हैं । एक-दूसरे के साथ विचार-विनिमय करते हैं और पारस्परिक सहयोग जुटाने में उस सम्भाषण का प्रयोग कर सकते हैं । यह अलग बात है कि उनके सम्भाषण उपकरण मनुष्यों से भिन्न हैं और उनका शब्द-कोष उच्चारण विधान से मेल नहीं खाता ।

मिशिगन विश्वविद्यालय के कीटविज्ञानी डा.व्राडॉक के अनुसार कीड़े-मकोड़े भी परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं । यदि उनमें यह क्षमता न रही होती तो उनका जीवित रहना ही असम्भव हो जाता, पक्षी निरर्थक चहचहाते मालूम पडते हैं पर वस्तुत: वे अपनी प्रसन्नता, व्यथा, योजना, जानकारी आदि की सूचनाएँ अपने साथियों को देते हैं । ध्वनि के साथ-साथ उनकी मन:स्थिति घुली होती है, जिसकी जानकारी उस वर्ग के अन्य पक्षी प्राप्त करते हैं और उससे लाभ उठाते हैं । खतरा किसी एक को मालूम पड़ जाय तो वह अपनी भाषा में अपने साथियों को सूचित कर देता है, फिर सब मिलकर उसी का उच्चारण करते हैं, ताकि न केवल साथियों को आगाही हो जाय वरन् शिकारी शत्रु को उनकी सतर्कता एवं आक्रामक सम्भावना के कारण आक्रमण करने का इरादा ही बदलना पड़े ।

छोटे कीड़ों की भाषा नहीं होती, वे अंग स्पर्श से विचारों का आदान-प्रदान करते हैं । यह स्पर्श ऐसे ही निरर्थक नहीं होता वरन् उसकी एक व्यवस्थित संकेत शृंखला होती है, जिससे उस वर्ग के कीड़े भली प्रकार परिचित होते हैं । एक-दूसरे के किस अंग को किस पकड़ के साथ छुए और क्या हलचल करे, इस प्रक्रिया से वे साथियों को अपने मन की बात देते हैं । ध्वनि, स्पर्श, दृष्टि और हलचल के माध्यम से छोटे जीवों का आदान-प्रदान चलता है । हम अपने स्तर पर उन्हें मूक कह सकते हैं पर वस्तुत: बोलते वे भी हैं । उनका उच्चारण इतना मन्द होता है कि हमारे कान उन्हें सुन, समझ नहीं सकते फिर भी वे जिह्वा से न सही शरीर के विभिन्न अंगों की हलचलों या रगड़ से ऐसी क्रमबद्ध ध्वनि उत्पन्न करते हैं, जिसे उनकी भाषा कहा जा सकता है ।

प्रो० राबर्ट हिण्डे अनुसार पक्षी ही नहीं कीड़े भी आँखों के इशारे से अपने बहुत से मनोभाव साथियों को बता देते हैं । यों आँखों की हलचल और चितवन में थोड़ा बहुत अन्तर पड़ता है पर पुतलियों की सम्वेदनशीलता में वैसा बहुत कुछ रहता है जिससे एक-दूसरे की भावनाओं का आदान-प्रदान हो सके । इस दृष्टि से छोटे प्राणी मनुष्यों से पीछे नहीं हैं । यों मनुष्य भी आँखों और पुतलियों के सहारे अपनी गुह्य मन:स्थिति को जाने-अनजाने साथियों पर प्रकट करते रहते हैं ।

कितने ही जीवों का काम उनकी घ्राण शक्ति से ही चलता है । जीवनोपयोगी कितने ही जानकारियाँ वे वस्तुओं एवं जीवों के शरीरों से निकलने वाली गन्ध के आधार पर ही प्राप्त करते हैं । इतना ही नहीं उनकी विभिन्न शारीरिक मानसिक परिस्थितियों से विभिन्न प्रकार की गन्धें निकलती हैं, उस वर्ग के प्राणी इन्हें सूँघकर एक-दूसरे की स्थिति का परिचय प्राप्त करते रहते हैं । रति प्रयोजन के लिए उनके शरीरों से विशेष रूप से तीव्र गन्ध निकलती है, यही वह सूत्र है जो उनकी वंश रक्षा की व्यवस्था जुटाए रहता है । बहुत छोटे अदृश्य कीड़े तो इस गन्ध के आदान-प्रदान से ही गर्भधारण कर लेते हैं । ई.ए. विल्सन् के अनुसार चींटियाँ अपने शरीर से एक रस निकालती और टपकाती हैं ताकि अन्य चींटियाँ उनके आह्वान पर विशेष प्रयोजन के लिए उसी रास्ते को सूँघती हुई बढ़ती चली आवें । चींटियों का पंक्तिबद्ध चलना इसी गन्ध के आधार पर होता है ।

जिस दुनिया में हम रहते हैं वह केवल मनुष्यों तक ही सीमित है । अन्य जाति के प्राणियों की—कीट-पतंग और पशु-पक्षियों की अपनी-अपनी दुनिया है और उसमें उन्हें निर्वाह करने, प्रसन्न रहने, पुरुषार्थ दिखाने के सुविस्तृत कार्य-क्षेत्र मौजूद हैं हम पृथ्वी पर रहते हैं यह एक छोटा क्षेत्र है, हमारी जानकारी तथा सम्पर्क की सीमा इसी छोटे क्षेत्र तक सीमित है । समस्त ब्रह्माण्ड में न जाने कितने स्तर के अणु-परमाणु होंगे और न जाने कितनी भिन्नता वहाँ की परिस्थितियों में होगी । इसी प्रकार यदि वहाँ प्राणी रहते होंगे तो न जाने उनका स्तर क्या होगा ? हम समस्त ब्रह्माण्ड की जड़-चेतन स्थिति का क्या अनुमान लगा सकते हैं । वे दुनिया अलग और अनोखी होंगी । ठीक इसी प्रकार छोटे प्राणी अपनी दुनिया में मस्त और सन्तुष्ट होंगे । सम्भवत: वे हम मनुष्यों के संसार से परिचित न हों । हम भी कहाँ कीट-पतंगों की और ब्रह्माण्डवासी अन्यान्य प्राणियों की दुनिया से परिचित हैं । भगवान ने कितने संसार रचे हैं, यह देखकर बुद्धि थकित और चकित होकर रह जाती है ।

विशिष्टताओं से सम्पन्न ये तुच्छ जीव-जन्तु

उपेक्षित, असमर्थ एवं हेय समझे जाने वाले निम्न जीव-जन्तुओं की जीवनचर्या को गौर से समझें तो पता चलता है कि उनके अन्दर अनेक ऐसी विशेषताएँ हैं, जिन्हें देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । मनुष्य की विचारशीलता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं अपनी सामर्थ्य का घमण्ड टूट जाता है । सर्वश्रेष्ठ होने का दावा यदि मनुष्य बुद्धिमत्ता के आधार पर करता है तो उसका यह दम्भ मिथ्या सिद्ध होता है । अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि विचारशीलता के गुण नन्हें जीवों में भी विद्यमान हैं । भाषा द्वारा मनोभावों के आदान-प्रदान का क्रम मनुष्य तक ही सीमित नहीं है वरन् अन्य जीव भी संकेतों द्वारा अपने भावों को व्यक्त करते हैं । कई बातों में तो ये मनुष्य से भी आगे हैं । इनमें अतीन्द्रिय क्षमताएँ भी होती हैं । जिसमें प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों, घटनाओं की जानकारी बहुत समय पहले ही प्राप्त कर लेते हैं ।

गिलहरियों में संकेतों का आदान-प्रदान किस प्रकार होता है तथा उनके किस संकेत का क्या अर्थ होता है, इस पर ब्रिटेन के भूतपूर्व कृषिमंत्री जान टेलर ने बहुत दिनों तक अध्ययन किया । वे लिखते हैं कि एक समय दो नर गिलहरियों के बीच संकेतों के संचार में एक अपनी पूँछ खड़ा करता है तो दूसरा इसके उत्तर में अपनी पूँछ नीची कर लेता है । यह इस बात का परिचायक है कि कहीं चलने की बात हो रही है, जिसमें पहले के प्रस्ताव को दूसरे ने स्वीकार कर लिया । पहला नर गिलहरी अपनी पूँछ को घुमाता और आँखें तरेरता है तो दूसरा अपनी आँखें फैला देता है । एक अपने कान खड़े करता है तो दूसरा नीचे कर लेता है । इससे यह पता चलता है कि पहला नर दूसरे से शक्तिशाली है । उसके वर्चस्व को दूसरा भी स्वीकार करता है । सभी गिलहरियों को अपनी शक्ति का बोध कराने के लिए एक गिलहरी को साथ लेकर शक्तिशाली नर तेजी से दौड़ता, सम्पर्क साधता है । परिवार के मुखिया के समान वह अपने समूह के सभी गिलहरियों से सांकेतिक भाषा में उनके समाचार पूछता है ।

डॉ० टेलर का कहना है कि विभिन्न ऋतुओं में वे ही संकेत भिन्न अर्थ प्रकट करते हैं । वसन्त में कान खड़े करना पूँछ उठाने का अभिप्राय है कि उस गिलहरी को अधिक फल संग्रह करने का अधिकार है । वह अपनी पसन्द की मादा को सहयोगी के रूप में चुन सकता है । यह इस बात का प्रमाण है कि विचारशीलता का गुण इनमें भी पाया जाता है । सोचने की सीमा इनकी भले ही अपनी आवश्यकता के इर्द-गिर्द तक ही सीमित हो । किन्तु इस सीमित क्षेत्र में भी उनकी बुद्धिमत्ता देखते बनती है । सीमित शक्ति, सीमित बुद्धि, सीमित साधनों में भी इनका जीवन हल्का-फुल्का उमंगों से भरा है । सामान्य जीव अभावों में भी इतना सुखी, प्रसन्नतायुक्त जीवन व्यतीत कर सकते हैं तो फिर मनुष्य क्यों नहीं सुखी-सन्तुष्ट रह सकता है। साधन बुद्धि, सामर्थ्य हर दृष्टि से वह इन नन्हें जीवों से आगे है । इनसे भी मनुष्य प्रेरणा प्राप्त कर सकता है ।

विकसित भाषा प्रणाली ही मात्र विचारों, मनोभावों को व्यक्त करने का माध्यम हो सकती है यह आवश्यक नहीं । मानवेतर जीव अपनी सांकेतिक भाषा, अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं को भली-भाँति दूसरों तक पहुँचा देते हैं । डॉ.सी.के.कार्पेन्टर पेन्सिलवानिया स्टेट विश्वविद्यालय के साइकोलोजिस्ट हैं । एन्थ्रोपोलाजी विभाग के अध्यक्ष भी हैं । बन्दरों की आदतों एवं संकेतों का इन्होंने अध्ययन किया । कुछ रोचक तथ्यों का उद्घाटन हुआ । यदि कुछ बन्दर मिल-जुलकर वृक्ष की डाली को हिलाते हैं तो इसका अर्थ है कि वे अन्य बन्दरों को सूचित कर रहे हैं कि उस पेड़ पर उनका अधिकार है । दूसरे बन्दरों को उस पेड़ का फल एवं चारा खाने का कोई अधिकार नहीं है । उनके इस संकेत से पूरा समूह चला जाता है ।

कौन-सी वस्तु खाने योग्य है, कौन-सी नहीं ? यह परख करने की क्षमता भी जीवों में पूर्णतया विकसित होती है । अपनी प्रकृति एवं आवश्यकता के अनुरूप वे उन्हीं खाद्य पदार्थों का चुनाव करते हैं जो उनके लिए उपयोगी एवं लाभप्रद होते हैं । ब्रिटेन के चिड़ियाघर की अधिष्ठात्री हैं श्रीमती देवरा क्लेमान । वह प्राणिशास्त्र विशेषज्ञ भी हैं । इन्होंने कुत्तों की चौदह विभिन्न जातियों का अध्ययन किया । उनका कहना है कि खाद्य-अखाद्य की परख कुत्ते तुरन्त कर लेते हैं । ये वस्तुएँ जो कुत्तों के समक्ष कभी नहीं आयी हैं उनमें खाने योग्य और न योग्य के निर्धारण की प्रक्रिया विशिष्ट है । ऐसे पदार्थों को कुत्तों के समक्ष रख देने पर वे सर्वप्रथम अपनी घ्राण शक्ति से सूँघते हैं । पुनः उन वस्तुओं पर पेशाब करके सूँघते हैं । तत्पश्चात् चयन करते हैं कि वह वस्तु ग्रहण करने योग्य है अथवा नहीं । श्रीमती 'क्लेमान' ने अपने अध्ययन के द्वारा पाया कि कुत्ते इस चुनाव की प्रक्रिया में कभी भूल नहीं करते हैं ।

शरीर के लिए किसी भी नई वस्तु के उपयोगी अथवा अनुपयोगी के निर्धारण में वैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न प्रकार के परीक्षण करने पड़ते हैं । तब कहीं जाकर यह निश्चित हो पाता है कि वह वस्तु कैसी है, जबकि कुत्ते इसका निर्णय तुरन्त कर लेते हैं । परमात्मा ने जीवों की इन्द्रियों को इतना समर्थ बनाया है जिससे वे बिना किसी बाह्य साधनों के अपने लिए उपयोगी का चुनाव कर सकते हैं । उनकी यह क्षमता देखकर विस्मित रह जाना पड़ता तथा श्रेष्ठता का दम्भ टूट जाता है ।

अधिक सम्वेदनशील होने, दूसरों के दुःख-क्लेशों में हिस्सा बँटाने के कारण ही मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ जीव घोषित किया गया है, अन्यथा शक्ति के क्षेत्र में तो अन्य जीव मनुष्य से कहीं बहुत आगे हैं । संवेदनशील का गुण इनमें भी पाया जाता है । कभी-कभी तो ऐसे उदाहरण भी देखने को मिलते हैं, जिन्हें देखकर हृदय जीवों के प्रति श्रद्धा से भर उठता है तथा यह सोचना पड़ता है कि ये नन्हें जीव भी मनुष्य से कम नहीं हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस्लामाबाद (पाकिस्तान) के निकट की एक घटना है । एक ट्रक तीव्र गति से चला जा रहा था । सड़क पर एक कुतिया अपने नवजात शिशु को थन से लगाये दूध पिला रही थी । कुतिया ट्रक की चपेट में आकर तुरन्त मर गई । बच्चा असहाय माँ की लाश के निकट बैठा कातर दृष्टि से चारों ओर देख रहा था । सड़क के किनारे लगे पेड़ पर एक बन्दरिया बैठी थी । बच्ची की कातर दृष्टि से उसका ममत्व उमड़ पड़ा, झट वृक्ष से उतरकर उसने पिल्ले को अपने सीने से लगा लिया । उसे दूध पिलाने लगी । कहते हैं कि वह दोनों कभी एक-दूसरे को छोड़कर नहीं जाते । एक माँ के समान वह पिल्ले को दूध पिलाती, देखभाल करती । कुछ समय बाद पिल्ला मर गया, बन्दरिया को इतना अधिक सदमा पहुँचा कि उसने खाना, पीना तक छोड़ दिया । फलस्वरूप वह भी मर गई । अपने बच्चों तक ही आत्मीयता को सीमित रखने वाले मनुष्य के लिए यह घटना प्रेरणास्पद है । सामान्य जीव जिनकी सामर्थ्य अल्प है, इतने संवेदनशील हो सकते हैं तो मनुष्य की सामर्थ्य कई गुना अधिक है । उसकी सामर्थ्य का सदुपयोग एवं महत्ता तो आत्म-विस्तार में ही निहित है ।

मनुष्य समर्थ है, विचारशील भी । किन्तु मात्र इस आधार पर अपनी श्रेष्ठता का दावा नहीं कर सकता । बुद्धि तो जीवों में भी है । सांकेतिक भाषा प्रणाली जीवों के मनोभावों को व्यक्त एवं आवश्यकताओं की पूर्ति करने में पूर्णतया समर्थ है । सूझ-बूझ की दृष्टि से भी वे मनुष्य से आगे ही हैं । अतः यह नहीं कहा जा सकता कि मात्र मनुष्य ही एक समझदार प्राणी है ।

पशु सर्वथा पिछड़े ही नहीं हैं

बोलचाल की भाषा में 'पशु' शब्द विचारणा है—भावना-रहित प्राणियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है । शारीरिक और मानसिक दृष्टि से मनुष्य की तुलना में स्वरूप विकसित होने की बात कहना तो उचित है, किन्तु उन्हें विचारणा या भावना से रहित नहीं कहा जा सकता । उनमें से अनेकों में अपने ढंग की ऐसी विशेषताएँ पाई जाती हैं, जिन्हें मनुष्य की तुलना में कहीं अधिक अग्रणी कहा जा सकता है । भावना की दृष्टि से भी वे हेय नहीं हैं । उनमें से कितने ही ऐसे होते हैं, जिन्हें नर-पशुओं की तुलना में कहीं अधिक विकसित और सराहनीय माना जा सकता है ।

हाथी अपने बच्चों को अनुशासन पालन करना सिखा लेते हैं । संकट में एक-दूसरे की मदद करते हैं । नर-मादा में परस्पर स्नेह और सौहार्द्र होता है । सामान्य हाथी बूढ़ों की देखभाल करते हैं । ये हाथियों के कई वर्षों से निरीक्षण करने वाले व्यक्ति के निजी अनुभव हैं ।

केनिया के नैरोबी शहर की एक प्रख्यात सफरी कम्पनी जो यात्रियों को अफ्रीका में घने जंगल दिखाने के लिए वाहन व्यवस्था करती है, 'केर एण्ड डाउनी' कम्पनी के मैनेजर डोनाल्ड फेर अपने दो शिकारियों से अधिकृत निरीक्षण की रिपोर्ट के आधार पर बताते हैं—हाथियों के झुण्ड पर शिकारियों ने गोली चलाई, एक हाथी घायल हो गया, दो हाथी उसकी मदद के लिए आए । दोनों हाथियों ने अपने-अपने बड़े दो दाँत घायल हाथी के शरीर के नीचे घुसाये और दोनों अपने-अपने शरीर का आधार देकर घायल हाथी को जमीन से ऊपर उठा लिया । इतना ही नहीं वे उसे दो मील तक ले गए । शिकारी उनके पीछे-पीछे गए और देखा कि रास्ते में तीन-चार बार घायल हाथी गिर गया किन्तु फिर से उठा लिया । दो मील के बाद घायल हाथी में चेतना आ गई और झुण्ड में जाकर मिल गया ।

'केर एण्ड डाउनी' कम्पनी के सीनियर शिकारी 'विलरियन' ने ४२ वर्षों तक हाथियों का निरीक्षण किया । उनका कहना है कि वे मनुष्यों की तरह काम करते हैं और कई बार तो मनुष्य से अधिक चतुरतापूर्वक कार्य करते हैं । शिकारियों ने जंगल में एक स्थायी कैम्प बनाया था, उसमें एक बगीचा लगाया था । हाथियों का एक झुण्ड अक्सर उनके बगीचे को ध्वस्त कर देता था । बगीचे के चारों ओर एक मजबूत बाड़ बनाई गयी, इतना ही नहीं उसमें विद्युत के तार भी लगाए गए । हाथियों को यह पता लगाने में कुछ ही रातें लगीं कि जब बत्ती बुझ जाती है तो बाड़ में कोई खतरा नहीं रहता और फिर से बगीचा ध्वस्त कर दिया । इसके बाद सारी रात जनरेटर को चालू रखा गया, फिर से हाथियों के झुण्ड ने पता नहीं कैसे अनुभव प्राप्त कर लिया कि उनके बाहर वाले दाँतों को बाड़ से कोई खतरा नहीं है और बाहर वाले दाँतों से ही बाड़ को तहस-नहस कर दिया, तब बाद में सुरक्षा के लिए बन्दूक वाले चौकीदार रखने पड़े ।

अफ्रीका में 'मार्शियन प्रपात नेशनल पार्क' में कुछ मकान बन रहे थे, तब एक हाथी जिसका नाम रखा गया था 'लार्ड मेयर झझवारा' वह मकान बनाने वाले बढ़इयों को पीछा करके भगा देता था मानो वह यह कहना चाहता था कि वह प्रदेश उसी का अधिकार क्षेत्र है । मकान पूरा बन जाने के बाद भी उसने अपना गश्त लगाना जारी रखा । अपने फोटो लेने वालों के प्रति वह उदार रहता तथा अन्य किसी को नहीं आने देता था । केवल अपना फोटो खिंचवाने के लिए खड़ा हो जाता था । एक रात को उसको केलों से बनने वाली 'पोम्बे' नामक शराब की गन्ध आयी । जिस झोंपड़ी में से गन्ध आ रही थी । उसकी छत अपनी सूँड़ से उठाकर फेंक दी और जितने केले थे, सबका सफाया कर दिया । अब वह प्रत्येक कार की केले के लिए तलाशी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लेने लगा था । अगर पीछे की ओर समान के साथ केले रखे होते तो उसे तोड़कर केले ले लेता था ।

एक रात ऐसा हुआ कि यात्रियों ने अपने केलों की टोकरी कार के नीचे रख दी । रात्रि की नींद में वे यात्री लोग अपनी कार को उठाये जाने एवं पलटे जाने से घबरा गये । टार्च जलाकर उन्होंने देखा तो कार के नीचे रखी हुई केलों की टोकरी के केलों को 'लार्ड मेयर' बड़े मजे से खा रहा था ।

केनिया में 'अम्बोसेली' गाँव के पास पशुओं के लिए एक 'अभय आरण्य' है, जिसमें एक हाथी रहता था । वह विनोदी स्वभाव का था । सँकरे रास्ते के मोड़ पर वह खड़ा रहता, जैसे ही कोई कार आती दिखाई देती, दौड़ने का दिखावा करता तथा जोर से चिंघाड़ने लगता था । कार में बैठे हुए लोगों को घबराया देखकर उसे सन्तोष हो जाता, वह वापस लौट जाता और एक किनारे पर खड़ा होकर लोगों को देखता रहता और अपनी छोटी आँखें चमकाता ।

'क्वीन एलिजाबेथ नेशनल पार्क' में हजारों हाथी देखने को मिलते । 'बार्डेन बेरे' ने देखा कि हाथियों के झुण्ड में से एक सुन्दर नौजवान हाथी बाहर निकला, थोड़ी देर बाद एक हथिनी उसके पीछे-पीछे सिर हिलाते-हिलाते चल पड़ी । लगभग २०० गज दूर जाने पर नर हाथी ने अपनी सूँड़ मादा के साथ मिलाई और दोनों ने मिली हुई सूँड़ के साथ अपने सिर वहाँ तक ऊँचे किए जहाँ तक दोनों के होठ चुम्बन के लिए मिले । इतना ही नहीं हथिनी ने हाथी को खेल-खेल में थपथपाया और हाथी ने घास का एक पूड़ा उठाकर और मिट्टी झाड़कर हथिनी को उपहारस्वरूप भेंट किया । हथिनी ने उसको अपने मुँह में डालकर कन्धे से कन्धा घिसते हुए एक-दुसरे का चुम्बन करते हुए वे झाड़ियों में ओझल हो गए । उनका 'हनीमून' दस महीने तक चलता है । गर्भिणी हथिनी की देखभाल एक बूढ़ी हथिनी किया करती है । बच्चे को २१ मास तक माँ का दूध पिलाया करती है । बच्चा सूँड़ को उठाकर दूध मुँह से ही पीता है । हाथी अपने बच्चों पर मनुष्य जैसा वात्सल्य रखते हैं । जैसे मनुष्यों में कोई बायें हाथ से तथा कोई दायें हाथ से काम करता है वैसे ही हाथी भी जमीन से आलू इत्यादि कन्द अपने एक ही दन्त सूँड़ से ही निकालता है । हाथी को अपनी खुराक के लिए १६ घण्टे तक परिश्रम करना पड़ता है । उसको प्रतिदिन की ३५०-४०० किलो घास या पत्तियाँ खुराक होती हैं तथा ३०-५० गैलन तक पानी की जरूरत होती है । हाथी की नींद आदमी की आधी हुआ करती है ।

हाथी दो मील की दूरी से मनुष्य की गन्ध को पहचान लेता है । इतना ही नहीं पद-चिन्हों को सूँघकर जान लेता है कि कोई उसका दुश्मन है या सामान्य आदमी । दुश्मन को वह कभी भूलता नहीं । ऐसे ही जिसने प्यार किया है उसके प्रति जिन्दगी भर वफादार रहता है ।

केनिया के कर्नल 'बूशमिथ' ने एक हाथी के बच्चे के पिछले पैर में घाव पाया, वे बच्चे को अपने घर ले गए और कुछ दिन ड्रेसिंग करके उसको ठीक कर दिया । कुछ महीनों बाद इस हाथी को नैरोबी जहाज पर चढ़ाया गया तब तक, जब भी हाथी का बच्चा कर्नल को देखता अपनी सूँड़ से उसका हाथ पकड़कर अपने घाव वाले स्थान पर ले जाता और आँखों से आभार व्यक्त करता ।

अपने भारतवर्ष में तो हाथी की चतुरता के बारे में अनेक कहानियाँ हैं । मनुष्य से बढ़कर बुद्धिमत्ता के कारण ही सबसे पहले हाथी की सूँड़ वाले गणपति की पूजा की जाती है ।

जर्मनी के 'म्यूनिक विश्वविद्यालय' के प्राणिशास्त्र के प्रोफेसर 'डॉ० कोनाड लारेन्ज' ने विगत अनेक वर्षों से विभिन्न पशुओं एवं पक्षियों के व्यवहार एवं भाषा पर अनुसन्धान कार्य किया है । उनका कहना है कि पशुओं के सामाजिक व्यवहार एवं मानवीय, सामाजिक व्यवहारों में आश्चर्यजनक समानता पायी जाती है ।

सामान्यतः पशुओं के बारे में यह मान्यता रही है कि उसमें मानवीय गुण जैसे—अनुभवी, योग्य एवं वृद्धों का सम्मान करना आदि गुण नहीं पाए जाते हैं और 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली कहावत चरितार्थ होती है अर्थात् शारीरिक बल की ही प्रधानता होती है । परन्तु डॉ. लारेन्ज के अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि पशुओं में भी मानवीय गुण होते हैं । लापरवाह कौए जैसे क्षुद्र प्राणियों में भी बड़ों का आदर एवं योग्यता, अनुभव, पद आदि का सम्मान करना जैसे गुण पाए जाते हैं । टेलीफोन के तार पर बैठे पंक्तिबद्ध कौवों का सूक्ष्म अवलोकन करने से पता चलेगा कि वे दायें से बायें आयु, योग्यता एवं अनुभव आदि के अनुसार बैठे हुए हैं । कौवों के समूह में निर्बलों का रक्षण सबलों के द्वारा अवश्य किया जाता है ।

पशु भी लड़ाई के नियमों का पालन करते हैं । मुर्गों की लड़ाई में प्रायः देखा जाता है कि जब कोई मुर्गा जीत न सकने की सम्भावना होने पर अपनी गर्दन झुका लेता है, तो दूसरा बलवान उसका समर्पण स्वीकार करके युद्ध बन्द कर देता है ।

डॉ० लारेन्ज ने हंसों पर भी गहन अध्ययन किया है और पाया कि उनमें विवाह आदि का सामाजिक स्वरूप होता है तथा स्नेह भरा दाम्पत्य जीवन और साथी के मर जाने या बिछुड़ जाने पर मानवीय विरह-व्यथा, सम्वेदनाएँ व्यक्त करते हैं तथा ब्रह्मचर्य जीवन व्यतीत करते हैं ।

हंस एवं अधिकांश अन्य प्राणी विभिन्न प्रकार की ध्वनियों के द्वारा अपने भावों की अभिव्यक्ति करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इतना ही नहीं अपनी विभिन्न शारीरिक मुद्राओं के माध्यम से भी वे भावाभिव्यक्ति करते हैं । इसको वैज्ञानिक लोग 'रिलीजर मिकैनिज्म' कहते हैं । हंसों में लम्बी गर्दन के कारण गर्दन को विभिन्न प्रकार से मरोड़ने की सैकड़ों मुद्राएँ पायी जाती हैं, जो कि उनकी भाषा के संकेत हैं । डॉ.लारेन्ज के इन अध्ययनों से विज्ञान की शाखा (इथोलोजी) मानव व्यवहार विज्ञान को नये आयाम मिले हैं । मानव ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट रचना है, लेकिन नैतिक मूल्य केवल मनुष्यों की ही सम्पत्ति नहीं हैं वरन् पशु-पक्षियों में भी नैतिक मर्यादाएँ पायी जाती हैं ।

विश्व के सबसे अधिक विकसित केन्द्र बन्दरों के अध्ययन के लिए बने हुए हैं, इनमें तीन प्रमुख केन्द्र विशेष प्रसिद्ध हैं—(१) क्योटो यूनीवर्सिटी का प्राइवेट रिसर्च इन्स्टीट्यूट, (२) इन्यूयामा का जापान मंकी सेन्टर, (३) ओसाका सिटी यूनीवर्सिटी । इन केन्द्र से सम्पर्क बनाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिकों का आना-जाना लगा रहता है ।

वहाँ के इन प्रमुख केन्द्रों में २५०० बन्दरों के ३० वर्षों तक के रिकार्ड रखे गये हैं, जिनमें उनके व्यावहारिक ढंग, पारिवारिक एवं सामाजिक सम्बन्ध-स्वास्थ्य आदि का विस्तृत विवरण संकलित किया जा रहा है । जापान के 'एन्थोलोजिस्ट जूनीकीरो इटैनी' का कहना है कि बन्दर क्रमशः प्रगति की ओर अग्रसर हो रहे हैं । वे नयी चीजें सीखते रहते हैं और उनके बच्चे नवीन आदतों को ग्रहण करते रहते हैं । बन्दरों में ९० प्रतिशत व्यवहार शिक्षण द्वारा प्राप्त किये जाते हैं ।

प्रारम्भ में बन्दर अधिक समय पेड़ों पर ही रहा करते थे । अनुसंधानकर्ता टोली आने के बाद से वे अब अपना ७० प्रतिशत तक समय जमीन पर ही बिताते हैं तथा दो पैरों पर खड़े होकर काफी दूर तक चल लेते हैं ।

इसी प्रकार उन्होंने अपने खाने के तरीकों में नये-नये ढंग सीख लिए हैं । पहले अनाज के मिट्टी या बालू में मिले होने पर एक-एक दाना बीनकर खाते थे और अब गेहूँ और बालू को मुट्ठी भरकर नदी के किनारे दौड़ जाते हैं तथा पानी में डाल देते हैं जिससे बालू तो नीचे बैठ जाती है और वे गेहूँ खा लेते हैं । ऐसे ही वे पहले पानी में कभी नहीं जाते थे । प्रारम्भ में तो पानी में मूँगफली आदि के दाने डालने पर उन्हें लेने जाने लगे फिर तो स्वयं ही तैरने, उछलने, खेलने आदि में खूब आनन्द लेने लगे हैं ।

अपने विचारों के आदान-प्रदान के लिए ३७ विभिन्न प्रकार की ध्वनियों का आविष्कार भी बन्दरों ने किया है, जिनके द्वारा वे अपनी भावनाओं, आदेशों एवं निर्णयों आदि को व्यक्त करते हैं । जैसे 'क्वान' ध्वनि का अर्थ 'खतरा' होता है ।

विशेषज्ञों ने अध्ययन करके पता लगाया है कि बन्दरों में उत्तम सामाजिक व्यवस्था भी होती है । प्रत्येक समूह का एक नायक होता है । नायक का चुनाव प्रजातन्त्र प्रणाली से होता है और स्त्रियों के वोटों को अधिक महत्व दिया जाता है । जिसे स्त्रियों का विश्वास प्राप्त नहीं होता, उसे निष्कासित कर दिया जाता है ।

बन्दर जब विश्राम करते हैं तो दो वृत्ताकार घेरों में बैठते हैं । भीतर वाले घेरे में नायक, स्त्रियाँ एवं शरारती रहते हैं । भोजन के समय अपने-अपने 'रैन्क' के क्रम से भोजन करते हैं । उनमें बड़ों के प्रति सम्मान करने का तरीका है । धीरे से उनके पीछे हो जाना तथा उनकी गरदन के बालों को सहलाना ।

अब ये बन्दर मनुष्य के साथ मित्रता भी करने लगे हैं । एक समय, एक छोटे बन्दर के बच्चे को एक पेड़ की टहनी देते हुए वैज्ञानिक को देखकर एक बड़ा बन्दर वैज्ञानिक महोदय के ऊपर आक्रमण करने लगा । बच्चे की माँ ने तुरन्त 'को-को-को' ध्वनि द्वारा नायक को बुला लिया । नायक ने उस बन्दर को हटाकर भगा दिया ।

बन्दर तो मानवीय गुणों की नकल करके अपने स्वभाव में परिवर्तन करने लगे हैं, परन्तु मानव अपने गुणों को छोड़ता हुआ पशुता की सीमा से भी नीचे गिरता चला जा रहा है ।

ममता और स्नेह की भावना मनुष्यों में ही नहीं अन्य प्राणियों में पाई जाती है । किसी-किसी में तो सभ्य कहे जाने वाले मानव से भी अधिक होती है ।

कछुए और घड़ियाल ऐसे प्राणी तो अपने अण्डों को सुरक्षा की दृष्टि से बालू में छिपा देते हैं । मादा मगर भी अपने अंडों को बालू में छिपा रखती है, किन्तु बच्चे के कुलबुलाने लगने पर अंडा तोड़कर उसे उससे बाहर कर लेती है ।

पनडुब्बी पक्षी, सुरक्षा की दृष्टि से अपने बच्चों को उनके समर्थ होने तक पीठ पर लादे-लादे फिरती है और संकट आने पर बच्चे सहित डुबकी लगाकर दूर निकलती है । यह ममत्व की भावना का ही परिचायक है ।

स्तनधारियों में स्पाइनी एन्ट ईटर अण्डज प्राणी हैं । स्तन की जगह इसके शरीर में स्तन ग्रन्थियाँ होती हैं । अंडों से निकलकर इसके बच्चे चुँगते नहीं, बल्कि मादा की स्तन ग्रन्थियों से एक प्रकार का तरल पदार्थ बहने लगता है, जो इसके बालों में चिपक जाता है । एन्ट ईटर के बच्चे इस स्राव को चाटकर अपनी क्षुधा की पूर्ति करते हैं ।

बिल्ली अपने बच्चों को पालन-पोषण से लेकर उनके समर्थ होने तक उनका मार्गदर्शन करती है । बच्चों को शिकार करने से लेकर घर-घर घुमाकर बच्चों को हर परिस्थिति से परिचित करा देती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बन्दरों में ममत्व की भावना सबसे ज्यादा पायी जाती है । मादा बन्दर अपने बच्चों को पेट और पीठ में चिपकाए-चिपकाए फिरती रहती है । यहाँ तक कि बच्चे के मर जाने पर भी वह उसकी लाश को तब तक लिए रहती है, जब तक कि वह सड़ने न लगे । प्राणियों में ममत्व की इसे पराकाष्ठा ही कहनी चाहिये ।

चतुरता एक बात है और सद्भावना दूसरी, सौभाग्य एक बात है और सौष्टव दूसरी । मनुष्य को अन्य प्राणियों से कई प्रसंगों से अधिक अनुदान मिले हैं सो ठीक है । पर यह नहीं मान बैठना चाहिये कि वे सद्भावना और सौष्टव की दृष्टि से भी पिछड़े हुए हैं । सभ्यता नहीं मिली है तो भी वे अनेक बातों से मनुष्य की अपेक्षा अधिक शालीन देखे जाते हैं ।

स्नेह-सद्भाव के वश में संसार

बाहुबल और साधन-शक्ति के द्वारा दूसरे व्यक्तियों को जितना प्रभावित किया जा सकता है, उससे असंख्य गुना अधिक स्नेह-सद्भाव से प्रभावित किया जा सकता है और उन्हें वशवर्ती बनाया जा सकता है । उनका यही कारण है कि सारा संसार और उनका एक-एक घटक संघर्ष व टकराव के आधार पर नहीं सद्भाव और घनिष्टता के आधार पर ही परस्पर सुसम्बन्ध सुसंचालित है ।

सद्भावनाओं को बढ़ाकर स्नेह और आत्मीयता का क्षेत्र विकसित कर दूसरों को प्रभावित करने में जितनी सफलता पाई गयी है, उतनी संघर्ष-शक्ति प्रयोग और आक्रमण द्वारा कहीं भी नहीं मिली है । स्नेह-सद्भाव अर्थात् प्रेमपूर्ण अन्तःकरण का प्रभाव केवल मनुष्य पर ही नहीं पशु-पक्षियों पर भी पड़ता है ।

इस तथ्य को प्रतिपादित करने में इंग्लैण्ड के एक सामान्य व्यक्ति ने न केवल तर्क प्रस्तुत किये वरन् प्रामाणिकता की प्रतिमा बनकर स्वयं ही खड़ा होगया । उसने न केवल सामान्य पशुओं पर प्रेम की प्रतिक्रिया का प्रदर्शन किया वरन् यह भी साबित कर दिया कि खूँखार उद्दण्ड और जंगली जानवरों को भी सभ्य और मृदुल बनाया जा सकता है । इस व्यक्ति का नाम है—जान शोलेमन रेरी ।

उसके पिता ओहियो प्रदेश के फ्रेंकलिन गाँव में रहते थे । नाम था एडम रेरी । उनने एक घोड़ा खरीदा । घोड़ा जितन शानदार था उतना सस्ता था । एडम ने सोचा इसे सधा लेंगे । पर वह था बहुत खूँखार । उसे सिखाने-साधने के लिए दूर-दूर से क्रमशः एक दर्जन से अधिक घुड़सवार बुलाये गये पर वे सभी असफल रहे । घोड़ा किसी के काबू में नहीं आया । एडम ने स्वयं उसे काबू में लाने की कोशिश की और कोड़े मारे । क्रुद्ध घोड़े ने रस्सों से बँधे होते हुए भी उन्हें ऐसा पछाड़ा कि टाँग टूट गयी । उन्हें अस्पताल भिजवाया गया । घोड़ा छूट निकला । उसे खतरनाक समझकर पुलिस द्वारा उसे मरवा देने का निश्चय किया गया ।

बालक जान रेरी उन दिनों सिर्फ १२ वर्ष का था । उसने सारी स्थिति समझी और सीधा उस जंगल में चला गया जहाँ घोड़ा चौकड़ियाँ भर रहा था । लोगों को अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ, जब देखा कि लड़का बिना लगाम और जीन के उस घोड़े की पीठ पर बैठा हुआ घर आ रहा है । पूछने पर उसने बताया यह कोई जादू नहीं है । मुहब्बत यदि गहरी और सच्ची हो तो किसी को भी यहाँ तक की खूँख्वार पशुओं को भी वशवर्ती बनाया जा सकता है ।

बालक की ख्याति घोड़ों के शिक्षक के रूप में फैल गयी । लोग अपने-अपने उद्दन्ड घोड़े ठीक करने उसके पास लाने लगे । सिलसिला घोड़ों का चल पड़ा तो उसने वही काम हाथ में ले लिया । कई वर्ष तक उसे यही काम करना पड़ा । बीस वर्ष का होते-होते वह सरकस के लिए घोड़े साधने की कला में निष्णात हो गया । उसने उन्हें ऐसे-ऐसे विचित्र खेल सिखाये जो उससे पहले सरकसों में कहीं नहीं दिखाये जाते थे । इससे पहले घोड़े साधने की कला उन्हें पीटने, भूखा रखने, पैरों मे कीलें ठोकने जैसे निर्दय तरीकों पर अवलम्बित थी । रेरी ने सिद्ध किया कि उससे कहीं अधिक कारगर प्यार-मुहब्बत का तरीका है । वह कहता था कि यदि जानवरों को प्यार मिले तो न केवल पालतू प्रकृति के पशु वरन् नितान्त जंगली और मनुष्य से सर्वथा अपरिचित जानवर भी वशवर्ती, सहयोगी एवं सरल प्रकृति के बन सकते हैं । यह उसने सिर्फ कहा ही नहीं वरन् करके भी दिखाया ।

जब घोड़े ही उसके पल्ले बँधने लगे तो उसने उसकी आदतें समझने के लिए कई महीने जंगली घोड़ों के साथ रहने की व्यवस्था बनाई । उसकी रुचि और प्रकृति को समझा । उन्हें बदलने एवं साधने के आधार ढूँढ़े और अपने विषय में पारंगत हो गया । रेरी ने चुनौती दी कि कोई कितना ही भयंकर घोड़ा क्यों न हो वह उसे कुछ ही दिनों में, कुछ ही घन्टों में वशवर्ती बना सकता है । पत्रों में छपी इस चुनौती ने घोड़े वालों में भारी दिलचस्पी पैदा कर दी ।

छपी चुनौती से प्रभावित होकर लार्ड डारचेस्टर ने रेरी का द्वार खटखटाया । उसने १५ हजार हजार डालर में एक बलिष्ठ घोड़ा-घुड़दौड़ में बाजी जीतने की दृष्टि से खरीदा था । कुछ दिन तक तो वह ठीक रहा पर पीछे वह बेकाबू हो गया । लोहे की जंजीरें तोड़ देता, जंगले उखाड़ देता, और कभी-कभी गुस्से में अपनी ही अगली टाँगें कुट लेता । उसके लिए ईंटों की कालकोठरी बनानी पड़ी । उसी में चारा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दाना दिया जाता । पूरे चार वर्ष उसे उसी कोठरी में बन्द रहते हो गये थे ।

लार्ड डारचेस्टर ने उस घोड़े को ठीक करने की चुनौती दी । रेरी ने उसे स्वीकार कर लिया । घोड़ा लन्दन तो आ नहीं सकता था इसलिए उसे ही यूरेल्स ग्रीन पहुँचना पड़ा । उस समय घोड़ा अत्यन्त क्रुद्ध था । कोठरी के दरवाजे तोड़ने में लगा हुआ था । उसकी भयंकर स्थिति देखकर लोगों ने समझाया कि वह इसे सुधारने के झंझट में न पड़े और वापस चला जाए पर रेरी अपनी बात पर अड़ा ही रहा । उसे विश्वास था कि वह किसी भी भयंकर जानवर को, इस घोड़े को भी अनुशासित कर सकता है ।

रेरी सीधा घोड़े की कोठरी में निहत्था घुस गया । उसने पीठ और गर्दन सहलाई और तीन घन्टे तक उससे बातें करते हुए दुलारता रहा । जब वह घोड़े के साथ उसकी गरदन के बाल पकड़े-पकड़े कोठरी से बाहर आया तो दर्शकों ने उसे जादूगर कहा, पर वह यही कहता रहा यदि प्रेम को जादू कहा जाय तो ही उसे जादूगर कहलाना मंजूर है, उसके पास कोई मंत्र-तंत्र नहीं है ।

लार्ड डारचेस्टर इस सफलता पर भावविभोर हो गये । उन्होंने घोड़े को उपहार-स्वरूप रेरी को भेंट किया और साथ ही एक बड़ी धनराशि भी दी ।

महारानी विक्टोरिया ने रेरी की ख्याति सुनी तो उन्होंने भी उसकी कला देखने की इच्छा प्रकट की । शाही निमंत्रण देकर उसे बुलाया गया । प्रदर्शन में रेरी के सामने एक ऐसा घोड़ा प्रस्तुत किया गया जो पहले तीन घुड़सवारों का कचूमर निकाल चुका था । रेरी उसकी कोठरी में निर्भीकता पूर्वक घुस गया और सोलह मिनट बाद उस पर सवार होकर बाहर आया । दूसरे घोड़े को तो उसने दस मिनट में ही वशवर्ती कर लिया ।

अब उसे एक अत्यन्त खतरनाक ऐसे घोड़े का सामना करना पड़ा जिसने दो घुड़सवारों की पहले ही जान ले थी । रेरी घुड़साल में भीतर गया और भीतर से कुन्डी बन्द कर ली । साथ ही यह भी निर्देश किया जब तक वह कहे नहीं तब तक कोई उसे छेड़ने या दरवाजा खोलने की कोशिश न करे । घोड़ा अत्यधिक भयंकर था । महारानी सहित प्रतिष्ठित दर्शक रेरी के निहत्थे और एकाकी भीतर घुसने से बहुत चिंतित थे । पर वह घुसा तो घुसा ही रहा । जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा था अधीरता बढ़ती जा रही थी, जब पूरे तीन घन्टे बीत गये और भीतर से कोई हलचल सुनाई न दी तो यही समझ लिया गया कि घोड़े ने रेरी को मार डाला । निदान दरवाजा तोड़ने का आदेश हुआ । भीतर जो कुछ देखा गया, उससे सभी स्तब्ध रह गये । घोड़ा फूस की घास पर सोया हुआ था और उसकी टाँग का तकिया लगाये रेरी भी खर्राटे भर रहा था । दोनों की नींद खुली । वे परम मित्र की तरह अस्तबल से साथ-साथ बाहर आये तो महारानी विक्टोरिया को अपनी आँखों पर विश्वास न हुआ । वह यह न समझ सकी कि इतना खूँखार घोड़ा किस प्रकार इतनी जल्दी इतना नम्र बन सकता है ।

रेरी अपनी कला का प्रदर्शन टैक्सास में किया जिसमें दूर-दूर के दर्शक और पत्रकार आये थे । उनके सामने ऐसे चार घोड़े पेश किये गये, जो जंजीरों से कसे रहते थे । और चारों ही अपने मालिकों का खून कर चुके थे । रेरी पौन घन्टे सींखचे वाली कोठरियों में अकेला उनके साथ रहा और फिर चारों को अपने साथ खुले मैदान में ले आया । उसने घोड़ों को लेटने का आदेश दिया तो वह बिल्ली की तरह लेट गये । दर्शकों ने हर्ष ध्वनि की ।

एक बार तो उसने जंगली बारहसिंगों के एक जोड़े को पालतू कुत्तों जैसा बना लिया और वह उन्हें साथ लेकर प्रेम, दया और आत्मीयता के इस प्रत्यक्ष प्रभाव का प्रदर्शन करता गाँव-गाँव घूमा ।

फ्रांस सरकार ने उसके कर्तव्य की शोध करने और उसका निष्कर्ष निकालने के लिए एक आयोग नियुक्त किया । अमेरिका के राष्ट्रपति वुकेनन ने उसकी शिक्षापद्धति के नोट्स लेकर ऐसी पुस्तक लिखाई जिससे घोड़ों को सिखाने-साधने में सहायता मिले । अश्व विज्ञान की वह पुस्तक अब भी बड़ी प्रमाणिक मानी जाती है ।

प्यार बड़ा है या क्रूरता

प्यार बड़ा है या क्रूरता ? मनुष्य बड़ा है या पशु ? साहस बड़ा है या भय ? इन प्रश्नों का उत्तर दर्शनशास्त्र के आधार पर प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाय तो उलटे उलझन में फँसना पड़ेगा । तर्क कभी इस पक्ष का समर्थन करेगा, कभी उस पक्ष का । प्रमाण कभी इस पलड़े को भारी करेंगे, कभी उस पलड़े को । बुद्धि की अनिश्चयात्मकता प्रसिद्ध है, वह मान्यताओं, अभिरुचियों और पूर्वाग्रहों की गुलाम होती है । भीतर रुझान जिधर ढुलकता है बुद्धि उसी के समर्थन में जुट जाती है ।

तथ्यों के निर्णय का अच्छा तरीका प्रयोग है । कुछ साहसी लोगों ने इस प्रकार के प्रयोग किये हैं कि क्या जन्मजात हिंसा-प्रवृत्ति के क्रूरकर्मा पशुओं को स्नेह और सद्भावना के वातावरण में रखकर सौम्य और स्नेहिल बनाया जा सकता है । क्या वे अपने मूल प्रवृत्ति को छोड़कर स्नेह सौजन्य के अनुरूप अपने को बदलने को तैयार हो सकते हैं ? ऐसे परीक्षण में जो सफलता मिली है उससे यह निष्कर्ष उभर कर आया है कि क्रूरता पर प्यार विजय पा सकता है । भय को साहस परास्त कर सकता है और पशुता को मनुष्यता निरस्त कर सकती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वन्यपशु विशेषज्ञ डेस्मांड वेकडे ने अपनी पुस्तक 'गारायाका' में उस मादा चीता का वर्णन किया गया है, जिसे उन्होंने एक झाड़ी में पाया था और अपनी बेटी की तरह पाला था । घटनाक्रम इस प्रकार है कि एक दिन डेस्मांड महोदय वेचुआना लेण्ड के पूर्वी सीमा पर शाशी और लिपोपो के दुआबे पर निरीक्षण के लिए गये । उन दिनों वे नदियों के संरक्षित वन प्रदेश के वार्डन थे और वन्यपशुओं की देखभाल की जिम्मेदारी उनकी थी । इस प्रयोजन की पूर्ति वे इस क्षेत्र मे दौरे करके ही कर सकते थे ।

उस दिन एक मोटे मगरमच्छ ने पानी पीते हुए चीते पर हमला किया और देखते-देखते उसका सिर चबाते हुए पानी में घसीट ले गया । डेस्माण्ड महोदय इस घटनाक्रम के मूकदर्शक न रहे, उन्होंने गोली चलाई और पानी में धँसे हुए मगरमच्छ का काम तमाम कर दिया पर बच चीता भी न सका । उसने पानी से बाहर निकलते-निकलते दम तोड़ दिया । यह मादा चीता थी, उसके थनों से दूध टपक रहा था, इससे स्पष्ट था कि वह नवप्रसूता है । डेस्माण्ड महोदय उसके बच्चों का पता लगाने मादा के पैरों के चिन्हों के सहारे उस झाड़ी के पास पहुँचे, जिससे एक-दूसरे से सटे तीनों बच्चे बैठे थे । उनकी उम्र मुश्किल से एक दो सप्ताह की ही रही होगी । डेस्माण्ड उन्हें उठाकर घर ले आए । पालने का प्रयत्न भरसक किया पर उनमें से दो तो मर ही गए । एक को ही रखा जा सका । वह मादा थी । नाम रखा गया 'गारायाका' । उसकी उछल-कूद और शैतानी को देखते हुए यह नाम उनके नौकरों ने रखा था । जिसका अर्थ होता है ? 'भूत-चुडैलों की माँ' नाम व्यंग्य में रखा गया था पर पीछे वह प्रचलित हो गया । वह उसी नाम से पुकारने पर उत्तर भी देती थी ।

झाड़ी में से लाकर डेस्माण्ड ने यह प्रयोग भी किया कि उनकी नव-प्रसूता कुतिया रेक्स चीते के बच्चों को अपनी दत्तक सन्तान मानने लगे और दूध पिलाने तथा पालने लगे । इसमें उनको सफलता मिली । चीता लड़की इन परिस्थितियों में बढ़ती चली गई और अपने बालसुलभ चापल्य से इस परिवार का विनोद करती हुई प्रौढ़ बन गई । वातावरण ने उसे दूसरी कुतिया ही बना दिया था । वह रेक्स के साथ इतनी घुल-मिल गई थी और वैसी ही आदतों में इतनी अधिक बढ़ गई थी कि आकृति से भले ही वह चीता कही जाय प्रकृतितः कुतिया ही बनकर रह रही थी ।

गारायाका अपने पालक के साथ शिकार करने जाती और कई बार तो बब्बर शेरों तक से उलझ जाती और उनके छक्के छुड़ाती । तेन्दुये, चीते और बाघों से भी उसकी टक्करें हुईं पर हर बार उसकी बहादुरी सराहनीय ही रही । पालतू प्रकृति के कारण लड़ने से डरने की कमजोरी उसमें नहीं ही आने पाई । इतने पर भी मनुष्य के साथ उसका व्यवहार आजीवन सौम्य और सज्जनोचित ही बना रहा ।

दो साल की होने पर गारायाका ने शैशव और किशोरावस्था पार करके यौवन में प्रवेश किया । उसके भाव-भंगिमा और हरकतों में विचित्र प्रकार का परिवर्तन दिखाई पड़ने लगा । तब यही उचित समझा गया कि उसे अपना गृहस्थ बनाने की आजादी दी जाय । अन्ततः उसे चीतों के बाहुल्य वाले जंगल में छोड़ा गया । जहाँ उसने अपना सहचर ढूँढ़ निकाला और सुहागरात मनाने के लिए लगभग दस सप्ताह उधर ही निवास करती रही । इस बीच में समय-समय पर डैस्माण्ड उसकी देखभाल करने जाते रहे, उन्होंने जब भी पुकारी वह अपने प्रेमी को छोड़कर दौड़ी आई और जो आमिष उपहार उसे दिये गये उन्हें लेकर अपने साथी के पास लौट गई ।

यह प्रणयकाल दस सप्ताह तक चला । साथी की आवश्यकता पूरी होने पर फिर अपने पुराने घर में उसका आना-जाना आरम्भ हो गया पर यह सब अधिक दिन न चला, क्योंकि पशु प्रकृति अनुसार उसे प्रसव के लिए सघन झाड़ियों वाला एकान्त क्षेत्र ही अनुकूल पड़ता था । प्रसूतिगृह वह बना ही रही थी कि एक सिंहनी ने उस पर बुरी तरह हमला कर दिया और कई जगह घायल कर डाला । डेस्माण्ड उसकी खोज-खबर बराबर रखते थे । घायल होने की बात का जैसे ही पता लगा वे स्टेचर पर लाद कर उसे घर लाए । जहाँ उसने दो बच्चों को जन्म दिया उनका पालन भी नाना ने उसी प्रकार किया जैसे कि अपनी वनबेटी गारायाका का किया था ।

उपरोक्त प्रयोग अफ्रीका की जायआडमसन के उस परीक्षण की शृंखला में आता है, जिसमें उसने सिंहों और चीतों को खुले वातावरण में पालकर संसार को यह बताया कि स्नेह किया जा सके तो बर्बरता को सौजन्य के सम्मुख नतमस्तक ही होना पड़ेगा ।

ऐसा ही एक प्रयोग माइकेला का है जिसने हिंस्र पशुओं को स्नेहिल प्रकृति का बनाने के प्रयोग किए । उसमें आश्चर्यजनक सफलता पाई ।

अमेरिकन युवती माइकेला ने अविवाहिता रहने का निश्चय किया था ताकि वह स्वच्छन्दतापूर्वक संसार के वन- प्रदेशों और वनजीवों की समीपता का आनन्द ले सके । उसे वनजीवों से बहुत प्यार था, अपने अतृप्त मातृत्व और वात्सल्य की पूर्ति के लिए उसने कितने ही प्राणी पाल रखे थे । जिनमें बहुत जाति के कुत्ते, बिल्लियाँ, लोमड़ी, नेवले, तोते, बन्दर, चूहे, खरगोश, साँप, गिरगिट आदि सम्मिलित थे । आगे इस दिशा में बहुत कुछ देखने-करने की आकांक्षा उसने सँजो रखी थी और यथासम्भव प्रकृति के पुत्रों के सान्निध्य में रहने में वह अधिक समय लगाती भी थी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसे यह आशा नहीं थी इस सनक में कोई पुरुष साथी भी उसे मिल सकता है । पर भाग्य ने सहारा दिया तो वह भी मिल गया । न्यूयार्क में एक भोज में सम्मिलित हो गई तो उसे ठीक ऐसी ही प्रकृति का एक युवक मिल गया नाम था आर्माण्ड डेनिस । दोनों में घनिष्टता बढ़ी और वह इस समाधान की चरम परिणति पर पहुँची कि दोनों विवाह तो करेंगे किन्तु बच्चे पैदा नहीं करेंगे क्योंकि पहले से ही बहुत बच्चे विचित्र पालतू जीवों के रूप में मौजूद हैं और भविष्य में उनकी संख्या सहज ही बहुत बढ़ने वाली है । उनका विवाह वस्तुत: प्रकृति निरीक्षण के अनोखे आनन्द को दो साथियों द्वारा मिलकर अधिक हर्षोल्लास युक्त बनाने का एक उद्देश्यपूर्ण समझौता मात्र था । विवाह के बाद दोनों ने और भी अधिक उत्साह के साथ अपना शौक आगे बढ़ाया, वे दूर-दूर तक घूमे । अफ्रीका और दक्षिण अमेरिका में इस दृष्टि से उन्हें बहुत कुछ देखने के लिए मिला ।

झालावाड़ (राजस्थान) रियासत से सम्बद्ध श्री बद्रीप्रसाद जायसवाल को शिकार खेलते समय एक दो महीने का चीते का बच्चा मिल गया, उन्होंने उसे प्रेमपूर्वक पाला । जंजीर से बाँधे रखना ही पर्याप्त था, पिंजरे में बन्द करने की कभी जरूरत नहीं पड़ी । जिस वातावरण में उसे पाला गया था उसने आक्रमणकारी प्रकृति में भारी अन्तर ला दिया था । जंजीर में बाँधकर नदी स्नान कराने एवं गाड़ी में बिठाकर जायसवाल उसे बाहर ले आया करते और सैर-सपाटे में वह प्रसन्न भी खूब होता । पीछे पालक को अपनी कठिनाइयों के कारण उसे चिड़ियाघर भेजना पड़ा । वहाँ वे जब कभी उस देखने जाते तब प्रसन्नता प्रकट करता और कूँ-कूँ करते हुए पास आने और चाटने का प्रयत्न करता ।

डेनिस दम्पत्ति का एक जोरदार सदस्य था अफ्रीकी तेन्दुआ, उसका नाम उन्होंने तुशुर्द रखा । यों साधारण लोग उसे चीता ही कहते थे क्योंकि आमतौर से लोग यह फर्क नहीं जानते कि चीते के मुँह पर लम्बी धारियाँ होती हैं, उसके बाल और कड़े होते हैं, जबकि तेन्दुए के मुँह पर चित्तियाँ होती हैं और बाल मखमल जैसे मुलायम । तुशुर्द छोटा बच्चा ही मिला था । जिस प्रकार के वातावरण में उसे पाला गया उसमें वह इस प्रकार ढल गया मानो कोई पालतू कुत्ता ही हो । माइकेला के पीछे वह अक्सर दुम हिलाते हुए घूमते ही देखा जाता । उछलकर अपनी मालकिन की गोद में जा बैठना उसे बहुत भाता था । कभी-कभी मस्ती के जोश में आता तो उसके हाथ-पैर चबाने का उपक्रम करने लगता, पर क्या मजाल दाँत या पंजे की कोई खरोंच तक किसी अंग में लग जाए । उसके प्यार भरे व्यहार ने साथ में पले हुए अन्य प्राणियों को पूर्णतया निर्भय बना दिया था, जब भी उन्हें अवसर मिलता तुशुर्द के साथ खेलने के लिए इकट्ठे हो जाते और एक-दूसरे के साथ खेलने का ऐसा आनन्द लेते मानो वे एक ही जाति-बिरादरी के परस्पर भाई-बहिन हों ।

तेन्दुए पालने में सफलता प्राप्त कर लेने के उपरान्त माइकेला ने दो चीते के बच्चे पाले । चीते अपेक्षाकृत अधिक दुष्ट होते हैं, जहाँ उनमें ६० मील प्रति घण्टा की चाल से तेज दौड़ सकने की क्षमता होती है, वहाँ उनकी धूर्तता, प्रेम और सद्भावना, प्राणी की आत्मचेतना को स्पर्श करती और प्रभावित करती है । यही कारण है कि भाषा न समझने वाले अबोध और फूट से चूर-पक्षी भी स्नेह-सद्भावना के वशीभूत हो जाते हैं । उपरोक्त तीन विवरण इस बात के प्रतीक हैं कि स्नेह-सद्भाव से मनुष्य तो क्या, बिगड़े और क्रुद्ध पालतू जानवरों से लेकर ह्वेल तथा शेर, चीते भी पालतू प्रेमी-स्वजन और स्नेही-सम्बन्धी हो जाते हैं । ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कि कोई व्यक्ति आज्ञाकारी सन्तान, निष्ठावान जीवन-साथी की तरह आपस में स्नेह व सद्भाव रखते हैं ।

स्नेह-निष्ठा और पारिवारिकता का अनुगमन

परिवार मनुष्य की पहली प्रयोगशाला है, जहाँ वह स्नेह, त्याग, सेवा और सहिष्णुता का अभ्यास करता है । यह नहीं सोचना चाहिये कि परिवार मनुष्य की अपनी मौलिक रचना है । सृष्टि के अन्यान्य प्राणियों में भी पारिवारिकता, दाम्पत्य जीवन में परस्पर निष्ठा, उत्सर्ग और त्याग की भावनाएँ देखी जा सकती हैं । गृहस्थ जीवन में अपने सुख-स्वार्थ के अत्यधिक आग्रह से उत्पन्न होने वाले अनर्थों का यदि कहीं समाधान खोजना हो तो उन जीव-जन्तुओं के पारिवारिक जीवन का अध्ययन करना चाहिये जो दाम्पत्य तथा गृहस्थ जीवन के आदर्श कहे जा सकते हैं । मनुष्य को मनुष्य के निकट लाने और उसे घनिष्ट सम्बन्ध-सूत्रों में आबद्ध करने वाला एक ही तत्व है—भावनाएँ । यदि उस तत्व को निकाल दिया जाए तो फिर जो शेष बचेगा, वह इतना घृणास्पद होगा कि उसे स्पर्श करना तो दूर कोई देखना भी पसन्द न करेगा । भाव सम्वेदनाएँ ही हैं जो जीवन को जोड़कर रखती हैं, मनुष्य-मनुष्य के बीच मैत्री कायम रखती हैं, व्यवस्था बनाए रखती हैं, भावनाओं से रिक्त संसार में और मरघट में कोई अन्तर नहीं रह जाता । दूसरी ओर भावनाओं की शीतल छाया उपलब्ध हो तो लोग अभाव की स्थिति में भी आनन्दपूर्वक जीवन जीते हैं, भावनाएँ न होतीं तो संसार बिखर गया होता, अब तक कभी का नष्ट-भ्रष्ट हो गया होता है ।

खेद है कि मनुष्य जीवन भौतिक आकर्षणों की भयंकर दौड़ में भावविहीन होता जा रहा है जिससे साधन बढ़ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर भी निराशा बढ़ रही है, बढ़ते हुए अपराध तलाक, आत्महत्याएँ इस तथ्य के प्रमाण हैं कि मनुष्य का हृदय रस सूखता जा रहा है, यदि इस ओर मनुष्य जाति ने स्वयं ही रचनात्मक दृष्टि न डाली तो एक दिन उसका विनाश ही हो सकता है ।

यह मनुष्य के लिए लज्जा की बात है कि उस जैसा विचारशील प्राणी जबकि इन मानवीय गुणों से रिक्त होता जा रहा है, तब भी सृष्टि के दूसरे अबोध प्राणियों की भाव-सम्वेदना यथावत् अक्षुण्ण है । मनुष्य मर्यादाशील, विचारशील प्राणी होने का दम भरता है, पर टूटते हुए दाम्पत्य सम्बन्ध, नष्ट होती पारिवारिक शान्ति, उच्छृंखल होती जा रही भावी पीढ़ियाँ और अराजकतापूर्ण सामाजिक सम्बन्ध यह बताते हैं कि हमारा जीवनक्रम अशुद्ध होता जा रहा है, हम चाहें तो अपने दूसरे भाइयों से सीखकर अपने कदम फिर पीछे लौटा सकते हैं ।

'डिक-डिक' जाति का हिरन एकपत्नी-व्रती होता है । यह सदैव जोड़े में रहता है । अपने जीवनकाल में वह कभी किसी अन्य हरिणी के साथ सहवास नहीं करता ।

जंगली बतखें भी पारिवारिक निष्ठा से ओतप्रोत होती हैं । अपनी जाति के अतिरिक्त यह बतखों की १४० लगभग जातियों में से किसी से भी सम्बन्ध नहीं बनातीं । जापानी मैण्डेरिन इनके बहुत अधिक समीप होती है, किन्तु जीव शास्त्रियों के अनेकों प्रयत्नों से भी उसने उससे मिलने से इन्कार कर दिया ।

दाम्पत्य निष्ठा की तरह जीवों में नर-मादा का पारस्परिक प्यार भी भावपूर्ण होता है, जंगली भैंसे, हिरण, बारहसिंगे तथा साँभर भी अपनी मादा के सींगों से सींग रगड़कर अपनी प्रेम भावना प्रदर्शित करते हैं । सिंह-सिंहनी को अपना पराक्रम दिखाकर आकर्षित करता है, तो हाथी को अपनी सूँड उठाकर अपनी प्रेम भावना का परिचय देना पड़ता है । कुछ पक्षी तथा जीव-जन्तु सुरीले राग और आवाज से अपनी विरह-व्यथा व्यक्त करते और प्रणय-यचना करते हैं । कुछ जीवों में नेत्रों से अभिव्यक्ति कर अपने प्रेम का परिचय देने का प्रचलन होता है, पर प्रेम की स्वाभाविक अभिव्यक्ति प्रत्येक जीव में होती है अतएव इसे एक सनातन तत्व के रूप में उसकी पवित्रता बनाये रखने का प्रयास करना चाहिये । प्रेम प्रदर्शन की वस्तु नहीं, वह आत्मा का भूषण है । अतएव वह जाग्रत किसी के भी प्रति हो पर प्रयास उसके सार्वभौमिक रूप की अनुभूति का ही हो तभी सार्थकता है ।

विवाह से पूर्व नर और मादा रैवेन एक वर्ष तक लगातार साथ-साथ रहते हैं । मादा अपने लिए ऐसे नर का चुनाव करती है जिसमें नेतृत्व के गुण हों, जो साहसी हो, निर्भय हो, आलसी, दुर्बल, मूर्ख आदमियों की कौन पूछ करे, प्रकृति उद्योगी, साहसी और हिम्मत वालों का वरण करती है । मादा रैवेन इस मामले में पूरी छानबीन करके अपना फैसला देती है । यदि वह देखती है कि नर में नरोचित गुणों का अभाव है तो वह उसे छोड़कर किसी अन्य का वरण करती है । दहेज और कृत्रिम गुणों पर जिस तरह लड़कियाँ ठग ली जाती हैं, रैवेन को ठगा जाना नितांत असम्भव होता है ।

कई बार नर और मादा भूल-भटक जाते हैं । इन परिस्थितियों के लिए वे पहले से ही कुछ खास ध्वनियाँ निर्धारित कर लेते हैं, जो उनके जाति के किसी भी अन्य रैवेन को मालूम नहीं होतीं । उन्हीं के सहारे वे एक दूसरे को पालते हैं । एक बार परीक्षण के दौरान डॉ० ग्विनर एक कुत्ते की आवाज सुनकर चौंके उन्होंने देखा पास में कोई कुत्ता नहीं है फिर भौंकने की आवाज कहाँ से आ रही है ? थोड़ी ही देर में पता चल गया कि एक रैवेन जिसका कि 'सगाई काल' चल रहा था संकेत देकर अपने बिछड़े मंगेतर को बुला रहा था । थोड़ी ही देर में दोनों मिल गये ।

विवाह के बाद भी मादा अपने दाम्पत्य अधिकार और स्वाभिमान के भाव को सुरक्षित रखती है । नारी होने के कारण अपना वर्चस्व खो दिया जाय, यह बात कोई महिला स्वीकार भले ही कर ले रैवेन को स्वीकार नहीं । सम्बन्ध निश्चित कर लेने के बाद वह अपने रहने के उपयुक्त स्थान ढूँढ़ती है । नर मकान बनाता है, यदि इस बीच मादा को वहाँ की परिस्थितियाँ अनुकूल न जान पड़ीं तो वह अन्य स्थान ढूँढ़ेगी । कई बार इस खोज में नर को कई अधूरे बने मकान छोड़कर बार-बार नये मकान बनाने पड़ते हैं । यह मादा की इच्छा पर है कि वह इनमें से किसी भी स्थान को चुने और उसमें रहने का अन्तिम फैसला करे ।

ग्विनर लिखते हैं कि पत्नी और पति के सम्बन्ध कैसे हैं, पारिवारिक जीवन में प्रेम, शान्ति, सुख और सुव्यवस्था है या नहीं इस बात का पता लगाना हो तो घर के बच्चों की स्थिति देखकर पता लगाया जा सकता है । जिन घरों में प्रेम, मैत्री एवं सद्भाव होता है वे घर साफ-सुथरे-सजे हुए, उसके बच्चे और सदस्य हँसते-खेलते हुए होते हैं । यही बात रैवेन के बारे में भी है उसका उसका घोंसला देखकर बताया जा सकता है कि उसके पारिवारिक जीवन मे प्रेम और सौहार्द्र है अथवा नहीं ।

पति रैवेन अपनी मादा के प्रति समर्पित और एक नारी व्रत का पालन करके मनुष्य जाति को शिक्षा देता है और एक प्रकार से उसकी कामुकता को धिक्कार कर कर्तव्य भाव की प्रेरणा देता है । अन्डे सेने के १८-१९ दिन मादा लगातार घोंसले में बैठी रहती है, उस अवधि में दाना लाकर पत्नी की चोंच में डालकर खिलाने का काम नर बड़ी भावना के साथ पूरा करता है । एक डच जूलाजिस्ट ने लिखा है कि एक बार अन्डा सेने की अवधि में एक मादा रैवेन मर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गयी, उस समय पति ने लगातार भूखे रहकर सन्तति पालन का बोझ उठाया और बच्चों को सेकर बड़ा करने से लेकर उन्हें उड़ना सिखाने तक का सारा उत्तरदायित्व अकेले ने निभाया ।

वासना नहीं कर्तव्य भावना से प्रेरित

मनुष्य ही नहीं सृष्टि के हर जीव में प्रेम की प्यास अदम्य होती है । अमरीका के सैनडिगो चिड़ियाघर की निर्देशिका बेले जे० वेनशली ने चिड़ियाघर में अपने उन्नीस वर्ष के अनुभवों का जिक्र करते हुए लिखा है—मैंने वन्य पशुओं के जीवन में भी प्रेम की तड़प देखी, वे भी प्रेम से ही सीखते, सिखाते हैं । एक बार चिड़ियाघर की मादा भालू ने एक बच्चे को जन्म दिया, उसका नाम टाकू रखा गया । भालू जितना क्रोधी प्रकृति का खूँखार जानवर है, उससे अधिक उसमें वात्सल्य देखा जा सकता है । देखने से लगता है, संसार की विषम परिस्थितियों ने उसे क्रुद्ध होने को विवश न किया होता तो भालू संसार में सबसे अधिक स्नेह और ममता वाले स्वभाव का जीव होता । मादा चार माह तक बच्चे को पेट से चिपकाए गुफा में पड़ी रही । गुफा से वह बाहर भी नहीं निकली, किन्तु फिर जैसे उसे याद आया कि बच्चे के प्रति प्रेम और वात्सल्य का यह तो अर्थ नहीं कि उसके आत्म-विकास को अवरुद्ध रखा जाए । मादा माँद से बाहर आई । नन्हा शिशु उसके साथ-साथ बाहर निकला । मादा सीधे तालाब के पास पहुँची और पानी में उतरकर स्नान करने लगी । उसने बच्चे को भी बहुतेरा पानी में उतरने को प्रेरित किया, मुँह से तरह-तरह की आवाज निकाली, उससे प्रतीत होता माँ उसे पानी में बुला रही है, न आने के लिए उसमें गुस्सा भी है किन्तु वह अपनी प्यार भावना को दबा सकने में असमर्थ है, बच्चा अपनी माँ के साथ खिलवाड़ करता है कभी-कभी किनारे पहुँचकर उसके बाल पकड़कर बाहर खींचता है, मानो वह माँ को पानी में नहीं रहने देना चाहता पर माँ जानती है कि आरोग्य के लिए बच्चे को स्नान कराना आवश्यक है । ममतावश उसने कई बार बच्चे को छोड़ा पर उसे गुस्सा भी दिखाना पड़ा । वह नाराजी भी प्रेम का ही एक अंग थी, भगवान भी तो नाराज होकर अपनी बनाई सृष्टि, अपने बच्चों को दण्ड देता है पर उसकी दण्ड प्रक्रिया भी उसके प्रेम की ही प्रतीक है । खराब से खराब सृष्टि को भी वह नष्ट करना ही नहीं चाहता, उसे सुधार की आशा रहती है इसलिए वह अपनी उस साधना को न बन्द करते हुए भी अपनी सन्तान पर प्यार रखना नहीं भूलता । स्वयं भी रोता रहता है, पर नाराज होकर सृष्टि को नष्ट कर डालने की बात उसके मन में कभी आई नहीं ।

एक दिन मादा ने जबरदस्ती की और उसे पानी में पकड़ ही तो ले गई, उसने अपने पंजों से बच्चे को अच्छी तरह धोकर स्नान कराया । कभी वह डूबने लगता तो माँ उसे सतह से ऊपर उठा देती । धीरे-धीरे शिशु-संशय दूर हो गया और वह अपनी माँ के साथ अच्छी तरह तैरना सीख गया ।

'स्टिकल-बैक' नाम की एक मछली होती है, जो समुद्र में ही पाई जाती है । डॉ० लार्ड ने इस मछली की विभिन्न आदतों और क्रियाओं का बहुत सूक्ष्मता से अध्ययन किया । बैंकोवर के आइलैण्ड में महीनों रह-रहकर आपने इस मछली की जीवनपद्धति का अध्ययन किया और बताया कि मनुष्य चाहे तो इससे अपने पारिवारिक जीवन को सुखी और सुदृढ़ बनाने की महत्त्वपूर्ण शिक्षाएँ ले सकता है ।

नर स्टिकल बैक अपना घर बसाने के लिए बहुत पहले से तैयारी प्रारम्भ कर देता है । सबसे पहले सारे समुद्र में घूम-घूम कर यह कोई ऐसा स्थान ढूँढ़ निकालता है, जहाँ पर पानी न बहुत तेजी से बह रहा हो, न बहुत धीरे । जगह शांत एवं एकान्त हो और वहाँ हर किसी का पहुँचना भी सम्भव न हो ।

तत्परतापूर्वक ढूँढ़-खोज के बाद जब उपयुक्त स्थान मिल जाता है, तब स्टिकल बैक पत्नी के लिए सुन्दर घर बनाने की तैयारी करता है । इसके लिए उस बेचारे को कितना परिश्रम करना पड़ता है, यह बात अपने माता-पिता की पीठ पर चढ़े, विवाह की कामना करने वाले युवक भला क्या समझेंगे ? स्टिकल बैक पानी में तैरती हुई छोटे-छोटे पौधों की नरम लकड़ियाँ, तैरते हुए पौधों की जड़ें इकट्ठी करता है और उन्हें चुने हुए स्थान पर ले जाता है । विवाह के शौकीन स्टिकल को पहले खूब परिश्रम और मजदूरी करनी पड़ती है । अपने शरीर से वह एक प्रकार का लसलसा पदार्थ निकालता है और एकत्रित सारी वस्तओं को उसी में चिपका लेता है, ताकि उसका इतना परिश्रम व्यर्थ न चला जाएं । उसने जो लकड़ियाँ एकत्रित की हैं वह अपने स्थान तक पहुँच जाएँ ।

स्टिकल बैक पूरे आत्मविश्वास के साथ काम करता है । सारा एकत्रित सामान मजबूती से चिपक गया है, इसका विश्वास करने के लिए वह अपने शरीर को फड़फड़ाता हुआ नाचता है, जैसे उसे परिश्रम में आनन्द लेने की आदत हो । जब एक बार विश्वास हो गया कि सामान गिरेगा नहीं, तब आगे बढ़ता है और पूर्व निर्धारित स्थान पर इस सामान से मकान बनाता है । शरीर का लिसलिसा पदार्थ यहाँ सीमेन्ट का काम करता है और लाई हुई लकड़ियाँ ईंट-पत्थरों का,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आगन्तुक वधू के लिए महल बनाकर एक बार वह उसे घूम-घूमकर देखता है । लगता है अभी वैभव में कुछ कमी रह गई । फिर वह रेत के बारीक टुकड़े मुख में भरकर लाता है और मकान के फर्श पर बिछाता है । कोठरी में कहीं टूट-फूट की गुंजाइश हो तो उसे ठीक करता है । सारा मकान वार्निस किया हुआ-सा हो जाने के बाद ही उसे संतोष होता है । जब यह तैयारी पूर्ण हुई, तब वह स्वयं मादा की खोज में निकलता है । उसे दहेज और लेन-देन की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह जानता है, नारी-नर की अपनी आवश्यकता भी हैं, इसलिए प्रिय वस्तु को भरपूर स्वागत और सम्मान अपनी ओर से हो क्यों न दिया जाए । वह मनुष्य की तरह का दम्भ और पाखण्ड प्रदर्शित नहीं करता ।

उपयुक्त पत्नी मिल जाने पर वह उसे घर लाता है । पत्नी कुछ दिन में गर्भावस्था में आती है, तब यह उसे घूमने को भेजता रहता है, घर और अन्डों की देख-भाल तब वह स्वयं ही करता है । यह उनके भोजन आदि का ही प्रबन्ध नहीं करता, सुरक्षा के लिए दरवाजे पर कड़ा पहरा भी रखता है । मि० फैंक वकलैण्ड ने इसकी कर्मठता का वर्णन करते हुए लिखा है कि मकान में थोड़ी-सी भी गड़बड़ी हो तो यह उसे तुरंत ठीक करता है ।

स्टिकल बैक अपने बच्चों और पत्नी के पालन का उत्तरदायित्व पूरी सूझ-समझ के साथ निवाहता है । वह उन्हें पर्दे में नहीं रखता । पर्याप्त ऑक्सीजन मिलती रहे, इसके लिए वह अपने मकान में दो दरवाजे रखता है । इससे वहाँ के पानी में बहाव बना रहता है और ताजी ऑक्सीजन मिलती रहती है, यदि बहाव रुक जाए तो वह तुरन्त शरीर फड़-फड़ाकर बहाव पैदा कर देता है, जिससे रुके हुए पानी की गन्दगी प्रभावित न कर पाए ।

स्टिकल बैक का जीवन कितना कलात्मक और सुरुचि पूर्ण है । इधर बच्चे निकलने लगे, उधर उसने मकान के उपरी भाग छत को अलग करके एक बढ़िया झूला तैयार किया । मनुष्य की तरह गुम-सुम का जीवन उसे पसन्द नहीं । झूला बनाकर उसमें बच्चों को भी झुलाता है और पत्नी को भी । स्वयं उस क्षेत्र में परेड करता है, जिससे उसके आनन्द और खुशहाली की अभिव्यक्ति होती है पर दूसरे दुश्मन और बुरे तत्व डर कर भाग जाते हैं, जैसे कलाप्रिय और सुरुचिपूर्ण सद्गृहस्थ से अवगुण दूर रहने से अशान्ति पास नहीं आती । बच्चे झूला छोड़कर इधर-उधर भागते हैं तो यह उन्हें बार-बार झूले में डाल देता है, जब तक बच्चे स्वयं समर्थ न हो जाएँ, यह उन्हें आवारागर्दी और कुसंगति में नहीं बैठने देता । अपनी रक्षा करने में जब समर्थ हो जाते हैं, तभी उन्हें जाने और नया संसार बनाने की अनुमति देता है ।

दाम्पत्य-निष्ठा के अद्भुत उदाहरण

विकसित प्राणियों में से जो भी लम्बे समय तक अपने लिए जोड़ों का चुनाव करते हैं, उनमें यही कर्तव्यभावना-प्रेम की प्यास प्रमुख रहती है और वे एक दूसरे के प्रति निष्ठापूर्वक अपने कर्तव्य का पालन करते हैं ।

अपने साम्राज्य में अन्य सजातीय की उपस्थिति बर्दाश्त न करने वाला उल्लू दाम्पत्य-निष्ठा का एक अनोखा उदाहरण है । एक बार जोड़ा बना लेने के बाद वे गृहस्थ जीवन का निष्ठापूर्वक पालन करते हैं । मादा को ३० से ३५ दिन तक अन्डे सेने में लगते हैं, इस अवधि में नर अपनी मादा के लिए स्वयं भोजन जुटाता है और उसकी रक्षा करता है । उल्लू के बच्चे तब तक उड़ना और शिकार करना नहीं सीख पाते जब तक वे प्रौढ़ न हों, उन्हें यह माता-पिता ही आश्रय देते और परवरिश करते हैं ।

घनेश पक्षी को तो और भी अधिक कष्टपूर्ण साधना करनी पड़ती है । अन्डे सेने के लिए आवश्यक ताप तथा मादा की सुरक्षा के लिए वह जिस खोल में रहती है नर उसका मुँह बिल्कुल बन्द कर देता है । उतना ही खुला रखता है जिसमें चोंच भर बाहर निकल सके । बस इसी से नर अपनी मादा को खिलाता-पिलाता रहता है ।

पत्नी के बाद सेवा के सबसे बड़े अधिकारी अपने बच्चे होते हैं । जिन्हें जन्म दिया है उन्हें अच्छी तरह स्नेह-वात्सल्य देकर पोषण प्रदान करना भी एक प्रकार की समाज सेवा ही है । इस कर्तव्य की उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए । जबकि दूसरे जीव अपने दायित्व हँसी-खुशी निवाहते रहते हैं । तब मनुष्य ही इधर से मुँह मोड़े यह उचित नहीं ।

मनुष्य और पशु दोनों में मातृत्व भावना समान रूप से पाई जाती है । हिरण, गाय, नीलगाय आमतौर पर सीधे जानवर होते हैं । किन्तु इनके बच्चों को किसी प्रकार का खतरा हो तो उनकी रक्षा के लिए यह हिंसक हो उठते हैं । बिल्ली के लिए एक कहावत है— वह अपने बच्चों को सात घर घुमाती है । जीवशास्त्रियों ने अध्ययन के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि उसे अपनी सन्तान की असुरक्षा का भय सताता रहता है, इस लिए वह सुरक्षित स्थान की खोज करती रहती है । बच्चों को अपनी गोद में ही सुलाती है । कुतिया के बच्चे को कोई उठा ले जाए तो वह उदास होकर डोलती है । वह अपने बच्चे को किन्हीं सुरक्षित स्थान हाथों में देखती है तो उसे बहुत कृतज्ञ और कातर दृष्टि से देखती है मानो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसे अपनी निर्धनता और उन हाथों में बच्चे के उज्ज्वल भविष्य का ज्ञान हो ।

सारस अपने अन्डे इतने सुरक्षित, पानी से घिरे हुए किसी नन्हें टापू पर उन दिनों देती है, जब बाढ़ की कतई आशंका न हो वहाँ भी यदि कभी कोई लड़के या जंगली जानवर पहुँच जाते हैं तो उन्हें लहूलुहान करके छोड़ते हैं । सारस कभी भी अपने अंडों या बच्चों को अकेला नहीं छोड़ते । एक भोजन की तलाश में जाता है, तो दूसरा उनके पास रहता है ।

कौवे और सर्प जैसे क्रूर जीव भी अपने बच्चों के प्रति अत्यधिक भावनाशील होते हैं । कौवे के अंडों या बच्चों से कोई छेड़खानी करे तो समूचा काक समुदाय उन पर टूट पड़ता है । सर्प अपने बच्चों को अपनी कुंडली में रखता है, उस अवस्था में उसके भोजन का प्रबन्ध नर करता है । इस प्रकार वे अपनी सन्तति सहिष्णुता का परिचय देते हैं । छछून्दर गर्भधारण के बाद से ही भावी शिशु के लिए खाद्य संग्रह कर देती है, ताकि प्रसव के बाद जब तक बच्चे भली प्रकार चलने-फिरने न लगें तब तक वह उनकी पहरेदारी कर सके ।

इस सम्बन्ध में सबसे अधिक सुचारु व्यवस्था हाथियों में होती है, वे न केवल बच्चे की अपितु समूचा-कबीला गर्भिणी हथिनी को एक घेरे में रखकर उसकी सुरक्षा का प्रबन्ध करते हैं । यदि उस पर कोई आक्रमण करे तो हाथी इतने अधिक खूँख्वार हो उठते हैं कि सारे जंगल को उजाड़ कर रख देते हैं ।

हिन्द महासागर की कुछ मछलियाँ तो अपने अंडों को जो हजारों की संख्या में एक छत्ते के आकार में होते हैं तब तक अपने ही साथ तैराती-घुमाती हैं, जब तक बच्चे न निकल आयें और वे स्वयं चलने-फिरने न लगें । एरियस तथा तिलपिया मछलियाँ तो अंडों को अपने मुँह में सेती और उनके आत्मनिर्भर होने तक अपने ही साथ रखती हैं । तिलपिया को थोड़ी भी आशंका हो तो वह फिर अपने बच्चों को मुँह में छिपाकर उनकी रक्षा करती है । कुत्ते, बिल्ली जिस सावधानी से अपने बच्चों को मुँह में दबाकर उन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती हैं यह उससे भी अनूठा उदाहरण है । चूहों के दाँत बड़े तेज होते हैं । किन्तु अपने बच्चों को उठाते समय उन्हें कहीं भी कतई खरोंच नहीं आती, वे इस कोमलता से उन्हें उठाते हैं ।

मछलियाँ पानी में रहने वाली जीव हैं, पर गौराई जाति की मछलियाँ एक विशेष प्रकार की घास से अपना घोंसला बनाती और उसी में बच्चे पालती हैं, यही नहीं उन्हें चिड़ियों की तरह बड़े होने तक स्वयं ही खिलाती-पिलाती भी हैं । सील मछलियाँ अपने बच्चों की परवरिश के लिए अपने शरीर में खुराक की पहले ही प्रचुर मात्रा कर लेती हैं और उन्हें वे ५ सप्ताह तक उसी के बल पर किनारे पड़ी सेती रहती हैं, इस अवधि में वे पूर्ण उपवास करती हैं ।

मादा गैंडा अपने बच्चों को सदैव अपनी आँखों के सामने रखती है । वह कभी दायें-बायें होना चाहें तो वह धौल मारकर अनुशासन में रहने को विवश करती है । शू भी अपने बच्चों का पालन करते समय उन्हें अनुशासन सिखाती है । वह जब चलती है तो अपने एक बच्चे को अपनी पूँछ पकड़ाकर अनुगमन करने की प्रेरणा देती है, शेष बच्चे क्रमशः एक-दूसरे की पूँछ पकड़कर पंक्तिबद्ध रेल के डिब्बे की तरह चलते हैं ।

ओरंगउटान और गिबन बन्दर तथा चिम्पाजी पेट पर या पीठ पर लादे, बच्चों को बड़े होने तक घुमाते हैं । कई बार बच्चे मर जाते हैं तो भी ये मातृत्व पीड़ावश कई-कई दिनों तक उनकी लाश को ही छाती से चिपकाए घूमते रहते हैं । ओपोसम बोमनेट के कंगारू की तरह ही पेट में थैली होती है, ये बच्चों को उसी में रखकर पालते हैं, कहीं रुकने पर वे इन्हें बाहर निकालकर सिखाते-समझाते भी हैं, केवल लाड़वश पेट में लगाए रहें तो इसमें कर्तव्यपालन कहाँ हुआ ? वे उन्हें शिकार करना, खेलना-कूदना भी सिखाते रहते हैं ।

वेल्स द्वीप से एक बार नामक्रम आदि के निर्देश पट्ट पैरों में बाँधकर कुछ जलकपोतों को विमान से ले जाकर अन्य देशों में छोड़ दिया गया । इसमें एक कपौती भी थी जिसने हाल ही में दो बच्चों को प्रसव दिया था, उसे ले जाकर वेनिस में छोड़ा गया, जबकि अन्य जल कपोत ५-६ माह पीछे लौटे, कपोती ९३० मील की दूरी १५ दिन में ही तय कर वापस बच्चों के पास लौट आई । जिनके सन्तान नहीं थी वे अटलान्टिक और जिब्राल्टर होते हुए ३७०० मील की यात्रा आनन्दपूर्वक भ्रमण करते हुए लौटे, इससे यह पता चलता है कि कर्तव्यपालन की मूल प्रेरणा सम्वेदनाओं से प्रस्फुटित होती है । सच्चे और ईमानदार व्यक्ति की पहचान करनी हो, तो उसकी सम्वेदना टटोलनी होगी । सम्वेदना का अर्थ ही है अपने से छोटों के प्रति करुणा, दया और उदारता की भावनाएँ रखना, उनकी कष्ट-कठिनाइयों में सहायक होना ।

शेर जैसे खूँख्वार जीव में मातृ-सुलभ वात्सल्य प्रचुर मात्रा में पाया जाता है । सुरक्षा की दृष्टि से शेरनी को कई बार एक-स्थान से दूसरी घाटी तक मीलों लम्बा स्थान बदलना पड़ता है, तब शेरनी एक-एक बच्चे बच्चे को गर्दन में, बड़ी नरमी से पकड़कर दूसरे स्थान पर पहुँचाती है । यह कार्य वह प्रायः रात में करती है ।

अन्य जीवों में इस तरह की सम्वेदना मिले और मनुष्य उनसे शून्य रहे यह परमात्मा के अनुग्रह का अपमान है । हमें अपनी भावनाएँ परिवार और बच्चों तक ही सीमित न रखकर समस्त मानव-जाति तक फैलाने और सबके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कल्याण की बात सोचनी चाहिये, तभी मानव जीवन की सफलता और सार्थकता है ।

बेट्टा नामक मछली की कहानी गृहस्थ में पुरुषों के कर्तव्य का अच्छा बोध कराती है ।

मादा ने अंडे दिये और फिर बच्चे सेने और बड़े होने तक उनकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व नर महोदय पर आ पड़ा । मनुष्य ही संसार में ऐसा प्राणी है, जो बच्चे पैदा करने के बाद उनकी परवरिश का सारा भार स्त्री पर छोड़ देता है, जबकि संसार के अधिकांशत: सभी जीव केवल मात्र वासना के लिए सहचर नहीं बनते वरन् गृहस्थ का निर्वाह भी पूर्ण निष्ठा के साथ करते हैं । उधर मादा गर्भवती हुई कि नर का काम प्रारम्भ हुआ । वह अपने मुँह से हवा के बुलबुले छोड़ता घूमता है । इन बुलबुलों को इकट्ठा करके अपने शरीर से एक विशेष प्रकार का लिसलिसा पदार्थ निकालकर अपनी पीठ में चिपका लेता है । विदिशा के पास बौद्धों का एक तीर्थ है—'साँची' । एक छोटी-सी पहाड़ी पर अर्द्धचन्द्राकार अनेक स्तूप खड़े हैं । अधिक ऊँचाई से देखने पर स्तूप एक बस्ती से लगते हैं । इसी प्रकार की, स्तूपों वाली बस्ती-सी नर बेट्टा की पीठ पर तैयार हो जाती है । सूखने पर यह कुछ कड़ी हो जाती है और उसमें परिवर्तन का प्रभाव प्रवेश नहीं कर पाता ।

मादा पानी की सतह पर अंडे देना प्रारम्भ करती है, तो नर महाशय उस स्थान पर गहरे पानी में चले जाते हैं और वहीं से अंडों की प्रतीक्षा करने लगते हैं । पति-पत्नी के सहयोग का यहाँ अद्वितीय उदाहरण देखने को मिलता है ।

अंडे पानी से अधिक भारी होने के कारण डूब जाते हैं और सतह की ओर भागे चले जाते हैं । वहाँ नर बेट्टा पहले से ही प्रतीक्षा में खड़ा मिलता है । वह अंडों का स्वागत करता है और उन्हें पीठ वाली कालोनी में मुँह में पकड़-पकड़कर डाल देता है । अंडे उन बुलबुलों की कोठरी में विकसित होने लगते हैं । इस अतिरिक्त उत्तरदायित्व को सँभालना-मादा जानती है । यह एक कठिन कार्य है इसलिए वह पति की कृतज्ञता को भूलती नहीं । इधर-उधर उसे कुछ खाने को मिलता है, वह लेकर पहुँचाती और नर को खिलाती है । हमेशा ध्यान रखती है कि पति किसी प्रकार भूखा न रहे, उसे ताजा भोजन मिलता रहे ।

बच्चे निकल आते हैं । छोटे-छोटे बच्चों मे क्रियाशीलता होती ही अधिक है । यह बच्चे फिर चुप कहाँ बैठें ? बार-बार कोठरियों से निकल भागते हैं । तब नर सावधानी से उन्हें बार-बार भीतर कर लेता है और इस तरह जब तक बच्चे बड़े नहीं हो जाते, नर उस भार को अपनी पीठ में बाँधे रखता है ।

उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका की नदियों में कुछ मछलियाँ को अन्डे देकर सुरक्षा के लिए उन्हें अपने मुँह में रखना पड़ता है । ऐसा न करें तो उन्हें दूसरे जीव-जन्तु मारकर खा जाते हैं । मुँह में रखकर बच्चों को पालना ऐसा ही कठिन कार्य है जैसे कठिनाइयों से भरा मनुष्य का जीवन । पेट भरने से लेकर पैसा कमाने, घर बनाने, घर बसाने, बच्चों की परवरिश, उनकी ब्याह-शादियाँ, शिक्षा-दीक्षा, सचमुच जीवन कर्तव्यों का पुलिन्दा है— उन झंझटों को पार करना कठिन हो जाता, यदि पुरुष को नारी का सहयोग न मिलता । पति-पत्नी परस्पर प्रेम और सहयोग से इस रूखे संसार में सरसता और आनन्द पैदा कर लेते हैं ।

मादा उन अन्डों को अकेले मुँह में रखती तो भूखी-प्यासी मर जाती । अकेला नर भी यह काम नहीं कर सकता था । औरों की जिम्मेदारी पर छोड़ने का अर्थ होता अपने कर्तव्य से विमुख होना और अपनी सन्तति को संकट में डाल देना । इस महापाप से बचने के लिए नर और मादा जिस सहयोग भावना का परिचय देते हैं वह मनुष्य के लिए सीखने का एक बहुत बड़ा उदाहरण है ।

मादा जब थकने लगती है, नर उसके मुँह से अपना मुँह जोड़ देता है और वह अन्डे अपने मुँह में ले लेता है । अब मादा इधर उधर टहलती और भोजन ग्रहण करती तथा विश्राम लेती है । इससे उसके शरीर में फिर से ताजगी आ जाती है । तब तक पति महोदय थक गये होते हैं तो वह अन्डों को फिर अपने मुँह में ले लेती है । इस तरह दोनों हँसते-खेलते अपना जीवन पार कर लेते हैं ।

मछलियों का जीवन दाम्पत्य-प्रेम, सहयोग और कर्तव्य भावना का आदर्श उदाहरण है । 'बटरफिश' नामक एक मछली जिसकी लम्बाई कुल १० इंच ही होती है, अन्डे देती है और उन्हें एक गेंद के आकार में इकट्ठा कर लेती है । इनकी सुरक्षा के लिए नर और मादा दोनों ओर से गेंद के किनारे घेरा डाल देते हैं । जहाँ जाते हैं दोनों साथ-साथ ऐसे ही अन्डों को सुरक्षा में लिए हुए जाते और भोजन प्राप्त करते हैं । पति अपने सहयोग से एक क्षण को भी पत्नी को वंचित नहीं करता ।

भारतीय प्रशान्त महासागर में 'करटस' नाम की एक मछली पाई जाती है, जिसमें नर को अपने कर्तव्य पालन की कठोर परीक्षा देनी पड़ती है और नर उस कर्तव्य को परिश्रम और भावना के साथ पूरा करता है ।

मादा अन्डे देकर उन्हें दो बराबर हिस्सों में बाँटकर दो गेंदों की आकृति में कर देती है । दोनों गोलों का आपस में सम्बन्ध बनाए रखने के लिए वह एक डोरा (चैन) बाँध देती है । इरादा यह होता है कि वह उस डोरे को पकड़कर खींचती हुई वह अन्डों को इधर से उधर टहलाया करेगी- पर नारी जाति प्रकृति से ही कोमल और कमजोर होती है । उसके शरीर में भारी-भरकम और अधिक परिश्रम वाले काम करने की क्षमता नहीं होती, इसलिए मनुष्यों की आचार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संहिता तैयार करने वाले मनीषियों ने पुरुष को श्रम वाले कठोर काम दिये और नारी को घर के हल्के-फुल्के काम । दोनों को सामंजस्य कर देने से गृहस्थ आनन्दपूर्वक चलता रहता है । लगता है यह प्रेरणा हमें प्रकृति के नाबूझ जीवों से ही मिली है । पुरुष ने जैसे ही देखा कि मादा करटस उस भार को ढोने में समर्थ नहीं तो वह आगे बढ़कर आता है और अपने सिर पर लगे हुए हुक के आकार की एक खूँटी से उस डोरे को बाँध लेता है फिर उन्हें यहाँ से वहाँ घुमाता रहता है । इस स्थिति में मादा करटस अपने पति के भोजन का भी प्रबन्ध करते देखी गई है ।

मछलियों में कुछ जातियाँ तो ऐसी भी होती हैं जिनके नरों को प्रकृति जन्म से ही एक थैली (ब्रूड पाउच) प्रदान करती है । इन जातियों में नर को अनिवार्यत: अंडों को इन थैलियों में रखकर पालना पड़ता है । लगता है जो मनुष्य इस जीवन में गृहस्थ के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का समुचित पालन नहीं करते, नारी पर ही बोझ डालते रहते हैं पर स्वयं आलस्य और प्रमाद का जीवन जीते हैं, प्रकृति इन नरों की श्रेणी में जन्म लेने का दण्ड देती है, ताकि वे यह यह सीखें कि गृहस्थ स्वार्थ की दृष्टि से नहीं, कठोर कर्तव्य-भावना से बसाए और चलाए जाते हैं । वही लोग इस पृथ्वी पर दाम्पत्य जीवन का आनन्द भी पाते हैं, जो पति-पत्नी एक दूसरे के प्रति अपने कर्त्तव्यों का उदारतापूर्वक परिपालन करते हैं ।

मध्य एशिया में पाई जाने वाली मादा 'क्वेल' चिड़िया अपने बच्चों को बड़ा अनुशासित रखती हैं । जब तक वे बड़े नहीं हो जाते इकट्ठे मिलकर चलते, उठते, बैठते और खाते-पीते हैं । फिर भी कई बार शिकारी पक्षी आक्रमण कर देते हैं, उनसे जान बचाना मुश्किल पड़ता है ।

क्वेल तब बड़ी बुद्धिमत्ता से काम लेती है । उसने जैसे ही देखा कि कोई शिकारी पक्षी झपटा, वह उसी दिशा में आगे बढ़कर जाएगी और शिकारी पक्षी के सामने उड़कर ऐसे गिर पड़ेगी मानो अब उसमें उड़ने की सामर्थ्य नहीं रही । शिकारी पक्षी इतनी आसानी का शिकार पाकर व्यर्थ परिश्रम करने का इरादा छोड़ देता है और जहाँ क्वेल पड़ी होती है उधर ही चल पड़ता है । इस बीच बच्चों को सुविधाजनक स्थान में छुप जाने का अवसर मिल जाता है । शिकारी अपने आहार के लिए आश्वस्त होता है, इसलिए उसे तो कोई सावधानी रहती नहीं पर क्वेल चोरी-आँख से चुपचाप शिकारी का वहाँ पहुँचना देखती रहती है । जैसे ही वह वहाँ पहुँचा कि वह अपने पंख तेजी से फड़फड़ाकर स्वयं भी उड़ भागती है । पंख फड़काने से पहले तो शिकारी घबड़ा उठता है और दुबारा जब तक वह सँभलता है, क्वेल तीर की तरह छूटकर न जाने कहाँ की कहाँ जा पहुँचती है । शिकारी मूर्ख को निराशा ही हाथ लगती है । द्विविधा में न तो माया ही मिल पाती है और न ही राम । अपना-सा मुँह लेकर उदास भाग जाता है ।

क्वेल अपने बच्चों के पास लौट आती है । पर क्वेल जानती है कि कदाचित बच्चों के जीवनकाल में ऐसी कोई स्थिति न आने पाए, वे अशिक्षित रह जाएँ और फिर कभी उनके बच्चों पर आक्रमण हो तो वे अपने बच्चों की सुरक्षा कैसे करें, इसके लिए क्वेल को वैसे ही परिश्रम करना पड़ता है जैसे पहलवान बाहरी दंगलों में जाकर कुश्ती-प्रदर्शन करने से पूर्व गाँव के अखाड़ों में खूब अभ्यास करते हैं । सेना में भी ऐसा ही होता है । दो बटालियनें या और बहुत-सी फौजें मिलकर अभ्यास करती हैं । दो दलों में विभक्त होकर वे इस तरह से अभ्यास करती हैं मानो दो दुश्मन फौजें लड़ रही हों । इस प्रकार के अभ्यास में केवल गोलियाँ नहीं चलती और सब वैसा ही होता है जैसे युद्ध में दलों के नाम अलग-अलग रखे जाते हैं, सीमाएँ बँटती हैं, घेरेबन्दी होती है, संचार, वाहन, गिरफ्तारियाँ, सामग्री-वितरण, भेदियों से पूछताछ आदि के सब ड्रामे बिलकुल असली युद्ध की तरह होते हैं । इससे सैनिकों को असली युद्ध की झाँकी मिल जाती है और जब कभी युद्ध होता है, बिना किसी घबराहट के सब काम कर लेते हैं । क्वेल नर और मादा भी इस तरह का अभ्यास करके अपने बच्चों के दिखाते हैं, जिससे वे सब बातें समझ जाते हैं और यदि उसके सामने कभी वैसी परिस्थिति आती है तो वे उसे हँसी-खुशी से पार कर लेते हैं ।

नीरस जीवन में सरसता

मिल-जुलकर रहने, दूसरे की सहायता करने एवं स्नेह-सद्भाव की सुकोमल डोरी से बँधे रहने पर नीरस जीवन में कितनी सरसता आती है और कठिनाइयों तथा जटिलताओं से भरा जीवन-क्रम कितना सरल हो जाता है, उसे उन्मादी मनुष्य तो उतना नहीं समझ पाया जितना कि कतिपय पशु शरीरधारी जीवों ने समझा ही नहीं अपनाया भी है ।

हथिनी जब प्रसव करती है तो झुण्ड की हथिनियों का कार्य इस अवसर पर देखते ही बनता है, जबकि दूसरे पशुओं में अकेली मादा ही अपने प्रसव-संकट से निपटती है, तब हथिनी की सहायता के लिए समूह की सभी सहेलियाँ हाथ बँटाती हैं । नवजात शिशु पर चढ़ी हुई झिल्ली को उतारने, उस पर लिपी श्लेष्मा को साफ करने, सहलाने, सूँडों का सहारा देकर खड़ा करने के प्रयास में सभी सहेलियाँ लगी होती हैं ।प्रसूता आश्वस्त होकर मुदित मन धातृकर्म इस कुशलता से निपटाए जाने पर सन्तोष प्रकट करती है । बच्चा जब तक अपने पैरों खड़ा नहीं हो जाता तब तक समवेत समूह विसर्जित नहीं होता । जननी और शिशु जैसे-जैसे आत्मनिर्भर होते जाते हैं, उसी क्रम से यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहयोग भी झीना पड़ता जाता है और वे लोग उस उत्तरदायित्व से मुक्ति पाते हैं ।

प्रायः तीन महीने में हथिनी प्रसूतिजन्य दुर्बलता से मुक्ति पाती है और स्वयं चरने के लिए जाने के योग्य होती है, तब तक अन्य हाथी उसकी भोजन व्यवस्था तथा सुरक्षा का पूरा-पूरा ध्यान रखते हैं, जिससे प्रसूता को किसी प्रकार की असुविधा न होने पाए ।

मनुष्य से बहुत कुछ मिलता-जुलता गोरिल्ला वानर प्रायः ५, ६ फुट का होता है । मनुष्य की तरह वह दो पैरों से भी चलता है । मादा अपने बच्चों को बहुत प्यार करती है और संकट की आशंका दिखाई देने पर अपने बच्चों को छाती से चिपकाकर सुरक्षित स्थान की तरफ भागती है । गोरिल्ले प्रायः जोड़े बनाकर रहते हैं । बच्चों की सुरक्षा में वह भी मादा की पूरी सहायता करता है । किसी हिंसक सिंह, व्याघ्र का आक्रमण होने की आशंका का समय आने पर जहाँ मादा गोरिल्ला बचने और भागने का प्रयत्न करती है और चीख-पुकार करके अपने जाति बन्धुओं को सहायता के लिए बुलाती है वहाँ नर क्रोधोन्मत होकर बेतरह दहाड़ता है और शत्रु की चुनौती देता है कि वह समझ-बूझकर ही आक्रमण की हिम्मत करे । समुचित उत्तर देने की तैयारी कर ली गई है ।

डॉ० जेनवान लाविक गूडोल नामक एक महिला ने पशुखोजी तंजानिया (अफ्रीका) के गोवे स्ट्रीम अनुसन्धान केन्द्र के माध्यम से मनुष्य के सजातीय समझे जाने वाले चिम्पैजी, गोरिल्ला, वनमानुष प्रभृति वानरों के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारियाँ प्राप्त की हैं । यह तीस वर्ग मील का उद्यान इन्हीं वानरों के सुखपूर्वक रहने के लिए किगोमा की घाटियों में बनाया गया है । वे कहते हैं—चिम्पैजी नर, शत्रुओं से निपटने का अधिकांश काम धमकियों से चला लेते हैं । उनकी पारस्परिक लड़ाई में कदाचित ही किसी को खरोंच आती है और जहाँ-तहाँ बाल नुचते हैं लड़ाई का सिलसिला प्रायः चीखने, चिल्लाने, दाँत निकालने, पेड़ों की डालियाँ हिलाने, भयंकर आकृति बनाकर उछलने-कूदने और लकड़ी पत्थर- फेंकने तक ही सीमित रहता है । वे ऐसी मुद्रा बनाकर आगे बढ़ते हैं मानो अब वे भयंकर आक्रमण करके ही रहेंगे किन्तु ऐसा होता नहीं । वे जानते हैं कि जो काम धमकी देने से चल सकता है उसके लिए खून-खराबी क्यों की जाय ?

डॉ० गूडोल का कथन है कि चिम्पैजी ने कभी किसी की जान ली हो, ऐसी जानकारी उन्हें कहीं से भी कभी प्राप्त नहीं हुई है । धमकी की कला का एक अच्छा उदाहरण एक सरदार चिम्पैजी का उन्होंने दिया है । उस क्षेत्र पर उसका पूरा साम्राज्य था और सभी चिम्पैजी उससे डरकर भागते थे । बात यह थी कि उसे जंगल में कहीं मिट्टी के तेल का एक टूटा कनस्तर पड़ा मिल गया । लकड़ी के टुकड़े के सहारे उसे लुढ़कने, उछालने और पीटने, बजाने की कला उसने सीख ली । इस युद्ध नगाड़े को वह ऐसी चतुरता से बजाता मानो कोई रेलगाड़ी उधर से निकल रही हो । बस, सारे चिम्पैजी उसे सुनकर भाग खड़े होते और फिर वह उस क्षेत्र का मनचाहा उपयोग करके मौज मनाया करता । इस तरह उसने सहज ही उस क्षेत्र की सरदारी अपनी मुट्ठी में कर ली ।

कभी लोमड़ी आदि को घात लगाए देखती है तो तालाब की सारी बतखें एक साथ चिल्लाने लगती हैं और उस प्रकार चीख-पुकार करके अपने समूह को सावधान करती हैं और आक्रमणकारी का मनोरथ विफल कर देती हैं ।

थलचरों में भेड़िया और जलचरों में मगरमच्छ अक्सर मिल-जुलकर शिकार की योजना बनाते हैं और सम्मिलित प्रयत्न से अधिक सरलतापूर्वक शिकार प्राप्त कर लेते हैं । जो मिलता है, उसे वे बिना लड़े-झगड़े मिल- बाँटकर खाते हैं ।

न्यू गायना के बर्फीले भाग में रहने वाली काली चिड़ियाँ जब प्यासी होती हैं तो झुण्ड बनाकर एक जगह बैठ जाती हैं । पेट की गर्मी से जो बर्फ पिघलती है, उसे पीकर वे अक्सर अपनी प्यास बुझाती हैं । एक चिड़िया बर्फ पिघलने का काम नहीं कर सकती, इसलिए उन्हें संगठित प्रयोग ही उपयुक्त जँचा है ।

सिंह विशेषज्ञ जार्ज शैलर का कथन है कि सिंहनी अपने बच्चों को शिकार करने और चीर-फाड़ करने की कला विधिवत् सिखाती है, बच्चे को यह सब कुछ जन्मजात रूप में ही नहीं आ जाता । छोटे शिकार तो प्रायः अकेला ही सिंह कर लेता है, पर बड़े जानवर को पछाड़ने के लिए कई सिंह मिलकर आक्रमण करते हैं ।

यह सोचना सही नहीं कि पशुओं में मादाएँ दुर्बल होती हैं । सच तो यह है कि वे नर की तुलना में अधिक बलवान भी होती हैं और साहसी भी । शिकार करने में सिंह का उतना पुरुषार्थ नहीं होता जितना सिंहनी का । यह स्पष्ट है कि मादा पशुओं में अपने बच्चों के प्रति असाधारण स्नेह होता है । बुद्धि की दृष्टि से मनुष्य से पिछड़ी रहने पर भी पशु माताएँ मानवी माता से किसी प्रकार ओछी सिद्ध नहीं होतीं ।

अफ्रीकी हाथियों के विशेषज्ञ डॉ० ईमेर हैमिल्टन ने पता लगाया है कि हाथियों के झुण्ड का नेतृत्व नर हाथी नहीं वरन् मादा हथिनी करती है । बहादुरी में वह नर से कम नहीं वरन् अधिक ही होती है । शिशुओं पर हमला करने वाले सिंह को कई बार क्रुद्ध हथिनियों ने मिल-जुलकर, पकड़कर पैरों तले रौंद डाला है । पेनसिलवानिया के जंगलों में पाए जाने वाले लोवो जाति के भेड़िए शिकारी होते हुए भी स्वभावतः स्नेही प्रकृति के होते हैं । उनमें से किसी की मृत्यु हो जाय तो लाश को घेरकर देर तक वे उदास बैठे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहते हैं और शोकाकुल स्वर में बारी-बारी रुदन करते हैं । केन निवासी डॉ० मैकक्लियरी की मृत्यु उनके स्थान से सात मील दूर अस्पताल में हुई । उसने कई लीवो भेड़िए पाल रखे थे । न जाने मालिक की सात मील दूर अस्पताल में हुई मृत्यु का पता कैसे लग गया कि वे खाना-पीना-सोना छोड़कर बेतरह चीत्कार करने लगे । इतना ही नहीं इनका रुदन सुनकर समीपवर्ती जंगलों में रहने वाले भेड़ियों ने भी रोना आरम्भ कर दिया और वह क्रम निरन्तर कई दिन तक चलता रहा ।

लोवो नर-मादा पतिव्रत धर्म और पत्नीव्रत धर्म का पालन करते हैं । एक के मर जाने पर दूसरा प्रायः एकाकी जीवन व्यतीत करता है । उनकी ऐसी कितनी ही विशेषताओं पर मुग्ध डॉ० क्लियरी ने इन भेड़ियों की मनोरंजक जीवन गाथा परिचय देने वाली 'दी लीजेण्ड लोवो' नामक एक फिल्म बनाई है ।

मादा लकड़बग्घा नर से अधिक मजबूत होती है और बहादुर भी । शिकार पर पहला अधिकार मादा का होता है । बचने पर ही नर के हाथ कुछ लगता है । आराम की जगह नर लेटा हो और उधर से मादा निकले तो नर को अपनी जगह खाली करके मादा को देनी पड़ती है । ऐसा वह स्नेह से आदर या भय से करता है, इस बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता । लकड़बग्घे प्रायः एक दर्जन तरह की आवाजें बोल सकते हैं ।

बच्चा मर जाने पर हथिनी उसे सूँड़ में लपेटे कई दिन तक इधर-उधर घूमती रहती है और प्रयत्न करती है कि किसी तरह बच्चा चलने-फिरने लग जाय । जब सफलता नहीं मिलती तो पैरों से मिट्टी खोदकर उसे गड्ढे में अपने प्यारे शिशु को दफनाती है, ताकि कोई हिंसक पशु उसकी दुर्दशा न कर पाए ।

मिक मादा एक साथ कई बच्चे जनती है, पर अक्सर उसके थनों में दूध कम पड़ जाता है । तब बच्चे उसका माँस नोंच-नोंचकर खाने लगते हैं । बच्चों के स्नेह में सराबोर उनकी क्षुधा निवृत्ति के लिए चुपचाप पड़ी अपना माँस बिना उफ किये, बिना हिले-जुले नुचवाती रहती है और इस प्रकार वात्सल्य की वेदी पर अपने को बलिदान करती हुई, मृत्यु के मुख में चली जाती है ।

मादा दरियाई घोड़ा जल में रहती है और थल पर भी घूमती है । बच्चों को जल, थल दोनों का अभ्यास कराने के लिए वह प्रायः अपने बच्चों को पीठ पर खड़ा करके सावधानी से जलाशयों में विचरण करती है । बच्चों को छेड़ने वालों के प्रति वह आक्रमणकारी हो जाती है और डटकर टक्कर लेती है ।

शिकारी कुत्तों द्वारा पीछा किए जाने पर मादा कंगारू आत्मरक्षा के लिए बेहिसाब दौड़ती है पर जब देखती है कि संकट निकट आ गया तो वह बच्चों को पेट की थैली में से निकालकर एक-एक करके झाड़ियों में फेंकती, छिपाती जाती है और हलकी होकर पेड़ की आड़ में खड़ी होकर डटकर शत्रु का मुकाबला करती है । क्रुद्ध कंगारू शाकाहारी होते हुए भी अपनी बलिष्ठता के कारण शिकारी कुत्तों के पेट फाड़ डालने और उन्हें पंजों से दबाकर तालाब में डुबो देने तक में सफल हो जाता है ।

कंगारू मादा गर्भाधान के पाँच सप्ताह बाद ही एक-एक इन्च लम्बे, लाल रंग के, प्रायः पारदर्शी बच्चों को जन्म देती है । इसे बच्चा भी कहा जा सकता है और भ्रूण भी । आस्ट्रेलिया निवासी इसे 'जोयी' कहते हैं । जोयी माता के पेट में बाहर लगी हुई एक विशेष थैली में जा घुसते हैं और जब तक चलने लायक नहीं हो जाते उसी में बैठे पलते रहते हैं । माता माँसपेशियों को एक विशेष तरह के पेय की तरह बनाकर अपना दूध इन बच्चों के मुँह में पहुँचाती रहती है । चार महीने तक इस प्रकार स्तनपान करने पर बच्चे थैली से बाहर निकलते हैं और घास में मुँह मारकर फिर उसी में जा घुसते हैं । वे जब थोड़े बड़े हो जाते हैं तो फिर न तो थैली में घुसने लायक जगह रहती है और न आवश्यकता । भालू से मिलती-जुलती शक्ल की 'काओला' अपने बच्चों को पीठ पर लादे फिरती है और तब तक चढ़ाए रहती है जब तक वे लगभग उसके बदन से आधे जितने नहीं हो जाते । अमेरिका में पाया जाने वाला 'ओपोसम' अजीब किस्म का है । बच्चे माँ की पीठ पर और तनी हुई पूँछ पर लद जाते हैं । बच्चे अपनी पूँछ और दाँतों के सहारे पकड़े हुए सवारी किए रहते हैं । मादा उन्हें चावपूर्वक पालती है ।

ह्वेल मछली अपने बच्चों को साथ लिए फिरती है और संकट आने पर पहले बच्चों को सुरक्षित स्थान पर छोड़ती है, पीछे उलटकर आक्रमणकारी का मुकाबला करती है । ऐसे अवसर पर नर ह्वेल भी पूरी तरह मादा का साथ देता है । संकट के समय भाग खड़ा होने की अपेक्षा उसे अपनी प्रियतमा के साथ मरना पसन्द होता है । इसलिए ह्वेल के शिकारी एक को मार लेने में सफल हो जाने पर अपने हथकण्डों से साथी को भी प्रायः मार ही लेते हैं । आमतौर से शिकारी पहले ह्वेल के बच्चों को मारते हैं ताकि क्रुद्ध मादा लड़ने के लिए आगे आए और उनके अस्त्र-शस्त्र से मारी जाय । मादा ह्वेल अपने बच्चों को असाधारण प्यार करती है और उनकी सुरक्षा के लिए जान की बाजी लगाए रहती है ।

अलास्का की ह्वेलें गहरे समुद्र में चली जाती हैं और कुछ खा-पीकर थनों में दूध संग्रह करती रहती हैं, जैसे ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्तनों में भारीपन आया कि वे वापस आ अपने बच्चों को इस विशाल जलाशय में से ढूँढ़ लेती हैं । प्यार का दूध पिलाकर फिर नए संग्रह के लिए चली जाती हैं । जब तक बच्चे समर्थ नहीं होते, तब तक उनका यही क्रम चलता रहता है ।

मनुष्य का सुविकसित मस्तिष्क यदि भावनाओं की दृष्टि से भी अग्रगामी रहता होता—स्नेह और सद्भाव की दृष्टि से भी उसके बौद्धिक अनुपात के क्रम को कायम रखा होता तो कितना अच्छा होता । नारी का सौजन्य और वात्सल्य पशु-पक्षियों और जलचरों में भी यथावत् होता चला गया है। लोकनेतृत्व के लिए नारी तत्व को इसीलिए भविष्य में प्रमुखता मिलने जा रही है, ताकि उसका कोमल हृदय संसार में शान्ति और सद्भावना का वातावरण विनिर्मित कर सके ।

भावनाओं की सम्पदा अन्य प्राणियों के पास भी

भावनाओं पर मनुष्य का ही एक आधिपत्य नहीं है । बुद्धि, साधन, सुविधा, सम्पत्ति और अधिकार की दृष्टि से प्रकृति ने मनुष्य के साथ भले ही कोई विशेष छूट दी हो पर उसने भावनाओं की सम्पत्ति प्राणिमात्र को मुक्तहस्त से बाँटी है ताकि वे एक-दूसरे के सहयोगी, परस्पर, सद्भाव सम्पन्न और प्रकृति के सन्तुलन को स्थिर बनाये रह सकें ।

ज्ञान के अंकुर भी अन्य जीवधारियों में एक सीमा तक ही देखने को मिलते हैं, परन्तु भावनाओं की सम्पदा सभी जीवधारियों में प्रचुर रूप से विद्यमान है । यह बात है कि वे इन भावनाओं की अभिव्यक्ति किसी और ढंग से करते हैं लेकिन भाव सम्पदा की दृष्टि से वे दरिद्र नहीं हैं । उनकी भावाभिव्यक्ति को जहाँ तक समझा जा सका है, वे उसी स्तर और शैली की हैं जैसी मनुष्य समझता और व्यक्त करता है । उस दृष्टि से भी यही सिद्ध होती है कि भावुकता पर मनुष्य का ही एकमात्र अधिकार नहीं है, वह अन्य जीवों में भी पाई जाती है और अवसर मिलने पर वह विकसित भी होती है ।

टारजन—प्रख्यात वन मानव की कथा प्रसिद्ध है, वह मात्र गप्प नहीं है, उसमें यथार्थता का बहुत बड़ा भाग विद्यमान है । एक ११ वर्ष का अँग्रेज बालक एक जहाज से बिछुड़कर अफ्रीका के जंगलों में जा फँसा, वहाँ उसे वानरों ने पाल लिया । अन्य पशुओं का भी उसे भावनात्मक सहयोग मिला और लगातार पन्द्रह वर्ष तक उनके बीच रहकर वह वन परिवार के प्राणियों का परिचित ही नहीं स्नेह-भाजन भी बन गया ।

वन प्रदेशों में तप-साधना करने वाले तपस्वियों के पास सिंह-व्याघ्र निर्भय ही आते-जाते रहते हैं । उन्हें कष्ट देना तो दूर उलटे सहायता करते हैं । सिंह-गाय का तपोवनों में जाकर एक घाट पानी पीना, इस बात का प्रमाण है कि उन्हें भाव-शून्य न समझा जाय, अवसर मिलने पर उनकी भावुकता मनुष्य से भी आगे बढ़ सकती है ।

बंगाल के मालदा इलाके में राबर्ट वैसी नामक शिकारी ने अपने शिकार वर्णन में एक ऐसे अन्धे चीते का जिक्र किया है, जिसकी मित्रता एक बन्दर से थी और वह बन्दर ही अपनी आहट तथा आवाज के सहारे चीते को साथ ले जाकर शिकार कराता था । उक्त शिकारी ने जब उस चीते को मारा तो बन्दर लड़ने आया और जब उसे भी गोली लगी तो मरे हुए चीते की लाश तक दौड़ता हुआ पहुँचा और उसी से लिपटकर प्राण त्यागे ।

सिनडिगो (अमेरिका) के चिड़ियाघर निर्देशक एम० बेले वेन्शली ने अपने एक प्रयोग की चर्चा करते हुए लिखा है—चिड़ियाघर में एक भालू ने नवजात शिशु को सुअर के नये जन्मे बच्चे के साथ रखा गया । दोनों में भारी मित्रता हो गई । दोनों साथ-साथ घूमने घर से निकलते और शाम को साथ-साथ वापिस आते । भालू के बच्चे का नाम रखा गया—गागिला । सुअर के बच्चे का कोशे । कोशे बड़ा हो गया तो कुछ उच्छृंखलता बरतने लगा और मनमौजी की तरह जाकर कहीं पड़ा रहा । शाम को चिड़ियाघर के अधिकारियों ने कोशे को गैर-हाजिर पाया । तलाश किया तो मिला नहीं । ढूँढ़ने की एक युक्ति निकाली गई । रीछ के बच्चे गागिल को कटघरे से बाहर ले जाकर अन्धेरे में छोड़ दिया गया । वह अन्धेरे से डरकर चिल्लाने लगा । आवाज सुनते ही कोशे से न रहा गया और जहाँ छिपा था वहाँ से निकलकर सीधा गागिल के पास आया और उसे पकड़ लिया गया ।

आरा (बिहार) जिले के एके गाँव में एक कुतिया ने बन्दर के मातृ-विहीन बच्चे को अपना दूध पिलाकर पाला था । बच्चा अपनी सुरक्षा के लिये कुतिया की पीठ पर बैठा फिरता था । कुतिया अपने अन्य बच्चों के साथ उसे लेकर एक जगह सोती थी ।

सीधी (मध्यप्रदेश) में एक राजपूत का कुत्ता अपने मालिक को अतिशय प्यार करता था । मालिक की मृत्यु हो गई । लाश को जलाया गया । कुत्ता देखता रहा । सब लोग घर चले गये पर वह नहीं गया । चिता के पास ही बैठा रहा । लोगों ने उसे हटाने की बहुत कोशिश की पर हटा नहीं । खाने को दिया पर खाया नहीं । आँसू बहाता और कराहता रहा । इसी स्थिति में तेरहवें दिन उसकी मृत्यु हो गई । उसे भी मालिक के पास ही चिता पर जलाया गया ।

अल्बर्ट श्वाइत्जर जहाँ रहते थे, उनके समीप ही बन्दरों का एक दल रहता था । दल के एक बन्दर और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बन्दरिया में गहरी मित्रता हो गई । दोनों जहाँ जाते साथ-साथ जाते, एक कुछ खाने को पाता तो यही प्रयत्न करता कि उसका अधिकांश उसका साथी खाये । कोई भी वस्तु उनमें से एक ने कभी भी अकेले न खाई । उनकी इस प्रेम-भावना ने अल्बर्ट श्वाइत्जर को बहुत प्रभावित किया । वे प्रायः प्रतिदिन इन मित्रों की प्रणय-लीला देखने जाते और एकान्त स्थान में बैठकर घण्टों उनके दृश्य देखा करते । कैसे भी संकट में उनमें से एक ने भी स्वार्थ का परिचय न दिया । अपने मित्र के लिये वे प्राणोत्सर्ग तक के लिये तैयार रहते, ऐसी थी उनकी अविचल प्रेम-निष्ठा ।

विधि की बिडम्बना—बन्दरिया कुछ दिन पीछे बीमार पड़ी, बन्दर ने उसकी दिन-दिन भर भूखे-प्यासे रहकर सेवा-सुश्रूषा की, पर बन्दरिया बच न सकी, मर गई । बन्दर के जीवन में मानो वज्रघात हो गया । वह गुमसुम जीवन बिताने लगा ।

बन्दर एक स्थान पर बैठा रहता । अपने कबीले या दूसरे कबीले का कोई अनाथ बन्दर मिल जाता तो वह उसे प्यार करता, खाना खिलाता, भटक गए बच्चे को ठीक उसकी माँ तक पहुँचाकर आता, लड़ने वाले बन्दरों को अलग-अलग कर देता, इसमें तो कई बार, अति उग्र पक्ष को मार भी देता था पर तब तक चैन न लेता जब तक उनमें मेल-जोल नहीं करा देता । उसने कितने ही वृद्ध, अपाहिज बन्दरों को पाला, कितनों ही का बोझ उठाया । बन्दर की इस निष्ठा ने ही अल्बर्ट श्वाइत्जर को एकान्तवादी जीवन से हटाकर सेवाभावी जीवन बिताने के लिए अफ्रीका जाने की प्रेरणा दी । श्वाइत्जर बन्दर की इस आत्मनिष्ठा को जीवन भर नहीं भूले ।

फैजाबाद डिवीजन के सुलतानपुर जिला स्थित अस्पताल में एक बालक इलाज के लिए भरती किया गया । इस बालक का ९ वर्ष पूर्व सियारों द्वारा अपहरण कर लिया गया था । नन्हें जीव के प्रति उनकी सहज, करुणा प्रेम उमड़ा होगा तभी तो उन्होंने उसे खाने की अपेक्षा पाल लेना उचित समझा होगा । बहुत सम्भव है सियारों में उसको खाने के लिए संघर्ष भी हुआ हो पर जीत इस दिव्य शक्ति की हुई, सियारों ने बच्चे को पाल लिया । उसे अपनी तरह चलना-फिरना, बोलना और खाना तक सिखाकर यह सिद्ध कर लिया कि आत्मचेतना-शरीर नहीं, शरीर से भिन्न तत्व है, वही समस्त जीवों में प्रतिभासित हो रहा है । इस मूल की ही सन्तुष्टि जीवन की सच्ची उपासना है ।

लन्दन के शाहीबाग के पक्षियों में वहाँ हंस और बतखों की कई जातियों ने अपनी-अपनी जातीय संकीर्णताएँ तोड़कर अन्य जाति के हंस और बतखों से प्रेम बन्धन स्थापित किया है, यह क्रम अधिकांश पक्षियों पर चल पड़ने और पक्षियों द्वारा अन्तर्जातीय प्रेम प्रदर्शित करने के कारण वहाँ के अधिकारी चिन्तित हो उठे हैं कि नस्लों की शुद्धता को किस प्रकार सुरक्षित रखा जाए ? श्री आर्थर को अब उसके लिए जीवशास्त्रियों की मदद लेनी पड़ रही है क्योंकि वे पक्षियों के इस अन्तर्जातीय प्रेम को रोक सकने में असमर्थ रहे हैं ।

इस तरह का मुक्त प्रेम जो शारीरिक सुखों, इन्द्रियों के आकर्षणों, जाति, वर्ण और देश की सीमाओं से परे हो वही सच्चा प्रेम है । ऐसा प्रेम ही सेवा, मैत्री, करुणा, दया, उदारता और प्राणिमात्र के प्रति आत्मीयता का भाव जाग्रत कर तुच्छ जीवात्मा को परमात्मा से मिलाता है । हमारे प्रेम का दायरा संकुचित न रहकर समस्त लोकजीवन के प्रति श्रद्धा के रूप में फूट पड़े तो आज जो भावगत अनुभूतियाँ दुःसाध्य जान पड़ती हैं, कल वही काँच के स्वच्छ दर्पण में अपने साफ प्रतिबिम्ब की तरह झलकने लग सकती हैं ।

'जन्तु और मानव' पुस्तक के लेखक कार्लहैगेनबैक ने अपने निजी अनुभव की चर्चा करते हुए लिखा है—एक बार उसने एक युवा बाघ का जोड़ा खरीदा, वह बीमार पड़ा तो उन्होंने स्वयं उसके पास जाकर चिकित्सा और परिचर्या की । यह जोड़ा उनसे इतना हिल-मिल गया था कि नजदीक आने पर प्यार से विह्वल हो उठता और प्यार से घुरघुराता । पीछे उन्होंने उस जोड़े को बर्लिन की जन्तुशाला को दे दिया । जब कभी वे उससे मिलने जाते तो यह बाघ जोड़ा उनसे पहले की तरह ही प्यार करता और लिपटने की कोशिश करता ।

एक कुवियर ने एक पालतू भेड़िये की चर्चा करते हुए लिखा है—बचपन में उसे एक व्यक्ति ने पाला था पर बड़ा होने पर उसे जन्तुशाला को दे दिया । वह व्यक्ति जब भी जन्तुशाला में गया तो भेड़िए ने उससे मिलने की आतुरता दिखाई और यदि पास आने का तनिक भी अवसर मिला तो उसने भरपूर प्रेम प्रदर्शित करने की चेष्टा की ।

'जन्तुओं की कथा' पुस्तक में एन्ड्रयू लैंग ने उस बढ़ई का विवरण छापा है जिसने एक बाघ के बच्चे को पाला था और बड़ा होने पर उसे चिड़ियाघर को दे दिया था । एक बार वह बढ़ई चिड़ियाघर गया तो उसने बड़े प्रयत्नपूर्वक यह स्वीकृति प्राप्त की कि वह कटघरे में अपने पूर्व परिचित बाघ के पास जा सके । वह गया तो बाघ ने उसके हाथों को चाटा, अपना सिर उसके कन्धों से रगड़ा, कई घण्टे उसके साथ रहा और बढ़ई जब कटघरे से बाहर जाने लगा तो उसने उसे बार-बार जाने से रोका ।

'जन्तुओं के मित्र' पत्रिका में आडाऊ (ब्रिटेन) के कप्तान वाटसन ने अपने घोड़े की और एस. एन. पेज ने एक राजहंस की कथा छापी है । जिन्होंने मनुष्यों से कम नहीं वरन् कुछ अधिक ही अपनी प्रेमभावना का परिचय दिया था ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि हम अपने भीतर सच्ची प्रेम भावना पैदा करें तो देखेंगे कि उसके प्रकाश में हर कोई अपना प्रियपात्र बनता चला जा रहा है और हर ओर से प्रेम की वर्षा हो रही है ।

तोता मैना, बन्दर छोटे-छोटे सौम्य स्वभाव जीवों की कौन कहे, प्रेम की प्यास तो भयंकर खूँख्वार जानवरों के हृदय में भी होती है । एफ कुवियर के एक मित्र को भेड़िया पालने की सूझी । कहीं से एक बच्चा भेड़िया मिल गया । उसे वह अपने साथ रखने लगे । भेड़िया कुछ ही दिनों में उनसे ऐसा घुल-मिल गया मानो उनकी मैत्री इस जन्म की ही नहीं कई जन्मों की हो ।

कुछ ऐसा हुआ कि एक बार उन सज्जन को किसी काम से बाहर जाना पड़ गया । वह भेड़िया एक चिड़ियाघर को दे गये । भेड़िया चिड़ियाघर तो आ गया पर अपने मित्र की याद में दुःखी रहने लगा । मनुष्य का जन्मजात बैरी मनुष्य के प्रेम के लिये पीड़ित हो, यह देखकर चिड़ियाघर के कर्मचारी बड़े विस्मित हुए । कोई भारतीय दार्शनिक उनके पास होता और आत्मा की सार्वभौमिक एकता का तत्वदर्शन उन्हें समझाता तो सम्भव था ये भी जीवन को एक नई आध्यात्मिक दिशा में मोड़ने में समर्थ होते, उनका विस्मय चर्चा का विषय भर बनकर रह गया ।

भेड़िये ने अपनी प्रेम की पीड़ा शान्त करने के लिए दूसरे जीवों की ओर दृष्टि डाली । कुत्ता-भेड़िए का नम्बर एक का शत्रु होता है, पर आत्मा किसकी मित्र किसकी शत्रु क्या तो वह कुत्ता, क्या भेड़िया—कर्मवश भ्रमित अग-जग आत्मा से एक है, यदि यह तथ्य संसार जान जाए तो फिर क्यों लोगों में झगड़े हों, मनु-मुटाव, दंगा-फसाद, भेदभाव, उत्पीड़न और एक-दूसरे से घृणा हो । विपरीत परिस्थितियों में भी प्रेम जैसी स्वर्गीय सुख की अनुभूति आत्मदर्शी के लिए ही सम्भव है । इस घटना का सार-संक्षेप भी यही है । भेड़िया अब कुत्ते का प्रेमी बन गया, उसके बीमार जीवन में भी एक नई चेतना आ गई । प्रेम की शक्ति कितनी वरदायक है कि वह निर्बल और अशक्तों में भी प्राण की गंगोत्री पैदा कर देती है ।

दो वर्ष पीछे मालिक लौटा । घर आकर वह चिड़ियाघर गया, अभी वह वहाँ के अधिकारी से बातचीत कर ही रहा था कि उसका स्वर सुनकर भेड़िया भाग चला आया और उसके शरीर से शरीर जोड़कर खूब प्यार जताता रहा । कुछ दिन फिर ऐसे ही मैत्रीपूर्ण जीवन बीता ।

कुछ दिन बाद उसे फिर जाना पड़ा । भेड़िए के जीवन में लगता है भटकाव ही लिखा था, फिर उस कुत्ते के पास जाकर उसने अपनी पीड़ा शान्त की । इस बार मालिक थोड़ा जल्दी आ गया । भेड़िया इस बार उससे दूने उत्साह से मिला पर उसका स्वर शिकायत भरा था, बेचारे को क्या पता था कि मनुष्य ने अपनी जिन्दगी ऐसी व्यस्त, जटिल सांसारिकता से जकड़ दी है कि उसे आत्मीय भावनाओं की ओर दृष्टिपात और हृदयंगम करने की कभी सूझती ही नहीं । मनुष्य की यह कमजोरी दूर हो गई होती तो आज संसार कितना सुखी और स्वर्गीय परिस्थितियों से आच्छादित दिखाई देता ।

कुछ दिन दोनों बहुत प्रेमपूर्वक साथ-साथ रहे । एक-दूसरे को चाटते, थपथपाते, हिलते-मिलते, खाते-पीते रहे और इसी बीच एक दिन उसके मालिक को फिर बाहर जाना पड़ा । इस बार भेड़िए ने किसी से न दोस्ती की, न कुछ खाया-पीया । उसी दिन से बीमार पड़ गया और प्रेम के लिए तड़प-तड़पकर अपनी इहलीला समाप्त कर दी । उसके समीपवर्ती लोगों के लिए भेड़िया उदाहरण बन गया । वे जब कभी अमानवीय कार्य करते, भेड़िये की याद आती और उनके सिर लाज से झुक जाते ।

वर्लिन की एक सर्कस कम्पनी में एक बाघ था । नीरो उसका नाम था । इस बाघ को लीरिजग के एक चिड़ियाघर से खरीदा गया था । जिन दिनों बाघ चिड़ियाघर में था उसकी मैत्री चिड़ियाघर के एक नौकर से हो गई । बाघ उस मैत्री के कारण अपने हिंसक स्वभाव तक को भूल गया ।

पीछे वह क्लारा हलिपट नामक एक हिंसक जीवों की प्रशिक्षिका को सौंप दिया गया । एक दिन बाघ प्रदर्शन से लौट रहा था तभी एक व्यक्ति निहत्था आगे बढ़ा—बाघ ने उसे देखा और घेरा तोड़कर भाग निकला । भयभीत दर्शक और सर्कस वाले इधर-उधर दंग रह गये कि बाघ अपने पुराने मित्र के पास पहुँचकर उसे चाट रहा और प्रेम जता रहा है । उस मानव-मित्र ने उसकी पीठ खूब थपथपायी, प्यार किया और कहा अब जाओ समय हो गया । बाघ चाहता तो उसे खा जाता, भाग निकलता पर प्रेम के बन्धनों में जकड़ा हुआ बेचारा बाघ अपने मित्र की बात मानने को बाध्य हो गया । लोग कहने लगे सचमुच प्रेम की ही शक्ति ऐसी है जो हिंसक को भी मृदु, शत्रु को भी मित्र और संताप से जलते हुए संसार सागर को हिमखण्ड की तरह शीतल और पवित्र कर सकती है ।

प्रेम की न सीमा न बन्धन

सृष्टि का हर प्राणी, हर जीव-जन्तु स्वभाव में एक-दूसरे से भिन्न है । कुछ अच्छे, कुछ बुरे गुण सबमें पाए जाते हैं, पर प्रेम के प्रति सद्भावना और प्रेम की प्यास से वंचित कोई एक भी जीव सृष्टि में दिखाई नहीं देता । मनुष्य जीवन का तो सम्पूर्ण सुख और स्वर्ग ही प्रेम है । प्रेम जैसी सत्ता को पाकर भी मनुष्य अपने को दीन-हीन अनुभव करे तो यही मानना पड़ता है कि मनुष्य ने जीवन के यथार्थ अर्थ को जाना नहीं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

४.६० दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

चींटियों के जीवन में सामान्यतः मजदूर चींटियों में कोई विलक्षणता नहीं होती, उनमें अपनी बुद्धि, अपनी निजी कोई इच्छा भी नहीं होती है, एक नियम व्यवस्था के अन्तर्गत जीती रहती हैं, तथापि प्रेम की आकांक्षा उनमें भी होती है और वे अपने कोमल भाव को दबा नहीं सकतीं । इस अन्तरंग भाव की पूर्ति वे किसी और तरह से करती हैं । वह तितली के बच्चे से भी प्रेम करके अपनी आन्तरिक प्यास बुझाती हैं । यद्यपि यब सब एक प्राकृतिक प्रेरणा जैसा लगता है पर मूलभूत भावना का उभार स्पष्ट समझ में आता है तितलियाँ फूलों का मधु चूसती रहती हैं, उससे उनके जो बच्चे होते हैं उनकी देह भी मीठी होती है । माता-पिता के स्थूल शारीरिक गुण बच्चे पर आते हैं यह एक प्राकृतिक नियम है, तितली के नन्हें बच्चे, जिसे लार्वा कहते हैं, मजदूर चींटी सावधानी से उठा ले जाती है, उसके शरीर के मीठे वाले अंग को चाट-चाटकर चींटी अपने परिवार के लिए मधु एकत्र कर लेती है, पर ऐसा करते हुए स्पष्ट-सा पता चलता रहता है कि यह एक स्वार्थपूर्ण कार्य है । इससे नन्हें से लार्वे को कष्ट पहुँचाना है, इसलिए वह थोड़ी मिठास एकत्र कर लेने के तुरन्त बाद उस बच्चे को परिचर्या भवन में ले जाती हैं और उसकी तब तक सेवा-सुश्रूषा करती रहती हैं, जब तक लार्वा बढ़कर एक अच्छी तितली नहीं बन जाता । तितली बन जाने पर चींटी उसे हार्दिक स्वागत के साथ घर से विदा कर देती हैं । जीवशास्त्रियों के लिए चींटी और तितली की यह प्रगाढ़ मैत्री गूढ़ रहस्य बनी हुई है । उसकी मूल प्रेरणा अन्तरंग का वह प्यार ही है जिसके लिए आत्माएँ जीवन भर प्यासी इधर-उधर भटकती रहती हैं ।

आस्ट्रेलिया में फैलेन्जर्स नामक गिलहरी की शक्ल का एक जीव पाया जाता है । इसे सुगर एक्वैरेल भी कहते हैं । यह एक लड़ाकू और उग्र स्वभाव वाला जीव है, तो भी उसकी अपने बच्चों और परिवारीजनों के प्रति ममता देखते ही बनती है । वह जहाँ भी जाती है अपनी एक विशेष थैली में बच्चों को टिकाए रहती है और थोड़ी-थोड़ी देर में उन्हें चाटती और सहलाती रहा करती है, मानो वह अपने अन्तःकरण की प्रेम भावनाओं के उद्रेक को सँभाल सकने में असमर्थ हो जाती हो । जीव-जन्तुओं का यह प्रेम-प्रदर्शन यद्यपि एक छोटी सीमा तक अपने बच्चों और कुटुम्ब तक ही सीमित रहता है, तथापि वह इस बात का प्रमाण है कि प्रेम जीव मात्र की अन्तरंग आकांक्षा है । मनुष्य अपने प्रेम की परिधि अधिक विस्तृत कर सकता है । इसलिए कि वह अधिक संवेदनशील और कोमल भावनाओं वाला है । अन्य जीवों का प्यार पूर्णतया सन्तुष्ट नहीं हो पाता । इसलिए वे अपेक्षाकृत अधिक कठोर, स्वार्थी और खूँख्वार से जान पड़ते हैं पर इसमें सन्देह नहीं कि यदि उनके अन्तःकरण में छिपे प्रेम भाव से तादात्म्य किया जा सके तो उन हिंसक व मूर्ख जन्तुओं में भी प्रकृति का अगाध सौन्दर्य देखने को मिल सकता है । भगवान् शिव सर्पों को गले में लटकाए रहते हैं, महर्षि रमण के आश्रम में बन्दर, मोर और गिलहरी ही नहीं सर्प, भेड़िए आदि तक अपने पारिवारिक झगड़े तय कराने आया करते थे । सारा 'अरुणाचलम' पर्वत उनका घर था और उसमें निवास करने वाले सभी जीव-जन्तु उनके बन्धु-बान्धव, सुहृद, सखा, पड़ोसी थे । स्वामी रामतीर्थ हिमालय में जहाँ रहते वहाँ शेर, चीते प्रायः उनके दर्शनों को आया करते और उनके समीप बैठखर घण्टों विश्राम किया करते थे । यह उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि हमारा प्रेमभाव विस्तृत हो सके तो हम अपने को विराट् विश्व पारिवारिक के सदस्य होने का गौरव प्राप्त कर एक ऐसी आनन्द निर्झरिणी में प्रवाहित होने का आनन्द लूट सकते हैं, जिनके आगे संसार के सारे सुख-वैभव फीके पड़ जाएँ ।

६०० वर्ष पूर्व की घटना है । रोम में एक महिला अपने बच्चे से खेल रही थी । वह कभी उसे कपड़े पहनाती, कभी दूध पिलाती, इधर-उधर के काम करके फिर बच्चे के पास आकर उसे चूमती, चाटती और अपने काम में चली जाती । प्रेम भावनाओं से जीवन की थकान मिटती है । लगता है कि अपने काम की थकावट दूर करने के लिए उसे बार-बार बच्चे से प्यार जताना आवश्यक हो जाता था । घर के सामने एक ऊँचा टावर था । उसमें बैठा हुआ एक बन्दर यह सब बड़ी देर से बड़े ध्यान से देख रहा था । स्त्री जैसे ही कुछ क्षण के लिए अलग हुई कि बन्दर लपका और उस बच्चे को उठा ले गया । लोगों ने भाग-दौड़ मचायी । तब तक बन्दर सावधानी के साथ बच्चे को लेकर उसी टावर पर चढ़ गया ।

जैसे-जैसे उसे माँ को बच्चे से प्यार करते देखा था स्वयं भी बच्चे के साथ वैसा ही व्यवहार करने लगा, कभी उसे चूमता-चाटता तो कभी उसके कपड़े उतारकर फिर से पहनाता । इधर वह वह अपनी प्रेम की प्यास बुझा रहा था उधर उसकी माँ और घर वाले तड़प रहे थे, बिलख-बिलख कर रो रहे थे । बच्चे की माँ तो एकटक उसी टावर की ओर देखती हुई बुरी तरह चीखकर रो रही थी ।

बन्दर ने यह सब देखा । सम्भवतः उसने सारी स्थिति भी समझ ली, इसीलिए एक हाथ से बच्चे को छाती से चिपका लिया और शेष हाथ-पाँवों की मदद से वह बड़ी सावधानी से नीचे उतरा और बिना किसी भय अथवा संकोच के उस स्त्री के पास तक गया और बच्चे को उसके हाथों में सौंप दिया । यह कौतुक लोग स्तब्ध खड़े देख रहे थे । साथ-साथ एक कटु सत्य, किस तरह बन्दर जैसा चंचल प्राणी प्रेम के प्रति इस तरह गम्भीर और आस्थावान हो सकता है । माँ के हाथ में बच्चा पहुँचा सब लोग देखने लगे उसे कहीं चोट तो नहीं आई । इस बीच बन्दर वहाँ से कहाँ गया, किधर चला गया यह आज तक किसी ने नहीं जाना ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीछे जब लोगों का ध्यान उधर गया तो सबने यह माना कि बन्दर या तो कोई दैवी शक्ति थी, जो प्रेम की वात्सल्य महत्ता दर्शाने आई थी अथवा वह प्रेम से बिछुड़ी हुई कोई आत्मा थी जो अपनी प्यास को एक क्षणिक तृप्ति देने आई । उस बन्दर की याद में एक अखण्ड-दीप जलाकर उस टावर में रखा गया । इस टावर का नाम भी उसकी यादगार में बन्दर टावर (मंकी टावर) रखा गया । कहते हैं ६०० वर्ष हुए वह दीपक आज भी जल रहा है । दीपक के ६०० वर्ष से चामत्कारिक रूप में जलते रहने में कितनी सत्यता है, हम नहीं जानते पर यह सत्य है कि बन्दर के अन्तःकरण में बच्चे के प्रति प्रसूत प्यार का प्रकाश जब तक यह टावर खड़ा रहेगा, लाखों का मानबों जीवन की इसे परम उद्दात्त ईश्वरीय प्रेरणा की ओर ध्यान आकर्षित करता रहेगा ।

अमरीका के सैनडिगो चिड़ियाघर में एक बार एक बन्दर दम्पत्ति ने एक बच्चे को जन्म दिया । मादा ने खूब स्नेह और प्यारपूर्वक बच्चे का पालन-पोषण किया । बच्चा अभी २० महीने का ही हुआ था कि मादा ने एक नए बच्चे को जन्म दिया । यद्यपि पहला बच्चा माँ का दूध पीना छोड़ चुका था, तथापि संसार के जीव मात्र को भावनाओं की न जाने क्या आध्यात्मिक भूख है, उसे अपनी माँ पर किसी और का अधिकार पसन्द न आया । उसने अपने छोटे भाई को हाथ से पकड़कर खींच लिया और खुद जाकर माँ के स्तनों से जा चिपका ।

मादा ने अनुचित पर ध्यान नहीं दिया । उसने बड़े बच्चे को भावनापूर्वक अपनी छाती से लगा लिया और उसे दूध पिलाने के लिए इनकार नहीं किया, जबकि अधिकार उसका नहीं छोटे बच्चे का ही था । दो-तीन दिन में ही छोटा बच्चा कमजोर पड़ने लगा । चिड़ियाघर की निर्देशिका बेले. जे. बेनशली के आदेश से बड़े बच्चे को वहाँ से निकालकर अलग कर दिया गया । अभी उसे अलग किए एक दिन ही हुआ था, वहाँ से उसे अच्छी से अच्छी खुराक भी दी जा रही थी, किन्तु जीव मात्र की ऐसी अभिव्यक्ति बताती है कि आत्मा की वास्तविक भूख भौतिक सम्पत्ति और पदार्थ भोग की उतनी अधिक नहीं, जितनी कि उसे भावनाओं की प्यास होती है । भावनाएँ न मिलने पर अच्छे और शिक्षित लोग भी खूँख्वार हो जाते हैं, जबकि सद्भावनाओं की छाया में पलने वाले अभावग्रस्त लोग भी स्वर्गीय सुख का रसास्वादन करते रहते हैं । बड़ा बच्चा बहुत कमजोर हो गया जितनी देर उसका संरक्षक उसके साथ खेलता उतनी देर तो वह कुछ प्रसन्न दीखता पर पीछे वह किसी प्रकार की चेष्टा भी नहीं करता, चुपचाप बैठा रहता, उसकी आँखें लाल हो जातीं, मुँह उदास हो जाता स्पष्ट लगता कि वह दुःखी है ।

गिरते हुए स्वास्थ्य को देखकर उसे फिर से उसके माता-पिता के पास कर दिया गया । वह सबसे पहले अपनी माँ के पास गया पर उसकी गोद में था छोटा भाई, फिर वही प्रेम की प्रतिद्वन्द्विता । उसने अपने छोटे भाई के साथ फिर रूखा और शत्रुतापूर्ण व्यवहार किया । इस बार माँ ने छोटे बच्चे का पक्ष लिया और बड़े को झिड़ककरअलग कर दिया मानो वह बताना चाहती हो कि भावनाओं की भूख उचित तो है पर औरों की इच्छा का भी अनुशासनपूर्वक आदर करना चाहिए ।

कहते हैं अनुशासन-व्यवस्था और न्याय-नीति के लिए थोड़ी कड़ाई अच्छी ही होती है । अहिंसा की शक्ति हिंसा से हजार गुना अच्छी, घृणा नहीं संसार में करुणा बड़ी मानी जाती है, प्रेम देना चाहिये बैर नहीं बाँटना चाहिये पर यदि अहिंसा-हिंसा, करुणा, चाटुकारिता प्रेम में विश्वास की हिंसा की जा रही हो, अनीति और अन्याय का आचरण किया जा रहा हो तो दण्ड ही उस समय की सबसे बड़ी आवश्यकता होती है । शक्ति की मनमानी रोकने के लिए युद्ध भी करना पड़े तो करना चाहिए । इस तरह का दण्ड, संघर्ष, युद्ध और उपेक्षा मानवता की ही श्रेणी में आते हैं । दण्ड पाकर बड़ा बच्चा ठीक हो गया अब, उसने अपनी भावनाओं की परितृप्ति का दूसरा और उचित तरीका अपनाया । वह माँ के पास उसके शरीर से सटकर बैठ गया । माँ ने भावनाओं की सदाशयता को समझा और अपने उद्धत बच्चे के प्रति स्नेह जताया उससे उसका भी उद्वेग दूर हो गया, थोड़ी देर में वह अपने पिता के कन्धों पर जा बैठा । कुछ दिन पीछे तो उसने समझ भी लिया कि स्नेह, सेवा, दया-मैत्री, करुणा, उदारता, त्याग सब प्रेम के रूप हैं, सो अब उसने अपने छोटे भाई से भी मित्रता कर ली । इस तरह एक पारिवारिक विग्रह फिर से हँसी-खुशी के वातावरण में बदल गया ।

आज का मनुष्य भावनाओं के अभाव में ही इतना दुराग्रही, स्वार्थी और उच्छृंखल हो गया है । यदि कुत्ते और बन्दर परस्पर प्रेम और मैत्री-भावना का निर्वाह कर सकते हैं, तो विचारशील मनुष्य क्या नहीं कर सकता । यह कोई अत्युक्ति नहीं—अलीगढ़ जिले के कस्बा जवां में एक बन्दर और कुत्ते में मैत्री लोगों के लिए एक चुनौती है । विरोधी स्वभाव के जीव परस्पर साथ-साथ खेलते और साथ-साथ रहते हैं । बन्दर अपने मित्र के जुयें साफ करता है, कुत्ता बन्दर के तलुये सहलाता है । दोनों की मैत्री एक अव्यक्त सत्य का प्रतिपादन करते हुए कहती है कि भिन्न-भिन्न शरीर हैं तो क्या, आकांक्षाओं, इच्छाओं और भावनाओं वाली आत्मिक चेतना तो एक ही है । कर्मवश भिन्न शरीर में, भिन्न देश जाति और वर्णों में जन्म लेने वाले अपने को एक-दूसरे से पृथक् क्यों समझें । सब लोग अपने आपको विश्वात्मा की एक इकाई मानकर ही परस्पर व्यवहार करें तो संसार कितना सुखी हो जावे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निसर्ग में यह आदर्श पग-पग पर देखने को मिलते हैं । कैफनौ एस० सी० में स्टीव एण्ड स्किनर के पास एक मुर्गी थी । एक बार उसके सद्यप्रसूत बच्चों को बाज ने पकड़कर खा लिया । उसके थोड़ी देर बाद मुर्गी ने एक बिल्ली का पीछा किया, लोगों ने समझा मुर्गी में प्रतिशोध का भाव जाग गया है किन्तु यह धारणा कुछ देर में ही मिथ्या हो गई, जबकि मुर्गी ने बिल्ली को पकड़ लिया उसके पास आ जाने से उसके चारों बच्चे भी पास आ गए, मुर्गी ने चारों बिल्ली के बच्चों से प्यार करके पूरा किया ।

डॉ० श्वाइत्जर ने जंगल जीवन की व्याख्या करते हुए एक गिलहरी और गोरैया में प्रगाढ़ मैत्री का वर्णन किया है । गिलहरी यद्यपि अपने बच्चों की देख-रेख करती और अपने सामाजिक नियमों के अनुसार अन्य गिलहरियों में मेल-मुलाकात भी करती पर वह दिन के कम से कम चार घण्टे गोरैया के पास आकर अवश्य रहती । दोनों घण्टों खेला करते । दोनों ने एक-दूसरे को कई बार आकस्मिक संकटों से बचाया और जीवन-रक्षा की । गिलहरी आती तब अपने साथ कोई पका हुआ बेर गोरैया के लिए अवश्य लाया करती । गोरैया वह बेर गिलहरी के चले जाने के बाद खाया करती ।

भावनाओं की प्यास सृष्टि के हर जीव को है, यही एकात्मा का प्रमाण है । प्यार तो खूँख्वार जानवर तक चाहते हैं । रूसी पशु प्रशिक्षक एडर बोरिस की मित्रता क्रीमिया नामक एक शेर से हो गई । दिन भर वे कहीं भी रहते पर यदि एक बार भी मिल न लेते तो उनका मन उदास रहता । मिलते तो ऐसे जैसे दो सगे बिछुड़े भाई वर्षों के बाद मिले हों । एक बार एक सरकस का प्रदर्शन करते हुए बोरिस के शेर भड़क उठे और वे उसे चबा जाने को दौड़े, किन्तु तभी पीछे से वहाँ क्रीमिया जा पहुँचा । उसने शेरों को घुड़ककर हटा दिया । बोरिस बाल-बाल बच गया ।

स्वामी दयानन्द एक बार केदार के रास्ते पर एक स्थान पर ध्यानमग्न बैठे प्रकृति की शोभा का आनन्दपान कर रहे थे, उस समय एक साधु भी वहाँ पहुँच गए । साधु ने महर्षि को पहचानकर प्रणाम किया ही था कि उन्हें एक शेर की दहाड़ सुनाई दी । शेर उधर ही चला आ रहा था । यह देखते ही वह महात्मा काँपने लगे । दयानन्द ने हँसकर कहा- बाबा डरो नहीं, शेर खूँख्वार जानवर है तो क्या हुआ मनुष्य के पास दिव्य-प्रेम की आत्म-भावना की ऐसी जबर्दस्त शक्ति है कि वह एक शेर तो क्या सैकड़ों शेरों को गुलाम बना सकती है । सचमुच शेर वहाँ तक आया । साधु भयवश कुटिया के अन्दर चले गए पर महर्षि वहीं बैठे रहे । शेर स्वामीजी के पास तक चला आया । उन्होंने बड़े स्नेह से उसकी गर्दन, सिर पर हाथ फेरा वह भी वहीं बैठ गया । उसकी आँखों की चमक कह रही थी जीवन की वास्तविक प्यास और अभिलाषा तो आन्तरिक है, प्रेम की है । कुछ देर वहाँ बैठकर एक सबक देकर चला गया । पर भावनाओं का यह पाठ, प्रेम की यह शिक्षा मनुष्य कब पढ़ेगा, कब सीखेगा ? जिस दिन मनुष्य भावनाओं का सच्चे हृदय से आदर करना सीख गया, उस दिन वह भगवान् हो जाएगा और यह धरती ही स्वर्ग हो जाएगी । तब स्वर्ग अन्यत्र ढूँढने की आवश्यकता न पड़ेगी ।

मनुष्य से कुछ कम नहीं मनुष्येतर प्राणी

घर की दादी और पिता, दादा का काम छोटे बच्चों को खिलाना होता है । इस बँटवारे का कारण उनकी बेकारी नहीं, वात्सल्य भाव की प्रबलता मानी जाती है । अपने बच्चे बहुत प्यारे लगते हैं । पर बच्चे का बच्चा तो और भी प्रियतर होता है । यदि यह बात मनुष्य जाति की एक विशेषता है तो जंगल में पाए जाने वाले खरगोश को भी मनुष्य से कम नहीं माना जाना चाहिए, क्योंकि वह भी अपने बच्चों को मनुष्य से अधिक ही प्यार करता है ।

प्रसिद्ध जीव-विशेषज्ञ डॉ० डी० टरिच० डी० विकेल ने लम्बे समय तक खरगोश के सामाजिक जीवन का अध्ययन किया और लिखा है कि खरगोश में बहुत अधिक मानवीय गुण होते हैं, उनमें कुछ थोड़ी-सी बात पर नाराज हो जाने वाले दम्भी प्रकृति के होते हैं तो कुछ शान्त और सहनशील । उनमें परस्पर मैत्री का आधार गुणों की समानता होती है और इसका परिचय वे कुछ ही समय साथ-साथ रहने में पा लेते हैं । बूढ़े खरगोश बच्चों को बड़े प्यार से रखते हैं, उनकी देखभाल से लेकर खेल में प्रशिक्षित करने की जिम्मेदारी भी उन्हीं की होती है । खेलना खरगोश के लिए अनिवार्य होता है । वे कई बार खेलते समय इतने मस्त हो जाते हैं कि लोमड़ियों के भी सजातीय खरगोश मानकर उन्हीं के साथ क्रीड़ा करने लगते हैं । सम्भवतः उनकी इसी प्रकृति का वरदान उन्हें आजीवन आरोग्य के रूप में मिलता है । खरगोश के इन नैसर्गिक गुणों से मनुष्य जाति भी शिक्षा ले सकती है । क्रियाशील और क्रीड़ाशील जीवन की । आज जो धन रोगों की रोकथाम चिकित्सा में फूँका जा रहा है, उसका आधा भाग भी देश में गाँव-गाँव खेल की अनिवार्य व्यवस्था में लगा दिया जाता तो वह सौ अस्पतालों से बढ़कर काम करता ।

मनुष्य को अपनी बुद्धिमत्ता का बड़ा अहंकार है, पर सच बात यह है कि उसने इसी अहंकारवश अपने को अप्राकृतिक बनाया और रोग-शोक में जकड़ता चला आया- स्वस्थ और सन्तुलित जीवन की शिक्षाएँ वह आज भी प्रकृति से, अपने इन छोटे-छोटे जीवधारियों से प्राप्त कर सकता है । कौवे जैसे उपेक्षित पक्षी में भी जातीय हित और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वाधीनता के भाव पाए जाते हैं । एक बार उसके स्वभाव का विस्तृत अध्ययन करने के लिए मैडम जीन जार्ज और उनके पति डॉ० जान ने एक कौवे का अण्डा सेया । कौवों की साहसिकता और निर्भय आक्रमण के फलस्वरूप सामान्यतः उसका बच्चा पकड़ में नहीं आता, इसीलिए ऐसा करना पड़ा । अण्डे से बच्चा निकला । बच्चा बड़ा हुआ । मानवीय संसर्ग पाकर उसे मनुष्य से स्नेह हो गया, यह बात अलग है पर यह बात अन्य कौवों को कदापि पसन्द नहीं आई और अध्ययन करने से पता चलता था कि वह कौवे का बच्चा भी अपनी भूल स्वीकारता है- निश्चित । वह खिड़की के समीप बैठा रहता और अपने मालिक के साथ खेलता भी, पर जब एक विशेष प्रकार की ध्वनि से अन्य कौवे उसे धिक्कारते और उसे अपनी भाषा में मनुष्य जाति की बुराइयों से सावधान कर उसे भागने का संकेत करते तो वह बच्चा मालिक की भी परवाह न करके उड़ जाता । अपने साथी भाइयों के साथ देर तक खेलता रहता पर जिस तरह पाप, अन्याय और हीन भावनाओं के कारण एक मनुष्य अन्य मनुष्यों से मेल-जोल रखने में आत्महीनता अनुभव करता है, उसी प्रकार यह कौवा भी उन्मुक्त प्रकृति में जन्मे अपने जाति भाइयों के बीच कुछ छोटापन-सा अनुभव करता, इसलिये वह बार-बार लौटकर घर आ जाता ।

कौवा बड़ा बुद्धिमान पक्षी है । मनुष्य समझता है बुद्धि मेरी विरासत है, पर सच बात यह है कि अपने सीमित क्षेत्र और क्षमताओं में ही सृष्टि के अन्यान्य जीवों में भी विलक्षण बौद्धिक और आत्मिक क्षमताएँ होती हैं । जब सब कौवे उपाय कर हार गए तब उनके एक मुखिया ने एक चाल चली । उन्होंने एक भोज आयोजित किया और ठीक ऐसे स्थान पर जहाँ से उस पालतू कौवे को उनकी हरकतें दिखाई देती रहें । कौवे को ललचाकर अपने पास बुलाने का यह उपाय कितना बुद्धिप्रेरित हो सकता है । इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है । इस प्रकार वे इस पराधीन कौवे को भी बन्धनमुक्त करने में सफल हो गए ।

कौवों की ही जाति का रैवेन (एक प्रकार का काला कौवा) की बुद्धिमत्ता और सामाजिकता को देखकर तो यही लगता है इस जन्म के कुछ मनुष्य ही अपनी किन्हीं बुराइयों के कारण इस योनि में जाने को विवश होते हैं क्योंकि उनमें और मनुष्यों के रहन-सहन, विचार-व्यवहार में असाधारण समानताएँ पाई जाती हैं ।

भारतवर्ष, साइबेरिया, ग्रीनलैण्ड, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका तथा योरोप में पाए जाने वाले इस २ फुट की लम्बाई वाले पक्षी की विलक्षणताएँ जितनी अध्ययन की गईं, नई विलक्षणताओं के अन्यान्य रहस्य उतने ही गम्भीर होते जा रहे हैं । बहुत सम्भव है कि एक दिन वह आए जबकि दुनिया में पुनर्जन्म सिद्धान्त को सार्वभौमिक मान्यता मिल जाए, विज्ञान उसकी पुष्टि कर दे और फिर नई खोजें हों तो पता चले कि यह रैवेन नटों की जाति के मनुष्य हैं, जो मरने के बाद अपने स्वभाव और संस्कारवश इस कौवे की योनि में आ पड़ते हैं ।

जर्मनी के मैक्सप्लेंक इन्स्टीट्यूट फार दि फिजियोलॉजी ऑफ बिहेवियर इन सी विजन' स्थान में, जो कि जीव-जन्तुओं की प्रकृति के अध्ययन का बहुत ही उपयुक्त स्थान है, जर्मन वैज्ञानिक डॉ० एवरहार्ड ग्विनर ने रैवेन पक्षी का विस्तृत अध्ययन किया और यह देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि उसके रक्त में ऐसे लक्षण (ट्रेट्स) पाए जाते हैं जो मनुष्य से बहुत अधिक मिलते-जुलते हैं । इनके स्वभाव की विचित्रताएँ, नट जाति की मानवीय विशेषताओं से ओत-प्रोत होती हैं ।

पशु भी उपकार करने में पीछे नहीं

मनुष्य अपने को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानता है । उसकी श्रेष्ठता का आधार अन्य प्राणियों की तुलना में नीति, सदाचार, धर्म, परोपकार और सेवा की भावनाएँ ही तो हैं । यदि मनुष्य में इस प्रकार के गुण न हों तो फिर पशुओं और उसमें क्या अन्तर रह सकता है ? मनुष्य भी बिना सींग और पूँछ का पशु ही माना जायेगा । सेवा और दयालुता की प्रवृत्तियाँ तो ऐसी हैं, जो विभिन्न पशु-पक्षियों में भी पाई जाती हैं । गाय, बैल, भैंस, बकरी, घोड़ा, ऊँट, हाथी आदि कितने ही ऐसे पशु हैं जो मनुष्य को सहयोग देकर उसके जीवन को सुविधाजनक तथा प्रगतिशील बनाते हैं । आर्थिक क्रियाओं का विकास इस बात का साक्षी है कि पशु शक्ति ने मानव को सहयोग देकर उनके जीवन को कितना सुगम बनाया है ? आज के विज्ञान युग में भी पशुओं का सहयोग किसी प्रकार से कम नहीं है ?

साधारण समझे जाने वाले पशुओं में दयालुता, सेवा और उपकार की भावना विद्यमान हो और सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी समझा जाने वाला मानव इन गुणों से वंचित होता जा रहा हो, उसकी स्वार्थपरता बढ़ रही हो, प्रगति की दौड़ में दूसरे को धक्का देकर आगे निकलने की होड़ हो और दुष्टता तथा दुराचार और प्रवृत्तियाँ अपनी पराकाष्ठा पर हों तो उसे सर्वश्रेष्ठ प्राणी कैसे कहा जा सकता है ? सारे जीव-जन्तु एक ही ईश्वर की सन्तानें हैं, फिर क्या न इन छोटे-छोटे प्राणियों से दया, प्रेम और उपकार की शिक्षाएँ सीखकर अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न करें ।

मनुष्य को बुद्धि, ज्ञान, शक्ति और सुन्दरता का जो वरदान अन्य जीव-जन्तुओं की अपेक्षा अधिक मिला है, उसके पीछे ईश्वर की कोई विशेष भावना छिपी मालूम पड़ती है । शासकीय सेवाओं में भी उन्हीं व्यक्तियों को अधिक अधिकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा शक्तियाँ दी जाती हैं, जिन्हें शासन योग्य समझा जाता है और यह विश्वास किया जाता है कि इनके द्वारा समाज की अधिक सेवा होगी, ठीक यही भावना ईश्वर की भी रही है । पशु-पक्षिओं की अनेक घटनाएँ आए दिन हमारे सामने होती रहती हैं, जिन्हें देखकर हम अपनी स्थिति का सही अनुमान लगाकर अपने में दिव्य गुणों का विकास कर स्वर्गीय जीवन का आनन्द ले सकते हैं ।

नवम्बर, ६८ की घटना है । जार्ज टाउन (गुयाना) में एक कुत्ते ने ब्रिटिश कौंसिल प्रतिनिधि श्री रायलोज़ी के शयनगृह में घुसे दो सशस्त्र डकैतों को घायल करके अपने स्वामी के प्राणों की रक्षा की । श्री लाज व उनकी पत्नी बीरा रात्रि को सो रही थीं । अर्द्धरात्रि के समय बंगले के आस-पास का वातावरण शान्त देखकर दो सशस्त्र डकैत अन्दर घुस आए । उन डकैतों ने उस दम्पत्ति पर आक्रमण किया । भला उनका स्वामिभक्त कुत्ता यह सब कैसे सहन कर सकता था ? जो कुत्ता अपने स्वामी के भोजन पर अपना जीवन व्यतीत करता रहा हो, वह अब समय आने पर सोता रहे या पूँछ डुलाकर एक ओर खड़ा हो जाए, इस तरह का कार्य उसे विश्वासघात ही लगा । कुत्ता अपने स्वामी और स्वामिनी को बचाने के लिए अपने प्राणों को संकट में डालकर उन पर झपटा और थोड़ी चोट के बाद ही वह दोनों प्राणी बच निकले ।

कुत्तों की कई कहानियाँ सबने सुनी और पढ़ी हैं कि उन्होंने संकट में फँसे व्यक्तियों के प्राणों की रक्षा की, पर बिल्ली द्वारा एक बच्चे की जान बचाने की घटना जो प्रकाश में आई है, वह बड़ी प्रभावशाली तथा अपने ढंग की अनोखी है । एक जानकार ने तो इस प्रकार की घटना को विश्व का प्रथम उदाहरण ही बताया है ।

घटना इस प्रकार हुई कि हेम्बर्ग (पश्चिम जर्मनी) के एक मौहल्ले में २ साल का एक बच्चा टामस खेलते-खेलते पास में ही पाँच फुट गहरे पानी के गड्ढे में जा गिरा । खेल की मस्ती में उसे गड्ढे का ध्यान ही न रहा ? आखिर बच्चा ही तो था, इतने गहरे पानी में अपने को सँभालता कैसे ? आश्चर्य यह कि उसके मुख से चिल्लाने का कोई शब्द भी न निकला और गिरते ही वह डूबने लगा । उस समय वहाँ केवल मिंगा बिल्ली थी, जो इस दृश्य को देख रही थी । उसे अपने कर्त्तव्य का भान हुआ । पास के ही घर में उस बच्चे की माँ घरेलू कार्यों में व्यस्त थी । उसे तो यह पता था कि मेरा लाड़ला बाहर खेल रहा है । अतः कुछ निश्चिंत भी थी । बिल्ली म्याऊँ-म्याऊँ करने लगी और फिर एकदम इतनी जोर से चीखी कि उस बच्चे की माँ ही नहीं वरन् अन्य पास-पास के घरों के लोग भी उस चीख पर दौड़ पड़े । उसकी माँ ने तुरन्त ही उस बर्फीले पानी से उसे बाहर निकाला । टामस को सिवाय जुकाम के कुछ नहीं हुआ । इस प्रकार बिल्ली की सूझ-बूझ से उस बच्चे टामस के प्राण बच सके ।

क्या पशुओं की इन घटनाओं को देखकर परोपकार के दिव्यगुण को आत्मसात् नहीं कर सकते ? यदि कहीं ईश्वर ने मनुष्यों के तरह इन जीव-जन्तुओं को सोचने के लिए बुद्धि और विचार व्यक्त करने के लिए वाणी प्रदान की होती तो वह सदाचार, धार्मिकता, सेवा और नैतिकता की होड़ में मनुष्यों से कहीं आगे बढ़ गए होते । मनुष्य के लिए यह कलंक की ही बात मानी जाएगी, जब पशुओं में परोपकार, नैतिकता और सदाचार के गुण मिलते हों और मनुष्य अनैतिकता की ओर बढ़ता जा रहा हो । इन घटनाओं को देखकर मनुष्यों को अपनी सत्प्रवृत्तियों को बढ़ाना ही चाहिये ।

समय-समय पशुओं द्वारा मानवता के आदर्श उपस्थित करने के अनेक समाचार प्रकाश में आते रहते हैं । कहते हैं कि सतयुग में पशु-पक्षी भी मानवीय नैतिक परम्पराओं का पालन करते थे । आज भी जब ऐसी घटनाएँ घटित हो रही हैं तो भावी सतयुग का आभास मिलता है । क्या ही अच्छा हो कि इन उदाहरणों से अपने को श्रेष्ठ समझने वाले मनुष्य सत्मार्ग पर चलने की प्रेरणा लें ।

टोकियो के एक स्टेशन के पास इम्पीरियल विश्वविद्यालय के एक प्राध्यापक के प्रिय घुँघराले बालों वाले कुत्ते की एक कब्र बनी हुई है । प्रतिदिन वह कुत्ता अपने स्वामी को स्टेशन तक पहुँचाने जाता और जब मालिक गाड़ी में बैठ जाता तो कुत्ता अपने घर लौट आता, इसी प्रकार वह शाम को गाड़ी आने के समय स्टेशन पर जाकर मालिक की प्रतीक्षा करता और उनके आने पर घर साथ-साथ आता । एक दिन शाम को कुत्ता प्रतीक्षा करता रहा पर मालिक न आया । मालिक आता भी कैसे उसकी तो विश्वविद्यालय में ही मृत्यु हो गई थी ।

पर उस स्वामिभक्त मूक पशु को यह कौन समझाता कि उसके मालिक अब विश्वविद्यालय से कभी भी न लौटेंगे । वह आठ वर्ष तक निरन्तर स्टेशन पर सुबह-शाम जाकर मालिक की प्रतीक्षा करता रहा । शाम को जब अँधेरा हो जाता तो अपने घर लौट आता । आठ वर्षों की कठोर तपस्या के बाद एक दिन कुत्ते का जीवन भी समाप्त हो गया, पर उसने अपने कार्यक्रम में बिना कोई व्यवधान आए आठ वर्ष तक चलाया ।

मरने के बाद उसकी स्वामिभक्ति की कहानी जापान के प्रत्येक घर में चर्चा की विषय बन गई । जनता ने धन एकत्रित कर स्टेशन पर खंभे के पास उसका छोटा स्मारक बनवाया जहाँ प्रतिदिन बैठकर वह कभी न लौटने वाले अपने मालिक की प्रतीक्षा किया करता था । आज वह कुत्ता स्टेशन पर आने वाले सैकड़ों व्यक्तियों को स्वामिभक्ति की मूक प्रेरणा दे रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

त्रावणकोर देवाश्रम बोर्ड द्वारा संचालित अलैप्पी के दुर्गा देवी मन्दिर के एक ग्यारह वर्षीय हाथी ने अपने पुराने महावत के स्थान पर नये महावत को स्वीकर करने से मना कर दिया । मन्दिर के अधिकारियों ने पुराने महावत को हटाकर नये महावत की नियुक्ति की थी । हाथी को यह सहन हुआ कि बिना किसी कारण के झूठे आरोप लगाकर महावत को हटा दिया । जैसे ही नया महावत आया, हाथी क्रोधित हो उठा । यहाँ तक कि उस पर काबू करना कठिन हो गया । फिर मजबूरी में मन्दिर के अधिकारियों को पुराना महावत बुलाना पड़ा । पुराने महावत के आते ही हाथी शान्त हो गया और अपनी सूँड़ से प्रेम तथा ममत्व प्रकट करने लगा । आखिरकार पुराने महावत को हटाने का आदेश रद्द करना पड़ा ।

झादा-सुरेका गाँव का चरवाहा अपने गाँव की गायों को चराने रोज सुबह ही सुबह जंगल में ले जाता था । वहाँ एक शेर ने चरवाहे पर आक्रमण कर दिया । चरवाहे के पास तो गायों को हाँकने के लिए एक लाठी थी, उस पर भी यह हमला अचानक हुआ था । अतः वह अपने को सँभाल भी न सका और एकदम घबड़ा गया । उसके मुँह से जैसे ही एक चीख निकली वैसे ही जंगल में चर रही इधर-उधर बिखरी गायों ने एकत्रित होकर शेर पर भयानक आक्रमण करके सींगों की चोट से उसे घायल कर दिया और उसे खदेड़ कर भगा दिया ।

नित्य गायों को घर-घर लाने और पहुँचाने जाने वाले चरवाहे को आपत्ति में देखकर गायों ने भी अपने कर्त्तव्य का पालन कर मानव को यही मूक सन्देश दिया है कि वह भी आपत्ति में पड़े दूसरों की यथाशक्ति सहायता करे ।

अल्जीरिया की मडाम नेपियर के पास एक कुत्ता था। वह नित्य ही एक झोला मुँह में लटकाकर जाता । डबलरोटी वाला गिनकर बारह डबलरोटी उसमें रख देता और वह ले आता । कुछ दिन से ग्यारह ही रोटियाँ आने लगीं । मालिक ने दुकानदार से पूछा । मालूम पड़ा कि मैं तो बारह ही रखता हूँ । तब कुत्ते की छिपकर जाँच की गई । पाया गया कि बाहर एक बीमार कुतिया है । एक रोटी नित्य वह झोले में से उसे ही दे आता है । तब तेरह रोटियाँ भेजने को कहा गया । घर पर बारह रोटियाँ पहुँचने लगीं । कुछ दिन बाद घर पर तेरह रोटियाँ पहुँची । तब फिर पता लगाया गया और पाया गया कि वह कुतिया अब चलने-फिरने योग्य हो गई है और अपना भोजन स्वयं जुटा लेती है ।

काश ! छल, बेईमानी, स्वार्थपरता तथा अविश्वास की ओर दौड़ता हुआ मानव इन निरीह प्राणियों से ही कुछ सीख सकता ।

एक अन्य घटना कोट्टायम से तीन मील दूर की है जिसमें एक स्वामिभक्त कुत्ते ने अपने मालिक के समस्त परिवार को अपने प्राण देकर बड़ी विपत्ति से बचा लिया । प्रस्तुत विवरण में, रात्रि के सन्नाटे में सारा घर सो रहा था । कमरे तथा आँगन के बीच दहलीज के पास ही उनका पालतू कुत्ता सो रहा था । कुछ फुँकार तथा सरसराहट हुई तो कुत्ते की नींद खुली । घर वाले भला उस धीमी-सी आहट को कैसे सुन पाते ? वह उठा और सूँघ-सूँघकर उसने खोज निकाला कि एक मोटा काला नाग उसी ओर बढ़ता चला आ रहा है । वह उस पर झपटा और अपने पंजों तथा दाँतों के द्वारा उसे घायल करने की कोशिश करने लगा। काफी देर तक द्वन्द्व युद्ध होता रहा । मुकाबला भी अजीब था । कोई उस जैसा ही जानवर होता तो लड़ना फिर भी आसान था । पर वह था रेंगने वाला, पतला नाग । बार-बार फुँकार के साथ उठ-उठकर कुत्ते के ऊपर फनों के प्रहार करता । पर कुत्ते को एक ही धुन थी कि वह कमरे के अन्दर न घुसने पाए, जहाँ मेरे स्वामी अपने अबोध शिशुओं के साथ निद्रामग्न हैं । जैसे ही नाग कमरे की ओर बढ़ने की कोशिश करता कुत्ता उस पर झपट्टा मारता । कई जगह साँप का शरीर भी पन्जों तथा दाँतों के प्रहार से क्षत-विक्षत हो गया और कुत्ते की तो हालत ही अजीब थी । पता नहीं कितनी जगह काले सर्प ने उसे डसा था । जहर फैलता गया । आखिर जब उसने यह देखा कि शक्ति चुक गई और शत्रु भी मारा जा चुका है तो उसे मुँह में दबाकर लटकाए हुए पहुँचा और करुण स्वर में कूँ-कूँ करने लगा ।

आवाज सुनकर मालिक जागे । सामने जो कुछ देखा उससे कृतज्ञता के आँसू उमड़ आए, अपने प्राणरक्षक उस निरीक्ष किन्तु बहादुर और वफादार पशु के प्रति ।

कुचला-कुचलाया काला नाग जिसकी लम्बाई ८ फुट थी कुत्ते के मुँह में लटका हुआ था । सर्प के भी शरीर से खून बह रहा था और कुत्ते के मुँह से भी । उन्होंने उसे पानी पिलाने का प्रयास किया । किन्तु वह तो स्वामिभक्ति का अमृत पीकर अनन्त यात्रा पर जाना चाहता था । श्रांत-क्लांत शरीर वहीं पड़ा रहा उस कुत्ते का और प्राण अपने स्वामी की ओर देखते-देखते ही उड़कर चले गए ।

जाते हुए शायद यही कहा होगा उसने कि मालिक! हमने जीवन भर तुम्हारे दिए भोजन एवं अन्य सुविधाओं का लाभ उठाकर जीवन धारण किया । अब तुम्हारी ही सेवा करते हुए हम जा रहे हैं, हो सके तो अपनी मानव जाति को मेरा यह सन्देशा कह देना कि उपकारी का प्रत्युपकार चुकाना ही सच्चा जीवन है ।

कांगो नदी के किनारे एक शेर और एक जेब्रा साथ-साथ विचरण करते अनेक बार देखे गए हैं । यद्यपि जेब्रा शेर का भोजन है फिर भी मित्रों की तरह रहने वाली यह जोड़ी सह-अस्तित्व के सिद्धान्त पर विश्वास करती है । सह-अस्तित्व मनुष्यों की दुनिया में भले ही सम्भव न हो पर पशुओं की दुनिया मे कभी-कभी इसकी झलक देखने को मिल ही जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छिन्दवाड़ा जिले के बड़कु ग्राम में पारिवारिक कुछ बातों को लेकर पति-पत्नी में झगड़ा हो गया । पत्नी अपने क्रोध को न दबा सकी, वह अपनी तीन वर्षीय बालिका को लेकर आत्महत्या के उद्देश्य से पास के एक कुएँ में कूद पड़ी । पास में ही खड़ा पालतू कुत्ता यह सब देख रहा था। वह भी तुरन्त कुएँ में कूद पड़ा और उस बच्ची को खींचकर ऊपर ले आया पर अपनी मालिकन के प्राण बचाने में वह बेचारा कुत्ता भी असमर्थ ही रहा ।

काठमांडू (नेपाल) में एक बन्दर गाँववासियों के पशुओं को चराने जंगल ले जाता था. । उसके बीमार पड़ जाने से बच्चों को चराने जाना पड़ता है, जिससे वे स्कूल नहीं जा पाते । अब गाँववासी इस बात का प्रयत्न कर रहे हैं कि वह बन्दर जल्दी ही स्वस्थ हो जाय ताकि अपना छोड़ा हुआ काम फिर से करने लगे और बच्चों को स्कूल जाने में सुविधा हो ।

मिसरिख से डेढ़ मील दूर एक गिद्ध के मर जाने के बाद उसकी गिद्धनी ने शोक में खाना-पीना सब बन्द कर दिया और गिद्ध के शव के पास ही छह दिन तक तड़प-तड़प कर जान दे दी ।

मघई नदी पर हुई रेल दुर्घटना के ६० घण्टे के बाद जब अन्य यात्रियों ने देखा तो गोरखपुर की एक फर्म के क्लर्क के पालतू कबूतर अपने मालिक के पास ही बैठे थे । मालिक का शव जब डिब्बे से बाहर निकाला गया तो देखा कि कबूतर पंख फड़-फड़ा रहे हैं, उन कबूतरों का स्वामी उन्हें इलाहाबाद भेज रहा था, ये कबूतर अपने मालिक के वियोग में दाना-पानी खाने तक को नहीं निकले ।

हरदोली ग्राम के समीप राजापुर के भूतपूर्व जमींदार ठाकुर रसालसिंह की उन्हीं के हाथी ने जान ले ली । घटना इस प्रकार हुई कि ठाकुर साहब अपने भाई की शादी में ग्राम घुबौनी जा रहे थे । हाथी पर महावत, ठाकुर साहब तथा अन्य उनके कई रिश्तेदार भी थे । महावत ने ठाकुर साहब से हाथी को पानी पिलाने के बारे में पूछा तो उन्होंने उत्तर दिया चलने दो, साले को आगे पानी पिला देंगे । बस इसी बात पर हाथी नाराज हो गया और उसने सभी सवारों को नीचे गिरा दिया, केवल गाली देने वाले ठाकुर साहब को ही खींचकर पैरों से रौंदकर मार डाला और बाद में हाथी शान्त हो गया । सचमुच पशु होते हुए भी हाथी ने यह सिद्ध कर दिया कि गाली से उसके स्वाभिमान को चोट पहुँचती है । अतः सभी के साथ शिष्टतापूर्ण व्यवहार करना चाहिए ।

हमसे तो कई गुना श्रेष्ठ है— डॉल्फिन मछली

जीव-जन्तुओं को प्रायः निरीह, नासमझ माना जाता और समझा जाता है कि उनका साहचर्य मनुष्य को मात्र विनोद-मनोरंजन ही दे सकता है, पर यह सम्पूर्ण सत्य नहीं है । कुछ जन्तु ऐसे भी होते हैं, जो सहकारी वृत्ति के होते और मन बहलाव करने के अतिरिक्त मनुष्य की तरह-तरह की सहायता करते हैं । यदि किसी कार्य विशेष के लिए प्रशिक्षित किया जा सके, तो वे उस क्षेत्र में और भी अधिक बढ़ी-चढ़ी योग्यता का प्रदर्शन करते हैं । इन्हीं में से एक है—डॉल्फिन मछली । ये मछलियाँ इतनी परोपकारी होती हैं कि जलक्रीड़ा अथवा स्नान के मध्य यदि किसी व्यक्ति का जीवन संकट में पड़ जाय और इसका पता डॉल्फिनों को लग जाय, तो वे तुरन्त संकटग्रस्त की सहायता के लिए प्रस्तुत होती देखी जाती हैं ।

घटना सन् १९४३ की है । फ्लोरिडा के समुद्र तट पर एक दिन मार्था नामक एक महिला स्नान कर रही थी । जहाँ वह नहा रही थी, वहाँ पर तट कुछ ढलवाँ था । कमर तक जल में पहुँचकर जैसे ही डुबकी लगाने के लिए उद्यत हुई, उसके पैर अचानक फिसल जाने के कारण वह गिर पड़ी और बहुत सारा जल फेफड़ों में चले जाने से वह बेहोश हो गई । दुर्भाग्यवश आस-पास कोई नहीं था, फलतः उसे किसी की सहायता नहीं मिल सकी । उसी समय वहाँ से एक व्यक्ति गुजर रहा था । उसने देखा कि समुद्री जल में एक मानव शरीर पानी में डूबता-उतराता शनैः-शनैः तीर की ओर अग्रसर हो रहा है । उत्सुकतावश उसे देखने और उसकी विलक्षण गति का रहस्य जानने के लिए वह रुक गया । शरीर पूर्ववत् किनारे की ओर बढ़ता चला आ रहा था । जब वह व्यक्ति तट के अत्यन्त समीप आया तो देखता है कि एक बड़ी डॉल्फिन मछली उस मानव शरीर को अपनी पीठ पर लादे प्रयत्नपूर्वक समुद्रकूल की ओर ला रही है । जब वह किनारे पर बिल्कुल छिछले जल में पहुँच गई, तो उस शरीर को वहीं छोड़कर विशाल जलराशि में कहीं अदृश्य हो गई । यात्री ने जब उसका निरीक्षण किया, तो उसमें जीवन के कुछ लक्षण दिखाई पड़े । वह उसे पानी से बाहर लाया और फेफड़ों में घुसे जल को प्रयासपूर्वक निकालने लगा । इस क्रिया से मार्था की चेतना धीरे-धीरे वापस लौट आई, तब उसने उस व्यक्ति से अपने डूबने की घटना सुनाई और अजनबी ने उसे डॉल्फिन द्वारा बचा लिए जाने का आँखों देखा विवरण बताया । इसे सुनकर मार्था ने अपने भाग्य को सराहा और घर चली गई, पर वह व्यक्ति जन्तुविज्ञान का मूर्धन्य प्रोफेसर डॉ. डी. एरलैण्डसन था । उनके मन में अब यह जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि डॉल्फिन ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संयोगवश मार्था को बचाया अथवा अपनी सहयोगी प्रवृत्ति के कारण उसकी रक्षा की । इसे जानने के लिए उसने एक प्रयोग किया । एक बड़े हौज में एक ऐसे अस्वस्थ मादा डॉल्फिन को रखा, जिसे साँस लेने के लिए जल सतह तक आने में कठिनाई होती थी । उसकी मदद के लिए उसी में एक स्वस्थ एवं अपरिचित नर डॉल्फिन को छोड़ा गया । हौज में नर को डालते ही उसे मादा की सहायता करते देखा गया । नर मछली बार-बार मादा को ऊपर उठाकर साँस लेने में सहयोग प्रदान कर रही थी । बाद में उसमें एक अन्य मादा डॉल्फिन छोड़ी गई । वह भी इस सेवा कार्य में जुट पड़ी । दोनों ने मिलकर ४८ घण्टों तक अस्वस्थ मत्स्य की मदद की, तब कहीं जाकर वह इस योग्य हो सकी कि स्वयं जल-सतह तक जाकर साँस ले सके । इस प्रयोग से डॉल्फिन मछली की परोपकार-वृत्ति असंदिग्ध साबित हो गई और प्रोफेसर की यह दृढ़ धारणा बन गई कि यह उसकी नैसर्गिक प्रवृत्ति है ।

एक अन्य घटना न्यूजीलैण्ड की है । वहाँ के होकीआंगा बन्दरगाह में सन् १९५० के दशक में एक मानव प्रेमी डॉल्फिन जील नामक एक तेरह वर्षीय बालिका से इतना हिल-मिल गई थी कि वह दूर तक अपने ऊपर बिठाकर सैर करा लाती । प्रायः यह यात्रा निकटवर्ती 'ओमोपियर' ग्राम-तट तक होती । यहीं तक बन्दरगाह फैला हुआ था । इसके बाद वह जील को वापस लौटा लाती । अपनी उक्त प्रवृत्ति के कारण वह स्थानीय लोगों में 'ओमो' नाम से लोकप्रिय हुई थी । इस घटना से वह इतनी प्रसिद्ध हुई कि न्यूजीलैण्ड में उसके संरक्षण के लिए एक कानून बनाया गया, जिसमें ओमो को परेशान करना, उसे पकड़ना, शिकार करने की चेष्टा करना, घोर अपराध किया गया । इस कानून के बाद लोग उसके कौतुकों से अपना मनोरंजन तो करते, पर उसे छेड़ने की कोशिश नहीं करते । ओमो भी अपने करतबों द्वारा स्नान करने वालों का खूब दिल बहलाती । उनमें जैसे ही जील दिखाई पड़ती, वह तुरन्त उसके पास पहुँचकर उसे जल-विहार के लिए ले जाती । एक ऐसे ही अवसर पर असावधानीवश जील उसकी पीठ से लुढ़क पड़ी और गहरे जल में डूबने-उतराने लगी । ओमो को ज्यों ही यह ज्ञात हुआ, उसने तत्काल डुबकी लगाकर पुनः लड़की को अपने ऊपर बिठा लिया । शायद घटना की गम्भीरता का उसने कुछ अनुमान कर लिया था, अतः वह और आगे न बढ़कर बैरंग पीछे लौट चली । तट पर जील को छोड़कर गहरे जल में विलुप्त हो गई । उस दिन के बाद फिर उसके दर्शन न हुए । सम्भव है, उसे इस दुर्घटना से त्रास पहुँचा हो । ऐसे ही 'पेलोरस जैक' नामक एक अन्य डॉल्फिन ४० की दशाब्दी में वहाँ चर्चा का विषय बनी थी । अनेक वर्षों तक यह मछली नाविकों का मनोरंजन करती रही । कई बार वह उन्हें अपनी पीठ पर समुद्र की यात्रा भी कराती । जब बूढ़ी हुई तो एक बार 'पेग्वीन' नामक जलयान से टकराकर बुरी तरह मृत्यु हो गई । आज भी उसका चौदह फुट लम्बा कंकाल विलिंगटन (न्यूजीलैण्ड) के अजायबघर में रखा हुआ है ।

कई बार डॉल्फिन छोटी-मोटी शरारतें भी करती हैं । ऐसी ही एक मछली ब्रिटेन के आयल ऑफ मेन के पोर्ट एरिन बन्दरगाह में थी । उसमें लोगों की सहायता और मनोरंजन करने की दोनों प्रवृत्तियाँ थीं, पर साथ ही एक तीसरा स्वभाव यह था कि वह नाविकों से छेड़छाड़ भी किया करती थी । 'डोनाल्ड' नामक यह डॉल्फिन जब अधिक मस्ती में आती, तो वह नावों का लंगर खोल देती थी । यदा-कदा वह उन्हें धकेलकर दूर समुद्र में ले जाती और वहाँ उछल-उछलकर तट पर खड़े नाविकों को यह बतलाने की कोशिश करती कि वह उसी की शरारत है ।

डॉल्फिनों को यदि प्रशिक्षित किया जा सके अथवा सेवा-सहायता उन्हें किसी प्रकार समझायी जा सके, तो उन कार्यों को भी दक्षतापूर्वक वे करती देखी जाती हैं । स्पेन के दक्षिण-पश्चिम में 'ला-कोरोना' के समुद्र तट पर डॉल्फिन मछुआरों को मछली पकड़ने में मदद करती दृष्टिगोचर होती है । यहाँ पर मछुआरों को जब मछलियाँ पकड़नी होती हैं, तब वे पानी में पैरों के माध्यम से एक विशेष प्रकार की लहर व मुँह से विशिष्ट ध्वनि उत्पन्न करते हैं । इन संकेतों का अर्थ समझकर डॉल्फिन सहायता के लिए तत्काल प्रस्तुत होती है । उनका झुण्ड चारों ओर से मछलियों को घेर-घेरकर उनकी ओर लाता है और मछुआरे उन्हें अपने जाल फेंककर फँसा लेते हैं । इस प्रकार मछली पकड़ने का कार्य अत्यन्त सरल हो जाता है ।

सेना में प्रतिरक्षा सम्बन्धी कार्यों में कुत्तों, कबूतरों की मदद तो देखी-सुनी जाती रही है, पर यह कदाचित् ही सुना गया हो कि इस कार्य में मछलियाँ भी निष्णात् होती हैं, किन्तु यह सत्य है कि इस क्षेत्र में अब डॉल्फिनों की मदद ली जा रही है । इसकी शुरूआत अमेरिका ने की है । प्रयोग के रूप में इस प्रकार के प्रशिक्षण का शुभारम्भ सर्वप्रथम कैलिफोर्निया (अमेरिका) के चाइना लोक स्थित नेवल आर्डिनेन्स सेन्टर में किया गया । वहाँ बारी-बारी से तीन डॉल्फिनों को प्रशिक्षित किया गया और बाद में खुले समुद्र में छोड़कर उनकी परीक्षा ली गई, यह जानने का प्रयास किया गया कि प्रशिक्षण के दौरान उन्हें जो कुछ सिखाया गया, उसे वे सचमुच सीख पाईं या नहीं । परिणाम उत्साहवर्द्धक देखा गया । उस आरम्भिक सफलता के उपरान्त यह प्रशिक्षण कार्य अमेरिका में अब कैलिफोर्निया के अतिरिक्त फ्लोरिडा एवम् हवाई के दो अन्य नौसैनिक केन्द्रों में चलाया जा रहा है । पिछले वर्षों में ऐसी प्रशिक्षित मछलियों ने फारस की खाड़ी में अमेरिकी जलपोतों की रक्षा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का प्रमाण-परिचय दिया है । ईरान-इराक युद्ध के कारण उक्त वर्ष जब इस क्षेत्र में तनाव बढ़ा और समुद्र में बारूदी सुरंगों का जाल बिछा, तो अमेरिकी नौसेना ने जहाज की रक्षा के लिए डॉल्फिनों की सहायता ली थी । तब कई प्रशिक्षित डॉल्फिनें खाड़ी क्षेत्र में भेजी गई थीं, जो जल के भीतर छिपी सुरंगों का सही-सही अनुसंधान कर इसकी सूचना जलयान को देतीं व सम्भाव्य दुर्घटना को टालने में मदद करती थीं । आज अमेरिका के पास इस प्रकार की सौ से भी ऊपर प्रशिक्षित मछलियाँ हैं, जो समय-समय पर जल-सेना को अपनी बहुमूल्य सेवा प्रदान करती रहती हैं ।

सम्भवतः डॉल्फिनों की इसी सेवावृत्ति ने महान् अँग्रेज कथाकार शेक्सपियर को उन पर कथा-सृजन की प्रेरणा दी थी । उनकी 'दि ट्वेल्थ नाइट' नामक कहानी में ऐसी ही परोपकारी मछलियों का वर्णन है, जिन्होंने सरियन नामक एक यात्री को समुद्री दस्युओं द्वारा सागर में फेंक दिए जाने पर सुरक्षित ग्रीस तक पहुँचाकर उसकी प्राणरक्षा की थी ।

इस प्रकार डॉल्फिनों की सहकारिता निश्चय ही सराहनीय है । विकासवादियों के अनुसार कशेरुकी मेरुदण्ड युक्त प्राणियों में मछलियाँ सबसे निम्न श्रेणी की हैं । उच्चकोटि में स्तनपाइयों को रखा गया है । उनमें भी मनुष्य को सर्वाधिक श्रेष्ठ व बुद्धिमान माना गया है । डॉल्फिन मछली है और अल्प-विकसित है । वह मनुष्य की तुलना में अत्यन्त अशक्त-असमर्थ है, फिर भी अपनी सीमित क्षमता-योग्यता का भरपूर उपयोग करती और 'सहकार-वृत्ति' का उत्कृष्ट नमूना प्रस्तुत करती है । मनुष्य उससे अनेक गुना विकसित और सामर्थ्यवान है । उसकी परोपकारिता भी अनेक गुनी बढ़ी-चढ़ी होनी चाहिए ।

ये संवेदनशील पशु-पक्षी

सेवा, सहयोग, उदारता, वफादारी तथा कर्त्तव्य-परायणता मनुष्यों के स्वाभाविक गुण हैं, किन्तु ये गुण—आज मनुष्य छोड़ता जा रहा है और पशु-पक्षी जिन्हें जितनी मात्रा में भी ये प्राप्त हुए हैं—उनका सहयोग पूरी ईमानदारी के साथ करते हैं ।

चींटियाँ कहीं भी कुछ खाद्य पदार्थ पाती हैं, तो तत्काल ही अन्य चींटियों को सूचित कर देती हैं । एक कौआ या अन्य पक्षी किसी भी मुसीबत में पड़े—तत्काल सैकड़ों अन्य सजातीय पक्षी एकत्रित हो जाते हैं । चीलों में तो यह प्रथा है कि कहीं भी बड़ा भोजन मिले तो सब एकत्रित होकर खाते हैं । उनमें भी पहले बच्चे खाते हैं फिर बूढ़े और उनके पश्चात् युवा । इसी प्रकार गाय पर जंगल में जब कोई हिंस्र जन्तु आक्रमण करता है तो शेष गायें भाग नहीं जातीं, वरन् सब मिलकर, डटकर उसका मुकाबला करती हैं ।

इलाहाबाद के श्री किशनचन्द्र दास के यहाँ एक घोड़ा था जिसे वे बहुत प्यार करते थे । किशन बाबू का यह नित्य का नियम था कि आफिस से लौटकर उसे लगभग आधा घण्टा खूब प्यार करते तथा एक पाव जलेबी अपने हाथ से खिलाते साथ ही स्नेह भरी बातें भी बोलते जाते ।

भाषा तो नहीं—पर भावों को वह निरीह पशु अवश्य ही ग्रहण कर लेता ।

किशनबाबू की मृत्यु के समय, जब सारा परिवार रो रहा था तो उसे अस्तबल में रोते हुए पाया गया । किशनबाबू के छोटे भाई ने उसे एक अन्य सज्जन को बेच दिया । तब भी मार की परवाह न करते हुए—उनके दफ्तर न जाकर उन्हें किशनबाबू के ही दफ्तर ले जाता और वहाँ जाकर हिनहिनाता । कुछ दिन में ही उसने दाना-पानी छोड़ दिया और वहीं जा पहुँचा जहाँ किशन बाबू जा चुके थे ।

बैरिस्टर चन्द्रशेखर सेन के पास मैकाडू नामक एक जापानी कुत्ता था । वे मुंगेर गये हुए थे । कुछ दिन तक लगातार यह देखा गया कि मैकाडू को जो भोजन मिलता है उसमें से वह आधा भोजन मुँह में दाबकर ले जाता है और पता नहीं कहाँ रख आता है । पता लगाने पर मालूम हुआ कि बाहर कहीं एक कुत्ता पड़ा है, जिसकी एक टाँग टूट गई है । जब तक वह बीमार रहा मैकाडू को यह सहायता कार्य चलता रहा । जब वह चलने-फिरने योग्य हो गया तब कहीं मैकाडू को इस कार्य में फुर्सत मिली ।

एक समुद्री जहाज के कप्तान के पास एक पूसा नामक बन्दर था । एक दिन उसे एक शरारत सूझी । एक जहाजी की टोपी चुरा लाया और उसमें बकरी का दूध दुहने लगा । दूध पीने की इच्छा हो आई थी शायद । कप्तान ने उसके दण्डस्वरूप सात दिन के लिए उसका 'सोशल वायकाट' कर दिया ।

अब वह जिस किसी के भी पास जाता—कोई उससे नहीं बोलता । कप्तान के पास जाकर अपनी अनेक गतिविधियों द्वारा क्षमा-याचना की । अन्य व्यक्तियों के पास जाकर भी विविध प्रकार से प्रेम दर्शाया तथा क्षमायाचना की । पर जब कोई भी उससे नहीं बोला तथा उसे उपेक्षा ही मिली तो उसके आत्मसम्मान को इतनी ठेस लगी कि उसके चौथे दिन समुद्र में कूदकर आत्महत्या कर ली ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बेईमानी और छल-कपट हाथी को भी नापसन्द

हाथी बिगड़ा तो फिर ऐसा बिगड़ा कि किसी के सँभाले नहीं सँभला । मामूली आदमी की तो बिसात ही क्या ? झुण्ड बनाकर कई मनुष्यों ने उसे हथियारों के बल पर काबू करना चाहा । पर गजराज अपनी क्रोधाग्नि को नहीं बुझा सका । उसने चैन की साँस तभी ली जब महावत को सूँड़ में लपेटकर, पटक-पटक कर उसकी जान ले ली ।

दिनांक २८ के दैनिक हिन्दुस्तान दिल्ली से प्रकाशित एक घटना के अनुसार इटावा में उक्त घटना घटित हुई ।

एक बारात की शोभायात्रा समारोह था । उसमें उक्त हाथी शोभा भी बढ़ाने के लिए लाया गया था । निकरौसी हुई । हाथी पर भी कई बाराती बैठे थे ।

जब बारात स्थानीय कटरा साहब खाँ में लड़की वाले के द्वार पर पहुँची तो सभी का तिलक लगाकर तथा दक्षिणा देकर सम्मान किया गया । हाथी के भी तिलक लगाया गया और उपहारस्वरूप कुछ लड्डू खाने को दिए गए । हाथी सारी प्रक्रियाएँ अपनी छोटी-छोटी आँखों से देख रहा था ।

महावत के मन में मैल आया । उसने सोचा ये मूक प्राणी—निरीह पशु—मोटी अक्ल का मोटा हाथी, क्या जाने क्या बूझे ? सो उसने दो-चार लड्डू हाथी को खिलाए और शेष बाँधकर चुपचाप अपने लिए रख लिये ।

हाथी—था तो पशु—महावत की बेईमानी को ताड़ गया । भले ही पशु मनुष्यों की भाषा न तो बोले ही सकते हैं और न समझ ही सकते हैं पूरी तरह, किन्तु मनुष्य की मनोगत भावनाओं को ग्रहण करने की क्षमता उनमें खूब होती है ।

हाथी ने महावत की चालाकी ताड़ ली और वह इसी बात पर क्रुद्ध हो गया । लाख प्रयत्न किया, किन्तु वह नहीं माना, महावत को सूँड़ में लपेट दिया । कई प्रकार से हाथी को काबू में लाने का प्रयत्न किया गया किन्तु किसी का कुछ बस नहीं चला तब शीघ्रता करके हाथी के मालिक को बुलाया गया ।

घायल महावत को लोगों ने किसी प्रकार उठाया और हाथी को पकड़ से बचाकर अस्पताल ले जाने का उपक्रम करने लगे । पर गजराज का क्रोध—लगता है, अभी भी शान्त नहीं हुआ था । फिर एक बार एक हमला करने की आकांक्षा से दौड़ा किन्तु तब तक भाग्य से उसका मालिक आ गया और उसे काबू में कर लिया गया ।

लेकिन महावत की हालत बहुत ही चिन्ताजनक थी । वह बुरी तरह घायल हो गया था । कहीं अन्तिम विदा माँगती हुई साँस कह रही थी—"न मन में थोड़ा-लालच उपजने देता और न यह दुर्दशा होती ।" शीघ्र ही वह साँस भी विदा हो गई और उसके साथ ही महावत की जीवन-लीला समाप्त हो गई ।

पास खड़े लोगों में से कोई कह रहा था "आज के युग में मनुष्य कहाँ से कहाँ पहुँच गया है ? छल, बेईमानी, धोखेबाजी, कपट तथा अनधिकार चेष्टाओं में ही अपना सारा बुद्धि-कौशल लगा देता है । उससे अच्छे तो ये पशु हैं, जो न अन्याय तथा अनीतिपूर्ण कार्य करते हैं और न आँखों के सामने होते हुए सहन कर पाते हैं ।

नेगोम्बे नगर (कोलम्बो) एक रईस के पास एक हाथी था, उसके महावत को शराब पीने की बुरी लत वर्षों से थी । उससे उसका स्वास्थ्य खराब रहता था । आँखों में सूजन आ गई थी ।

मालिक ने एक दिन अपने हथवाल को खूब समझाया कि वह शराब न पिया करे । शराब मादक पदार्थ है, उससे शरीर में क्षणिक उत्तेजना पैदा होती है और बाद में यह उत्तेजना ही स्नायविक दुर्बलता के रूप में प्रकट होती है । हित की बात हथवाल ने मान ली और प्रतिज्ञा की कि अब वह कभी भी शराब नहीं पियेगा । जिस समय उसने मालिक को यह वचन दिया हाथी साक्षी था । यों तब उसकी उपस्थिति को कोई महत्व नहीं दिया गया पर पीछे यह सिद्ध हो गया कि अनेक मानवीय सिद्धान्तों के परिपालन में पशु-पक्षी मनुष्य को भी पराजित कर सकते हैं ।

घटना २१ या २२ दिसम्बर सन् १९६९ की है और २६ दिसम्बर के कानुपर से छपने वाले दैनिक जागरण के पेज ६ कालम ६ पर छपी है और भी अखबारों में इस समाचार को महत्व देकर छापा गया ताकि लोग कुछ सीखें और मानवेतर प्राणियों से ही कुछ सबक लें ।

एक दिन महावत अपने हाथी को लेकर नदी की ओर निकल गया । वहाँ उसने स्वयं स्नान किया और हाथी को भी नहलाया, पानी पिलाया । इस बीच उसे फिर शराब पीने की सूझी सो वह हाथी को पानी में ही छोड़कर अपनी पुरानी दुकान पर जा पहुँचा । प्रतिज्ञा के बावजूद डटकर शराब पी और अचेत होकर वहीं लुढ़क गया । शराबी की कितनी दुर्गति हो सकती है ? वह उस समय इसका प्रत्यक्ष उदाहरण था ।

हाथी ने इधर देर तक प्रतीक्षा की पर जब महावतराम न लौटे तो उसने साफ समझ लिया कि श्रीमान जी फिर उसी गड्ढे में जा गिरे । वह वहाँ से चलकर सीधे दुकान पहुँचा तो देखता क्या है कि महावत महाशय नशे में धुत पड़े हैं ।

अभी इनकी थोड़ा सबक मिलना चाहिये, थोड़ा लज्जित किया जाना चाहिये यही विचार तो हाथी के मस्तिष्क में आया होगा तभी तो उसने उन्हें बड़े मजे में सूँड़ में लपेटकर उठाया और मालिक के मकान की ओर लेकर चल पड़ा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दरवाजा बन्द था सो उसने जाकर दरवाजा खटखटाया । मालिक ने समझा हाथी बिगड़ गया है और महावत को मारकर लाया है, इसलिये पहले तो उसने बन्दूक निकाली पर पीछे उसके दिमाग में नेवले वाली कथा याद आ गई , उससे मालिक को बिना सोचे-समझे काम न करने की प्रेरणा मिली ।

जब उसने फर्श पर पड़े महावत की हालत देखी तब पता चला सही बात क्या है ?

महावत होश में आया तो अपने आपको मालिक सहित कई लोगों से घिरा हुआ पाया । उसे अपने पर बड़ी लज्जा आ रही थी । उसने क्षमा-याचना की और फिर दुबारा शराब न पीने की प्रतिज्ञा की ।

जहाँ लोगों ने प्रतिज्ञा-भंग और शराबबाजी के लिये महावत की निन्दा की, वहाँ हाथी की समझदारी की चर्चा भी सर्वत्र हुई । यदि वह शराब पीने को बुरा कर्म नहीं समझता तो महावत को बन्दी बनाकर मालिक के सामने प्रस्तुत न करता ।

प्रकृति प्रेरणा का भयावह व्यतिरेक

मौत तो क्या बुढ़ापा भी नहीं टाला जा सकता, पर इन दोनों का समय हम अपेक्षाकृत आगे धकेल सकते हैं । दीपक में पतली बत्ती डालें, निर्वात् स्थान पर रखें तो वह देर तक जलता रहेगा पर यदि बत्ती मोटी कर दी जाय, दीपक टूटा होने से तेल बहने की गुंजाइश रहे, रखे स्थान पर हवा के तेज झोंके आते रहें तो उसके असमय में ही बुझ जाने की आशंका है । जीवन भी एक ऐसी सम्पदा है जो कुछ अपवादों को छोड़कर शेष सभी को समान रूप से मिली है । निर्धारित आयुष्य को हम चाहें तो पूरी अवधि तक बिना किसी कठिनाई के भोग सकते हैं ।

सृष्टि के सभी प्राणी युवा होने की आयु से पाँच गुनी अधिक आयु तक जीते हैं । इस नियम को हम अपने परिचित पशु-पक्षियों पर पूर्णरूपेण लागू होते देख सकते हैं । मनुष्य २५ वर्ष में युवा होता है । तदनुसार वह १२५ वर्ष तक जीवित रह सकता है । रूस के उजेबिकस्तान क्षेत्र के लोग आमतौर से सौ वर्ष से अधिक जीते हैं । कितने ही तो १५० या उससे भी अधिक जीते देखे गए हैं । इसके लिए उन्हें कुछ विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता । मात्र इतना ही करते हैं कि प्रकृति के सामान्य नियमों का सरल मन से पालन करते रहते हैं । बस इतने भर से ही वे उस दीर्घायुष्य के लाभ को प्राप्त कर लेते हैं ।

भारत गरम देश है तो भी यहाँ के जलवायु में साधारण आयु १०० वर्ष मानी गई है । आशीर्वाद मन्त्र में सौ वर्ष जीने की, सक्षम रहने की शुभकामना व्यक्त की गई है । इसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं है । संसार के विभिन्न क्षेत्रों में अभी भी व्यक्ति ऐसे पाए जाते हैं । जिनकी आयु सौ वर्ष या उससे ऊपर है । इसके लिए उन्हें कोई जादुई आहार नहीं अपनाना पड़ा, न कोई टॉनिक भस्म, रसायन आदि का आश्रय लेना पड़ा । यह सब सहज स्वाभाविक रीति से ही होता रहा । प्रकृति की मर्यादाओं का उल्लंघन न करना यह एक ही उपाय ऐसा है जिसे अपनाकर कोई भी व्यक्ति दुर्बलता, रुग्णता से बचा रह सकता है और दीर्घ जीवन का अधिकारी बन सकता है ।

इस सन्दर्भ में सादगी, सरलता, नियमितता, व्यवस्था आदि ऐसे गुण हैं जो जीवन को न केवल लम्बा बनाते हैं वरन् उसे स्वस्थ और सुखी भी रखते हैं । आहार और विहार की नियमितता बरती जाय तो क्षमताओं का अपव्यय न हो जिसके कारण जीवन-शक्ति का भण्डार चुकता है और साथ ही अशक्तता का दौर बुढ़ापे जैसी व्याधियों समेत असमय में ही आ-धमकता है ।

चिड़ियाँ संध्या होते ही अपने घोंसलों में लौट जाती हैं । सबेरे होने पर बसेरे से बाहर निकलती हैं । वन्य- पशु भी ऐसा ही करते हैं । जिनकी संरचना भिन्न प्रकार से हुई है, वहीं निशाचर पशु-पक्षी, दिन में विश्राम करते और रात में आहार खोजने के लिए निकलते हैं । इस प्रकार आधा समय विश्राम के लिए और आधा समय श्रम करने के लिए मिल जाता है । सभी प्राणी ऋतुओं के प्रभाव से यथासम्भव बचते तो हैं पर साथ ही उनके सम्पर्क में भी रहते हैं । ऋतुएँ शरीर पर अपना प्रभाव छोड़ती हैं और वह उपयोगी भी होता है । सूर्य के सम्पर्क से सभी जीवनी-शक्ति प्राप्त करते हैं । मनुष्य जो अपनी जीवनचर्या में प्रकृति विरोधी व्यतिरेक करता रहता है । रात को बहुत देर तक जागता है । तेज प्रकाश के दबाव में आँखों पर, मस्तिष्क तन्त्र पर अनावश्यक दबाव डालता रहता है । सीलन भरे अँधेरे वाले ऐसे मकानों में रहता है, जिनमें सूर्य किरणों और साफ हवा का आवागमन नहीं होता । कपड़ों से लदे रहने पर ऋतुओं का प्रभाव भी शरीरगत सुदृढ़ता को सहज क्रम में नहीं बनते देता ।

इन्द्रियों के माध्यम से जीवनी-शक्ति का क्षरण होता है । इसमें अतिवाद बरतने भर से भण्डार समय से पहले ही चुक जाता है । आँखों पर, मस्तिष्क पर अतिशय दबाव और हाथ-पैरों को समुचित श्रम करने का अवसर न मिलना ऐसा व्यतिरेक है, जिसके कारण या तो अवयव बहुत जल्दी घिस जाते हैं और फिर निकम्मे पड़े रहकर जंग खाए जैसे निकम्मे हो जाते हैं । दोनों ही विपन्नताएँ ऐसी हैं, जो स्वस्थता को चोट पहुँचाती हैं और जीवन की लम्बी अवधि पर खेदजनक कुठाराघात करती हैं । प्रकृति पुत्र अन्य सभी जीवधारी भोजन की तलाश में विनोद-मनोरंज के लिए दिनभर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भागते-दौड़ते रहते हैं । इसमें इन्हें समुचित श्रम करने का, गहरी साँस लेने का, खुली धूप, हवा में रहने का और स्वच्छ जलाशयों में पानी पीने का अवसर मिलता है । यही है वह प्रकृति अनुसरण, जिसके कारण उन्हें रोगों के चंगुल में नहीं फँसना पड़ता । दुर्घटनाओं को छोड़कर अकारण मृत्यु का शिकार नहीं बनना पड़ता ।

प्राणिवर्ग में नर-मादाओं के समूह साथ-साथ मिल-जुलकर रहते हैं । सामान्य समय में न उनमें कामुक चिन्तन चलता है, न अश्लील छेड़छाड़ की विडम्बना ही पनपती है । गर्भाधान का उपयुक्त अवसर आने पर मादा की ओर से प्रणय निवेदन होता है । नर एक प्रयोग में ही उस आवश्यकता को पूरी कर देता है । फिर जब तक वैसी स्थिति न बने, दोनों पक्षों में से कोई भी यौनाचार का विचार नहीं करता । इस मर्यादा पालन के कारण ओजस् यथावत बना रहता है और उनकी दृढ़ता को अक्षुण्य बनाए रखता है । उसके विपरीत मनुष्य किशोरावस्था की कच्ची उम्र से ही कामुकता के गर्त में गिरना आरम्भ करता है और वृद्धावस्था तक उस कुचेष्टा को किसी न किसी रूप में अपनाए रहता है । फल यही होता है कि शरीगत ओजस्, तेजस् और आत्मिक क्षेत्र का वर्चस्व निरन्तर घटता जाता है । ऊपर का कलेवर तो किसी प्रकार दर्शनीय बना रहता है पर भीतर वह जीवन नहीं रहता, जो रोग-कीटाणुओं के विरुद्ध लड़ सके । भीतर की गन्दगी को बाहर निकालने की भूमिका को समुचित रीति से सम्पन्न करता रह सके । अन्दर की गन्दगी और बाहर की आक्रामकता, अभावग्रस्तता मिलकर व्यक्ति को खोखला बना देते हैं, जिन्हें संयम अपनाने की विवेकशीलता नहीं है, वे अपने पैरों पर अपने आप कुल्हाड़ी मारते हैं और असंयम की वेदी पर आत्महत्या जैसी दुर्घटना के शिकार बनते हैं । जिन्हें ब्रह्मचर्य का, अन्यान्य इन्द्रियों के संयम-सदुपयोग का ज्ञान नहीं समझना चाहिए कि उन्हें जीवित रहने का नीरोगतापूर्वक दीर्घायु रहने का महत्व ही मालूम नहीं है ।

इन्द्रियों की संख्या दस मानी गयी है । इसमें पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ । इनमें से किसी का भी दुरुपयोग किया जाय, दुष्परिणाम भुगतना ही पड़ेगा । सदुपयोग करते रहने पर वे अपने स्तर की उपलब्धियाँ प्रस्तुत करती हैं किन्तु दुरुपयोग पर उतारू होने वाले संकटों को निमन्त्रित करते रहते हैं । यह मानवोचित है कि इन्द्रियों का सदुपयोग किया जाय । प्रकृति प्रेरणा के व्यतिरेक से बचा जाय ।

आदर्श दाम्पत्य-जीवन का पाठ पढाते ये जीव-जन्तु

निरीह समझे जाने वाले पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों को भी प्रकृति के ऐसे अनुदान मिले हैं, जिनके आधार पर वे अपना सुखमय जीवन व्यतीत करते रहते हैं । कई प्राणी सभ्य मनुष्य की तरह आदर्श गृहस्थ का जीवनपर्यन्त परिपालन करते हुए देखे जाते हैं । उनकी प्रेम सम्बन्धी क्रियाएँ-प्रतिक्रियाएँ अतिरोचक एवं आकर्षक होती हैं । प्रेम प्रस्ताव करने के लिए यह कैसे-कैसे तरीकों का प्रयोग करते हैं, यह जानकर सचमुच आश्चर्य होता है ।

विशेषज्ञों के अनुसार मूक पशु-पक्षी भी स्वयंवर प्रथा को अपनाते हैं एवं एक पत्नीव्रत धारण कर जीवनपर्यन्त इनका निर्वाह करते हैं । ऐसी धार्मिकता एवं त्याग-प्रवृत्ति को अपनाकर यह सफलतापूर्वक जीवन जीते हैं । डिग-डिग जाति का हिरण एकपत्नी व्रतधारी होता है । हाथियों की प्रणय कहानी भी इसी तरह की है । हाँ, अपनी बिरादरी के विपरीत लिंग के प्रति वे तभी आकर्षित होते हैं, जब जोड़े में से एक की मृत्यु हो जाती है । मनुष्यों में से कम ही ऐसे नियम पालन करने वाले होंगे ।

चिम्पाजी बन्दर एक आदर्शवादी जीवन जीता है । इनके विश्रामगृह वृक्षों पर होते हैं । रात्रि में उसके पत्नी, बच्चे विश्राम करते हैं और नर चिम्पाजी उनके रक्षार्थ वृक्ष के नीचे बैठा रहता है । यह जीवन भर पत्नीव्रत धर्म का परिपूर्ण निष्ठा से पालन करता है । अन्य प्राणियों की तुलना में यह अधिक बुद्धिमान भी होता है । मानव शिशु के समतुल्य ही चिम्पाजी शिशुओं का विकास होता है ।

कई चिम्पाजी शिशुओं को भी अपने मनोरंजन का केन्द्र बना लेते हैं । मास्को की मैडम कोहिता ने चिम्पाजी के अध्ययन हेतु एक को कठघरे में बन्द करके रखा । एक सुनहरे बालों वाली खुबसूरत लड़की रसोईघर में भोजन बनाया करती थी । कुछ समय बाद चिम्पाजी ने रीझकर विभिन्न अदाओं से उस पर अपने स्नेह-सद्भाव का प्रकटीकरण प्रारम्भ किया । इसी बीच नौकर ने एक अवरोधक-पर्दा मध्य में डाल दिया । इस पर क्रुद्ध होकर चिम्पाजी ने नौकर को खाना रखते समय आक्रोश का शिकार बनाया और काट खाया ।

सामान्यतया मनुष्य अपने प्रेम भाव को व्यक्त करने के लिए जो-जो क्रियाएँ करता है, वे सभी क्रियाएँ छोटे जीव-जन्तुओं में भी पाई गई हैं । जैसे कि अभिवादन, शिष्टाचार, उपहार देना, सुगन्धित पदार्थ देना, गले मिलना आदि । झींगुर साधारण रूप से सामान्य अवसरों पर अपने पंखों के आरी जैसे दाँतों में से ४७ प्रतिशत का ही उपयोग करता है, किन्तु प्रेम प्रस्ताव के समय ८९ प्रतिशत दाँतों का उपयोग करके विशेष ध्वनि उत्पन्न करता है । इतना ही नहीं उनके पंखों के जोड़ों से एक प्रकार का मधुर एवं स्वादिष्ट चाकलेट जैसा पदार्थ स्रवित होता रहता है, जिसको मादा झींगुर आनन्द से ग्रहण करती है ।

महान कवि कीट्स ने प्रकृति में कीट-पतंगों की प्रेम-चेष्टाओं से मुग्ध होकर अपनी अत्युतम कविता 'ओड टू

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आटम' में उनके गीतों एवं नृत्यों का विशद् वर्णन किया है । वैज्ञानिकों में कवि हृदय की रसिकता पाना तो मुश्किल है परन्तु डॉ० मोरिस बर्टन ने 'मेफ्लाई' नामक मक्खियों के झुण्डों को नदियों के किनारे प्रारम्भ में तेजी से पंख फड़फड़ाते हुए ऊपर उड़ते और फिर मन्द गति से ताल एवं लयबद्ध होकर समूह में मँड़राते देखा तो उन्होंने भाव-विभोर होकर कहा—"कीट-पतंगों की भावनाओं का पता लगाने का तो हमारे पास कोई साधन नहीं है, लेकिन उनकी इन कलात्मक चेष्टाओं के रसास्वादन करने से हमें कोई वंचित नहीं कर सकता ।"

पक्षियों में नर पक्षी प्रणय प्रस्ताव के साथ-साथ अपनी कुशलता एवं सद्भावना प्रकट करने के लिए मादा की मनुहार करते हैं । उनका प्रयत्न भर रहता है पर अन्तिम फैसला मादा ही करती है । इस स्वयंवर प्रथा के अनुसार अपनी मर्जी का साथी चुनने की छूट होती है । निराश नर मुँह लटकाये वापस चले जाते हैं पर प्रतिशोध किसी से भी नहीं लेते हैं—न प्रस्तावित प्रेयसी से, न उसके वरण किए साथी से । मनुष्य ही है जो मादा की वरिष्ठता स्वीकार करने में ननुनुच करते और अपनी इच्छा थोपते देखे गये हैं । मोर, मुर्गे जैसे नर पक्षी नृत्य करते, उपहार देते तो देखे गए हैं, पर आक्रमणात्मक रुख कभी भी नहीं अपनाते । इस सम्बन्ध में उन्हें नारी की स्वतन्त्रता और वरिष्ठता का सदा सम्मान करते देखा गया है । मनुष्यों की तरह वे मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते ।

हंस समाज बनाकर रहते और सहकारी जीवन जीते हैं । आवश्यकतानुसार एक-दूसरे की सहायता भी करते हैं। किसी के चोट लगने या घाव हो जाने पर बड़े स्नेह से एक-दूसरे की देखभाल किया करते हैं । सितम्बर, अक्टूबर में ठण्डक शुरू होते ही वे हजारों की संख्या में अँग्रेजी अक्षर 'वी' के आकार में किसी एक नेता के अनुशासन में हजारों मील की उड़ान आरम्भ करते हैं । इस लम्बी यात्रा में समूह के प्रत्येक सदस्य को अपने झुण्ड का नेतृत्व करने का कठिन उत्तरदायित्व भी सौंपा जाता है । प्रतिदिन वे १० से १५ घण्टे तक उड़ते रहते हैं । रास्ते में विभिन्न स्थानों में ठहरे हंस साथ हो लेते हैं और नये-नये साथी मिलने पर हर्ष व्यक्त करते हैं । जीवन-यात्रा का सच्चा आनन्द उठाने के लिए इन पशु-पक्षियों से मनुष्य बहुत कुछ सीख सकता है ।

अन्य जीवों को तुच्छ न समझें

जीव- जन्तुओं और मानव में क्या सम्बन्ध है, यह एक बडा गम्भीर प्रश्न है । जिन लोगों ने आत्म-तत्व को नहीं समझा है और सृष्टि-रचना की प्रक्रिया से अनजान हैं, वे तो मनुष्य के सिवाय अन्य समस्त प्राणियों को अनात्म अथवा जड पदार्थों के तुल्य मानते हैं । यहूदी, ईसाई, मुसलमान आदि धर्मानुयायियों की विचारधारा ऐसी ही होती है और इसलिये वे पशु-पक्षियों को मारने में कोई पाप नहीं समझते । संसार के अधिकांश अन्य धर्मों की भी ऐसी ही स्थिति है । यह श्रेय केवल भारतीय-धर्म को भी प्राप्त है कि उसमें प्राचीन- काल से ही समस्त प्राणियों में एक ही आत्मा की स्थिति तथा एक छोटे से कीड़े को भी एक बराबर स्वीकार किया है । इसी तथ्य को हृदयंगम कराने के लिये गीताकार ने यहाँ तक कह दिया है कि 'ज्ञानी व्यक्ति के लिए हाथी और चींटी तथा ब्राह्मण और चांडाल एक समाज है ।' आशय ही है कि यह समस्त विश्व एक ही आत्म-तत्व का खेल है, इसमें किसी को छोटा-बड़ा समझना भूल है ।

यह ठीक है कि समस्त प्राणियों में मनुष्य ने ही बौद्धिक-क्षेत्र में सर्वाधिक प्रगति की है और ज्ञान-राज्य में प्रवेश करके वह सृष्टि के मूल तत्व को जान सकने में समर्थ हो गया है । इसी ज्ञान के बल पर उसने इस सिद्धान्त को भी खोज निकाला है कि यद्यपि एक आत्म-तत्वदर्शी मनुष्य और हिरन, कुत्ता जैसे पशु अथवा मेंढक, चूहे जैसे छोटे जन्तु में बहुत अधिक अन्तर है पर आत्म-तत्व दोनों में मौजूद है और इस समय मेंढक में स्थित आत्मा किसी समय मनुष्य की योनि में भी पहुँच सकती है । इस प्रकार एक भारतीय शास्त्रों का ज्ञाता और उन पर आचरण करने वाला ही **'आत्मवत् सर्वभूतेषु'** के महान सिद्धान्त की वास्तविकता को अनुभव कर सकता है ।

मानवेतर प्राणियों की दुनिया भी मनुष्यों जैसी

मनुष्य जाति अपने को सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानें तो यह भी देखना आवश्यक होगा कि उसमें ऐसी कौन-सी विशेषताएँ हैं, जिनके आधार पर उसे बड़ा माना जा सकता है । गृहस्थी बसा लेना, बच्चे पैदा करना, बड़े-बड़े उद्योग खड़े करके धन कमाना और हास-विलास की जिन्दगी बिताना ही उसकी सर्वश्रेष्ठता का आधार रहा होता तो पशु-पक्षी भी उसी की कोंटि के श्रेष्ठ कहलाने का अधिकार रखते । आहार-विहार ही क्यों बौद्धिक क्षमता, शिल्प और स्थापत्य में तो कई बार मानवेतर जीवों की कल्पना ही मनुष्य को सीख देती है । कहने को मनुष्य बड़ा है पर यदि सांसारिक लोकाचार ही श्रेष्ठता की इकाई होते, तो पशु-पक्षी मनुष्य की अपेक्षा अधिक सम्माननीय और पूज्यास्पद होते । वह तो कोई और ही बातें हैं जिनके विकास से ही मनुष्य वस्तुतः प्राणीजगत् का सिरमौर हो सकता है ।

पक्षियों और कीट-पतंगों की दुनिया तो बहुत समय पहले ही मनुष्य के लिए कौतूहलपूर्ण रही है । अनेक बार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो उसे यह भ्रम हुआ है कि मनुष्य अन्य जीवों का ही विकसित रूप है । चिम्पाजी नामक बन्दर पर कई प्रयोग करके देखा गया है कि उसके रक्तकणों और मनुष्य के रक्तकणों में जबर्दस्त समानता है, यदि मनुष्य का रक्त किसी चिम्पाची के शरीर में पहुँचा दिया जाता है तो उससे किसी प्रकार की हानि नहीं होती । चिम्पाजी का गर्भाधान और गर्भ-विकास मनुष्य के समान ही होता है । 'सिमियन' जाति के इन बन्दरों में और मनुष्य के क्रिया-कलाप में तो इतना अधिक साम्य है कि पाश्चात्य वैज्ञानिक मनुष्य को ही उसी का एक विकसित रूप मानने लगे । यदि पाश्चात्यों के सिद्धान्तों को मान लिया जाए तो मनुष्य भी एक बन्दर है ऐसा कहने में उसे थोड़ा-बुरा भले ही लगे ।

कीवो, कैसोवरी, रही, मौआ, एमू, शुतुर्मुर्ग और पेन्गुइन आदि पक्षियों के जीवन का विस्तृत अध्ययन करने के बाद चार्ल्स डार्विन ने लिखा है—इन पक्षियों का गृहस्थ और पारिवारिक जीवन बड़ा सन्तुलित, समर्पित और चुस्त होता है । नर-मादा आपस में ही नहीं बच्चों के लालन-पालन में भी बड़ी सतर्कता, स्नेह और बुद्धि-कौशल से काम लेते हैं । मनुष्य जाति की तरह इनमें भी परिवार के पालन-पोषण का अधिकांश उत्तरदायित्व नर पर रहता है । मादा से शरीर में छोटा होने पर भी वह घोंसला बनाना, अण्डे सेहना और जिन दिनों मादा अण्डे सेह रही हो, उन दिनों उनके आहार की व्यवस्था करना, सद्यःप्रसूत बच्चों को सँभालने से लेकर उन्हें उड़ना सिखाकर एक स्वतन्त्र कुटुम्ब बनाकर रहने की प्रेरणा देने तक का अधिकांश कार्य नर ही करता है । वह इनकी दुश्मनों से रक्षा भी करता है ।

गृहस्थी बसाने में सम्भवतः मनुष्य को इतनी आपाधापी नहीं करनी पड़ती होगी, जितना बेचारे पेन्गुइन पक्षी को । उसके लिए पेन्गुइन दो महीने सितम्बर और फरवरी में दक्षिणी ध्रुव की यात्रा करता है । पेन्गुइन जानते हैं अपने अभिभावक अपने मार्गदर्शक के अनुशासन का पूरा-पूरा लाभ उठाने के लिए ही पेन्गुइन अपने मुखिया के चरण चिह्नों पर ही चलता है ।

ध्रुवों पर पहुँचने के बाद पुराने पेन्गुइन तो अपने पहले वर्षों के छोड़े हुए घरों में आकर रहने लगते हैं । किन्तु नवयुवक पेन्गुइन अपने माता-पिता की आज्ञा लेकर नया परिवार बनाने के लिए चल देता है । उसकी सबसे पहली आवश्यकता एक योग्य पत्नी की होती है । वह ऐसी किसी मादा को ढूँढ़ता है, जिसका विवाह न हुआ हो । अपनी विचित्र भावभंगिमा और भाषा में वह मादा से सम्बन्ध माँगता है । मनुष्य ही है जो जीवन-साथी चुनाव करते समय गुणों का ध्यान न देकर केवल धन और रूप-लावण्य को अधिक महत्व देता है, पर पेन्गुइन यह देखता है कि उसका जीवन साथी क्या उसे सुदृढ़ साहचर्य प्रदान कर सकता है ।

सम्बन्ध की याचना वह स्वयं करता है । ऐसे नहीं, उसे मालूम है जीवन में धर्मपत्नी का क्या महत्व है, इसलिए पत्नी को खुश करके । पत्नी की प्रसन्नता भी सुन्दर चिकने पत्थर होते हैं । नर चोंच में दबाकर एक सुन्दर-सा कंकड़ लेकर मादा के पास जाता है । मादा कंकड़ देखकर उसके गुणी, पुरुषार्थी एवं श्रमजीवी होने का पता लगाती है । यदि उसे नर पसन्द आ गया तो वह अपनी स्वीकृति दे देगी अन्यथा चोंच मारकर उसे भगा देगी । चोट खाया हुआ नर एक बार पुनः प्रयत्न करता है । थोड़ी दूर पर उदास-सा बैठकर इस बात की प्रतीक्षा करता है कि मादा सम्भव है तरस खाए और स्वीकृति दे दे । यदि मादा ने ठीक न समझा तो नर बेचारा कहीं और जाकर सम्बन्ध ढूँढ़ने लगता है ।

मादा की स्वीकृति मिल जाए तो पेन्गुइन की प्रसन्नता देखते ही बनती है । नाच-नाच कर आसमान सिर पर उठा लेता है । पर मादा को पता होता है । गृहस्थ परिश्रम से चलते हैं, इसीलिए वह नर को संकेत देकर घर बनाने में जुट जाती है । नर तब दूर-दूर तक जाकर कंकड़ ढूँढ़कर लाता है । मादा महल बनाती है । इस समय बेचारा नर डाँट-फटकार भी पाता है पर उसे यह पता है कि पत्नी के स्नेह और सद्भाव के सुख के आगे मीठी फटकार का कोई मूल्य नहीं । दोनों मकान बना लेते हैं । तब फिर स्नान के लिए निकलते हैं और जल की निर्मल लहरों में देर तक स्नान करते हैं । स्नान करके लौटने पर कई बार उनके बने-बनाए मकान पर कोई अन्य पेन्गुइन अधिकार जमा लेता है । दोनों पक्षों में युद्ध होता है, जो विजयी होता है वही उस मकान में रहता है । पर युद्ध के बाद भी स्नान करने जाना आवश्यक है इस बार वे पहले जैसी भूल नहीं करते । बारी-बारी से स्नान करने जाते हैं और लौटकर फिर गृहस्थ कार्य में संलग्न होते हैं । मादा अण्डे देती है पर बच्चों की पालन-प्रक्रिया नर ही पूर्ण करते हैं । पेन्गुइन की इस तरह की घटनाएँ देखकर मनुष्य भी उनकी तरह लूट-पाट और स्वार्थपूर्ण प्रवंचना में कितना अशान्त और संघर्ष रहता है । पर वह सुखी गृहस्थ के सब लक्षण भी इन पक्षियों से नहीं सीख सकता और परस्पर घर में ही लड़ता-झगड़ता रहता है । पेन्गुइन-सी सहिष्णुता भी उसमें नहीं है ।

कछुए को नृत्य करते देखने की बात तो दूर की है किसी ने उसे तेज चाल से चलते हुए भी नहीं देखा होगा पर दाम्पत्य जीवन में आबद्ध होते समय उसकी प्रसन्नता और थिरकन देखते ही बनती है । कछुआ जल में तेजी से नृत्य भी करता है और तरह-तरह के ऐसे हाव-भाव भी जिन्हें देखकर मादा भी भाव-विभोर हो उठती है । यहीं स्थिति है मगरमच्छ की । मगर भी प्रणय बेला में विलक्षण नृत्य करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

४.७४ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

मछलियों में सील मछली की दुनिया और भी विचित्र है । नर अच्छा महल बनाकर रहता है और उसमें कई-कई मादायें रखता है । नर अन्य नरों की मादाओं को हड़पने का भी प्रयत्न करते रहते हैं और इसी कारण उनमें कई बार तेज संघर्ष भी करना पड़ता है । कामुकता और बहु-विवाह की यह दुष्प्रवृत्ति मछलियों में ही नहीं शुतुर्मुर्ग और रही नामक पक्षियों में भी होती है । यह ७-८ मादाएँ तक रखते हैं फिर भी नर इतना धैर्यवान और परिश्रमी होता है कि एक-एक मादा आठ-आठ दस-दस अण्डे देती है और नर उन सबको भली प्रकार सँभाल लेता है । लगता है इनकी दुनिया ही पत्नी जुटाने और बच्चे पैदा करने के लिए होती है । इस दृष्टि से मनुष्य की कामुकता और दोष-दृष्टि को तोला जा सकता है । यदि मनुष्य भी इन दो प्रवृत्तियों तक ही अपने जीवन-क्रम को सीमित रखता है तो इसका यह अर्थ हुआ कि वह रही और सील मछलियों की ही जाति का कोई जीव है ।

कई बार तो अश्लीलता में मनुष्य सामाजिक मर्यादाओं का भी उल्लंघन कर जाता है किन्तु इन पक्षियों और प्राणियों ने अपने लिये जो विधान बना लिया होता है, उससे जरा भी विचलित नहीं होते । चींटी राजवंशी जन्तु है । उसमें रानी सर्वप्रभुता सम्पन्न होती है, वहीं अण्डे देती है और बच्चे पैदा करती है । अपने लिये मधुमक्खी की तरह वह एक ही नर का चुनाव करती है शेष चींटियाँ मजदूरी, चौकीदारी और मेहतर आदि का काम करती हैं । अपनी जिम्मेदारी प्रत्येक चींटी इस ईमानदारी से पूरी करती है कि किसी दूसरी को रत्तीभर भी शिकायत करने का अवसर न मिले, जबकि उन बेचारियों को अपने हिस्से से एक क्षण भी अधिक नहीं मिलता । लगता है सामाजिक व्यवस्था में ईमानदारी को भी श्रम और निष्ठा यह आदर्श मनुष्य ने चींटी से सीख लिया होता तो वह आज की अपेक्षा कहीं अधिक सुखी और सन्तुष्ट रहा होता पर यहाँ तो अपने स्वार्थ अपनी गरज के लिए मनुष्य अपने भाई-भतीजों को भी नहीं छोड़ता । कम तौलकर मिलावट करके कम परिश्रम में अधिक सुख की इच्छा करने वाला मनुष्य इन चींटियों से भी गया-गुजरा लगता है ।

एक बार अफ्रीका में वन्य-पशु खोजियों का एक दल हाथियों की सामाजिकता का अध्ययन करने आया । संयोग से उन्हें एक ऐसा सुरक्षित स्थान मिल गया, जहाँ से वे बड़ी आसानी से हाथियों के करतब देख सकते थे । एक दिन उन्होंने हाथियों का एक झुण्ड सबेरे से ही विलक्षण व्यूह रचना कर रहा है । कई मस्त हाथियों ने घेरा डाल रखा है । झुण्ड में जो सबसे मोटा और बलवान हाथी था वही चारों तरफ आ जा सकता था, शेष हाथी उन सबका पितामह या मुखिया था उसी के इशारे पर सब व्यवस्था चल रही थी और एक मनुष्य है जो थोड़ा ज्ञान पा जाने या प्रभुता सम्पन्न हो जाने पर भाई-भतीजों की कौन कहे परिवार के अत्यन्त सम्वेदनशील और उपयोगी अंग बाबा, माता-पिता को भी अकेला या दीन-हीन स्थिति में छोड़कर चल देता है ।

मुखिया के आदेश से ५-६ हथिनियाँ उस घेरे में दाखिल हुईं । बीच में गर्भवती हथिनी लेटी थी । सम्भवतः उसकी प्रसव पीड़ा देखकर ही हमलवरों से रक्षा के लिए हाथियों ने यह व्यूह रचना की थी । परस्पर प्रेम, आत्मीयता और निष्ठा का यह दृश्य सचमुच मनुष्य को लाभदायक प्रेरणाएँ दे सकता है, यदि मनुष्य स्वयं भी उनका परिपालन कर सकता होता ।

बच्चा हुआ, कुछ हथिनियों ने जच्चा को सँभाला, कुछ ने बच्चे को । ढाई-तीन घण्टे तक जब तक प्रसव होने के बाद से बच्चा धीरे-धीरे चलने न लगा हाथी उसी सुरक्षित स्थिति में खड़े रहे । हथिनियाँ दाई का काम करती रहीं । बच्चे और मादा के शरीर की सफाई से लेकर उन्हें खाना खिलाने तक का सारा काम कितने सहयोग और समुचित ढंग से हाथी करते हैं वह मनुष्य को देखने, सोचने-समझने और अपने जीवन में भी धारण करने के लिए अनुकरणीय है ।

पेन्गुइन पक्षी बच्चों पर कठोर नियन्त्रण रखते हैं । बड़े-बूढ़ों के नियन्त्रण के कारण बच्चे थोड़ा भी इधर-उधर नहीं जा सकते । जब शरीर और दुनियादारी में वे चुस्त और योग्य हो जाते हैं तो फिर स्वच्छन्द विचरण की आज्ञा मिल जाती है, जबकि मनुष्य ने बच्चे पैदा करना तो सीखा पर उनमें से आधे भी ऐसे नहीं होते जो सन्तान के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह इतनी कड़ाई से करते हों । अधिकांश तो यह समझना भी नहीं चाहते कि बच्चों को किस तरह योग्य नागरिक बनाया जाता है ।

थोड़ी भी परेशानी आए तो मनुष्य अपने उत्तरदायित्वों से कतराने लगता है, किन्तु अन्य जीव अपने गृहस्थ कर्त्तव्यों का पालन कितनी निष्ठा के साथ करते हैं यह देखना हो तो अफ्रीका चलना चाहिए वहाँ कीवी नाम का एक पक्षी पाया जाता है । कामाचार को वह अत्यन्त सावधानी से बरतता है, ताकि उसे कोई देख न ले । काम सम्बन्धी मर्यादाओं को ढीला छोड़ने का ही प्रतिफल है कि आज सामाजिक जीवन में अश्लीलता और फूहड़पन का सर्वत्र जोर है । कीवी को यह बात ज्ञात है और वह अपने वंश को सदैव सदाचारी देखना चाहता है । इसीलिए सहवास भी वह बिलकुल एकान्त में और उस विश्वास के साथ करता है कि वहाँ उसे कोई देखेगा नहीं । मादा जब अण्डे देने लगती है तो नर उनकी रक्षा करता है और सेहता भी है । उसे लगातार ८० दिन तक अण्डे की देखभाल करनी होती है । बच्चा पैदा होने के साथ वह जहाँ पुत्रवान होने पर गर्व अनुभव करता है, वहाँ यह प्रसन्नता भी कि अब उसे विश्राम

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिलेगा पर होता यह है कि इसी बीच मादा ने दूसरा अण्डा रख दिया होता है । बेचारे नर को फिर ८० दिन का अनुष्ठान करना पड़ जाता है । इस तरह वह कई-कई पुरश्चरण एक ही क्रम में पूरे करके अपनी निष्ठा का परिचय देता है । मनुष्य क्या उतना नैतिक हो सकता है ? इस पर विचार करें तो उत्तर निराशाजनक ही होगा ।

ऋताचार की दृष्टि से मेंढक बड़ा संयमी होता है । वसन्त ऋतु के कामोद्वेलन से उसके रक्त में गर्मी आती है किन्तु वर्षा ऋतु न आने तक वह अपना संयम भंग नहीं करता । वर्षा ऋतु में वह एक विचित्र ध्वनि से अपनी मादा को बुलाकर प्रणय निवेदन करता है । मादा की स्वीकृति से ही वह एकान्त क्रिया करता है ।

पशु-पक्षियों में पारिवारिक भावनाएँ

किसी में मानवीय उदारता की कमी देखते हैं तो उसे नरपशु कहते हैं । इसका तात्पर्य होता है भावना रहित होना । पर वास्तविकता ऐसी नहीं है । मनुष्येतर प्राणियों में भी उनके कार्यक्षेत्र में काम आने वाली उदारता समुचित मात्रा में पाई जाती है । वह उदारमना मनुष्यों के समान ही होती है । कई बार उनसे भी अधिक । बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में मनुष्य को अपनी विशिष्टता का दावा करना बेकार है क्योंकि अन्य प्राणी जिस स्तर का जीवनयापन करते हैं । उसमें काम आने वाली बुद्धि की तनिक भी कमी नहीं पाई जाती । यदि ऐसा होता तो साधनों की कमी रहते हुए भी वे इतना प्रसन्न जीवन कैसे जी लेते हैं, वह किस प्रकार सम्भव हुआ होता ?

मनुष्य को भी भगवान् ने जिस प्रयोजन के लिए बनाया है, उसके लायक ही बुद्धि प्रदान की है । उस पर उसको गर्व करना व्यर्थ है । मनुष्य जिस कारण सराहा जाता है, वह उसकी भावनाशीलता है । सहकारिता, उदारता, करुणा जैसे गुणों में मानवी गरिमा सन्निहित है । जिनमें यह संवेदनाएँ नहीं मात्र चतुरता का ही बाहुल्य है, उसी को नर-पशु की उपमा दी जाती है ।

किन्तु ध्यानपूर्वक देखा जाय तो मानवी भाव-संवेदनाओं की पशु-पक्षियों में भी कमी नहीं होती । अपने कार्य-क्षेत्र में जितनी आवश्यकता है, कई बार तो वे उससे भी अधिक सद्भावनाओं का परिचय देते हैं । सन्तान पालन के सम्बन्ध में उनका वात्सल्य और प्रयास मनुष्य की तुलना में निश्चय ही अधिक होता है ।

पशु-पक्षियों को प्रकृति ने अपना-पराया पहचानने तथा भेद करने, तदनुसार आचरण करने की विलक्षण योग्यता प्रदान की है । विभिन्न प्रयोग इसके साक्षी हैं ।

सियरा नेवादा (अमेरिका) में १४ फीट की बर्फ जम जाती है । भीषण जाड़ा पड़ता है । बेलिंग नामक गिलहरी दीर्घ शीत निद्रा के बाद बर्फ कुतरकर बाहर निकल आती है । पाल शर्मान तथा सहयोगियों के एक दल ने लगातार ९ वर्षों तक इन गिलहरियों का अध्ययन किया । करनेल विश्वविद्यालय के जीवनशास्त्र के मूर्धन्य शर्मान पता लगा रहे थे, गिलहरियाँ कैसे अपने सम्बन्धी लोगों को पहचान लेती हैं और वैसा व्यवहार करती हैं । अकेले शर्मान ही नहीं विश्व के अनेकानेक विश्वविद्यालयों के जीवशास्त्री पशु-पक्षियों की पहचान तथा तत्सम्बन्धी व्यवहार एवं पूरे खानदान की अन्तःभावनाओं पर शोध कर रहे हैं ।

प्रकृति में विशेषतः पशु-पक्षी जगत में रक्त की नजदीकी के अनुसार अच्छा या बुरा व्यवहार की परम्परा का होना एक महत्त्वपूर्ण पैरामीटर समझा जाता है । जीव-शास्त्रविदों के सामने यह प्रश्न है कि पशु-पक्षी रक्त सम्बन्ध को कैसे पहचान जाते हैं ? प्रकृति ने उसके लिए कौन-से संयन्त्र उनके पास लगाए हैं । दूसरा सवाल यह है कि पशुओं में अपना और पराया क्यों व कैसे होता है, उसे जानकर वे अपना व्यवहार कैसे परिवर्तित कर लिया करते हैं ? कौन हमारे परिवार का है और कौन बाहरी और इसके अनुसार क्यों वे अपने व्यवहार को सतत् बलदते रहते हैं ।

प्रयोग से यह देखा गया है कि गिलहरियों की मादा अपने जान की भी बाजी लगाकर अपनी बहिन तथा बेटियों को भय का संकेत देकर उन्हें बचा लेती है । मेंढकों में कुछ इतने परिवार प्रेमी होते हैं कि वे अपने ही सगे भाई बहिन के साथ घूमना पसन्द करते हैं न कि सौतेले भाई-बहन के साथ ।

मधु-मक्खियाँ अपने छत्ते में उन्हीं मक्खियों को प्रवेश करने देती हैं, जो उनके छत्ते की होती हैं । चाहे आने वाला समूह अपनों को पहचानने की जानकारी अपने पास क्यों न रखता हो ? छत्ते से बाहर वालों को तो भगा कर ही रहती हैं ।

सोशियो-बायलोजी विज्ञान शाखा के एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त का विकास ब्रिटिश बायलाजिस्ट विलियम मिल्टन ने किया है । यह सिद्धान्त है—'किन सलेक्शन' (सम्बन्धियों का चयन) ।

जमीन पर दौड़ने वाली गिलहरियों में सबसे अधिक शिकार, शिकारी पशु उन गिलहरियों का करते हैं, जो शिकारी के आगमन की जानकारी प्रसारित करती हैं । क्या कारण है कि ये गिलहरियाँ अपनी जान को खतरे में डालकर भी अपने सम्बन्धियों को सावधान कर दिया करती हैं । अनुसन्धान से पता लगा है कि यह कार्य जीन्स का है । जिसके द्वारा वह सन्ततियों को लाखों वर्षों से जीन्स मारने की प्रेरणा देता आ रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परोपकार की प्रवृत्ति पशुओं में भी पायी जाती है । इसकी पुष्टि पेरिस का निकटवर्ती कब्रिस्तान करता है, जहाँ लगभग सवा सौ ऐसे जीव-जन्तु दफनाए गए हैं, जिन्होंने अपने तुच्छ जीवन को महानता से जोड़ लिया है । प्रवेश शुल्क भुगतान कर देने के बाद ज्यों ही दर्शक कलात्मक द्वार से घुसता है, सबसे पहले उसे एक कुत्ते की मूर्ति बरबस आकृष्ट कर लेती है । इस कुत्ते ने अपने जीवन-काल में एक दो नहीं ४० ऐसे व्यक्तियों की जान बचायी जो मदद न मिलने पर मौत के घाट उतर जाते ।

कुत्ते के जीवन वृतान्त से ज्ञात है कि ऐसा परोपकारी कुत्ता 'बेरी' आल्पस के ढलान पर रहा करता था । उसका स्वामी सैलानी पर्वतारोहियों के मार्गदर्शक के रूप में काम करता था ।

आल्पस पर्वत की सुषमा शीत ऋतु में साहसी पर्वतारोहियों को अपनी ओर आकर्षित करती रहती हैं । इन साहसिक यात्रियों को सायं होते-होते अपने सुनिश्चित कैम्पों तक वापस हो जाना पड़ता है । किन्तु कभी-कभी यात्री मार्ग भूलकर या बर्फीली आँधियों के कारण भटक जाते हैं । पैर के नीचे वाली पतली बर्फ के टूटते ही नीचे खड्ड में गिर पड़ते हैं । रात्रि को तुषारापात उनकी जीवित समाधि बना देता है, जहाँ पड़ा व्यक्ति असहाय एकाकी मरने को ही बाध्य होता है ।

बेरी का शौक ही था, जो उसे भयंकर जानलेवा शीत में भी अपने गर्म कठोरी त्यागने को बाध्य करता था । प्रातः होते ही हिमशिखर की ओर सूँघते-सूँघते निकल पड़ता है । अपनी घ्राणेन्द्रियों द्वारा वह मानव-गन्ध की आहट लेता था कि कहीं कोई आफत का मारा मुसाफिर तो फँसा नहीं है । ज्यों ही उसे किसी की गन्ध लगी तुरन्त वह चीख-चीखकर अपने स्वामी के पास दौड़कर पहुँचता । मूक प्राणी के इन संकेतों की उपेक्षा उसके मालिक ने कभी नहीं की । कुत्ता जब अपने स्वामी के साथ उसी स्थान पर लौटता तो उसके संकेतों पर ज्यों ही बर्फ काटी और हटाई जाती, उसमें से लगभग मृत व्यक्ति निकाल लिए जाते । प्रारम्भिक उपचार करके उन्हें मौत से उबार लिया जाता था ।

बेरी का दैनन्दिन स्वभाव यही था जिसके बलबूते उसमें ४० आफत के मारों को पुनर्जीवित कराया । यह संयोग ही था कि अन्तिम व्यक्ति, जिसको उसने हिम- समाधि से उबारा, वह कृतघ्न निकला । बर्फ में पड़े-पड़े वह भूख के मारे इतना छटपटा रहा था कि बाहर निकलते ही उसने अपने जीवनदाता कुत्ते को ही शिकार इसलिए बना लिया ताकि उसकी क्षुधापूर्ति हो सके । उसने चालीस मानवों को बचाया लेकिन एक मानव की कृतघ्नता ने उसका जीवन अन्त कर दिया । इसी का प्रायश्चित वहाँ के नागरिक समुदाय ने उस कुत्ते की कब्र बनाकर किया है ।

कबूतर मात्र एक पक्षी ?

जून १९६१ में वाराणसी के पास मघई पुल पर रेल दुर्घटना हुई । देखते-देखते पुल उजड़ गया । सारा क्षेत्र श्मशान भूमि में परिवर्तित हो गया । तूफान में गिरे आमों की तरह लाशों का ढेर बिछ गया ।

गोरखपुर की एक फर्म का एक क्लर्क भी इस दुर्घटना में मारा गया । जब वह रेलगाड़ी में सवार हुआ था उसके साथ एक पिंजरा था जिसमें ७ पालतू कबूतर थे । क्लर्क को अपने इन मित्र-पक्षियों से बड़ा प्यार था । वह जहाँ भी जाता था उन्हें अपने साथ ही रखता था ।

आत्मा की वाणी बड़ी बलवान होती है । भावनाओं की भाषा में बोली गई वह वाणी मनुष्यों को ही प्रेरित और प्रभावित नहीं करती वरन् उससे पशु और पक्षी-कीट और पतंगे तक वश में हो जाते हैं, जहाँ तक आत्मा का विस्तार है प्रेम और प्यार की आकांक्षा सबको होती है । भले ही कोई मुँह से न बोले पर आत्मा तो उसे अनुभव कर ही लेती है ।

कबूतरों को भी अपने स्वामी से उतना ही प्रेम हो सकता है इस बात का प्रमाण उस दिन मघई पुल पर स्पष्ट देखा जा सकता था । प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता था कि जिस तरह मनुष्य की आत्मा, ईश्वर का अंश है, अन्य जीव-जन्तुओं में भी उसी प्रकार संवेदनशील आत्मा होती है । कर्मफल के कारण, अपनी लालसाओं, कामनाओं और वासनाओं के कारण जीव कौवा हो गया हो या कबूतर मनुष्य की तरह मूलभूत आकांक्षाओं से रहित वे भी नहीं होते । जीव मात्र की एकता का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है ?

जब रेल दुर्घटना हुई वह पिंजरा भी टूट गया । कबूतरों को कोई हानि नहीं हुई पर क्या वे उड़कर भाग गये । अपने साथी, सम्बन्धी परिवारीजन को कोई मनुष्य धोखा दे सकता है । पर इन पक्षियों ने वैसा करना पाप समझा होगा तभी वे मालिक की लाश छोड़कर हटे नहीं । दुर्घटना हो जाने के ६० घण्टे बाद तक वे शव के निकट ही बैठे रहे ।

अगले दिन जब क्लर्क का शव हटाने के लिए लोग पहुँचे तो दुःखी कबूतरों ने एक साथ मिलकर उन पर चोंचों से प्रहार कर अद्भुत स्वामिभक्ति का परिचय दिया । कई लोगों ने उन्हें लालच देकर अलग करना भी चाहा पर कबूतर अपने स्थान से हटे नहीं ।

लोगों ने उन्हें चुगने के लिए दाने डाले, पर कबूतर वहाँ से तिल भर न हिले । भूखे बैठे मानो सन्देश देते रहे कि मनुष्य अपने माता-पिता, पुत्र- पड़ोसी और समाज के प्रति अपने प्यार और कर्तव्य को भूले नहीं और नहीं तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम जिसके आश्रय में पल रहे हैं, कम से कम उसके प्रति तो कभी कृतघ्न भाव न रखें ।

बड़ी कठिनाई से क्लर्क के घर वालों ने कबूतरों को गोद में लिया, तभी वह शव वहाँ से उठाया गया । इस दुर्घटना से लोगों में जितनी करुणा जाग्रत हुई थी, उससे सौ गुनी अधिक प्रेरणा लोगों को इन कबूतरों से मिली । कई दिन तक वे लोगों को आत्मा के प्रति आत्मा के प्रेम और कर्तव्य का पाठ पढ़ाते रहे । यह घटना २४ जून के नवभारत टाइम्स तथा दूसरे अखबारों में भी छपी थी पर लोग उसे आज भी उसी श्रद्धा से याद करते हैं ।

कछुए में भी उदार सहायता की भावना

अखबार में छपी एक घटना के अनुसार देखने में आया कि पशुओं में भी मनुष्यों जैसी भावनाएँ तथा क्रियाकलाप पाए जा सकते हैं ।

एक व्यापारी जहाज से प्रशान्त महासागर में चला जा रहा था । सब अपने-अपने कार्यों में व्यस्त थे । तभी पता नहीं किस प्रकार उसमें यात्रा कर रहा एक दक्षिण कोरियाई नौ सैनिक डेक पर से समुद्र में गिर पड़ा । उसका नाम चुङ्गनेम किम बताया जाता है । आयु केवल सत्ताईस वर्ष थी ।

जहाज आगे निकल गया किसी की भी दृष्टि इस ओर नहीं गई । अब किम के हृदय पर क्या बीती होगी ? सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है । चारों ओर जल ही जल । ऊपर विस्तृत नील-गगन और नीचे सागर की असीम गहराई । मौत सामने खड़ी मुस्करा रही थी । उसे गले से लगा लेने को ।

वह कुछ देर तैरता रहा । जीवन भी कम शक्तिशाली नहीं होता । अन्तिम श्वास तक तथा प्रयासों की सीमा के चरम बिन्दु तक आशा का प्रकाश फैला रहता है ।

कुछ देर पश्चात् अपने पास एक कुछ कठोर वस्तु-सी आई-ऐसी अनुभूति हुई उसे । एक क्षण को लगा, पता नहीं कौन-सा समुद्री जीव है ? किन्तु शीघ्र ही समझ में आ गया कि यह कछुआ है । निरन्तर तैरत-तैरते वह काफी थक चुका था । अतः सहारे के लिए उसने अपना एक हाथ कछुए की पीठ पर रख लिया । ऐसा करने से बड़ी राहत मिली उसे । थकान कुछ कम हुई ।

और कछुआ ? वह बड़े आराम से किम के साथ-साथ ही तैरता रहा । जब एक हाथ रखे-रखे वह थक जाता तो दूसरा हाथ रख देता । कछुए को इसमें कोई आपत्ति न होती । जैसे वह कह रहा हो 'इस संकट के समय में, मैं तुम्हारा सहचर तथा सहयोगी बनकर आया हूँ ।'

तभी दूर से एक अन्य जहाज आता दिखाई दिया । किम की जान आई । यह स्वीडन का एक मालवाही जहाज था जो लास एन्जिल्स जा रहा था । इस जहाज के नौ सैनिकों ने उसे देख लिया और प्रयत्न करके निकाल लिया ।

बचाने वाले सैनिकों का कथन है कि "किम एक कछुए की पीठ पर हाथ रखे तैर रहा था ।"

एक सैनिक ने किम के फोटो भी लिये ऐसा बताया जाता है । जहाज पर पहुँचने के पश्चात् उसने सभी सारी कहानी वहाँ के अधिकारियों को बताई ।

यों सदा से मृत्यु ही जीवन से बड़ी तथा सशक्त मानी जाती रही है, किन्तु कभी-कभी जीवन भी असाधारण तरीकों से मृत्यु पर विजय पा लेता है ।

कछुए जैसा जानवर ! जो निरन्तर पानी में ही रहता है । धरती पर रहने वाले मनुष्य के प्रति कैसी भावनाशीलता ? कैसा परिचय ?

गाय, घोड़ा, कुत्ता, बिल्ली आदि जानवरों द्वारा वफादारी तथा सहायता के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं । पर ये फिर भी स्वाभाविक कहे जा सकते हैं, क्योंकि ये सारे ही पशु निरन्तर मनुष्यों के बीच ही रहते हैं और उनके विषय में पर्याप्त जानकारी रखते हैं । उनके संकेतों तथा भावनाओं को ग्रहण कर सकते हैं ।

किन्तु उपरोक्त उदाहरण वास्तव में ही असाधारण हैं । इससे यह प्रमाणित होता है कि वास्तव में ही प्राणिमात्र में ईश्वर की एक ही सत्ता कार्य कर रही है । एक ही आत्म-तत्व व्याप्त है, जो कभी-कभी स्पष्ट परिलक्षित हो उठता है ।

भेड़ियों द्वारा पाले गये मनुष्य के बच्चे

जिनका सीधा सम्पर्क मनुष्य से ही पड़ता, वे वन्य जीवों का शिकार तो अपने ढंग से कर लेते हैं, पर मनुष्य स्तर की धूर्तता से अभ्यस्त नहीं होते । उनमें वात्सल्य भी पाया जाता है और छोटी आयु के बच्चे किसी प्रकार उनके सम्पर्क में आ जाते हैं, तो उन्हें भी अपना ही समझकर पाल लेते हैं । खतरा उन्हें बड़ी उम्र वालों से होता है और इसलिए उन पर आक्रमण कर बैठते हैं कि कहीं वे उन पर घात न लगाए हुए हों ।

जंगलों में एकाकी रहने वाली तपस्वियों का वास्ता जंगली जीव-जन्तुओं से ही पड़ता है । दोनों आपस में पहचान लेते हैं इतना ही नहीं प्रवृत्ति को भी भाँप लेते हैं कि यहाँ खतरे जैसी कोई बात नहीं है । इतना निश्चय हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाने पर दोनों पक्षों में से कोई किसी पर आक्रमण की योजना नहीं बनाता । अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं और यदि स्नेह, सहयोग का सिलसिला चल पड़े तो एक-दूसरे के लिए उपयोगी भी सिद्ध होते हैं ।

भेड़ियों के सम्बन्ध में यह बात विशेष रूप से कही जाती है कि वे कुत्ते की बिरादरी से मिलते-जुलते होने के कारण मनुष्य के साथ सद्भावना और बिरादरी का रिश्ता जोड़ लेते हैं । कुत्ता मनुष्य का सबसे अधिक वफादार साथी है इसे सभी जानते हैं ।

भेड़ियों द्वारा मनुष्यों के बच्चे अपनी माँद से पाल लेने की कितनी ही घटनाएँ जानकारी में आई हैं । यह उदारता मादा द्वारा बरती गई होती है । वह मनुष्य के बच्चों को भी अपने बच्चे की तरह दूध पिलाकर पाल लेती है और उसकी सुरक्षा भी रखती है । नर भेड़िये अक्सर उपेक्षा बरतते हैं, फिर भी साथ रहने वाली मादा के कार्य में विघ्न नहीं डालते । कुछ दिन में नर भेड़िये भी उन बच्चों को अपने ही कुटुम्ब का सदस्य मान लेते हैं ।

मिदनापुर बंगाल की घटना है कि वहाँ अदिवासी क्षेत्र में ईसाइयों का एक छोटा चर्च था । उसमें एक पादरी रहता था जान पेवेण्ड । उसका काम पहाड़ी क्षेत्र में फैले हुए आदिवासियों के साथ सम्पर्क साधना और उन्हें ईसाई धर्म में दीक्षित करना था ।

एक बार जान पहाड़ी क्षेत्र में भ्रमण कार्यक्रम पर जा रहा था । साथ में दो एंग्लोइण्डियन अतिथि भी थे, जो शिकार खेलने के उद्देश्य से उधर आए थे । तीनों को पता चला कि ऊपर वाली पहाड़ी पर एक भेड़ियों की माँद है । उसमें एक पूरा झुण्ड रहता है । उनके साथ दो मनुष्य के बालक भी हैं । भेड़ियों का शिकार करने और मनुष्य बालकों को पकड़ने की उन्होंने योजना बनाई और पहाड़ी पर चढ़ गए । शाम को झुण्ड अपनी माँद में घुसा तो उसने वैसा ही देखा जैसा कि आदिवासियों ने कहा था । अब उनकी योजना निश्चित हो गई ।

दूसरे दिन पड़ोस के आदिवासियों को मजूरी पर लिया और माँद की खुदाई का काम शुरू किया । खुदाई ज्यादा गहरी नहीं हो पाई थी कि बड़े दो भेड़िये भागे और घने जंगल में गायब हो गए । तीसरा भेड़िया निकला तो उसे शिकारियों ने गोली से मार गिराया । खुदाई फिर भी चलती रही । माँद में अन्त में दो छोटे बच्चे भेड़ियों के और दो मानुषी के पाए गए । चारों सटे हुए बैठे थे । उन्हें मारा नहीं गया । भेड़िये बच्चों को आदिवासी ले गये । मनुष्य वालों को ईसाई पादरी ने उठा लिया और चर्च के अनाथालय में ले चले ।

बच्चों में दोनों लड़िकयाँ थीं । एक आठ वर्ष की, दूसरी तीन वर्ष की । छोटी बुद्धि की दृष्टि से कुछ तीव्र थी । बड़ी उसी को अपनी मार्ग-दर्शक मानती थी उसके पीछे चलती और अनुकरण करती थी ।

मनुष्य की आदतें सिखाने में उन्हें प्रायः दो वर्ष लग गये, पर कपड़े पहनना और मनुष्य के बच्चों के साथ खेलना सीख गई थी । उन्होंने प्रायः ५०-६० शब्द मनुष्य की भाषा के सीख भी लिए थे । फिर भी वे मनुष्य बुद्धि जैसी तीव्रता न अपना सकी । पूर्ण वयस्क होने से पहले ही थोड़े-थोड़े अन्तर पर दोनों का देहावसान हो गया ।

दोष मत दीजिये 'कैच' ठीक कीजिए

सन् १९४० की बात है । अमेरिका की मिनीसोटा यूनिवर्सिटी में दो छात्र अध्ययन के लिए प्रविष्ट हुए । छात्र थे श्री केलर और छात्रा का नाम था कुमारी मेरियन । मनोविज्ञान सम्भवतः सृष्टि का सर्वोपरि जटिल विषय है । फ्रायड की तरह पूर्वाग्रह ग्रस्त हों तब तो प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान भी लोगों को दिक्भ्रान्त करके छोड़ेगा, पर तथ्यान्वेषण का गुण किसी में सच्चाई से जाग्रत हुआ हो, भारतीय संस्कृति के प्रत्येक पक्ष—पहलू को प्रत्येक कसौटी पर सत्य-सिद्ध देखा जा सकता है ।

विद्यार्थी जीवन में श्री केलर और कुमारी मेरियन में सिद्धान्तनिष्ठ घनिष्टता बढ़ने लगी । दोनों अनेक गूढ़ मनोवैज्ञानिक तथ्यों पर परामर्श किया करते । दोनों ने कोई बड़ा कार्य करने का निश्चय किया । इन्द्रियजन्य दुर्बलता ने कई बार उन्हें भी घेरे में लेने का प्रयत्न किया किन्तु उन्होंने मनुष्य जाति को इस शाश्वत दर्शन मनुष्य न तो भला है न बुरा, वह जैसा भी कुछ है वातावरण की प्रशिक्षण की देन है, परिचय कराने का संकल्प ले लिया था । अतएव उन्होंने उस पाश से अपने को मुक्त रखा ।

संकल्प-जयी और इन्द्रिय निग्रही व्यक्ति ही कुछ असाधारण करने का श्रेय प्राप्त करते हैं । इस निश्चय के साथ उन्होंने अमेरिका के अर्कन्सास में २६० एकड़ की एक विलक्षण पाठशाला बनाई । लोक-मर्यादा की दृष्टि से उन्होंने परस्पर विवाह भी कर लिया । सन्तान भी उत्पन्न की किन्तु इतनी नहीं कि एक बच्चे को माता-पिता के प्यार के लिए दूसरे के प्रति ईर्ष्या का शिकार होने पड़ा हो । उसकी अपेक्षा उन्होंने इस फार्म में परलोक जैसा स्वरूप प्रदान किया । विभिन्न श्रेणी के लगभग ५००० जीव-जन्तुओं की उन्होंने पाठशाला स्थापित की और प्रारम्भ से ही उनके शिक्षण का कार्य प्रारम्भ कर यह दिखाया कि मनुष्य और पशु-पक्षियों में जन्म-जात अन्तर कुछ भी नहीं है—दोनों से एक-सी चेतना विद्यमान है, उसे चाहे जिस वातावरण में गलाया और ढाला जा सकता है । अपने बच्चों पर ही नहीं समूची मनुष्य जाति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर दुर्गुणी होने का दोष लगाने वाले से यह पूछा जाना चाहिये कि उसने संस्कारवान् जीवन की संरचना के लिए कुछ प्रयत्न किया क्या ? यदि नहीं तो उसे छिद्रान्वेषण का कतई अधिकारी नहीं । प्रयत्न और प्रशिक्षणविहीन वातावरण में ढले व्यक्ति भी पशु प्रवृत्ति में जकड़े रहे तो इसके लिए वही दोषी नहीं अपराधी वह है जिन्होंने उन्हें जन्म दिया वातावरण दिया ।

ब्रेलैण्ड दम्पत्ति के इस फार्म में लोमड़ी, गिलहरी, बिल्ली, चूहे, चूजे, नेवले, सूअर, बन्दर आदि विभिन्न स्वभाव, आहार-विहार और अभिरुचि वाले जीव-जन्तुओं की भर्ती प्रारम्भ की । उनकी नियमित कक्षाएँ चलने लगीं । इन दिनों इसने विश्वविद्यालय का-सा रूप ले लिया और उसमें रह रहे जीवों की संख्या दस हजार से ऊपर हो गई। प्रशिक्षण के विषयों में जहाँ उनकी बौद्धिक प्रतिभा का विकास सम्मिलित है, वहीं उनके प्रकृतिजन्य स्वभाव के ठीक विपरीत उन गुणों का सम्वर्द्धन भी सम्मिलित है, जो जीव विशेष की प्रकृति से बिलकुल भिन्न और विलक्षण हो ।

उनके कार्य में आप देखेंगे कि घरेलू नौकर के सभी कार्य उनके प्रशिक्षित पशु करते हैं, जिसकी आपको कल्पना तक न हो । उदाहरणार्थ, प्रशिक्षित सुअरियाँ उनके गन्दे कपड़े इकट्ठे करके लान्ड्री में धुलने के लिए डाल आती हैं । उनकी चौकीदार का काम जो सामान्यतः कुत्ते करते हैं, वह काम एक भेड़ करती है, उसको ऐसा प्रशिक्षित किया गया मानो वह कुत्ता ही हो । जैसा कुत्ता मनुष्य के साथ-साथ खाता है, वैसे ही भेड़ ब्रेलैण्ड दम्पत्ति के साथ खाती है । उन्होंने लोमड़ी को ट्रेण्ड किया जो अंगूरों के लिए उछला करती है । (पीरपायज) मछलियों को 'कैच' करना सिखाया नेवले को गेंद फेंकना सिखाया और खरगोश को बच्चों वाली बैंक में पैसे डालना सिखाया । रूस के प्रसिद्ध मनोविज्ञानी पैवलाव के कन्डीशन्ड रेंफलेक्स सिद्धात का उपयोग प्राणियों को प्रशिक्षित करने में किया जाता है ।

ब्रेलैण्ड ने एक स्व-संचालित 'फीडर' बनाया । बटन दबाने से घण्टी बजती है और उसके साथ-साथ कुछ खाने की चीज निकलती है । घण्टी बजते ही खाने की वस्तु मिलना—इन दो चीजों की चूजों के दिमाग में ताल बैठाना पहला काम है । चूजों को बोतल के पास जाकर टक-टक करना सिखाने के लिए उन्हें पहले घण्टी बजाई- खाना निकाला और चिकेन भागकर खाना खाने गया उसे कुछ और चाहिये था इसलिए वह ठहर गया जैसे ही वापस होने के लिए मुड़ा, बटन दबा दिया और वह दुबारा कुछ अधिक पग चला तो बटन दबाया और क्रमशः इसी प्रकार बोतल की ओर चलने की बात उसके दिमाग में बैठाई गई । इस प्रयोग से 'चिकेन' के मस्तिष्क में यह बात जमाई गई कि खाना अचानक नहीं मिलता, विशेष प्रकार का काम करने से मिलता है । आखिर में यह बोतल तक पहुँचने के बाद जैसा कि उसका स्वभाव होता है, बोतल पर एक बार टक करने पर खाना दिया गया, फिर दो बार टक करने पर खाना दिया गया । १५ मिनट तक प्रयास करने के बाद खाली बोतल को देखते ही उसको खाना मिलेगा । यह बात उसके दिमाग में बैठ गई और जब तक बोतल के पास जाकर इच्छित संख्या में टक-टक न कर लेता तब तक उसे चैन नहीं मिलता था ।

प्राणियों को प्रशिक्षित करने में सफलता प्राप्त करने का यह मूल सिद्धान्त है । फिर तो चिड़ियाघरों में, मेलों में प्रदर्शनियों में एवं टेलीविजन पर कार्यक्रम देने के लिए ब्रेलैण्ड दम्पत्ति को बुलाया जाने लगा और अन्ततः उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की ।

ब्रेलैण्ड दम्पत्ति ने विभिन्न प्राणियों के साथ किये गये विभिन्न परीक्षण से यह पता लगाया है कि मनुष्य की अपेक्षा अन्य प्राणी बुद्धि तत्व का विकास न होने पर भी चतुरता में पीछे नहीं हैं। अगर पशुओं के प्रशिक्षित करने से उनकी प्रसुप्त क्षमता उभर सकती है तो मनुष्य की प्रसुप्त शक्तियों की जागरूकता की कितनी अकल्प्य सम्भावना हो सकती है ।

रीडर्स डाइजेस्ट के नवम्बर १९४७ अंक में इस विलक्षण पाठशाला के प्रत्यक्षदर्शी जर्मन विद्वान इराबुलफर्ट ने अपनी साक्ष प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि धरती का हर व्यक्ति न्यूटन, आइन्स्टीन, हम्फीडैवी, यूक्लिड मडाम क्यूरी नील्सवोहर और कूले जैसा वैज्ञानिक, नैपोलियन, बोनापोर्ट, नेल्सन, राणाप्रताप, शिवाजी और जान आफ आर्क की तरह का देशभक्त, वीर योद्धा, सुकरात नीत्से सन्त फ्रान्सिस अरस्तू, जरथुस्तु, कन्फ्यूसस, इमर्सन, स्वाइत्जर, बुद्ध, ईसा और महात्मा गाँधी जैसा विचारक, कालिदास, शेक्सपियर और बैंजामिन फ्रैंकलिन जैसा साहित्यकार बन सकता है। तथ्य एक ही है, कि उसे प्रशिक्षण मिले-वातावरण मिले—इस सत्य को यह अजायबघर देखकर कोई भी स्वीकार से इन्कार न करेगा ।

मैंने एक सफेद, स्वस्थ एवं सुन्दर चूजे से पूछा, २१ को ७६ से भाग देने पर क्या मिलता है ? उसने अपनी चोंच से तीन बार टक-टक करके उत्तर दिया '३' ।

दूसरा प्रश्न पूछा गया कि १६ का वर्गमूल कितना होता है, टक-टक से जबाव मिला- चार । आप सोचेंगे कि क्या यह बुद्धिमान चूजा था ? यहीं यह तो एक ट्रिक है । आश्चर्य की बात तो यह है कि चूजे को यह बात सिखाने के लिए मुझे केवल १५ मिनट लगे। ऐसा केलर मेरियन ब्रेलैण्ड दम्पत्ति पशु-शिक्षक ने कहा है । पिछले १० वर्षों में उन्होंने २८ विभिन्न जातियों के ५००० पशुओं को प्रशिक्षित किया है । ऐसे करते हुए उन्होंने पशु मनोविज्ञान के अनेकों तथ्य खोजे हैं, जिनका उपयोग करके कोई भी अपने पालतू पशुओं को ही नहीं मनुष्य को भी प्रशिक्षित कर सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस तथ्य का ठीक विरोधी पक्ष यह है कि यदि मनुष्य को वातावरण ही पशुओं का-सा मिले तब तो वह वैसा बनेगा ही । सन् १८४७ में उत्तर-प्रदेश के बुलन्दशहर जिले के जंगलों में एक शिकारी दल ने लगभग ८ वर्षीय बालक दीना शनीचर पकड़ा था । शनिवार के दिन पकड़े जाने के कारण उसको 'दीना शनीचर' के नाम से सम्बोधित किया गया । उसे आगरा के समीप सिकन्दरा के ईसाई मिशन अनाथालय में ले जाया गया । १८७३ में भारतीय भू-सर्वेक्षण के वैज्ञानिक बी. बाल ने उसका पूरी तरह निरीक्षण किया तथा उसके क्रियाकलाप भेड़िये जैसे पाए । बहुत प्रयास करने पर भी वह लिखना, पढ़ना, बोलना नहीं सीख सका । २९ अक्टूबर, १८९५ को टी. बी. रोग से उसकी मृत्यु हो गई ।

मथुरा के जंगलों में एक अंग्रेज अधिकारी 'टामस स्मिथ' १९०५ ई. 'मानसिंह' नामक एक अद्भुत भेड़िया बालक को भेड़ियों के चंगुल से निकाला था । वह बहुत कठिनाई से सामान्य जीवन जीना सीख पाया, कुछ शब्द भी वह बोलने लगा था । बहुत प्रयत्न करने पर वह कुछ गीत भी गाने लगा था किन्तु अन्ततः वह पूर्ण मनुष्य नहीं बन पाया, जीवन की काफी अवधि तक रहने पर १९६० में ६५ वर्ष की आयु में अलीगढ़ के समीप बन्ना देवी मुहल्ले में रेवरेड नोबल डेविस के यहाँ उसकी मृत्यु हो गई ।

इसी प्रकार आगरा जिले के नगला नामक गाँव के बाबूलाल जाधव के डेढ़ वर्ष के 'परशुराम' नाम के बच्चे को मई १९५० में भेड़िये उठा ले गए थे । अप्रैल १९५७ में उत्तरप्रदेश के खंदौली के जंगलों में सैनिकों ने उसे पकड़कर फिरोजाबाद अस्पताल में भर्ती करा दिया था । शिकागो विश्वविद्यालय के प्रो. विलियन एफ. ओगबर्न ने 'परशुराम' की जाँच करके बताया कि मादा भेड़िया अपने बच्चों के खो जाने या मर जाने के कारण वात्सल्य भावना की तृप्ति के लिए उसका पोषण करने लगी । उसकी चिकित्सा के लिए उन्होंने सुझाव दिया परन्तु परशुराम के माता-पिता ने अस्वीकार कर दिया तथा १९६० में ही उसकी भी चेचक से मृत्यु हो गई ।

सन् १९५४ में लखनऊ के सरकारी अस्पताल के 'रामू' नामक भेड़िया बालक को विश्वभर के लोगों का आकर्षण केन्द्र बन गया । लन्दन स्कूल ऑफ ट्रॉपिकल मेडीशिन के सर फिलिप मेन्सन बार ने 'रामू' की अच्छी तरह जाँच करके बताया कि उसमें भेड़िये के गुण और लक्षण थे तथा उसे मानवी संस्कार दिया जाना सम्भव न हो सका । मिरगी के दौरों से अप्रैल १९६८ में वह मृत्यु का ग्रास बन गया ।

अभी कुछ दिन पहले लखनऊ के मदर टेरेसा के 'होम फार ड्राइंग इन्स्टीट्यूट' में 'भालू' नामक एक जंगली बालक सुल्तानपुर के जंगलों से पकड़कर लाया गया । मदर टेरेसा के 'प्रेस निवास' में उस भालू बालक का नाम 'पास्कल' रख लिया गया है । प्रारम्भ में वह भालू जैसे विचित्र ढंग से चलता था और गुर्राता था, परन्तु अब वह नौ वर्षीय पास्कल दाल-भात खाने लगा है तथा कपड़े भी पहनना पसन्द करने लगा है । कहा जाता है कि इस अनाथ बालक को वात्सल्य भावनामयी मादा भालू ने अपना स्तन-पान कराके पाला । यही बालक आज नोबुल पुरस्कार प्राप्त मदर टेरेसा के आश्रम के प्रांगण से उछलता-कूदता खेलता है ।

कुछ भी हो भेड़िये, भालू भी वात्सल्य स्नेह-दुलार से रहित नहीं है । वर्तमान में मनुष्य ही इन दिव्य भावनाओं से रिक्त होता जा रहा है तथा अपनी मानवीय गरिमा को खोता जा रहा है ।

दक्षिण और वाम जीवन के दोनों ही पक्ष हैं। दोनों की जिम्मेदारी आज के मनुष्य समाज पर है, वह चाहे तो दैवी प्रकृति के मनुष्य विकसित करने वाला संस्कार-सम्पन्न वातावरण भी बना सकता है और अपराधी-आसुरी परिस्थितियाँ भी । यह अलग बात कि उसवा अच्छा-बुरा परिणाम भी उसे और आने वाली पीढ़ी को भुगतना ही पड़ेगा । अच्छा हो ब्रेलैण्ड दम्पत्ति की तरह हम भी आने वाली पीढ़ी को सुयोग्य नागरिक बनाने का महान कार्य सम्पन्न कर आज की नारकीय परिस्थितियों को स्वर्गीय वातावरण में बदलने का पुण्य प्राप्त करें ।

कुछ दिन पशुओं के बीच रहिए

हेम्बर्ग (प. जर्मनी) की अदालत के विद्वान जज के तलाक के लिए मुकदमे में प्रार्थी दम्पत्ति को कुछ दिन तक चिड़ियाघर में पशुओं के बीच रहने की सजा सुनाई । यह समाचार सर्वत्र कौतूहल और मुस्कान के साथ सुना गया ।

पर सही बात यह है कि इस फैसले के पीछे न्यायाधीश की मनुष्य की वर्तमान स्थिति के प्रति गहरी सम्वेदना और सहानुभूति की गहराई और गम्भीरता है, उसे बहुत कम लोगों ने अनुभव किया । कदाचित लोग उस दर्द को समझ पाते और उसके अनुसार अपनी मनोवृत्तियाँ बदलने का प्रयास करते तो मनुष्य समाज को एक नई व्यवस्था और प्रकाश मिलता ।

झगड़ा २६ वर्षीय फिट्ज गियर और उसकी पत्नी एल्सा के बीच का था । उन्हें विवाह किये हुए अभी थोड़े दिन ही हुए थे कि परस्पर खींचा-तानी और मनमुटाव रहने लगा । नौबत यहाँ तक आई कि तलाक के लिए अदालत की शरण ले ली । यह स्थिति आज पिच्चासी फीसदी दाम्पत्य जीवनों में स्पष्टतः देखी जा सकती है । विवाह के थोड़े दिन बाद तक ही आकर्षण रहता है । बाद में तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पति-पत्नियों के जीवन इतने कटु हो जाते हैं कि जीवन की गाड़ी खींचना कठिन हो जाता है ।

यह समस्या मनुष्य समाज के लिए खाद्य समस्या से बहुत अधिक बढ़कर घातक है । इससे भावी पीढ़ियाँ उद्धत उच्छृंखल बनती और नैतिक दृष्टि से गिरती चली जाएँगी । माता-पिता की परस्पर कटुता बच्चों के लिए सबसे अधिक घातक होती है ।

जज ने अपने निर्णय से उन परिस्थितियों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि मनुष्य को बुद्धि तो है, पर यह बुद्धि स्वार्थ और वासना की पूर्ति में ही प्रयुक्त होती रहती है । पति-पत्नियों में एक-दूसरे के प्रति प्रायः स्नेह, आदर, उत्सर्ग और सेवा का भाव नहीं होता । यह अनुदारता दाम्पत्य जीवन में कलह का कारण बनती है । पत्नी की कामनाएँ पूर्ण न होतीं तो वह परिस्थितियों पर बिना विचार किए उसे अपनी प्रति की गई उपेक्षा मान लेती है और रुष्ट हो जाती है । पुरुषों में इतना धैर्य नहीं होता है कि उत्तेजित हुए बिना परिस्थिति का सुलझाव, सद्भावनापूर्वक करें । जब एक-दूसरे के लिए कर्तव्य-भाव नहीं रहता तो झगड़े होंगे ही ।

न्यायाधीश का कहना था । मनुष्य विचार और आत्मा से कोई नई बात सीख लेता ऐसा सम्भव नहीं लगता है, पर अभी तक पशु-पक्षियों में इतनी नैतिकता बनी है कि वे बुद्धिहीन होकर भी जोड़े का जीवन बहुत प्रेम और मर्यादा-पूर्वक जी लेते हैं । चिड़ियाघर में मिलाए गए जोड़े भी हँसी-खुशी और प्रेम की जिन्दगी जीते हैं, उनको न बाह्य साधनों की आवश्यकता होती है, न कामनाओं की बाढ़ सताती है । थोड़े में ही मस्ती का जीवन बिताते हैं, कोई अभाव होता भी है तो उसके लिए दाम्पत्य को दोषी न ठहराकर परस्पर हिल-मिलकर परिस्थिति सुधार लेते हैं । फिट्ज रियर और एल्सा के जीवन में किसी बाहरी परिस्थिति का ऐसा दबाव नहीं है कि परस्पर झगड़ा हो। यदि कुछ है तो इतना ही कि उन्हें आत्मा के गुणों और परमात्मा के आदेशों का ध्यान नहीं है । अन्तःकरण के हित का ध्यान न होने के कारण ही इनमें मनमुटाव रहता है, कुछ दिन चिड़ियाघर में रहेंगे तो इन्हें यह सोचने-समझने का अवसर तो मिलेगा कि जब पशु-पक्षी प्रेम और दया, सेवा और सद्भावना का जीवन व्यतीत कर सकते हैं तब मनुष्य के सामने ऐसी कौन-सी बाधा है कि वह ऐसा व्यवहार बहुत आत्मीय सम्बन्धियों के साथ भी नहीं कर सकता ।

पारिवारिकता वस्तुतः मनुष्य के विचारवान तथा भावनाशील होने का सबसे बड़ा उदाहरण है । यह संयम और सहिष्णुता की ऐसी पाठशाला है, जहाँ से व्यक्ति तृष्णा-वासना, अहंता के मानवीय दुर्गुणों को दूर भगाने का अभ्यास करता है । सृष्टि का सौरभ समाज की शान्ति सुव्यवस्था का आधार ही यह है कि मनुष्य स्वयं का जितना ध्यान रखे उतना ही दूसरों का भी परिवार इस आदर्श के परिपालन की इकाई है । खेद है कि आज का इन्सान इस मानवीय सद्भावना से निरन्तर वंचित होता जा रहा है । जबकि अशिक्षित, उद्दण्ड और स्वार्थी समझे जाने वाले इतर जीवों में यह भावनाएँ अत्यन्त गहराई तक देखने को मिलती हैं । कुछ जीवों में तो स्नेहपूर्ण आत्मदान की ऐसी सजीव परम्पराएँ देखने को मिलती हैं कि हृदय छलक उठता है दम्भी मनुष्य का सिर लज्जा से झुक जाता है ।

डॉ० इराउर्ल्फट ने अन्टार्टिक प्रदेश की यात्राओं के जो रोचक वर्णन प्रस्तुत किए हैं, उनमें यह प्रसंग बड़ी मार्मिकता के साथ उभारा गया है । उन्होंने एडला पेन्गुइन पक्षी के पारिवारिक सौहार्द्र का चित्रण करते हुए लिखा है कि पेन्गुइन समुद्र में रहते हैं । दक्षिणी ध्रुव प्रदेश होने के कारण यहाँ का समुद्र ८-८ फीट मोटी बर्फ की चादरों से ढका रहता है पेन्गुइन उसमें ३० मील प्रति घण्टे की गति से फिसलकर चल लेते हैं । समुद्र में उन्हें कीड़े-मकोड़े, सेवार जो कुछ मिल जाता है उसी से वे अपना उदर पोषण करते रहते हैं ।

अण्डे देने और बच्चे सेने के लिए यह पक्षी गोल पत्थरों से एक विलक्षण घोंसला बनाते हैं । जिसे 'रुकरी' कहा जाता है । मादा को जब भी अण्डे देने होते हैं, वह इसी रुकरी में चली जाती है । आहार व्यवस्था कठिन होने के कारण इन प्रसवकाल के लिए संग्रह सम्भव नहीं हो पाता, जबकि प्रसव के बाद मादा को न केवल क्षुधा सताती है अपितु शरीर में निर्बलता भी आ जाती है । यह स्थिति कब तक आएगी, नर एडली (पेन्गुइन) को उसका अनुमान रहता है । वह ठीक समय पर मादा के पास पहुँच जाता है । जिस समय परिवार का कोई भी सदस्य आता है । मेजमान पेन्गुइन अपने स्थान से उछलकर आगे बढ़ती और चोंच और गर्दन हिलाती हुई तथा ग- ग- ग- ग- ग उच्चारण करती हुई भाव-विभोर होकर उसका स्वागत करती है ।

पेन्गुइन को कई बार ६ सप्ताह तक बिना आहार अपने बच्चों के पोषण और सुरक्षा में बिताना पड़ता है । इतने दिनों में शारीरिक स्थिति कितनी चिन्ताजनक हो जाती होगी । सप्ताह में एक भी दिन निराहार न रहने वाला मनुष्य उसे भली-भाँति अनुभव कर सकता है, इसका अर्थ यह हुआ कि जीव-जन्तुओं में कई गुनी अधिक सहिष्णुता हुई, जबकि होना इससे उल्टा चाहिए ।

विद्वान न्यायाधीश का इस निर्णय के पीछे यही मन्तव्य रहा है यदि मनुष्य स्वयं विचार नहीं कर सकता तो कम से कम वह अपने इन छोटे कहे जाने वाले भाइयों से सीख तो सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम सब एक-दूसरे पर निर्भर

अपनापन विकसित कीजिए

कितने लोग कहाँ इकट्ठे होते हैं, इसका कोई महत्व नहीं । भीड़ तो सदा अड़चन, गन्दगी और अव्यवस्था ही उत्पन्न करती है । मेलों-ठेलों में अधिक लोग जमा होते हैं, पर इससे कुछ प्रयोजन सिद्ध नहीं होता । इसके विपरीत जहाँ थोड़े-से लोग भी पारस्परिक सहयोगपूर्वक आदान-प्रदान करने और किसी निर्धारित लक्ष्य की ओर मिल-जुलकर चलने के लिए एकत्रित होते हैं, वे सम्मेलन जो निश्चय करते हैं उनके दूरगामी परिणाम उत्पन्न होते हैं । बड़ी संख्या में जमा होते हुए भी यदि लोगों में स्नेह, सहयोग और सामंजस्य नहीं है तो वे सभी अपने आपको एकाकी अनुभव करते रहेंगे । जहाँ घनिष्टता की मन:स्थिति होगी, एक-दूसरे के दु:ख-सुख में सहायक बनकर रहे होंगे—जिनमें एक-दूसरे के हित साधन और कष्ट निवारण में जितना उत्साह होगा उनमें उतनी ही प्रसन्नता और निश्चिन्तता दिखाई पड़ेगी । वे उसी अनुपात में समर्थ, सम्पन्न निर्भय और प्रभावशाली बनकर रह रहे होंगे । उस समूह का भविष्य उज्ज्वल ही बनता जा रहा होगा ।

जिसका 'अपनापन' जितना संकुचित है, वह आत्मिक दृष्टि से उतना ही छोटा है । जिसने अपनेपन की परिधि जितनी बड़ी बना ली है, उसे उतना ही विकसित परिष्कृत माना जायगा । स्वार्थी व्यक्ति समाज की चिन्ता तो दूर अपने परिवार के हित-अनहित तक का विचार नहीं करते और मात्र अपनी ही सुविधा समेटने में लगे रहते हैं । ऐसे लोग अपनी शरीर सुविधा और क्षणिक प्रसन्नता पा सकते हैं, पर उनकी अन्तरात्मा इस क्षुद्रता के लिए कचोटती ही रहती है । परिचित लोग घृणा करते हैं और सम्बद्ध व्यक्ति रुष्ट रहते हैं । उन्हें न कभी कहीं से सच्चा सम्मान मिलता है और न आड़े वक्त में किसी का कारगर सहयोग । जो दूसरों के दु:ख-दर्द में शामिल नहीं होता उसे अपने आपत्तिग्रस्त होने पर किसी की सहायता नहीं मिलती । जिसे दूसरों से कुछ सहानुभूति नहीं उसके साथ भी सहानुभूति कौन व्यक्त करेगा ?

उदारचित्त मनुष्य देखने में घाटा उठाते दीखते हैं, क्योंकि उन्हें दूसरों की सहायता करने में अपना समय, मस्तिष्क और धन खर्च करते हुए देखा जाता है । मोटे तरीके से यह घाटा उठाने का चिह्न है पर ध्यानपूर्वक देखा जाय तो बात ठीक उल्टी दिखाई पड़ती है । बीज गलता है तो लगता है वह घाटे में रहा, पर जब उसका अंकुर फूटता है, पौधा बनता है, विशाल वृक्ष होकर फूलों-फलों से लदता है तो प्रतीत होता है बीज का गलना मूर्खतापूर्ण नहीं था, उसने जितना खोया उसकी तुलना में पाया कहीं अधिक है । दूसरों के साथ उदार सहयोग का बरतना—अपनी अन्य आत्मिक सत्प्रवृत्तियों को बढ़ाना है, दूसरों के मन में अपने लिए श्रद्धा, सम्मान का स्थान बनाता है और अपने चुम्बकत्व से अन्य लोगों का स्नेह-सहयोग आकर्षित करता है । इस प्रकार उदार व्यक्ति घटता नहीं बढ़ता ही है । सहयोग की प्रतिक्रिया सुखद सहायता बनकर चारों ओर से बरसती है ।

धर्म-शास्त्रों में दान-पुण्य की बहुत महिमा गाई गई है और उसे हर शुभ कार्य के साथ जोड़ा गया है । इसका कारण मात्र धन को एक से दूसरे के हाथ में पहुँचाना नहीं वरन् उदार सहयोग की सत्प्रवृति को विकसित करना है । हम अपने ही दु:ख को दु:ख न समझें वरन् दूसरों के कष्टों में भी समान सम्वेदना अनुभव करें । किसी की पीड़ा अपने-अपने अन्त:करण में करुणा और दया उत्पन्न करती हो तो समझना चाहिए आत्मा की कोमलता जागरूक है और व्यक्ति आत्मोत्कर्ष के मार्ग पर चल रहा है । जो जितना कठोर है उसे दूसरों को कष्ट, पीड़ित देखकर तनिक भी दया नहीं आती ऐसे लोग परपीड़ा का क्रूर-कर्म स्वयं भी करते रहते हैं और दूसरों को करते देखकर प्रसन्न होते हैं अथवा निरपेक्ष बने रहते हैं । इस आन्तरिक स्थिति को ही असुरता कहते हैं । ऐसे लोग अपने लाभ के लिए ही नहीं, अकारण भी परपीड़ा का आनन्द लेते हैं और उस दुष्टता को वीरता का नाम देते हैं । कसाई, शिकारी, डाकू, हत्यारे प्राय: ऐसी ही असुर मनोवृत्ति के होते हैं । अपराधी मनोवृत्ति कठोरता की पृष्ठभूमि पर पनपती है ।

मनुष्य असुरता छोड़े और देवत्व की दिशा में अग्रसर हो इसका एक ही उपयोग है, उदार सहकारिता की मनोवृत्ति का विकास, उसे अन्त:भूमि में परिपक्व करने वाले क्रियाकलापों का अभ्यास । दान-पुण्य की महिमा इसी प्रयोजन को ध्यान में रखकर गाई गई है । आज तो इस क्षेत्र में भी मूढ़ मान्यताओं का साम्राज्य है । लोग अमुक वंश या वेश के लोगों को दान लेने का ठेकेदार मानते हैं और देवी-देवताओं तथा पितरों को प्रसन्न करने की दृष्टि से पैसा पानी की तरह बहाते हैं । कुछ लोग अपने को उदार दानी होने का प्रचार, विज्ञापन करने की दृष्टि से तीर्थयात्रा, ब्रह्मभोज, स्मारक आदि में धन खर्च करते हैं । यह आज के घटिया मनुष्य के घटिया चिन्तन का घटिया स्वरूप है । वस्तुत: दान एक सत्प्रवृत्ति है जो मात्र धन देकर ही नहीं, श्रम, समय प्रोत्साहन, स्नेह, सत्परामर्श, सहानुभूति आदि के माध्यम से भी उसे चरितार्थ किया जा सकता है । दानी के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए धनी होना आवश्यक नहीं । निर्धन भी अपने उदार चित्त के आधार पर धन कुबेरों से भी बढ़ी-चढ़ी सेवा सहायता कर सकते हैं । सद्भावना की कमी न हो, स्वभाव में उदारता सम्मिलित हो, दूसरों के दुःख में सहायता करने की कसक उठती हो, किसी को सुखी बनाने में रस आता हो तो समझना चाहिये दानशीलता के अनेकानेक आचरण स्वयमेव होते चले जाएँगे और उसके लिए व्यस्त एवं मस्त स्थिति में भी पग-पग पर सुअवसर मिलते रहेंगे ।

आवश्यक नहीं कि कोई पीड़ित या पतित मिले तब के लिये दान की प्रतीक्षा में बैठे रहा जाय अथवा उन्हें खोज-खोजकर बुलाया जाता रहे । यह तो आपत्ति धर्म है कि कभी कोई दुःखी व्यक्ति दिखाई पड़े तो उसकी उचित एवं शक्य सहायता विवेकपूर्वक की जाय । भावावेश में अनुचित सहायता करने से तो भिक्षावृत्ति पनपती है और कुपात्रों के लिए घिनौना व्यवसाय अपनाकर अकर्मण्य बनने का दुर्भाग्य पल्ले पड़ता है । इस क्षेत्र में पूरे विवेक का प्रयोग करने की आवश्यकता है । विवेकपूर्ण सहृदयता ही लाभदायक सिद्ध होती है । माता को बच्चे के फोड़े का ऑपरेशन कराते समय जो कठोरता धारण करनी पड़ती है वस्तुतः वह भी विवेकपूर्ण करुणा का ही एक अंग है ।

अपने स्वजन, सम्बन्धियों, पड़ोसी, परिचितों में कोई हारी-बीमारी हो तो उसकी दवादारू, परिचर्या, पूछताछ, सहानुभूति, आश्वासन के लिए कुछ समय या प्रयत्न करके अपनी सद्भावना का परिचय दिया जा सकता है । अन्य प्रकार की मुसीबतें तथा कठिनाई भी लोगों के सामने आती रहती हैं । ऐसे अवसरों पर लोग अक्सर अपना मानसिक सन्तुलन खो बैठते हैं और ओंधे-सीधे विचार करके अवांछनीय मार्ग अपनाने लगते हैं, यह मनःस्थिति भी शारीरिक बीमारी से कम भयंकर नहीं । अपने सम्पर्क क्षेत्र में अक्सर कई व्यक्ति ऐसी आपत्ति में फँसे होते हैं । उनके साथ सहज आत्मीयता विकसित करनी चाहिये और अपने विश्वास क्षेत्र में लेना चाहिये । इतना कर सकने पर ही स्नेह सिक्त, तर्क और तथ्यों से भरा परामर्श प्रभावी बनता है । ऐसा मार्ग-दर्शन कर सकना धन दान करके किसी दीन-दुःखी की सहायता करने से किसी भी प्रकार कम महत्व का नहीं है । साधारण वार्तालाप में भी सम्पर्क में आने वालों को बिना उसके स्वाभिमान को चोट पहुँचाए—बिना निन्दा, भर्त्सना किये सहज सत्परामर्श दिए जा सकते हैं और उनसे भी धन दान जैसे ही सत्प्रयोजन सिद्ध हो सकते हैं । अपना चरित्र आदर्श बनाकर उसे अनुकरणीय एवं प्रेरणाप्रद बना लिया जाय तो वह भी प्रकारान्तर से सम्पर्क क्षेत्र में बखेरा गया अयाचित अनुदान ही माना जाएगा ।

घर में ऐसी परम्परा प्रचलित करनी चाहिये जिसमें सभी को एक-दूसरे की सहायता करने की उत्सुकता बनी रहे । इसके लिए उन्हें बराबर अवसर भी मिलते रहने चाहिये । बड़ी क्लास के लड़के अपने से छोटी कक्षा के भाई-बहिनों को पढ़ाने के लिये नियमित रूप से हर रोज समय निकालें और उन्हें खिलाने, हँसाने, अच्छी आदतें अपनाने, ज्ञान बढ़ाने आदि में सहायता करें । छोटी आयु के बच्चे बड़ों के कामों में हाथ बँटाने में, उनकी छोटी-मोटी आवश्यकतायें स्वयं जुटा देने में रुचि रखें । बराबर वालों के साथ जी खोलकर हँसने, बोलने और मिल-जुलकर साथ-साथ काम करने का क्रम बनायें । दूसरों की बिखरी चीजों को यथास्थान रख देना एक छोटा-सा काम है, पर उससे यह छाप पड़ती है कि हमारे प्रति कितना ध्यान है ? ऐसे छोटे-छोटे सहयोग देकर साथ वालों की सद्भावना एवं कृतज्ञता अर्जित की जा सकती है ।

सार्वजनिक हित के सामूहिक कार्यों में सदा अग्रणी रहना चाहिये । लोक-मंगल के लिये चल रहीं गतिविधियों में पूरे उत्साह के साथ भाग लेना चाहिये । इन सत्प्रवृत्तियों में भाग लेने से विश्व सेवा के विशाल क्षेत्र में प्रवेश करने का अवसर मिलने से आत्मविस्तार का लाभ मिलता है । साथ ही समाज को समुन्नत बनाने का जीवनोद्देश्य भी प्राप्त होता है । जिस प्रकार व्यक्तिगत एवं पारिवारिक लाभ के कार्यों में रुचि रखी जाती है, उसी प्रकार समाज को भी बड़ा परिवार मानकर उसे समुन्नत बनाने वाले सामूहिक सार्वजनिक कार्यों में हमारा भाव भरा अनुदान एवं सहयोग सदा ही सम्मिलित रहना चाहिये ।

अन्तःकरण की उदारता को विकसित करना, अपना स्तर बढ़ाना और दूसरों का सम्मान, सद्भाव अर्जित करना है । यह लाभ जो कमाता है वह देने की अपेक्षा प्रकारान्तर से कहीं अधिक प्राप्त कर लेता है । स्वार्थपरायण व्यक्ति चतुर दीखता है, पर वह एकाकी रहकर खोता ही अधिक है । अस्तु हर विवेकवान का प्रयत्न यह होना चाहिये कि वह अपनी आत्मीयता का क्षेत्र विस्तृत करे, दूसरों के दुःख को बँटाने और अपने सुख को बाँटने में उत्साह रखे । सहयोग का स्वभाव बनाए और जहाँ भी आवश्यकता हो, अवसर हो सहकारिता की सत्प्रवृत्ति चरितार्थ करने में पूरी तत्परता बरते । सद्भाव और सहयोग के बल पर ही बनते, सुदृढ़ होते और बढ़ते हैं । संगठन का मूल तत्व यही है । मानवी प्रगति सहयोग के आधार पर ही सम्भव हुई । उस मनुष्य को दिए गए ईश्वरीय अनुदान का हमें अधिकाधिक विकास करना चाहिये ताकि सुखशान्ति का अधिकाधिक सम्वर्धन सम्भव हो सके ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुख भोग में नहीं— त्याग, परोपकार में है

मनुष्य जैसे विकसित प्राणी के लिए सुख पाने की लालसा स्वाभाविक है । सुख पाने की चेष्टा प्रत्येक प्राणी करता है । यह चेष्टा ही एक ऐसी चाबी है जिससे जीवन रूपी घड़ी निरन्तर क्रियाशील रहती है । घड़ी में चाबी नहीं देने पर वह बन्द हो जाती है । उसी प्रकार यदि सुख पाने की चेष्टा समाप्त हो जाय तो वह जीवित रहते हुए भी मर जाता है ।

सुख का आधार व्यक्ति की मनोभूमि पर आधारित होता है । इस कारण यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक वस्तु के उपभोग में सुख मिलता है । सुअर के लिये गन्दगी, कीचड़, दुर्गन्ध सुखदायक है, क्योंकि उसकी मन:स्थिति इसी प्रकार की है किन्तु मनुष्य के लिये वही सब दुखदायी होती है । यही नहीं भिन्न-भिन्न मन:स्थिति के मनुष्यों में भी सुख-सामग्रियाँ भिन्न-भिन्न होती हैं । शराब पीने वाले व्यक्ति के लिये शराब सुख प्रदान करती है, किन्तु जो इस विभीषिका से परिचित है वह तो इसे छूना भी पाप समझता है ।

ईश्वर ने जितनी सुख-सुविधाएँ मनुष्य को प्रदान की हैं, अन्य जीवों को प्रदान नहीं कीं । मनुष्य का अन्त:करण विवेक से परिपूर्ण है । वह इन क्षमताओं तथा उपलब्धियों का प्रयोग उसकी सृष्टि को सुन्दर, सुखी तथा सम्पन्न बनाने में लगाए इसी हेतु उसे यह सब प्राप्त हुआ है । इसी के आधार पर मनुष्य तथा पशुओं में सीमा रेखा निर्धारित की जानी चाहिये तभी मानव जीवन की उत्कृष्टता तथा सार्थकता सिद्ध हो सकती है ।

मानवोचित सुख पशुओं के सुख से कुछ भिन्न अवश्य होना चाहिये । भोग से सुख मिलता है, वह केवल इन्द्रियों को तृप्त करता है । यह तृप्ति क्षणिक होती है । आग में घी डालने की तरह मरुभूमि में प्यास बुझाने की लालसा से मृगतृष्णा के भुलावे में भटकाने वाली यह इन्द्रियजन्य वासना पाशविक सुख से भी निकृष्ट एक छलावा मात्र है, जो मनुष्य को अपनी गरिमा तथा कर्तव्य से भ्रष्ट करती है । मनुष्य विवेकशील प्राणी है, वह अन्तरात्मा की आवाज को सुनता है । उसको सच्चा सुख सेवा-साधना में ही मिलता है । इससे बढ़कर कोई ऐसा कर्म नहीं जो मानव को अपनी गरिमा का भान कराता हो ।

मेरे पास चार रोटी हैं इनसे मैं अपनी क्षुधा पूर्ति कर लेता हूँ । मेरी इन्द्रियों को क्षणिक सुख मिल जाता है, किन्तु इससे मेरी भूख सदा के लिए मिट नहीं जाती । मुझसे भी अधिक भूखा कोई है और उसे उनमें से दो रोटियाँ दे देता हूँ तो मेरी आत्मा में उस भूखे की तृप्ति देखकर जो आनन्द मिलेगा वही सच्चा है ।

भगवान ने इसी कारण मनुष्य को सामर्थ्य इतनी अधिक दी है कि वह इतना उपार्जित कर सकता है, जिसके दसवें हिस्से में उसकी शारीरिक आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं । शेष नौ भाग यदि वह उस समाज के हित में लोक-मंगल के लिये प्रयुक्त करे, जिसका कि वह चिर-ऋणी है, तभी वह सुख पा सकता है । समाज का ऋण उतारने का कुछ प्रयास न करें तो हम सच्चे अर्थों में सुखी हो भी नहीं सकते ।

किसी ने ठीक ही कहा है कि ईश्वर ने उपार्जन के लिये दो हाथ दिए हैं तथा उदर-पोषण के लिए मुँह एक ही दिया है । इसके पीछे जो एक सिद्धान्त छिपा है, वह यह है कि हम जो कुछ उपार्जित करें उसका आधा भाग स्वयं के शरीर तथा परिवार के लिए तथा शेष आधा भाग लोक-मंगल के लिए प्रयुक्त करें ।

अपने उपार्जन और शक्तियों को एक अंश कहना चाहिये अधिकांश भाग लोकमंगल के लिए लगाते रहने का नाम ही परमार्थ साधना है । इस सम्बन्ध में शंका उठ सकती है कि अपनी आवश्यकताओं को पूरा करना तथा लोकमंगल के लिए समय, साधन और शक्ति लगाते रहना दो अलग-अलग मार्ग हैं । परन्तु गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाय तो स्वार्थ और परमार्थ को एक साथ भी साधा जा सकता है । स्वार्थ और परमार्थ को एक साथ भी पूरा किया जा सकता है । मनीषियों ने इस सम्बन्ध में एक सुनिश्चित मार्ग निर्धारित किया है ।

परमार्थ का नाम सुनते ही लोग बहुधा यह समझकर घबरा उठते हैं कि परमार्थ की प्रेरणा देने वाले उन्हें अपने आवश्यक स्वार्थों से छुड़ाकर कुछ इस परोपकार तथा पर सेवा के कार्यों में लगा देना चाहते हैं कि उनका परिवार छूट जाए । वे जीवन में आर्थिक उन्नति से वंचित रहकर न तो कोई तरक्की कर पाएँगे और न किसी ऊँचे पद पर पहुँच पाएँगे । वे गरीब रहकर सारे सुख से रहित हो जाएँगे ।

कहना न होगा कि इस प्रकार का विचार करने वाले लोग वस्तुत: परमार्थ का वास्तविक अर्थ नहीं समझते । मनुष्य का सच्चा स्वार्थ परमार्थ ही माना गया है । जो काम भी ऊँचा और उज्ज्वल स्वार्थ लेकर किया जाता है, उसका अन्तर्भाव एक प्रकार से परमार्थ ही होता है । स्वार्थ सिद्धि का परिणाम सन्तोष, आत्मसुख और आत्म कल्याण ही तो हो सकता है । यही परिणाम परमार्थ का भी माना गया है । अन्तर केवल इतना ही है कि स्वार्थ का सुख अस्थाई एवं अन्त दु:खद होता है किन्तु परमार्थ से प्राप्त सुख स्थायी और विक्षोभ-रहित होता है । कोई भी बुद्धिमान, किन्हीं ऐसे स्वार्थों द्वारा सुख क्यों न पाना चाहेगा जिनमें परमार्थ का भी अन्तर्भाव भरा हुआ हो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मा का स्वार्थ जिन विचारों और कार्यों द्वारा सिद्ध होता है, उन्हीं के माध्यम से संसार का कल्याण करने वाले परमार्थ की भी सिद्धि होती है । फिर क्यों न ऐसी गतिविधि ही अपनाई जाए जिससे स्वार्थ की भी सिद्धि हो और परमार्थ का भी साधन बने । उदाहरण के लिए स्वार्थ का सबसे स्थूल रूप उपार्जन का ले लिया जाए । उपार्जन का यहाँ पर अर्थ है धन कमाना । धन कमाने के लिए लोग खेती करते हैं, व्यवसाय करते हैं और नौकरी करते हैं ।

यों तो खेती, व्यवसाय अथवा नौकरी करना मूलतः स्वार्थ है । पर यदि इसमें ऊँची भावना का समावेश कर दिया जाए तो इसी स्वार्थ के साथ परमार्थ का भी लाभ होने लगे । खेती करते हैं, सोचते हैं इससे जो उपज होगी उससे अपना काम चलेगा, बच्चों का पालन होगा, जीवन में सुख-सुविधा की प्राप्ति होगी । इसके साथ यह भाव भी शामिल कर लिया जाए कि खेती करना हमारा पुनीत कर्तव्य है, इससे राष्ट्र को, समाज को और प्राणियों को अन्न मिलेगा । इससे जो हमें लाभ होगा उससे हम संसार के एक अंश परिवार का पालन करेंगे, बच्चों को पढ़ा-लिखाकर इस योग्य बना सकेंगे कि वे समाज और संसार का कुछ हित कर सकें, अपनी आत्मा का उद्धार कर सकें ।

ऐसा भाव जागते ही खेती का वह स्वार्थपूर्ण काम परमार्थ कार्य बन जायेगा । उसका आनन्द उस सुख से स्थायी उदात्त तथा अधिक होगा जो कि केवल संकीर्ण स्वार्थ रखने पर होता । विचारों की उदात्तता मनुष्य के कार्यों को भी ऊँचा बना देती है । खेती जैसे कार्य में भी परहित की परमार्थ भावना का समावेश हो जाने पर मनुष्य उसे अधिक लगन और अधिक गौरव के साथ करेगा । इससे आनन्द भी आएगा, सन्तोष भी मिलेगा और लाभ भी होगा । स्वार्थ में ही परमार्थ की साधना हो जाएगी ।

इसी प्रकार व्यवसाय अथवा नौकरी की भी बात है । हम व्यवसाय करते हैं—इसलिए कि लोगों को वस्तुओं की सुविधा हो, राष्ट्र और देश की सम्पत्ति बढ़े, बहुत-से आदमियों को काम मिले । व्यक्तिगत व्यवसाय को इस प्रकार सार्वजनिक सेवा कार्य मानकर चलने पर स्वार्थ परमार्थ बन जाएगा । व्यवसाय में ऊँची भावना के जुड़ते ही मुनाफाखोरी, भ्रष्टाचार अथवा चोरबाजारी और मिलावट की प्रवृत्ति पर आघात होगा और वे स्वयं ही नष्ट होने लगेंगी । ज्यों-ज्यों व्यवसायी निष्कलंक व्यवसाय का सुन्दर स्वरूप देखता जाएगा त्यों-त्यों वह उसे दृढ़तापूर्वक अपनाता चला जाएगा । ज्यों-ज्यों वह इस क्षेत्र में उन्नत बनता जाएगा त्यों-त्यों उसका भय, आशंका और संशय दूर होता और आत्मिक सुख मिलता जायेगा । इस प्रकार स्वार्थ भी बनेगा और परमार्थ भी ।

नौकरी में जब तक संकीर्ण स्वार्थ का भाव साथ बँधा रहता है, मनुष्य अपने को पराधीन, दूसरों को चाकरी करने वाला और दीन-हीन समझता रहता है । पर ज्यों ही वह ऊँचे भावों को सम्मिलित करता है उसकी सारी दीनता चली जाती है और उसका दृष्टिकोण परमार्थ परक हो जाता है ।

अब आइए, इसी न्याय द्वारा कुछ आगे बढ़िए । स्वार्थ की सिद्धि किसलिए की जाती है ? आत्मसन्तोष और आत्मसुख के लिए । कोई व्यक्ति यदि अपने स्वार्थ के लिए यदि किसी दूसरे के स्वार्थ का हनन करता है तो क्या यह आशा की जा सकती है कि उसे सुख, सन्तोष और शान्ति मिलेगी । दूसरों को हानि अथवा कष्ट पहुँचा कर कितने ही बड़े स्वार्थ की सिद्धि क्यों न कर ली जाए उससे शान्ति नहीं मिल सकती । सबसे पहले तो जिसको कष्ट हुआ है वह शान्ति से बैठने न देगा, दूसरा शासन, समाज और लोकनिन्दा का भय बना रहेगा—जहाँ भय वहाँ शान्ति की सम्भावना असम्भव है । तीसरे मनुष्य में जो परमात्मा का निष्कलंक एवं न्यायशील अंश आत्मा को प्रिय मानता है, वह उसे सोते-जागते किसी समय भी चैन न लेने देगा । हर समय टोकती ही रहेगी कि तुमने अमुक को कष्ट पहुँचाकर जो स्वार्थ की सिद्धि की है वह ठीक नहीं । इसके लिए लोक अथवा परलोक में तुम्हें दण्ड का भागी बनना पड़ेगा । ऐसी दिशा में स्वार्थ की वह सिद्धि सुखदायक तो नहीं त्रासदायक अवश्य बन जाएगी । तब कहाँ तो स्वार्थ का मन्तव्य पूरा हुआ और कहाँ परमार्थ का उद्देश्य ?

स्वार्थ परमार्थ बने इसका एक सरल-सा उपाय यह है कि केवल अपने उचित स्वार्थ की सीमाओं तक ही नियन्त्रित रहा जाए, उसकी परिधि इतनी न बढ़ाई जाए कि वह दूसरों की मर्यादाओं का उल्लंघन करने लगे । वह सम्भव किस प्रकार हो? वह इस प्रकार कि अपने स्वार्थों में लोभ, लिप्सा और तृष्णा को स्थान न लेने देना चाहिये । स्वार्थ में जब इन विकारों का दोष आ जाता है, तब अच्छा स्वार्थ भी निकृष्ट वासनाओं में बदल जाता है, जिससे सारे पापों, सन्तापों का श्रीगणेश होने लगता है । मनुष्य का लोक-परलोक दोनों बिगड़ जाते हैं । ऊँचा स्वार्थ परमार्थ ही है । अस्तु, एक स्वार्थ और परमार्थ के दोहरा कार्य निकालने के लिए स्वार्थ भावना को ऊँचा उठाइए, उसे अपनी मर्यादा तक ही सीमित रखिए और उसमें लोभ, लिप्सा अथवा तृष्णा का विकार कदापि न आने दीजिए ।

अब आइए यहीं से एक कदम और आगे बढ़ा जाए । फिर दोहरा लीजिए कि स्वार्थ का उद्देश्य सुख और शान्ति ही होता है । यदि ऐसा न हो तो फिर स्वार्थ का कोड़ी बराबर मोल न रह जाय । हमने उचित रूप से स्वार्थ लाभ किया । अब उस लाभ का यदि एक अंशलोक सेवा में लगाते रहे, तो जानते हैं इसका क्या फल हो ? वह यह कि हमें एक अनिवर्चनीय सुख, शान्ति और उल्लास मिले । वह ऐसे कि जब हम अपनी उपलब्धियों से किसी का कुछ हित सम्पादन करेंगे तो दूसरे लोग हमारी उपलब्धियों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आदर की दृष्टि से, अपनत्व के भाव से देखेंगे और चाहेंगे कि उनको दिन-दिन उन्नति एवं वृद्धि हो, इतना ही नहीं वे अपनी-अपनी तरह उससे सहयोग तथा सहायता भी करेंगे । इस लोकायतन से आने वाला सुख कितना शीतल, कितना सन्तोषप्रद और कितना महान होगा? इसका अनुमान लगाया जा सकता है ? तब किसी के हित और सेवा में हमारा भी भाग होगा तो क्या समाज में प्रशंसा तथा पात्रता का अवसर नहीं मिलेगा ? जब यह सम्भव है तब कौन कह सकता है कि हमारा सुख-शान्ति के परिणाम वाला स्वार्थ सिद्ध नहीं होगा । इसलिए लोक सेवा लोकहित और लोक में कल्याण के परमार्थ कहे जाने वाले कामों को भी स्वार्थ ही समझना चाहिए । परमार्थ भी वस्तुत: स्वार्थ ही है, एक ऊँचा स्वार्थ और बुद्धिमान व्यक्ति उसको सिद्धि करने में कभी भी नहीं चूकते । परमार्थपरक स्वार्थ ही सच्चे सुख, वास्तविक सन्तोष और यथार्थ कल्याण का हेतु है, निकृष्ट अथवा निन्दित स्वार्थ नहीं ।

अब यहाँ पर छोटा प्रश्न और उठता है । वह यह कि आखिर निकृष्ट स्वार्थ भावना से निकल कर ऊँचे स्वार्थ की परिधि में जाया किस प्रकार जाए ? उसका एक साधारण-सा उपाय यह है कि अपने व्यक्तित्व को उज्ज्वल, उन्नत और विस्तृत बनाया जाए । जब तक हम इस आत्मगरिमा में नहीं प्रतिष्ठित होते कि हम समाज के एक उत्तरदायी अंग हैं, परमात्मा के पवित्र अंश और संसार के प्राणी मात्र के सिर-मौर मानव हैं तब तक हमें अपनी निकृष्टताओं पर न तो लज्जा आएगी और न आत्मग्लानि होगी । हम अपने व्यक्तित्व की महानता से अपनी निकृष्टताओं की तुलना करें और देखें कि कौन-कौन-से दोष हमारी प्रतिष्ठा के अनुरूप हमें नहीं बनने देते हैं । जिन वासनाओं, जिन अभीप्साओं और जिन भावनाओं को हम अपने व्यक्तित्व के अनुरूप न देखें उन्हें तुरन्त ही निकाल कर फेंक दें । हमारा व्यक्तित्व मूल रूप से उज्ज्वल एवं उत्कृष्ट ही है । दोष, पाप और मल ही उसे मलीन तथा निकृष्ट बना देते हैं । जिस दिन हम अपने इन विकारों को निकालकर फेंक देंगे उस दिन ही हमारा व्यक्तित्व दूध के समान उज्ज्वल तथा निर्विकार हो उठेगा । अपने मूल व्यक्तित्व का दर्शन पाते ही हमारे निकृष्ट स्वार्थ स्वयं ही हमें छोड़कर चले जायेंगे और उनके स्थान पर परमार्थपरक ऊँचे स्वार्थ स्थापित हो जाएँगे । तब न तो जीवन में अशान्ति की सम्भावना होगी और न असन्तोष का समावेश ।

मनीषियों ने इसलिए कहा है कि मनुष्य को अपना व्यक्तित्व विकसित करने, लोकमंगल तथा परमार्थ भावना को जीवन में उतारने के लिए निरन्तर सचेष्ट रहना चाहिये । निश्चित ही इसके लिए, मनुष्य को अपने कई स्वार्थों पर प्रतिबन्ध लगाना पड़ेगा और उसे ऐसे कार्यों का परित्याग करना पड़ेगा, जो उसके स्वार्थ की पूर्ति भले ही करते हों परन्तु उनसे समाज का अहित होता है ।

परमार्थ के आदर्श को अपने व्यक्तित्व का अंग बनाने के लिए आवश्यक है कि मन में जब-जब सत्कर्मों की पुण्य प्रवृत्ति का उदय होता है, तब-तब तुरन्त सम्पन्न कर लिया जाए । सत्कर्मों की पुण्य-प्रवृत्ति मन में कभी-कभी ही उत्पन्न होती है । ऐसा उत्साह भगवान् की प्रेरणा और संचित शुभकर्मों का उदय होने पर ही जाग्रत होता है, अन्यथा मनुष्य अधिकांश समय तो स्वार्थ और संकीर्ण परिधि में ही सोचते, संकल्प-विकल्प करते गुजार देता है । इसलिए परमार्थ की पुण्य-प्रवृत्तियाँ जब कभी उत्पन्न हों तो उसे कार्यान्वित करने में किंचित भी विलम्ब नहीं करना चाहिये ।

यह ध्यान रखना चाहिए कि हमारे पिछड़े हुए देश में अगणित समस्याओं और कठिनाइयों से मनुष्य समाज बुरी तरह संत्रस्त है और उसकी दुष्प्रवृत्तियों से लोगों को भारी विपत्ति का सामना करना पड़ रहा है । इन उलझनों को सुलझाने और कठिनाइयों को हल करने के लिए हममें से प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ कर ही सकता है । सच्चे और विवेकपूर्ण परमार्थ के अवसर भी संसार में कम नहीं हैं । यह सोचना ठीक नहीं कि जब ऐसा अवसर आवेगा तब यह करेंगे । हो सकता है कि हमारा इच्छित अवसर जीवन में कभी भी न आवे और वे आकांक्षाएँ कल्पना ही बनकर रह जाएँ । जो साधन आज प्राप्त हैं उन्हीं के आधार पर वर्तमान परिस्थितियों में सम्भव हो सकने वाले सत्कर्मों के लिए हमें प्रयत्नशील हो जाना चाहिए । हजार मन सोचने से एक मन करना अच्छा है । आज तो परमार्थ भावना किसी सत्प्रेरणा या सौभाग्य से प्राप्त हुई है । यदि उसे पीछे के लिए धकेल दिया गया तो कौन जाने कब वैसा उत्साह पुन: हो या न हो । अमुक सुविधा मिलने पर अमुक कार्य करने की शर्त लगाना एक प्रकार की बहानेबाजी है, जिससे अपनी उस उठी हुई सत्प्रवृत्ति को बहकाकर या बहलाकर पीछे के लिए टाल दिया जाया करता है । उचित यही है कि आज की परिस्थितियों में अपने लिए जो सम्भव है उतना ही सोचें और जो उपयुक्त प्रतीत हो उसे कार्यान्वित करने का भी साहस प्रदर्शित करें ।

सत्यनारायण व्रत कथा में साधु वैश्य का उपाख्यान आता है, जिसने सन्तान होने पर व्रत कथा के लिए प्रतीक्षा की थी । पर जब कलावती के कन्या उत्पन्न हो गई तो फिर उसकी पूर्व रुचि हल्की पड़ गई, आजकल करते-करते कन्या का विवाह हो गया, जमाता व्यापार करने लगा तब भी वह संकल्प अपूर्ण ही बना रहा । इसी प्रकार एक कथा है कि कोई व्यक्ति खजूर पर चढ़ गया ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नीचे उतरते हुए उसे मृत्यु भय दीखने लगा तो उसने मनौती मनाई कि नीचे उतरने पर इतना दान करूँगा । आधी दूर नीचे उतर आया तो उसने वह दान की राशि मन ही मन आधी कर ली और आधा नीचे उतरा तो उसे घटाकर चौथाई कर लिया और नीचे जमीन पर उतरते-उतरते वह दान एक बहुत छोटी चिह्न पूजा जैसा रह गया ।

सत्कर्म करने में परिस्थितियाँ नहीं, भावना प्रधान होती है । भावना प्रबल हो तो निर्बल और असमर्थ दिखने वाले व्यक्ति भी वह कर गुजरते हैं, जो असाधारण एवम् आश्चर्यजनक होता है । इसके विपरीत जिनके पास बहुत कुछ है वे बड़ी कठिनाई से कभी-कभी राई-रत्ती सत्कर्म कर पाते हैं । श्रेष्ठ सत्कर्म मनुष्य से सदा नहीं बन पड़ते । उनमें कितनी ही बाधाएँ आ खड़ी होती हैं । अपना स्वार्थी मन कम बाधक नहीं होता है । ऊँच-नीच, आगा-पीछा सोचकर वह यह निष्कर्ष निकालता है । अभी अमुक आवश्यक कार्य करने को पड़े हैं, पहले उन्हें पूरा कर लें, यह दान धर्म तो पीछे भी कभी हो सकते हैं, अभी जल्दी ही क्या है ?

इसी प्रकार कुटुम्ब परिवार वाले तथा मित्र-हितैषी कहलाने वाले व्यक्ति आमतौर से यही चाहते हैं कि इस व्यक्ति के धन, श्रम, सहयोग या व्यक्तित्व का पूरा लाभ हमें ही मिलता रहे । यदि सत्कर्म में उसका धन या श्रम लगता है तो उसमें उन्हें अपनी प्रत्यक्ष हानि दीखती है । ऐसी दशा में वे अनेक बहाने, अनेक तर्क उपस्थित करके उस ओर से विरक्ति पैदा करने का प्रयत्न करते हैं ।

आज यदि सत्कर्म कर सकने की परिस्थिति है तो कल भी वह बनी ही रहेगी इसका कोई ठिकाना नहीं । उलटती-पलटती छाया की तरह मनुष्य के दिन फिरते रहते हैं । आज का युवा कल बूढ़ा होगा ही, आज के नीरोग को कल रोग घेर सकता है । आज का धनी कल निर्धन हो जाय तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं, आज की चैन की जिन्दगी बिताने वाले के सामने कल अनेकों चिन्ताएँ और समस्याएँ उत्पन्न हो सकती हैं । ऐसी दशा में यह भी सम्भव है कि तब उस सत्कर्म को कर सकने में सचमुच ही विवशता उत्पन्न हो जाए और मनोरथ अधूरे के अधूरे ही पड़े रहें ।

रावण चाहता था कि स्वर्ग के लिये सीढ़ी बना ले, समुद्र के खारे जल को मीठा बना ले और देवताओं से लड़कर अमृत छीन लावे पर वह आजकल-आजकल टालता रहा । दैनिक जीवन के 'जरूरी' काम उसे घेरे रहे और यह महत्वाकांक्षा पीछे पड़ती गई । मौत का दिन आ पहुँचा । लक्ष्मण जी उससे राजनीति पढ़ने गए तो रावण ने कहा लक्ष्मण ! मनुष्य की भारी भूल यह है कि वह महत्वपूर्ण सत्कर्मों की उपेक्षा करे और साधारण जीवनयापन के कार्यों में ही लगा रहे । मैंने यही भूल की और अपनी तीनों आकांक्षाएँ अधूरी छोड़कर इस संसार से विदा हो रहा हूँ ।

ईसा मसीह ने कहा है कि "जो तेरा दाहिना हाथ करना चाहे उसकी बायें हाथ को खबर न होने दे ।" इस मन्त्र का एक अर्थ यह है अपने शुभ कर्मों का विज्ञापन न करो, वाहवाही लूटने और धर्मात्मापन जताने के लिये ढोल न पिटवाओ । वहाँ दूसरा अर्थ यह भी है कि जितनी जल्दी हो सके उतनी तत्परता से सत्कर्म सम्पन्न कर लिया जाय । हो सकता है दाहिने हाथ के कार्य में बायाँ हाथ कोई अड़ंगा लगा दे । मनीषियों ने कहा है—"दुष्कर्म करना हो तो उसे करते हुए कितनी ही बार विचारो और उसे आज की अपेक्षा कल परसों पर छोड़ो । किन्तु यदि कुछ शुभ करना है तो पहले ही भावना तरंग को कार्यान्वित होने दो । कल वाले काम को आज ही निपटाने का प्रयत्न करो । पाप तो रोज ही अपना जाल लेकर हमारी घात में फिरता रहता है पर पुण्य का अवसर तो कभी-कभी ही होता है । उसे निराश, खाली हाथ लौटा दिया तो न जाने फिर कब आवे ?

यदि अपना मन कुछ सत्कर्म करने की बात सोचे तो विचारणा का क्षेत्र इतना ही रहना चाहिये कि आज की परिस्थिति में हम क्या कर सकते हैं ? जो कर सकते हों वही कर डालने का प्रयत्न करना चाहिये । पीछे कभी जब बहुत वैभव होगा तो उस समय बड़े-बड़े सत्कर्म करने की योजना भी बन सकती है ? जो परिस्थिति आज नहीं है, या जो कर सकना सम्भव नहीं है उसके लिए कल्पना के बड़े-बड़े पुल बाँधने से क्या लाभ ?

जिस प्रकार कमाना, खाना, सोना, नहाना, जीवन के आवश्यक नित्य कर्म होते हैं, उसी प्रकार परमार्थ भी मानव-जीवन का एक अत्यन्त आवश्यक धर्म कर्त्तव्य है । इसकी उपेक्षा करते रहने से अपनी आध्यात्मिक पूँजी घटती है, आत्मबल नष्ट होता और अन्तः भूमिका दिन-दिन निम्न स्तर की बनती चली जाती है । यही तो पतन है ।

सद्भावनाओं का स्वार्थ निष्ठुरता कहलाता है । यह दुष्प्रवृत्ति बढ़ते-बढ़ते पाप का रूप धारण कर लेती है, जिसके अन्तःकरण में परमार्थ बुद्धि विकसित है, जो उदात दृष्टिकोण के अनुसार सोचता रहता है, उसके लिये कोई बड़े पाप कर्म बन पड़ने सम्भव नहीं । पापी मनुष्य मूलतः संकीर्ण और स्वार्थी होता है । धन के अभाव में मनुष्य गरीब कहलाता है, उसी प्रकार सत्प्रवृत्तियों का स्रोत सूख जाने पर, उसके चरितार्थ कर सकने का अवसर न मिलने पर हमें पापी बनना पड़ता है । जहाँ प्रकाश न होगा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वहाँ अन्धकार का रहना स्वाभाविक है । दोनों से रहित स्थिति या तो जड़ या जीवन मुक्त दशा है । पाप से बचने के लिए पुण्य प्रवृत्तियों का चरितार्थ करते रहना आवश्यक है और वह तभी सम्भव है, जब वैसा उत्साह उत्पन्न होने पर उसे कार्यान्वित करने के लिए भी साहस किया जा सके ।

केवल स्वार्थ ही न सोचते रहिए

मनुष्य इच्छाओं का पुतला है । उसके व्यावहारिक जीवन में हर क्षण, अनेकों आकांक्षाएँ उठा करती हैं । स्वास्थ्य की, धन की, पुण्य परिवार और यश की अनेकों कामनाएँ प्रत्येक मनुष्य में होती हैं । इसके विविध काल्पनिक चित्र मस्तिष्क में बनते-बिगड़ते रहते हैं । जैसे ही कोई स्थिर हुई कि मानसिक शक्तियाँ उसकी पूर्ति में जुट पड़ीं । शारीरिक चेष्टाएँ उसी दिशा में कार्य करने लगती हैं । संसार की विभिन्न गतिविधियाँ व क्रियाकलाप चाहे भौतिक हों अथवा आध्यात्मिक, इच्छाओं की पृष्ठभूमि पर निरूपित होते हैं । रचनात्मक कदम तो पीछे का है, पहले तो सारी योजनाओं को निर्धारित कराने का श्रेय इन्हीं इच्छाओं को ही है ।

स्थिर तालाब के जल में जब किसी मिट्टी के ढेले या कंकड़ को फेंकते हैं तो उसमें लहरें उठने लगती हैं । पत्थर के भार व फेंकने की गति के अनुरूप ही लहरों का उठना, तेजी व सुस्त गति से होता है । ठीक इसी प्रकार हमारी इच्छाएँ क्या हैं यह हमारी शारीरिक चेष्टाएँ, चेहरे के हाव-भाव बताते रहते हैं । व्यभिचारी व्यक्ति की आँखों से हर क्षण निर्लज्जता के भाव परिलक्षित होंगे । चेहरे का डरावनापन अपने आप व्यक्त कर देता है कि यह व्यक्ति चोर, डाकू, बदमाश है । कसाई की दुर्गन्ध से ही गाय यह पहचान लेती है कि वह वध करना चाहता है ।

इसी प्रकार सदाचारी, दयाशील व्यक्तियों के चेहरे से सौम्यता का ऐसा माधुर्य टपकता है कि देखने वाले अनायास ही उनकी ओर खिंच जाते हैं । विचार युक्त व गम्भीर मुखाकृति बता देती है कि यह व्यक्ति विद्वान, चिन्तनशील व दार्शनिक है । प्रेम आत्मीयता की भावना से आप चाहे किसी जीव-जन्तु को देखें वह भयभीत न होकर आपके उदार भाव की अन्तर मन से प्रशंसा करने लगेगा ।

अनन्त आनन्द के केन्द्र परमात्मा के हृदय में एक भावना उठी—**'एकोऽहं बहुस्याम:'** और इसी का मूर्तिमान रूप यह मंगलमय संसार बनकर तैयार हो गया । यह उनकी सदिच्छा का ही फल है कि संसार में मंगलदायक और सुखदायक परिस्थितियाँ अधिक हैं । यदि ऐसा न होता तो यहाँ कोई एक क्षण के लिए भी जीना न चाहता । पर अनेकों दु:ख-तकलीफों के होने पर भी हम मरना नहीं चाहते, इसीलिए कि यहाँ आनन्द अधिक है ।

इच्छा एक भाव है, जो किसी अभाव, सुख या आत्मतुष्टि के लिए उदित होता है । इस प्रकार की इच्छाओं का सम्बन्ध भौतिक जगत् से होता है । इनकी आवश्यकता या उपयोगिता न हो सो बात नहीं । दैनिक जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये धन चाहिये ही । सृष्टि-संचालन का क्रम बना रहे इसके लिए दाम्पत्य जीवन की उपयोगिता से कौन इन्कार करेगा ? पर केवल भौतिक सुख के दाँव-फेर में हम लगे रहें तो हमारा आध्यात्मिक विकास न हो पाएगा ।

तब सौमनस्यता व सौहार्द्रपूर्ण सदिच्छाओं की आवश्यकता दिखाई देती है । प्रेम, आत्मीयता और मैत्री की प्यास किसे नहीं होती । हर कोई दूसरों से स्नेह और सौजन्य की अपेक्षा रखता है । पर इनका प्रसार तो तभी सम्भव है, जब हम भी शुभ इच्छाएँ जाग्रत करें, दूसरों से प्रेम करें, उन्हें विश्वास दें और उनके भी सम्मान का ध्यान रखें । इन इच्छाओं के प्रगाढ़ होने से सामाजिक व नैतिक व्यवस्था सुदृढ़, सुखद होती है पर इनके अभाव में चारों ओर शुष्कता का ही साम्राज्य छाया दिखाई देगा ।

मानव जीवन गतिवान बना रहे इसके लिए स्वप्रधान इच्छाएँ उपयोगी ही नहीं आवश्यक भी हैं । पर इनके पीछे फलाशक्ति की प्रबलता रही तो उसकी तृप्ति न होने पर अत्यधिक दु:खी हो जाना स्वाभाविक है । इच्छाओं के अनुरूप परिस्थितियाँ भी मिल जाएँगी, ऐसी कोई व्यवस्था यहाँ नहीं । कोई लखपति बनना चाहे पर व्यवसाय में लगाने के लिए कुछ भी पूँजी पास न हो तो इच्छापूर्ति कैसे होगी, ऐसी स्थिति में दु:खी होना ही निश्चित है । हम जो भी इच्छाएँ करें वह पूरी ही होती रहें यह सम्भव नहीं । इनके साथ ही आवश्यक श्रम, योग्यता एवं परिस्थितियों का भी प्रचुर मात्रा में होना आवश्यक है । किसी की शैक्षणिक योग्यता मैट्रिक हो और वह कलक्टर बनना चाहे तो यह कैसे सम्भव होगा ? इच्छाओं के साथ वैसी क्षमता भी नितान्त आवश्यक है । विचारवान व्यक्ति सदैव ऐसी इच्छाएँ करते हैं जिनकी पूर्ति के योग्य साधन व परिस्थितियाँ उनके पास होती हैं ।

इसका तात्पर्य यह नहीं कि हम जिन परिस्थितियों में आज हैं उन्हीं में पड़े, रहें, जितनी हमारी क्षमता है उसी से सन्तोष कर लें । तब तो विकास की गाड़ी एक पग भी आगे न बढ़ेगी । आज जो प्राप्त है उनमें सन्तोष अनुभव करें और कल अपनी क्षमता बढ़े इसके लिए प्रयत्नशील हों तो इसे शुभ परिणति कहा जाएगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नेपोलियन बोनापार्ट प्रारम्भ में मामूली सिपाही था । चीन के प्रथम राष्ट्रपति सनयात सेन अपने बाल्यकाल में किसी अस्पताल के मामूली चपरासी थे । इन्होंने अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए क्रमिक विकास का रास्ता चुना और अपना लक्ष्य पाने में सफल भी हुए ।

इस व्यवस्था में लम्बी अवधि की प्रतीक्षा करनी पड़ सकती है । पर व्यक्तित्व के निखार का यही रास्ता है । अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पहले आप उस काम के करने की दृढ़ इच्छा मन में कर लें । पीछे सारी मानसिक शक्तियों को उसमें लगा दें तो सफलता की सम्भावना बढ़ जाती है । दृढ़ इच्छाशक्ति से किये गये कार्यों में विघ्न बाधाएँ भी देर तक रोक नहीं पातीं । संसार में जिन लोगों ने भी बड़ी इच्छाओं की पूर्ति की उन्होंने पहले उसकी पृष्ठभूमि को अधिक सुदृढ़ बनाया । पीछे उन कार्यों में जुट पड़े । तीव्र विरोध के बावजूद भी सिकन्दर झेलम पार कर भारत विजय दृढ़ मनस्विता के बल पर ही कर सका । शाहजहाँ की उत्कट अभिलाषा का परिणाम ताजमहल आज भी इस धरती पर विद्यमान है ।

जीवन लक्ष्य की प्राप्ति भी ऐसे ही महान कार्यों की श्रेणी में आती है । दूसरों से सिद्धियों, सामर्थ्यों की बात सुनकर आवेश में आकर आत्मसाक्षात्कार की इच्छा कर लेना हर किसी के लिए आसान है । पर पीछे देर तक उस पर चलते रहना, तीव्र विरोध और अपने स्वयं के मानसिक झंझावातों को सहते हुए इच्छापूर्ति की लम्बे समय तक प्रतीक्षा की लग्न हममें बनी रहे तो परमात्मा की प्राप्ति के भागीदार बन सकना भी असम्भव न होगा ।

इसके विपरीत यदि हमारी इच्छाशक्ति ही निर्बल, क्षुद्र और कमजोर बनी रही तो हमें अभीष्ट लाभ कैसे मिल सकेगा ? अधूरे मन से ही कार्य करते रहे तो लाभ के स्थान पर हानि हो जाना सम्भव है । इच्छाएँ जब तक बुद्धि द्वारा परिमार्जित होकर संकल्प का रूप नहीं ले लेतीं पूर्ति संदिग्ध ही बनी रहेगी । इच्छाशक्ति यदि प्रबल न हुई तो वह लगन और तत्परता कहाँ बन पाएगी जो उसकी सिद्धि के लिए आवश्यक है ।

मनुष्य इच्छाएँ करे यह उचित ही नहीं आवश्यक भी है । इसके बिना प्राणि जगत् निःचेष्ट एवं जड़वत लगने लगेगा । किन्तु इसका एक विषाक्त पहलू भी है, वह है इनकी अति और अनौचित्यता । मनुष्य को क्लेशपूर्ण स्थिति में ले जा पटकने के लिए इच्छाओं की अति और उनकी अनौचित्यता ही प्रमुख कारण है ।

अच्छी या बुरी जैसी भी इच्छा लेकर हम जीवन क्षेत्र में उतरते हैं वैसी ही परिस्थितियाँ, सहयोग भी जुटते चले जाते हैं । हमारी इच्छा होती है एम. ए. पास करें तो स्कूल की शरण लेनी पड़ती है । अध्यापकों का सहचर्य प्राप्त करते हैं । पुस्तकें जुटाते हैं । तात्पर्य यह है कि इच्छाओं के अनुरूप ही साधन जुटाने की आदत मानवीय है । पर यदि यह इच्छाएँ अहितकर हों तो दुराचारिणी परिस्थितियाँ और बुरे लोगों का संग भी स्वाभाविक ही समझिए । ऐसी स्थिति में व्यक्ति अपनी कामना भले ही पूर्ण कर ले पर उसे निन्दा, परिताप एवं बुरे परिणाम ही भोगने पड़ेंगे । व्यभिचारी व्यक्ति अपयश और स्वास्थ्य की खराबी से बचा रहे यह असम्भव है । चोर को अपने कुकृत्य का दण्ड न भोगना पड़े यह हो नहीं सकता । तब आवश्यकता इस बात की होती है कि अच्छी कामनाएँ ही करें ।

शास्त्रकारों और मनीषियों ने इसलिए अपने स्वार्थ हित की आवश्यकता भर चिन्ता करते हुए परमार्थ प्रयोजनों के लिए अधिक से अधिक प्रयास करते रहने का निर्देश दिया है । अपने निर्वाह और हित के लिए स्वार्थ रखना और उसे पूरा करना भी आवश्यक है पर उसे एक सीमा तक ही उचित कहा जा सकता है ।

मनुष्य की अधिकांश इच्छाओं का केन्द्र उसका स्वयं का हित और स्वयं का स्वार्थ है । अधिकांश व्यक्ति यह सोचते और प्रयत्न करते हुए अपनी जिन्दगी गुजार देते हैं कि हम सुविधापूर्वक अपना जीवन व्यतीत करें तथा जितना हो सके उतनी सुख-सुविधाएँ अर्जित करें ।

लोग सोचते हैं कि हमें कोई बड़ा आदमी तो बनना नहीं और न कोई नामवरी कमाने की कामना है, फिर क्यों अपने को विभिन्न विधि निषेधों में बाँधा जाय ? क्यों दूसरों के लिए अपने आपको कष्ट दिया जाय । वस्तुतः यह सोचने समझने का एकांगी दृष्टिकोण है और स्वार्थपरता का परिचायक है ।

अध्यात्म की दृष्टि से सारा विश्व ब्रह्माण्ड ही एक है । समग्र विश्व की चेतना का अधिष्ठाता विश्वात्मा है । बिखरी हुई आत्माएँ इसी के छोटे-छोटे घटक हैं । जब तक यह इकाइयाँ परस्पर मिलकर रहती हैं और एक-दूसरे के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हैं, तभी तक दृश्यमान सौन्दर्य का अस्तित्व है । यदि इनका विघटन होने लगे तो केवल धूलि मात्र ही इस संसार में शेष रह जायेगी । विश्व मानव की विश्वात्मा यदि अपनी समग्र चेतना से विघटित होकर संकीर्ण स्वार्थपरता में बिखरने लगे तो समझना चाहिए विश्व-सौन्दर्य की समाप्ति का समय निकट आ गया ।

शरीर एक है । उसमें अँगुलियाँ, उनके पोरुवे, जोड़, हड्डियाँ, माँसपेशियाँ आदि अनेक हैं । उन सबका मिला-जुला स्वरूप ही शरीर है । इन सभी का समन्वय जीवन-क्रम को चलाता है । वे सभी बिखरने लगें अपनी अलग इकाई को ही सब कुछ मानें, दूसरे अंगों को सहयोग करने की बात सोचना छोड़ दें तो फिर समझना चाहिये उन्हें भी दूसरों के सहयोग से वंचित होना पड़ेगा । ऐसी दशा में जिस स्वार्थ को साधने की उनकी इच्छा थी वह भी न सध सकेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

५.९ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

हाथ तभी तक सक्रिय रहेगा जब तक वह अपनी कमाई मुँह को देगा—मुँह पेट को देगा, पेट हृदय को और हृदय अपने उपार्जन रक्त का वितरण समस्त शरीर को सौंपने का अर्थ प्रकारान्तर से अनेक गुना लाभ अपने लिए उपार्जित करना । हाथ अपनी मुट्ठी में रखे रहे—मुँह या पेट को देने से इन्कार कर दे तो फिर भूखा शरीर सूखता जाएगा और वे हाथ भी उस विपत्ति से संत्रस्त हुए बिना न रहेंगे । अपनी कमाई वे मुँह को देते हैं और बदले में बहुमूल्य रक्त प्रवाह का लाभ लेते हैं और जितनी शक्ति कमाने में खर्च की थी उसकी भरपाई कर लेते हैं ।

अँगुली यदि शरीर की क्रमबद्ध सत्ता व्यवस्था में भाग लेने से इन्कार कर दे और अपने को अलग-अलग काटकर स्वतंत्र रहने में विश्वास करे तो वह घाटे में रहेगी । कटी हुई अँगुली देखते-देखते निर्जीव हो जाएगी और सड़ने लगेगी । कट जाने पर मनमर्जी करने का जो लाभ सोचा था वह इसलिए न मिल सकेगा कि रक्त-प्रवाह के लिए उसे दूसरे अंगों पर निर्भर रहना पड़ता था । सहयोग देने से इन्कार करने का अर्थ सहयोग पाने का द्वार बन्द कर देना भी है । हमारे एक के सहयोग न देने से भी समाज शरीर क्रम चलता रहेगा पर अपने को स्वार्थी एवं असामाजिक सिद्ध करने के बाद समाज का सद्भाव खो देने की जो हानि उठानी पड़ेगी उससे अपनी ही क्षति अधिक होगी ।

मनुष्य शरीर विविध अंगों एवं अवयवों से मिलकर बना है । क्या शरीर का कोई अंग व्यक्तिगत रूप से इस बात का अधिकारी है कि वह अपना विकास त्याग दे और यह कहकर स्वस्थ रहना छोड़ दे कि यह तो हमारी इच्छा है कि हम उन्नत अवस्था में रहते हैं या गिरी दशा में । निश्चय ही शरीर के किसी अंग अथवा अवयव को ऐसा अधिकार नहीं है । उसकी दशा केवल उसकी अपनी व्यक्तिगत दशा नहीं है, उसकी दशा का सम्बन्ध पूरे शरीर से है । उसका अस्वस्थ अथवा अविकसित रहना पूरे शरीर पर प्रभाव डालेगा, उसकी अनुपयुक्ता समग्र शरीर को या तो अस्वस्थ कर देगी अथवा उसकी सुघड़ता तथा सुन्दरता को बिगाड़ देगी ।

उसी प्रकार हर मनुष्य समाज रूपी शरीर का एक अभिन्न अंग अथवा अवयव है । उसकी व्यक्तिगत कोई सत्ता नहीं है और न समाज से उसका अस्तित्व ही अलग है । उसकी हर दशा का प्रभाव शरीर पर पड़ना ही है । समाज के सदस्य जितने स्वस्थ, शिक्षित, शिष्ट और उन्नत अवस्था वाले होंगे, समाज भी उतना ही स्वस्थ, शिष्ट और उन्नत होगा और उसके सदस्य जितनी अवनत अवस्था के होंगे, समाज भी उतना पतित और निकृष्ट अवस्था वाला होगा । हममें से जिस प्रकार किसी को अपना अलग अस्तित्व मानने का अधिकार नहीं है, उसी प्रकार यह भी अधिकार नहीं है कि हम उन्नत दशा में रहकर समाज को नीचे घसीटने की चेष्टा करें । हम समाज के अभिन्न अंग हैं और इसके लिए नैतिकताबद्ध हैं कि आत्मोन्नति द्वारा समाज की स्थिति में उच्चता का समावेश करें ।

अब एक बार उन्नति अथवा अवनति की व्यक्तिगत बात भी उन्नत दिशा की ओर अग्रसर हुए बिना जीवन में सुख-सन्तोष कहाँ ? सुख-सन्तोष तो व्यक्तिगत जीवन का लक्ष्य है ही । इसके विषय में तो कोई यह कह ही नहीं सकता कि हमें सुख-सन्तोष की कामना नहीं है । हम दुःख-दर्द का ही जीवन व्यतीत करते रहेंगे । यह हमारी व्यक्तिगत वस्तु होगी । इससे किसी का कोई सम्बन्ध नहीं । सुख-सन्तोष के लिए हम जीवन पर कोई प्रतिबन्ध अथवा नियम आरोपित करना पसन्द नहीं करते । कहने को कोई भले ही मुख से बकवास कर दे, किन्तु सुख-सन्तोष संसार का प्रत्येक व्यक्ति चाहता है । इसके अथवा इसकी आशा के बिना कोई जीवित ही नहीं रह सकता ।

जो उन्नति की ओर बढ़ने का प्रयत्न नहीं करेगा, वह पतन की ओर फिसलेगा । यह स्वाभाविक क्रम है । कोई भी उन्नति अथवा अवनति के बीच खड़ा नहीं रह सकता । इस संसार में मनुष्य जीवन की दो ही गतियाँ हैं—उत्थान अथवा पतन । तीसरी कोई भी माध्यमिक गति नहीं है । मनुष्य उन्नति की ओर न बढ़ेगा तो समय उसे पतन के गर्त में गिरा देगा । उस अवस्था में उसके जीवन में दुःख पश्चात्ताप, आत्मग्लानि अथवा कष्ट-क्लेशों के सिवाय सुख-शान्ति की एक क्षीण किरण भी पास न आ सकेगी ।

इतना ही नहीं हम सब आध्यात्मिक दृष्टि से भी उन्नति की ओर बढ़ने में कर्त्तव्यबद्ध हैं । यह शरीर, यह जीवन और यह सारी सुविधाएँ हमारी व्यक्तिगत सम्पत्तियाँ नहीं हैं कि हम इन्हें जिस प्रकार चाहें सदुपयुक्त अथवा दुरुपयुक्त करते रहें । यह सब वस्तुएँ किसी दूसरे की सम्पदा हैं जो हमें एक विशेष प्रयोजन के लिए प्रदान की गई हैं । यह सारी वस्तुएँ ईश्वर की धरोहर हैं और जीवात्मा का उद्धार करने के लिए तथा प्रयोग करने के लिए दी गई हैं । हम इनको विषयों के भोग में समाप्त कर डालें, किसी प्रकार भी हमें यह अधिकार प्राप्त नहीं है । जो कोई इस सम्बन्ध में अनधिकार चेष्टा करता है, उसे लोक से लेकर परलोक तक उसका समुचित दण्ड भोगना पड़ता है । यदि विषय-भोग ही इसका उद्देश्य रहा होता तो परमात्मा हमें पशु-योनियों से बढ़ाकर मनुष्य की योनि में क्यों बुद्धि, विवेक, विचार और भावनाओं की अनुपम विभूतियाँ ही अनुग्रह करता ?

हम आज मनुष्य हैं । यह स्थिति यों ही अनायास हमें प्राप्त नहीं हो गई है । यह सुफल है, जो हमें निरन्तर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्नति करने के पुण्य प्रयास में दिया गया है । कीट-पतंगों और पशु-पक्षियों की चौरासी लाख योनियों को क्रमशः पार करते हुए इस जीवात्मा को मनुष्य शरीर में ला सकने में सफल हो सके हैं । निम्न एवं साधन रहित कीट-पंतगों की स्थिति से उन्नति करते-करते मनुष्य जैसे महान जीवन में आकर हम उस अभियान को बन्द कर पतन की ओर जाने लगें इसमें कोई बुद्धिमानी जैसी बात तो समझ में नहीं आती । जबकि यही वह अवसर है, जिसमें उन्नति का प्रयास सबसे अधिक करने की आवश्यकता है ।

सामाजिक हित सुख-शान्ति अथवा आत्मोद्धार कोई भी उद्देश्य लेकर क्यों न किया जाये, हम उन्नति की ओर अग्रसर होने को बाध्य हैं और हमें यह हितकर बन्धन स्वीकार ही करना चाहिये । इन सभी उन्नतियों की ओर एक साथ अग्रसर होने का एक ऐसा समन्वित मार्ग निकाला जा सकता है, जिसमें सामान्य जीवन से हटकर किसी विशेष प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं है । वह मार्ग है किसी सदुद्देश्यपूर्वक जीवन की धारा को मर्यादित मार्गों से चलाना और ऐसे मार्ग न अपनाना जिस पर चलने से आत्मा निषेध करे ।

स्वार्थपूर्ण जीवन सबसे दुखःदायी जीवन है । इसका परिणाम नरक जैसी परिस्थितियाँ उत्पन्न कर देता है । संघर्ष, द्वेष, ईर्ष्या, लोभ, लिप्सा आदि दोषों का मूल कारण स्वार्थपरता के कारण ही मनुष्य चोर, छली, बेईमान और दुष्ट बन जाता है, ऐसा नहीं कि लोग इसको जानते न हों । लोग जानते हैं फिर भी इसी विभीषिका में गिरते चले जाते हैं । स्वार्थ की ओर पैर बढ़ाने से उन्हें आशंका होती है, आत्मा धिक्कारती है और लोग उसकी आवाज अनसुनी करके उस ओर बढ़ते रहते हैं । यह अप्राकृतिक प्रवृत्ति है, मनुष्य को इस निन्दनीय दुर्बलता को त्याग देना चाहिये । निःस्वार्थ भाव से अपने स्वत्वों की रक्षा और कर्त्तव्यों का पालन करने से सुन्दर, शीतल और सन्तोषपूर्ण अन्तःशान्ति मिलती है ।

स्वार्थ त्याग देने से परमार्थ का भाव स्वतः आ जाता है । परमार्थपूर्ण जीवन स्वर्गीय सुख-शान्ति का आगार है । किसी का हित करना, आवश्यक पीड़ितों की सेवा करना, किसी की सहायता में तत्पर रहना और किसी को दुःख न देना आदि ऐसी प्रवृत्ति हैं, जिसमें आनन्द की अनिवर्चनीय पुलक समाई रहती है ।

परमार्थी व्यक्ति बाहर से भले ही साधारण स्थिति का दिखाई दे, वह जोर-जोर से हँसता, खिल-खिलाता भले ही दृष्टिगोचर न हो तथापि उसका अन्तःकरण परिपूर्ण ही बना रहता है । उसमें एक अहेतुक सम्पन्नता, गरिमा और गौरव की अनुभूति बनी रहती है । परमार्थी की आत्मा ही सन्तुष्ट नहीं रहती, बल्कि उसके सम्पर्क में आने वाला हर आदमी सन्तुष्ट और प्रसन्न रहता है, जिससे उसकी स्वयं आत्मा का आनन्द बढ़ जाता है, सारे लोग उसे प्यार करते हैं, उस पर श्रद्धा के फूल बरसाते हैं और प्रशंसा किया करते हैं । समाज का यह अनुदान किसी के लिए भी सदा-सर्वदा वांछनीय है ।

परमार्थ बुद्धि रखने वाले व्यक्ति का सामाजिक ही नहीं पारिवारिक जीवन भी बड़ा सुखी व सन्तुष्ट रहता है । परिवारों में अधिकतर कलह का कारण स्वार्थपरता ही होती है । लोग अपनी-अपनी लगाए रहते हैं । अपने लिए ही अधिक से अधिक वस्तुएँ और अपेक्षा चाहते रहते हैं । हर कोई यह चाहता है कि परिवार में उसकी महत्ता और नेतृत्व ही बना रहे, प्रौढ़-सदस्य प्रौढ़ों के बीच और अवयस्क सदस्य समवयस्कों के बीच इसी भावना से प्रेरित रहकर कलह उत्पन्न करते रहते हैं । इस स्थिति में तू-तू, मैं-मैं होना स्वाभाविक ही है । जिस पारिवारिक जीवन को स्वर्ग तुल्य सुखदायक बतलाया गया है, वह नरक तुल्य कष्टदायक बन जाता है ।

जिन परिवारों के प्रमुख गृहस्थ परमार्थ दृष्टिकोण के होते हैं, वे सबसे पहले अपने स्वार्थ को त्यागकर अधिकारों को कर्त्तव्यों में समाविष्ट कर लिया करते हैं । सबके साथ समान प्रेम करते और सबको यथोचित आदर देते हैं । अपना कोई भाग न रखकर सारे का सारा परिजनों को बाँट देते हैं । ऐसे समभावी मुखिया को कष्ट पहुँचाने वाला कोई काम करना किसी परिजन को पसन्द न होगा फिर जिस परिवार में त्याग, निःस्वार्थ और स्नेह का त्रिविधि समीर बहता हो, वहाँ के किसी सदस्य का चित्त अवांछनीय ताप से व्याकुल रह भी कैसे सकता है । सुगन्ध का स्वभाव है कि वह जिसके सम्पर्क में आती है, उसे भी अपने समान ही सुगन्धित कर देती है । गुणों का सम्पर्क दूसरों को भी गुणी बना देता है । परिवारनायक की त्यागमय गतिविधि अन्य सदस्यों को प्रभावित किए बिना नहीं रह सकती । एक बार अस्वार्थ का सुख अनुभव कर लेने पर फिर कोई भी व्यक्ति स्वार्थ को पास नहीं ठहरने देगा ।

इस प्रकार जिसमें स्वार्थ के त्याग और परमार्थ के ग्रहण की महानता स्वीकार कर अपना जीवन तदनुरूप ढाल लिया, उसके लिए मानो इसी संसार में स्वर्ग का द्वार उद्घाटित हो गया । जिसके परिवार में सुख-शान्ति बनी रहे और समाज जिसके लिए स्नेह एवं श्रद्धा के सुमन लिए खड़ा रहे उसके लिए इससे बढ़कर स्वर्ग अन्यत्र कहाँ हो सकता है ? हम सब देवताओं के जिस अनदेखे स्वर्ग की कल्पना करते हैं, उसमें भी तो इस प्रकार के सुख-सन्तोष और हर्ष, प्रसन्नता का आरोप किया करते हैं । वहाँ भी इससे अधिक और क्या होता है और उसे पाने के लिए भी तो स्वार्थ का त्यागकर परमार्थ का ही पथ अपनाना पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

५.११ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

परमार्थपरायण व्यक्ति का दृष्टिकोण यह रहता है कि परमात्मा की कृपा और माता-पिता का उपकार ही साकार होकर हम सबको शरीर रूप में मिला है । इस प्रकार भी कह सकते हैं कि मानव जीवन की आधारशिला उपकार ही है । इसलिए हमारा यह जीवन परोपकार में ही लगना चाहिये । इसी में इसकी सार्थकता है और इसी में कल्याण ।

परोपकार के सदृश इस संसार में कोई दूसरा धर्म नहीं है । अपने अस्तित्व को संसार के हित में बलिदान कर देने से जिस महान धर्म फल की प्राप्ति होती है, उसकी तुलना अन्य धर्मकाण्डों से नहीं की जा सकती है । प्रसिद्ध सन्त मोओतजे कहा करते थे कि "यदि मेरे शरीर को पीसकर चूर्ण बना लेने में संसार के एक भी प्राणी का भला हो सकता है तो मैं उसके लिए सहर्ष तैयार हूँ ।"

परोपकार के समान पुण्यदाता कोई भी दूसरा धर्म नहीं है । यदि ऐसा होता तो तपस्या में निरत महर्षि दधीचि देवों की भलाई के लिए अपना शरीर नहीं दे देते । वे शरीर की रक्षा करते और तपस्या करके बड़ी-बड़ी सिद्धियाँ प्राप्त और मुक्ति के लिए प्रयत्न करते रहते किन्तु अवसर पाते ही उन्होंने तुरन्त ही परोपकार में अपना शरीर दान कर दिया । वे जानते थे कि हजारों वर्ष तप करने पर भी जो मुक्ति कठिनता से मिलती है, वह परोपकार में शरीर त्याग देने से तत्काल सरलतापूर्वक मिल जाती है ।

परोपकार में सर्वस्व दे देने वाले एक दधीचि ही नहीं । भारत में तो शिवि, हरिश्चन्द्र, मोरध्वज, कर्ण, दिलीप आदि न जाने कितने महापुरुष ऐसे हुए हैं जिन्होंने परोपकार को ही सर्वश्रेष्ठ धर्म माना और अवसर आने पर उसका सहर्ष निर्वाह भी किया । वह सारे मनीषी इस तथ्य से अनभिज्ञ नहीं थे कि यह शरीर कल्याण का साधन होने पर भी नाशवान है । मानव जीवन का कोई ठीक नहीं कि किस समय समाप्त हो जाए । यह तब तक भी चल सकता है, जब तक साधना पूरी हो और बीच में समाप्त हो सकता है । जीवन का रहना सदा संदिग्ध बना रहता है । शरीर से जहाँ पुण्य कर्म बनते हैं, वहाँ कभी प्रमादवश इससे कोई त्रुटि भी हो सकती है । यही साधना के बीच में व्यवधान भी खड़ा कर सकता है ।

जीवन प्रवाह तो ऊँचे-नीचे मार्गों के बीच से होकर बहता है । अस्तु, इस शरीर, इस जीवन को परोपकार में समर्पित कर साधना का सबसे निरापद मार्ग है । इसी विवेचना के आधार पर उन्होंने अवसर पाते ही अपना जीवन परोपकार में लगा दिया और ऐसे ही सत्पुरुष क्षण-क्षण अपना जीवन परोपकार में ही लगाए चलते हैं । परोपकार से बढ़कर निरापद दूसरा कोई धर्म नहीं है ।

प्राणिमात्र का हित, उपकार और कल्याण में रत रहना, मन, वचन, कर्म से दूसरे का हित चाहना और करना, किसी के अहित अथवा पीड़ा का विचार न करना और विश्व-बन्धुत्व की भावना को विकसित और विस्तृत करते रहना आदि सारी सदाशयताएँ परोपकार ही मानी गई हैं । तथापि इनमें आध्यात्मिक शान्ति और निष्कलंक धर्मफल का समावेश तभी होता है, जब इनके पीछे कोई स्वार्थभाव निहित न हो । अन्यथा यही पुण्य कर्म आत्मा के लिए एक प्रवंचना बन जाएगा ।

परोपकार का भाव तो प्रकृति के समान निःस्वार्थ होना चाहिये । सूर्य, चन्द्र, वायु, नदी, वन, पहाड़ नित्य निरन्तर संसार के उपकार में ही लगे रहते हैं, किन्तु उसके बदले में न कुछ माँगते हैं और न चाहते हैं । चुपचाप अपना सर्वस्व दान करते रहते हैं । सूर्य नित्य नियम से अपना प्रकाश और ऊष्मा संसार को देने के लिए पृथ्वी की परिक्रमा करते रहते हैं, किन्तु उसके बदले में किसी से कुछ चाहते नहीं । चन्द्रमा नियम से संसार को आलोक और शीतलता दान करता रहता है, किन्तु सर्वथा निःस्वार्थ भाव से । इसी प्रकार वन-वृक्ष, नदी और पर्वत भी सदैव निःस्वार्थ भाव से ही अपने फल-फूल, काष्ठ, जल और वनस्पतियाँ संसार को देते हुए कभी कोई प्रतिकार नहीं चाहते ।

लोग जाते हैं अधिकारपूर्वक उनकी सम्पत्ति का भाग लेकर चले आते हैं, उनके भण्डार, उनकी सम्पत्ति सदा-सर्वदा संसार हित के लिए खुली पड़ी रहती है । वे उसके लिए न तो किसी का हाथ रोकते हैं और न प्रतिदान के लिए हाथ फैलाते है । धन्य है ऐसे निःस्वार्थ, निष्काम और उदार परोपकारी । ये ही परमात्मा की कृपा और आत्मा की सच्ची शान्ति के अधिकारी बनते हैं ।

जब जड़ प्रकृति संसार का उपकार करने में इस गहरे निष्काम भाव से लगी रहती है तो क्या चेतन होकर मनुष्य संसार के कल्याण में नहीं लग सकता ? लग सकता है और अवश्य लग सकता है । उसे लगना भी चाहिये । परोपकार में निरत होने से केवल संसार का ही भला नहीं होता प्रत्युत् अपना कल्याण भी होता है । मनुष्य के चरित्र की परीक्षा परोपकार की कसौटी पर ही होती है । जो इसमें अपने को उत्तीर्ण कर लेता है, वह सहज रूप से भवसागर से उत्तीर्ण हो जाता है ।

परोपकार का पुण्य मनुष्य को सभ्य-सुसंस्कृत, उच्च विचार और भावना वाला बना देता है । परोपकार से मनुष्य का मन निर्मल और विकाररहित बनता है । उसके जीवन में सतोगुण की वृद्धि और आत्मा में आध्यात्मिक आलोक का समावेश होता है । परोपकार की भावना जितनी उच्च, विशाल और निष्काम होती जाती है, मनुष्य उतना ही परमात्मा के सान्निध्य की ओर बढ़ता जाता है । इस आत्मिक उन्नति और विकास का सुख अनिवर्चनीय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । इसका अनुभव तो वही त्यागी पुरुष कर सकता है, जो परोपकार के यज्ञ में अपने सर्वस्व को समिधा मानकर समर्पित कर देता है ।

सत्पुरुषों की पहचान का सबसे बड़ा लक्षण है परमार्थ । कोई कितना ही सभ्य, शिष्ट और सुशील क्यों न दिखाई दे । नम्रता और विनय उसके शब्द-शब्द से टपकती चलती हो, मुख पर कितनी ही करुणा और कृतज्ञता का भाव विराजमान क्यों न रहे, यदि उसका जीवन परमार्थ पूर्ण नहीं है, उसके जीवन और वैभव का कोई अंश परोपकार एवं परमार्थ में नहीं लगता तो उसे उस प्रकार का वास्तविक मनुष्य नहीं माना जा सकता, जैसाकि वह ऊपर से दीखता है ।

धनाढ्यता का लक्षण धन उपार्जन अथवा संचय ही मात्र नहीं है, उसका लक्षण उदारता ही है । जो जितना अधिक उदार और परोपकारी है, वह उतना ही अधिक धनवान है । एक पैसे का उपकार करने वाला गरीब कहीं अधिक धनवान है, उस व्यक्ति की तुलना में जो करोड़ों का स्वामी होकर भी परोपकार के विषय में कृपणता करता है । जो परमार्थ में लीन है, तन, मन, धन से परोपकार एवं परहित में निरत है, वही सज्जन है, वही सत्पुरुष है और वही धनवान है ।

परोपकार केवल मानवीय गुण ही नहीं वह आध्यात्मिक सद्गुण भी है । इसकी आराधना करने से लोक ओर परलोक दोनों का बनाव बनता है । इसी गुण पर जहाँ आत्मा का उत्थान निर्भर है, वहाँ संसार और समाज सृजन की व्यवस्था और विकास की धुरी भी इसी पर निर्भर रहती है । आज यदि समाज के सारे लोग केवल स्वार्थी बन जाएँ और दूसरों के हित का सम्पादन न करें तो कल ही समाज में घोर अनर्थ घटित होने लगें । अराजकता, संघर्ष और छीना-झपटी का बोलबाला हो जाए, जो उद्दण्ड, बली और शक्तिशाली हों, वे सारे साधनों और सम्पत्ति पर अपना एकाधिपत्य स्थापित कर लें और जो सामान्य, साधारण अथवा अपेक्षाकृत निर्बल हों, वे बेचारे पिसकर ही रह जाएँ । परहित और परोपकार के बिना संसार का क्रम एक क्षण भी नहीं चल सकता । अस्तु आत्मा और समाज के कल्याण के लिए यथा साध्य परोपकार के कार्य करते ही रहना चाहिये ।

माता-पिता सन्तान को जन्म देते हैं । उनके पालन-पोषण और विकास के लिए कष्ट उठाते हैं । धन के लिए परिश्रम करते, सुख और सुविधा के लिए चिन्ता करते किन्तु वे यह सब करते हैं, निःस्वार्थ भावना से ही । किन्तु माता-पिता को पहले से ही यही पता रहता है कि उनका पुत्र बड़ा होकर उनकी सेवा करेगा, उनके लिए सुख और आराम के साधन जुटाएगा । तब भी वे बच्चों की सेवा में हर प्रकार का त्याग एवं उत्सर्ग करते ही रहते हैं । इतना ही नहीं, संसार में कुपुत्रों का उदाहरण देखकर भी और स्वयं भी एक से कष्ट पाते हुए भी दूसरे का पालन-पोषण करते ही रहते हैं ।

वे अपनी इस सेवा के पीछे किसी प्रकार के प्रतिकार की भावना नहीं रखते । बच्चे की सेवा वे सेवा-भाव से ही करते हैं । बच्चों द्वारा कष्ट पाने के उदाहरणों को देखकर भी वे सेवा से संकोच नहीं करते । उन्हें उसमें एक आनन्द किसी आशा के कारण नहीं होता है । वह सुख, उस परमार्थ भाव का ही होता है, जो सन्तान की सेवा में उनके अनजाने ही निहित रहता है । परोपकार के सम्बन्ध में इसी प्रकार माता-पिता की तरह ही निःस्वार्थ भाव रखने से उसके द्वारा अनिवर्चनीय आनन्द की उपलब्धि होती है ।

परमार्थपरायणता आध्यात्मिक प्रौढ़ता का चिह्न है—पेड़ जब पुष्ट हो जाते हैं, तब माँगते किसी से नहीं हर घड़ी देते ही देते हैं । लकड़ी, पत्ते, पुष्प, फल, सुगन्ध का अनुदान वे निरन्तर अपरिचित रूप से दूसरों को देते रहते हैं । यही उनका स्वाभाविक धर्म बन जाता है । अध्यात्म की भूमिका में जैसे-जैसे मनुष्य विकसित होता जाता है, वैसे-वैसे उसका परमार्थ पराग भी खिले हुए कमल पुष्प की तरह दशों दिशाओं में उड़ने लगता है । उसकी उदारता, करुणा, महानता, सदाशयता एक घड़ी चैन से नहीं बैठती, वह लुटाने के लिए व्याकुल रहती है, गाय के थन में जरा दूध जमा हुआ कि वह कराहने लगती है, जब तक उसे खाली नहीं कर देती, तब तक बेचैनी अनुभव करती है । पेड़ अपने परिपक्व फलों को बिना किसी के माँगे धरती पर टपकाते रहते हैं ताकि आवश्यकता ग्रस्तों को मधुर अनुदान अनायास ही बिना मूल्य मिल जाय, यही आध्यात्मिकता है ।

जैसे-जैसे मनुष्य का आन्तरिक स्तर विकसित होता जाता है, वह इस विश्व वसुन्धरा को अधिक सुन्दर, अधिक सुविकसित, अधिक सुसंस्कृत बनाने के लिये तत्पर दिखाई देता है । सेवा और अनुदान ही उसके प्रिय विषय और प्रिय व्यसन बन जाते हैं । अपने लिए वह स्वर्ग, मुक्ति या सिद्धि में से किसी की कामना नहीं करता वरन् यही सोचता रहता है कि जो कुछ मुझे मिला है, उसे विश्वमानव को अधिक सुसज्जित बनाने के लिए किस तरह उस सबको लौटा दूँ ?

देवत्व का स्वरूप है—दया और दान । इस संसार में जो दुःख और दैन्य है, उसे देखना पड़ता है, उससे उसका हृदय पिघल पड़ता है । 'सन्त हृदय नवनीत समाना' सूक्ति के अनुसार उसकी पिघलती हुई करुणा एवं सदाशयता इस बात के लिये विवश करती है कि पीड़ित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानवता के घावों पर मरहम लगाने के लिए उसके पास जो कुछ बल, बुद्धि, विद्या, सम्पत्ति तथा स्थिति है, उसका अधिकाधिक भाग समर्पण करे । ऐसी स्थिति में वह अपना घर-परिवार थोड़े लोगों में सीमाबद्ध नहीं करता । बेटे, पोतों को ही उसकी सारी विभूतियों का लाभ मिलना चाहिये ऐसा नहीं सोचता, वरन् सभी को अपना समझता है और मोहवश किन्हीं सम्बन्धियों के लिए मरते-खपते रहने की संकीर्णता छोड़कर हर दर्दमन्द की—हर पिछड़े व्यक्ति की सेवा-सहायता करने में तत्पर हो जाता है ।

परमार्थ ही सच्चा स्वार्थ

कहा जा सकता है कि परमार्थ मानव जीवन का सच्चा स्वार्थ है । परम माने बड़ा, वास्तविक अर्थ माने प्रयोजन स्वार्थ । जो वास्तविक स्वार्थ बड़ा स्वार्थ है, उसी को परमार्थ कहते हैं । धन कमाना, स्वाद चखना, अहंकार जताना यह बहुत छोटे क्षणिक लाभ हैं । वास्तविक चिरस्थायी लाभ वह है जिसके आधार पर आत्मा की सुख-शान्ति और मुक्ति का पथ प्रशस्त हो सके । शरीर वाहन है आत्मा स्वामी । वाहन की सुविधा, सुरक्षा का ध्यान तो रखा जाय पर स्वामी की सर्वथा उपेक्षा न कर दी जाय । यह तथ्य जिसकी समझ में आ जाता है वह आत्म-कल्याण की विचारणा और क्रिया पद्धति को प्राथमिकता देता है । शरीर और परिवार के निर्वाह की भी वह व्यवस्था करता है, पर आत्मा के लक्ष्य और उद्देश्य को साधने के लिए भी वह समुचित प्रयत्न करता है । उन महान प्रयोजनों में भी उसका समय, श्रम, पुरुषार्थ और मनोयोग कम से कम उतना तो लगता है, जितना शरीर निर्वाह में । हर दूरदर्शी और विवेकशील व्यक्ति की गतिविधि यही हो सकती है । वह जानता है कि शरीर तो कुछ दिन का साथी है ।

सुख-दुःख, उत्थान-पतन के प्रतिफल तो अनन्त काल तक आत्मा के सामने ही आने वाले हैं । इसलिए शरीर मोह की एक सीमा होनी चाहिये और उसकी वासनाओं की पूर्ति में इतना न उलझ जाना चाहिये कि आत्मिक स्वार्थों की पूर्ण उपेक्षा ही होने लगे । उसके लिए फुरसत न मिलने, आर्थिक तंगी का बहाना करके अब तो मन बहलाया जा सकता है पर जब शरीर वृद्ध, रुग्ण अथवा मृत हो जाता है, तब भूल समझ में आती है और सूझता है कि इस तुच्छ वाहन के मनोरंजन में बहुमूल्य मानव जीवन चला गया और जो करना चाहिये था, उसको सर्वथा भुला दिया गया । वह घड़ी घोर पश्चात्ताप की होती है । तब अपनी भूल का पता चलता है किन्तु समय बीत चुका होता है और हाथ मल-मल कर पछताने के अतिरिक्त और कुछ शेष नहीं रहता ।

अच्छा हो कि समय से पूर्व चेतें, अपने स्वरूप को समझें, आत्मा के हित साधन की बात सोचें और परमार्थ पथ के पथिक बनें । केवल राम नाम लेने से आत्मिक उद्देश्य पूरे हो सकते हैं, इस भ्रान्त धारणा को मन में से हटा देना चाहिये, इतना सस्ता आत्म-कल्याण का मार्ग नहीं हो सकता । पूजा उचित और आवश्यक है पर उसकी सफलता एवं सार्थकता तभी सम्भव है, जब जीवन-क्रम भी उत्कृष्ट स्तर का हो । अन्यथा तोता-रटंत किसी का कुछ हित साधन नहीं कर सकती । नाम जप कर लेने मात्र से परमार्थ प्रयोजन सिद्धि हो जाएगी यह सोचते रहना—सस्ते नुस्खों से मन बहलाते रहना उचित नहीं । हमें यथार्थवादी होना पड़ेगा । जीवन-साधना के प्रधान अंग परमार्थ को अपनाना पड़ेगा । परम स्वार्थ का स्वरूप—आत्मनिर्माण है । लोकमंगल के लिए सेवा-धर्म अपनाना, अपनी परोपकार परायण सेवा प्रवृत्ति का परिचय देना नितान्त आवश्यक है । जिसकी आत्मा से विश्व मानव की सेवा करने, इस संसार को अधिक सुन्दर, सुव्यवस्थित एवं सुखी बनाने की भावनाएँ उठती रहती हैं और इस मार्ग पर चलने की प्रबल प्रेरणा करती है—वस्तुतः सच्चा परमार्थी और ईश्वर भक्त वही है । उसी का नाम-जप सार्थक कहा जा सकता है ।

परमार्थ का जितना तत्व, जितना अंश हमारे जीवन क्रम में सम्मिलित होगा उतनी ही आन्तरिक शान्ति मिलेगी और उतना ही आत्मकल्याण का पथ प्रशस्त होगा । परमार्थ साधना के बिना, सेवा धर्म का व्रत पालन किए बिना मनुष्य जन्म की सार्थकता नहीं मानी जा सकती । इसलिए हर अध्यात्मवादी को अपने शरीर एवं सांसारिक स्वार्थों को सम्मिलित रखकर आत्मिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए अधिकाधिक ध्यान देते चलने का क्रम बढ़ाना पड़ता है ।

जब हम दूसरों के हित और भले के लिये अपने समय व साधनों का उपयोग करेंगे तो निश्चित है कि उसका प्रभाव समाज पर होगा । समाज में अच्छी परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं, अच्छा वातावरण बनता है तो प्रत्यक्षतः स्वयं का भी लाभ होगा ?

इसी प्रकार व्यक्तित्व को विस्तृत अथवा समाज में फैला लेने से हम स्वयं ही अपने स्वार्थ में प्रति-बन्धित होकर चलने लगेंगे और कोई भी ऐसा काम न करेंगे जिससे लोकनिन्दा अथवा लोकापवाद का भागी बनना पड़े ।

अपने वर्तमानकालीन व्यक्तित्व का परिमार्जन कर मूल व्यक्तित्व का दर्शन करिए । इससे निकृष्टताओं से मुक्ति मिलेगी । स्वार्थों में उदात्तता का समावेश होगा और आज के हमारे निन्दित स्वार्थ कल से ही परमार्थपरक बनकर आत्मसन्तोष, आत्मशान्ति और आत्मसुख का उद्देश्य पूरा करते हुए स्वार्थ एवं परमार्थ दोनों का सुख देंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकृति के अनुदान अन्य प्राणियों को भी मिले हैं

मनुष्य को अन्य प्राणियों की तुलना में बुद्धि की मात्रा अधिक मिली है, फिर भी ऐसा नहीं समझना चाहिये कि अन्य जीव-जन्तु सर्वथा असहाय हैं । उनमें से अनेकों को ऐसी विशेषताएँ प्राप्त हैं, जिसके लिए मनुष्य को ईर्ष्या हो सकती है । निस्सन्देह कितनी ही विशेषताएँ अन्य प्राणियों को ऐसी उपलब्ध हैं कि यदि वे मनुष्य शरीर के अनुपात से उसे भी मिली होतीं तो वह कल्पित देवदानवों जैसा सामर्थ्यवान होता ।

विभाजन में मनुष्य के हिस्से में बुद्धि की मात्रा अधिक आई, यह ठीक ही हुआ; पर इतने भर से ईश्वर पर यह आक्षेप नहीं लगाया जा सकता कि उसने दूसरों को कुछ दिया ही नहीं है । अपनी स्थिति में सुविधापूर्ण जीवनयापन करने की दृष्टि से जो आवश्यक था, उसे उन्हें देने में भी सृष्टा ने कोई कमी नहीं रखी है ।

'रेगिस्तान का जहाज' कहा जाने वाला ऊँट एक बार में ७० लीटर जल पी जाता है और तीन-चार दिन तक मरुभूमि में बिना पानी के रह जाता है । सहारा रेगिस्तान जैसे शुष्क प्रदेश में ऊँट जैसे प्राणी को ही वाहन बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । वहाँ पानी का इतना अभाव है कि मनुष्य को भी दुर्लभ है तो ऊँट को कहाँ से उपलब्ध करवाया जाए ? किन्तु ऊँट एक ही समय में ७० लीटर तक पानी पीकर अपने भीतर की थैली में सुरक्षित रखे रहता है, जिसका उपयोग वह कड़ी धूप में किया करता है । वनराज शेर यों तो किसी का भी शिकार कर लिया करता है । किन्तु जिराफ उसे ५ मील दूर भी दीख जावे तो वह पास के अन्य शिकार को छोड़कर पहले उसे मारने का प्रयत्न करेगा, जिराफ शेर को गुलाब-जामुन सा स्वादिष्ट और प्रिय है । किन्तु प्रकृति ने जिराफ की रक्षा के लिए उसकी खाल इस प्रकार की बनाई है कि वह पेड़ों के बीच ऐसे छिप जाता है कि पास होने पर भी शेर उसे पहचान नहीं पाता ।

सामान्यत: जीवों का आकार ही उनकी शक्ति का द्योतक माना जाता है । नेवला इसके कुछ अपवादों में से एक है । वह अपने आकार से बहुत अधिक शक्ति रखता है । साँभर जैसे बड़े जीव पर भी वह कभी-कभी घातक आक्रमण कर बैठता है ।

कुछ वर्गों के नेवले साँप के साथ युद्ध कर उसे समाप्त कर डालते हैं । उसमें भी उनका कौशल अधिक काम आता है । सर्प के आक्रमण के समय नेवला सतर्कता से एक ओर हट जाता है और फिर साँप के दुबारा आक्रमण करने पर भी ऐसा ही करता है । बार-बार ऐसा कर साँप को थका डालता है । थके साँप की गर्दन पकड़ नेवला उसकी खोपड़ी कुचल देता है ।

जुगनू की जगमगाहट सर्वविदित है । पर बहुत-से सूक्ष्म जीवाणुओं में भी ऐसा ही प्रकाश पाया जाता है । अधिकांश स्वयं प्रकाशित जीवों के पास ऐसे विशेष अवयव हैं कि वे प्रकाश को आत्म-नियन्त्रित रखते हैं, जैसे हम टार्च को इच्छानुसार जला-बुझा सकते हैं, उसी तरह ऐसे प्राणियों में विशेष ग्रन्थियाँ होती हैं, जो लुसिफेरिन नामक प्रकाश-रसायन में ऑक्सीजन के द्वारा जगमगाहट पैदा करते हैं । दक्षिणी अमेरिका में रेलगाड़ी नामक एक-दो इन्च लम्बा कीड़ा होता है, जिसके मुँह में लाल दीपक होता है और दोनों ओर ११-११ हरे दीपक होते हैं ।

वेस्टइंडीज के 'मोटर कीड़ा' के उदर से पीतवर्ण प्रकाश निकलता है । उसके मुँह में दो दीपक होते हैं ।

सागरवासी अनेक जलचर स्वयं प्रकाशित होते हैं । इस प्रकाश का उपयोग वे खाद्य-प्राप्ति एवं प्रणय-व्यापार के लिए करते हैं ।

अपने अंडों के संरक्षण के लिए मछलियों द्वारा सरिताओं, सरोवरों या जल-स्रोतों की सतह पर बनाए गए भवन उनकी वैज्ञानिक जानकारियों के प्रमाण होते हैं ।

स्ट्रीकलबैक नामक मछलियों के नर मई-जून में रस्सी के छोटे टुकड़ों को तथा समुद्री सेवार लेकर अपने भीतर से निकाले गए धागों से उन्हें बुनते हैं और घर बनाते हैं ।

क्वींसलैण्ड की वरनेट नदी में इरियस नामक मछलियाँ २० इन्च व्यास वाला एक गहरा वृत बनाती हैं । वहीं अंडे देती हैं । अभियाकाभा नामक मछलियाँ प्रजनन ऋतु में गहरे पानी से उथले में जाकर सेवार के कोमल पौधे ढूँढ़ती हैं तथा उन्हें ही तोड़कर घोंसले जैसा बनाकर वहीं अण्डे देती हैं । अंडे घोंसले से चिपटे रहते हैं और जब तक अण्डों से बच्चे नहीं निकलते, नर अभियाकाभा उनके संरक्षण का दायित्व सँभालते हैं । ट्राइनकोस्टर मछलियाँ छोटे पौधों को तोड़कर, हवा के बुलबुलों के साथ, एक तैरता हुआ टापू तैयार करती हैं । मादा इसी टापू में अंडे देती है । यदि वजन से अंडे नीचे जाने लगते हैं, तो नर नीचे से फूँक मारकर उन्हें टापू के भीतर कर देते हैं । भारतीय मछली गरई भी अपने घर छोटे पौधों, हवा के बुलबुलों तथा अपने मुँह की लार से बनाती है ।

ह्वेल एक भयानक मछली है । वह अपने प्रचण्ड प्रहार से बड़े-बड़े जलयानों को भी हिला देती है । नौकाओं को उलटना तो मामूली बात है । मनुष्य उसके करीब पहुँचा कि वह उसे चिथड़े-चिथड़े कर दे सकती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

५.१५ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

'आक्टोपस' आठ-दस भुजाओं वाला विशालकाय जीव है । गहरे जल में चट्टान तले यह छिपा रहता है और शत्रु पर घात लगाकर आक्रमण करता है । दसों भुजाओं से एक साथ प्रबल प्रहार कर वह अपने शिकार को नीचे गहरे में खींच ले जाता है ।

शार्क मछली भयानक होती है । उसके दाँत तीक्ष्ण तलवार की धार जैसे होते हैं । लेकिन कछुए के खोल पर उन दाँतों का कोई असर नहीं होता ।

समुद्र में दस मुँह वाला एक घोंघा होता है । यह अपने शरीर में हवा भर लेता है । फिर दौड़ लगाता है, तो पानी को जेट इंजन की-सी तेजी से चीरता जाता है ।

गायें, बैल, भैंसें आदि घास-पात चरने वाले जीव किसी घास के पौधे या किसी झाड़ी को चरते समय तेजी से अपनी ओर खींचते हैं । गैंड़ा भी झाड़ियों को चरते हैं । पर वे उन्हें तेजी से ऊपर की ओर खींचते हैं, जैसे उखाड़कर फेंक देंगे । कारण ? बात यह है कि गैंडे प्राय: कँटीली झाड़ियों को चरते हैं । उन्हें अपनी ओर खींचे, तो काँटे आँखों में आ घुसें ।

प्रत्येक जीव जन्म से मृत्यु तक निरन्तर संघर्षरत रहता है । संघर्ष के दो पहलू हैं—आक्रमण और सुरक्षा । प्रत्येक जीव अपनी सुरक्षा के लिए सतर्क रहता है । विभिन्न जीव-जन्तु अपने बचाव हेतु स्फूर्ति, छल, कौशल, चातुर्य आदि का आश्रय लेते हैं । प्रकृति ने आत्मरक्षा की अनेक विशेषताएँ प्राणियों को दी हैं, साथ ही आहार प्राप्ति में वे पिछड़ न जाएँ इसके लिए भी उन्हें आवश्यक सामर्थ्य एवं कुशलता प्रदान की है ।

गिरगिट अपना रंग इसलिए बदलता है कि वह विपत्ति से बचने के लिए छिपने का प्रयास करता है । फ्लूरोटैटिक्स नामक मछलियाँ और सीपियाँ भी रंग-परिवर्तन में पटु होती हैं । सागरवासिनी 'कटिल' नामक मछली विपत्ति का आभास पाते ही, अपने वातावरण व निवास-स्थल जैसा ही अपना रंग बदल लेती है ।

यों, कुछ जीवों का प्रकृति-प्रदत्त रंग भी उनकी इस काम में सहायता करता है । तोतों को हरे वृक्ष की शाखाओं के बीच, सफेद भालू को बर्फीले विस्तार के मध्य तथा टिड्डों को हरी घास या हरी टहनियों के बीच पहचान पाना कठिन है । सूखी घास का वाशिन्दा कैरायूसस कीड़ा उसी रंग का होता है ।

अमरीका का 'आजरो' और आस्ट्रेलिया का डिंगो' नामक कुत्ते आपत्ति आने पर मरने का अभिनय करते हैं । वे भूमि पर शवासन में लेट जाते हैं । कांचिल हिरण भी मृत्यु अभिनय में प्रवीण होते हैं । खटमल तथा अन्य कई कीड़े भी इसमें निपुण होते हैं । वे सिर पर खतरा देख सहसा शववत् हो जाते हैं, खतरा टल जाने का अनुमान कर पूर्ववत् चलने लगते हैं ।

छिपकली तो विपत्ति आते ही अपनी पूँछ को तोड़कर अलग कर देती है । वह पूँछ कुछ देर तक उछलती-कूदती रहती है, जिससे कि शत्रु उसे ही छिपकली समझ भ्रम में पड़ सकता है ।

कुछ केंकड़े तथा समुद्री तटों पर चट्टानों आदि के तले रहने वाला रिवनवर्म नामक जीव भी, आपत्तिकाल में अपने को कई हिस्सों में बाँट देते हैं यानी अपने अंगों को अलग-अलग कर डालते हैं ।

बन्दर घुड़की प्रसिद्ध है । विपत्ति की आशंका से बन्दर शत्रु को डराते-धमकाते हैं । लामा नामक एक अमरीकी जीव शत्रु पर तेजी से थूकता है । स्कन्ध नामक एक अन्य जीव दुर्गन्ध भरा द्रव्य छोड़ता है ।

आत्मरक्षार्थ सर्प फन फैलाकर शत्रु पर फुसकारते हैं । अमरीका की होनर्ड लिआर्ड नामक छिपकली का शरीर आपत्तिकाल में फूल जाता है, फिर वह नेत्रों से रक्त की तेज धार छोड़ती है । मिक नामक जीव भी शत्रु को भगाने के लिए तीव्र गन्ध वाला द्रव्य छोड़ते हैं ।

लोमड़ी अपनी रक्षा के लिए चकमा देती है । कभी इधर भागती है, कभी उधर । सीही अपने शरीर के काँटों को सख्त व खड़ा कर लेती है । पैंगोलिन नामक प्राणी भी ऐसा ही करता है । कछुआ अपने हाथ-पैर अपने खोल के भीतर समेट लेता है । आर्मेडेलो नामक जीव जिसके उदर की त्वचा कोमल और पृष्ठ भाग कठोर होता है, आपत्तिकाल में अपने आपको गोल बना लेता है । आत्मरक्षा के साथ ही कई जीव अपने सहयोगियों को भी संकट से सतर्क कर देते हैं । गिलहरी, कौए ऊँचे चढ़कर अपने स्वर से खतरे के संकेत दे देते हैं । चीतल, काकड़ और बन्दर आदि शेर या किसी अन्य खतरनाक जीव को देखकर चीख-चीखकर सबको सतर्क कर देते हैं । खरगोश विपत्ति देखते ही अपने पिछले पैरों पर खड़ा होकर जमीन खोदकर आवाज करता है, उससे सभी खरगोश-बन्धु चौकस हो जाते हैं । बबून नामक बन्दरों में एक बन्दर खेतों की मेड़ पर सन्तरी बना बैठा रहता है और खतरा देखते ही समूह को सतर्क कर देता है । एक जंगली गधा तिब्बत में होता है, वह विपत्ति देखते ही तेजी से रेंक-रेंककर साथियों को सूचना दे देता है । एक दक्षिण अफ्रीकी मेंढक रुदन-ध्वनि द्वारा संकेत भेजता है ।

हिंसक पशुओं से अपने स्वामी या रखवाले की रक्षा के लिए निमित्त गायें कई बार सामूहिक प्रतिरोध करती हैं । शेर तक का भी गायों द्वारा मुकाबला किये जाने की कई घटनाएँ प्रकाश में आ चुकी हैं । गौ का वात्सल्य प्रसिद्ध है । बछड़े को जन्म देते ही गाय के थनों में स्फूर्ति व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सक्रियता आ जाती है । घास पचने से बना हुआ रक्त, जब इन सक्रिय हो उठे थनों के भीतरी कोशों से गुजरता है, तो उस ग्रन्थि के 'सेल्स' उस रक्त को दूध में बदल डालते हैं ।

हँसी-खुशी की अभिव्यक्ति मनुष्यों के ही हिस्से में नहीं आई है, उनका आनन्द पशु-पक्षी और कीड़े-मकोड़े भी उठाते हैं । सच तो यह है कि आनन्दानुभूति को व्यक्त करने वाले, भाव भरे नृत्य अभिनव मनुष्य ने इन अन्य जीवों से ही सीखे हैं । इस प्रकार के भावों में इन प्राणियों का नामोल्लेख भी किया जाता है । मयूर-नृत्य, भ्रमर गीत, कोकिल तान, झींगुर लय आदि की चर्चा कला क्षेत्र में होती रहती है और उनका अनुकरण किया जाता है ।

मेघ-दर्शन से विभोर मयूर का मयूर-नृत्य प्रसिद्ध है और नृत्य कला का एक अंग भी है ।

मेफ्लाई नामक मक्खी का नृत्य-संगीत विश्व प्रसिद्ध है । युवा मेफ्लाई युवती मेफ्लाई को तरह-तरह की आकर्षक मुद्राओं में नृत्य दिखाता है ।

मादा मछली डैने फैलाकर नाचती है, जो परिधान का छोर पकड़कर तैरने की-सी मुद्रा में किए जाने वाले नृत्यों का प्रेरणा-स्रोत है ।

बिच्छू आकर्षक बाल-डांस करते हैं । मकड़े का नृत्य भी तालमय होता है । आठ-दस मकड़े मिलकर ट्विस्ट भी करते हैं ।

बरसात में जंगली बतखें नर-मादा मिलकर दिन भर नाचती हैं और दिन ढले घर लौटती हैं ।

दक्षिण अफ्रीका की 'डान्सर' मैना संगीत की सुमधुर धुनों के साथ सामूहिक नृत्य करती है । न्यूजीलैण्ड की 'बर्ड आफ पैराडाइज' भी नृत्य-निपुण होती है और तो और युवा घोंघा भी गुनगुनाहट के साथ विभोरावस्था में नृत्य करता है ।

सारस प्रणय-याचना के समय परों और पैरों को एक निश्चित ताल के साथ पटकते हुए, गोलाकार घूमते हैं । उनका स्वर भी ताल के अनुरूप होता है । जियरे गणतंत्र के वत्सुई समाज में तो इस नृत्य के आधार पर बने पारम्परिक नृत्य का नाम ही 'सम्मानित सारसों का नृत्य' है । पशु-पक्षी भी नृत्य के समय किसी अनिवर्चनीय आनन्द का अनुभव करते हैं ।

मधुमक्खियों के नाच तो अत्यधिक अर्थगम्य होते हैं । नृत्य ही उनकी मुख्य भाषा है, विचार-सम्प्रेषण का यही माध्यम उनके पास सर्वाधिक विकसित है ।

मधुमक्खी की प्रत्येक नृत्य-मुद्रा का विशिष्ट अर्थ होता है । भोजन-भण्डार पास ही मिल जाए, तो छत्ते के ऊपर घुमरी जैसा नाचेगी । यदि भण्डार अधिक दूर हो तो सीधे उड़ती हुई ऊपर जाएगी और फिर जिस दिशा में भोजन हो, उधर उड़ेगी । वे दूरी को भी नृत्य द्वारा संकेतित करती हैं । उनके संकेत इतने सही होते हैं कि मधुमक्खियाँ निर्दिष्ट दिशा में ही उड़ती हैं ।

पशुओं को अपने परिवेश से भी गहरा लगाव हो जाता है तथा वहाँ की स्मृति उनमें भीतर सुरक्षित रहती है । रूस में ब्लादिमिर दुरोब एक प्रसिद्ध पशु-प्रशिक्षक हैं । वे अफ्रीका से माइयस नामक एक बन्दर लाए । एक रूसी महिला एक बार अपने नीग्रो पति के साथ दुरोब के घर गई । बन्दर अपने अफ्रीकी देश के निवासी जैसे उस नीग्रो सज्जन को देखते ही झूम उठा, लपककर जा लिपटा । स्नेह-प्रदर्शन करता रहा और जब तक वे वहाँ रहे, वह उन्हीं के पास बना रहा है ।

क्रीमिया में डान क्विग्जोट पर फिल्म बनने के दौरान बोरिस एडर ने लेनिनग्राड चिड़ियाघर के एक शेर वास्पा का भी सहयोग लिया । डेढ़ वर्ष बाद एडर लेनिनग्राड गया और वास्पा से मिला । वास्पा एडर को देख खिल उठा । फिल्म के समय दिखाए गए करतब दुहराने लगा ।

यूनान की एन्ड्रोक्लीस और शेर की कथा प्रसिद्ध है । एक शेर के पाँवों में चुभे काँटे को देखकर उसकी सहज करुणा जाग उठी थी और निडर भाव से शेर के पास जा उसने वह चुभा शूल निकाल दिया था । शेर ने गहरी आत्मीयता से एन्ड्रोक्लीस को देखा । एन्ड्रोक्लीस ने आहत शेर का उपचार भी किया । शेर ने एन्ड्रोक्लीस को स्मृति-पटल पर आँक लिया ।

कालान्तर में एन्ड्रोक्लीस से क्रुद्ध राजा ने उसे दण्ड दिया और कई दिनों से भूखे शेर के पिंजरे में एन्ड्रोक्लीस को फेंक दिया जाय । शेर जो माँस की गन्ध के लिए तड़प रहा था, एन्ड्रोक्लीस को देखते ही पहचान गया और उसने एन्ड्रोक्लीस को खरोंच तक नहीं पहुँचाई । प्यार भरे नेत्रों से उसे देखता रहा ।

कुत्ते की स्वामिभक्ति प्रसिद्ध है । हाथी और घोड़े अपने मालिकों के प्रति भारी सद्भावना रखते हैं और विपत्ति के समय प्राण-प्रण से उनकी रक्षा करते हैं । प्यार, दुलार और सहयोग के वातावरण में हिंसक पशु भी बछड़े जैसे पालतू बन जाते हैं । अफ्रीका में जान एडम्स नामक महिला ने दर्जनों सिंह, चीते पाले और उन्हें बच्चों की तरह लाड़-दुलार देते हुए लम्बा जीवन बिताया । यह हिंसक जन्तु उसके आस-पास बैठे रहते और कई बार बिस्तर पर आ लेटते थे । कितने ही पशु-पक्षियों में यह स्नेह, सहयोग एवं वफादारी की इतनी अधिक प्रबलता होती है कि मनुष्य उनकी तुलना में पिछड़े ही कहे जा सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकृति के अनुदानों में मनुष्य को ही सब कुछ नहीं मिला, अन्य प्राणी भी अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुरूप लाभान्वित हुए हैं । मनुष्य अपने स्थान पर महत्वपूर्ण हो सकता है, पर अन्य प्राणी तुच्छ एवं नगण्य हैं ऐसा नहीं सोचा जाना चाहिये ।

दयानिधान भगवान के महान अनुदान

भगवान को दयानिधान, करुणासिन्धु, अजस्र दानी कहा गया है । उसका कितना अधिक अनुदान मनुष्य को मिला है उसे यदि समझा जा सके तो उस करुणासागर की अनुकम्पा के प्रति हृदय कृतज्ञता से भर जाय और इसके लिए भावना उमड़े कि ऐसे उपकारी अभिभावक के अनुशासन में रहना, निर्देशित रीति-नीति का पालन करना ही उचित है । मनुष्य जीवन की श्रेष्ठता सर्वविदित है । इस श्रेष्ठता को प्राप्त करने के साथ-साथ उस पर यह उत्तरदायित्व भी आया कि भगवान की सृष्टि को सुन्दर, समुन्नत और सुरक्षित बनाने के लिए काम करे और ईश्वर की उस इच्छा, आशा को पूरी करे जो मनुष्य को विशेष अनुदान देते समय उसने अपने मन में रखी थी ।

भगवान मनुष्य के लिए ही नहीं अपने सभी पुत्रों के प्रति उदार है । प्रत्येक जीव को उसने उनकी स्थिति एवं आवश्यकता के अनुरूप क्षमताएँ और विशेषताएँ दी हैं । यदि प्राणियों को शरीर ही मिले होते कुछ अतिरिक्त विशेषता न मिली होती तो उनका जीवन ही दुर्लभ हो जाता ।

परमेश्वर की प्राणियों से सम्बन्धित शक्ति, जिसे प्रकृति कहते हैं—अतिशय उदार है । उसने मुक्त हस्त से प्राणियों को बहुत कुछ दिया है । जीवन धारण करने और सुख-सुविधा के साथ जीने के लिए ही नहीं—आत्मरक्षा के लिए भी वे विशेषताएँ दी हैं जिनके आधार पर वे आगत-विपत्ति एवं कठिनाई का मुकाबला करते हुए अपने अस्तित्व की रक्षा कर सकें ।

किसी भी प्राणी पर दृष्टिपात करें उसे भी प्रकृति का प्यार, संरक्षण और अनुदान प्राप्त हुआ । ऐसा प्रत्यक्ष दीखता है । जन्मदात्री प्रकृति 'कुमाता' नहीं हो सकती उसका असीम स्नेह तो सब पर बरसता है । अन्य प्राणी उसका सदुपयोग करते हैं और दुर्बल, असमर्थ प्रतीत होते हुए भी अपने अस्तित्व की रक्षा कर लेते हैं ।

दक्षिणी अमेरिका में एक पक्षी पाया जाता है उसका नाम है 'स्लाथ' यह संसार के सबसे अधिक आलसी जीव के रूप में विख्यात है । अपना अधिकांश जीवन वह पेड़ पर उल्टा लटके-लटके ही काट देता है । अपने आस-पास की टहनियाँ और पत्ते ही उसका भोजन हैं । वर्षा ऋतु आती है और पानी बरसता है किन्तु वह अपनी शीर्षासन मुद्रा का परित्याग नहीं करता । यह प्रकृति के ज्ञान और उसकी महान कृपा का ही फल कहना चाहिये कि उसके रोएँ सीधे न होकर उलटे बनाए गए हैं, जिससे उसके शरीर पर आया सारा पानी टपक जाता है अन्यथा उसका नाम अब तक लुप्तप्राय: जीवों की सारणी में आ गया होता ।

ह्वेल मछली संसार का सबसे बड़ा जानवर है । बाईबिल में इसे 'महामत्स्य' लिखा गया है और सचमुच ही उसका मीलों लम्बा दैत्याकार शरीर इस सम्बोधन के सर्वथा अनुरूप है । जब वह साँस छोड़ती है तो ऐसा लगता है जैसे समुद्र के नीचे फौबारे छूट रहे हों । एक बार एटलान्टिक महासागर में ह्वेल का शिकार किया गया । सांघातिक चोट खाए मत्स्यराज का पेट चीड़ा गया तो उसके पेट के भीतर से पूरे ६ फीट लम्बा और ४ फीट चौड़ा एक कटल मछली का टुकड़ा निकला । १८ फीट लम्बा एक अस्थि-पिंजर जो तब तक पच नहीं सका था ।

इतनी बड़ी मछली जो पचासों हाथियों को भी तौल सकती है समुद्र के सारे जीवों को साफ कर गई होती यदि प्रकृति ने उसका मुँह छोटा न बनाया होता । इसका जबड़ा इतना छोटा होता है कि हेटिंग नामक समुद्री मछली उसके गले में फँसकर श्वास की गति में बाधा उत्पन्न कर सकती है । इस प्रकार प्रकृति अन्य समुद्री जीवों की रक्षा करती है ।

उड़ने से लेकर मौसम के हर उतार-चढ़ावों को बर्दाश्त करने की जितनी क्षमता चिड़िया के पंखों में होती है, वैज्ञानिक यह मानते हैं कि प्रकृति की उस रचना के समकक्ष आज तक कोई भी आविष्कार मनुष्य नहीं कर सका ।

दक्षिण अमेरिका का उत्तरी कार्डिलरा प्रदेश सूखा, अनुपजाऊ पहाड़ी क्षेत्र है, न तो कोई पैदावार, न दूध देने वाले पशुओं की व्यवस्था । वृक्ष भी सूखी पत्तियों वाले पाए जाते हैं । प्रकृति को —'कुमाता भवति मान लिया जाता यदि उसने इस सूखे प्रदेश में जीवन की रक्षा का प्रबन्ध न किया होता । दया दर्शायी उसने और यह एक पौधा पैदा किया—गोवृक्ष (काऊ ट्री) । देखने में इसकी शाखाएँ मृत और सूखी जान पड़ती हैं पर जब उसका तना कुरेदा जाता है तो उसमें एक प्रकार का दूध निकलता है जो मीठा और पौष्टिक ही नहीं होता वरन् अन्न और तरकारियों में पाए जाने वाले सारे तत्व भी उसमें पाए जाते हैं । प्रात:काल भूख लगती है और प्रात:काल सूर्योदय के समय ही यह जितना दूध देता है कि वहाँ के नीग्रो दिन भर अपना काम चलाते हैं । वैज्ञानिकों ने इस दूध की जाँच की तो यह देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि इस दूध और पशुओं द्वारा प्राप्त दूध में बहुत घनिष्ट एकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साँप—अच्छा हुआ कि प्रकृति ने उसे पृथ्वी के अन्दर छिपा रहने वाला जीव बनाया वरना एक साँप का जहर हजार व्यक्तियों को मार सकता है । जावा और मलेशिया में कई प्रकार के सर्प पाए जाते हैं जिनके पंख होते हैं और वे उड़ते भी हैं । वे अधिकांश एक पेड़ से दूसरे पर उड़कर ही जाते हैं । उड़ते समय वे चपटे हो जाते हैं और नीचे जमीन पर उतरते समय गोलाकार होते हुए उतरते हैं । इस प्रकार उन्हें आहार प्राप्त करने की, आत्मरक्षा की तथा क्रीड़ा-कल्लोल की विविध सुविधाएँ मिली हुई हैं ।

पहलवान पहले अपने घरेलू अखाड़ों में कुश्ती का अभ्यास करते हैं, तब कहीं बाहरी दंगलों में दाँव-पेच दिखाने का साहस करते हैं । विदेशी सैनिकों से लड़ने के पहले देशी फौजें अपने आपको दो हिस्सों में बाँटकर युद्ध का नकली अभ्यास करती हैं । ऐसा न किया जाए तो असली युद्ध लड़ना मुश्किल पड़ जाए । इस तरह का सूक्ष्म ज्ञान तक प्रकृति ने अपने नन्हें-मुन्हें मनुष्येतर जीवों को प्रदान किया है ।

घरों में पाई जाने वाली गौरेया जितना सीधी और सरल होती है उतनी ही लड़ाकू । पर शत्रु से लड़ने के लिए जवांमर्दी, वह नकली युद्धाभ्यास करके पैदा करती है । उसकी यह नकली लड़ाइयाँ देखते ही बनती हैं । ऐसे दायें-बायें से आक्रमण और बचाव करती है मानो वियतनाम और वियतकांग का गोरिल्ला युद्ध चल रहा हो ।

नर भुनगा आक्रमण करने में कोई ज्यादा चतुर नहीं होता । वह दुश्मन को हरा भी नहीं सकता, फिर बेचारा अपनी जीवन रक्षा कैसे करता ? उसे प्रकृति ने धमकाने और डराकर शत्रु को भगाने की विद्या सिखाई । कोई शत्रु आता है तो वह अपने जबड़े ऐसे फैलाता है मानो कच्चा ही निगल जाएगा । आक्रमणकारी डरकर भाग जाता है तो भुनगा मौज से दूसरी तरफ चल देता है । इसे प्रकृति का प्रशिक्षण न कहा जाये तो और क्या कहा जाए ?

कार्बोलिक एसिड एक जहरीला रसायन है । इसे खाकर कोई जिन्दा नहीं रह सकता । उसकी मात्रा अपने स्वाभाविक विकास दर से बढ़ती रहती तो सारा संसार विषमय हो जाता । फिर बात क्या है जो अभी तक पृथ्वी अमृत्व से ओत-प्रोत है । प्रोफेसर पी० जी० ग्रे नामक अँग्रेज वैज्ञानिक ने इसकी शोध की तो पाया कि मिट्टी में कुछ ऐसे कीटाणु होते हैं और इस तरह वे धरती माता को विषाक्त होने से बचा लेते हैं । ऐसे कीटाणु एक-दो नहीं २०० के लगभग तो अब तक खोजे भी जा चुके हैं ।

एक यह नन्हें कीटाणु हैं जो सामान्य होते हुए भी असामान्य कार्य करते हैं—भगवान् शिव के समान । एक है इन्सान जो संसार का विष—मानवता पर छाये विषैले वातावरण को मिटाने के लिए एक इन्च भी आगे नहीं बढ़ता । भगवान् द्वारा प्रदत्त अपनी असामान्यता को कलंकित करता है । प्रकृति प्रदत्त विशेषताओं का मनुष्य ने यदि सदुपयोग किया होता तो निस्सन्देह यह धरती तथाकथित स्वर्ग से कम नहीं वरन् अधिक ही साधन-सुविधाओं और सुख-शान्ति की प्रचुरताओं से भरी दीखती ।

सूक्ष्म चेतना को परिष्कृत किया जाय

मानवी चेतना की रहस्यमय परतें यदि समझी जा सकें और समुन्नत की जा सकें तो निश्चय ही उसे अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि का जीवन सफल कहा जायगा । भौतिक विज्ञान स्थूल जगत में बिखरी हुई शक्ति को देखकर चकित है और उसमें से बहुत कुछ करतलगत करने के लिए लालायित है ।

सामान्य के भीतर जो असामान्य छिपा पड़ा है, उसे अब अधिक अच्छी तरह समझा जाने लगा है । उदाहरण के लिए सूर्य को ही लें, वह गर्मी और रोशनी देने वाला, रोज उगने और डूबने वाला छोटा-सा अग्नि पिण्ड मात्र है, पर गम्भीरतापूर्वक पता लगाने से वह शक्ति का असीम भाण्डामार सिद्ध होता है ।

सूर्य के मध्य भाग में ५०००००० डिग्री गर्मी भरी पड़ी है । इस महाशक्ति का २००००वाँ हिस्सा ही वह प्रकृति के विकास, विनाश और सन्तुलन में काम लेता है । शेष भाण्डागार शायद इसलिए सुरक्षित है कि कोई उपयुक्त पात्र आए और किसी ईश्वरीय प्रयोजन की पूर्ति के लिए शक्ति की आवश्यकता अनुभव करे, तो उसे उतनी शक्ति दी जा सके, जिससे वह कैसे भी ध्वंस या निर्माणकारी कार्यक्रम सुभीते से चला सके ।

इस शक्ति भण्डार की तुलना में मानव उपार्जित समस्त साधन इतने स्वल्प हैं जितना कि समुद्र की तुलना में एक बूँद । सूर्य की शक्ति को यदि प्रयोग में लाया जाना सम्भव हो सके तो मनुष्य सर्वशक्तिमान का पद पा सकता है । मनुष्य का अपना शरीर भी कुछ कम विचित्र विलक्षण नहीं है । अपने शरीर की समस्त ६०० खरब कोशिकाओं को यदि खींचकर लम्बाई में बढ़ाया जाये तो वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अर्थात् अब तक की खोज के अनुसार,

१८६०००×६०×६०×२४×३६५१४×५०००००००० मील लम्बा फीता होगा । इतने लम्बे फीते में प्रत्येक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोश में १०००००००० अक्षरों के हिसाब से उपरोक्त संख्या में इसका गुणा करने से जो संख्या बनेगी, उतने अक्षरों और उन अक्षरों से बने शब्दों की स्मृति मनुष्य रख सकता है । ऐसा मनुष्य लगभग सर्वज्ञ ही हो सकता है । भारतीय योग दर्शन में यह बताया जाता है कि योग सिद्ध व्यक्ति संसार में जो कुछ भी हो रहा है, जो कुछ होगा और जो हो गया है, वह सब कुछ जानते हैं । इस तथ्य को स्थूल घटनाओं के आधार पर ५ फीट ६ इन्च लम्बे १२० पौण्ड भार के शरीर में जो कुछ है आश्चर्य नहीं । बीज और संस्कार रूप में वह सब एक जीवकोष में विद्यमान रहता है । शरीरशास्त्रियों का मत है कि कोश स्थित गुणसूत्र (क्रोमोसोम) और संस्कार सूत्र (जीन्स) में वह सबके सब शारीरिक और मानसिक लक्षण और विशेषताएँ विद्यमान रहती है, जो आगे चलकर मनुष्य शरीर में परिपक्व होने वाली होती हैं ।

बच्चे की आकृति-प्रकृति का सारा ढाँचा इन नगण्य से घटकों में छिपा पड़ा है, यह कितने आश्चर्य की बात है ? भले ही सिद्ध न किया जा सके पर अनेक प्रमाण अब इन तथ्यों की निरन्तर पुष्टि कर रहे हैं ।

समीपवर्ती विचित्रताओं में सबसे बड़ा है मस्तिष्क की टोकरी में रखा हुआ सूक्ष्म शक्तियों और दिव्य क्षमताओं का भाण्डागार । पर कठिनाई यह है कि जिस प्रकार अपनी आँखों से अपनी आँखों को देख सकना कठिन है और अपने ही रक्त में चल रही हलचलों को जान पाना दुरुह है उसी प्रकार मस्तिष्क को समझना तो कठिन है ही, उससे भी कठिन यह है कि मानसिक चेतना पर नियंत्रण कैसे किया जाय ? यदि वैसा सम्भव हो सके तो शक्ति का लगभग इतना ही बड़ा स्रोत हाथ लग सकता है जितना कि बाह्य जगत के दृश्यमान सूर्य में सन्निहित है ।

पुस्तकीय शिक्षा, विचार, विनिमय, दृश्य, चिन्तन आदि के सहारे जो ज्ञान वृद्धि होती है, उससे मस्तिष्क का एक बहुत छोटा अंश ही विकसित हो पाता है । इसके सहारे उपार्जन-लोक, व्यवहार तथा निर्वाह के सामान्य प्रयोजन ही पूरे होते हैं । शक्ति का स्रोत तो अचेतन है । उसके ऊपर प्रभाव डालना अति कठिन है । यदि उस तक पहुँचा जा सके और अभीष्ट दिशा में बदला जा सके तो व्यक्तित्व का स्वरूप ही बदल सकता है । तब सामान्य को असामान्य के रूप में विकसित हुआ देखा जा सकता है ।

अचेतन को प्रभावित करने की दिशा में कितने ही वैज्ञानिक प्रयोग हो रहे हैं और उनमें सफलताएँ भी मिल रही हैं ।

डॉ० डेलगाडो ने अपने कथन को प्रमाणित करने के लिए कई सार्वजनिक प्रयोग करके भी दिखाए । अली नामक एक बन्दर को केला खाने के लिए दिया गया । जब वह केला खा रहा था, तब डॉ० डेलगाडो ने 'इलेक्ट्रोएसी फैलोग्राफ' के द्वारा बन्दर के मस्तिष्क को सन्देश दिया कि केला खाने की अपेक्षा भूखा रहना चाहिये तो बन्दर ने भूखा होते हुए भी केला फेंक दिया । 'इलेक्ट्रोएसी फैलोग्राफ' एक ऐसा यंत्र है, जिसमें विभिन्न क्रियाओं के समय मस्तिष्क में उठने वाली भाव तरंगों को अंकित कर लिया गया है । किसी भी प्रकार की भाव तरंग को विद्युत शक्ति द्वारा तीव्र कर देते हैं तो मस्तिष्क के शेष सब भाव दब जाते हैं और वह एक ही भाव तीव्र हो उठने से मस्तिष्क केवल वही काम करने लगता है ।

डॉ० डेलगाडो ने इस बात को एक अत्यन्त खतरनाक प्रयोग द्वारा भी सिद्ध करके दिखाया । एक दिन उन्होंने इस प्रयोग की सार्वजनिक घोषणा कर दी । हजारों लोग एकत्रित हुए । सिर पर इलेक्ट्रॉड जुड़े हुए दो खूँखार साँड़ लाए गए । इलेक्ट्रॉड एक प्रकार का एरियल है; जो रेडियो ट्रान्समीटर द्वारा छोड़ी गई तरंगों को पकड़ लेता है । जब दोनों साँड़ मैदान में आए तो उस समय की भयंकरता देखते ही बनती थी, लगता था दोनों साँड़ डेलगाडो का कचूमर निकाल देंगे, पर वे जैसे ही डेलगाडो के पास पहुँचे उन्होंने अपने यंत्र से सन्देश भेजा कि युद्ध करने की अपेक्षा शान्त रहना अच्छा है, तो बस फुँसकारते हुए दोनों साँड़ ऐसे प्रेम से खड़े हो गए जैसे दो बकरियाँ खड़ी हों । उन्होंने कई ऐसे प्रयोग करके रोगियों को भी अच्छा किया ।

टैक्सास विश्वविद्यालय के राबर्ट थाम्पसन और जेम्स मैक कोनैल वैज्ञानिकों ने प्लेनेरिया नामक जीव पर परीक्षण करके यह सिद्ध किया कि विद्युत उपकरणों की सहायता से मस्तिष्कीय क्षमता को घटाया और बढ़ाया जा सकता है । कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के डॉ० एलन जेकबसन ने प्रशिक्षित चूहों के मस्तिष्क में से आर० एन० ए० रसायन निकालकर अनाड़ी चूहों के मस्तिष्क में पहुँचाया तो अनाड़ी भी प्रशिक्षितों की तरह बुद्धिमान बन गए ।

प्रगति जिस चरण में पहुँची है उसे देखते हुए मिशिगन विश्वविद्यालय अमेरिका के इस सन्दर्भ में संलग्न विज्ञानी डॉ० ओटो शिमल ने घोषणा की है कि अब हमारे हाथ में मानव मस्तिष्क को नियंत्रित करने की शक्ति आ गई है, पर आशा की जानी चाहिए कि उसका प्रयोग केवल अच्छाई के लिए ही होगा, किन्तु साथ ही इस खतरे को भी ध्यान में रखना होगा कि इस नवउपार्जित शक्ति का प्रयोग निजी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति एवं राष्ट्रीय विस्तारवाद के लिए भी किया जा सकता है । यदि ऐसा किया गया तो यह आविष्कार संसार का सबसे अधिक विघातक अस्त्र सिद्ध होगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ दिन अमरीकी प्रतिरक्षा विभाग के एक गधे पर यह प्रयोग किया गया था और उसे उपकरणों से प्रभावित करके अकेला छोड़ा गया था । उसे जिधर चलने और जो करने के लिए निर्देश किया उसने वही सब कर दिखाया ।

योग का उद्देश्य बिना वैज्ञानिक उपकरणों के अन्त:चेतना को अभीष्ट स्तर पर परिवर्तित और विकसित करना है । यह इसलिए उपयुक्त है कि हर व्यक्ति अपने को उसी दिशा में विकसित करना चाहेगा, जिससे उपलब्ध क्षमता को अपने और दूसरों के कल्याण में लगाया जा सके । इसके विपरीत वैज्ञानिक साधनों से यह दूसरों के मस्तिष्कों को प्रभावित करने का आधार अपना लिया गया तो जन साधारण को किसी महत्वाकांक्षी सत्ताधारी की इच्छानुरूप ढलना पड़ेगा और वे आत्मोत्कर्ष से वंचित रहकर किन्हीं दूसरों की कठपुतली मात्र बनकर रहेंगे ।

आत्मचेतना के विकास को ऐसी सफलता कहा जा सकता है, जो आन्तरिक उत्कृष्टता बढ़ जाने से हर घड़ी आनन्द की मन:स्थिति बनाए रह सकती है । इसके अतिरिक्त अचेतन की विकसित क्षमता इतनी प्रखर होती है कि जिसके सहारे देव जीवन जिया जा सके और दूसरों को सुखी-समुन्नत बनाकर असीम आत्मसंतोष देने वाला श्रेय पाया जा सके । मस्तिष्कीय उत्कर्ष एवं परिवर्तन के लिए भौतिक प्रयोगों की पराधीनता खतरनाक हो सकती है । इस दिशा में जो प्रयत्न हों वे योगाभ्यास स्तर के हों तभी मानवी प्रगति की अति महत्वपूर्ण आवश्यकता पूरी हो सकती है ।

जीव-जन्तुओं की विशिष्ट चेतना शक्ति

बुद्धि की दृष्टि से मनुष्य अन्य प्राणियों की तुलना में कहीं आगे है । यह विकास उसने सहकारिता के आधार पर पारम्परिक आदान-प्रदान की प्रवृत्ति पनपाकर सम्भव बनाया है । बुद्धि, वैभव से उसने परिवार, समाज, शासन की संगठना बनाई है । शिल्प, शिक्षा, कला, कृषि, व्यवसाय, वाहन जैसे सुविधा जुटाने वाले साधन खड़े किए हैं । विज्ञान बुद्धिबल की ही देन है । एक-एक सीढ़ी ऊँची चढ़ते हुए मनुष्य जाति उस स्थान पर पहुँच पाई है, जहाँ उसे प्रकृति सम्पदा का स्वत्वाधिकारी माना जाता है ।

इतने पर भी यह नहीं समझना चाहिये कि सृष्टि के अन्य प्राणी मात्र मरने तक का नीरस जीवन जीते हैं । उनके पास आनन्द एवं सुविधा सम्वर्धन के लिए कोई विशेष चेतना नहीं है । वास्तविकता यह है कि अपनी जीवनचर्या को सुखद और सरल बनाने के लिए उन्हें ऐसी दिव्य क्षमताएँ प्राप्त हैं, जिनसे मनुष्य एक प्रकार से वंचित ही है । जिस अनुपात से छोटे जीवों को विशेष क्षमताएँ प्रकृति ने प्रदान की हैं यदि वही सब मनुष्य को भी मिल सकी होतीं तो वह देव-दानवों की स्थिति में रह रहा होता । भगवान् ने अपने न्याय वितरण में जहाँ मनुष्य को बुद्धि दी है वहाँ अन्य प्राणियों को भी बहुत कुछ दिया है, जिसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

पशु-पक्षियों की अपनी सांकेतिक भाषा है । उसके आधार पर वे एक-दूसरे से विचार-विनिमय करते हैं । प्रेरणा देते और ग्रहण करते हैं । उनका बोलना, चहचहाना निरर्थक नहीं होता, वरन् उसमें अभिव्यंजनाओं की अभिव्यक्ति भिन्न-भिन्न आवाजों के आधार पर होती है । इस प्रकार के उच्चारण से वे अपना जी हल्का करते और साथियों को अपनी स्थिति से अवगत कराते हैं । इससे वे सचेत होते, लाभ उठाते और संकट से बच निकलने का उपाय खोजते हैं । मनुष्येत्तर प्राणियों की आवाज टेप करके उसे उनके साथियों को सुनाया गया तो पाया गया कि वे उससे प्रभावित होते हैं और आवाजों के अनुरूप अपनी हलचलें प्रस्तुत करते हैं ।

वनजातियों एवं शिकारियों का अनुभव है कि साधारण रीति से बिना छल, कपट का मनुष्य आसानी से वनजातियों के बीच आ-जा सकता है । इसमें उन्हें कोई विशेष उद्विग्नता नहीं होती । किन्तु यदि आखेट के उद्देश्य से दुरभिसंधि लेकर कोई उनके समीप पहुँचता है तो मनोभाव ताड़ने में उन्हें देर नहीं लगती । हड़बड़ाकर वे आत्मरक्षा के लिए दूर भागने का प्रयत्न करते हैं । यहाँ तक कि मनुष्य द्वारा बन्दूक आदि कपड़ों में छिपाकर ले जाने से भी उन्हें संकट को पहचानने में देर नहीं लगती । मनुष्य में मनोभाव ताड़ने की यदि ऐसी क्षमता होती तो उसे अपने स्वजन साथियों द्वारा बार-बार ठगे जाने की स्थिति क्यों आती ?

भूखे सिंह की आकृति देखकर ही आस-पास चरने वाले वन्य-पशु जान बचाकर भाग खड़े होते हैं । इसके विपरीत जब उसका पेट भरा होता है तो आँखों से सिंह दिखाई पड़ते रहने पर भी जंगली पशु निर्भयतापूर्वक आस-पास ही चरते रहते हैं । इतना ही नहीं भय होने पर वे भयाक्रान्त वाणी बोलकर अन्य साथियों को भी खतरे से सचेत कर देते हैं ।

शिकार के समय अथवा अन्य किसी प्रतिद्वन्द्वी से उलझते समय सिंहनी अपने बच्चों को किसी सुरक्षित स्थान पर छिपा देती है । बच्चे भी वस्तुस्थिति समझ लेते हैं और दम साधकर बिना हिले-डुले चुपचाप लुके रहते हैं । खतरा समाप्त होने का संकेत पाते ही वे दौड़कर उछलते-कूदते माँ के पास जा पहुँचते हैं । मात्र माँ की मन:स्थिति के सहारे परिस्थितियों को समझ लेना और अपनी बाल चंचलता को बुद्धिमत्तापूर्वक दबाए रहना इन शावकों की अनोखी समझदारी कही जा सकती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

५.२१ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

पक्षियों में एक तरह की अन्तर्दृष्टि भी होती है और गुप्त चेतावनी की व्यवस्था भी । मनुष्य अपने शत्रु-मित्र की पहचान में अक्सर भूलें करता है । पर पक्षियों में इस विषय में जन्मजात क्षमता पाई गई है । एक वैज्ञानिक प्रयोग में एक कागज के एक ओर हंस का-सा और दूसरी ओर बाज जैसा आकार दिया गया तथा मुर्गी के नन्हें-नन्हें बच्चों के एक पिंजड़े के चारों तरफ इस नकली दोमुँहें पक्षी को घुमाया गया । यह देखा गया कि जब उन बच्चों के सामने हंस का आकार आया तो वे सहज रहते, पर जब बाज जैसी आकृति दिखती तो उनमें भय और खलबली दौड़ जाती । उन बच्चों को बाज के बारे में कोई ज़ानकारी नहीं मिल पाई थी, न ही बाज उन्होंने कभी देखा था तो भी वे शत्रु-मित्र की पहचान कर सके ।

प्रख्यात पक्षी वैज्ञानिक डॉ० ज्योफ्रेमैथ्यूस का कहना है कि पक्षियों के भीतर एक जीववैज्ञानिक समय व दिशासूचक यंत्र होता है, जिससे वे सूर्य और नक्षत्रों की स्थिति जानते हैं तथा सहस्रों मील लम्बी यात्राएँ करते व समुद्र को सही दिशा में उड़कर पार करते हैं ।

यह भी देखा गया है कि पिंजड़े में बन्दी वे पक्षी जिनकी लम्बी उड़ानों की ऋतुएँ निश्चित होती हैं, उस ऋतु के आगमन पर उदास हो जाते हैं क्योंकि उन्हें उड़ने को नहीं मिलता ।

सोलोमन व डॉल्फिन मछली प्रजनन के समय अपने जन्म-स्थल पर पहुँचती है । इसके लिए उन्हें सैकड़ों मील की यात्रा करनी होती है ।

ईल नामक सर्पमीन बिना रडार या कुतुबनुमा के ही यूरोप की नदियों से सागर तट तक निश्चित स्थानों पर हजारों मील चलकर पहुँच जाती है । मादा ईलें योरोप की मीठे पानी वाली नदियों में रहती हैं और नर ईल अतल समुद्र में । ८-१० वर्ष की होने पर मादा ईलें जुलाई, अगस्त में योरोप की इन नदियों से समुद्र की ओर कूच कर देती हैं । बिना किसी दिशासूचक यंत्र या घड़ी के ये निश्चित समय पर समुद्री मुहानों तक पहुँच जाती हैं, जहाँ नर ईल अपना भूरा कलेवर बदलकर रजतवर्णी आभा और सतरंगी आकांक्षाओं के साथ प्रतीक्षा करते रहते हैं । जैसे ही मादा ईलें समुद्री मुहानों पर पहुँचती हैं और अपने-अपने प्रियतम को देखती हैं, उनकी गुलाबी भावनाएँ वेगवती हो उठती हैं और दोनों एक-दूसरे से लिपट जाते हैं तथा प्रणय करते गहरे समुद्र में पहुँच जाते हैं । वहीं डुबकी लगाकर ३ सौ से १५ सौ मीटर तक की गहराई में मादा ईलें अंडे देती हैं । उन पर नर ईल अपने शुक्राणु डालते जाते हैं । यह गर्भाधान की क्रिया है, पर प्रसव के बाद ही मादा और उसके साथ ही नर ईल देह त्याग देते हैं । सम्भवत: कर्तव्य-सम्पादन की संतुष्टि उनको दीर्घ विश्राम की प्रेरणा देती है । नन्हें बच्चों का पालन प्रकृति करती है । बड़े होने पर ये बच्चे समुद्र की सतह पर आ जाते हैं । जीवाणु और घास खाते तथा धूप सेवन करते हैं । एक वर्ष में वे तीन इन्च लम्बे हो जाते हैं । ईल किशोरियों की देह समुद्र मुहाने पर पहुँचते ही गुलाबी हो उठती है ।

वसन्त ऋतु में वे उन्हीं मीठे पानी वाली नदियों की ओर चल पड़ते हैं । नर ईल वहीं रह जाते हैं । ८-१० वर्ष बाद यही मादा ईल सहसा प्रणयकांक्षा से भरकर समुद्री मुहाने की ओर चल देती है ।

विशालकाय ह्वेल मछलियाँ भी अनुकूल वातावरण की खोज में समुद्र में हजारों मील दूर तक चली जाती हैं और भटकती कदापि नहीं ।

वैज्ञानिक अनुसन्धानों से पता चला है कि कीड़े-मकोड़े और छोटे जीव-जन्तु भिन्न भाँति के संदेशों को सम्प्रेषित करने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की अत्यन्त हल्की गन्ध प्रसारित करते हैं, जिसे मनुष्य नहीं सूँघ सकता लेकिन सम्बन्ध जाति के कीड़े-मकोड़ों में उनकी सम्वेदनात्मक प्रतिक्रिया होती है ।

उदाहरणार्थ—प्रत्येक वर्ग की चींटियों के नवजात शिशु (जो अंडे से शिशु रूप ग्रहण करता है) में एक विशेष गन्ध होती है, जो सिर्फ उसी कुनवे की चींटियों में वात्सल्य भाव तथा मातृत्व की भावना जगाती है ।

खोजों से ही पता चला है कि चींटियों समेत अनेक कीड़ों में कई-कई तरह के गन्ध प्रसारण या गन्ध रसायन अलग प्रभाव पैदा करते हैं । एक गन्ध ऐसी होती है, जिसके सहारे कीड़ों का दल अपने मुखिया का सही-सही अनुगमन करता है—रास्ते में भूलता-भटकता नहीं । एक गंध ऐसी होती है, जिसे सूँघकर नर, मादा की गर्भधारणा की सम्भावना को समझकर उससे सहवास करता है । ये सभी गन्ध रसायन 'फेरोमोन' कहे जाते हैं ।

एक 'फेरोमोन' ऐसा होता है, जिसके द्वारा मादा नर को आकर्षित करती है । एक अन्य फेरोमोन के द्वारा वह अपने वांछित नर का दूसरी सभी मादाओं के प्रति आकर्षण कम करती है ।

एक 'फेरोमोन' ऐसा होता है, जिसके द्वारा नर अपनी प्रिय मादा से, दूसरे सभी नरों को दूर रखता है ।

अमरीका में कपास के ढोढे को कीड़े से बचाने के लिए फेरोमोन का उपयोग होता है । फसलों की कीड़ों से रक्षा के लिए भी इनके उपयोग की दिशा में काम चल रहा है । जिस वर्ग के कीड़ों को मारना हो, उनके लिए आकर्षित करने वाला फेरोमोन तैयार कर खेत से दूर एक पिंजड़े में उसे रख दिया जाए, तो उस वर्ग के समस्त कीड़े उस पिंजरे में खिंचे चले जाएँगे । फिर उनको मारा जा सकता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इससे कीटाणुनाशक दवाओं से होने वाली हानि नहीं हो पाएगी क्योंकि कीटनाशक दवाएँ सिर्फ फसल को नुकसान करने वाले कीड़े ही नहीं मारतीं, अक्सर उपयोगी कीड़े भी मार डालती हैं । साथ ही ये कीटनाशक पानी के साथ बहकर नदी-नाले में पहुँचकर वहाँ जल जीवों को भी क्षति पहुँचाते हैं । फेरोमोन से ये सब नुकसान नहीं होंगे, बस मनचाहे कीड़ों को आकर्षित कर उनका काम तमाम किया जा सकता है ।

यद्यपि कृत्रिम फेरोमोन का निर्माण है कठिन, पर उस दिशा में तेजी से कार्य जारी है ।

ऋतु परिवर्तन की पूर्व सूचना देने वाले पक्षियों तथा कीड़ों से किसान लोग सहज ही यह जान लेते हैं कि निकट भविष्य में ऋतुओं सम्बन्धी क्या हेर-फेर होने जा रहा है । किसी मकान के गिरने की सम्भावना हो तो बिल्ली अपने बच्चों को वहाँ से पहले ही उठा ले जाती है । भूकम्प आदि प्राकृतिक दुर्घटनाओं की पूर्व सूचना भी कई पशुओं की विचित्र हलचलें देखकर प्राप्त की जा सकती हैं । रात को कुत्ते अधिक रोते हों तो समझा जाता है कि यहीं कहीं मरण का कुचक्र घूम रहा है । कुत्तों की घ्राण शक्ति इतनी सधी हुई है कि वे जिस मार्ग से बहुत दूर तक ले जाए गए थे उसी में उल्टे पाँवों लौट आते हैं । यह कार्य वे उस रास्ते में पिछली बार छूटी हुई अपने ही पैरों की गन्ध सूँघकर सम्पन्न करते हैं । कुत्तों द्वारा चोरी का पता लगाने की पुलिस व्यवस्था में उनकी घ्राण शक्ति का ही प्रयोग होता है ।

तैरने वाले, घूमने वाले, उड़ने वाले प्राणियों की सामान्य हलचलें ऐसी ही बेसिलसिले की तथा अटपटी दिखाई पड़ती हैं, पर ध्यानपूर्वक देखा जाय तो मकड़ी, मधु-मक्खी, चींटी, दीमक जैसे तुच्छ प्राणियों की विलक्षण बुद्धि को देखकर चकित रह जाना पड़ता है, वे अपने साधनहीन और पिछड़े समझे जाने वाले जीवन-क्रम को सरल एवं आनन्दित बनाए रहते हैं । इससे स्पष्ट है कि भगवान् ने हर प्राणी को उसकी स्थिति और आवश्यकता के अनुरूप ऐसे साधन दिए हैं जिसमें किसी के साथ पक्षपात या अन्याय हुआ न कहा जा सके ।

जीव-जन्तुओं की विलक्षणताएँ— आत्म-चेतना की माया

अफ्रीका के घने जंगलों में एक पौधा पाया जाता है जिसमें अनेक जीव-जन्तुओं को खाद्य मिलता है । यह पौधा जमीन के अन्दर से उग तो आता है किन्तु धरती से ऊपर आते ही किसी अज्ञात आवश्यकता, आकांक्षा के कारण पौधा आगे बढ़ने से इन्कार कर देता है । पौधे का न बढ़ना जीवों के लिए उसी प्रकार कष्टदायक हो सकता है जिस प्रकार अध्यात्म के न रहने से मानव जीवन के भौतिक सुख भी कष्टदायक हो जाते हैं ऐसी स्थिति, एक छोटी-सी गिलहरी कमाल करती है ।

कहते हैं परोपकार की आकांक्षा से एक बार एक गिलहरी ने भगवान राम को समुद्र पाटने में मदद की थी और समस्त मानव जाति को एक पाठ सिखाया था कि मानवता की रक्षा और दुष्कृत्यों के विनाश में छोटे से छोटे व्यक्ति को भी सहयोगी बनना और जितना बन पड़े उतना ही सहयोग देने से पीछे नहीं हटना चाहिये । इस पौराणिक गाथा को अतिरंजन कहा जा सकता है पर अफ्रीका वाली यह घटना—घटना नहीं आश्चर्यजनक सत्य अभी भी होता है । उस पौधे का विकास रुके इसके पूर्व ही गिलहरी कहीं से कुछ बीज इकट्ठा करती है और उस पौधे की जड़ के पास गड्ढा खोदकर उन्हें गाड़ आती है जिस प्रकार समुचित शिक्षा और संस्कार पाने से छोटे-छोटे बच्चों का बौद्धिक और आत्मिक विकास होने लगता है, उसी प्रकार यह बीज उस पौधे के लिये खाद, पानी हो जाते हैं और वह पूरे उत्साह के साथ बढ़ने, फलने-फूलने लगता है । गिलहरी जब तक अपना पार्ट अदा नहीं करती, तब तक पौधा सूखा-सा प्रेम के अभाव में अविकसित मनुष्य जीवन की तरह ठूँठ खड़ा रहता है ।

ईल चिड़िया भोजन और भ्रमण के लिए हजारों मील दूर चली जाती है पर अंडा देना होता है तब वह अपने जन्म स्थान पर लौट आती है, चिड़िया का मरणकाल आ जाता है तब वह चाहे जहाँ भी हो जन्म स्थान को लौट पड़ेगी । मृत्यु के लिये वह हर स्थिति में अपने घर ही पहुँचेगी । सालमन पक्षी भी जीवनभर कहीं रहे मृत्यु के समय वह वहीं आ पहुँचता है जहाँ उसका जन्म होता है मानो वह सारे जीवन यह याद रखता हो कि किन परिस्थितियों के कारण उसे इस योनि में जन्म लेना पड़ा और जन्म पूरा कर लेने के बाद फिर न वैसा निकृष्ट जीवन मिले वह अपने मूल स्थान पर लौटकर जीवन दिशा बदल देता है ।

मुर्गी बच्चा देती है, १५ मिनट होने के बाद बच्चा अपने दाने-चारे के लिये चल देता है और कोई खतरा देखता है तो अपने आप ही खतरे की सूचक ध्वनि निकालने लगता है जबकि उसने इससे पहले यह ध्वनि न अपनी माता से सुनी होती है, न पिता से, न बन्धु-बान्धवों से । बर्र के बच्चे छोटे होते हैं और उसका मरण काल आ धमकता है । घर में छोटे-छोटे बच्चे जो अपना खाद्य नहीं जुटा सकते उनकी रक्षा का कर्त्तव्यभाव अलग सताता है, तब बर्र आँखफुट्टे (ग्रास हापर्स) को पकड़कर टुकड़े-टुकड़े करके रख देती है, स्वयं मरने के लिए चल देती है । पीछे बच्चे वह माँस खा-खाकर बड़े हो जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गिलहरी का बीज छुपाना, सालमन और ईल पक्षियों द्वारा अपनी मृत्यु के समय हजारों मील दूर से घर लौट आना, चूजे का वंश परिपाटी के आधार—का बिना शिक्षण ज्ञान और मरते दम तक छोटी-सी बर्र में कर्तव्यपालन की भावना—प्रश्न उठता है कि जीवों में इस तरह गणितीय बुद्धि का रहस्य क्या है ? आज का बुद्धिवादी व्यक्ति, आज का जीवशास्त्री उत्तर देगा यह सब प्रकृति की प्रेरणा से होता रहता है । उसे आनुवंशिक संस्कार भी कह सकते हैं ? रहन-सहन के मामले में सम्भव है प्रकृति-प्रेरणा जीव-जन्तुओं के लिए सहायक होती हो किन्तु कुछ ऐसी भी विलक्षणतायें हैं जो न तो प्रकृति की प्रेरणा हो सकती हैं न बायोलाजिकल-प्रतिक्रिया । अन्तःप्रेरणा की वह विलक्षणताएँ ही जीव मात्र में एक ही चेतना के अस्तित्व का प्रमाण होती हैं और इस बात का भी प्रमाण हैं कि मनुष्य की बुद्धि जैसे गुण यदि आनुवंशिक कारण हो सकते हैं तो वह मनुष्य चेतना के अनेक जीव-जन्तुओं की चेतना में परिवर्तन का ही प्रमाण हो सकता है । सीधे-सीधे कह सकते हैं कि मनुष्य चेतना द्वारा कर्मवश अन्य जीवों के शरीर में जाकर जन्म लेने की भारतीय मान्यता कोई अवैज्ञानिक बात नहीं सूक्ष्म सत्य है, जिसे इन उदाहरणों द्वारा समझा, परखा और खोजा जा सकता है कि किस गुण का मनुष्य किस जीव से मिलता होगा ? मनोविज्ञान की यह शोध ही जीव चेतना के सच्चे इतिहास और अस्तित्व की जानकारी दे सकती है ।

वह कारण जो कि हमें इस तरह की बात सोचने को विवश करते हैं, वह है जीव-जन्तुओं का पूर्वाभास और उनमें विलक्षण मानवीय गुणों का उभार । सन् १९६५ की बात है, छिन्दवाड़ा मध्य प्रदेश के जिला प्रकाशन अधिकारी श्री दयाकृष्ण विजय वर्गीय प्लेटो क्लब में थे, तब उन्होंने कुछ कौवों को एक विशेष ध्वनि करते हुए गोलाकार उड़ते हुए देखा । कौवे क्लब के पास सरकारी बंगले के ऊपर मँड़रा रहे थे । कौओं का इस प्रकार उड़ना मृत्यु सूचक माना जाता है । श्री विजय वर्गीय जी ने इस घटना को धर्म युग के सितम्बर अंक में छपाते हुए लिखा है—"कौवों की इस तरह की उड़ान से मेरे मन में भय उत्पन्न हुआ । कुछ ही दिनों पश्चात् उस सरकारी बँगले में रहने वाले डिप्टी कलेक्टर श्री सावन्त की पत्नी का देहान्त हो गया । इस घटना के दो माह बाद मैंने कौवों को फिर उसी प्रकार अपने मकान के पास उड़ते देखा । उससे फिर मुझे भय उत्पन्न हुआ । इस घटना के दो-तीन दिन पीछे ही पड़ौस में रहने वाले आयकर कार्यालय के चौकीदार की मृत्यु हो गई । यह घटनाएँ मुझे यह सोचने के लिए विवश करती हैं कि क्या सचमुच कौवों को मनुष्य की मृत्यु का पूर्वाभास हो जाता है यदि हाँ तो क्यों ?"

भारतीय शास्त्रकार आत्मा को आकाश से भी सूक्ष्म तत्व मानते हैं । तत्व की समीक्षा हो सकती है सम्भवतः इसी कारण वैशेषिक दर्शन में आत्मा को द्रव्य माना गया है । द्रव्य में होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को देखा जाना, अनुभव किया जाना आत्मा के वश की बात हो सकती है । इस दृष्टि से कौवे भी ठीक वैसी ही आत्मा हैं जैसी मनुष्य । उन्हें कौवा मानकर घृणा करना आत्मचेतना का ही अपमान और एक आश्चर्यजनक सत्य से आँखें मूँद लेना है, उससे मनुष्य जाति का अहित होता है, वह जीवनगत संकीर्णता के कारण विश्वव्यापी आत्मचेतना की अनुभूति नहीं कर पाता ।

अमरीका के पश्चिमी द्वीप समूह की राजधानी के पास एक ज्वालामुखी पर्वत है, नाम है मौंट पीरी । सन् १९०४ की घटना है इस पर्वतीय क्षेत्र के जीव-जन्तु बहुत घबराए हुए से थे । कुत्ते दिनभर भौंकते, रात में सियार चिल्लाते । कुछ दिन पीछे तो कुत्ते, सियार, अजगर ही नहीं अन्य पशु-पक्षी भी उस क्षेत्र को छोड़कर चले गए । सारा क्षेत्र वीरान नजर आने लगा । उस क्षेत्र के निवासी हैरान थे आखिर इन जीव-जन्तुओं को हो क्या गया है, जो इस तरह पलायन कर रहे हैं और एक रात ज्वालामुखी फूट पड़ा अपनी भयंकर ध्वनि और गति के साथ । लगातार कई दिन तक अग्नि वर्षा होती रही और उसने करोड़ों रुपयों की सम्पत्ति के साथ लगभग ३० हजार मनुष्यों को भूनकर रख दिया । जबलपुर में हुए साम्प्रदायिक दंगे के समय भी कुत्तों ने ऐसी ही चेतावनी हूक-हूक कर दी थी जिसे वहाँ के लोग अब तक भी याद करते हैं ।

मनुष्य बड़ा बुद्धिमान जीव है फिर भी वह नहीं समझ पाता क्योंकि उसने अपने, जीवन से प्रकृति को हटाकर कृत्रिमता को प्रवेश दे दिया है, उसने बैरोमीटर बनाए, गुब्बारे उड़ाए, टेलस्टार उड़ाए तो भी भविष्य में होने वाली घटनाओं का व्यक्तिशः इतना अच्छा पूर्वाभास नहीं कर पाता जितना कि साधारण और तुच्छ समझे जाने वाले सियार, कुत्तों ने कीट-पतंगों ने जान लिया । आत्मा कर्मवश वासना और पापवश इन क्षुद्र योनियों में जाती है तो क्या हुआ वह अपना द्रव्य-गुण थोड़े ही त्याग सकती है, उसकी अपनी विशेषताएँ मनुष्य जीवन में न सही—जीव-जन्तुओं में ही सही प्रकट प्रकट हुए बिना नहीं रहती, मनुष्य के लिए तो यह अलभ्य अवसर होता है कि वह सर्वांगपूर्ण शरीर यंत्र का उपयोग आत्म-विकास में करे पर उसने तो अपना जीवन इतना भौतिक और बाह्यमुखी बना लिया है कि अन्तःकरण की बात जो उसका यथार्थ सत्य है, जीवन है उसकी बात कभी सोच ही नहीं पाता ।

पशु-पक्षियों के विलक्षण स्वभाव प्राकृतिक प्रेरणाएँ हो सकती हैं, पर उनको पूर्वाभास का, बौद्धिक क्षमता का अस्तित्व प्राकृतिक प्रेरणा न होकर आत्मा के गुणों का ही प्रकटीकरण हो सकता है । उस आत्मा को ही जानने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए शास्त्रकार जोर देते हैं वही सर्वव्यापी सर्वज्ञ है उसी को पाने में पूर्णता है । प्रो. कर्वी, डॉ० बेलियन्ट तथा डॉ० डी० स्वैस आदि वैज्ञानिकों ने ऐसे अनेक विलक्षण प्रमाण और जानकारियाँ इकट्ठी की हैं जो जीव-जन्तुओं की असाधारण क्षमताओं का प्रतिपादन करती हैं । इन्होंने भी स्वीकार किया है कि जीव-जन्तुओं में मनुष्य के समान ही कोई आश्चर्यजनक सत्य है, जिसे हम नहीं जानते । उन्होंने पशु-पक्षियों के पूर्वाभास की अनेक घटनाएँ दी हैं और उन्हें ग्रह-उपग्रहों की यात्रा में महत्वपूर्ण योगदान का माध्यम माना है ।

वैदिक, पौराणिक और लोक साहित्य में जीव-जन्तुओं की विलक्षणताओं के वर्णन से एक ओर आत्मा की सर्वव्यापकता का प्रतिपादन मिलता है तो दूसरी ओर उनकी इन असाधारण क्षमताओं का उपयोग भी हुआ है । पक्षियों की प्रज्ञा के उपयोग के प्रमाण—

खाटी मोर महातुरी, खाटी होय जु छाछ ।
मेहमही पर परन को जाने काकै काछ ॥

अर्थात् मोर आतुरतापूर्वक बोलता है तब शीघ्र वर्षा आती है ।

ढोकी बोले जाय अकास ।
अब नाही बरखा कै आस ॥

अर्थात् ढोकी बोलकर आकाश में उड़ जाए तो मानना चाहिये कि अब वर्षा नहीं होगी । प्राचीनकाल में किसान, वणिक इन जानकारियों से बड़ा लाभ लिया करते थे । तब पशु-पक्षियों से प्रेम मनुष्य जाति के समान ही किया जाता था फिर यदि जटायु ने अपनी कृतज्ञता जान देकर दर्शायी हो तो आश्चर्य क्या ?

वसन्तराज शाकुन, घाघ और भड्डुरी की कहावतों में पशु-पक्षियों की विलक्षण योग्यताओं और पूर्वाभास का वर्णन मिलता है । प्रस्थान काल में गाय बछड़े को दूध पिलाती देखकर, नेवले का रास्ता काटना शुभ माना गया है । सारस का दाहिने बोलना, शुक का बायें बोलना शुभ लक्षण है । किसी की मृत्यु की सूचना गिद्ध दाहिने बोलकर देता है । रात में घर उल्लू का बोलना मृत्यु का या चोरी आदि अनिष्ट का सूचक होता है । कौवा घर की मुंडेर पर बैठता है तो स्त्रियाँ उसकी ध्वनि पहचानने का प्रयत्न करती हैं 'बसन्तराज शाकुन' में बताया है कि यदि कौवा—कर-कर बोलता है तो गृह-कलह, शरीर फुलाकर कँपाकर कर्कश शब्द करता है तो किसी की मृत्यु का, 'कुलकुल' ध्वनि अतिथि के आने की सूचना तथा 'कूँ-कूँ' धन लाभ की सूचक होती है । विस्मय ध्वनियों का नहीं वरन् इस बात का है कि जिस बात को मनुष्य जैसा बुद्धिशील प्राणी नहीं जान पाता उसे यह पक्षी कैसे जान लेते हैं ? भविष्य का ज्ञान रखने वाले इन जीव-जन्तुओं को तब क्या तुच्छ मानना शोभा है ? क्या उनसे आत्मा की सर्वव्यापकता का शिक्षण और ज्ञान नहीं प्राप्त किया जा सकता ।

जीवधारियों की विलक्षण चेतना शक्ति

प्राणिविद्या विशारद विलियम जे० लॉग ने पशुओं की इन्द्रियातीत शक्ति के बारे में अपनी पुस्तक 'हाड एनिमल्स टाक' में विस्तृत प्रकाश डालते हुए बताया है कि भले ही बुद्धि-कौशल में मनुष्य की तुलना में पशु पिछड़े हुए हों पर उनमें इन्द्रियातीत शक्ति कहीं अधिक बढ़ी-चढ़ी होती है, उसी के आधार पर वे अपनी जीवनचर्या का सुविधापूर्वक संचालन करते हैं ।

लॉग महोदय ने अपनी पुस्तक में ऐसे अनेकों प्रसंग भी लिखे हैं, जिनसे स्पष्ट होता है कि जीव-जन्तुओं को, निकट भविष्य में घटित होने वाले घटनाक्रम का भी सही पूर्वाभास मिल जाता है । यदि उनकी वाणी होती तो वे कहीं अधिक सही भविष्य कथन कर सकते ।

पुस्तक के कुछ संस्मरण इस प्रकार हैं—एक मैदान में हिरनों का झुण्ड ऐसी अस्वाभाविक तेजी से घास चर रहा था, मानो उन्हें कहीं जाने की आतुरता हो । उस समय कुछ कारण समझ में नहीं आ रहा था, पर कुछ घण्टे बाद ही बर्फानी तूफान आ गया और कई दिन तक घास मिलने की सम्भावना नहीं रही । स्थिति का पूर्वाभास प्राप्त करके हिरन अत्यन्त तीव्रता से इतनी घास चरने में लगे थे कि कई दिन तक उससे गुजारा हो सके ।

जब बर्फ पड़ने को होती है तब रीछ अपनी गुफा में चले जाते हैं और उसमें पहले कई दिन का आहार जमा कर लेते हैं । उत्तरी कनाडा में झील की मछलियाँ बर्फ की मोटी सतह झील पर जमने से पहले ही गर्म जगह में प्रलायन कर जाती हैं ।

वियना में एक कुत्ता माल उठाने-उतारने की क्रेन के समीप ही पड़ा सुस्ता रहा था । अचानक वह चौंका, उछला और बहुत दूर जाकर बैठा । उसके कुछ देर बाद क्रेन की रस्सी टूटी और भारी लौह खण्ड उसी स्थान पर गिरा जहाँ कुत्ता बैठा था । कुत्ते के चौंककर भागने का कारण उसका पूर्वाभास ही था ।

एक बार स्पेलनजानी नामक एक इटैलियन ने चमगादड़ की उड़ान का परीक्षण किया । उसने एक कमरे की छत में बहुत से धागे लटकाए और उनमें घण्टियाँ बाँध दीं कि जिससे धागों से टकराने पर वे घण्टियाँ बजें । उसके बाद उसमें एक चमगादड़ को दौड़ाया । चमगादड़ बड़ी देर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तक बन्द कमरे में दौड़ता रहा पर एक भी घंटी न बजी । चमगादड़ की दृष्टि बहुत कमजोर होती है, उसने किस तरह अपने आपको उन धागों से बचाया यह बड़ा आश्चर्य है । कहते हैं, चमगादड़ प्रति सैकिण्ड ३० बार ध्वनि तरंगें भेजता है और जितने समय में उसे उनकी प्रतिध्वनि आती है, वह सामने वाली बाधाओं का पता लगा लेता है और उनसे बचकर निकल जाता है ।

बर्मा की कलादान घाटी में एक बिल्ली की एक विचित्र समाधि बनी है । उसके चारों ओर लिखा है—'यह बिल्ली यदि हमारी समय पर सहायता न करती तो हम मारे जाते और पराजित होते'—इन शब्दों में वास्तव में जीवों में अद्भुत अतीन्द्रिय क्षमता का इतिहास अंकित है । बात उन दिनों की है जब बर्मा में अँग्रेजों और जापानियों के बीच युद्ध चल रहा था । एक दिन अँग्रेजों की टुकड़ी ने एक जापानी टुकड़ी पर आक्रमण कर दिया । जापानियों ने पीछे हटने का नाटक खेला वास्तव में वे पीछे नहीं हटे वरन् खंदकों में छिप गए मानो वे सचमुच भाग गये हों । एक मेज पर वे ताजा पका पकाया खाना भी छोड़ गए उसे देखते ही अँग्रेज सैनिक उस खाने पर टूट पड़े किन्तु अभी वे प्लेटों तक पहुँच पाए थे कि उनमें से एक सार्जेन्ट रैडी की काली बिल्ली उस खाने पर टूट पड़ी और गुर्राकर अँग्रेज सैनिकों को पीछे हटा दिया । अँग्रेजों ने बिल्ली को धमकाया भी वह अपनी क्रुद्ध मुद्रा में तब तक गुर्राती ही रही जब तक वहाँ एक भयंकर धमाका नहीं हो गया । वास्तव में उस खाने के साथ बारूदी सुरंग का सम्पर्क जुड़ा था । उन सैनिकों के प्राण ले सकता था पर बिल्ली ने अपनी आत्माहुति देकर न केवल अपनी स्वामिभक्ति का परिचय दिया अपितु उसने यह भी बता दिया कि जीव जिन्हें हम तुच्छ समझते हैं किस तरह विलक्षण आत्मिक गुणों—अतीन्द्रिय क्षमताओं से ओत-प्रोत होते हैं ।

समुद्री तूफान आने से बहुत पहले ही समुद्री बतखें आकाश में उड़ जाती हैं और तूफान की परिधि के क्षेत्र से बाहर निकल जाती हैं । डॉल्फिन मछलियाँ चट्टानों में जा छिपती हैं, तारा मछली गहरी डुबकी लगा लेती है और ह्वेल उस दिशा में भाग जाती है, जिसमें तूफान न पहुँचे । यह पूर्व ज्ञान इन जल-जन्तुओं का जितना सही होता है उतना ऋतु विशेषज्ञों के बहुमूल्य उपकरणों को भी नहीं होता ।

इस घटना को लेकर जार्जिया विज्ञान एकेडेमी के शरीरशास्त्री आई० एस० वेकेताश्विली ने शोध कार्य आरम्भ किया कि क्या पशुओं में अतिरिक्त अतीन्द्रिय चेतना होती है ? और क्यों वे उसके आधार पर बिना इन्द्रियों का प्रत्यक्ष सहारा लिए वह काम कर सकते हैं जो आँख, कान आदि से ही सम्भव है ।

उन्होंने यह परीक्षण कई जानवरों पर किए । इसके लिए उन्होंने एक बिल्ली पाली । नाम रखा—ल्योवा । उसकी आँखों पर ऐसी पट्टी बाँधी गई जिससे वह कुछ भी न देख सके । उसे साधारणतया बाँधकर रखा जाता, पर जब खाने का वक्त होता तो उसे खोला जाता और खाने की तश्तरी कमरे के एक कौने पर दूर रख दी जाती । शुरू में तो उसे अपना भोजन तलाश करने में कठिनाई हुई पर पीछे वह इतनी अभ्यस्त हो गई कि कमरे के किसी भी स्थान पर खाना रखा जाय वह वहीं पहुँच जाती ।

नाक की गन्ध से सूँघकर उसके आधार पर वह ऐसा कर सकती है यह बात वैज्ञानिक जानते थे, इसलिये उन्होंने इसके साथ ही अतीन्द्रिय ज्ञान की एक कठिन परीक्षा यह रखी कि तश्तरी में ही पत्थर के टुकड़े भी रख दिये जाते । गन्ध तो सारे प्लेट में से उठती थी इसलिये उसमें रखी हुई किसी चीज को वह मुँह में डाल सकती थी, पर देखा गया कि बहुत ही निश्चित रीति से उसने अपना खाना ही खाया और पत्थर के टुकड़ों को चाटा तक नहीं । इसी प्रकार कुछ दिन में वह रास्ते में रखी हुई कुर्सी, सन्दूक आदि को बचाकर इस तरह अपना रास्ता निकालने लगी, जिससे किसी चीज के गिरने की दुर्घटना भी न हो और चलना भी कम पड़े । इसका विज्ञानसम्मत समाधान वैज्ञानिक दे नहीं पाए ।

क्षुद्र समझे जाने वाले जीवधारियों की चेतना अति विलक्षण सामर्थ्य सम्पन्न होती है । यह एक महत्वपूर्ण तथ्य का द्योतक है कि यही शक्ति का पुंज मानव में भी है पर प्रसुप्त स्थिति में विद्यमान है । उसे जगाया, उभारा व विकसित किया जा सकता है । आत्मसत्ता के वैभव का बोध तो पहले व्यक्ति को हो ।

ईश्वर का संसार—करुणा का आगार

योग साधनाओं के माध्यम से अध्यात्म जीवन की उच्च कक्षाओं में पहुँचे योगी महापुरुष अनेक अलौकिक शक्तियाँ, क्षमताएँ विकसित कर लेते हैं । परन्तु प्रकृति ने कई जीव-जन्तुओं को भी ऐसी अलौकिक शक्तियाँ दी हैं—जिनके बिना उनका काम ही नहीं चल सकता था । उन शक्तियों और क्षमताओं के सम्बन्ध में जानकर तो आश्चर्य ही होता है और परमात्मा की अनन्त अनुकम्पा के सम्मुख नतमस्तक हो जाना पड़ता है ।

शीत प्रधान देशों में जहाँ बर्फीले तूफान आते हैं और सामान्य मौसम में भी जहाँ कोई मनुष्य मुश्किल से रह पाता है वहाँ कई जातियों के पक्षी रहते हैं । बर्फीले तूफान वर्ष में किन दिनों आते हैं यह कोई निश्चित नहीं है और उनमें जीवन के अस्तित्व की सम्भावना बिल्कुल ही नहीं है । फिर भी कुछ जाति के पक्षी वहाँ रहते हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और बर्फ गिरने के एक माह पूर्व ही वहाँ से उड़ जाते हैं । कोई दस दिन पहले भी उड़ता है और कोई दो माह पूर्व भी परन्तु प्रतिवर्ष वे अपने स्वाभाविक नियत अवधि में ही उड़ जाते हैं । बर्फ कब गिरेगी ? प्राय: यह अनिश्चित ही रहता है फिर भी उनके उड़ने के समय में कोई भूल नहीं होती ।

इसी प्रकार एक जापानी चिड़िया है । वह भूकम्प आने के चौबीस घण्टे पहले उस क्षेत्र को छोड़ देती है । हमारे देश में साधारण चिड़िया की भाँति यह जापान में सर्वत्र पायी जाती है, गाँवों में भी । गाँव के लोग उसे उड़ते और गाँव छोड़कर जाते देख समझ जाते हैं कि भूकम्प आने वाला है और वे भी गाँव छोड़ जाते हैं । आश्चर्य है कि अब तक विकसित वैज्ञानिक संयंत्र भी कुछ घण्टे पूर्व ही भूकम्प की भविष्यवाणियाँ करते हैं फिर इस चिड़िया को चौबीस घण्टा पहले ही कैसे पता चल जाता है ?

सागर की बहुत-सी मछलियाँ ऐसी होती हैं जिनके अंडे देने का समय समुद्र की एक विशेष दशा पर निर्भर है । वे तभी तट पर आकर अंडे देती हैं जब सागर का पानी उतरता है । जब समुद्र का पानी उतरने को होता है तब वे तट पर आती हैं और रेत पर अंडे देती हैं । दुबारा जब सागर का पानी अण्डे देने के स्थान तक पहुँचता है तब उन अंडों से चूजे बाहर आ जाते हैं ।

इसी प्रकार टिटहरी—एक भारतीय पक्षी है जो कभी वृक्षों पर अण्डे नहीं देती । वह अक्सर नदी, तालाबों के किनारे पर ही अंडे देती है । वह समय भी प्राय: वर्षा ऋतु के आसपास होता है, परन्तु नदी-तड़ाग के तट पर भी वह पानी से इतनी दूर और इतना ऊँचे अंडे देती है कि बाढ़ आ जाने पर भी जल वहाँ तक पहुँचता नहीं । ग्रामीण क्षेत्रों में इसलिए यह मान्यता है कि जिस वर्ष टिटहरी के अंडे पानी में बह जाएँ वह वर्ष अति विनाशकारी होता है ।

जलचर प्राणी पृथ्वी या आकाश में मर जाते हैं और नभचर अथवा थलचरों के साथ पानी में नहीं बचते परन्तु एक पक्षी है आरिब्डक । जो आकाश में भी उड़ता है और पानी में भी महीनों तैरता रह सकता है ।

जीवविज्ञान के आचार्य विलियम जे.लॉग ने वर्षों तक प्राणियों की अतीन्द्रिय शक्तियों के सम्बन्ध में खोज की और उन निष्कर्षों को पढ़कर यह आसानी से अनुभव किया जा सकता है कि मनुष्य बुद्धि-कौशल में भले ही पशुओं से काफी आगे निकल गया हो परन्तु अतीन्द्रिय शक्तियों के क्षेत्र पशु-पक्षी ही उससे बढ़े-चढ़े हैं ।

इसी प्रकार उल्लू, चील और गिद्ध की दृश्य शक्ति अपने ढंग की अनूठी ही होती है । उल्लू के नेत्रों में प्रचण्ड रोशनी भरी पड़ी है कि वह केवल रात में ही देख पाता है । किसी वस्तु का न दिखाई देना अन्धकार के कारण ही नहीं होता वरन् तीव्र प्रकाश हो तो भी आँखें देखने में असमर्थ होती हैं । जो प्रकाश हमारी आँखों के लिए सामान्य है और उसमें हम आसानी से देख सकते हैं, वही प्रकाश उल्लू की आँखों के लिए चौंधिया देने वाला बन जाता है और उल्लू इसी कारण दिन में देख नहीं पाता ।

चील और गिद्ध मीलों ऊपर उड़ते हुए भी नीचे पड़े माँस के टुकड़े को देख लेते हैं । बाज हजारों फीट ऊपर उड़ते हुए भी घास या झाड़ियों में छुपे मेंढक, चूहे और साँप को आसानी से देख लेता है । हमारे लिए तो पाँच फीट ऊपर से भी घास के नीचे छुपे मेंढक, चूहों का देख पाना असम्भव है । खरगोश और मछलियाँ भी बिना सिर हिलाये चारों तरफ देख लेते हैं ।

श्रोत्रेन्द्रिय की दृष्टि से हरिण सबमें अद्वितीय है । वह मीलों दूर की आहट सुन लेता है । न सुनायी पड़ने वाली शेर की दहाड़ वह तुरन्त सुन लेता है और उसके कान खड़े हो जाते हैं ।

कई प्राणियों में इस प्रकार की शक्तियाँ और क्षमताएँ विकसित हैं जिनकी तुलना में मनुष्य बौना सिद्ध होता है । इस दृष्टि से मनुष्य को प्रकृति का सबसे बड़ा पुत्र और सर्वोपरि अनुदानों से युक्त कहा जाना अनुपयुक्त लग सकता है, परन्तु वस्तुत: ऐसा है नहीं । वस्तुत: ये शक्तियाँ मनुष्य को भी जन्म-जात मिली हैं । मनुष्य की संरचना का आध्यात्मिक अध्ययन सिद्ध करता है कि सूक्ष्म शरीर में विद्यमान षट्चक्रों में वे सभी सम्भावनायें और शक्तियाँ अन्तर्निहित हैं, जो पिछले किन्हीं जन्मों में विकसित हो चुकी थीं । यह तो एक तथ्य है ही कि सभी जीव योनियों में भ्रमण कर चुकने के बाद यह मनुष्य को मिली है ।

मानवी कलेवर के सूक्ष्म शरीर में विद्यमान षट्चक्रों में जीवात्मा की यात्रा के समस्त अनुभव और उपलब्धियाँ किसी टेपरिकार्डर में रिकार्ड की गयी आवाज की तरह टेप हैं । आवश्यक है तो उन्हें जाग्रत भर करना । वे सुप्त इसलिए हैं कि मनुष्य की लम्बी यात्रा के कारण वे पीछे छूट गयी हैं और अप्राकृतिक रहन-सहन तथा विकृत जीवन, विकृत मनोभूमि के कारण उनकी अनुभूति भी निष्पंद पड़ चुकी है ।

कहा जा सकता है कि प्रकृति के सर्वश्रेष्ठ अनुदानों का अधिकारी मनुष्य है तो उसे वे इस जीवन में भी प्रदत्त की जा सकती थी । लेकिन प्रकृति का यह नियम है कि जिन परिस्थितियों में जिस वस्तु या शक्ति की आवश्यकता हो वह उपलब्ध करा दी जाय । अनावश्यक और अनपेक्षित शक्तियों के दुरुपयोग की ही सम्भावना अधिक रहती है । इसलिए जब तक कोई अपनी पात्रता सिद्ध नहीं कर देता वे मिल नहीं सकती ।

जिन प्राणियों को ये शक्तियाँ अयाचित ही मिली हैं उनके जीवन इतिहास का अध्ययन करने पर यह भली-भाँति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विदित हो सकता है कि उनके जीवनयापन और आत्म-रक्षा के लिए ये आवश्यक हैं भी । हरिण जैसे निर्बल प्राणी को यदि तेज श्रवण शक्ति न मिली होती तो शायद ही उसके अस्तित्व चिह्न भी बच पाते । इस आधार पर प्रकृति को पक्षपातपूर्ण सिद्ध नहीं किया जा सकता । इन शक्तियों की उपलब्धि हेतु अपनी पात्रता का विकास आवश्यक है जो अध्यात्म विज्ञान में गहराई तक उतरने पर ही सम्भव है और उस साधना विज्ञान में अधिकारी सत्पात्रों का ही प्रवेश सम्भव है ।

मनुष्य से भी बढ़कर क्षमतावान हैं अन्य प्राणी

मानव शरीर की वैद्युतीय क्षमता का पर्यावरण के विद्युतीय दबाव से घनिष्ट अन्तःसम्बन्ध है । बाहरी अयन मण्डल में जब भी कोई गंभीर उथल-पुथल होती है, उसका प्रत्यक्ष प्रभाव काया की सामान्य जैवविद्युतीय शक्ति पर पड़ता है और सामान्य क्रियाशीलता गड़बड़ा जाती है । उस उथल-पुथल को सन्तुलित करने के लिए शरीर में कई तरह की मानसिक एवं शारीरिक हलचलें उठ खड़ी होती हैं, जिनके अच्छे और बुरे दोनों ही प्रकार के परिणाम देखे जाते हैं । ऐसे ही कुछ प्रतिकूल अन्तर्ग्रही प्रभावों में ग्रहण, सौर लपटों एवं सूर्य धब्बों, पुच्छल तारों आदि की गणना होती है । इनका सर्वाधिक प्रभाव जीव-जन्तुओं पर पड़ता है साथ ही इन हलचलों की पूर्वानुभूति भी प्राणियों को पहले होती है । प्राकृतिक जीवन जीने वाले सामान्य से ये प्राणी अतीन्द्रिय क्षमता में मनुष्य से भी बढ़-चढ़कर दृष्टिगोचर होते और सृष्टा की न्याय-व्यवस्था को प्रमाणित करते हैं ।

मनुष्य अपनी बौद्धिक प्रखरता के बल पर सूर्यग्रहण जैसे प्राकृतिक रहस्यों की जानकारी प्राप्त करने में वर्षों पूर्व भले ही समर्थ हो गया हो, किन्तु उसके प्रभावों को समझने में अभी तक असमर्थ रहा है । वन्य-प्राणियों, पशु-पक्षियों में वह क्षमता विद्यमान है जिससे वे न केवल सूर्यग्रहण की जानकारी चौबीस घण्टे पूर्व ही प्राप्त कर लेते हैं, वरन् उसके दुष्प्रभाव से बचने के लिए शोरगुल बन्द करके सुरक्षित स्थानों पर चले जाते हैं । सबसे चंचल कहा जाने वाला बंदर सूर्यग्रहण के पूर्व ही खाना-पीना त्याग कर एकान्तप्रिय संन्यासी की भूमिका अदा करने लगता है । इसी प्रकार भूकम्प आने से पहले ही जीव-जन्तुओं के व्यवहार में भारी परिवर्तन देखे गए हैं । चीन के अनुसंधानकर्ता प्राणिविज्ञानियों ने बताया है कि अनेकों भूकम्पों के पूर्व यह देखा गया कि वहाँ के पालतू पशु अपने बंधन तोड़कर घरों के बाहर हो जाते हैं । कुत्ते-बिल्ली-चूहे आदि जीवों के व्यवहार असामान्य रूप से परिवर्तित हो जाते हैं और पारस्परिक वैमनस्य भूलकर वे साथ-साथ एकांतप्रियता का प्रदर्शन करने लगते हैं ।

इसी तरह तिब्बत और दार्जिलिंग में पाई जाने वाली पहाड़ी सारस वर्षा के दस-पन्द्रह मिनट पूर्व ही पर्वतों की गुफाओं अथवा चट्टानों की आड़ में चली जाती है जिसे देखकर तिब्बत के लोग अपना माल-असबाव बाँधकर वर्षा से बचने का प्रबन्ध करने लगते हैं । कभी-कभी तो यहाँ तक देखा गया है कि आकाश में एक भी बादल नहीं है और पानी बरसने के कोई आसार न होते हुए भी जब यह पक्षी छिपने लगें, तो उसके कुछ ही समय बाद बादल संघटित हुए और वर्षा होने लगी ।

मछलियों की भविष्य ज्ञान सम्बन्धी अतीन्द्रिय क्षमता विलक्षण होती है । जीवविज्ञानी मछलियों के इस भविष्य ज्ञान से हैरत में पड़ गए हैं कि यह समुद्र तट पर ठीक तभी अंडे देती है, जब समुद्री लहरें उतर जाती हैं और दुबारा उठने की सम्भावना नहीं रहती । यदि मछलियों के इस भविष्यज्ञान में एक मिनट का भी अन्तर पड़ जाय तो उनके सारे अंडे गहरे समुद्र में जाकर नष्ट हो जाएँ । वैज्ञानिकों ने यह शोध-निष्कर्ष मछलियों को झील, तालाब और प्रयोगशालाओं में, एक्वेरियम में रखकर बनावटी प्रकाश, अंधकार और कृत्रिम चन्द्रमा का आकर्षण देकर प्राप्त किए । किन्तु प्रकृति प्रेमी इन मछलियों को रंचमात्र भी भ्रम में न डाला जा सका । इन सभी स्थानों पर रखी गई मछलियों ने ठीक उसी समय अंडे दिए । जब सागर में रहने वाली मछलियों ने दिये अर्थात् लहरों के उतरते ही मछलियों ने अपने भविष्य ज्ञान के आधार पर उक्त क्रिया की । इनकी इस विद्या की जानकारी में लाखों-करोड़ों वर्षों से आज तक रंच मात्र का अन्तर नहीं आया अन्यथा इन जातियों का नामोनिशान कभी का समाप्त हो गया होता ।

इस सन्दर्भ में मूर्धन्य जीवविज्ञानी डॉ० विलशूल ने गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया है और अपनी कृति 'द साइकिक पावर आफ एनीमल्स' में मानवेतर प्राणियों अर्थात् पशु-पक्षियों की विलक्षण अतीन्द्रिय क्षमताओं का वर्णन किया है । उनका कहना है कि सृष्टा ने क्षुद्र समझे जाने वाले प्राणियों को इन शक्ति-सामर्थ्यों से युक्त बनाया है जिन्हें प्राप्त करने के लिए मनुष्य को वर्षों कष्ट साध्य साधनाएँ करनी पड़ती हैं । इतने पर भी वह प्रकृति संकेतों की बारीकियों को पूर्णतया समझ पाने में समर्थ नहीं हो पाता ।

क्षमताओं की दृष्टि से पीछे नहीं हैं अन्यान्य जीव भी

समझा जाता है कि भगवान् के विशिष्ट अनुदान का उपहार सिर्फ मनुष्य को मिला है और अन्य मानवेतर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राणियों की उपेक्षा कर दी गई है, पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने पर ज्ञात होगा कि वस्तुस्थिति ऐसी नहीं है । सृष्टा ने निरीह समझे जाने वाले प्राणियों में भी इस स्तर की क्षमता प्रदान कर अपनी समदर्शिता का ही परिचय दिया है । यह बात और है कि सृष्टि का मुकुटमणि राजकुमार होने के नाते मनुष्य को विवेकबुद्धि भी मिली है, जिसका अन्य जीवधारियों में सर्वथा अभाव है । मनुष्य अपनी इसी विशिष्टता के कारण प्रसुप्त शक्तियों का विकास-प्रयास का पुरुषार्थ करता है, जबकि पशुओं को यह सुविधा प्रदान नहीं की गई है, तो भी यह नहीं कहा जा सकता है कि परमपिता ने उनके साथ सौतेला व्यवहार किया है । दृष्टि, गंध, स्पर्श, श्रवण जैसी कितनी ही क्षमताएँ उनमें मनुष्य से अपेक्षाकृत अधिक विकसित होती हैं । इसी आधार पर वे बाढ़, भूकम्प, आँधी, तूफान जैसी प्राकृतिक आपदाओं का पूर्वाभास प्राप्त कर अपने जीवन की रक्षा कर पाते हैं, पर कभी-कभी अपनी इस सामर्थ्य के आधार पर वे अपने मालिकों की भी सहायता करते देखे जाते हैं ।

ऐसी ही एक घटना का उल्लेख रूसी लेखक रोमन मोल्कानोव ने अपनी एक पुस्तक में किया है । उन दिनों लेखक सोवियत रूस के यूक्रेन प्रान्त के निकोलायेव कस्बे में एक तिमंजिली इमारत की सबसे ऊपरी मंजिल में रहते थे । उनके साथ उनकी पालतू बिल्ली भी रहती थी । यही उनकी एकमात्र साथी थी । रंग में मटमैला होने के कारण उसका नाम भी रूसी भाषा में 'भूरी' शब्द का समानार्थी रख दिया गया था । उस भूरी से मोल्कानोव की खूब पटती । दोनों साथ-साथ भोजन करते और घूमने भी जाते । कुछ दूर चलने के उपरान्त बिल्ली, जो मोल्कानोव के कंधे पर सवार रहती, अचानक नीचे कूद पड़ती और अकेली मटरगश्ती करने चल देती । फिर दूसरे दिन सुबह घर लौटती । उसकी 'म्याऊँ' की आवाज सुन मोल्कानोव दरवाजा खोलते, तत्पश्चात् दोनों साथ-साथ नाश्ता करते । यही उनका दैनिक क्रम था ।

एक दिन की बात है । जब भूरी रास्ते में लेखक को अकेला छोड़कर अन्यत्र घूमने चली गई, तो उस दिन भी मोल्कानोव ने यही समझा कि बिल्ली अब अपने स्वाभाविक क्रम में सुबह ही लौटेगी, पर जब वह टहलने के बाद अपने कमरे पर लौटे, तो वहाँ भूरी पहले से ही इन्तजार कर रही थी । उन्होंने दरवाजा खोला, तो बिल्ली भीतर जाकर कुर्सी में दुबककर सो गई । आधी रात तक वह सोती रही फिर अचानक जगी और जोर-जोर से 'म्याऊँ-म्याऊँ' बोलने लगी । इससे मोल्कानोव की नींद खुल गई । लाइट जलायी, तो बिल्ली ने उनकी ओर देखा जैसे नीचे उतरने का आग्रह कर रही हो । फिर स्वयं दरवाजे की ओर बढ़ चली । मोल्कानोव ने सोचा कि शायद वह बाहर जाना चाह रही है, अतः किवाड़ खोल दिए, पर भूरी बाहर नहीं निकली । मोल्कोनोव वापस लौटे और पुनः पलंग पर लेट गए । अभी थोड़ी देर भी न हुई थी कि फिर वही 'म्याऊँ-म्याऊँ' की रट । लेखक ने पुनः दरवाजा खोल दिया, किन्तु वह बाहर नहीं गई । तीसरी बार पुनः उसकी आवाज से उन्हें जागना पड़ा । इससे वे झल्ला उठे । सोचा अब न उठूँगा आज यह बिल्ली बेकार तंग कर रही है । उस समय बाहर वर्षा हो रही थी और तेज हवा भी चल रही थी ।

बिल्ली की बेचैनी उत्तरोत्तर बढ़ती गई । अब वह पलंग के चारों ओर चक्कर काटने और जोर-जोर से आवाज करने लगी, जिससे मोल्कानोव को विवश होकर उठना पड़ा । जैसे ही वे दरवाजे के पास पहुँचे, छत से पलस्तर का एक बड़ा-सा टुकड़ा उनके बिस्तर में तकिये के ऊपर गिर पड़ा और वे घायल होने से बाल-बाल बचे । अब उनकी समझ में आया कि क्यों यह भूरी आज 'म्याऊँ' की रट लगाए हुए थी । कृतज्ञता के भाव से मोल्कानोव ने उसकी ओर देखा, पर तब तक वह दरवाजे से बाहर जा चुकी थी, क्योंकि आज का उसका काम समाप्त हो चुका था ।

यह तो पूर्वाभास की घटना हुई, जो जीव-जन्तुओं में प्रायः देखी-सुनी जाती है । इसी प्रकार उनकी अन्यान्य इन्द्रिय भी विकसित होती हैं । गिद्ध की दृष्टि, साँप की श्रवण-सामर्थ्य, शेर, बिल्ली, हिरण की गंध ग्रहण करने की क्षमता इतनी सुविकसित होती है कि मनुष्य भी उनसे इस क्षेत्र में काफी पीछे छूट जाता है । सन् १९१७ की अक्टूबर क्रांति से पूर्व एक विशेष नस्ल के तेफ नामक कुत्ते ने रूस भर में १५ सौ अपराधियों को पकड़ा था । यह तो कुत्ते की सामान्य क्षमता और विशेषता हुई, जिसे हर कोई जानता है, पर इसे कम ही लोग जानते होंगे कि कुत्ते में असली-नकली की पहचान करने की भी शक्ति होती है । मास्को में 'दीता' नामक एक ऐसा कुत्ता है, जिसे असली-नकली की विलक्षण पहचान है । दोनों प्रकार के नोट यदि एक साथ रखे हों, तो वह चुन-चुन कर असली नोटों को अपने मुँह में दबा लेता है । इसी प्रकार सोने एवं धातु की बनी अन्य खरी-खोटी वस्तुओं में से असली को वह दक्षतापूर्वक पृथक् कर देता है । दीता डाबरमन पिशर नस्ल का कुत्ता है । इसके मालिक अलेक्साद तरियाकोवस्की का कहना है कि यह न केवल असली-नकली की पहचान की क्षमता रखता है, वरन् लोगों के हाव-भाव को भी कुशलतापूर्वक समझता है ।

पशुओं के पूर्वाभास, दृष्टि, गंध, श्रवण के करतब तो देखे-सुने जाते रहे हैं, पर उनमें अतीन्द्रिय सामर्थ्य भी होती है—इसके कम ही उदाहरण प्रकाश में आये हैं । बीसवीं शताब्दी के मध्य अमेरिका के वर्जीनिया प्रान्त में एक ऐसी घोड़ी हुई थी, जो पराशक्ति सम्पन्न थी । इसकी इस अद्भुत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षमता के कारण ही लोग इसे 'लेडी-वण्डर' के नाम से पुकारने लगे थे । घोड़ी की इस क्षमता का पता इसके मालिक श्री एवं श्रीमती फ्रेंडा को तब चला, जब तीन वर्ष की उम्र में अचानक एक दिन वह अपने स्वामी को घर की एक खोई सन्दूक की ओर संकेत-सा करने लगी, जो काफी खोजबीन के बाद भी नहीं मिल पाई थी । अगली बार एक गुमशुदा बच्चे का पता बताया तो फ्रेंडा दम्पत्ति की उत्सुकता बढ़ी और वे 'लेडी-वण्डर' की पराशक्ति का लाभ लेने के लिए एक विशेष युक्ति काम में लाने लगे । घोड़ी के सामने अँग्रेजी अक्षरों व शून्य से नौ तक के अंकों की तख्तियाँ लटका दी जातीं, जिन्हें वह अपने मुँह से उलट-पुलट कर वही अक्षर अथवा अंक उठाती, जो आवश्यक होता । ऐसे एक-एक अक्षर मिलकर शब्द और वाक्य बन जाते, जो प्रश्नकर्ता का उत्तर होता ।

एक बार मेसाचुसेट्स से तीन वर्ष का एक लड़का गायब हो गया । घोड़ी से जब इस बारे में पूछा गया तो उसने बताया कि लाश यहाँ से ४० मील दूर एक अन्य शहर में पानी से भरे एक गड्ढे में छिपाकर रखी हुई है । इस आधार पर बताए गए स्थान पर खोज की गई, तो लाश वहीं मिली ।

क्लार्क नामक एक व्यक्ति डेनवर से हाउस्टन की हवाई-यात्रा कर रहा था । इसी मध्य उसकी अटैची कहीं खो गई, जिसमें जरूरी कागजात थे । हवाई अड्डे के कर्मचारियों ने हर सम्भावित स्थान पर उसकी तलाश कर ली । जब नहीं मिली, तो इसकी सूचना क्लार्क को दी गई और यह भी कहा गया कि हम मुआवजा देने को तैयार हैं । क्लार्क ने इस अद्भुत घोड़ी के बारे में सुन रखा था । जब अधिकारियों की ओर से अन्तिम रूप से सामान नहीं मिलने की सम्भावना व्यक्त कर दी गई, तो उसने घोड़ी को आजमाना चाहा । उत्तर मिला—सामान न्यूयार्क हवाई अड्डे पर है । यद्यपि वहाँ भी इसकी खोजबीन की जा चुकी थी, तो भी क्लार्क के आग्रह पर दुबारा ढूँढ़-खोज की गई । आखिर सामान मिल गया । खबर क्लार्क को पुनः दी गई । प्रमाण के रूप में वह पत्र आज भी उसके कुटुम्बियों के पास सुरक्षित है ।

इस 'लेडी वण्डर' की सबसे बड़ी विचित्रता तो यह थी कि सम्बद्ध वस्तु अथवा व्यक्ति का किसी प्रकार का कोई सूत्र संकेत के बिना ही तत्सम्बन्धी वस्तु या व्यक्ति की सही-सही जानकारी प्रश्नकर्ता को देती थी ।

उसकी दूसरी बड़ी विशेषता यह थी कि प्रत्यक्ष रूप से अपने इस जीवन में वह मनुष्य जाति की किसी भी भाषा का परिचय न पा सकी थी और न ही कभी किसी ने उसे लिखना-पढ़ना सिखाया था, फिर भी उसका अँग्रेजी का ज्ञान असाधारण था । वह न केवल शब्द, वाक्य, वरन् उनकी सही-सही वर्तनी (स्पेलिंग) तक जानती थी ।

यह घोड़ी सात वर्ष की होते-होते पूरे अमेरिका में 'लेडी वण्डर' के नाम से विख्यात हो गई । १५ वर्ष तक उसने अपनी इस सामर्थ्य का सफलतापूर्वक प्रदर्शन किया और इस बीच सदा सही उत्तर देती रही । २२ वर्ष की आयु में उसकी मृत्यु हो गई । ये उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि सिरजनहार ने किसी के साथ पक्षपात नहीं किया । सभी प्राणियों को उसने आवश्यकतानुरूप क्षमताएँ प्रदान की हैं, एक मनुष्य है जो सदैव अभावों का ही रोना रोता रहता है । यदि वह अपने सोये आपे को जगाने का प्रयास करे तो वह भी ऋद्धि-सिद्धियों का स्वामी बन सकता है ।

सृष्टि का हर प्राणी विशिष्टता सम्पन्न

प्रकृति ने सुविधा वितरण में प्राणियों के साथ पक्षपात नहीं किया है । उसने अपनी संतानों में से किसी को भी ऐसा नहीं रखा है जिसके लिए यह कहा जा सके कि वह अभावग्रस्त है ।

हर प्राणी की एक जीवन परिधि है । उसकी अपनी दुनिया तथा अपनी आवश्यकता है । प्रकृति के अनुदान प्राणियों को इस आधार पर मिले हैं, जिससे वे निर्धारित जीवनचर्या को सुविधापूर्वक सम्पन्न कर सकें ।

एक प्राणी की दूसरे से तुलना आवश्यक है क्योंकि उनकी जीवनचर्या एक जैसी नहीं है । प्राणि-जगत् के असंख्य समुदाय अपने-अपने ढंग से निर्वाह करते हैं । उनकी आवश्यकता भी एक जैसी नहीं है । एक के लिए जो सुविधाजनक है, वह दूसरे के लिए सर्वथा अनावश्यक हो सकती है । बन्दर और शेर को पूँछ के सहारे लम्बी छलाँग लगाने में सहायता मिलती है किन्तु यदि वही मनुष्य के लगी होती तो अनावश्यक ही नहीं असुविधाजनक भी होती । घोड़ा अपनी पूँछ से मक्खियाँ उड़ाने का काम लेता है, पर मनुष्य के शरीर में यदि वह अवयव रहा होता तो उससे उल्टे कठिनाई का सामना करना पड़ता ।

हाथी की आवश्यकता को देखते हुए प्रकृति ने उसे लम्बी सूँड़ ठीक ही दी है, पर यदि वह घोड़े को मिली होती तो उससे उलटे कठिनाई में फँसना पड़ता । मनुष्य को जिस स्तर की जीवनचर्या अपनानी पड़ती है, उसे उसी के अनुरूप शारीरिक तथा मानसिक संरचना वाली काया मिली है । अन्य प्राणियों को न उन साधनों की आवश्यकता थी, न प्रकृति ने उनके ऊपर उन्हें लादा ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । ऐसी दशा में किसी प्राणी की किसी से तुलना करना और एक को समृद्ध एवं दूसरे को अभावग्रस्त ठहराना व्यर्थ है ।

अन्य प्राणियों में भी ऐसी विशेषताएँ पाई जाती हैं, जिन्हें देखते हुए यह कहना पड़ सकता है कि प्रकृति ने मनुष्य को उन सुविधाओं से वंचित रखकर पक्षपात किया है । अपने-अपने क्षेत्र में हर प्राणी साधन सम्पन्न है और शान्तिपूर्वक जीवनयापन कर रहा है । उनकी तुलना में मनुष्य अपने को पिछड़ा हुआ भी अनुभव कर सकता है ।

असाधारण परिस्थितियों की पृष्ठभूमि बनने पर जहाँ मनुष्य को इसका कोई आभास नहीं होता वहाँ साधारण पशु-पक्षियों को भी निकट भविष्य में घटित होने वाली दुर्घटनाओं, प्राकृतिक आपदाओं का पूर्वाभास हो जाता है और वे असामान्य व्यवहार करने लगते हैं । चूहे बिलों में छिप जाते हैं, बिल्ली भी कहीं नहीं दिखती । घोड़े बेलगाम दौड़ने लगते हैं । चिड़ियाँ चहचहाने लगती हैं । चीतल, हिरन, शेर आदि जंगली जानवर समूह बनाकर चुपचाप सुरक्षित स्थान पर जा खड़े होते हैं ।

जीव-विज्ञानियों का कहना है कि ये मूक प्राणी बदलते घटनाक्रम का पूर्वाभास सरलतापूर्वक शीघ्रता से कर लेते हैं । अभिव्यक्ति की क्षमता भी यदि इनमें होती तो यह भविष्यवाणियाँ भी किया करते । यूगोस्लाविया में १९६३ में आए भूकम्प से पूर्व चिड़ियाघर के सभी पक्षी जोर-जोर से चहचहाने लगे थे, मानो वे बुद्धिमान मनुष्य से कुछ कहना चाहते थे । इसी तरह चीन में दो दशक पूर्व टिन्टसिन क्षेत्र में आए भूकम्प के पूर्व चूहे अपनी माँद में नहीं गये । शेर उतावले हो गए एवं याक ने भोजन लेना बन्द कर दिया । घोड़े और भेड़-बकरियाँ अनवरत रूप से दौड़ने लगे थे । १९६६ में सिंगटाई में आए भूकम्प से पहले ही चूहे अपने बिलों में छिप गए थे ।

प्राचीनकाल में जंगली हंसों के चीखने से रोम के लोग अनेक बार प्राकृतिक विपदाओं से बच गए थे । पीत चिड़िया का उपयोग कोयला खान के मजदूरों को गैस रिसने से सावधान करने में किया जाता था । वैज्ञानिकों ने अपने एक अध्ययन में बताया है कि कोबरा जाति का सर्प आँधी, तूफान और अतिवृष्टि को बहुत पहले से ही जान लेता है और स्वयं सुरक्षित पेड़ों पर चढ़ जाता है और तब तक वहीं रहता है जब तक कि तूफान शान्त नहीं हो जाता । चीतल और हिरन जो दिन भर कुलाचें भरते रहते हैं ऐसे अवसरों पर समूह बनाकर किसी ऊँचे एवं सुरक्षित स्थान पर चले जाते हैं । मौसम खराब होने से पूर्व मधुमक्खियाँ दिन में भी अपने छत्ते में एकत्र होकर भनभनाने लगती हैं जो सामान्यतः ऐसा नहीं करतीं । मैना भी तूफान और चक्रवात के पहले जोरों से चीखती है । गोशाल्व जाति का बाज लड़ाकू विमानों की तरह बिना वेग को कम किए उलटने-पलटने की कलाबाजियाँ जानता है । गरुड़ पक्षी विशालकाय होने पर भी २०० किलोमीटर प्रति घण्टे की तीव्रगति से उड़ता है । थलचर प्राणियों में चीता तीव्रगति सम्पन्न है । वह ६० मील प्रति घण्टे के हिसाब से आसानी से दौड़ सकता है । विशेष अवसरों—प्रतिरक्षा या आक्रमण के समय वह ९० से १०० मील प्रति घण्टे की तीव्रतम गति से भी दौड़ लेता है । आस्ट्रेलिया का कंगारू ४० फुट ऊँची छलाँग लगाता है । सर्प की लचीली और मजबूत माँसपेशियाँ उसे कुण्डलित होने में सहायक होती हैं । हाथी की सूँड़ चार हजार माँसपेशियों से निर्मित होने पर भी जमीन पर पड़ी हुई सुई उठाने में सक्षम है ।

अंगों की मजबूती के दृष्टिकोण से शेर का पंजा और ह्वेल मछली सशक्त है । अन्य प्राणियों के कोई भी अंग इतने मजबूत नहीं हैं । आक्टोपस नामक जलचर की भुजाओं में जो भी प्राणी जकड़ जाए उसका जीवित बचना मुश्किल है ।

उल्लू भी विचित्र जाव है । वह मनुष्य की अपेक्षा दस गुनी कम रोशनी में भी देख सकता है । खरगोश बिना दिशा परिवर्तन के आगे पीछे साथ-साथ देख लेता है । मछलियाँ पानी के भीतर तैरते हुए ऊपर-नीचे दोनों ओर देख लेती हैं । अपृष्ठवंशी कीट-पतंगों की दुनिया बहुत ही निराली है । प्रख्यात एण्टोओलाजिस्ट 'आवेड' के अनुसार—जैसे माताएँ अपने कमजोर, मंदबुद्धि बालकों का विशेष ध्यान रखती हैं, ऐसे ही प्रकृति माता भी इन मूक प्राणियों पर सहज ही ऐसी कृपा किये हुए है, जिससे ये इतने विविध आकार-प्रकार धारण करते हुए भी सृष्टि की किसी भी परिस्थिति में जीवित रह सकते हैं । कीटों में हड्डियाँ नहीं होतीं । अपने बचाव के लिए वे बाहरी कवच धारण किए होते हैं । इनमें हृदय पीठ के बगल में ऊपर होता है । टाँगें खोखली नलिकाओं जैसी होती हैं, जिनकी इंजीनियरिंग अपने आकार में विश्व के सबसे शक्तिशाली उपकरण जैसी होती है । वैज्ञानिकों ने एक प्रकार के कीट पर भार लादने का प्रयोग किया तो वे यह देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि वह अपने वजन से ८५० गुना अधिक भार बड़ी आसानी से ले जाने में समर्थ रहा । जबकि सामान्य मनुष्य अपने वजन का अधिक से अधिक दो तिहाई भार ही उठा सकता है । कीटों का बाहरी कवच उन्हें आश्चर्यजनक दृढ़ता प्रदान करता है ।

एक प्रकार की राजा तितली जिसे फूँक मारकर उड़ाया जा सकता है, सतत् तीन हजार मील से भी अधिक का यात्रा-प्रवास करती रहती है । वैज्ञानिकों ने जब 'पेन्टेड लेडी बटर फ्लाई' को विशेष चिह्न द्वारा अंकित करके उत्तर अफ्रीका से छोड़ा तो वे रास्ते में आने वाले भयंकर तूफानों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

झंझावातों एवम् वर्षा को झेलते हुए कटे-फटे पंख होने पर भी आइसलैण्ड पहुँच गई ।

कीटकों के फेफड़े नहीं होते । उनके शरीर के दोनों ओर छोटे-छोटे छिद्र होते हैं, जिनके द्वारा उनके शरीर के प्रत्येक अवयव में वायु का आवागमन होता रहता है । विश्राम के समय उन्हें बहुत कम ऑक्सीजन की जरूरत होती है, लेकिन उड़ते समय विश्रामावधि की अपेक्षा ५० गुनी अधिक आवश्यक होती है । इनके पंखों की संरचना ऐसी है, जिसमें गति विज्ञान के प्रत्येक सिद्धान्तों का बारीकी से पालन किया गया है, अन्यथा ड्रैगन फ्लाई जिसके पंख पतले कागज से भी बारीक होते हैं, वह ४० मील प्रति घण्टे की गति से कैसे उड़ सकती ? मच्छर तो हवाई गतिविज्ञान का आश्चर्यजनक उपयोग करके अपने वजन का दुगुना खून लेकर ऊँची उड़ान कर सकता है । ऐसा करने के लिए उसे अपने पंखों को प्रति सैकिण्ड ३०० से अधिक बार चलाना पड़ता है । कुछ ऐसे भी सूक्ष्म कीट होते हैं, जो आँखों से तो दिखाई नहीं पड़ते पर प्रति सैकिण्ड १००० से भी अधिक बार वे अपने पंखों को हिला सकते हैं । कुछ कीटक ऐसे भी होते जिनके पंख काम नहीं करते अथवा होते ही नहीं वे अपनी ऊँचाई से सौ गुनी अधिक ऊँची छलाँग लगा सकते हैं । पर मनुष्य में इतनी क्षमता कहाँ जो ऊँचे से ऊँचे स्थान से बिना किसी यंत्रउपकरण के छलाँग लगा सके ।

देखने में नाजुक लगने वाले ये क्षुद्र जीव इतने मजबूत होते हैं कि अचानक परिस्थितियों के प्रतिकूल हो जाने पर भी जीवित बने रहते हैं । प्राकृतिक इतिहास के अमेरिकन संग्रहालय के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ० एफ० ई० लुत्ज ने कुछ मधुमक्खियों एवं तितलियों को एक काँच की नली में बंद करके उसकी हवा निकालकर वैक्यूम निर्वात कर दिया तथा बाद में उस नली को तोड़ दिया । इस प्रकार के अचानक दबाव परिवर्तन से कोई भी अन्य प्राणी जीवित नहीं रह सकता लेकिन इन छोटे-छोटे कीटक कैदियों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा और नली टूटते ही वे प्रसन्नतापूर्वक उड़ गए । इनकी जगह पर यदि सबसे मजबूत जानवर हाथी भी रहा होता तो वह तत्काल मर जाता ।

प्राथमिक स्तर का अविकसित मस्तिष्क होने एवं कर्णेन्द्रिय के अभाव में भी कीड़े दो तरह से सुन सकते हैं । एक तो शरीर पर या अन्य अंग-अवयवों, उपांगों पर उपस्थित सूक्ष्म बालों की सहायता से स्पर्श द्वारा ध्वनि तरंगों का अनुभव कर सकते हैं । दूसरे कुछ विशेष प्रकार की झिल्लियाँ विभिन्न कीटों में विभिन्न स्थानों पर होती हैं, जो श्रवण अंग का कार्य करती हैं जैसे—झींगुर में ये घुटनों पर होती हैं । ये पराश्रव्य ध्वनियों को सुनने की क्षमता रखते हैं और ४५००० आवृत्ति तक की ध्वनियों को सुन लेते हैं जबकि मनुष्य अधिक से अधिक २००० आवृत्ति तक की ध्वनि को ही सुन सकता है ।

गन्ध एवं स्वाद की परख की क्षमता कीटों में अन्य सभी प्राणियों से पराकाष्ठा तक विकसित हुई है । मनुष्य के मिठास को परखने की क्षमता एक भाग शक्कर और २०० भाग पानी तक ही होती है, पर कुछ कीटों की यह क्षमता इतनी अधिक विकसित होती है कि वे एक भाग शक्कर और तीन लाख भाग पानी तक की परख कर सकते हैं । कुछ कीटकों में गंध परखने की शक्ति इस हद तक विकसित होती है कि एक नर कीटक मादा की गंध की पहचान ९ मील तक कर सकता है । यह वे फेरामॉन्स के माध्यम से करते हैं ।

सृष्टा ने अपनी दुनिया को चित्र-विचित्र साधनों और विभिन्नताओं से सुसज्जित किया है । प्राणि-जगत् की भिन्नता और विचित्रता को देखते हुए इन सब में सृजनकर्ता की कुशलता और कलाकारिता छलकती दृष्टिगोचर होती है ।

प्राणियों की अतीन्द्रिय एवं विलक्षण शक्ति

किन्हीं-किन्हीं मनुष्यों में ऐसी शारीरिक या मानसिक क्षमताएँ पाई जाती हैं जो सर्वसाधारण में नहीं होतीं । इसे देखकर उन्हें विलक्षण या चमत्कारी ठहराया जाता है । अतीन्द्रिय क्षमता के आधार पर लोग ऐसी बातें जान लेते हैं या बताते हैं जिनका कोई बुद्धिसंगत-आधार नहीं होता किन्तु पीछे तलाश करने पर वे बातें सही निकलती हैं । जो ज्ञान-इन्द्रियों की सीमा से परे है, उसे जानने वाले सिद्धयोगी कहलाते हैं और आश्चर्य एवं आकर्षण का विषय समझे जाते हैं ।

हमें जानना चाहिये कि अतीन्द्रिय शक्ति मनुष्यों में तो कभी किसी को ही मिलती है पर यह प्राणिजगत् में से कितनों को ही जन्मजात रूप में प्राप्त है । वे ऐसा बहुत कुछ जान लेते हैं, जो इन्द्रियों तथा मस्तिष्क की बनावट को देखते हुए अद्भुत या अलौकिक ही कहा समझा जा सकता है ।

आकाश की तरह पानी के भीतर भी उड़ सकने में समर्थ 'आरेब्डक' नामक वाटरप्रूफ पक्षी अनोखा है । वह तैरता, उड़ता, महीनों समुद्र में ही गुजारा करता रहता है । आर्कटिक सागर के उत्तरी छोर पर बर्फीले प्रदेश में रहने वाले कुछ पक्षी बिना रुके २२ हजार मील की लम्बी यात्रा करके दक्षिण ध्रुव पर जा पहुँचते हैं ।

स्मरण शक्ति की दृष्टि से कुत्ता सबसे आगे है । जर्मनी के म्युनिक नगर में नोरा नामक कुतिया को उसके घर से पाँच मील दूर ऐसे स्थान पर छोड़ा गया जो उसने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पहले कभी नहीं देखा था और न घर से वहाँ तक का रास्ता ही उसे मालूम था । फिर भी वह इधर-उधर चक्कर काटती हुई दो घण्टे में अपने घर पहुँच गई । दूसरी बार फिर उसे छोड़ा गया तो अब की बार उसने सीधा रास्ता ढूँढ़ निकाला और ३५ मिनट में ही घर पहुँच गई ।

भारत का विश्वविख्यात बुद्धिमान कुत्ता 'हैरी' अब इस संसार में नहीं है पर उसके बुद्धि-कौशल की अभी भी सर्वत्र प्रशंसा है ।

हैरी विश्व के ५० देशों में अपने ढंग का अनोखा था । उसने दर्जनों श्वान प्रदर्शनियों में भाग लिया और पुरस्कार प्राप्त किए । उसकी सूझ-बूझ और अनुशासनशीलता पर संसार की अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने लेख प्रकाशित किए ।

मुस्कराना, गाना, नाचना, नमस्ते करना, हाथ मिलाना, तीन टाँग से चलना, ताश की गड्डी में से किसी का छुआ पत्ता निकाल देना, मुर्दे का स्वाँग बनाकर बिल्कुल उसी तरह निःचेष्ट हो जाना, पानी में से किसी वस्तु को ढूँढ़ लाना, अतिथियों को पुष्पहार पहनाना आदि अनेक क्रिया-कौशल उसने सीख रखे थे । चोरी का पता लगाने में वह पुलिस के प्रशिक्षित कुत्तों को मात देता था । दिल्ली के एक स्वागत गान समारोह में उसने दर्शकों को मुग्ध कर दिया था । यद्यपि वह गीत के शब्दों का उच्चारण नहीं कर सकता था तो भी उसने अपनी सुरीली आवाज से ध्वनि के जिस उतार-चढ़ाव के साथ गीत गाया उससे हर किसी ने अनुमान लगाया कि वह क्या गीत गा रहा है । इन्दिरा गाँधी तक को वह अपने कौशल से चमत्कृत कर चुका था ।

हैरी ने एक रंगीन फिल्म में काम किया था जो देश-विदेश में चावपूर्वक देखी गई । घटना-क्रम के अनुसार मुख मुद्रा का ठीक उसी के अनुरूप बना लेना इस अभिनय का विशेष चमत्कार था जिसे देखकर दर्शक ताली बजाए बिना रह नहीं सकते थे ।

हैरी को सौन्दर्य प्रतियोगिताओं में कई चैलेन्ज प्रमाण पत्र प्राप्त हुए । उसे आज्ञा-पालन प्रतियोगिताओं में अन्तर्राष्ट्रीय चैम्पियनशिप प्राप्त हुई थी । उसके पास अन्तर्राष्ट्रीय ट्राफियाँ, कप, पदक, प्रमाण-पत्रों का ढेर था । उसने अपने मालिक और शिक्षक श्री आनन्द प्रकाश कनौडिया को भी गौरवान्वित किया । हैरी छै वर्ष जीकर परलोकवासी हो गया ।

अतीन्द्रिय शक्ति हर मनुष्य में होती है पर अस्वाभाविक एवं मनोविकारग्रस्त जीवन जीने के कारण वह कुंठित हो जाती है । वनवासी लोग प्रकृति के अधिक समीप रहने और सरल जीवन जीने के कारण उस शक्ति से अपेक्षाकृत अधिक सम्पन्न होते हैं ।

सिद्धयोगी जिन अद्भुत या अतीन्द्रिय क्षमताओं को विकसित कर लेते हैं, उनमें उनका प्रयास, परिश्रम एवं अभ्यास ही सफलता का प्रधान कारण होता है । वैसे वह सामर्थ्य हर मनुष्य के भीतर जन्मजात रूप में ही भरी पड़ी है । पशु-पक्षियों में पाई जाने वाली विलक्षणताओं की तुलना में प्रकृति ने कुछ कम नहीं अधिक ही दिया है । साधना की कुदाली से उन्हें खोद निकाला जाय तो सिद्धि-सम्पदा से सुसम्पन्न बन सकना किसी के लिए भी सम्भव एवम् सरल हो सकता है ।

मनुष्य सहित हर प्राणी में उससे कहीं अधिक क्षमता विद्यमान है जितना कि वह अपने शरीर और मन के द्वारा कार्यान्वित कर पाता है । शक्तियों का स्वरूप ऐसा है जिसमें जब जिन्हें काम में लाया जाता है, तब वे उतनी मात्रा में सक्षम रहती हैं और जब उनका प्रयोग-उपयोग नहीं होता तो वे फिर ऐसे ही निरर्थक पड़ी-पड़ी प्रसुप्त स्थिति में चली जाती हैं । बीज नाश तो नहीं होता किन्तु क्रियान्वित न किए जाने पर उनका शिथिल या विस्मृत हो जाना स्वाभाविक है । साथ ही यह भी सम्भव है कि यदि उन्हें प्रयत्नपूर्वक जगाया जाय तो वे सजीव सक्रिय ही नहीं प्रखर भी हो उठती हैं । अभ्यास इसी का नाम है । साधन भी इसी प्रयत्नशीलता को कहते हैं ।

मनुष्यों की अतीन्द्रिय क्षमता का आभास समय-समय पर मिलता रहता है । जो कार्य प्रत्यक्ष इन्द्रियों के द्वारा नहीं हो सकता उसे अतीन्द्रिय क्षमता जाग्रत होने पर किया जा सकता है । दूरश्रवण, दूरदर्शन, विचार संचालन, भविष्य कथन, पूर्वाभास जैसी अनेक अतीन्द्रिय क्षमता को मनुष्य में पाया गया है । उनका कारण ढूँढ़ने तथा जगाने का उपाय ढूँढ़ने में विज्ञजन संलग्न हैं । आशा की गई है कि निकट भविष्य में मनुष्य उसी प्रकार चेतनात्मक रहस्यों से भी लाभान्वित होने लगेगा, जिस प्रकार पदार्थ विज्ञान की सहायता से कुछ दिन पूर्व तक के अविज्ञात प्रकृति शक्तियों का भरपूर लाभ उठ रहा है ।

अब प्रमाण मिल रहे हैं कि मनुष्य की तरह विभिन्न प्राणियों में भी अतीन्द्रिय क्षमता पाई जाती है और वे भावी सम्भावनाओं के बहुत कुछ पूर्वाभास प्राप्त कर लेते हैं । मनुष्य की तरह उन्हें भी प्रशिक्षित किया जाय तो वे इन सामर्थ्यों को विकसित कर सकते हैं और उसका लाभ मनुष्य को दे सकते हैं । इस प्रकार सिद्ध पुरुषों की श्रेणी में मनुष्येतर प्राणी भी सम्मिलित हो सकते हैं । इस सफलता का लाभ उठा सकने में मनुष्य समाज की भी हिस्सेदारी हो सकती है जबकि अभी इस विशेषता का लाभ वे अपनी ही आत्मरक्षा के लिए उठा पाते हैं ।

अन्यान्य पशु-पक्षियों में पाई जाने वाली अतीन्द्रिय क्षमता का आभास, प्रमाण समय-समय पर मिलता रहता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

५.३३ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

प्रकृतिगत दुर्घटनाओं तथा अशुभ सम्भावनाओं के सम्बन्ध में अब तक एक भी ऐसा माध्यम निकलकर नहीं आया है जो सही भविष्यवाणी कर सके किन्तु पशु-पक्षियों द्वारा दी गई पूर्व सूचनाओं में से एक भी अवसर ऐसा नहीं गया जो मिथ्या सिद्ध हुआ हो । चीनी विशेषज्ञों ने पिछले दिनों हुए ११ भूकम्पों के विवरण प्रस्तुत करते हुए कहा है कि ऐसी भविष्यवाणियाँ जहाँ भी—जिन दिनों भी दी गईं वे सभी सही सिद्ध हुईं । इस सम्बन्ध में पांडा (विशेष किस्म की बिल्ली), याक (सुरागाय) जैसे जानवरों ने तो न केवल चिल्लाना आरम्भ किया था वरन् भूखे होने पर भी चारा लेने से इन्कार कर दिया था । यहाँ तक कि चींटियाँ भी अपनी हलचलें बन्द करके स्तब्ध हो गई थीं ।

चीन के तांगशान क्षेत्र में सन् १९७६ में भयंकर भूकम्प आया था, जिसमें लाखों व्यक्ति मारे गए किन्तु साथ ही यह भी सच है कि मात्र पशु-पक्षियों द्वारा दी गई चेतावनी के आधार पर प्राय: १० लाख व्यक्तियों ने भाग कर अपनी जानें बचा ली थीं ।

स्टेनफोर्ड अनुसंधान संस्थान के अध्यक्ष डॉ० विलियम काट्स का निष्कर्ष है कि भूकम्प तूफान जैसी घटनाओं से एक-दो दिन पूर्व वायुमण्डल में विद्युतीय सूक्ष्म परिवर्तन होते हैं । उन्हें मशीनें तो नहीं पकड़ पातीं पर अधिक सम्वेदनशील इन्द्रियों वाले प्राणी पकड़ लेते हैं क्योंकि श्रेष्ठ से श्रेष्ठ मशीन की तुलना में इन प्राणियों की सम्वेदन शक्ति प्राय: एक हजार गुनी अधिक पाई गई है ।

सन् १९६३ में यूगोस्लाविया के स्कोटजी क्षेत्र में भयानक भूकम्प आया था । उस दुर्घटना में प्राय: वह सारा नगर ही नष्ट-भ्रष्ट हो गया । इसका पूर्व अनुमान किसी को भी नहीं था किन्तु देखा गया था कि दुर्घटना से कई घण्टे पूर्व उस क्षेत्र के जानवर बुरी तरह स्थान छोड़कर सुरक्षित दिशा में भाग चले थे । जो रस्सियों से बँधे थे या चिड़ियाघर में कैद थे, उन्होंने कुहराम मचा रखा था और बन्धन से छूटने का प्राणपण से प्रयत्न कर रहे थे । उन्होंने बुरी तरह चिल्लाना आरम्भ करके सभी को हैरान कर दिया था । उस समय तो इस कुहराम का कारण न समझा जा सका किन्तु बाद में जाना गया कि इन प्राणियों को भूकम्प की सूचना उनकी अतीन्द्रिय क्षमता ने बता दी थी और वे आत्मरक्षा के लिए न केवल प्रयत्नशील थे वरन् दूसरों को भी चेतावनी दे रहे थे ।

जर्मनी फ्रीवर्ग इन्स्टीट्यूट के इन्स्टीट्यूट ऑफ पैरासाइकालोजी के अध्यक्ष हेन्स बैण्डर ने प्राणियों में पाई जाने वाली अतीन्द्रिय क्षमता के अनेकों प्रमाणों का उल्लेख किया है । उसमें दूसरे महायुद्ध काल की उस घटना को भी उद्धृत किया गया है जिसमें भयानक बमबारी से पूर्व एक बतख ने फ्रीवर्ग पार्क में गलाफाड़-कुहराम मचाया था । उसें नागरिकों ने विपत्ति की पूर्व सूचना समझा और इतनी देर में बचाव का जो उपाय सम्भव था वह उन्होंने कर लिया । बतख मरते दम तक शोर मचाती रही और अन्तत: उसी बमबारी की शिकार हो गई । बाद में वहाँ के नागरिकों ने उसे कृतज्ञतापूर्वक स्मरण रखा और एक दर्शनीय स्मारक बनाया ।

शेप्यूलिन (फ्रांस) में जीन ड्यूजी नामक व्यक्ति का एक पालतू कुत्ता था—स्पेवियल । ड्यूजी पर डाकुओं ने आक्रमण किया और उसे मारकर लाश को पास की नदी में फेंक दिया । ढूँढ़-खोज होती रही पर ड्यूजी का कहीं पता न चला । पर कुत्ते ने अपने मरे हुए मालिक की लाश को खोज निकाला । उसने छै दिन और छै रात गाँव के परिचित लोगों के कपड़े खींचकर नदी तट तक ले जाने का प्रयत्न किया । कई दिन तक तो इस विचित्र व्यवहार का कोई कारण न समझा जा सका पर जब लोग कुत्ते के आग्रह पर वहाँ तक गए तो उन्होंने नदी में डूबी हुई लाश को निकाल लिया ।

अपराधियों की खोज में कुत्तों की भूमिका सर्वविदित है । इस प्रयोजन के लिए पुलिस विभाग के लिए उन्हें विशेष रूप से प्रशिक्षित किया जाता है । वे जासूसी के लिए मनुष्य की तुलना में अधिक सुयोग्य पाए गए हैं । यह कठिन कार्य वे अपनी घ्राण शक्ति की विशेषता के कारण ही कर पाते हैं । इस ढूँढ़-खोज में उनकी आँखों का, सूझबूझ का प्रयोग नहीं होता वरन् वे अपराधी के शरीर से निकलने वाली एक विशेष गन्ध की दिशा का अनुसरण करते हुए पीछा करते हैं और वहाँ जा पहुँचते हैं, जहाँ अभीष्ट व्यक्ति रह रहा होता है । स्मरण रहे हर व्यक्ति की अपनी एक विशेष गन्ध होती है । जैसे किसी का चेहरा किसी दूसरे से नहीं मिलता, उसी प्रकार यह गन्ध भी हर किसी की अलग-अलग होती है । कुत्ते को सर्वप्रथम उस गंध से परिचित कराया जाता है जिसका कि उसे पीछा करना है । यह कार्य अपराध हुए स्थान पर कुछ समय ठहरकर यह प्रशिक्षित कुत्ते भली प्रकार कर लेते हैं और अपराधी की खोज पर टेढ़े-मेढ़े रास्तों को पार करते हुए निकल पड़ते हैं ।

बुलन्दशहर (उ० प्र०) के निकटवर्ती गाँव मनरेजपुर में दीवार ढहने के कारण एक व्यक्ति उसके नीचे दब गया । उसके पालतू कुत्ते को यह जानकारी सर्वप्रथम प्राप्त हुई और उसने वहाँ कुहराम मचाना आरम्भ कर दिया । जब तक लोग पहुँचे और खोदकर लाश निकाली, तब तक कुत्ता धाड़मार कर रोता रहा और जब देखा कि उसका मालिक मर चुका तो उसने भी उस दृश्य को देखकर छटपटाते हुए प्राण त्याग दिए ।

'दि साइकिक पावर आफ एनीमल्स' ग्रन्थ के लेखक विलशूल ने ऐसी अनेकों घटनाएँ उद्धृत की हैं, जिनसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतीत होता है कि पशुओं में बुद्धिमता भले ही कम हो पर वे अतीन्द्रिय क्षमताओं की दृष्टि से मनुष्य की तुलना में कहीं आगे होते हैं । पुस्तक में १९२९ की उस घटना का उल्लेख है जिसमें सड़क पर सरपट दौड़ता हुआ घोड़ा यकायक ठिठका और बहुत धमकाने पर भी एक कदम आगे न बढ़ा । बाद में कुछ ही मिनट बाद उसी सड़क पर आकाश से बिजली गिरी और पेड़-पौधे तक जल गये । यदि घोड़ा बढ़ गया होता तो उसे सवार समेत दुर्घटना का शिकार होना पड़ता ।

ऐसी ही एक और घटना का उक्त पुस्तक में उल्लेख है । सिगसिंग की जेल में एक कोठरी के सामने वहाँ रहने वाला कुत्ता बेतरह चिल्लाने लगा । बार्डरों ने आकर देखा तो पाया कि एक कैदी आत्महत्या कर रहा था । कुत्ते ने सूचना देकर उस दुर्घटना को होते-होते बचा दिया ।

शूल ने चूहों में भी यह क्षमता पाई है । उन्होंने मैनहटन की एक विशालकाय पुरानी कोठी का उल्लेख करते हुए लिखा है कि उसमें से चूहे झुण्ड बनाकर तीन किश्तों में भागे और सैकड़ों की संख्या में अपना पुराना निवास छोड़कर एक साथ पलायन कर गये । इसके उपरान्त उस कोठी में रहने वालों पर लगातार अप्रत्याशित विपत्तियाँ आईं और किसी न किसी कारण बड़ी संख्या में एक-एक करके मौत के मुँह में चले गए ।

जलयानों में अब से कुछ समय पूर्व चूहे पाले और खुले रखे जाते थे । इसलिए कि तूफान आने की पूर्व सूचना वे दे सकें । जब कभी तूफान आने को होते हैं चूहों को उसकी पूर्ण जानकारी मिलती है और वे अन्यत्र भाग जाने का उपक्रम करते हैं । इस आधार पर जलपोतों के संचालक सावधान हो जाते थे और बचने का प्रयत्न करते थे ।

पशुओं की विशिष्ट क्षमताओं का अनुसंधान करने वाले अमेरिकी वैज्ञानिक जे० वी० राइन ने ऐसे अनेकों प्रमाण एकत्रित किए हैं, जिनमें वे इन प्राणियों को अतीन्द्रिय क्षमता मानते हैं । उन्होंने अपने अनुसंधान प्रकाशन में कैलीफोर्निया के प्रिंसिपल स्टेसी वुड्स की बिल्ली का उल्लेख किया है जो मालिक से बिछुड़ जाने पर उन्हें १४ महीने लगातार खोजती रही और एण्डरसन से ओकलाहोमा के बीच की १५०० मील दूरी को पार कर किसी प्रकार भटकते-भटकते उन तक जा पहुँचने में सफल हुई थी । मालिक को स्वप्न में भी इसकी आशा नहीं थी कि द्रुतगामी वाहनों द्वारा सफर करने पर भी बिल्ली उन्हें खोज निकालेगी और संकट भरे रास्ते पार करने का तथा सही स्थान ढूँढ़ निकालने में सफल होगी ।

मेडफोर्ड में मकान की अदला-बदली के सिलसिले में मार्टिनरास की लूपी बिल्ली कहीं गायब हो गई । बिल्ली कहीं इधर-उधर होगी कि मालिक अपना असबाब बाँधकर घर से बहुत दूर नए मकान में चला गया । बिल्ली ने मालिक को और मालिक ने बिल्ली को खोजा, पर कोई किसी का पता न पा सका ।

बिल्ली ने आखिर मालिक को खोज ही निकाला । सैकड़ों मील दूर सर्वथा अपरिचित इलाके में वह वहीं जा पहुँची जहाँ मालिक ने नया मकान लिया था । उसने किस प्रकार पता पाया और इतना लम्बा अपरिचित रास्ता किस प्रकार पार किया, इस पर मार्टिन आश्चर्यचकित रह गया ।

राइन ने ऐसी ही एक और घटना एक कबूतर की अंकित की है । वर्जीनिया के समर्सबिले नगर के एक पकिन्स नामक लड़के ने एक कबूतर पाला था । पहचान के लिए उसके पैर में एक छल्ला पहना दिया जिस पर '१७६' लिखा था । कबूतर पलता रहा । एक बार लड़का दुर्घटनाग्रस्त हुआ और उसे १२० मील दूर अस्पताल में ऑपरेशन के लिए भर्ती कराना पड़ा । कई दिन बीतने पर जिस समय बाहर घोर बर्फ पड़ रही थी । एक कबूतर अस्पताल कर्मचारियों के प्रतिरोध की परवाह न करता हुआ लड़के के बिस्तर पर जा बैठा । ऐसा वहाँ पहले कभी नहीं हुआ था—सभी स्तब्ध थे । लड़के ने हाथ बढ़ाकर देखा तो यह उसका पालतू कबूतर था जिसके पैर में '१७६' अंकों वाला छल्ला पहना रखा ।

विभिन्न प्राणियों में पाई जाने वाली अतीन्द्रिय क्षमता को देखते हुए लगता है कि वे भी अपने क्षेत्र में अपने किस्म के सिद्ध पुरुष हैं । यह विशेषताएँ उनके लिए तो उपयोगी हैं ही, यदि मनुष्य चाहे तो वह भी उनकी इन विशेषताओं से अब की अपेक्षा भविष्य में कहीं अधिक लाभ उठा सकता है ।

यद्यपि बुद्धि के क्षेत्र में मनुष्य समस्त प्राणिजगत् का नेतृत्व करता है । किन्तु मात्र इस विशेषता के आधार पर वह अपने को सर्वोपरि होने का दावा नहीं कर सकता । जिन गुणों के आधार पर उसकी महिमा का गुणगान किया गया वह है—उसकी भाव सम्वेदनाएँ । इन्हीं विशेषताओं के कारण उसे सर्वश्रेष्ठ होने एवम् सृष्टि के मुकुटमणि कहे जाने का गौरव प्राप्त हुआ । इनके अभाव में तो बुद्धि सम्पन्न होते हुए भी उसकी गतिविधियाँ निकृष्ट बनी रहतीं । संकीर्णताओं एवं स्वार्थों को अपनाने से तो वह मानवेतर योनियों से भी गया-गुजरा सिद्ध होता । उसकी महत्ता तो मानवोचित गुणों से सम्पन्न होने पर ही प्रतिपादित की गई है ।

परमात्मा ने मनुष्य को अतिरिक्त बुद्धि तो दी, किन्तु अन्य प्राणियों को भी उन विशेषताओं से वंचित नहीं रखा जो उनके जीवनयापन के लिए आवश्यक हैं । भोजन जुटाने से लेकर सुरक्षा का सरंजाम करने में ये प्राणी कितने दक्ष होते हैं, यह उनके कृत्यों का अवलोकन करने पर पता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

चलता है । जो जीव अधिक कोमल एवं शक्ति की दृष्टि से कमजोर हैं उनके साथ कुछ ऐसी विशेषताएँ जोड़ दीं, जिससे वे खूँख्वार-जीवों से अपनी सुरक्षा कर सकें । न केवल जीव-जन्तुओं वरन् प्रकृति के प्रकोपों से बचने के लिए उन्हें अतीन्द्रिय शक्तियाँ प्रदान कीं, जिससे वे आने वाले संकटों का पूर्वाभास कर अपनी सुरक्षा कर सकें । उनकी इन क्षमताओं को देखकर मानवी बुद्धि को भी आश्चर्यजनक होना तथा सोचना पड़ता है कि उसका सर्वोपरि होने का दम्भ मिथ्या है ।

होने वाले प्रकृति प्रकोपों की जानकारी प्राप्त करने के लिए विज्ञान अभी ऐसी तकनीक का विकास नहीं कर सका है, जिससे वह सम्भावित विक्षोभों को जानकर अपनी सुरक्षा कर सके । इस कारण प्रतिवर्ष कितनी क्षति उठानी पड़ती है, इससे हर कोई अवगत है । किन्तु जो नवीन तथ्य सामने आए हैं उनसे पता चला कि कुछ जीवों को इस प्रकार की अतीन्द्रिय क्षमताएँ प्राप्त हैं । उनको होने वाले प्रकृति प्रकोपों का पूर्वाभास हो जाता है । फलस्वरूप वे संकट सिर पर खड़ा देखकर अपनी सुरक्षा का प्रयत्न करते हैं ।

जुलाई २८ सन् १९७६ को उत्तर चीन में भूकम्प का तीव्र झटका महसूस किया गया । सर्वेक्षण में गये सरकारी कर्मचारियों को एक गाँव के व्यक्तियों ने महत्वपूर्ण बातें बताईं । एक कृषक नित्य की भाँति अस्तबल में बँधे अपने घोड़ों को चारा-पानी देने के लिए गया । अस्तबल में बँधे घोड़े एवं खच्चर चारा खाने के स्थान पर उछलने-कूदने लगे । पशुपालक के अथक प्रयत्न के बावजूद भी जानवर रस्सियाँ तोड़कर भाग चले । उसी क्षण आसमान में बिजली की तीव्र गड़गड़ाहट गूँज उठी । तीव्र प्रकाश की चमक दिखाई पड़ी । कुछ समय बाद पता चला कि वहाँ से ४० किलोमीटर दूर तांगशान में ७.८ की शक्ति का भूकम्प का झटका अनुभव किया गया ।

इस आधार पर चीनी वैज्ञानिकों ने अपनी खोज आगे बढ़ाई । सर्वेक्षण में जीवभौतिकविद्, प्राणिशास्त्री, भू-भौतिकविद्, रसायनशास्त्री और मौसम विशेषज्ञ सम्मिलित थे । उन्होंने भूकम्प आने के पूर्व पशुओं के व्यवहार में अकस्मात् असाधारण परिवर्तन होने की २७९३ घटनाएँ रिकार्ड कीं । इस छान-बीन से निकले तथ्यों में ८० प्रतिशत घोड़ों, गधों, खच्चरों, गायों, मुर्गियों, बिल्लियों, चूहों, कुत्तों, नेवलों, मछलियों एवं बकरियों से सम्बन्धित थे ।

देखा यह गया कि भूकम्प आने के कुछ समय पूर्व इस क्षेत्र के नेवले अपने-अपने बिलों से निकलकर भागने लगे । कुछ ने अपने बच्चों को पीठ पर तथा कुछ ने मुँह में दबा रखा था । ऐसी मान्यता है कि नेवले सामान्यतया रात्रि को ही अपने बिलों से शिकार करने के लिए निकलते हैं । टैंकों, छोटे तालाबों में पाली गई मछलियाँ भूकम्प से पूर्व अपने टैंकों, तालाबों में उछल-कूद मचाने तथा बाहर निकलने का प्रयत्न करने लगीं । कुछ तो तालाब के किनारे आकर छटपटाने तथा इधर-उधर भागने लगीं । देखने वालों ने बताया कि उनकी छटपटाहट यह बताती थी कि जैसे उनको किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचने की मची हो किन्तु ऐसा कर पाने में वे असहाय थीं । जिसकी वेदना छटपटाहट के रूप में व्यक्त कर रही थीं । कुछ को तो पानी से उठकर हवा में छलाँग लगाते हुए भी देखा गया । बकरियों के मिमयाने का ढंग उस समय विचित्र एवं करुण था । बिल्लियाँ घरों से निकलकर भागने लगीं । अपने साथ नन्हें बच्चों को भी उन्होंने मुँह में दबा रखा था ।

कुत्ते कितने वफादार होते हैं इससे सभी परिचित हैं । किन्तु उस दिन कुत्तों ने अपने मालिकों के ऊपर ही गुर्राना, भौंकना आरम्भ कर दिया । उन्हें बाँधकर रखने के प्रयास में कुछ ने तो अपने मालिकों को ही काट खाया । चूहों के स्वभाव में अजब परिवर्तन देखा गया । अपने-अपने बिलों से निकलकर वे जमीन पर लोटने-पोटने लगे । चुस्त एवं चौकन्ने रहने वाले जीवों को अपने शत्रुओं का भी भय नहीं रहा । कितने तो तेजी से दौड़ते हुए पेड़ों पर जा चढ़े ।

इस सर्वेक्षण में यह पता लगा कि जानवरों के व्यवहार में भिन्नता सामान्यतया भूकम्प से पूर्व २४ घण्टे तक चरम सीमा पर थी । जहाँ-जहाँ भी भूकम्प के झटके अनुभव किए गए वहाँ-वहाँ इस प्रकार के परिवर्तन जानवरों में नोट किए गए ।

ये घटनाएँ इस बात की प्रमाण हैं कि प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों तथा प्रकोपों की जानकारी जीव-जन्तुओं को मिल जाती हैं । इस आधार पर यह सम्भावना बन चली है कि जानवरों के असामान्य व्यवहारों के आधार पर प्रकृति में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है । न केवल जानकारी वरन् इस आधार पर सुरक्षा की व्यवस्था भी बनाई जा सकती है । इस दिशा में चीन के वैज्ञानिकों का प्रयास भी चल पड़ा है । चीन के एक नगर 'सिंगताई' को अधिकतर भूकम्प के झटके से गुजरना पड़ता है । फलस्वरूप अधिक जन एवं धन शक्ति नष्ट होती है । इसके लिए 'सिंगताई' में एक केन्द्र खोला गया है । दूसरा 'अक्सू' नामक स्थान पर खुला है । इन केन्द्रों पर विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तु पाले गए हैं । उनके व्यवहारों एवं उनमें होने वाले परिवर्तनों का गहन अध्ययन किया जाता है । उन वैज्ञानिकों का कहना है कि भूकम्प के पूर्व पृथ्वी की परतों, जल, एवम् वायु के आयनों में भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन होता है । परिवर्तनों में, भू-विद्युतीय, चुम्बकीय प्रभाव में अन्तर आना, तापक्रम का कम, अधिक होना भी सम्मिलित है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन परिवर्तनों को ये जीव ग्रहण करने में समर्थ होते हैं । मनुष्य की इन्द्रियाँ एवम् यंत्र इन परिवर्तनों को देख एवम् जान सकने में असमर्थ हैं जबकि ये तुच्छ जीव होने वाले सूक्ष्म परिवर्तनों को भी जान लेते हैं ।

इन प्रयोगों के आधार पर पिछले दिनों आक्सू (सिकयांग) एवम् 'पोहाई' नामक स्थान पर आए ७.४ शक्ति के भूकम्प की पूर्व घोषणा की गई । पूर्व घोषणा से होने वाली क्षति को बचाया जा सका ।

जन्तुओं की इन अतीन्द्रिय क्षमताओं ने वैज्ञानिकों का ध्यान आकर्षित किया है । अब यह सम्भावना बन चली है कि नगण्य समझे जाने वाले जीव भी मनुष्य के लिए उपयोगी हो सकते हैं । उनसे वे सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती हैं जो यंत्रों एवं बुद्धि द्वारा सम्भव नहीं हैं । धर्मदर्शन प्राणिमात्र पर दया करने की प्रेरणा देता है । सभी के एक सूत्र में गुँथे होने की घोषणा करता है । वसुधैव कुटुम्बकम् की उदात्त भावना में मानवेतर जीव सम्मिलित हैं । सृष्टि का श्रेष्ठ प्राणी कहे जाने के कारण यह दायित्व मनुष्य के ऊपर आता है कि वह इन नन्हें जीवों का पोषण एवम् रक्षा करे । उनसे भौतिक जानकारियाँ मिलने की सम्भावना बन चली है । करुणा, दया, सेवा जैसे आध्यात्मिक तत्वों का विस्तार प्राणिमात्र पर दया करने, उन्हें सुरक्षा प्रदान करने से भी सम्भव हो सकेगा । इस उदात्त भावना के अपनाने से ही मानवी गरिमा अक्षुण्ण रह सकती है ।

इन्द्रिय चेतना से परे

मनुष्यों में तथा मनुष्येतर प्राणियों में दिखाई देने वाली अद्भुत और विलक्षण क्षमताओं का कारण व केन्द्र जानने के लिए कई स्तर पर प्रयास हुए हैं । वैज्ञानिक अपने ढंग से इनका कारण जानने के लिए प्रयत्नशील हैं । निरीक्षण, परीक्षण, प्रयोग और विश्लेषण ही वैज्ञानिक अध्ययन की पद्धति है । पर अभी तक इन अन्वेषणों से किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सकता है । आज एक मान्यता बनती सिद्ध होती है तो कल उसका खण्डन हो जाता है और दूसरी मान्यताओं की पृष्ठभूमि बन जाती है । वैज्ञानिक अन्वेषणों के अतिरिक्त इन क्षमताओं का कारण व सिद्धि जानने के प्रयास योग विद्या द्वारा भी किए जाते रहे हैं । योग विद्या के आचार्यों, योगियों द्वारा भी किए गए हैं और उन्हें इस क्षेत्र में न केवल सफलता मिली बल्कि अपने प्रयोग और अन्वेषण द्वारा वे विलक्षण सिद्धियाँ भी प्राप्त कर सके ।

इसका कारण है सत्य तक पहुँचने की दृष्टि विज्ञान सिद्धियों और अद्भुत विशेषताओं का कारण स्थूल शरीर में ही खोज रहा है । जबकि योग ने इसके लिए चेतना का क्षेत्र पहचाना और चुना है । प्राणियों में पाई जाने वाली चेतना का अपना निजी अस्तित्व है । वह रासायनिक तत्वों के मिलन से जन्मती और बिछुड़न से मर जाती हो ऐसी बात नहीं है । उसका स्वतंत्र अस्तित्व है । वह शरीर पर निर्भर नहीं है । वह रासायनिक पदार्थों और परमाणुओं को अपनी इच्छानुसार खींचती, बदलती है एवम् प्रयुक्त करती है । इस प्राणिचेतना का अपना आकर्षण और प्रभाव है । अपनी आकांक्षा, अभ्यास, प्रकृति एवं आवश्यकतानुसार वह शरीर धारण करती है । शरीर को ही नहीं वातावरण को भी वह प्रभावित करती है ।

वृक्षों की सघनता वर्षा के बादलों को आकर्षित करती है यह सर्वविदित है । पेड़ कट जाने पर वर्षा घट जाती है । उद्यानों में अभिवृद्धि से मौसम बदलता और बादल खिंचते चले आते हैं । यह वृक्षों में रहने वाली चेतना का आकर्षण एवं प्रभाव है । सृष्टि के इतिहास से अनेकानेक परिवर्तनों की लम्बी शृंखला और उनके पीछे तत्कालीन प्राणियों की आकांक्षाओं का दबाव भारी काम करता रहा है । अपने-अपने शरीरों की स्थिति में तथा अपनी इन्द्रिय चेतना में भी उन्होंने भारी परिवर्तन कर लिए हैं ।

प्राणिजगत की चेतना अनुभवों का लाभ उठाते हुए, ठोकरों से शिक्षा लेते हुए, भूलों को सुधारते हुए प्रगति के प्रस्तुत स्तर तक पहुँच पाई है । आदिमकाल के 'डायनोसोरों' जैसे विशालकाय प्राणी पूँछ, दाँत और पीठ पर आक्रमणकारी शस्त्र साधनों से सुसज्जित थे । तब शायद संघर्ष और विजय का मत्स्य न्याय ही उपयुक्त समझा गया होगा, पर वह प्रयोग सफल न रहा । एक-दूसरे की चमड़ी उधेड़ने और अंडे निगलने की नीति, सार्थक सिद्ध नहीं हुई । कायिक दृष्टि से विशाल और सामर्थ्य की दृष्टि से सबल होते हुए भी आदिमकाल के पशु-पक्षी अपनी हिंस्र आदतों के दुष्परिणाम भुगतते हुए अपना अस्तित्व ही गँवा बैठे ।

पीछे नया अध्याय प्रारम्भ हुआ और नीति बदली । प्राणियों की ममता बच्चों के प्रति बढ़ी और उन्होंने अंडों को घोंसलों में सेने की अपेक्षा पेट में ही पकाने का निश्चय किया । इतना ही नहीं उन्हें शरीर रस निचोड़कर दूध भी पिलाया । यह प्रकृति परिवर्तन की एक महाक्रान्ति थी । हिंसा की निरर्थकता समझी गयी और स्नेह, सहयोग भरे अनुदान का आदान-प्रदान क्रम चल पड़ा ।

माँसाहारी प्राणियों की मूल चेतना ने अपने शारीरिक अवयव अपनी आवश्यकतानुसार उपलब्ध एवं विकसित किए हैं । पेड़ों की छाया में तथा घास की झाड़ियों में अपने को छिपाए रहने की जिन्होंने आवश्यकता समझी, उनकी चमड़ी का रंग तथा दाग-धब्बे उसी प्रकार के उत्पन्न हो गए । शाकाहारियों को दाँत-आँत की जैसी स्थिति आवश्यक थी उसी के अनुरूप उन्होंने अपने कलेवरों को प्राप्त कर लिया । घोर शीत में आहार प्राप्त कर सकने की कठिनाई देखकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हिम प्रदेश के रीछों ने उन दिनों गहरी निद्रा में पड़े रहने की आदत बना ली । देशकाल के अनुरूप विभिन्न प्राणियों ने जहाँ अपने को बदैला है, वहाँ ऐसे प्रमाण भी उपलब्ध हुए हैं कि अमुक क्षेत्र में बहुसंख्यक प्रबल चेतना सम्पन्न प्राणियों ने अपनी आवश्यकता के अनुरूप व्यवस्था बदलवा लेने के लिए प्रकृति को सहमत कर लिया ।

यह बहुत पुराने जमाने की गई-गुजरी बात हो गई जब प्राणी को रासायनिक पदार्थों का समूह और उसकी चेतना को जीवाणुओं की सम्मिलित स्फुरणा मात्र कहा गया था और उसे चलता-फिरता पौधा घोषित किया गया था । शरीर के साथ ही जीवन का आदि और मरण के साथ अन्त होने की बात भी कभी-कभी विज्ञान क्षेत्र से उठी थी पर अब इस मान्यता में लगभग आमूल-चूल परिवर्तन कर लिया गया । मरणोत्तर जीवन के प्रमाण इतने अधिक मिले हैं कि उन्हें झुठलाया जा सकना सम्भव नहीं रहा । पुनर्जन्म की घटनाएँ आए दिन सामने आती हैं । ऐसे बालक जन्मते रहते हैं, जो पूर्व जन्म की अपनी स्थिति को स्मृति के आधार पर प्रामाणिक सिद्ध कर सके । प्रेतात्माएँ कैसी होती हैं ? कहाँ रहतीं और क्या करती हैं ? इस सम्बन्ध में अभी बहुत जानना शेष है, पर उनके अस्तित्व को अब अप्रामाणिक ठहरा देना सम्भव नहीं । इस सन्दर्भ में भी इतने अधिक प्रमाण मिलते रहते हैं कि इन्हें अन्धकार, विश्वास या भ्रान्ति समुच्चय कह देने से काम नहीं चल सकता ।

परमाणुवादी पदार्थ विज्ञान ने आत्मा के स्वतंत्र अस्तित्व को स्वीकार किया है और यह प्रयत्न किया है कि उस अस्तित्व की संगति किसी प्रकार प्रकृति की विज्ञानसम्मत व्याख्या के साथ ही बैठ जाय ।

आत्मसत्ता के अस्तित्व सन्दर्भ में अधिक सुबोध प्रकाश टामस ऐडिसन ने डाला है । फोनोग्राफ रोशनी के बल्ब आदि के आविष्कर्त्ता इस प्रख्यात विज्ञानी का कथन है कि "प्राणी की सत्ता उच्चस्तरीय विद्युत कण गुच्छकों के रूप में रहती है । मरने के बाद भी यह गुच्छक विधिवत् नहीं होते और परस्पर सघन सम्बद्ध बने रहते हैं । यह गुच्छक बिखरते नहीं वरन् मरने के उपरान्त अनन्त आकाश में भ्रमण करने के उपरान्त पुनः जीवन-चक्र में प्रवेश करते और नया जन्म धारण करते हैं । यह गुच्छक मधुमक्खियों के झुण्ड की तरह हैं । पुराना छत्ता वे एक साथ छोड़तीं और नया छत्ता एक साथ बनाती हैं । इसी प्रकार उच्चस्तरीय विद्युत कणों के गुच्छक अपने साथ स्थूल शरीर की साधनसामग्री और अपनी आस्थाओं और सम्वेदनाओं को साथ लेकर जन्मते-मरते रहने पर भी अमर बने रहते हैं ।"

क्वान्टम थ्योरी के परिपूरक सिद्धान्त ने यह सिद्ध किया है कि जड़ और चेतन की सत्ता एक-दूसरे से भिन्न स्तर की दीखते हुए भी वस्तुतः उनके बीच सघन तादात्म्य मौजूद है । 'पदार्थ' एक स्थिति में ठोस रहता है, पर दूसरी स्थिति में वह अपदार्थ बन जाता है । इस प्रकार जड़ चेतन में और चेतन जड़ में परिणत हो सकता है । मन की सत्ता शरीर रूप में पदार्थ रूप में प्रकट हो सकती है और अमुक स्थिति में पहुँचकर पदार्थ भी बन सकती है ।

विज्ञानी हाइजेन वर्ग का प्रतिपादन है कि अन्तरिक्ष में अमुक स्थिति पर पहुँचने पर परमाणु पदार्थ न रहकर अपदार्थ में—ऊर्जा में परिणत हो जाते हैं । पदार्थ सत्ता परिधि काल और रूप में ढाँचे में बँधी है, मनःसत्ता में अनुभूतियाँ, स्मृतियाँ, विचार और बिम्ब के रूप में व्याख्या होती है । इतना अन्तर रहते हुए भी उन दोनों के बीच अत्यधिक घनिष्टता है यहाँ तक कि वे दोनों एक-दूसरे को प्रभावित ही नहीं वरन् परस्पर रूपान्तरित भी होते रहते हैं ।

इस तथ्य को नोबुल पुरस्कार विजेता यूजोन विगनर ने और भी अधिक स्पष्ट किया है । वे कहते हैं कि यह जान लेना ही पर्याप्त नहीं कि वस्तुओं की हलचलों से चेतना ही प्रभावित होती है, वस्तु-स्थिति यह है कि चेतना से पदार्थ भी प्रभावित होता है ।

रूस के इलेक्ट्रॉनिक विज्ञानी सेमयोन किर्लियान ने एक ऐसी फोटोग्राफी का आविष्कार किया है, जो मनुष्य के इर्द-गिर्द होने वाली उसकी विद्युतीय हलचलों का छायांकन करती है । इससे प्रतीत होता है कि स्थूल शरीर के साथ-साथ किसी सूक्ष्म शरीर की भी सत्ता विद्यमान है और वह ऐसे अविज्ञात पदार्थों से बनी है, जो इलेक्ट्रॉनों से बने ठोस पदार्थ की अपेक्षा भिन्न भी है और अधिक गतिशील भी ।

विज्ञान-विश्लेषण के अनुसार मनुष्य विद्युत आवेगों से सम्पन्न एक विशेष प्राणी है । वह अदृश्य ऊर्जाओं के समुद्र में तैरता है । हर मनुष्य में अपने स्तर के कुछ विशेष चुम्बकीय प्रवाह उठते रहते हैं और वे अपने सजातीय ऊर्जा तत्वों को इस निखिल आकाश में से खींचकर अपने में धारण करते रहते हैं । साथ ही मनुष्य अपनी इन चुम्बकीय विशेषताओं को अन्तरिक्ष में बिखेरता भी रहता है । उसका यह गृहण और प्रक्षेपण क्रिया-कलाप निरन्तर चलता रहता है । अदृश्य ऊर्जाओं से वह प्रभावित होता है और उनमें अपना योगदान सम्मिलित करता है । इसी आकर्षण-विकर्षण में मृत आत्माओं के साथ सम्पर्क स्थापित करना और आदान-प्रदान का क्रम चल पड़ना भी सम्भव हो सकता है ।

ख्यातिनामा वैज्ञानिक यू० ई० बर्नार्ड का कथन है कि अभी मनःतत्त्व के बारे में हमारी जानकारी बहुत स्वल्प है पर वह दिन दूर नहीं जब चेतना के उन रहस्यों का उद्घाटन होगा जो उपलब्ध भौतिक शक्तियों की तुलना में कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण हैं । निकट भविष्य में यह सम्भव हो सकेगा कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन:तत्व की शक्ति से पदार्थों का गठन, विघटन एवम् रूपान्तरण हो सके । इसी प्रकार यह भी सम्भावना है कि संकल्प शक्ति के सहारे मनुष्य अपने शरीर में अभीष्ट परिवर्तन प्रस्तुत कर सके ।

मनुष्य शरीर के सम्बन्ध में अध्यात्म की वैज्ञानिक व्याख्या यह है कि 'थ्री डाइमेन्शस ऑव स्पेस' और वन डाइमेन्शन आव ट्यून' के समन्वय से यह अद्भुत निर्माण सम्भव हुआ है । इनमें जो अनुपात है वही मनुष्य की वर्तमान स्थिति का आधार है । यदि इस अनुपात में थोड़ा-सा हेर-फेर सम्भव हो सके तो स्थिति में इतना अन्तर हो सकता है कि आज का सामान्य मनुष्य कल अनेक कसौटियों पर असामान्य सिद्ध हो सके ।

प्राणियों को चेतन का स्वतन्त्र अस्तित्व स्वीकार कर लेने और उसका प्रभाव पदार्थों पर पड़ने के वैज्ञानिक निष्कर्ष ने उस बचपन से छुटकारा पा लिया, जिसमें आत्मा का अस्तित्व ही अस्वीकार कर दिया गया था और प्राणियों के जन्म-मरण को रासायनिक पदार्थों की एक विशेष हलचल ठहराया गया था । अब प्राणिसत्ता को चेतना घटक के रूप में जाना-माना जा रहा है । आत्मा का स्वतंत्र अस्तित्व स्वीकार करने में अब वैज्ञानिक आना-कानी, बहानेबाजी मात्र कही जा सकती है । वह दिन दूर नहीं जब इस सन्दर्भ में आड़े आ रहा असमंजस भी समाप्त होकर रहेगा ।

अब दूसरा प्रश्न है परमात्मसत्ता का—उसे विज्ञान ने ब्रह्माण्डीय चेतना के रूप में स्वीकार किया है । आत्मा को अर्द्ध-चेतन और अर्द्ध-जड़ के रूप में ही अभी विज्ञान ने मान्यता दी है । इसी अनुपात से परमात्मा को भी अर्ध-ब्रह्म और अर्द्ध-प्रकृति के रूप में स्वीकारा है । काम इतने से भी चल सकता है । अध्यात्मवाद को यह स्थिति भी स्वीकार है । अर्द्धनारी नटेश्वर की प्रतिमाओं में इस मान्यता की स्वीकृति है । ब्रह्म और प्रकृति का युग्म ब्रह्म विद्या के तत्वदर्शन ने स्वीकार किया है । ब्रह्मा, विष्णु, महेश अपनी-अपनी पत्नियों को साथ लेकर ही चलते हैं । अन्य देवताओं में से भी कदाचित ही कोई कुमार या विधुर हो । प्रकृति और परमात्मा के समन्वय से जीवात्मा की उत्पत्ति हुई हैं ऐसे प्रतिपादन ब्रह्म विद्या की अनेक व्याख्याओं में उपलब्ध हैं ।

विज्ञान अपनी भाषा में परब्रह्म को, परमात्मा को 'ब्रह्माण्डीय चेतना' के रूप में स्वीकार करने लगा है और उसका घनिष्ट सम्बन्ध जीव-चेतना के साथ जोड़ने में उसे अब विशेष संकोच नहीं रह गया है । यह मान्यता जीव और ब्रह्म को अंश और अंशी के रूप में मानने की वेदान्त व्याख्या से बहुत भिन्न नहीं है ।

अब विज्ञानवेत्ताओं ने एक ब्रह्माण्डीय ऊर्जा का अस्तित्व स्वीकार किया है । इससे पूर्व पृथ्वी पर चल रही भौतिकी को ही पदार्थ विज्ञान की सीमा माना जाता था, पर अब एक ऐसी व्यापक सूक्ष्म सत्ता का अनुभव किया गया है जो अनेक ग्रह-नक्षत्रों के बीच ताल-मेल बिठाती है । पृथ्वी पर 'इकोलॉजी' का सिद्धान्त प्रकृति की एक विशेष व्यवस्था के रूप में अनुभव कर लिया गया है । वनस्पति, प्राणी, भूमि, वर्षा, रासायनिक पदार्थ आदि के बीच एक सन्तुलन काम कर रहा है और वे सब एक-दूसरे के पूरक बनकर रह रहे हैं । जड़ समझी जाने वाली प्रकृति की वह अति दूरदर्शितापूर्ण चेतन व्यवस्था उन भौतिक विज्ञानियों के लिए सिर-दर्द थी जो पदार्थ के ऊपर किसी ईश्वर जैसी चेतना का अस्तित्व स्वीकार नहीं करते । अब ब्रह्माण्डीय ऊर्जा उससे भी बड़ी बात है । ग्रह पिण्डों के बीच एक-दूसरे के साथ आदान-प्रदान की, सहयोग-संतुलन की जो 'इकालॉजी' से भी अधिक बुद्धिमतापूर्ण व्यवस्था दृष्टिगोचर हो रही है उसे क्या कहा जाय ?

परामनोविज्ञान की नवीनतम शोधें भी इसी निष्कर्ष पर पहुँची हैं कि मनुष्य चेतना ब्रह्माण्ड चेतना की अविच्छिन्न इकाई है । अस्तु प्राणसत्ता शरीर में सीमित रहते हुए भी असीम के साथ अपना सम्बन्ध बनाये हुए है । व्यष्टि और समष्टि की मूल सत्ता में इतनी सघन एकता है कि एक व्यक्ति समूची ब्रह्मचेतना का प्रतिनिधित्व कर सकता है ।

परमाणुसत्ता की सूक्ष्म प्रकृति का विश्लेषण करते हुए विज्ञान इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि दो इलेक्ट्रॉनों को पृथक् दिशा में खदेड़ दिया जाय तो भी उनके बीच पूर्व सम्बन्ध बना रहता है । वे कितनी ही दूर रहें एक-दूसरे की स्थिति का परिचय अपने में दर्पण की तरह प्रतिबिम्बित करते-रहते हैं । एक की स्थिति को देखकर दूसरे के बारे में बहुत कुछ पता मिल सकता है । एक को किसी प्रकार से प्रभावित किया जाय तो उसका दूसरा साथी भी अनायास ही प्रभावित हो जाता है । इस प्रतिपादन पर आइन्स्टाइन रोजेन पोटोल्स्की जैसे विश्वविख्यात विज्ञानवेत्ताओं की मुहर है । इस सिद्धान्त से एक व्यापक सत्ता और उसके सदस्य रूप में छोटे घटकों की सिद्धि तथा पृथक् रहते हुए भी एकता का तारतम्य बने होने की पुष्टि होती है ।

विज्ञान की मान्यता के अनुसार पूर्ण को जानने के लिए उसका अंश जानने का और अंश के अस्तित्व को समझने के लिए उसके पूर्ण रूप को समझने की आवश्यकता पड़ती है । इसके बिना यथार्थता को पूरी तरह समझा नहीं जा सकता । मूर्धन्य विज्ञान वेत्ता डॉ० एफ० केफ्रा ने अंश या अंशी के बीच अविच्छिन्न सम्बन्ध होने की बात का विस्तारपूर्वक प्रतिपादन किया है और कहा है कि परमाणु का प्रत्येक घटक विश्व ब्रह्माण्ड का परिपूर्ण सदस्य है । इस सदस्यता को किसी भी प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निरस्त नहीं किया जा सकता । दोनों एक-दूसरे के पूरक होकर ही आदिकाल से रहे हैं और अनन्तकाल तक अपना सघन सम्बन्ध यथावत् बनाए रहेंगे ।

गेटे ने कहा था ब्रह्माण्डीय चेतना का अस्तित्व सिद्ध कर सकने योग्य ठोस आधार मौजूद हैं । रूडोल्फ स्टीनर ने अपने ग्रन्थ में गेटे के प्रतिपादन को और भी अच्छी तरह सिद्ध करने के लिए आधार प्रस्तुत किए हैं ।

जीव-विज्ञानी टामस हक्सले ने ब्रह्माण्डीय चेतना के अस्तित्व और उसके कार्य क्षेत्र पर और भी अधिक प्रकाश डाला है । वे उसे जीवाणुओं में अपने ढंग से और परमाणुओं में अपने ढंग से काम करती हुई बताते हैं और भारतीय दर्शन की परा और अपरा प्रकृति को ब्रह्म पत्नी के रूप में प्रस्तुत करने वाली मान्यता के समीप ही जा पहुँचते हैं । इस सन्दर्भ में उन्होंने विस्तृत प्रकाश अपनी 'हेवेन एण्ड हेल' पुस्तक में डाला है ।

परमाणु की इलेक्ट्रॉन प्रक्रिया को मात्र यन्त्रों से नहीं जाना जा सकता है । उसके अस्तित्व का दर्शन और निरूपण करने वाला एक ही यंत्र है—मानवी मस्तिष्क । अन्य उपकरण तो इस सन्दर्भ में थोड़ी-सी सहायता मात्र करके रह जाते हैं । परमाणु की विवेचना नेत्र का नहीं गणित का विषय है । उसकी हलचलों से उत्पन्न प्रतिक्रिया के आधार पर गणित करके यह पता लगाया जाता है कि परमाणु और उसके उदर में हलचल कर रहे घटकों का स्वरूप, स्तर एवम् क्रिया-कलाप क्या होना चाहिये । विज्ञानी लुडविग ने इसे और भी अधिक स्पष्ट करते हुए कहा है कि क्वाण्टमशास्त्र यंत्रों पर नहीं वैज्ञानिकों की मानसिक चेतना पर अवलम्बित है ।

कुल मिलाकर यह कि इस संसार की समस्त गतिविधियाँ सुव्यवस्थित रीति से चल रही हैं । प्रकृति के नियम ऐसे हैं, जिनमें व्यतिरेक की तनिक भी गुंजायश नहीं है । जिन नियमों को हम जानते हैं जिनका पता अभी तक चल नहीं पाया है, उन्हें रहस्य कहते हैं । रहस्य का तात्पर्य उन घटनाक्रमों से है, जो असामान्य होते हैं और जिनके घटित होने के कारणों का पता नहीं है ।

मनुष्येतर प्राणियों का विकसित संसार

वह क्षण निश्चित ही दुर्भाग्यपूर्ण रहा होगा, जब मनुष्य ने अपने आपको सर्वश्रेष्ठ होने का अहंकार पाल लिया क्योंकि इस स्थिति में मनुष्य ने विश्व वसुधा के, सृष्टि परिवार के अन्यान्य प्राणियों को हीन और हेय मान लिया । सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी समझने की अहंमन्यता मनुष्य में किसी भी कारण से विकसित हुई हो लेकिन यह सत्य है कि उसने अपने इस पूर्वाग्रह से प्रेरित होकर निरीह प्राणियों का शोषण और मनचाहा उत्पीड़न किया । अपनी अहंमन्यता को उसने संसार के दूसरे प्राणियों पर जिस ढंग से थोपा उसकी प्रतिक्रिया परिणति या कहना चाहिये उसका विकास स्वयं उसके लिए ही उलटा दाँव सिद्ध हुआ है । जो दाँव उसने मनुष्येतर प्राणियों पर चलाया था । वह धीरे-धीरे उसके स्वभाव का अंग बन गया और अब वह यही प्रयोग अपनी जाति पर भी अपनाने लगा है । परिणाम यह हो रहा है कि मानवीय सम्वेदना धीरे-धीरे घटती जा रही है तथा वैयक्तिक सुख स्वार्थ के लिए शोषण और अत्याचार बढ़ते जा रहे हैं । इस स्थिति को व्यक्ति-व्यक्ति के बीच, परिवार-परिवार के बीच, जातियों, समुदायों और विभिन्न राष्ट्रों के बीच खींच-तान के रूप में स्पष्ट देखा जा सकता है ।

होना यह चाहिये था कि मनुष्य अपनी सर्वश्रेष्ठता की अहंमन्यता नहीं पालता और सभी प्राणियों को जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखता । उनकी अनन्त क्षमताओं से कुछ सीखने का प्रयत्न करता । कदाचित ऐसा हुआ होता तो स्थिति कुछ और ही होती । वह अपने सहचर पशु-पक्षियों को देखता, यह जानता कि प्रकृति ने उन्हें भी कितने लाड़-दुलार से सजाया-सँवारा है तो उसका हृदय और विशाल बनता तथा चेतना का स्तर और ऊँचा उठता ।

इस स्थिति में प्रतीत होता है कि अभागे कहे जाने वाले इन जीवों को भी प्रकृति से कम नहीं, मनुष्य की अपेक्षा कहीं अधिक उपहार ही मिले हैं और वह कई क्षेत्रों में अन्य प्राणियों से पीछे है । उदाहरण के लिए मनुष्य को पक्षियों की तरह अकेले किसी एक ही दिशा में बहुत ऊँचाई तक उड़ने की सामर्थ्य प्राप्त करने में अभी समय लगेगा । वह भी किन्ही यंत्रों की मदद से । स्वयं के बलबूते पर तो उसके लिए जमीन से २-३ फीट ऊपर ऊँचाई पर चलना भी असम्भव है । मनुष्य को गर्व हो सकता है कि वह गगनचुम्बी इमारतें और बड़े-बड़े पुल बाँधने में समर्थ है किन्तु मधुमक्खियों और चींटियों की कलाकारिता देखी जाए तो उनकी कुशलता के सामने मनुष्य की सारी कलाकारिता धरी रह जाएगी । वीवर जैसा चतुर और कुशल इन्जीनियर तो बिना प्रशिक्षण प्राप्त किए अपनी क्षमता का जिस तरह प्रदर्शन करता है, वह मनुष्य के लिए कहाँ सम्भव है ?

चींटी अपने भार से सत्तर गुना अधिक भार सहज ही ढो सकती है । इसकी तुलना में मनुष्य का जितना अधिक वजन है, उस हिसाब से उसे कम से कम ३५ क्विंटल वजन अपने सिर या पीठ पर ढो लेना चाहिये पर मनुष्य में उतनी क्षमता कहाँ है ? पिस्सू और मेंढक अपनी ऊँचाई से २५० गुना अधिक ऊँचाई तक उछल सकते हैं । मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में वैसी क्षमता तभी मानी जाएगी जब वह १३७५ फीट आसानी से उछल जाए किन्तु वह तो दस फीट ऊँची दीवार भी नहीं फाँद सकता । मधुमक्खी छत्ता बनाती है तो जिस डाल पर ऊपर की ओर २० मधुमक्खियाँ होती हैं उनके नीचे १०००० मक्खियों का सात किलो वजन लटकता रहता है । इस हिसाब से एक मनुष्य की टाँगें पकड़कर २००० व्यक्तियों को लटक जाना चाहिए । दुनिया का कोई बड़ा से बड़ा पहलवान या जिमनेस्ट भी ऐसा कर पाने में कहाँ समर्थ होता है ?

चील की आँखें जितनी तेज होती हैं, उसी अनुपात में यदि मनुष्य की दृष्टि तीक्ष्ण रही होती तो वह प्लूटो ग्रह पर चल रही गतिविधियों को अपने घर के आँगन में बैठा-बैठा देख सकता था । चमगादड़ जैसी श्रवण शक्ति यदि इन्सान को मिल सकी होती तो वह अपनी कोठरी के अन्दर बैठा-बैठा ही धरती के किसी भी हिस्से में बैठे दो व्यक्तियों के बीच चल रही काना-फूसी सुन सकता था । कुत्ते जैसी घ्राण शक्ति यदि मनुष्य को मिल जाती तो वह चाहने पर मंगलग्रह पर उठ रही अमोनिया गैस को घर में बैठे-बैठे ही सूँघ सकता था । एक तितली दिन भर में जितना उड़ती है उसे लम्बाई में नापा जाए तो वह दस मील दूर तक उड़ लेती है । मनुष्य का भार उसकी तुलना में कई हजार गुना है । तितली के हिसाब से यदि वह उड़े तो उसे एक दिन में अधिक नहीं तो कम से कम पृथ्वी की एक बार परिक्रमा कर ही लेना चाहिये परन्तु ऐसा क्या सम्भव हो पाता है ? नहीं न । फिर किस आधार पर मनुष्य कह सकता है कि वह सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक विभूतिवान प्राणी है ?

ज्ञान और बोध की दृष्टि से भी कई प्राणी मनुष्य की तुलना में बहुत आगे हैं । दीमकों के झुण्ड वर्षा ऋतु आने से पहले एकाएक न जाने कहाँ विलुप्त हो जाते हैं । मकड़ियाँ वर्षा नहीं होती, या शुरू होने ही वाली होती है कि अपने जाले समेटने लगती हैं । चींटियाँ अपनी खाद्यान्न व्यवस्था सुरक्षित करने लगती हैं । असामयिक वृष्टि की सूचना गौरैया मिट्टी में लोटकर, मिट्टी स्नान द्वारा पहले से ही देने लगती हैं । इस अनुपात से मनुष्य को जैसी सूक्ष्म बुद्धि प्राप्त है, उसके अनुसार तो उसे त्रिकालदर्शी होना चाहिए था पर कितने लोग त्रिकालदर्शी हो पाते हैं? कारण स्पष्ट है कि वह अपनी इन क्षमताओं के विकास की बात तो दूर उन्हें पहचानने और अनुभव करने तक का प्रयास ही नहीं करता, प्रयास भी दूर की बात रही, वह उसकी आवश्यकता ही नहीं समझता ।

मानवीय काया विलक्षण अद्भुत रसायनों का भण्डार है । हारमोन्स के रूप में अब जिन स्रावों का ज्ञान वैज्ञानिकों और शास्त्रियों को हुआ है, उससे तो पुराण युग की कल्पनाएँ भी साकार सत्य होने जा रही हैं । आकार वृद्धि या संकुचन की दृष्टि से योग शास्त्रों में वर्णित अणिमा, लघिमा, महिमा, गरिमा आदि अष्टसिद्धियाँ अब कोई असम्भव बात नहीं रहीं । हारमोन्स के अध्ययन ने इन सम्भावनाओं पर अपनी स्पष्ट मुहर लगा दी है । मनुष्य शरीर परमात्मा का दिया हुआ एक सर्वांगपूर्ण यंत्र है किन्तु उसका मनुष्य कितना सदुपयोग कर पाता है ? यह एक विचारणीय प्रश्न है । शरीर को मनचाही स्थिति में बदलकर यौगिक क्रियाएँ करने और अपनी शारीरिक क्षमताओं से विशेष लाभ अर्जित करने की सफलता योगीजन ही प्राप्त कर सके हैं, किन्तु प्रकृति के पुत्रों ने मनुष्य को इस क्षेत्र में पीछे छोड़ दिया है और वे योगियों से भी कहीं आगे बढ़ गए हैं । अमेरिका के जन्तुशास्त्रियों ने यह पता लगाया है, कि कुछ पक्षियों में इस प्रकार की विशेष क्षमता होती है, जिसके द्वारा वे एक क्षण में ही अपनी आँख के लेन्स को दूरदर्शी (टेलिस्कोप) से सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) में बदल लेते हैं । दूर की वस्तु ताड़ने या समीप की छोटी वस्तु को बड़े आकार में करके पहचानने के लिए वे अपनी इस क्षमता का उपयोग करते हैं ।

ईल मछली तो किन्हीं तांत्रिकों या काला जादू जानने वालों की तरह मारण मंत्र का प्रयोग करती हैं । वह अपने शिकार को देखकर दूर से ही अपने शरीर को ऐसा तिगनी का नाच नचाती हैं जैसे डायनमो चल पड़ा हो और सचमुच इस क्रिया से वह डायनमो की तरह विद्युत शक्ति उत्पन्न करती है, जिसके प्रभाव से शिकार तत्क्षण मर जाता है और तब वह उसका भक्षण कर लेती है ।

कबूतर ५५ मील प्रति घण्टे की रफ्तार से उड़ सकता है पर वह सामान्यतः ४० मील प्रति घण्टे की गति से ही उड़ता है । कई देशों में कबूतर उड़ाने की प्रतियोगिताएँ होती हैं । इसके लिए कबूतरों को और तेज गति से उड़ने का अभ्यास कराया जाता है । स्पेन में हुई एक प्रतियोगिता में ९१९ मील की उड़ान एक कबूतर ने कुल तीन घण्टे में पूरी कर ली थी । इसी प्रकार से एक अन्य प्रतियोगिता में एक कबूतर ने ४ घण्टे में ही रोम से डर्बी तक करीब १००० मील की दूरी तय कर ली । अमेरिका के एक कबूतर ने ३५ घण्टे में १००१० मील की दूरी तय कर रिकार्ड कायम किया । वहीं के एक अन्य कबूतर ने ४३ घण्टे लगातार मैनिटोपा (कनाडा) से अमेरिका के दक्षिणी छोर टैक्सास तक की २०४० मील की दूरी तय बिना रुके आने-जाने का रिकार्ड स्थापित किया । दक्षिण-पश्चिम अफ्रीका के ईयाकद्वीप से उड़ाया गया लन्दन के एक कबूतर ने ५५०० मील की अनवरत् यात्रा १५ घण्टे में पूरी कर सारे रिकार्ड ध्वस्त कर दिए । कदाचित इस तरह की क्षमता मनुष्य को मिल सकी होती तो उसने अन्तर्ग्रहीय दूरियों को ताक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर रख दिया होता ! तब तो वह धरती पर अपना घर बनाता, चन्द्रमा पर खेती करता और सैर करने के लिए मंगल तथा शुक्र ग्रहों पर उद्यान लगाता । पर हाय रे मनुष्य का भाग्य । वह तो दिन भर में अधिक से अधिक ३० मील ही पैदल चल पाता है । उससे अधिक चलने या दूर की यात्रा तय करने के लिए उसे यंत्रों का ही सहारा लेना पड़ता है ।

उड़ने या तेज गति से यात्रा करने में कबूतर के अलावा भी दूसरे कई पक्षी हैं, जो उससे अधिक तीव्र गति से भी उड़ सकते हैं परन्तु कबूतर में विलक्षण परीक्षण, बुद्धि और स्मरण शक्ति भी पाई जाती है, जो अन्य प्राणियों में दुर्लभ है । मास्को के एक इंजीनियरिंग कारखाने के कुछ विशेषज्ञों ने उनकी इस अद्भुत क्षमता का उपयोग करने का निश्चय किया । बालवियरिंग बनाने वाले उस कारखाने में कुछ खरोंच लगे व चोट खाए वियरिंगों को अलग करने की समस्या थी । कुशल से कुशल कारीगर भी उन्हें छाँटने में चूक जाते थे । किन्तु कुछ कबूतरों को कुल तीन दिन की ट्रेनिंग देकर इस काम में लगाया गया तो उन्होंने कुशल कारीगरों को भी मात कर दिया । अब इनमें से प्रत्येक कबूतर एक घण्टे में ३५०० बाल-वियरिंगों की जाँच कर लेता था । आश्चर्य की बात तो यह कि उन्होंने जरा भी चूक नहीं की । मनुष्य के मस्तिष्क में न्यूरोन्स कणों की संख्या अरबों-खरबों होती है, जिनमें स्मृति के बीज होते हैं । कबूतरों की तुलना में इस मस्तिष्क का यदि पूर्ण विकास किया जा सके तो संसार में जितने पुस्तकालय हैं, उन सबकी पुस्तकों को एक ही मनुष्य कण्ठस्थ कर सकता है ।

मधुमक्खियाँ, बर्रे तथा चींटियाँ भी स्मरण शक्ति की दृष्टि से अद्वितीय सामर्थ्यवान जीव हैं । इन पर कई प्रयोग करके यह देखा गया है कि उन्हें चाहे जितना भटका दिया जाए, घर पहुँचने में उन्हें जरा भी दिक्कत नहीं होगी । ध्वनि और गन्ध को पहचानने की क्षमता तो इनमें अद्भुत ही कही जा सकती है । जर्मनी में एक विचित्र प्रयोग द्वारा इस तथ्य को प्रामाणित किया गया । इस प्रयोग में टेलीफोन के एक रिसीवर से एक फीट दूर एक मादा झींगुर और एक मादा टिड्डे को रखा गया । वहाँ से बहुत दूर पहले एक नर झींगुर को ट्रान्समीटर के पास रखा गया । जैसे ही उसने ट्रांसमीटर के पास ध्वनि की और वह ध्वनि रिसीवर तक पहुँची, मादा झींगुर अपने स्थान से भागकर रिसीवर में जा घुसी, यद्यपि रिसीवर में उसे अपना प्रेमी नहीं मिला, तो भी उसने अपने प्रेमी की आवाज को पहचानने में भूल नहीं की थी । इस सारे उपक्रम में मादा टिड्डा अपने ही स्थान पर जमा हुआ था । दुबारा ट्रान्समीटर के पास टिड्डे की ध्वनि कराई गई तो इस बार मादा टिड्डा भागकर आई और उसने यह सिद्ध कर दिया कि वह भी अपने वंश को पहचानने की सूक्ष्म बुद्धि से पूरी तरह ओत-प्रोत है ।

जीव-जन्तुओं के इस तरह सुव्यवस्थित, विवेकपूर्ण और सुविकसित जीवनक्रम को लम्बे समय तक अध्ययन करने के बाद सुप्रसिद्ध जीवशास्त्री हेनरी वेस्टन ने बहुत ही मार्मिक और भावपूर्ण समीक्षा करते हुए लिखा है कि प्रकृति से परे कृत्रिम जीवन जीने वाला मनुष्य इन छोटे-छोटे प्रकृति पुत्रों को ज्ञान के चश्मे से देखता, उनकी अपूर्णता पर दया दिखाता और उनकी विवशता पर तरस खाता है, किन्तु यह उसकी छोटी नहीं, जबर्दस्त भूल है । मनुष्य को अपने सर्वश्रेष्ठ होने का अहंकार त्याग देना चाहिए और मनुष्येतर प्राणियों के विकसित संसार से कुछ शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये ।

अद्भुत की व्यवस्था अद्भुत

जिस गृहिणी का घर व्यवस्थित और सन्तुलित होता है वह बुद्धिमती तथा कुशल गृहिणी कही जाती है, पर जिसका हर कार्य अस्त-व्यस्त, खर्च बेहिसाब, आय-व्यय का कहीं कोई सन्तुलन नहीं वह फूहड़ और मूर्खा कही जाती है । यह तो एक घर की बात हुई । वास्तव में प्रकृति में आवश्यक उपार्जन, समुचित खर्च का ऐसा सन्तुलन विद्यमान है जिसे देखकर कोई भी व्यक्ति इस बात से इन्कार नहीं कर सकता कि प्रकृति में बुद्धि और एक निरन्तर चेतनशील प्रक्रिया कार्यरत है ।

एक बार आस्ट्रेलिया में जंगली जानवरों से फसलों की सुरक्षा के लिए कैक्टस की बाड़ लगाई गई । पौध बाहर से लाई गई थी, उसमें किसी प्रकार कैक्टस खाने वाले कीड़े नहीं आ पाए । कैक्टस निरंकुश अभिवृद्धि की ओर अग्रसर हुआ । कुछ ही समय में कैक्टस ने इंग्लैण्ड के क्षेत्रफल के बराबर भूमि अधिग्रहीत कर ली । कृषि विशेषज्ञों के सम्मुख यह एक वैसी ही चुनौती बनकर खड़ी हो गई जैसी अन्धाधुन्ध प्रजनन के कारण आज संसार को खाद्य समस्या का सामना करना पड़ रहा है ।

विशेषज्ञों की गोष्ठी आयोजित की गई । अन्ततः एक ऐसा कीटाणु खोज निकाला गया जिसका प्रमुख खाद्य ही कैक्टस था । इस कीड़े की एक विशेषता यह भी थी कि उसकी प्रजनन शक्ति भी बहुत अधिक थी । इसने जो कैक्टस को खाना प्रारम्भ किया तो उसका सफाया ही करके छोड़ा । अन्त में कैक्टस तो थोड़ा रह गया, पर इन जीवाणुओं की पूरी फौज तैयार थी । अभी विशेषज्ञ इस उधेड़बुन में थे कि समस्या का निराकरण कैसे हो ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर जब खोज की गई तो यह पाया गया कि अब उतने ही बैक्टीरिया (जीवाणु) शेष रह गये हैं जितनों के लिए खाद्यान्न शेष था । शेष भाग गये या मर गये कुछ पता नहीं । आज की अपार जनसंख्या अन्य ग्रहों को भाग जाए तब तो सम्भव है कि समस्या उतनी भारी न पड़े अन्यथा प्रकृति, सन्तुलन के लिए दूसरा अस्त्र प्रयुक्त करने से हिचकेगी नहीं क्योंकि प्रतिरोध और सन्तुलन व्यवस्था से ही उसने सृष्टि क्रम को यथावत कर रखा है ।

प्रकृति की व्यवस्थापिका बुद्धि का एक बड़ा प्रमाण यह भी है कि जिन प्राणियों में अत्यधिक प्रजनन पाया जाता है उनके फेफड़े होते ही नहीं, फेफड़ों के स्थान पर मात्र एक ट्यूब लगा दिया गया है । यह ट्यूब प्रारम्भ में जितना छोटा होता है अन्त तक उतना ही अर्थात् छोटे का छोटा ही बना रहता है । यह कठोर नियंत्रण उसकी अत्यन्त बुद्धि कुशलता का प्रमाण है अन्यथा कैक्टस का ही छोटा कीड़ा सिंह के समान होता उस स्थिति में वह कैक्टस के समाप्त होते ही मनुष्यों को ही खा जाता ।

यह तथ्य मनुष्य सम्प्रदाय में भी उतनी ही कठोरता से लागू है । अधिक बच्चे पैदा करने वाले लोगों के फेफड़े प्रायः दुर्बल होते हैं । इसी कारण थोड़े परिश्रम से ही उनका दम फूलने लगता है । इस तरह वे दीर्घजीवन तो खोते ही हैं, बीमारियों की आधि-व्याधि में ऊपर से जकड़े रहते हैं । यह बीमारियाँ ही उन्हें खाती रहती हैं । यदि उससे बचे तो भोजन आवास की समस्या सताती रहती है । ऐसे व्यक्ति स्वयं अपने और समाज के लिए भी घातक परिस्थितियाँ पैदा करते हैं । उनका सामूहिक दण्ड सारी मानव जाति को अकाल, अनावृष्टि, भुखमरी, बेकारी, बेरोजगारी के रूप में भुगतना पड़ता है । इससे मनुष्य की बुद्धिमानी इसमें है कि वह प्रकृति की सचेतन व्यवस्था को अच्छी तरह अनुभव करे, पालन करे और सृष्टि को व्यवस्थित, सन्तुलित तथा सुन्दर बनाने में सहयोग प्रदान करे ।

क्रिया-कौशल में हमसे आगे हैं जीव-जन्तु

मनुष्यों में ही नहीं मनुष्येतर प्राणियों में भी ऐसी विशेषताएँ पाई जाती हैं, जो इन्द्रिय शक्ति की परिधि से बाहर की बात है । रक्त, चर्म एवं अस्थि के संयोग से बना पंचभौतिक शरीर उन्हीं नियमों का पालन करेगा जो उसके लिए निर्धारित है । इसी प्रकार मस्तिष्क भी उतना ही सोचेगा जो उसने सीखा है । परन्तु सामान्य लौकिक ज्ञान की परिधि का उल्लंघन करके कई बार ऐसा कुछ देखने को मिलता है जिससे विदित होता है कि काया के भीतर एक ऐसी विशिष्टता सम्पन्न चेतना सत्ता विद्यमान है, जो अतीन्द्रिय जगत् की जानकारी भी प्राप्त कर लेती है । प्राणियों की अन्तःचेतना के विकास का अस्तित्व अनेक बार प्रत्यक्ष भी दिखाई पड़ता है जिसे झुठलाया नहीं जा सकता । मनुष्य अपने को ही महत्त्वपूर्ण मानता रहे और दूसरे प्राणियों को तुच्छ समझे यह उसे शोभा नहीं देता ।

सृष्टा ने हर प्राणी को उसकी स्थिति और आवश्यकता के अनुरूप ऐसे साधन दिए हैं जिसमें किसी के साथ पक्षपात या अन्याय हुआ न कहा जा सके । मनुष्य में बुद्धिमता तो है पर उसका विकास तभी होता है, जब दूसरों को सहायता मिले । पढ़ाये-प्रशिक्षित किये बिना कोई मानवी संतान क्रिया कुशल नहीं बन सकती । यदि कोई उचित सहयोग-सम्पर्क न मिले तो जन्मजात बुद्धिमता रहने पर भी मनुष्य अविकसित स्थिति में पड़ा रह सकता है अथवा कुसंग में कुमार्गगामी हो सकता है । इस दृष्टि से पशु-पक्षी जैसे प्राणी कहीं आगे हैं । प्रकृति ने उन्हें ऐसी अद्भुत सूझ-बूझ दी है कि बिना किसी शिक्षा-दीक्षा के इतना सुन्दर सुव्यवस्थित जीवन-यापन करते हैं कि उनकी सुरुचि, अनुशासनशीलता और बुद्धिमता पर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

मनुष्य जिस वस्तु को अनावश्यक और अनुपयोगी समझकर छोड़ देता है, पक्षी उसी को जीवनोपयोगी समझकर इस्तेमाल करते देखे गए हैं । जूता, कपड़ा फटने और पुराना हो जाने पर विलासी लोगों द्वारा कूड़ा-करकट समझकर फेंक दिया जाता है पर पक्षी उसी से कपड़ा और मकान जैसी जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं को जुटाकर सपरिवार बड़े हर्षोल्लास के साथ रहते जीवन बिताते हैं । उनके घर-घरौंदों की संरचना बड़ी ही विलक्षण होती है । धनेश पक्षी तो इतना कुशल इंजीनियर होता है कि अपना घोंसला कंकरीट से भी सख्त बनाता है । अबाबीलें तो कीचड़ की सहायता से ऊँची से ऊँची दीवारों पर अपने घर बसाते हैं । उनकी कलाकारिता को देखकर यही कहा जा सकता है कि भौतिक विज्ञानी काफी पीछे हैं ।

यदि भौतिक विज्ञान प्राणियों को जड़ प्रकृति का ही एक तुच्छ उत्पादन मानता रहेगा तो उसे उस अतीन्द्रिय चेतन सत्ता का कभी कोई आधार एवम् कारण नहीं मिलेगा जो इस सृष्टि का नियामक है एवं उसके प्रत्येक कण में विद्यमान है । जब प्राणी एक चलता-फिरता पेड़-पादप ही ठहरा तो उसकी शारीरिक एवं मानसिक हलचलें भी शरीर ज्ञान से बाहर कैसे जा सकती हैं पर ऐसा नहीं होता । काय-कलेवर के भीतर विद्यमान आत्मचेतना दिक्-काल से परे की भी असीम जानकारियाँ रखती हैं जिसके प्रमाण यदा-कदा सबके सम्मुख आते रहते हैं । ऐसी दशा में भौतिक विज्ञान को जड़ जगत् की हलचलों तक ही अपने को सीमाबद्ध नहीं रखना होगा वरन् आत्मा की अलौकिक सत्ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को भी स्वीकार करना होगा । जीव चेतना का उसकी क्रिया-कुशलता का समाधान तभी मिल सकता है ।

पक्षियों को ही लें तो उनकी कलाकारिता, पारस्परिक स्नेह, सहयोग, अतीन्द्रिय क्षमता आदि की व्याख्या, विवेचना विज्ञान कहाँ कर पाता है ? पक्षियों की क्रिया-कुशलता देखते ही बनती है । अपने घोंसले के रंग का चयन भी वे प्रकृति के नियमानुसार ही करते हैं । इससे स्पष्ट होता है कि उनका जीवन प्रकृति के साथ कितना अविच्छिन्न रूप से गुँथा है ? सुरक्षा का दृष्टिकोण रखते हुए अंडों के रूप, रंग के अनुरूप वातावरण चुनते और तदनुरूप घोंसला बनाते हैं । टिटहरी खुली या पथरीली जमीन पर अंडे देती है जिससे उनका रंग मृत्तिका अथवा कंकड़ों के समान ही दिखाई देता है । उस वातावरण में घुल-मिल कर अंडे आक्रामक दुश्मनों की आँखों से बच जाते हैं । कुररी रेत में अपनी प्रजनन क्रिया सम्पन्न करती है और उसके अंडे रेत के समरूप ही दिखने लगते हैं । जलीय पक्षी तैरते हुए पेड़-पौधों पर अपने घोसले बना लेते हैं और अंडे देते हैं । वनस्पतियों के सम्पर्क से उनके अंडे बच्चे भी हरा रंग ग्रहण कर लेते हैं और माँसाहारी समुद्री जीवों से अपनी रक्षा करने में समर्थ होते हैं । इससे प्रतीत होता है कि इन प्राणियों को प्राकृतिक परिवर्तनों का पूर्ण ज्ञान होता है । वया पक्षी अपने घोंसले के निर्माण में तो उच्चस्तरीय शिल्प कला का परिचय देता है जिसे मौसम की प्रतिकूलता भी नष्ट नहीं कर सकती । वस्तुतः यह सभी निर्धारण चेतना के द्वारा ही सम्भव हो सकते हैं ।

पक्षी विशेषज्ञों ने अपने अध्ययन में बताया है कि अधिकांश पक्षी अपनी मर्यादाओं का पत्नीव्रत एवं पतिव्रत धर्म का निष्ठापूर्वक पालन करते हैं । दुर्भाग्यवश यदि वियोग की स्थिति आ भी पड़े तो वे आजीवन विधुर या विधवा के रूप में रहकर गृहस्थ धर्म का निर्वाह समान रूप से करते देखे गए हैं । मातृत्व एवं पितृत्व की जिम्मेदारी निभाने में उन्हें गौरव की अनुभूति होती है । इसी तरह ह्वेल मछलियों की पारिवारिक भावना देखते ही बनती है । परिवार के किसी सदस्य के घायल होने, चोट लग जाने पर वे मिल-जुलकर उसकी सेवा-सुश्रूषा करती हैं । ध्रुव प्रदेशों में पाए जाने वाला पेन्गुइन पक्षी में अण्डे सेने और बच्चों की देखभाल करने का सारा काम नर पक्षी करता है । दो माह तक बिना कुछ खाये-पिये वह उनकी तब तक रक्षा करता रहता है, जब तक बच्चे चलने-फिरने योग्य नहीं हो जाते ।

कुछ प्राणी तो अपने को मानव समुदाय का ही सदस्य समझते हैं और उसी के आसपास अपना डेरा डाल देते हैं । मैना और गौरैया इसी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं । खंजन, वया, अबाबील और चातक पारस्परिक सहयोग-सहकार के आधार पर अपने-अपने गृह निर्माण की योजनाओं को पूरा करते हैं । हिंस्र जातियों से अपनी संतति को बचाने के लिए डोम काग और पीक्कक पेड़ के ऊपर बसने में ही अपनी कुशलता समझते हैं । प्राकृतिक अनुदानों का भरपूर लाभ उठाते हुए कठफोड़वा पक्षी पेड़ों के गड्ढों में अपना परिवार बसाता और आसानी से गुजर-बसर कर लेता है । अपने साथी एवं संतान की सुख-सुविधा का ये पूरी तरह ध्यान रखते हैं । गड्ढों में लकड़ी के बुरादे से कालीन जैसा काम लेकर अपना और अपने परिवार की कठोरताजन्य कठिनाइयों से रक्षा करते हैं ।

कुछ प्राणी तो इतने बुद्धिमान होते हैं जिन्हें देखकर मानवी बुद्धि भी हतप्रभ रह जाती है । आस्ट्रेलिया में 'बोवर बर्ड' नामक एक धब्बेदार चिड़िया पाई जाती है । इसकी विशेषता यह है कि वह विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं और यहाँ तक कि मशीनों की आवाजों की भी बड़ी दक्षतापूर्वक नकल उतार लेती है । पक्षी विशेषज्ञों के अनुसार यह चिड़िया कम से कम तीस विभिन्न प्रकार की पक्षी प्रजातियों की बोलियों की नकल कर सकती है । 'फ्लैमिन्गस' नामक चिड़िया को जब अंडे देना होता है तो कीचड़ में वह एक ऊँची और कपनुमा सुन्दर संरचना बनाती है और फिर उसमें अंडे देती है । 'गैलापागोस' चिड़िया को जब भूख लगती है तो वह काँटेदार कैक्टस की छोटी टहनी को अपनी चोंच से दबाकर पेड़ के कोटरों व दरारों में डालती है । जैसे ही कोई कीट बाहर निकलता वह टहनी को अपने पैरों से बाहर को धकेल देती है । उसको खाकर पुनः उसी काम में जुट जाती है । टैक्सास यूनीवर्सिटी के सुप्रसिद्ध जीवशास्त्री विलियम काडले के अनुसार अमरीकी गीध घनघोर वर्षा में भी अडिग रहकर अपने परिवार की रक्षा करता एवम् तप-तितीक्षा का परिचय देता है । इसे वहाँ का राष्ट्रीय पक्षी घोषित किया गया है ।

मूर्धन्य वैज्ञानिक डॉ० डी० सी० जर्निस अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'फोल्ड मेडिसिन' में लिखते हैं कि प्राणियों में प्रकृति-नियमों की उपयोगिता की जानकारी आश्चर्यजनक रूप में पाई जाती है । कुछ तो जड़ी-बूटियों की अचूक उपयोगिता और बीमारियों को दूर करने की शक्ति के बारे में भी पूरी जानकारी रखते हैं । भालू 'फर्न' के मूल को पसन्द करता है तो नेवला जहरीले साँप के काटे जाने पर एक जड़ी विशेष को चबाता है और सर्प विष के प्रभाव से सर्वथा मुक्त हो जाता है । जंगली गीध अपने बच्चों को एक मसाले के पौधे की पत्तियाँ खाने को बाध्य करता है । अधिकांश प्राणी शुद्ध वायु सेवन करते और प्राकृतिक चिकित्सा से ही अपने स्वास्थ्य को अक्षुण्ण बनाए रखते हैं ।

प्राणियों का बौद्धिक विकास भले ही मनुष्य की तुलना में कम हुआ हो फिर भी उनमें प्रकृति प्रदत्त उदात्त भाव, सम्वेदनाएँ, प्रेम, सहानुभूति, सहयोग, सहकार, कृतज्ञता, कर्तव्यपरायणता आदि के तत्व कूट-कूट कर भरे होते हैं । अपने को सभ्य और सुशिक्षित कहने वाला मानव इस निरीह कहे जाने वाले प्राणियों से बहुत-कुछ सीख सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वास्तुकला विशेषज्ञ— ये नन्हें प्राणी

डॉ० 'फ्रेजडाफिलन' जीवविज्ञानी के रूप में प्रख्यात हैं । जीव-जन्तुओं पर शोध कार्य के लिए एक बार वे जावा एवं श्रीलंका के जंगलों में गए । वहाँ उन्होंने 'इकोफाइला प्रजाति' की चींटियों को वृक्षों के शिखर पर पत्तियों से घोंसला बनाते देखा । कुछ दिनों पूर्व तक यह एक रहस्य का विषय बना था कि इतनी ऊँचाई पर सुन्दर ढंग से घोंसला बनाने वाला कौन-सा जीव है, यह देखकर वे आश्चर्यचकित रह गए । आश्चर्य का कारण यह था कि इन चींटियों को जमीन पर घूमते हुए कभी भी बुनाई का काम करते नहीं देखा गया था । उनकी बुनाई का कार्य भी कम आकर्षक एवं विचित्र न था । जिस सूझ-बूझ का परिचय वे इस कार्य में दे रही थीं, उसे देखकर लगता था कि उन्हें किसी विश्वविद्यालय से इन्जीनियरिंग का विधिवत् प्रशिक्षण दिया गया हो । मुँह से निकलने वाले द्रव्य लार को धागे के रूप में परिवर्तित कर वे पत्तियों को आपस में इन धागों से सीं देती थीं । जिस प्रकार पुल, मकान आदि के निर्माण में विभिन्न तरह के व्यक्तियों का ग्रुप बँटा होता है तथा सभी अपनी-अपनी भूमिका सम्पादित करते हैं । कोई ईंट ले आने का कार्य करता है तो कोई जोड़ने का । कोई गारा लाता । उसी प्रकार इन चींटियों का भी ग्रुप बना था । अपने ६ पाँव का सहारा लिए एक ग्रुप पत्ते को पकड़े रहता तो दूसरा ग्रुप सिलाई का कार्य सम्पन्न करता, तीसरा चींटियों का समूह मुँह से लार निकालकर रेशमी धागे बनाने का कार्य सम्पन्न कर रहा था ।

चींटयों की वास्तुशिल्प विशेषता उनके अपने सीमित क्षेत्र में कुशल इन्जीनियर होने का प्रमाण देती है । मनुष्य को तो इस प्रकार की विशेषता अर्जित करने के लिए विधिवत् प्रशिक्षण लेना पड़ता है किन्तु इन छोटे-छोटे कीड़ों को नैसर्गिक रूप में प्राप्त है । परमात्मा ने मनुष्य को शारीरिक एवं बौद्धिक क्षमताओं से युक्त करके भेजा है किन्तु अन्य प्राणियों जीव-जन्तुओं को भी वे क्षमताएँ, विशेषताएँ दी हैं जिनसे वे अपना जीवनयापन कर सकें । मनुष्य सर्वश्रेष्ठ होने का अहंकार करता है तो उसका ऐसा सोचना मिथ्या है । कौशल, कला, बुद्धि के क्षेत्र में अन्य प्राणी मनुष्य से किसी भी प्रकार कम नहीं हैं ।

बच्चों की देख-रेख एवं सुरक्षा की व्यवस्था में मनुष्य अपने स्नेह, सद्भाव का परिचय देता है । भोजन, चिकित्सा, विकास के सारे सरंजाम जुटाता है । आवश्यकता पड़ने पर बच्चों के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने में भी नहीं चूकता । अपनी सुविधाओं, सुखों को बच्चे की सुविधाओं से समक्ष गौण मानता है । यह विशेषता मात्र मनुष्य जाति में ही नहीं वरन् अन्य क्षुद्र प्राणियों में भी देखी जाती है । 'स्फेम्स' जाति का एक पतंगा अपने अंडों की सुरक्षा एवं पोषण की व्यवस्था में जिस कौशल का परिचय देता, उससे पतंगे की भाव सम्वेदना एवं बुद्धिमता का पता लगता है । सुरंग बनाने का कार्य यह अपनी पतली सूँड़ से लेता है । डेढ़ से लेकर दो इन्च तक गहरी लम्बाकार सुरंग बनाता है । प्रत्येक सुरंग में वह अपने अंडे के पास एक कीड़े को सुन्न करके रख देता है । अंडे से जैसे ही बच्चा-पतंगा निकलता है माँ के द्वारा रखा गया आहार उसे तत्काल उपलब्ध हो जाता है । सुरंग से जब भी मादा बाहर निकलती है अपनी सूँड़ से मिट्टी को नरम करके सुरंग के दरवाजे को बन्द कर देती है, जिससे सुरंग का वातावरण गर्म बना रहे और बाहरी जीव-जन्तु हमला न कर सकें । सुरंग पर ही एक छोटा-सा छेद बना देती है ताकि अंडे तक शुद्ध हवा पहुँचती रहे । अपने सिर एवम् सूँड़ से यह नन्हा जीव किस प्रकार एक उपकरण का कार्य लेता है, उसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाते हैं । प्रकृति प्रदत्त क्षमता एवं कौशल का यह जन्तु भरपूर उपयोग करता है ।

जीव-जन्तुओं की दुनिया में इस प्रकार के उदाहरण भरे पड़े हैं जो हमें इनके बुद्धि चातुर्य का परिचय देते हैं । मनुष्य किसी भी वस्तु अथवा निर्माण का कार्य बिना ट्रेनिंग प्राप्त किए तथा औजारों के बिना नहीं कर सकता जबकि पशु-पक्षी अपनी आवश्यकतानुसार निवास की व्यवस्था अपनी अन्तःप्रेरणा से बना लेते हैं । लोमड़ी, बिलाव, शृंगाल आदि के छोटे किन्तु सुरक्षित निवास कक्ष देखने योग्य होते हैं । बया का घोंसला, मधुमक्खी का छत्ता एवं मकड़ी के जाले को देखकर यही कहना पड़ता है कि उस सत्ता ने इन क्षुद्र समझे जाने वाले जीवों को भी अनेकों प्रकार के कला कौशल से युक्त बुद्धि देकर पूरा-पूरा न्याय किया है । इनकी शिल्पकला की बारीकियों को देखकर तो कुशल शिल्पज्ञों को भी ईर्ष्या होने लगती है ।

किसी विचारक का कथन है कि कोई भी वैज्ञानिक उपलब्धि किसी भी वैज्ञानिक की मौलिक देन नहीं है बल्कि प्रकृति एवं विभिन्न जीव-जन्तुओं की नकल मात्र है । उदाहरणार्थ, पक्षियों की उड़ान के सिद्धान्त से अभिप्रेरित विचारों ने हवाई जहाज बनाने की प्रेरणा दी तो मछलियों की स्वच्छन्द पानी में विचरण से पानी के जहाज बनाने की परिकल्पना मानव मस्तिष्क में आई । इन उपलब्धियों को पक्षियों, जीव-जन्तुओं की मौलिक विशेषताओं की नकल मानना चाहिये ।

आस्ट्रेलिया में पाया जाने वाला पक्षी 'इन्यूवेटर वर्ड जब घोंसला बनाता है तो उसकी वास्तुशिल्प देखने योग्य होती है । चिकित्सालयों में प्रयुक्त होने वाला 'इन्यूवेटर' के निर्माण की प्रेरणा उस पक्षी के घोंसले को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखकर प्राप्त हुई । नर, मादा मिलकर साढ़े चार मीटर ऊँचा व १० मीटर व्यास का रेतीली मिट्टी का घोंसला बनाते हैं । ऊपरी हिस्से में एक छेद करके उसे मुलायम घास से ढक देते हैं तथा उसके ऊपर मिट्टी से लेपकर ढक देते हैं । इस प्रकार यह गर्म कमरा पूरी तरह बच्चों की सुरक्षा करता है । कक्ष का तापक्रम ३३ सैन्टिग्रेड के निकट बना रहता है । यदि कमरा अधिक गरम हो जाता है तो यह पक्षी ऊपर के हिस्से में कुछ छिद्र बना देता है जिससे बाहर की ठण्डी हवा प्रविष्ट कर अन्दर के तापक्रम को कम कर सके । कमरे का तापक्रम कम होने अथवा ठण्डा होने पर ऊपरी हिस्से पर बड़ी सफलता से वह मिट्टी की परत चढ़ा देता है । इस प्रकार भीतर का तापक्रम बढ़ जाता है । नर इन्क्यूबेटर पक्षी को तापक्रम के कम एवं अधिक होने की पूरी जानकारी उसी प्रकार मिलती है जैसे थर्मामीटर । जब तक अनुकूल तापक्रम नहीं हो जाता नर मादा को अंडे नहीं देने देता । एक परिचारिका चिकित्सक एवं शिल्पज्ञ की भूमिका पूरी मुस्तैदी के साथ यह पक्षी निभाता है ।

दीमक पर विशिष्ट अध्ययन करने वाले प्रो. 'हीथ' इनकी व्यवस्था बुद्धि को देखकर लिखते हैं कि "यद्यपि दीमक एक छोटा कीड़ा है किन्तु सार्वजनिक जीवन में जिस कुशलता, व्यवस्था बुद्धि का परिचय देता है उससे मनुष्य को प्रेरणा एवं शिक्षा लेनी चाहिये । ईश्वर प्रदत्त विशिष्ट क्षमताओं, अनुदानों का भी उपयोग यदि मनुष्य अपने पारिवारिक पोषण तक ही करता है तो वह इन जीव-जन्तुओं से भी पीछे है ।"

नन्हें जीव-जन्तुओं की विशेषताओं पर डॉ० 'विलीले' अपनी पुस्तक 'सेलेमैण्डर्स एण्ड अदर वण्डर्स' में लिखते हैं कि मनुष्य यह सोचता है कि अन्य जीव-जन्तु उसकी तरह बोल नहीं सकते तो उनके अन्दर विचार करने की क्षमता का भी सर्वथा अभाव होगा किन्तु यह सोचना गलत है । परमात्मा ने इनको भी बुद्धि दी है । अपने सीमित क्षेत्र में मिली बौद्धिक क्षमता का ये भरपूर उपयोग करते देखे जाते हैं जबकि परमात्मा ने मनुष्य को अनेकों विशेषताएँ एवं क्षमताएँ प्रदान की हैं । शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक, प्रत्येक क्षेत्र में वह चेतन जगत् का नेतृत्व करता है । यदि मानव इन क्षमताओं का उपयोग मात्र जीने-खाने तक ही सीमित रखता है तो वह इन क्षुद्र कीड़ों से किसी भी प्रकार श्रेष्ठ नहीं है ।

मनुष्य यद्यपि अपनी कुशलता, दक्षता, कलाकारिता, शिल्प आदि पर गर्व कर सकता है और यह मान सकता है कि अपनी वैज्ञानिक बुद्धि के सहारे वह गगनचुम्बी इमारतें बनाने से लेकर बड़े-बड़े पुल बाँधने, बाँध निर्माण करने तक में समर्थ है । पर वह यह भूल जाता है कि इसके लिए उसे शिक्षा, अनुकरण तथा उपकरणों पर निर्भर रहना पड़ता है, जबकि क्षुद्र समझे जाने वाले अन्य प्राणी अपनी अन्तःप्रेरणा के आधार पर वह सब कुछ सीख लेते हैं । न तो वे उसके लिए किसी के पास शिक्षा लेने जाते हैं और न उन्हें किसी उपकरणों की आवश्यकता होती है । वे मनुष्य से भी बढ़-चढ़कर अपनी कुशलता का परिचय देते हैं । बीवर जैसा चतुर और कुशल इंजीनियर तो बिना प्रशिक्षण प्राप्त किए ही अपनी क्षमता का जिस तरह परिचय देता है, वह हमारे लिए कहाँ सम्भव है ? इसी तरह लोमड़ी, बिलाव तथा शृंगालों आदि के निवास कक्ष देखते ही बनते हैं । वे अपनी माँदों तथा बिवरों में सब प्रकार की सुविधाओं का समावेश रखते हैं । बया का सुन्दर घोंसला पक्षियों की निर्माण कला का श्रेष्ठतम जीवंत नमूना है । नगण्य-सी समझी जाने वाली चींटियों और मधुमक्खियों की कलाकारिता देखी जाय तो उनकी कुशलता देखकर यही कहना पड़ता है कि परमात्मा ने इन क्षुद्र समझे जाने वाले जीवों को गजब की निर्माण बुद्धि दी है । उनके सूक्ष्म शिल्प को देखकर मानव मन ईर्ष्या से भर उठता है ।

बाँध कैसे बनाए जाएँ, यह कला मनुष्य ने सम्भवतः बीवर से सीखी है । बीवर खरगोश जाति का एक छोटा-सा प्राणी है, जिसकी लम्बाई पूँछ समेत चार फुट से कम ही होती है । यह अपने रहने के लिए नदी किनारे ऊँचे बाँध खड़े करता है और संरक्षित घर बनाकर उनमें सुखपूर्वक रहता है । यह बाँध लकड़ी के लट्ठों, मोटी टहनियों, पत्थरों तथा कड़ी मिट्टी के सहारे बनाए गए होते हैं । बीवर यह रचना सामुदायिक सहयोग के आधार पर करते हैं । वे जिस पेड़ को उपयुक्त समझते हैं, उसे अपने पैने दाँतों से जड़ से काटकर धराशायी कर देते हैं । बाद में उसके टुकड़े-टुकड़े कर मिल-जुलकर निर्माण स्थल पर घसीट ले जाते हैं और जमीन में गाड़कर बाँध की इतनी मजबूत नींव रखते हैं जिस पर पत्थर, लकड़ी आदि जमाते हुए बाँध को नदी की सतह से बारह फुट ऊँचा तक ले जाया जा सके । यह बाँध पाँच सौ फुट तक लम्बे पाए गए हैं और इतने मजबूत देखे गये हैं कि नदी के पानी की लहरें उन्हें विनष्ट नहीं कर पातीं । एक बाँध में दर्जनों बीवर परिवार रहते हैं । मध्य योरोप में नदी तटों पर पाया जाने वाला यह छोटा-सा जीव अपनी श्रमशीलता, सहकारिता, सूझबूझ एवं शिल्प के कारण मनुष्य के लिए एक आदर्श बन गया है ।

इसी तरह ऊदबिलाव भी अपनी शिल्पकला के लिए विख्यात है । जीवशास्त्रियों ने इसे कुशल इंजीनियर की पदवी तक दे डाली है, यह सुरंगी नहरें बनाने तथा मिट्टी के पुल निर्माण करने में बड़ा पटु होता है, हैम्पटन नगर में समुद्री किनारे पर रहने वाले लोग इस प्राणी के कारनामों से बहुत ही परेशान रहते हैं । यह नगर झील एवं समुद्र के बीच स्थित है । ऊदबिलावों ने वहाँ से नगर के भीड़भाड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भरे इलाके तक में भीतर ही भीतर सुरंगें बना रखी हैं । बहुत प्रयत्न करने के पश्चात् भी आज तक न तो वे पकड़े जा सके हैं और न वह नहरें ही बन्द की जा सकी हैं, जो इन्होंने अन्दर ही अन्दर बना रखी हैं ।

अभियांत्रिकी दक्षता को आज का वैज्ञानिक मनुष्य अपनी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानता है । विशालकाय भवनों, बाँधों के निर्माण से लेकर सैटेलाइट कम्प्यूटर आदि तक की डिजाइनिंग में उसने—जो बुद्धि खर्च की है, उसे देखकर लगता है कि वह दूसरा परमात्मा है । पर जब यही योग्यता चीटीं, दीमक जैसे तुच्छ से प्राणियों में हो तो उसे भी परमात्मा का अंश ही कहा जाएगा । यों देखने पर चींटियाँ ढेर में बिलबिलाती दीखती भर हैं, पर बारीकी से देखने पर स्पष्ट हो जाता है कि उनका हर कार्य व्यवस्थित नियंत्रित एवं कलाकारितापूर्ण होता है । मनुष्य की तरह पेट भरने और संतति वृद्धि में निरत रहने पर भी उनमें अव्यवस्था और उच्छृंखलता के लिए कोई स्थान नहीं होता । इस सम्बन्ध में सुविख्यात जीवविज्ञानी डाक्टर बोल्ट ने हिमालय की चार हजार फुट ऊँची एक चोटी पर चढ़कर एक ऐसे चींटीं परिवार का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया है, जो गृह निर्माण का कार्य कर रहा था । उन्होंने लिखा है कि नदी के किनारे होने के कारण बिल से निकाली हुई मिट्टी नीचे गिर जाती थी और इस कारण मकान बनाने में श्रमिक चींटियों को सफलता नहीं मिल पा रही थी । अंततः इस स्थिति से निपटने का काम कुछ विशेषज्ञ चींटियों को सौंपा गया । उन्होंने उस स्थान का विधिवत् निरीक्षण करके एक योजना बनाई । उस योजना के अनुसार मजदूर चींटियों को हटा लिया गया और उन्हें पहले छोटी-छोटी कंकड़ियाँ बीनकर लाने का आदेश दिया गया । वे सभी कंकड़ एकत्र करके लाने लगीं और विशेषज्ञों के हवाले करती गईं । इन कंकड़ों से पहले मजबूत पथ का निर्माण किया गया और तब आगे का कार्य आरम्भ हुआ । अब मिट्टी के लुढ़कने की कोई गुंजायश नहीं रही । इस सम्बन्ध में मूर्धन्य वैज्ञानिक डॉ० वैरन मैकुबला का कहना है कि निर्माण सम्बन्धी जो कार्य योजना चींटियाँ तैयार कर सकती हैं, वह मानव निर्मित कम्प्यूटर द्वारा भी सम्भव नहीं ।

सुप्रसिद्ध जीवविज्ञानी कैथी किलपैट्रिक ने जीव-जन्तुओं की स्थापत्य कला पर एक खोजपूर्ण पुस्तक लिखी है—'एनीमल आर्चीटैक्ट ।' यूरोप में पायी जाने वाली 'वुडएन्ट्स' प्रजाति की चींटियों के बारे में उन्होंने लिखा है कि वह अपनी सूक्ष्मबुद्धि का जिस तरह उपयोग करती हैं, वैसा अपनी बुद्धि का सदुपयोग कर पाना मनुष्य के लिए अभी तक सम्भव नहीं हुआ है । इन चींटियों के टीले दस से लेकर बीस फुट ऊँचे होते हैं और प्रायः उतने ही भूगर्भ में नीचे गहरे धँसे होते हैं । इनमें चींटियों की लाखों प्रजातियों के साथ अन्य जाति के जीव भी पाए जाते हैं । टीले की सबसे निचली सतह पर शंकुदुम की सुइयाँ, सूखी डालियाँ एवं पत्ते बिछे होते हैं । सभी टीले वातानुकूलित होते हैं, जिनका निर्माण चींटियाँ मिट्टी के साथ अपनी लार मिलाकर करती हैं । ऊपर से देखने पर ये सीमेन्ट के बने मालूम पड़ते हैं, पर अन्दर से उसे सतत् परिवर्तित किया जाता रहता है ताकि हवा का प्रवेश अवरुद्ध न हो ।

अनुसन्धानकर्ताओं का कहना है कि इस प्रकार टीले की मिट्टी बार-बार बदलते रहने से भूगर्भ में जहाँ मिट्टी ज्यादा ठंडी और नम रहती है, वह ऊपर आ जाती है और उसे पर्याप्त मात्रा में रोशनी और धूप मिल जाती है । ऊपर की गरम मिट्टी नीचे पहुँच जाती है, फलतः अन्दर का भाग वातानुकूलित बना रहता है । इसके अतिरिक्त चींटियाँ धूप स्नान के लिए समूहों में बारी-बारी से ऊपर आती रहती हैं । टीलों का बाह्य आवरण सीमेन्ट जैसा कठोर होने से एक ओर जहाँ वातावरण अनुकूलन की सुविधा मिलती है, वहीं दूसरी ओर चींटियाँ दुश्मनों के आक्रमण से अपनी रक्षा करने में भी सफल होती हैं । आपत्तिकाल में निकल भागने के लिए भी टीले में समुचित व्यवस्था होती है ।

जीवविज्ञानियों के अनुसार दीमकों के महल तो और भी शानदार होते हैं । इनकी स्थापत्यकला अद्वितीय होती है जिसका केन्द्रबिन्दु शाही महल होता है, जहाँ राजा-रानी निवास करते हैं । इनमें अनेक चैम्बर और दीर्घाएँ बनी होती हैं । टीलों का स्थापत्य ऐसा होता है कि उनके उत्तर और दक्षिण की बाजुएँ छोटी होती हैं जिससे अधिक धूप और गर्मी से आसानी से बचा जा सके । अन्य बाजुएँ लम्बी रखी जाती हैं जिसके कारण प्रातः एवम् सायंकाल के समय सरलतापूर्वक धूप मिलती रहे । इन प्रासादों में हर समय ताजी हवा ऊपर से अन्दर आती रहती है । विषैली गैसें निकलने का भी बढ़िया प्रबन्ध होता है, दीमकों की बेहतरीन अभियांत्रिकी कला को देखकर अपने को कुशल समझने वाले अभियन्ता भी हैरान रह जाते हैं ।

जीव-जन्तुओं के इस तरह सुव्यवस्थित शिल्प ज्ञान एवं विवेकपूर्ण सुविकसित जीवनक्रम का लम्बे समय तक अध्ययन करने के पश्चात् प्रख्यात जीवशास्त्री डॉ० हेनरी वेस्टन ने लिखा है कि प्रकृति से परे कृत्रिम जीवन जीने वाला मनुष्य अपने से इतर प्राणियों को क्षुद्र समझता है । वह उनकी अपूर्णता पर दया दिखाता और उनकी विवशता पर तरस खाता है, किन्तु यह उसकी जबरदस्त भूल है । वस्तुतः मनुष्य को अपने सर्वश्रेष्ठ होने का अहंकार त्याग देना चाहिये और अन्तःप्रेरणा के आधार पर चलने वाले अपने से छोटे इन प्रकृति पुत्रों से कुछ शिक्षा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ग्रहण करनी चाहिये । समग्र प्रकृति एक पाठशाला है व हम विद्यार्थी । यदि सतत् सीखते रहे तो जीवनभर इन प्रकृति पुत्रों से बहुत कुछ पा सकते हैं ।

कीड़ों की आत्मविद्युत

संसार के सभी विद्वान, डाक्टर, अन्वेषक, वैज्ञानिक योगी, आत्म-तत्ववेत्ता यह स्वीकार करते हैं कि मनुष्य अनन्त शक्ति का भण्डार है । उसके अन्दर जो महान् तत्व छिपे पड़े हैं उनका थोड़ा बहुत परिचय जब कभी किसी के पास दीख पड़ता है तो दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ती है—आश्चर्य की सीमा नहीं रहती । सरकसों के तमाशे में मनुष्य शरीर गेंद या कठपुतली दिखाई देता है । जादूगर और मोहिनी विद्या जानने वाले अपने करतब दिखाकर हैरानी में डाल देते हैं । अभी किसी पहुँचे हुए सिद्ध महात्मा के निकट रहने का जिन्हें सौभाग्य मिला है वे तो और भी विचित्र स्थिति में पड़ जाते हैं और समझ नहीं पाते कि आखिर यह मनुष्य शरीर है या जादू का पिटारा ।

ऐसी विचित्र शक्ति मनुष्य में ही हो सो बात नहीं है । प्रकृति ने उस शक्ति को छोटे जानवरों और कीड़े, मकोड़ों में भी दिया है, जिसको देखकर और आश्चर्य होता है । यदि शरीर के हिसाब से कीड़े-मकोड़े और मनुष्य शरीर की दिव्य शक्तियों का मुकाबला किया जाय तो मालूम होता है मनुष्य के हिस्से में कम आया है ।

मूर्धन्य प्राणिवेत्ता डॉ० आर० डब्ल्यू० जी० हिंगस्टन ने कीड़े-मकोड़ों के सम्बन्ध में गहन अन्वेषण किया है । इनकी खोजों से जो विचित्र बातें अब तक मालूम हो सकी हैं वे बड़ी कौतूहलवर्द्धक हैं । उन्होंने पता लगाया है कि 'केलन' नामक मकोड़े में इतनी विद्युत शक्ति होती है कि वह उससे दूसरे कीड़ों की जान तक ले सकता है । उक्त वैज्ञानिक ने एक काँच के बॉक्स में उस कीड़े को बन्द किया और उससे लड़ने के लिए जहरीले डंक वाला एक ततैया भी उसी में छोड़ दिया । अब उस मकोड़े और ततैये की लड़ाई शुरू हुई । घंटों युद्ध होता रहा । जब मकोड़ा हारने लगा तो उसने अपना सम्मोहनास्त्र सँभाला । एक कोने में हटकर वह कुछ देर के लिए चुप खड़ा हो गया और एक गहरी साँस के साथ ऐसा विद्युत प्रवाह छोड़ा कि ततैया लड़खड़ाकर गिर पड़ा और तुरन्त ही मर गया । उन्होंने जब ततैया के मृत शरीर की परीक्षा की तो मालूम हुआ कि उसकी मृत्यु बिजली का झटका लगने के कारण हुई है । अधिक अनुसंधान करने पर उन्होंने साबित किया कि उस जाति के मकोड़ों के शरीर में इतनी बिजली होती है जिससे कि एक छोटा बल्ब जल सके ।

कितने ही व्यक्ति प्राय: छिपकली को अछूत मानते हैं और उसका शरीर पर गिरना, अपशकुन मानते हैं । डाक्टर ए० कौर्वन ने सिद्ध किया है छिपकली एक चलती-फिरती बैटरी है । उसकी दुम में जितना झटका होता है उतना छोटी बैटरी में नहीं होता । भारतीय वैज्ञानिक श्री हंसराज वायरलैस ने एक बार बे-तार का तार तैयार करने में छिपकली के शरीर की बिजली का उपयोग किया था । छिपकली की घातक बिजली का आदमी के शरीर पर जो हानिकर असर होता है, उसी को देखते हुए हिन्दू लोग छिपकली छूना बुरा समझते हैं ।

एक खोजी दल को चित्रकूट की पहाड़ियों में इस प्रकार के सर्प मिले जो स्वयं शिकार की तलाश में कहीं नहीं जाते थे और पीले रंग के छोटे मेंढक अपने आप उसका भोजन बनने के लिए चले आते थे । अन्वेषक ने बहुत छान-बीन की कि यहाँ पास में कोई तालाब आदि मेंढकों के रहने योग्य कोई स्थान भी नहीं है फिर यह इतनी अधिक संख्या में कहाँ से और किस प्रकार चले आते हैं ? वह स्वयं जब इसका कुछ संतोषजनक निर्णय न कर सका तो बंगाल की विज्ञान परिषद् को इसकी सूचना दी । कलकत्ता की वैज्ञानिक सभा द्वारा दो वर्ष तक इसका अनुसंधान किया गया और सिद्ध हुआ कि इन सर्पों के शरीर में एक प्रकार की चुम्बकीय विद्युत है और इन मेंढकों की देह में लोहतत्व-प्रचुर परिमाण में है इसलिए वे इच्छा न रहते हुए भी आसपास से खिंचकर साँपों तक चले आते हैं और उनका भोजन बन जाते हैं ।

अमेरिका के कन्सास नगर निवासी एक धनपति मि० हर्ट को शिकार का बड़ा शौक था । एक दिन वे दूर के जंगल में शिकार खेलने गये । जब वे थक गए तो एक सघन स्थान पर घास पर पड़े रहे । कुछ देर में उनका दाहिना हाथ काँपने लगा और दिल की धड़कन बढ़ गई । मि० हर्ट चौंके कि बात क्या है ? उन्होंने हाथ उठाया तो फिर कुछ न था । अब तो उन्हें और भी अचम्भा हुआ और फिर उसी स्थान पर हाथ रखा । हाथ रखते ही फिर हाथ काँपने लगा । मि० हर्ट उठ बैठे और गम्भीरतापूर्वक वहाँ की चीजों की खोज में लगे । एक-एक करके उन्होंने वहाँ की घास तिनके, जमीन, कंकड़ियाँ छुए पर कोई खास बात न मालूम हुई, आखिरी बार जब उन्होंने एक पीले रंग के कीड़े को छुआ तो उन्हें फिर झटका लगा । आश्चर्य के साथ वे उस कीड़े को अपने नगर की विज्ञानशाला में ले गए । दूसरे वर्ष वैज्ञानिकों के अखबार में यह समाचार छपा कि टर्न नामक पीला कीड़ा मुँह से भोजन नहीं करता, वरन् अपनी आकर्षक विद्युत द्वारा दूसरे जीवित प्राणियों के शरीर में से बिना किसी प्रकार का जख्म किए खाद्य पदार्थ खींच लेता है । वह इतनी चीजें एक साथ खींच सकता है जो इसके लिए सत्रह दिन तक पर्याप्त होती हैं ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभी पिछले दिनों अफ्रीका के द्वीप समूहों में एक माँसाहारी तितली पाई गई है । यह अपनी रुचि का शिकार चुनती है और उसके शरीर पर चुपके से जा बैठती है । क्षणभर में ही उसका शिकार मूर्छित हो जाता है, जब भरपेट रक्त पीकर वह उड़ जाती है तब प्रायः दो घण्टे बाद उस जीव को होश आता है और दूसरे दिन चलने-फिरने लायक होता है ।

खद्योत को रात के समय अपना प्रकाश चमकाते हुए सब लोगों ने देखा है । केंचुए मल रूप में अपने शरीर से ऐसी फॉस्फोरस मिली हुई शक्ति निकालते हैं जो बरसात के दिनों में रात को जलते अंगारों की तरह दीख पड़ती है । कुर्री कीड़े से लड़के अक्सर खेल करते हैं, उसके रास्ते के आसपास छोटे तिनके लोहे की सुइयाँ आदि बिछा देते हैं, कुर्री का शरीर इन सब चीजों को खींच-खींचकर अपने ऊपर चिपकाता चलता है । कुछ ही देर में उसके शरीर से इतना बोझ उस पर लद जाता है । तब लड़के खूब हँसते हैं । तिनकों को खींच-खींचकर लड़के छुड़ा देते हैं और फिर उसी प्रकार की पुनरावृत्ति करके कुर्री को गधा बनाते हैं ।

प्रकाश, शब्द, ऋतु परिवर्तन आदि की जो सूक्ष्म लहरें बहती रहती हैं, उन्हें छोटे कीड़े बड़ी आसानी ग्रहण कर लेते हैं । सूँघकर जितना तेजी से वे अपनी रुचि के अनुकूल प्रतिकूल चीजों का वे पता लगा लेते हैं उतना आदमी नहीं कर सकता । कई कीड़ों में अद्भुत शक्ति होती है । खोपड़ा नामक काला मकोड़ा चार मन भारी पत्थर को इतना उठा लेता है जितने में होकर वह निकल सके । दीमक एक दिन में इतना गहरा गड्ढा खोद लेती है, जितना एक युवा मजदूर कुदाली लेकर नहीं खोद सकता ।

शरीर की लम्बाई-चौड़ाई और बोझ के आधार पर यदि मनुष्य और कीड़ों की शक्ति का हिसाब फैलाया जाय तो मालूम पड़ता है कि प्रकृति ने मनुष्य की अपेक्षा मकोड़ों को ३०० से लेकर ७५०० गुणी तक अधिक विद्युत शक्ति दी है ।

विवेकरहित बुद्धि से काम न चलेगा

विलक्षण बौद्धिक क्षमताएँ आदिकाल से ही वैज्ञानिकों और जीवशास्त्रियों के लिए एक प्रकार की चुनौती रही हैं । बुद्धि, ज्ञान, चिन्तन की क्षमता—यही वह तत्व हैं जो मृत और जीवित का अन्तर स्पष्ट करते हैं । अतएव जीवन को बौद्धिक क्षमता में केन्द्रित कर वैज्ञानिक प्रयोगों की प्रणाली अपनाई गई । इस दिशा में मस्तिष्क की जटिल संरचना एक बहुत बड़ी बाधा है, इस कारण रहस्य अभी तक रहस्य ही बने हुए हैं, तथापि अब तक जितना जाना जा सका है । उससे वैज्ञानिक यह अनुभव करने लगे हैं कि बुद्धि एक सापेक्ष तत्व है अर्थात् सृष्टि के किसी कोने से समष्टि मस्तिष्क काम कर रहा हो तो आश्चर्य नहीं, जीवन जगत् उसी से जितना अंश पा लेता है उतना ही बुद्धिमान होने का गौरव अनुभव करता है ।

वैज्ञानिक अब इस बात को अत्यधिक गम्भीरता से विचारने लगे हैं कि मानव-मस्तिष्क और उसकी मूलभूत चेतना का समग्र इतिहास अपने इन कम विकसित समझे जाने वाले भाइयों के मस्तिष्क की प्रक्रियाओं से ही जाना जा सकता है । इसके लिए अब तरह-तरह के प्रयोग किए गए हैं ।

मनुष्य की तरह ही देखा गया कि कई बार एक कुत्ता अत्यधिक बुद्धिमान पाया गया । जबकि उसी जाति के अन्य कुत्ते निरे बुद्धू निकले । चूजे अपने बाप मुर्गे की अपेक्षा अधिक बुद्धि चातुर्य का परिचय देते हैं । डॉल्फिन मछलियों की बुद्धिमत्ता की तो कहानियाँ भी गढ़ी गई हैं । बुद्धि परीक्षा के लिए कोई बहुत सम्वेदनशील यंत्र तो अभी तक नहीं गढ़े जा सके किन्तु स्वादिष्ट भोजन की पहचान, जटिल परिस्थितियों के हल आदि के लिए जो विभिन्न प्रयोग किये गये उनसे पहली दृष्टि में यह स्पष्ट हो गया कि बन्दर, डॉल्फिन, लोमड़ी (काली की अपेक्षा लाल) अधिक चतुर होते हैं, नीलकंठ, संघकाक और कौवों की बुद्धि स्वार्थ प्रेरित जैसी होती है—विवेकजनक नहीं । रूस के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो० लियोनिद क्रुशिन्स्का ने अपने विचित्र प्रयोगों से यह सिद्ध किया कि जिस तरह चिन्तन से मानवीय शक्ति का ह्रास होता है, पशु-पक्षियों में भी यह प्रक्रिया यथावत होती है । इनमें कुछ तो डर जाते हैं, कुछ बीमार पड़ जाते हैं । सम्भवतः इन्हीं कारणों से वे जीवन की गहराइयों में नहीं जाकर प्राकृतिक प्रेरणा से सामान्य जीवनयापन और आमोद-प्रमोद के क्रियाकलापों तक ही सीमित रह जाते हैं । इस दृष्टि से देखा जाये तो मानवीय चिन्तन प्रक्रिया भी उतनी उन्नत नहीं है, वह भी तो अपनी बुद्धि का उपयोग मात्र ऐसी ही उपलब्धियों में करता है, जिससे उसकी भौतिक प्रसन्नता तथा सुख-सुविधा बढ़ती है । अन्तरात्मा की अन्तरंग गहराइयों तक पहुँचने की तो उसे कल्पना भी बहुत कठिनाई से होती है । सो वह भी कुछ ही बुद्धिजीवियों में होती है जबकि यही सबसे बड़ा प्रश्न है, जिसे सुलझाने में मानवीय क्षमताओं की प्रतिष्ठा हो सकती है ।

प्रो० क्रुशिन्स्की के अनुसार तर्क, विवेक और प्राकृतिक हलचलों के अनुरूप अपने को समायोजित करने की बुद्धि अन्य प्राणियों में भी यथावत् होती है । इसी कारण वे पर्यावरण की समस्याओं को झेलते हुये भी अपना अस्तित्व बनाए हुए हैं जबकि मनुष्य उनमें बुरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह जकड़ता जा रहा है । उसके अपने ही कारनामे चाहे वह विशाल औद्योगिक प्रगति हो या अणु-आयुधों का निर्माण, उसके अपने ही विनाश के साधन बनते जा रहे हैं ।

पेट ही मनुष्य का साध्य हो, तब तो उससे अच्छा कर्कट है, जो रहता तो समुद्र में है किन्तु वह नारियल वृक्ष पर चढ़कर फल तोड़ लाता है ।

जीवों की बुद्धिमत्ता अपने विकसित रूप में तब अभिव्यक्त होती है जब उनके सामने कोई संकट आ जाता और आत्मरक्षा की आवश्यकता आ पड़ती है । हिरन, खरगोश, चीते और कंगारू बहुत तेज दौड़ते हैं किन्तु जब इन्हें अपने सामने कोई संकट आता दिखाई देता है तब ! वे जानते हैं कि उस स्थिति में सामान्य गति से बचाव नहीं किया जा सकता अतएव वे अपनी गति को अत्यधिक तीव्र कर देते हैं । चीता उस स्थिति में १०० किलोमीटर प्रति घण्टे की रफ्तार से दौड़ जाता है, कंगारू उस स्थिति में हवा में जोरदार कुलाँचें लगाता है जिससे उसकी मध्यम गति अपनी प्रखरता तक पहुँच जाती है । यदि भागने में भी जान न बचे तो वह खड़े होकर अपनी शक्ति प्रदर्शन करते हैं । बिल्ली अपने बाल फुलाकर तथा गुर्राकर यह प्रदर्शित करती है कि उसकी शक्ति कम नहीं, कुछ जानवर दाँत दिखाकर शत्रु को डराते हैं तो कुछ घुड़ककर, कुछ पंजों से मिट्टी खोदकर इस बात के लिए भी तैयार हो जाते हैं कि आओ जब नहीं मानते तो दो-दो हाथ कर ही लिए जाएँ । सेही तो मुँह विपरीत दिशा में करके अपने नुकीले तेज काँटे इस तरह फर्राकर फैला देती है कि शत्रु को लौटते ही बनता है । अमेरिका में पाई जाने वाली स्कंक नामक गिलहरी अपने शरीर से एक विलक्षण दुर्गन्ध निकालकर शत्रु को भगा देती है । आस्ट्रेलिया के कंगारू रैट तो सचमुच ही आँखों में धूल झोंकना, जो कि बुद्धिमत्ता का मुहावरा है, जानता है कई बार रैटल साँप का उससे मुकाबला हो जाता है तो यह अपनी पिछली टाँगों से इतनी तेजी से धूल झाड़ता है कि कई बार तो सर्प अन्धा तक हो जाता है, उसे अपनी जान बचाकर भागते ही बनता है ।

कछुआ, कर्कट तथा अमेरिका में पाए जाने वाले आर्मडिलो शत्रु आक्रमण के समय अपने सुरक्षा कवच में दुबककर अपनी रक्षा करते हैं, तो बारहसिंगा युद्ध में दो-दो हाथ की नीति अपना कर अपने पैने सींगों से प्रत्याक्रमण कर शत्रु को पराजित कर देता है ।

कहते हैं कि भालू व्यक्ति पर आक्रमण नहीं करते । इसकी पहचान के लिए वे नथुनों के पास मुँह ले जाकर यह देखते हैं कि मनुष्य की साँस चल रही है या नहीं । चतुर लोग अपनी साँस रोककर उसे चकमा दे जाते हैं । यह बात कहाँ तक सच है कहा नहीं जा सकता, किन्तु ओपोसम सचमुच ही विलक्षण बुद्धि और धैर्य का प्राणी है । वह संकट के समय अपनी आँखें पलटकर जीभ लटका कर मृत होने का ऐसा कुशल अभिनय करता है जैसे सिनेमा के नायक । इस तरह अपनी सूझबूझ से वह अपने को मृत्यु मुख में जाने से बचा लेता है ।

मोर आक्रमण की स्थिति से नृत्य मुद्रा में निबटता है अपने पंखों को छत्र की तरह बनाकर वह आक्रमणकारी रोष प्रकट कर शत्रु को धमका देता है । कुछ छोटे-छोटे पक्षी तो और भी चतुराई दिखाते हैं । आक्रामण को देखकर ये लँगड़ा कर चलने का नाटक करते हैं । इससे इस बात का भ्रम होता है कि पहले ही इसे किसी ने घायल कर दिया है इस स्थिति में अगान्तुक सीधे आक्रमण करने की अपेक्षा पीछा करने की नीति अपनाता है । काफी दूर तक तो वह इसी तरह पीछे-पीछे भगाता है इसी बीच वह एकदम फुर्र से उड़ जाता है और शिकारी टापता ही रह जाता है ।

वर्ल्ड वाइल्ड लाइफ (विश्व वन्य जीवन) त्रैमासिक पत्रिका के एक संस्करण में मलेशिया में पाई जाने वाली मछली एक्रोबेट का वर्णन छपा है जिसमें बताया गया है कि वह मछली भोजन की तलाश में अपने बड़े-बड़े पंखों के सहारे वृक्षों पर भी चढ़ जाती है । यही नहीं वह अपने थूथने में पानी भरकर इस तरह की क्रिया करती है कि वह थूथना बन्दूक का-सा काम करता है और पानी गोली का । अपनी इस प्राकृतिक गन से वह अपने भोजन के उपयुक्त जीवों का स्वयं शिकार कर लेती है । उसमें यह भी समझ होती है कि किस जीव को मारने के लिए कितनी बड़ी गोली प्रयुक्त की जाए । दागते समय वह उतने ही जल का प्रयोग करती है ।

शेरनी १०८ दिन में प्रसव करती है । इसके बाद वह २ वर्ष तक जब तक कि बच्चे बड़े और समर्थ नहीं हो जाते वह उन्हीं के पोषण प्रशिक्षण में व्यस्त रहती है । सहवास की इच्छा होने पर भी वह उसे टालती है और बच्चे अपने पैरों पर खड़े हो जाने के बाद ही वह पुनः गर्भ धारण करती है । इस तरह के उदाहरण से भावनाओं की गम्भीरता का पता चलता है । इसके विपरीत आचरण मानवीय स्वभाव का हल्कापन है, भावनाओं का अर्थ केवल मात्र झुकना नहीं अपितु अपनी समीक्षा बुद्धि को जाग्रत रखते हुए जो पवित्र रसमय और मर्यादाजन्य है, उसे पूरा करने में अपनी सम्पूर्ण निष्ठा का परिचय देना ही भाव निष्ठा है ।

डेथ हेड होव-कीड़ा विलक्षण ध्वनियाँ निकाल लेने में बड़ा चतुर होता है । उसे यदि कहीं मधुमक्खी का छत्ता दीख जाए तो वह रानी मक्खी की-सी आवाज निकालता है । अन्य मक्खियाँ भुलावे में आ जाती हैं और यह महोदय चुपचाप छत्ते में घुसकर शहद चोरी कर लाते हैं ।

हाथी की खोपड़ी ही बड़ी नहीं होती अपितु उनमें उसी अनुपात की बुद्धिमत्ता भी है । वे सूक्ष्म संकेतों को भी थोड़े प्रशिक्षण के बाद ही समझने लगते हैं । यही कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है कि उसे भूतकाल में युद्ध भूमि में प्रयुक्त किया गया था । आज भी सवारी के काम में, सागौन के जंगलों में स्लीपर ढोने तथा सरकसों में विविध करतब दिखाने में प्रयुक्त होते हैं । जगपति चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक जीव-जन्तुओं की बुद्धि पर लिखा है कि एक हाथी ने एक बच्चे की जेब में सूँड डाली पता चला कि उसकी जेब में चीनी है, हाथी उसे ही लेना चाहता था । हाथी को मिष्ठान्न अधिक प्रिय है सम्भवतः इसी से उसकी तुलना मोदक प्रिय गणेश जी से की जाती है । हाथी अपने गिरोह की प्रधान किसी वयोवृद्ध हथिनी को बनाते हैं इससे उनके मातृत्व के प्रति सम्मान का परिचय मिलता है ।

सामान्य बुद्धि से देखें तो चींटियों का ही क्या मनुष्य जीवन भी खा-पीकर, वासना, तृष्णा अहंता में बिताया जाने वाला बेकार-सा जीवन है पर उपयोगिता और उपादेयता तब स्पष्ट होती है, जब जीवन प्रक्रिया के सूक्ष्म तत्वों का भी बारीकी से अध्ययन, चिन्तन और मनन किया जाए । चींटियाँ यों ढेर में बिलबिलाती दीखती हैं पर उनका हर कार्य व्यवस्थित, नियन्त्रित और अपनी प्रभुसत्ता सम्पन्न रानी के इंगित पर चलता है । कोई भी चींटी न तो कभी निष्क्रिय होगी, न व्यर्थ के कार्य करेगी । जो कार्य जिसके सुपुर्द है वह वही करेगी । नर का काम है परिश्रमपूर्वक खाद्यान्न व्यवस्था करना, सैनिक पहरेदारी करते, मजदूर बोझा ढोते, शव बाहर निकालते और शिल्पी भवन निर्माण में जुटे रहते हैं । यही व्यवस्था मधुमक्खियों में भी समान रूप से पाई जाती है । मनुष्य की तरह पेट और प्रजनन मे व्यस्त रहने पर भी उनमें अव्यवस्था और उच्छृंखलता के लिए कोई स्थान नहीं ।

मनुष्य और मानवेतर जीवों की बौद्धिक क्षमताओं का तुलनात्मक अध्ययन करने के बाद शास्त्रकार की इस मान्यता की ही पुष्टि होती है—

आहारनिद्राभयमैथुनं च
सामान्यमेतद् पशुभिः नराणाम् ।
धर्मेण हितेणमधिको विशेषो,
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ।।

अर्थात्—खाने-पीने, निद्रा, विश्राम, भय और उस सुरक्षा तथा कामवासना का जीवन इन चारों दृष्टियों से मनुष्य और पशुओं में कोई अन्तर नहीं है । यदि मनुष्य भी इन्हीं चार में अपनी बुद्धि फँसाये रहता है तो यह उस महान कृति का अपमान है । वह इन सबसे परे धर्मतत्व के अवगाहन के लिये बना है यदि वह अपनी इस विशेषता को चरितार्थ नहीं करता तो उसे भी एक प्रकार का पशु ही कहा जायेगा ।

बुद्धिमान होने के कारण मनुष्य सर्वश्रेष्ठ नहीं है

किसी को कुत्ता कहना—मानवीय संस्कृति में सबसे बुरी गाली है किन्तु इस प्रकृति के योगी में ऐसी अतीन्द्रिय क्षमताएँ परमात्मा ने विकसित की हैं कि वह आने वाली प्राकृतिक विपदाओं, दैवी आपत्तियों की काफी समय पूर्व सूचना दे देने में सक्षम है । इटली का विसूवियस ज्वालामुखी पहली बार फटा उससे सात दिन पूर्व तक कुत्ते भयानक आवाज में रोने-चिल्लाने और मानवीय विनाश की चेतावनी देने लगे थे, किन्तु किसी ने उनकी सम्वेदना को परखा नहीं और लाखों व्यक्ति ज्वालामुखी के लावे में जल मरे । १९६१ में हुए भारत-पाकिस्तान युद्ध की चेतावनी कुत्तों ने पहले ही कर दी थी । गाँवों, शहरों में किसी की मृत्यु की सूचना उस मुहल्ले के कुत्ते पहले ही दे देते हैं ।

मनुष्य शरीर जटिल रसायनों का विलक्षण भाण्डागार है । 'हारमोन्स' के रूप में अब जिन स्त्रावों का वैज्ञानिकों और शरीरशास्त्रियों को ज्ञान हुआ है, उससे तो पुराण युग की कपोल कल्पनायें भी साकार सत्य होने जा रही हैं । आकार वृद्धि में सुरसा एक उदाहरण बन गई है तो हनुमान के 'मशक-समान'—तथा 'तब कपि भयउ पर्वतकारा' की कहानियाँ आए दिन सुनने में आती हैं । हारमोन्स ने इन सम्भावनाओं पर अपनी स्पष्ट मुहर लगा दी है । किन्तु आज इन क्षमताओं का कोई उपयोग कर पाता है क्या ? इस दृष्टि से छोटा-सा 'मिक' ही भला, जो अपने से कई गुने शक्तिशाली शत्रु को भी अपने शरीर से इच्छानुसार कम या अधिक मात्रा में एक विशेष प्रकार की रासायनिक दुर्गन्ध निकालकर भगा देता है । यह मिक वही है जिनकी खाल के कोट पहनने के लिए पश्चिमी लोग लालायित रहते और प्रचुर धन व्यय करते हैं । मनुष्य शरीर में जबर्दस्त रोग निरोधक शक्ति है पर वह बिगाड़ मच्छर तक का कुछ नहीं पाता ।

पानी के अन्दर घण्टों तक बने रहने का वैज्ञानिक आविष्कार मनुष्य अब इस बीसवीं शताब्दी में कर पाया है, पर यह विद्या जल मकड़े को अनादि काल से ज्ञात है । वह पानी के अन्दर ही शैवाल के सहारे अपना मकान बनाती है और उसमें चिरकाल तक ऑक्सीजन प्राप्त करते रहने के लिए सतह से बुलबुले पकड़-पकड़ कर जमा लेती है, यह बुलबुले ही उसे वायु देते रहते हैं और इस तरह मकड़ी वर्षों तक जल के भीतर बनी रहती है । मनुष्य ने आज जो जल में रहने की वैज्ञानिक पद्धति का विकास किया है, उसकी मार्गदर्शक यह जल मकड़ी ही है । फिर भी वह एक सीमित अवधि तक ही जल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में रह सकता है, वहाँ नियमित बस्तियाँ बसाने और आनन्दमय जीवन जीने योग्य परिस्थितियों के विकास में उसे वर्षों लग जाएँगे ।

लम्बे समय तक जीव-जन्तुओं के इस तरह सुव्यवस्थित, विवेकपूर्ण और सुसंस्कृत जीवनक्रम का अध्ययन करने के लिए सुप्रसिद्ध जीवशास्त्री हेनरी बेस्टन ने बहुत ही मार्मिक और भावपूर्ण समीक्षा प्रस्तुत की है—वे लिखते हैं प्रकृति से परे बनावटी जीवन जीने वाला इन्सान इन नन्हें प्रकृति पुत्रों को ज्ञान के चश्मे से देखता, उनकी अपूर्णता पर दया दिखाता, उनकी निम्नतर योनि के जीव होने की विवशता पर तरस खाता है, किन्तु यह उसकी भूल ही नहीं—जबर्दस्त भूल है । वह यह भूल जाता है कि वे हमारी दुनिया से अधिक प्राचीन और एक परिपूर्ण जगत् के प्राणी हैं । वे कहीं अधिक समर्थ, सुव्यस्थित और इन्द्रिय क्षमताओं से सम्पन्न हैं जो हम या तो खो चुके या जिन्हें प्राप्त करने में मनुष्य जाति को अभी सदियों की साधना करनी पड़ेगी । वे न तो हमसे तुच्छ हैं न दया के भिखारी । इस धरती की शोभा और शान में वे हमारे समान सहचर और सहभागी हैं मनुष्य चाहे तो उनसे स्वयं भी बहुत कुछ सीख सकता है ।

मनुष्य तो मकड़ी से भी पिछड़ा हुआ है

चतुरता और कुशलता ही यदि बड़प्पन का पैमाना हो तो फिर इस क्षेत्र में मनुष्य को नहीं, प्रतियोगिता में मकड़ी को प्रथम पुरस्कार मिलेगा ।

मनुष्य को अनेक सम्भावनाओं से जुड़ा मस्तिष्क मिला है सो ठीक है, उसकी शारीरिक, मानसिक क्षमताएँ अद्भुत हैं सो भी ठीक है, पर मात्र इतनी ही उपलब्धि के बलबूते उसे सृष्टि का मुकुटमणि नहीं कहा जा सकता है । शरीरों के आकार की तुलना को यदि ध्यान में रखा जाए तो प्रकृति प्रदत्त अनुदान के अनुपात में मकड़ी को कहीं अधिक भाग्यशाली माना जाएगा । छोटे-से आकार की मकड़ी कितनी अनोखी क्षमताओं से भरी पूरी है ? इसको गहराई से देखा जाये तो दाँतों तले अँगुली दबाकर रह जाना पड़ेगा । इतने छोटे जीव में इतनी अद्भुत विशेषताएँ ? इसी अनुपात से यदि मनुष्य को मिला होता तो वह अबकी अपेक्षा न जाने क्या-क्या कर गुजरता और न जाने अपने को क्या-क्या कहता समझता ?

मकड़ी के इच्छित यातायात में नदी-नाले भी बाधा नहीं पहुँचाते । जब उसे नदी पार जाना होता है तो किसी ऊँचे पेड़ पर चढ़कर अनुकूल हवा की प्रतीक्षा में बैठी रहती है । हवा का रुख ठीक होते ही वह हवा में तैरती हुई अपने मुँह से निकलने वाले जाले के सहारे नदी पार के किसी पेड़ आदि पर जा पहुँचती है । उसका यह पुल मुद्दतों काम देता रहता है और मजे में इधर से उधर आती-जाती रहती है ।

जलाशयों में पानी के भीतर जाला बुनने वाली जलचर मकड़ी थलचर भी होती है । बिना पंखों के उसे नभचर होने का भी अवसर मिल जाता है । इस प्रकार यूरेशियन जाति की मकड़ी जलचर, थलचर और नभचर तीनों वर्गों में अपनी गणना करती है ।

मकड़ी का जाला देखने में तुच्छ वस्तु प्रतीत होता है पर उस पर बारीकी से ध्यान दिया जाय तो प्रतीत होगा कि यह अद्भुत प्रकार की वस्तु है । इस जाले के ऐसे तन्तु भी मिल सकते हैं, जो फौलाद से भी ज्यादा मजबूत हों, इन धागों का पूरी पृथ्वी को लपेट सकने लायक लम्बाई का वजन ४०० ग्राम से भी कम होगा । दृष्टि तथा प्रकाश सम्बन्धी 'आप्टिकल' सूक्ष्म यंत्रों के 'क्रासवायर' इन्हीं तन्तुओं से तैयार किए जाते हैं । अठारहवीं सदी में एक धुनि के धनी ने मकड़ी के जाले से ही हाथ के दस्ताने और पैर के मौजे बनाए थे ।

मकड़ी के रक्त में एक विशेष रासायनिक पदार्थ होता है, एमिनो एसिड यह तन्तु उत्पादक ग्रन्थियों में जाकर एक चिपचिपे गाढ़े द्रव के रूप में परिणत हो जाता है । इन ग्रन्थियों के सिरे पर चार छोटे-छोटे छेद होते है, जिन्हें 'स्पिनेकेट' कहते हैं । इनके भीतर द्रव को धागे के रूप में निकालने और कातने वाले वलयनल लगे होते है । जब मकड़ी ताना बुनती है तब इनमें बड़े तेजी से हरकत आरम्भ होती और बुनाई का कारखाना चालू हो जाता है । किसी-किसी मकड़ी में यह वलयनल ६०० की संख्या तक पाए जाते हैं । बुनने के काम आने वाली रसायन लुगदी को रसायन विज्ञान की भाषा में 'पालिमार' कहा जाता है ।

मकड़ी गुरुत्वाकर्षण के नियम के विरुद्ध ऊपर से नीचे ही नहीं नीचे से ऊपर को भी चल-उछल सकती है । बिना धागे की सहायता के भी उसकी यह ऊर्ध्वगामी क्रिया होती है । पूँछ की तरह धागा पीछे-पीछे तना जाता रहता है और वह न केवल अपना शरीर वरन् इस धागे को भी अपने साथ घसीटती हुई जमीन से छत की ओर ऊर्ध्वगमन करती है ।

मकड़ी का औसत धागा जो हमें दिखाई देता है, एक इन्च का एक लाख भाग ही मोटा होता है । यह भी एक नहीं है । सैकड़ों न दीखने वाले पतले धागों से यह वैसे ही बना है जैसे कि हम बहुत-से धागे बटकर मोटा रस्सा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाते हैं । इतने पर भी यह लचकदार होता है और आसानी से खिचकर सवाया हो सकता है । जाले अक्सर हवा के झोंके या दूसरे कारणों से टूटते रहते हैं । मकड़ी टूटे धागे जोड़ने में बहुत कुशल है, वह टूट-फूट की मरम्मत ऐसी मजबूत से करती है जैसे इलेक्ट्रिक बैल्डिंग वाले धातु खंडों की भी नहीं कर सकते । जोड़ की जगह से धागा फिर दुबारा नहीं टूटता । ध्यानपूर्वक देखने से इस जाले की बुनावट मछली, चिड़ियाँ या हिरन पकड़ने के लिए शिकारियों द्वारा बनाए गए जाल की अपेक्षा कहीं अधिक कुशलता के साथ की गई प्रतीत होती है, जो कीड़ा इसमें एक बार फँसा कि फिर उससे जीवित बच निकलना प्राय: सम्भव ही नहीं होता ।

मकड़ी का जाला रेशम की तुलना में भी कहीं अधिक मजबूत होता है । आस्ट्रेलिया और मैडागास्कर के आदिवासी मकड़ियों के जाले से मछली पकड़ने के जाल तथा तन ढकने के आवश्यक वस्त्र तैयार करते थे, जो सुन्दर भी लगते थे और टिकाऊ भी होते थे । जहाँ-तहाँ रेशम के कीड़ों की तरह मकड़ी को भी उनका जाला प्राप्त करने के लिए पाला गया है पर उसमें खर्च अधिक और आय कम होने से बन्द कर दिया गया ।

शीत ताप सहने की तितीक्षा शक्ति मकड़ी में इतनी होती है जितनी तथाकथित योगी-तपस्वियों में भी नहीं पाई जाती । वह बाईस हजार फुट ऊँची हिमाच्छादित हिमालय की चोटियों पर भी पाई गई है और जमीन के भीतर दो हजार फुट गहरे उन गर्तों में भी जहाँ का तापमान काफी अधिक होता है । उसकी सम्वेदन-शक्ति और स्मरण-शक्ति मनुष्य की तुलना में कहीं अधिक सूक्ष्म होती है ।

प्राणिशास्त्रियों ने संसार के विभिन्न भागों में प्राय: १४ हजार जाति की मकड़ियाँ खोजी हैं । इनमें पानी के भीतर रहने वाली और वाटर प्रूफ जाला तनने वाली मकड़ियाँ भी सम्मिलित हैं । वर्ग की दृष्टि से इन्हें 'लूता' संज्ञा दी जाती है । इनका शरीर—सिर और धड़ दो भागों में बँटा होता है । सिर में आठ आँखें और धड़ में आठ टाँगें होती हैं । उनकी टाँगों के अन्तिम भाग की बनावट और क्रिया कुशलता ऐसी होती है जैसी मनुष्य में हाथ के पंजों की । अपनी सारी क्रिया-कुशलता में मकड़ियाँ इन्हीं टाँगों में जुड़े पंजों से काम लेती हैं ।

मकड़ी के पिछले भाग में कई खोखली घुंडियाँ होती हैं । प्रत्येक घुंडी के मुख पर एक छेद होता है । उनके भीतर एक तरल द्रव्य भरा रहता है । जाला तनते समय मकड़ी इस तरल द्रव्य से भरी घुंडी—कोठरी पर भीतरी दबाव डालती है और वह बाहर निकलने लगता है । हवा लगते ही वह सूख जाता है और धागा बन जाता है । जाले को इच्छानुसार पतला मोटा करने के लिए वह घुंडी के छेद को आवश्यकता के अनुरूप छोटा-बड़ा कर लेती है । कई बार तो यह धागे इतने बारीक होते हैं कि आँखों से सीधी तरह दिखाई भी नहीं पड़ते ।

कुछ मकड़ियाँ अन्धी होती हैं पर उनकी स्पर्श शक्ति तथा सम्वेदना-शक्ति ऐसी अद्भुत होती है कि शरीर से छूने वाले रेडियो कम्पन उसे समीपवर्ती परिस्थितियों का पूरा ज्ञान करा देते हैं, फलस्वरूप उसका क्रिया-कलाप ऐसे ही चलता रहता है मानो आँखें भी उसे प्राप्त हों । गंध-शक्ति उनमें कम होती है पर स्पर्श-शक्ति में वे दूसरे कीड़ों से कहीं अधिक आगे बढ़ी-चढ़ी होती हैं और किसी को छुए बिना उसके विद्युत कम्पनों का अनुभव करके ही वे आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेती हैं ।

मित्रघात और विश्वासघात में मनुष्य ने अब भारी प्रवीणता प्राप्त कर ली है । किसी जमाने में लड़-कटकर ही शत्रुता का परिचय दिया जाता था । अब वे हथियार पुराने पड़ गए । किसी को मीठे व्यवहार से मित्र बनाना और फिर उसका विश्वास प्राप्त करके ऐसी पटक मारना कि वह चित्त-पट हो जाय, यही आज की सर्वप्रचलित आक्रमण पद्धति है । छल के सहारे किसी को आसानी से उदरस्थ किया जा सकता है । मित्र बनाकर शत्रुता का आचरण करना यही मनुष्यों की वह उपलब्धि है, जिस पर वह फूला नहीं समाता और अपनी चतुरता पर गर्व करता है । पशुओं को लाड़-प्यार से पालना और फिर देखते-देखते मित्र से शत्रु बनकर उनके गले पर छुरी फेर देना यही स्वादिष्ट माँसाहार का सरल तरीका है । इस रीति-नीति को वह अपने मित्रों और स्वजन सम्बन्धियों के साथ बरतता रहता है । चतुरता का सबसे अधिक उपयोग मनुष्य उसी प्रयोजन के लिए करते हैं ।

मकड़ी इस क्षेत्र में भी मनुष्य से पीछे नहीं । वह मकड़े को प्रेमपाश में फँसाती है । अपना मतलब जब निकल जाता है तो आँखें बदलने में एक क्षण नहीं लगाती और इस निर्ममता के साथ उदरस्थ कर जाती है मानो उसका उससे कुछ सम्बन्ध तो क्या कुछ परिचय भी न हो ।

मकड़ियाँ अपने सहचरों के प्रति भी निष्ठुर होती हैं । उन्हें अपने अंडों तथा नन्हें बच्चों तक ही लगाव होता है । पति को तो वे आमतौर से खा ही जाती हैं । प्रणयकेलि का आनन्द लेने के उपरान्त वे मकड़े का दूसरा उपयोग स्वादिष्ट आहार के रूप में ही करती हैं । मैत्री और सान्निध्य के नाम पर एक तीर से दो शिकार करने वाली मकड़ियों का यह व्यवहार निर्मम ही कहा जा सकता है । किशोर मकड़ी यदि थोड़ी मजबूत हुई तो अपने ही जाले में रहने वाले भाई-बहिनों को चट कर जाती है ।

नर और मादा मकड़ी अलग-अलग किन्तु पास-पास जाला तानकर रहते हैं और आवश्यकतानुसार दाम्पत्य धर्म निबाहते हैं । मादा मकड़ी भूखी होने पर नर पर आक्रमण कर देती है और उसे ही चट कर जाती है । मकड़ा आमतौर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से इस युद्ध में हारता है । विवाह के साथ मौत के गठबंधन से मकड़ा परिचित होता है । इसलिए वह यथा-सम्भव अपना बचाव करने के लिए सतर्क भी रहता है और जान बचाने के लिए सहचरी भूखी न रहने पाए इसका ध्यान रखता है । मकड़े पहले अपनी कमाई मकड़ी को सौंपते हैं और बची-खुची खाकर ही सन्तोष करते हैं ।

मकड़ी लड़ाकू होती, है और बहादुर । उसमें विष कम नहीं होता । मनुष्य की उस क्रूरता को भी वह चुनौती देती है जिसकी वह आमतौर से बहादुरी और वीरता के नाम पर डींगें हाँकता रहता है ।

उसे आए दिन युद्ध करना पड़ता है और वह जान हथेली पर रखकर इस बहादुरी से लड़ती है कि उससे कई गुने बड़े आकार वाले शत्रु को भी प्राण गँवाने पड़ते हैं । सर्प की तरह मकड़ी में तेज विष भी होता है जिसे वह अपने शिकार को अथवा शत्रु को परास्त करने के लिए आवश्यकतानुसार प्रयोग करती रहती है ।

मनुष्य इस संसार के लिए अधिक उपयोगी है या मकड़ियाँ । यह फैसला होना अभी बाकी है क्योंकि मकड़ियाँ व्यवहार में कितनी ही निष्ठुर क्यों न हों वे संसार में स्वच्छता रखती हैं और ऐसे तत्वों को साफ करती हैं जो मानव जीवन के लिए संकट उत्पन्न करते हैं । मकड़ी की यह उपयोगिता स्पष्ट है । पर मनुष्य तो गंदगी, धूर्तता, दुष्टता और अशान्ति फैलाने के अतिरिक्त कितना कुछ उपयोगी काम करता है । इस संदर्भ में विस्तृत लेखा-जोखा लेने के बाद ही कुछ कहा जा सकेगा ।

मकड़ियाँ देखने में घिनौनी या गन्दी भले ही प्रतीत होती हों पर उनकी उपयोगिता मनुष्य जीवन के लिए असाधारण हैं । वे घर की छतों और कोनों में अपने जाले तानती हैं, उनमें अपनी घर-गृहस्थी बसाती हैं, आहार पकड़ती हैं । इससे बाहर निकल कर वे घर भर में रेंगते रहने वाले उन कीड़ों को खाती रहती हैं, जो आसानी से दिखाई भी नहीं पड़ते किन्तु अपने हानिकारक प्रभाव से मानव जीवन के लिए भयानक हानि उपस्थित करते हैं । यह कीड़े खाद्य पदार्थों में शामिल होकर पेट में चले जाते हैं और संकट खड़ा कर बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं । मकड़ी ही है जो बिना वेतन, बिना पोषण और बिना धन्यवाद पाये हानिकारक कीड़ों से जूझती हुई हमारे लिए सुरक्षात्मक लड़ाई लड़ती रहती है । ब्रिटेन के कृमि विशेषज्ञों का कथन है कि इंग्लैण्ड की मकड़ियाँ जितने कीड़े-मकोड़े हर वर्ष खाती हैं उनकी संख्या इस देश की समस्त आबादी से भी अधिक होती है ।

मकड़ी जैसा नादान कीड़ा लार से जो तार खींचता है वह उससे दो गुने मोटे लोहे के तार से भी ज्यादा मजबूत होता है । वैज्ञानिकों ने अपने एक अनुसंधान में पाया है कि मकड़ी के जाले का तार एक सेन्टीमीटर के दस लाखवें भाग की मोटाई का होता है किन्तु मजबूती में उतने मोटे लोहे के तार से कई गुना ज्यादा होता है । अन्तरिक्ष विज्ञानियों ने अपनी शक्तिशाली दूरबीनों से ज्ञात किया है कि कुछ प्रजाति की मकड़ियाँ अपने जाले को गुब्बारानुमा बनाती हैं, जो उसके मूल स्थान से ३०० किलोमीटर तक की दूरी तय कर लेता है तथा ४००० मीटर की ऊँचाई तक उड़ भी सकता है ।

मकड़ियों की यह कुशलता विज्ञान जगत के लिए एक अनसुलझा रहस्य है ।

हमारी अधूरी जानकारियाँ और मूढ़-मान्यताएँ

हमारे ज्ञान की परिधि कितनी सीमित है—कई बार तो हम मोटी बातें भी नहीं जानते । हम हाथी को सब प्राणियों में बड़ा समझते हैं, पर असल में वह गौरव ह्वेल मछली को प्राप्त है । पक्षियों में गरुड़ नहीं बाज सबसे तेज उड़ता है । आँखें हिरन की बड़ी मानी जाती हैं पर शरीर के अनुपात में घोड़े की आँखें अधिक बड़ी होती हैं । कड़ी धूप में संसार के हर प्राणी को पसीना आ जाता है, पर कुत्ते इसके अपवाद हैं । स्तनधारी प्राणियों के शरीर पर बाल रहते हैं, एक गैंडा ही ऐसा है जो स्तनधारी होने पर भी बिना बाल के रहता है । कमल का फूल सबसे बड़ा माना जाता है, पर असल में सबसे बड़ा फूल जावा सुमात्रा में पाया जाने वाला 'रैफ्लेशिया' का है जिसका घेरा १० फुट और वजन ६ किलोग्राम तक होता है । वृक्षों में वटवृक्ष दीर्घजीवी माना जाता है, पर भारत में पाए जाने वाले पेड़ों में सबसे अधिक दिन जैतून का पेड़ जीवित रहता है ।

मेंढ़क के पैदा होते समय दुम होती है, पर पैर नहीं । पर जब वह मरता है तो पैर रहते हैं, पर दुम नहीं ।

हंस के बारे में किंवदन्ती है कि वह मिले हुए दूध पानी में से दूध पी लेता है और पानी अलग करता है । साथ ही यह भी कहा जाता है कि वह मोती खाता है । यह दोनों ही किंवदन्तियाँ मिथ्या हैं । हंस भी अन्य पक्षियों की तरह कीड़े, बीज आदि का आहार करते हैं ।

स्वातिनक्षत्र में वर्षा होने पर सीप में मोती, केले में कपूर और बाँस में वंसलोचन पैदा होता है यह मान्यता सर्वथा कपोल-कल्पित है, इसमें सच्चाई का एक अंश भी नहीं है । चातक स्वातिनक्षत्र की वर्षा का ही जल पीता है, यह बात भी वे सिर-पैर की है, वह अपनी आवश्यकतानुसार बेरोक-टोक पानी पीता है ।

हममें से कितनों को मालूम है कि मक्खी अपने जीवन काल में औसतन १०, ८०, ३२० अण्डे देती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दस-बीस भाषाओं और एक दर्जन मजहबों के अतिरिक्त कौन जानता है कि संसार में ३०६४ भाषाएँ बोली जाती हैं और ९०० मत-मतान्तर हैं ।

कोयला और हीरा रासायनिक दृष्टि से बिल्कुल सजातीय हैं । उनके अणुओं की चाल में तनिक-सा अन्तर रहने से दोनों के मूल्य में भारी अन्तर पड़ जाता है । कोयले में कठोर कार्बन मिले तो वह 'हीरा' बन जायेगा, किन्तु यदि नरम मिले तो वह पेन्सिलों में काम आने वाला 'सुरमा' मात्र बनकर रह जाएगा । तनिक-सा अन्तर फलितार्थ में कितना बढ़ा-चढ़ा होता है यह देखने ही योग्य है ।

हमारा सामान्य ज्ञान कितना स्वल्प है इस बात का पता इससे चलता है कि अपनी मान्यता प्राप्त जानकारियों में कितनी उपहासास्पद मान्यताएँ भरी पड़ी हैं और कितनी मिथ्या धारणाएँ सँजोए बैठे हैं, पर विवेक को अपनाने के लिए कोई तैयार नहीं है ।

कुत्ते को यदि खरगोश का पीछा करने के लिए छोड़ दिया जाय तो वह दौड़ते-दौड़ते बेदम हो जाने पर भी प्रसन्न दिखाई पड़ेगा । भले ही उसके हाथ खरगोश न लगे । इसके विपरीत यदि उसे कोल्हू में चलने के लिए कहा जाय, भोजन की सुनिश्चित व्यवस्था बना दी जाए तो वह उससे प्रसन्न न होगा । यों विवेक की दृष्टि से खरगोश के पीछे दौड़ने की अपेक्षा कोल्हू में चलने का श्रम अधिक उपयोगी और निश्चित परिणाम देने वाला है । शिकार पकड़ने का परिणाम अनिश्चित है, किन्तु उस उद्योग में लगने पर उसकी भी नियमित व्यवस्था बनी रहेगी । इतने पर भी कुत्ता अपनी आदत के अनुसार शिकार के पीछे भागने की अनिश्चित दौड़धूप ही पसन्द करता है । हमारी कार्यशैली भी लगभग इसी प्रकार की है । अभ्यस्त दौड़-धूप ही रुचिकर लगती है । इससे अच्छी भी कोई उपयुक्त रीति-नीति हो सकती है— प्रस्तुत ढर्रे से लाभदायक भी कोई जीवन-क्रम हो सकता है । इसे सुनने-समझने और जानने-मानने के लिए कोई तैयार होता दिखाई नहीं पड़ता ।

पक्षी—जिन्हें पुरुषार्थ के बिना चैन कहाँ ?

पक्षी इसलिए आकाश में उड़ पाते हैं कि उन्हें हलकेपन का वरदान मिला है । इसलिए वे उन्मुक्त आकाश में स्वच्छन्द विचरण कर सकते हैं और लम्बी उड़ानें भर सकते हैं । मनुष्यों पर भी यही सिद्धान्त लागू होता है, उसने यदि परिवार के उत्तरदायित्वों का वजन न बढ़ाया हो तो छोटी गृहस्थी के हल्के उत्तरदायित्वों का निर्वाह करते हुए समुन्नत जीवन का निर्माण करने की दिशा में बहुत कुछ कर सकते हैं । पर यदि परिवार की संख्या बहुत बढ़ा ली होगी तो उन्हीं का निर्वाह साधन जुटाने में सारी शक्ति चुकती रहेगी और भार का दबाव ऊँचा उठ सकने योग्य कुछ पुरुषार्थ न करने देगा । जब समय और शक्ति बचेगी ही नहीं तो कुछ महत्त्वपूर्ण कदम बढ़ा सकने की बात ही कैसे बनेगी ?

लोभ और मोह के भार जिसके मन को बोझिल किये हुए हैं, उनके लिए रेंगते हुए दिन काटना ही शक्य है महानता के पथ पर चल सकने योग्य ऐसे व्यक्तियों के पास न उमंग होती है, न उत्साह, न साहस । कारण कि पहले से ही तृष्णा का पर्वत जितना भार उनके ऊपर लदा होता है । भौतिक महत्वाकांक्षाओं का वजन भी इतना अधिक होता है कि जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक उड़ानें भर सकना उनके वश से बाहर की बात होती है । पुत्रेषणा, वित्तेषणा, लोकेषणा का भार इतना भारी है कि पृथ्वी का वजन उठाने वाले शेषनाग का भी कचूमर निकल जाए । इस प्रकार मूर्खतापूर्ण भारों से जिन्होंने अपने को लाद लिया है वे भारवाही मनुष्य रोते-कलपते किसी प्रकार मौत के दिन ही पूरे करते हैं । उत्थान और उत्कर्ष की बात न तो वे सोच पाते हैं और न वैसा कुछ करते उनसे बन पड़ता है ।

इस दृष्टि से पक्षी सौभाग्यशाली है कि भगवान ने उनकी संरचना हल्की रखी है, भार मुक्त रखा है । इसी दैवी वरदान के कारण वे उन्मुक्त आकाश में स्वच्छन्द विचरते हैं और जीवन का आनन्द लेते हैं ।

आकाश में उड़ने वाले पक्षी की कार्यक्षमता इस बात पर निर्भर है कि उसकी हड्डियाँ शेष शरीर की तुलना में कितनी हल्की हैं ? ऊँचे उड़ सकने और देर तक आसमान में मँड़राते रहने वाले पक्षियों के अस्थिपिंजर बहुत ही हल्के होते हैं । कई बार तो इन हड्डियों का वजन उनके परों से भी कम होता है, जिनकी हड्डियाँ भारी होती हैं, वे अपने उड़ सकने की क्षमता गँवाते चले जाते हैं । मुर्गा जाति की हड्डियाँ भारी होते जाने की कठिनाई ने ही उन्हें उड़ने की क्षमता से वंचित कर दिया है । शुतुरमुर्ग जैसे-जैसे वजनी होता गया वैसे-वैसे उसकी उड़नशीलता घटते-घटते प्रायः पूरी तरह समाप्त हो गई । पक्षी एक तो यों ही हलके होते हैं । साथ ही उनके भीतर हवा भरी रखने की विशेष थैलियाँ भी होती हैं इन्हीं के कारण उन्हें उड़ सकने की क्षमता प्राप्त होती है ।

हर प्राणी के लिए आकाश में उड़ना सम्भव नहीं हो सकता । इसके लिए शरीर में कुछ विशेष प्रकार की अनुकूलता होनी चाहिए, भारी संरचना वाले शरीरों मे यदि पर उग भी आवें तो भी उन्हें उड़ाने में सफलता प्राप्त करने में भारी कठिनाई अनुभव होगी । प्राणी जितना भारी होगा उसको आकाश में उड़ने के लिए उतना ही प्रबल उत्थापन बल—डाइनैमिक लिफ्ट चाहिये । इसके लिए उसी अनुपात से पंख अधिक बड़े और अधिक मजबूत होने चाहिये । फिर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उन्हें चलाने के लिए वैसी ही सुदृढ़ और भारी माँसपेशियों की जरूरत पड़ेगी । इस चक्र को पूरा करने में प्राणी और भी अधिक भारी हो जाएगा, तब अधिक भार सहने के लिए उसके पंख लगाने उपजाने की प्रणाली में और भी अधिक जटिलता पैदा हो जाएगी । मनुष्य को यदि उड़ना ही हो तो उसे १४० फुट लम्बे पंख लगाने की और उसी के अनुरूप शरीर में शक्ति उत्पादन की जरूरत पड़ेगी ।

शुतुरमुर्ग जाति के सैकड़ों पक्षी उड़ने की क्षमता से मुक्त पंख होते हुए भी इसीलिए वंचित होते चले गए कि उनका अस्थि कंकाल, नाड़ी संस्थान तथा माँस आवरण क्रमशः अधिक भारी होता चला गया ।

पक्षी इसीलिए आकाश में उड़ सकते हैं कि उनका शरीर बहुत हल्की सामग्री से बना होता है । उनके पंख ऐसी कठोर चिकनी स्ट्रीम लाइन्ड सतहों का निर्माण करते हैं, जो वायु के दबाव को चीरती हुई अपने लिए रास्ता बना सकें । पक्षियों की हड्डियाँ खोखली होती हैं, उनमें वायु भरी होती है जिससे इनका भार कम हो जाता है, किन्तु मजबूती में कोई कमी नहीं आती ।

बिल्कुल ठोस पदार्थ की तुलना में उसी वजन के मुड़े हुए एवं ब्रेस्ड पदार्थों की मजबूती कहीं अधिक होती है । इमारतों में काम आने वाले लोहे के गार्डर पूरी तरह चौकोर तथा ठोस न होकर नीचे ऊपर से चपटे और बीच में पतले होते हैं, इससे उनकी मजबूती घटती नहीं बढ़ती है । खेल के मैदानों में विशालकाय झूले ठोस लट्ठों से नहीं खोखले नलों से बने होते हैं । इससे उनकी मजबूती और भी अधिक सुनिश्चित रहती है । पक्षियों की खोखली हड्डियाँ देखने समझने में कमजोर लग सकती हैं पर वस्तुतः वे अपेक्षाकृत अधिक ही मजबूत होती हैं । आघातों को सहने के लिए प्रकृति ने इन हड्डियों के इधर-उधर सहायक पुस्ते भी लगा दिए हैं । चोंच की हड्डी सबसे मजबूत होती है पर वह भी वजन में हल्की ही होती है ।

पक्षी पोले अंडे देते हैं और घोंसलों में उन्हें सेते हैं । यदि उनका भ्रूण पेट में बढ़ता-पलता तो फिर मादा के लिए उतना भार वहन करते हुए उड़ान भर सकना सम्भव न रहता । अंडे को भी पक्षी देर तक गर्भाशय में नहीं रखते । मुर्गी का अण्डा केवल २६ घण्टे ही माता के पेट में रहकर बाहर निकल आता है ।

ऊँचा उठने और ऊपर उड़ने के लिए यह भी आवश्यक है कि उसे तीव्र दृष्टि प्राप्त हो । ऊपर उड़ने वाला ओछी दृष्टि का हो तो उड़ान का न तो आनन्द मिलेगा और न लाभ । दिव्यदृष्टि— दूरदर्शिता के आधार पर ही प्रगतिशीलता—सम्पन्नता और विभूतिसत्ता को किसी उपयोगी काम का बनाया जा सकता है । पक्षियों की तरह ऊँचा उठने वाले मनुष्यों को भी तीव्र दृष्टि का, दूरदर्शिता का अभाव नहीं होता ।

उड़ने वाले पक्षियों की आँखों में तीव्र दृष्टि न हो तो वे उड़ते हुए भूमि या वृक्षों पर मिल सकने वाले आहार, जल, निवास, विश्राम आदि के साधन धुँधली दृष्टि होने पर देख ही नहीं सकेंगे और उनका जीवन जटिल हो जाएगा ।

मनुष्य की आँखें सामने की वस्तु ही देख सकती हैं किन्तु अधिकांश पक्षियों की आँखें इस तरह से बनी होती हैं कि वे अगल-बगल से दो भिन्न प्रकार के दृश्य एक ही समय में साथ-साथ देख सकें । कुछ तो पीछे की ओर भी देख सकते हैं ।

पक्षियों की आँखों पर तीन पलक होते हैं । इससे पुतली की सुरक्षा रहती है । बूँदें पड़ने पर चलती मोटर का 'वाइपर' जिस प्रकार शीशे को साफ करता रहता है, उसी प्रकार पुतली पर चढ़ा हुआ निचला पारदर्शी पलक आँख की सफाई और सुरक्षा करता रहता है । पक्षी की दूरदृष्टि अक्षुण्य रहे इसके लिए यह व्यवस्था आवश्यक भी है । मनुष्य की आँख में सबसे अधिक सम्वेदनशील भाग—मैक्युलर एरिया में लगभग दो लाख कोशिकाएँ होती हैं, किन्तु बाज की आँख की सम्वेदी गर्त फोवीन में कोशिकाओं की संख्या पन्द्रह लाख होती है । इसी अनुपात से उसकी दृष्टि भी साढ़े सात गुनी अधिक होती है । यही बात अन्य पक्षियों के सम्बन्ध में भी है ।

उड़ने में ही नहीं, पानी पर तैरने की सुविधा भी उन्हें इन हड्डियों के हल्केपन के कारण ही प्राप्त होती है । फुदकते हुए—उछल-उछल कर जल्दी चल सकना भी हल्की हड्डियों वाले पक्षियों और प्राणियों के लिए ही सम्भव होता है । शरीर का भारीपन, उड़ना, डुबकी लगाना तो दूर द्रुतगति से दौड़ सकना भी कठिन बना देती है । भारीपन के साथ अस्थि भार, माँस विस्तार कितना ही अधिक क्यों न हो गतिशीलता धरती पर ही घटती जाएगी फिर उड़ना, तैरना, डूबना तो उनके लिए सम्भव ही कैसे हो सकता है, जलचरों की शरीर रचना में भी यही तथ्य काम करता है, माँस की तुलना में उनकी भी हड्डियाँ हल्की होती हैं । उनके भीतर का पोलापन और लचक के कारण ही जल जीवन सम्भव होता है, उनकी साँस लेने की प्रणाली भी ऐसी होती है, जिससे वे वायु के दबाव से बच सकें ।

मनुष्य और पक्षियों की तुलना करते हुए गति की मन्दता और तीव्रता का विश्लेषण माँसपेशियों की स्थिति पर भी निर्भर है । पक्षियों की अधिकांश पेशियाँ उनकी छाती में होती हैं, जबकि मनुष्य शरीर का अधिकांश माँस कमर से नीचे ही लदा रहता है ।

चाहे ऊपर उठना हो, चाहे गहराई में उतरना हो, दोनों ही दिशाओं में महत्वपूर्ण प्रगति करने की आकांक्षा वालों को नभचरों और जलचरों की तरह हल्का होना चाहिये, जिसका भौतिक भार जितना हल्का होगा उसके लिए महती प्रगति का पक्ष उतना ही अधिक प्रशस्त रहेगा ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विलक्षण विभूतियों से सम्पन्न यह जीव-जगत

प्रकृति ने सारी विशेषताएँ मनुष्य को ही नहीं सौंप दी हैं । अन्य प्राणियों को, प्रकृति के अन्यान्य घटकों को भी उसने जीवनयापन की सामान्य कुशलताओं के अतिरिक्त ऐसी विभूतियाँ भी प्रदान की हैं, जिनके सहारे वे विपत्ति के समय आत्मरक्षा कर सकें ।

पशु-पक्षियों को प्राय: दुर्गतिगत प्रतिकूलताओं में ही जूझना पड़ता है । उन्हीं से बचाव सम्भव हो सके तो समझना चाहिए कि आधी विपत्ति टल गई । आहार-विहार के साधन मनुष्य की अपेक्षा उन्हें पहले से ही अधिक मिले हुए हैं । गाय, घोड़ा आदि की त्वचा में सटा हुआ जो बालों का कलेवर होता है, वह उन्हें सर्दी-गर्मी से बचाता रहता है । मनुष्य का जो प्रयोजन कपड़ों में सधता है उसे वे इन बालों के सहारे ही चला लेते हैं । पक्षियों का सारा शरीर छोटे-छोटे पंखों से आच्छादित रहता है । उड़ने वाले पंखों से वे उड़ने-चलने का काम लेते हैं पर छोटे पंख जो सारे शरीर पर सटे होते हैं, उन्हें सर्दी-गर्मी का कष्ट नहीं सहने देते । जिनके शरीर पर बाल कम होते हैं उनकी त्वचा मोटी होती है । इसके नीचे भी एक चर्बी की परत रहती है । ऊँट रेगिस्तानी जानवर है उसकी अंग संरचना ऐसी है कि एक बार भरपेट पानी पी लेने पर उसी से लम्बी अवधि बिना पानी के काट लेता है । पानी न मिलने पर भी ऊँटनी अपने बच्चे को दूध पिलाती रहती है । पशु-पक्षियों के लिए प्रकृति ने उनका आहार उनके कार्य क्षेत्र में ही विपुल मात्रा में फैला रखा है । छाया के लिए गुफाएँ, झाड़ियाँ, पेड़ों के कोंतर उन्हें उपलब्ध हैं ।

भूकम्प जैसी प्रकृतिगत उथल-पुथल होती है तो उनकी अतीन्द्रिय क्षमता साथ देती है और पूर्वाभास मिल जाने से वे संकट की घड़ी में असुरक्षित स्थान छोड़कर ऐसी जगह चले जाते हैं जहाँ उन्हें संकट का सामना न करना पड़े । उनकी इन गतिविधियों को देखकर मनुष्य भी अपनी सुरक्षा का प्रबन्ध कर लेते हैं ।

गणितीय गणना के आधार पर प्राकृतिक हलचलों की भविष्यवाणी का विज्ञान अभी अत्यन्त अविकसित है । इस दृष्टि से पशु-पक्षी मनुष्य से आगे हैं । जीव वैज्ञानिकों का कहना है कि पशु-पक्षियों की छठी ज्ञानेन्द्रिय काफी विकसित होती है, जिससे पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र में हुए परिवर्तनों को वे तत्काल जान लेते हैं । किसी समय मनुष्य में भी यह छठी इन्द्रिय काफी विकसित स्थिति में थी किन्तु अन्य ज्ञानेन्द्रियों पर अत्यधिक निर्भरता के कारण यह क्रमश: क्षीण होती गई और अब तो सर्वथा निष्क्रिय हो चली है । फिर भी कभी-कभी किन्हीं मनुष्यों में इस छठी ज्ञानेन्द्रिय की सक्रियता के उदाहरण आज भी यत्र-तत्र मिलते रहते हैं । मैनचेस्टर विश्वविद्यालय के जीववैज्ञानिकों ने इस छठी ज्ञानेन्द्रिय को 'चुम्बकीय ज्ञानेन्द्रिय' बताया है । प्रयोगों के आधार पर पता चला है कि मनुष्य भी अन्य जीवधारियों की भाँति पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र से दिशा ज्ञान प्राप्त कर सकता है । वैज्ञानिकों के अनुसार मनुष्य इस चुम्बकीय शक्ति का उपयोग अपने दैनिक जीवन में करता रहता है । यदि वह उसे विकसित करे तो उसके उच्चस्तरीय लाभों से भी लाभान्वित हो सकता है ।

इस चुम्बकीय शक्ति की उपस्थिति का पता लगाने के लिए कुछ छात्रों को आँखों पर पट्टी बाँधकर घुमावदार रास्तों से ५२ कि० मी० दूर ले जाया गया । छात्र आँखों पर पट्टी बाँधे ही सही मार्ग बताते हुए विश्वविद्यालय तक लौट आए । दुबारा ८० किलोमीटर दूर ले जाए जाने पर भी उन्होंने वापसी के मार्ग में कोई भूल नहीं की । लेकिन जब उनके सिर पर चुम्बक रख दिए गए तो उनका दिशा ज्ञान लुप्त हो गया । पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र को मापना उनके लिए सम्भव नहीं रहा । वैज्ञानिकों का कहना है कि शरीर में चुम्बकीय शक्ति की उपस्थिति का अर्थ है कि इसमें कहीं न कहीं चुम्बकीय ज्ञानेन्द्रिय (कम्पास) भी अवश्य ही होना चाहिए । भले ही उसकी जानकारी आज नहीं कल मिले । यह क्षमता मनुष्य में होती है, इसकी जानकारी भी वैज्ञानिकों को जीवजगत् से ही मिली है ।

जहाजों पर काम करने वालों के लिए चूहे बहुत मददगार होते हैं । जहाज से चूहों को बाहर जाते देखकर वे लोग जहाज खड़ा कर देते हैं और सवारियों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचा देते हैं । चूहों के जहाज छोड़ने का अर्थ है कि निकट भविष्य में किसी तूफान या दुर्घटना की सम्भावना है । ऐसे में वे बचाव का पूर्व संकेत दे देते हैं ।

गृहस्वामी अथवा घर के किसी सदस्य के रुग्ण हो जाने पर पालतू कुत्ते दु:खी हो जाते हैं । कुत्ते को यह आभास भी हो जाता है कि यह बीमार व्यक्ति जीवित बचेगा अथवा नहीं । यदि उस व्यक्ति के जिन्दा बचने की सम्भावना नहीं होती है तो कुत्ता उसके कमरे के बाहर बैठकर रोने लगता है और आस-पास चक्कर काटता रहता है । अक्सर देखा गया है कि ऐसे रोगी प्राय: उसी रात स्वर्ग सिधार जाते हैं ।

वर्षा आने के पूर्व छोटी काली चींटी अपने अंडे लेकर ऊँचे स्थानों पर चली जाती है, मेंढक की टर्राहट सुनकर ग्रामीण कृषक शीघ्र ही वर्षा होने का पूर्व अनुमान लगा लेते हैं । घरेलू चिड़ियाँ जब पानी में नहाने लगती हैं तो समझा जाता है कि दो-चार दिनों में वर्षा होने वाली है । लोमड़ी अपना बिल सूखे और स्वच्छ स्थान पर बनाती है । वर्षा की सूचना उसे दो-एक दिन पूर्व ही मिल जाती है । इस प्रकार समय रहते वह अपने बच्चों को दूसरे सुरक्षित बिलों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में पहुँचाकर निश्चिन्त हो जाती है । कुछ लोग चील को आकाश में मँड़राते देखकर भी वर्षा की पूर्व जानकारी ले लेते हैं । मधुमक्खी को वर्षा होने की पूर्व सूचना कुछ घण्टों पूर्व ही प्राप्त हो जाती है और वे छत्ते से निकलकर उसके चारों ओर मँड़राने लगती हैं । धीरे-धीरे उनके चक्कर लगाने का क्षेत्र विस्तृत होता जाता है और अन्ततः वे आँखों से ओझल हो जाती हैं । वर्षा समाप्त होने पर वे पुनः अपने छत्ते में लौट आती हैं । ग्रामवासियों के लिए आने वाली वर्षा की यही संकेत पर्याप्त होता है ।

पहाड़ी हिरणों को भी बर्फीले तूफान आने के काफी पहले ही उनका पूर्वाभास हो जाता है । इसी प्रकार जंगली चिड़ियाँ तूफान आने की पूर्व सूचना जोरों से चहचहाकर शोर मचाकर देती हैं ।

चूहों का बिलों से निकलकर इधर-उधर भागने लगना भूकम्प की पूर्व सूचना का ठोस संकेत है । इसी तरह समुद्री मछलियाँ भी भूकम्प आने के पहले विशेष हरकतें करने लगती हैं । ऐसा पहले कई बार हो चुका है कि इन जीवों की हलचलों से सावधान हो असंख्यों ने अपनी जान बचायी है ।

ऐसा कहा जाता है कि महामारी फैलने के समय यदि गौरेया घर या गाँव छोड़कर भाग जाय तो मृत्यु की सम्भावनाएँ सुनिश्चित हैं । इसी प्रकार चेचक आदि फैलने पर जब तक गौरेया आँगन में आकर चहचहाती है और चारा देने पर चुगती रहती है लोग आश्वस्त रहते हैं कि संक्रमण का किसी प्रकार कोई खतरा नहीं, जो भी व्याधि है, वह शीघ्र ही टल जाएगी ।

भारतीय प्राणिविज्ञान सर्वेक्षण, कलकत्ता के पक्षी विभाग के विशेषज्ञ डॉ० सुधीन सेन गुप्त ने मैना (एक्रीडोयरेस ट्रिस्टीस) पक्षी पर अपने दस वर्षीय शोध कार्य के दौरान एक विलक्षण बात का पता लगाया है । उनके अनुसार मैना को मौसम का पूर्व ज्ञान होता है और इसकी सूचना वह १२ से ३६ घण्टे पूर्व दे सकती है । यदि वर्षा अथवा तूफान आने की सम्भावना होती है तो इस कालावधि में वह जोर-जोर से चहकने लगती है और मौसम की खराबी का संकेत करती है ।

अध्ययन में पाया गया कि अप्रैल एवं मई के महीनों में भी दिन के समय में मैना थोड़े-थोड़े समयान्तराल पर उसी प्रकार की अप्रत्याशित एवं उदात्त चहक लगाती है । सितम्बर में भी अपेक्षाकृत तेज आवाज लगाते पाई गई, किन्तु दोनों आवाजों में काफी भिन्नता होती है ।

अप्रैल-मई के दौरान वह किकू-किकू, किकू-किकू की आवाज लगाते पायी गई जबकि सितम्बर में पिकू-पिकू । अध्ययन में पहली प्रकार की आवाज प्रजनन से सम्बद्ध पाई गई जबकि दूसरी मौसम सूचक ।

इस प्रकार की आवाजें मैना कुछ मिनटों के अन्तराल के बाद एक मिनट तक लगातार करती रहती है । किन्तु वर्षा या आँधी आने के बाद इस प्रकार की आवाज करना वह बन्द कर देती है ।

प्रयोग के दौरान डॉ० सेनगुप्त ने कुछ मैनाओं को पृथक्-पृथक् कमरों में बन्द कर उनकी आवाजों का अध्ययन किया तो उन्होंने पाया कि बन्दी अवस्था में भी वे उसी प्रकार की आवाजें करती हैं जैसी उन्मुक्त अवस्था में, अर्थात् इससे उसके मौसम सम्बन्धी पूर्वानुमान पर कोई अन्तर आता नहीं देखा गया ।

मात्र पशु-पक्षी ही नहीं, जीव-जगत के अंग वनस्पति समुदाय में भी यह विशेषता पाई जाती है । वर्षा होने न होने सम्बन्धी भविष्यवाणियाँ अब तक जिन आधारों पर की जाती रही हैं वे बहुधा तीर-तुक्का सिद्ध होती रही हैं । किन्तु प्रकृति के प्रांगण में उगने वाले कई वृक्ष-वनस्पति ऐसे पाए गए हैं जिनकी भविष्यवाणियाँ हमेशा अचूक सिद्ध होती है । रालामण्डल के आस-पास बहुतायत से पाई जाने वाली सुनहरी लिली (ग्लोरिओसा सुपरबा-ग्लोरी लिली) में अत्यन्त मनोहर लाल-पीले फूल खिलते हैं । वर्षा न होने वाली हो तो पौधे में केवल पत्तियाँ ही दृष्टिगोचर होती हैं किन्तु वर्षा होने की खुशखबरी देने के लिए ये कलियों का रंगीन लबादा ओढ़ लेती हैं । कुछ ऐसे ही गुण-धर्म सुगन्धित पत्तियों वाले मधुमालती नामक वृक्ष में पाए जाते हैं । इसकी शाखाएँ कलियों के गुच्छों से हमेशा लदी हुई रहती हैं । बादलों के घिर आने पर इसकी बन्द कलियों का खिल जाना वर्षा के शुभागमन की सूचना देता है, किन्तु बादलों की नीयत यदि कहीं अन्यत्र जाकर बरसने की हो तो ये उनका मनोभाव झट ताड़ जाती हैं और उनके स्वागत में अपनी प्रसन्नता नहीं प्रकट करतीं । यदि गठालू (डायोस्कोरिया) नामक बेल के ऊपरी कन्दों की वृद्धि बन्द हो जाए तो समझा जाता है कि आगे वर्षा नहीं होगी । जिस साल वर्षा बिल्कुल नहीं होने से सूखा पड़ने की सम्भावना हो उस वर्ष तो इसके कन्द पहले से ही भूमि पर टपक-टपककर शोक-सन्तप्तों की तरह दम तोड़ने लगते हैं ।

चेतना का आलोक सर्वत्र संव्याप्त है । प्राण स्पन्दन सृष्टि के कण-कण में है । मनुष्य सर्व सामर्थ्य सम्पन्न माना जाता है तो क्या हुआ ? उससे भी विलक्षण सामर्थ्य जीवजगत् में उसके सहचरों-सहजीवियों में विद्यमान है । इस प्रसुप्त सामर्थ्य को साधना द्वारा मानव भी जगा एवं विकसित कर सकता है । यह चमत्कार या कोई सिद्धि नहीं, एक सहज प्राप्त हो सकने वाली विभूति है जो पुरुषार्थ द्वारा निश्चित ही सुलभ हो सकती है, ऐसा मत ऋषियों का ही नहीं, आधुनिक वैज्ञानिकों का भी है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काल और दिशा सम्बन्धी प्रकृति प्रेरणा

प्रकृति की इच्छा है कि हर प्राणी अपने नियत कार्य नियत समय पर सम्पन्न किया करे । नियमितता संसार का एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है । सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी, ग्रह-उपग्रह नियत निर्धारित गति से नियमपूर्वक अपना कार्य करते हैं और निर्धारित कक्षा पर घूमते हैं । मौसम अपने क्रम में बदलते हैं । वृक्ष अपने समय पर फलते-फूलते हैं । इसके लिए इन नासमझ या कम समझ वालों को भी प्रकृति ने ऐसी घड़ी दी है, जिसके सहारे वे अपना हर काम नियत निर्धारित समय पर निपटाते हैं । बुद्धिमान समझे जाने वाले मनुष्य के लिए यह बुरी बात है कि अव्यवस्थित और अनियमितता का जीवन-क्रम अपनाकर अपनी स्वाभाविक प्रगति को कुंठित करे और प्रकृति की विधि-व्यवस्था से टकराकर अनेक तरह के त्रास संताप भुगते ।

जिधर ही नजर पसारकर हम देखते हैं उधर ही समय की पाबन्दी और नियमितता का बोल-बाला दीखता है । सृष्टि का हर प्राणी अपनी नियमित क्रम पद्धति के आधार पर जीवनयापन करता है ।

चींटियाँ अपना विवाह रचाने के लिए वर्ष में एक निश्चित दिन ही अपने बिलों से निकलती हैं और उस दिन उनका यह एक ही धन्धा रहता है । वर-वधू की तलाश से लेकर सुहागरात मनाने तक के सारे रस्म-रिवाज इस एक ही दिन में निपट जाते हैं और चींटियाँ अंडे देने, उन्हें सेने के आगामी क्रिया-कलाप में दत्त-चित्त हो जाती हैं । यह क्रम हर वर्ष चलता है । चींटियों का पंचांग, कलेण्डर और मुहूर्त्त बिना किसी भूल-चूक के ठीक पुनरावृत्ति करता रहता है, यह आश्चर्यजनक है ।

मधुमक्खी, तिलचिट्टे, केंकड़े, चूहे, चींटी, मक्खी आदि की दिनचर्या उनके निर्धारित समय क्रम से ही आरम्भ होती है । कृत्रिम प्रकाश या कृत्रिम अन्धकार उत्पन्न करके उनकी अन्त:चेतना को भुलावे में डालने के वैज्ञानिकों ने चतुरतापूर्ण प्रयोग पूर्ण किए पर उनमें से एक भी सफल न हो सका । इन कीड़ों ने अपने कार्यक्रम अपनी अभ्यस्त चेतना के आधार पर ही आरम्भ किया और चतुरता के साथ रचे गए भुलावे में फँसने से इन्कार कर दिया । फ्रांस के वैज्ञानिकों ने एक प्रयोग किया कि मधुमक्खियों को सवा आठ बजे शरबत का घोल चाटने के लिए दिया गया । कुछ दिनों में वे समय के सम्बन्ध में पूर्ण अभ्यस्त हो गईं । अब उस छत्ते को हवाई जहाज में अमेरिका भेज दिया गया । पैरिस के सवा आठ बजे—अमेरिका में रात के सवा तीन बजे होते हैं । साधारणतया उस समय मक्खियाँ विश्राम किया करती हैं पर देखा गया कि रात के ठीक सवा तीन बजे उन मक्खियों के छत्ते में भिनभिनाहट शुरू हुई और वे पास में रखे हुए शरबत के घोल पर टूट पड़ीं । तीन हजार मील की दूरी मक्खियों की समय ज्ञान सम्बन्धी चेतना को भुलावे में नहीं डाल सकी ।

जर्मनी में एक प्रयोग मधुमक्खियों को दिशा भूल करने का किया गया । आरम्भ में उन्हें नियत स्थान पर बहुत दिनों तक भोजन दिया जाता रहा । वे नित्य वहीं आहार पाने की अभ्यस्त हो गईं । अब उनका भोजन कुछ ही दूर पर विपरीत दिशा में रखा गया । मक्खियाँ नियत स्थान पर ही भूखी मँड़राती रहीं और अन्य दिशा तलाश करने की जल्दी उन्होंने नहीं दिखाई ।

समुद्र में नियत तिथियों पर ज्वार-भाटे आते हैं और कुछ घण्टों के अन्तर से जल नित्य ऊँचा-नीचा होता है, लगता है समुद्र को भी घड़ी-घण्टों और तिथियों की जानकारी किसी ने सिखा दी हो ।

कलियों और पुष्पों का रात में सिकुड़ना और दिन में फैलना, रात में कम और दिन में अधिक बढ़ना—इस बात का प्रतीक है कि उन्हें समय का ज्ञान रहता है । पक्षियों का संध्या होते ही घोंसले में लौटना, प्रभात होते ही उड़ जाना, प्राय: सायंकाल का चहचहाना बताता है, मानो उन्होंने अपनी कलाई में घड़ी बाँध रखी हो । उड़ते हुए अमुक दिशा में जाना और लम्बी उड़ान के बाद बिना भटके अपने घर घोंसले पर आ जाना इस बात का प्रमाण है कि उनका दिशा ज्ञान असन्दिग्ध होता है, जिसके आधार पर वे आकाश में भी अपना मार्ग निश्चित करते हैं । मनुष्य को समय ज्ञान के लिए घड़ी चाहिए और दिशा ज्ञान के लिए कम्पास । पर इन पक्षियों की चेतना में ही मानो प्रकृति ने घड़ी और कम्पास जैसी क्षमता सहज ही जोड़ दी है ।

काल और दिशा का सही ज्ञान मनुष्य की अपेक्षा पशु-पक्षियों की चेतना में कहीं अधिक विकसित पाया जाता है । पेड़-पौधे समय पर उगते और फूलते फलते हैं । विपरीत ऋतु में या तो वे उगते ही नहीं, उगें भी तो अविकसित स्थिति में ही सूख तथा मुरझा जाते हैं ।

पक्षियों की लम्बी यात्राएँ हर साल होती हैं । ऋतु और काल की उन्हें समुचित जानकारी होती है और यह पता रहता है कि कब, कहाँ आहार-विहार की असुविधा रहती है और कहाँ सुविधा, तदनुसार वे अपना प्रव्रजन कार्यक्रम निर्धारित करते हैं । जाने और लौटने का समय इतना सुनिश्चित होता है मानो पंचांग, कलेण्डर देखने और मुहूर्त्त शोधन में उन्होंने ज्योतिषियों से बाजी लगा रखी है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कई पक्षी तैरने और उड़ने में समान रूप से पारंगत होते हैं । कुछ के लिए रात भी दिन की ही तरह सुविधाजनक होती है । इंग्लैण्ड के पक्षियों में एक जाति ऐसी है, जो लम्बे पर्यटन पर चली जाती है, किन्तु उनके बच्चे घोंसले में ही रह जाते हैं । वे जब बड़े होते हैं तो अपने अभिभावकों के रास्ते ही उड़ते हैं और वहीं जा पहुँचते हैं, जहाँ उनके जन्मदाता निवास कर रहे होते हैं । पर्यटक पक्षी यों झुण्ड बनाकर उड़ते हैं और उनकी यात्रा वर्ष में नियत समय पर आरम्भ होती है । इसी प्रकार उनके वापस लौटने का भी समय होता है । डॉ० सेवर ने एक योरोपीय पक्षी कार्वल को इसके विपरीत आचरण करते देखा है, वह लम्बी उड़ानें अकेला ही भरने में प्रसन्नता अनुभव करता है ।

घरों में रहने वाली गौरेया चिड़ियाँ खेतों में अनाज की फसल पकते ही गाँवों की ओर उड़ जाती हैं और जब तक वहाँ दाने मिलते हैं, तब तक उधर ही गुजारा करती हैं । फसल खत्म होने पर वह पुनः अपने घर बसेरों में लौट आती हैं ।

परिव्राजक पक्षियों के पैरों में ऐसे छल्ले पहनाकर उन्हें छोड़ा गया, जिन पर उनके समय निवास आदि का वर्णन अंकित था । अन्य देशों के लिए चले जाने पर जब वे पकड़े गए तो पता चला कि वे दो हजार से लेकर २५ हजार मील तक की यात्रा कर चुके हैं । वे अपना उड़न पथ ऐसा बनाते हैं, जिससे दुर्गम पर्वतों से टकराना भी न पड़े और रास्ता भी सीधा बैठे । इनकी उड़ान २४ घण्टे में २५० मील अर्थात् १० मील प्रति घण्टा आँकी गई है । इसमें उनके बीच का विश्रामकाल भी शामिल है ।

उत्तरी ध्रुव में असह्य सर्दी की ऋतु आने से पूर्व उस क्षेत्र के हंस तथा मुर्गाबियाँ उड़कर उष्ण कटिबन्ध के देशों को चल देती हैं । साइबेरिया के पक्षी भारत में उड़ आते हैं और ऋतु सम्बन्धी असह्यता दूर होते ही पुनः अपने-अपने देशों को लौट जाते हैं ।

प्रशान्त सागर की सालमन मछली वसन्त ऋतु आते ही अपने उपयुक्त नदियों में उलटी चल देती है और प्रजनन कार्य में निरत होती है । अंडे वह समुद्र में नहीं नदियों में ही देती है ।

सामौन द्वीप में पलोले नाम का कीड़ा अक्टूबर, नवम्बर की खास तारीखों में ही अंडे देता है । किसान सब काम छोड़कर उन दिनों उन अंडों को साफ करने में लगते हैं और इस प्रकार कृषि रक्षा का एक आवश्यक काम निपटाते हैं ।

कैलीफोर्निया और औरेगोन के निकट समुद्रतट पर पाई जाने वाली मछली वसन्त ऋतु के शुक्ल पक्ष में ही अंडे देती है ।

महाबलीपुरम से मद्रास जाते समय कोई सात मील आगे एक छोटा-सा नगर है—पक्षितीर्थम् । यहाँ ५५० सीढ़ियाँ चढ़ने पर पहाड़ी पर अवस्थित एक मन्दिर है, जिसमें अनेकों देवी-देवताओं की मूर्तियाँ रखी हैं ।

मन्दिर के पिछवाड़े लगभग १५० फुट लम्बी और पन्द्रह फुट चौड़ी ढलवाँ चट्टान है । इस पर मध्याह्न को ११-१२ बजे के बीच दो सफेद गिद्ध पक्षियों का जोड़ा नित्य ही मन्दिर का प्रसाद ग्रहण करने आता है, प्रतिमाओं के दर्शन से भी कहीं अधिक उत्सुकता दर्शकों को इन पक्षियों को देखने की होती है । अस्तु वे बड़ी संख्या में दस बजे तक इकट्ठे हो जाते हैं ।

दर्शकों की भारी भीड़ के बीच मन्दिर का पुजारी दोनों हाथों में दो प्रसाद की कटोरियाँ लेकर खड़े हो जाते हैं । सफेद गिद्ध नियत समय पर निश्चित मुद्रा में आते हैं और चोंचों में प्रसाद भरकर पुनः आकाश में उड़ जाते हैं ।

किंवदन्ती के अनुसार ये पक्षी कोई दो पुण्यात्मा हैं जो नित्य वाराणसी गंगा स्नान करने जाते हैं, वहाँ से लौट कर यह प्रसाद ग्रहण करते हैं और फिर कहीं एकान्त में जाकर ध्यान भजन करते हैं । जो हो, दो विलक्षण पक्षियों का नियत समय पर नियत स्थान पर नियमित रूप से भोजन करने आना आश्चर्यजनक तो है ही ।

काल और दिशा के सम्बन्ध में अन्य प्राणधारी अत्यन्त अनुशासनप्रिय हैं, वे प्रकृति की प्रेरणा की तनिक भी अवज्ञा नहीं करते फलस्वरूप उनकी जीवन प्रक्रिया सरलतापूर्वक चलती रहती है । एक हम हैं, जिन्होंने न केवल नियमित दिनचर्या की उपेक्षा करके निशाचरी नीति अपना रखी है । न खाने का समय, न सोने का जब जो जी में आया करने लगे । इसी प्रकार हमने दिशा ज्ञान भी भुला दिया है । हमारे जीवन की रीति-नीति दिशा क्या होनी चाहिये ? किन कर्त्तव्यों पर सुदृढ़ रहना चाहिये और किस सन्दर्भ में क्या कदम उठाना चाहिये ? यदि हमें ज्ञान रहा होता तो उत्कृष्ट स्तर का क्रिया-कलाप अपनाकर प्रकृति की प्रेरणा के सहारे प्रगति के पथ पर चलते हुए न जाने कितनी मंजिल पार कर चुके होते ।

महाकाल का गतिचक्र और अनुशासन

समयानुसार हर काम को नियत नियमित रूप से करना—यह ऐसा अनुशासन है जिसे पालन करने से ही प्राणियों की जीवनचर्या व्यवस्थित रूप में चलती है, जो इसमें व्यतिरेक करते हैं—प्रकृति के शासन में अराजकता उत्पन्न करने की धृष्टता करते हैं, वह अपराधियों की तरह दण्डित होते रहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ग्रह-नक्षत्रों की अपनी गति, दिशा, परिधि और विधि-व्यवस्था है । जब तक वह निर्धारण ठीक चलता है, उनका अस्तित्व बना रहता है । जैसे ही पदार्थ जगत् का कोई घटक अथवा प्राणिजगत् का जीवधारी व्यतिरेक करने की धृष्टता करता है वैसे ही उसे अनुशासनहीनता का दण्ड भुगतना पड़ता है ।

इन अनुशासनों में समय का परिपालन एक ऐसा अंकुश है जिसे स्वीकारने में ही खैर है । नियमितता का अर्थ है हर काम को यथासमय बिना आलस्य, प्रमाद अपनाए सम्पन्न करना । इसी आधार पर समस्त सृष्टि क्रम चल रहा है । प्रकृति ने इस परिपालन के लिए हर किसी को एक ऐसी घड़ी दी है, जिसके सहारे उसे न केवल समय का सही-सही ज्ञान होता रहे, वरन् ठीक समय पर ठीक काम करने की प्रेरणा भी उठती रहे ।

जीवधारी इसी आधार पर अपनी सुनियोजित जीवनचर्या चलाते हैं । हर प्राणी की काया भी अपने नित्यकर्म एवं प्रवाह निर्धारण में इसी प्रकाश का अवलम्बन किए रहती है । उसकी स्थिरता एवं प्रगति का यही प्रधान आधार होता है । व्यतिक्रम जहाँ भी, जिस अनुपात में भी प्रस्तुत होता है, वहाँ उसी परिमाण में विग्रह एवं संकट सामने आ खड़ा होता है । कालचक्र का अनुगमन, नियमितता का परिपालन किस प्रकार इस समूची सृष्टि व्यवस्था के अन्तराल में चल रहा है और प्राणिवर्ग किस प्रकार उस अनुबन्ध को शिरोधार्य करके चल रहा है । यह दृष्टव्य है ।

घड़ियाँ तो आपने कई प्रकार की सुनी होंगी । बहुत-से लोग धूप और तारों की स्थिति देखकर समय का अन्दाजा लगाते हैं । ठीक है मनुष्य के पास बुद्धि है, वह सोच सकता है । आजकल तो बिना घड़ी के आपका काम ही नहीं चल सकता, समय का ठीक-ठीक हिसाब रखने के लिए मनुष्य घड़ियों का निर्माण और उसमें सुधार करता रहा है । आज उसके पास ऐसी घड़ियाँ हैं, जो लाखों साल में भी एकाध सैकिण्ड से अधिक की गलती नहीं करतीं, परन्तु पेड़-पौधे और अन्य जीवधारी कैसे समय का हिसाब रखते हैं और उन्हें यह कैसे पता लगता है कि अब दिन का कौन-सा समय है ? इसका उत्तर जानने के लिए बहुत-से जीव वैज्ञानिक अनुसन्धान कर रहे हैं ।

यह सर्वविदित है कि कुछ जीवधारी रात की अपेक्षा दिन में अधिक क्रियाशील होते हैं । सत्य तो यह है कि सम्भवत: ऐसा कोई भी पौधा अथवा जीवधारी नहीं होगा जिसके जीवन का कार्यक्रम एकदम घड़ी की सुइयों के समान न होता हो ।

समझा जाता है कि जीवित पदार्थों की क्रिया प्रतिदिन जीवाणुओं पर प्रभाव डालने के कारण होती होगी । एक मान्यता यह भी है कि तापक्रम अधिकांश जैविक प्रक्रियाओं की गति को प्रभावित करता है । यह सोचना असंगत नहीं होगा कि दिन और रात्रि के चक्र भी जीवाणुओं की क्रियाशीलता में विविधता लाते हैं ।

बात इतने तक ही सीमित नहीं है । गहन अनुसन्धान इस निष्कर्ष पर पहुँचा है कि जीवाणुओं, पशु तथा पौधों में निश्चित रूप से एक जैविक घड़ी पाई जाती है । जैविक घड़ी कुछ इस प्रकार की वस्तु है, जो जीवधारियों तथा पौधों में निहित होती है । इस घड़ी द्वारा जीव-जन्तु अपने वातावरण के तालबद्ध परिवर्तन को पूर्वाभासित कर लेते हैं तथा उसी के अनुसार अपने को ढाल लेते हैं ।

यह बात तो हम अपने अनुभव से भी जानते हैं कि समय की गतिविधि का ज्ञान आन्तरिक सम्वेदना से ही जाना जाता है न कि सुई वाली घड़ी से । समयानुसार ही शरीर की क्रियात्मक विधियों में परिवर्तन होते हैं । हमारी नाड़ी की गति, गुर्दों की क्रिया, शरीर का तापक्रम यह सब एक दैनिक लयबद्धता दर्शित करती है । यह लयबद्धता किसी भी तरह से हमारे वातावरण के परिवर्तन की सहज क्रिया नहीं है ।

जैविक घड़ियों का अध्ययन निम्न जाति के जन्तुओं में अधिक सरलता से किया जा सकता है, यह अनुसन्धान इन दिनों संसार की कई प्रयोगशालाओं में किया जा रहा है ।

फलमक्खी (ड्रेसोफिल) अपना जीवन एक सूड़ी के रूप में प्रारम्भ करती है । इसके उपरान्त कोष विकसित होता है, तदुपरान्त पूर्ण फलमक्खी बन जाती है । सामान्यत: मधुमक्खियाँ कोष से पूर्ण मक्खी प्रात:काल में बनती है ।

वास्तव में यह भी आवश्यक है, क्योंकि नवजात फल मक्खी का बाह्य चर्म बहुत ही मुलायम होता है, जिससे पानी जल्दी ही वाष्पित होकर उड़ सकता है और बाह्य चर्म बड़ी ही जल्दी कठोर हो जाता है । पर यदि फल मक्खी दोपहर में जन्म ले तो उसके बाह्य चर्म कठोर होने से पहले ही पानी उड़ जाएगा क्योंकि दोपहर के समय नमी कम और गर्मी ज्यादा होती है, इसके अलावा हवा में नमी की कमी के कारण उसके पंख भी भली प्रकार नहीं फैल पाएँगे । अत: कोष प्रात:काल जो औसतन दिन का सबसे आर्द्र एवं ठण्डा समय होता है, के समय परिपक्व होकर निकलते हैं । यह उत्पत्ति यथासमय जैविक घड़ी द्वारा ही संचालित होती है ।

यह तो जैविक घड़ी का एक ही उदाहरण है, परन्तु अन्य सभी प्रमाण एक ही निष्कर्ष की ओर संकेत करते हैं । व्यावहारिक रूप से सभी मुख्य समूहों के जीवाणुओं (केवल बैक्टीरिया को छोड़कर) में यह जैविक घड़ियाँ किसी न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

किसी रूप में पाई जाती हैं और सभी प्रकार की क्रियाओं का नियन्त्रण करती हैं । इस भू-मण्डल पर जिन जीवित जन्तुओं का विकास होता है तथा उनके सम्मुख जो विभिन्न दैनिक स्थितियाँ आती हैं, उनके प्रत्युत्तर में वे अपने जीवन-क्रम को वातावरण के अनुरूप ढालने में प्रयत्नशील होते हैं । अगर वे इस प्रकार न करें तो वातावरण उनको विषम परिस्थितियों में ढालकर झकझोर दे और तोड़-मरोड़कर रख दे ।

'द केस फार एस्ट्रालोजी' में अनेकों वैज्ञानिक उद्धरण पृथ्वी के वातावरण, जीवों, वृक्षवनस्पतियों पर ग्रह-नक्षत्रों के पड़ने के दिए हुए हैं । प्राणी जीवन की एक घड़ी होती है जिसे बायोलोजिकल कहते हैं । इस घड़ी का सूर्य, चन्द्रमा आदि ग्रहों के प्रभाव होने का पता चलता है । वैज्ञानिक फेंक ए० ब्राउन ने सिद्ध किया है कि मटर के दाने, आलू, चूहे, केंकड़े, सीपियाँ सभी की भीतरी घड़ियाँ सूरज और चन्द्रमा की स्थिति से प्रभावित होती हैं । इन प्रभावों का रोशनी से कोई सम्बन्ध नहीं है । यदि इन जीवों को अँधेरे में बन्द कर दें, तब भी सूर्य और चन्द्र की गति के अनुसार उनका क्रम चलता रहेगा । पड़वा के चाँद में गतिविधि सर्वाधिक शिथिल और पूर्णिमा के चाँद में सबसे अधिक सक्रिय होती है । सीपियाँ चन्द्रमा की कलाओं के अनुसार खुलती बन्द होती हैं । ब्राउन ने समुद्र से हजारों मील दूर अँधेरे में रखकर दिखाया कि वहाँ भी चन्द्रमा की स्थिति के अनुरूप ही सीपियाँ खुलती-बन्द होती हैं ।

फ्रीवर्ग यूनिवर्सिटी के डॉ० ई० एफ० जा० सौर ने वर्वलर नामक से छोटे से पक्षी का अध्ययन किया । ये पक्षी ग्रीष्म ऋतु के अन्त में दक्षिण दिशा से होते हुए यूरोप से अफ्रीका की यात्रा करते हैं । एक रात में सौ-सौ मील की यात्रा करते हैं । बसन्त में उत्तर की ओर यात्रा करते तथा वहीं अंडे देते एवं सेते हैं । अगले ग्रीष्म में बच्चों सहित शीतकाल अफ्रीका में बिताने के लिए निकल पड़ते हैं । डॉ० सौर ने कुछ अंडों को ध्वनि निरोधी कक्षा में सेकर उनसे निकले बच्चों को वहीं एक कमरे से बन्द रखा तथा आहार देते रहे । पूरे वर्ष उन्हें गर्मी उसी प्रकार मिलती रही जैसे कि वे अफ्रीका में रह रहे हों किन्तु जैसे ही हेमन्त ऋतु आई, कमरे में बन्द पक्षी बेचैन हो उठे, बाहर निकलने के लिए फड़फड़ाने लगे । उनकी विचित्र गतिविधियाँ तब जाकर रुकीं जब वे अफ्रीका पहुँच गए । बसन्त आने पर पुनः वापस लौटने के लिए पक्षी बेचैन हो उठे । यह इस बात का प्रतीक है कि पक्षियों में मौसम एवं स्थान की जानकारी बाह्य वातावरण से नहीं उनकी अन्तः संरचना के आधार पर प्राप्त होती है ।

उत्तरी ध्रुव में पैदा होने वाले 'टर्न' पक्षी भी छह हफ्ते के होते ही ११००० मील की यात्रा पूरी करके दक्षिणी ध्रुव पर पहुँच जाते हैं । दक्षिणी गोलार्द्ध में जब दिन छोटे होने लगते हैं तो पुनः वापस उत्तरी ध्रुव पर पहुँच जाते हैं । साइबेरिया से भी हजारों पक्षी जाड़े में भारत आते हैं ।

प्रवासी पक्षी विशाल भूखण्डों, पर्वतों एवं सागरों के ऊपर उड़ते हुए बिना किसी दिशासूचक यंत्र, मानचित्र या पथ-प्रदर्शक की सहायता से अपनी यात्रा पूरी करते हैं । कुछ पक्षी केवल दिन में, कुछ केवल रात्रि में और बहुत से दोनों समय यात्रा करते हैं ।

फलडरक्रैव नामक केंकड़ा जो अपने पंजे वायलिन की तरह उठाए रहता है । प्रत्येक सुबह सूरज निकलते ही केंकड़े की त्वचा श्यामल होने लगती है । दोपहर तक त्वचा काली हो जाती है । शाम होते ही त्वचा का रंग उड़ने लगता है । बन्द अँधेरे कमरे में भी रखा गया तो देखा गया कि बिना सूर्य की रोशनी के प्रभाव के भी उसी प्रकार के परिवर्तन होते हैं । यह इस बात का प्रमाण है कि सूर्य की गति को जानने का कोई विशिष्ट यंत्र इन छोटे जीवधारियों में होता है, जो धूप, छाँव या अन्य किसी मनुष्य द्वारा निर्मित घड़ी की बिना सहायता के ही अपना नियमित क्रियाकलाप विधिवत यथासमय चलाते रहते हैं ।

करोड़ों वर्षों से प्राणियों की जीवन संचार प्रक्रिया एक क्रमबद्ध, समयबद्ध, विधि-व्यवस्था के साथ जुड़ी चली आ रही है, और नियति के अनुशासन का विधिवत् पालन करते हुए अपना निर्वाह क्रम बनाए रख रही है । यह अनुशासन धरती की चुम्बक शक्ति का है या सूर्य की ताप ऊर्जा का अथवा प्राणियों की स्वतंत्र चेतना का ? यह अभी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता । हो सकता है इस व्यवस्था में उपरोक्त तीनों ही तथ्यों का समन्वय समावेश हो ।

कालचक्र के अन्तर्गत इस सृष्टि का सूत्र संचालन एवं नियमन करने वाली अदृश्य शक्ति को 'महाकाल' कहा गया है । उसकी इच्छा और व्यवस्था यही है कि हर किसी को मर्यादा में चलना चाहिये और समय सम्बन्धी नियमितता का सतर्कतापूर्वक परिपालन करना चाहिये । समय के प्रत्येक क्षण को जीवन सम्पदा का अति महत्त्वपूर्ण घटक मानने और उसकी एक-एक घड़ी का श्रेष्ठतम सदुपयोग करने वाले ही कालजनी बने हैं । सफलताओं ने उन्हीं के चरण चूमे हैं । नियति के अजस्र अनुदान पाने के अधिकारी भी वे ही रहे हैं । समय के साथ खिलवाड़ करने वाले ही पतनोन्मुख परिस्थितियों में पड़े रहते हैं और वे ही हाथ मलते, सिर धुनते देखे जाते हैं ।

वस्तुतः मानव जीवन एक बहुमूल्य निधि है । इसमें निहित प्रत्येक पल इतना कीमती है, जिसकी तुलना संसार की सर्वाधिक मूल्यवान वस्तु से भी नहीं की जा सकती । इनका यदि सही ढंग से सुनियोजन किया जा सके, तो उन्नति, प्रगति व सफलता का उत्कर्ष सहज ही उपलब्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किया जा सकता है । प्रगति की लालसा किसे नहीं है ? जब यह इतनी सहज है, तो सभी क्यों नहीं प्राप्त कर लेते ? दैनिक जीवन में अँगुलियों में गिनने जितने लोग ही इस दिशा में सफल होते क्यों देखे सुने जाते हैं ? इन प्रश्नों पर विचार करने तथा लोगों के जीवनक्रम को देखने से यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है कि अस्त-व्यस्त जीवन प्रणाली व नियमितता का अभाव ही सफलता का अवरोधक है ।

किसी भी कार्य की सफलता मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर करती है कि व्यक्ति ने उसमें नियमितता का पालन किया या नहीं । कई बार मनोयोगपूर्वक कार्य करने के बावजूद भी व्यक्ति सिर्फ इसलिए असफल हो जाता है कि वह अपने कार्य में अनियमित था । जब मन आया, जैसा चाहा वैसा कर लिया, आज किया कल नहीं । अभी क्या जल्दी पड़ी है—ऐसे विचारों से युक्त मनःस्थिति के लोग सफलता के नाम पर खाली हाथ रहते तथा हताश होते देखे जाते हैं ।

नियमितता के इस असाधारण महत्व के कारण ही प्रकृति अपने विभिन्न घटकों द्वारा मनुष्य को अपनी मूक वाणी में इसकी सतत् प्रेरणा देती रहती है । मनीषियों का कथन भी है कि सच्चा उपदेश वाणी से नहीं आचरण से दिया जाना चाहिये । प्रकृति द्वारा इस दिशा में दिया जाने वाला उपदेश भी कुछ इसी प्रकार का है । वह अपने सारे क्रिया-कलाप में नियमितता का निष्ठापूर्वक पालन करती है, चाहे वह जड़ समझा जाने वाला खगोल जगत् हो अथवा वनस्पति जगत् । इनकी गतिविधियों में समय सम्बन्धी तनिक भी व्यतिक्रम नहीं दिखाई पड़ता । समस्त ग्रह-नक्षत्र अपनी नियत निर्धारित कक्षा में सदा विद्यमान रहते हैं । इनकी गति सम्बन्धी नियमितता में यत्किंचित भी अनियमितता नहीं दिखाई पड़ती है । सूर्यदेव नित्य प्रति समय से ही उदयाचल से निकलते और अस्ताचल में डूबते हैं । चन्द्रमा सहित अन्य ग्रहों के साथ भी यही बात देखी जाती है । वृक्ष-वनस्पति समय पर फूलते-फलते देखे जाते हैं । जीव-जन्तु भी अपने प्रत्येक कार्य में समय सम्बन्धी नियमितता का सदा ध्यान रखते हैं । प्रत्येक नियत कार्य नियत समय पर करने के लिए प्रकृति ने नासमझ कहे जाने वाले इन वृक्ष-वनस्पतियों, जीव-जन्तुओं को न जाने कौन-सी घड़ी दे रखी है कि वे अपना प्रत्येक कार्य नियत निर्धारित समय पर ही करते हैं । अपने चारों ओर जिधर भी दृष्टि पसारकर देखा जाए, उधर ही समय सम्बन्धी नियमितता दृष्टिगोचर होती है ।

मधुमक्खी, तिलचिट्टे चींटी, चूहे, केंकड़े आदि की दिनचर्या उनके निर्धारित क्रम से ही आरम्भ होती है । उनके क्रियाकलापों में व्यवधान उत्पन्न करने के लिए चाहे जितने प्रयास किए जाएँ वे इस भूल-भुलैया में नहीं फँसते । कृत्रिम प्रकाश या कृत्रिम अंधकार उत्पन्न करके, उनकी अन्तःचेतना को भुलावे में डालने के लिए वैज्ञानिकों ने कितने ही प्रयोग किए, पर उनमें से एक भी सफल नहीं हुआ । इन कीड़ों ने हर बार अपना कार्यक्रम अपनी अभ्यस्त चेतना के आधार पर ही आरम्भ किया और चतुरता के साथ रचे गए उस भ्रम-जंजाल में उलझने से स्वयं को मुक्त बनाए रखा ।

फ्रांस के वैज्ञानिकों ने इस संदर्भ में एक प्रयोग किया । कुछ मधुमक्खियों को सवा आठ बजे सुबह शरबत का घोल चाटने के लिए दिया जाने लगा । कुछ दिनों तक यह क्रम चलने से मधुमक्खियाँ इसकी अभ्यस्त हो गईं । अब उस छत्ते को जिसमें मधुमक्खियों को सवा आठ बजे घोल दिया जाता था, हवाई जहाज से अमेरिका भेज दिया गया । पेरिस में जब सवा तीन बजते हैं, तो अमेरिका में रात के सवा आठ बजते हैं, साधारणतया मक्खियाँ उस समय विश्राम किया करती हैं, पर देखा गया कि रात के सवा तीन बजे उन मक्खियों के छत्तों में भिनभिनाहट शुरू हुई और वे पास में रखे शरबत के घोल पर टूट पड़ीं । तीन हजार मील की दूरी मक्खियों के समय ज्ञान सम्बन्धी चेतना को भुलावे में न डाल सकीं ।

समुद्र तट पर पाया जाने वाला विशेष प्रकार का केंकड़ा दिन के उतार-चढ़ाव के साथ अपने रंग बदलता है । इन्हें पकड़कर घोर अँधेरे में रखा गया, ताकि उन पर सूर्य का प्रभाव न पड़े तो भी उनका रंग समय के हिसाब से बदलने का क्रम जारी रहा । इसके साथ-साथ उस केंकड़े का रंग गहरा होने में कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष के हिसाब से ५० मिनट का अन्तर आता रहता है । उस केकड़े को समुद्र से एक हजार मील दूर पहुँचाया गया और वायुयानों में अधिक ऊँचाई पर रखा गया, ताकि समुद्री ज्वार-भाटे का उस पर असर न पड़े । तब भी उसकी प्रकृति नहीं बदली और अँधेरी रातों में ५० मिनट के अन्तर में जो रंग में गहरा हल्कापन आया करता था, वह यथावत् जारी रहा । इसे देखकर ऐसा लगता है जैसे—केकड़े के भीतर कोई घड़ी लगी हो, जो बाहरी परिवर्तन के बावजूद अपने ढंग और क्रम से चलती ही रही ।

प्रसिद्ध अमेरिकी प्राणिशास्त्री डॉ० केनाफिम्न ने पक्षियों और छोटे जीव-जन्तुओं के क्रिया-कलापों का लम्बे समय तक अध्ययन करने के बाद जो विवरण प्रस्तुत किया है वह निश्चय ही आश्चर्यजनक है । उनका कहना है कि मनुष्य घड़ी के सहारे समय का और कम्पास के सहारे दिशा का ज्ञान प्राप्त करता है । आकाश के सूर्य, चन्द्र, तारे आदि भी दिशा का ज्ञान प्राप्त कराने में सहायक सिद्ध होते हैं, परन्तु छोटे जीव-जन्तुओं के पास इस प्रकार के कोई उपकरण नहीं होते, फिर भी वे अपनी आवश्यकतानुरूप दिशा और समय सम्बन्धी ज्ञान अपने अन्तराल की प्रकृति प्रदत्त प्रेरणा के सहारे प्राप्त करते हैं । इसे उन्होंने बायोलोजिकल क्लार्क कहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकृति प्रदत्त प्रेरणा को स्वीकारने तथा उसके अनुसार जीवनक्रम को चलाने में तनिक भी अन्तर कनिष्ठ माने जाने वाले इन प्राणियों में नहीं दिखाई पड़ता है । कैलीफोर्निया और औरेगान के निकट समुद्र तट पर पाई जाने वाली मछली बसन्त ऋतु के शुक्ल पक्ष में ही अंडे देती है । सामौन द्वीप में 'पलाले' नाम का कीड़ा अक्टूबर-नवम्बर की खास तारीखों में ही अंडे देता है । किसान खेती सम्बन्धी सब कार्यों को छोड़कर उन अण्डों को साफ करने में लग जाते हैं और खेती की रक्षा करते हैं ।

इसी तरह पक्षियों का सायं होते ही घोंसले में लौटना और प्रभात होते ही उड़ जाना, प्रातः-सांय का चहचहाना बताता है कि मानो उन्होंने घड़ी बाँध रखी हो । उड़ते हुए विभिन्न दिशाओं में जाना और लम्बी उड़ान के बाद बिना भटके अपने आशियाने पर आ जाना, इस बात का प्रमाण है कि उनका समय और दिशा ज्ञान असंदिग्ध होता है, जिसके आधार पर वे अपना मार्ग निर्धारित करते और अनुकूल समय आने पर फिर वापस लौट आते हैं ।

क्षुद्र समझे जाने वाले इन प्राणियों का जीवन नियमितता और नियमबद्धता के कारण ही टिका रह पाता है, जिस दिन ये प्रकृति प्रेरणा की उपेक्षा कर अनियमित बन जाएँगे, उसी दिन से इनका जीवन का विनाश सुनिश्चित हो जाएगा । आश्चर्य तो इस बात का होता है कि नियम पालन सम्बन्धी इस अनुशासन में चेतन प्राणी ही नहीं, जड़ समझे जाने वाले पदार्थ भी पीछे नहीं रहते । समुद्र में नियत समय पर ही ज्वार भाटे आते हैं । लगता है समुद्र को भी घड़ी, घण्टों व तिथियों की जानकारी किसी ने दे दी है । कलियों और पुष्पों का रात में सिकुड़ना और दिन में खिलना, रात में कम दिन में अधिक बढ़ना इस बात का प्रतीक है कि उन्हें समय का ज्ञान रहता है ।

इस तरह एक नहीं, अनेकों उदाहरण हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि नियमितता के सम्बन्ध में अन्य प्राणी मनुष्य की अपेक्षा अधिक अनुशासनप्रिय हैं । इसका कारण यही है कि वे प्रकृति प्रेरणा की तनिक भी अवहेलना नहीं करते हैं । इसके विपरीत मनुष्य, जिसे दुनिया का सर्वाधिक बुद्धिमान प्राणी समझा जाता है, उसने नियमित दिनचर्या की उपेक्षा करने की रीति-नीति अपना रखी है । उसका परिणाम अस्वस्थ होने, दुःखी रहने, पीड़ा और व्यथा अनुभव करते रहने के रूप में सतत् सामने आता रहता है ।

जीवन में स्वस्थ रहने, प्रगति करने का मर्म नियमितता में छिपा है । प्रकृति द्वारा लगातार दिए जा रहे उपदेशों की अवहेलना, अवमानना न कर उनको ग्रहण करने तथा उनके अनुसार जीवनक्रम को ढालने की रीति-नीति अपनानी चाहिये । अन्तराल को सम्प्रेषित की जा रही नियमित जीवन जीने की प्रेरणा को आचार-व्यवहार में उतारकर कोई भी प्रगति समृद्धि के उत्कर्ष को पा सकता हैं ।

प्रकृति के कलाकारों से सुरक्षा विधि सीखना

यह सृष्टि जितनी आकर्षक है उतनी ही विलक्षण भी । पेड़-पौधों, वनस्पतियों, पुष्प का आकर्षक सौन्दर्य जहाँ मन को तृप्त करता है, वहीं अथाह सागर, भीमकाय पर्वत एवं अनन्त अन्तरिक्ष के दृश्य उस सृष्टा के विराट स्वरूप का दिग्दर्शन कराते हैं । लघु से विराट संरचना, उसकी अद्भुत कलाकृति, शक्ति एवं विलक्षण बुद्धि व्यवस्था का भान कराती है । जड़ प्रकृति के आकर्षक सौन्दर्य से कम आश्चर्यजनक, चेतन जगत भी नहीं है ।

चेतना के क्षेत्र में प्राणी समूह की संरचना, उनके क्रिया-कलाप एवम् क्षमताओं की विलक्षणता को देखकर बुद्धि विस्मित रह जाती है तथा श्रद्धा से उस परम शक्ति के प्रति नतमस्तक होना पड़ता है, जिसने विचित्रताओं से युक्त प्राणियों का सृजन किया । सृष्टा ने मनुष्य को शक्ति सामर्थ्य एवम् बुद्धि प्रदान की, किन्तु अन्य अपने छोटे जीव-जन्तुओं को भी आवश्यक क्षमताओं से वंचित नहीं रखा । उनकी आवश्यकता के अनुरूप न केवल जीवनयापन की क्षमता दी बल्कि प्रतिकूल परिस्थितियों में सामंजस्य बिठाने एवम् तदनुरूप अपने को ढालने की बौद्धिक क्षमता भी प्रदान की ।

विभिन्न प्रकार के रंगों का उपयोग सामान्यतया मनुष्य कला, चित्रकारी आदि के लिए करता है । रंगों का यह सामान्य एवं सीमित उपयोग रहा । किन्तु इन्हीं रंगों के आवरण में लिपटे नहें वन्य प्राणी जीवन की भाग-दौड़ में अपने को बचाए रखते हैं । इस सुरक्षा कवच की आड़ में ये प्राणी आसानी से अपना आहार भी ढूँढ़ लेते हैं ।

भारतीय उपमहाद्वीप में पाए जाने वाले पतंगों की एक जाति होती है 'मेन्टीस' । ये पतंगे फूलों के रंग जैसे होते हैं । पुष्पों की डालियों पर बैठे अपना आहार प्राप्त कर लेते हैं । जब पुष्पों की पंखुड़ियों पर चिपके रहते हैं तो लगता है जैसे पुष्प की ही कोई पंखुड़ी हो । दक्षिणी अमेरिका में भी इसी प्रकार की पारदर्शी काँच जैसी पंख वाली एक तितली पाई जाती है, जिसका रंग पेड़ की डालियों से बिल्कुल मिलता-जुलता है । उसे देखने से लगता है कि पेड़ की छाल हो । 'डेड लीफ बटर फ्लाई' तो सूखी पत्तियों जैसी दिखाई देती है । यह केवल रंग, रूप, आकार में ही वैसी नहीं होती वरन्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उड़ती भी उसी प्रकार है जैसे—हवा के झौंके से पत्तियाँ । 'स्टीक' नामक कीड़ा पेड़ से इस प्रकार चिपका रहता है जैसे उसकी ही कोई छोटी शाखा हो । ट्रापीकन कीड़े एक समूह में एकत्रित होकर पेड़ में उसके फूल जैसे लटके रहते हैं । अधिकांश व्यक्तियों को उनके फूल होने का भ्रम हो जाता है ।

तितलियों में कुछ जातियाँ ऐसी होती हैं जो पत्तियों का रंग धारण कर लेती हैं । 'गतिशील' 'पर्ण' नामक तितली तो पत्ते की शक्ल, रंग एवम् आकार से मिलती-जुलती है । पौधे पर जब यह रेंगती है तो लगता है कोई पत्ती चल रही हो । 'बोलिविया सीनोफ्लेविया' तितली जब फुदकती है तो पहचान में आती है ।

ईश्वर ने प्रत्येक प्राणी को प्राकृतिक प्रकोप एवं प्रतिकूलताओं में समायोजन कर सकने की शारीरिक एवम् बौद्धिक क्षमता दी है । देखा यह जाता है कि बौद्धिक क्षेत्र का नेतृत्व करने वाला प्राणी मनुष्य ही सामान्य घटनाक्रमों, प्रतिकूलताओं से प्रभावित होकर अपना शारीरिक स्वास्थ्य एवं मानसिक सन्तुलन नष्ट करता रहता है, जबकि अन्य प्राणी जीवन को एक सहज क्रम मानकर परिवर्तित परिस्थितियों एवं वातावरण के अनुरूप अपने को ढाल लेते हैं । उत्तरी ध्रुव, पहाड़ों एवं बर्फीले प्रदेशों की भीषण ठण्ड में भी रीछ, सर्प, उल्लू अपना अस्तित्व बनाए रखते हैं ।

बाह्य शत्रुओं, आक्रमणों से बचाव में जिस बुद्धिमता का परिचय ये छोटे, नन्हें जीव देते हैं, उसे देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । मनुष्य छोटी-मोटी कठिनाइयों, अवरोधों से विचलित होता रहता है, जबकि उसकी शारीरिक एवं बौद्धिक क्षमता इन क्षुद्र प्राणियों की तुलना में हर दृष्टि से अधिक समर्थ है । सामान्य घटनाक्रमों से प्रभावित होकर रोते-कलपते समर्थ मनुष्य को देखने पर उसकी बुद्धि पर सन्देह उत्पन्न होता है तथा यह कहना पड़ता है कि इनसे अच्छे तो ये जीव-जन्तु हैं, जो बाह्य परिस्थितियों को चैलेंज करते रहते हैं, किन्तु घुटने नहीं टेकते । मनुष्य को इन जीवों से प्रेरणा लेनी चाहिये ।

मेंढकों का प्रिय आहार समझे जाने वाले 'टोड' मिट्टी के ढेले के आकार में बने बैठे रहते हैं । इनको पहचान पाना तो मेंढक से ही सम्भव है । 'टोड़' की चालाकी से परिचित मेंढक स्वयं भी अपना रंग बदलता रहता है । पानी की सतह पर तैरते हुए काई का रंग धारण कर लेता है । मिट्टी में पहुँचकर उसी के अनुरूप बन जाता है । शत्रुओं को इस प्रकार झाँसा देता रहता है । दूसरी ओर रंग की आड़ में अपना शिकार भी करता रहता है । मछलियाँ, घोंघे तथा स्क्वीड तो अपनी त्वचा का रंग बदलने में विशेषज्ञ हैं । कुछ घोंघे तो मिनटों में अपनी काया का रंग परिवर्तित करते देखे जाते हैं । समुद्री घास का हरा रंग तथा रंगीन काई का भूरा या बैंगनी रंग ये शीघ्र ही धारण कर लेते हैं ।

कुछ प्राणियों में परिवर्तन करने की प्राकृतिक क्षमता न होते हुए भी शत्रुओं से बचाव में अपनी विलक्षण सूझ-बूझ का परिचय देते हैं । अभिनय कला में वे इतने पारंगत होते हैं कि शत्रु धोखा खा जाते हैं । वर्षा ऋतु में पाए जाने वाले कीड़े गिजाई, कांतर कुण्डलाकार रूप में इस प्रकार पड़े रहते हैं जैसे कोई मृतक हो । आक्रमणकारी जीव इन्हें मृत जानकर छोड़ देते हैं । अमेरिका में पाया जाने वाला जीव आर्मेडिलो शत्रु की आहट मिलते ही अपनी गर्दन को मोड़कर फुटबाल जैसी शक्ल धारण कर लेता है तथा निश्चेष्ट पड़ा रहता है । ये पशु-पक्षी जीव न केवल अपनी सुरक्षा करते हैं । वरन् अपने बच्चों की देख-रेख एवम् बाहरी आक्रमणों से बचाव की विधि-व्यवस्था, परिवार के मुखिया के समान करते हैं । गौरेया और श्यामा अपने अंडों को घास में इस प्रकार रखती है कि उनके ऊपर शत्रु की दृष्टि न पड़ सके । बच्चे भी आरम्भ से ही दिये गये माता-पिता के इस प्रशिक्षण का पालन पूरी मुस्तैदी के साथ करते हैं । अंडे से निकलकर आते ही जब शत्रु को देखते हैं तो मृतक की भाँति लेट जाते हैं । शत्रु भी मृतक जानकर छोड़ देते हैं ।

कुछ जीव जो अपनी रक्षा करने में असमर्थ होते हैं वे इस प्रकार की शारीरिक चेष्टाएँ प्रदर्शित करते हैं, जिन्हें देखकर अन्य प्राणी डर जाएँ तथा आक्रमण न करें । अमेरिका में पाया जाने वाला सर्प 'लांगलोण्ड इसी श्रेणी में आता है । इसमें विष नहीं पाया जाता है इसलिए सहज ही शिकार बनने की सम्भावना बनी रहती है । ऐसी स्थिति में अपनी सुरक्षा के लिए यह अपना फन उठाकर फुँसकारता हुआ ऐसे चलता है जैसे कोई विषधर सर्प आ रहा हो । शत्रु उसे देखकर डर जाते हैं तथा आक्रमण करने का साहस नहीं कर पाते यदि अपने इस अभिनय में वह असफल रहा तथा कोई शत्रु आक्रमण कर दे तो वह चित्त होकर मृतक के समान लेट जाता है । आक्रमणकारी उसे प्रायः मृत जानकर आगे बढ़ जाते हैं । शत्रु के आगे बढ़ते ही वह एक ओर धीरे से खिसक जाता है । 'चीनी फीजेन्ट' नामक रंगीन पंखों वाला पक्षी अपनी गर्दन के पास लाल थैलियों को फुलाकर अपना आक्रमक रुख प्रदर्शित करके शत्रुओं को डराता रहता है । छिपकलियाँ भी इस कला में निपुण होती हैं । आक्रमण की आशंका होते ही अपना मुँह खोलकर वायु द्वारा शरीर को फुलाती हैं तथा आँखों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रक्त की पिचकारी छोड़ती हैं । शत्रु भयभीत होकर भाग जाता है । 'स्क्वीड' हमला किए जाने पर अपने ही आकार का स्याही का बादल छोड़कर भाग जाता है ।

परमात्मा ने प्रत्येक प्राणी को उसकी आवश्यकतानुसार शक्ति, सामर्थ्य एवं बुद्धि दी है, जिससे वे स्वस्थ जीवनयापन करते हुए शारीरिक, मानसिक एवम् नैतिक सुरक्षा कर सकें । छोटे नगण्य समझे जाने वाले प्राणी ईश्वर द्वारा दी गई क्षमता का सदुपयोग करते हैं तथा अपने छोटे-से क्षेत्र में उल्लासपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं । मनुष्य को इनसे प्रेरणा लेनी चाहिये । मनुष्य जीवन की गरिमा एवम् उद्देश्य को समझते हुए उसे प्राप्त करने के लिए सतत् प्रयास करना चाहिये ।

जीव-जगत और विधाता की विनोदप्रियता

सृष्टि का कौतूहल कौतुक देखते ही बनता है । यहाँ सब कुछ सीधा सरल ही नहीं चित्र-विचित्र भी बहुत है । प्राणधारियों पर दृष्टिपात करें, तो उनकी रचना और स्थिति में ऐसी विलक्षणताएँ दीखती हैं कि आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । विनोदी विधाता बैठा-ठाला क्या-क्या कौतूहल रचता रहता है, उसे देखकर लगता है उसमें बचपन जैसी आँख-मिचौनी करने, भूल-भुलैयां बनाने की उद्धत मनोवृत्ति कम नहीं है । बूढ़ा हो गया तो क्या बचपन फिर भी उसका बना ही हुआ है और ऐसे खेल खड़े करता है जिसमें न केवल उसी का मनोरंजन हो वरन् दूसरे भी उसके इस कर्त्तव्य की विलक्षणता पर मुस्कराए बिना न रहें ।

डॉ० एडवर्ड होम और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के जीव शास्त्री डॉ० एच० काल्डवेल ने उस प्राणी पर गहरी गवेषणा की है । यह अंडे देता है और बच्चों को दूध भी पिलाता है । पानी में डुबकी लगाता है । जमीन पर बिल बनाता है । पूँछ चपटी, त्वचा पर कोमल बाल, बतख जैसी जाल युक्त अँगुलियाँ, कर्ण रहित, चिड़िया की चोंच जैसा मुँह, लम्बाई ५० से. मी. वजन एक किलो, दो बार नियत समय पर भोजन करने का अभ्यासी, एकान्त परिस्थितियों में प्रजनन का अभ्यासी यह प्राणी निसन्देह अद्भुत है । उसका वंश सुरक्षित रखने के लिए आस्ट्रेलिया सरकार ने इसे पकड़ने या मारने पर कड़ा प्रतिबन्ध लगा दिया है । वह प्रतिकूल जलवायु में जीवित नहीं रहता फिर भी उसे न्यूयार्क के चिड़ियाघर में १० वर्ष तक जीवित रखने में सफलता प्राप्त की गई ।

स्तनधारी और सरीसृप जाति के बीच का एक प्राणी है—प्लेटिपस, यह केवल आस्ट्रेलिया में ही पाया जाता है । सरीसृप वर्ग ने जब सृष्टि के आरम्भिक दिनों में प्रगति करते हुए स्तनधारी वर्ग में प्रवेश किया तो उस मध्यान्तर काल का यही एक प्राणी साक्षी अवशेष के रूप में विद्यमान है । यों इसी प्रकार का एक और जन्तु 'इक्रिडना' भी पाया जाता है । पर वह इतना कम शेष रह गया है कि उसके सम्बन्ध में प्रकाश डाला जा सकना सम्भव नहीं । ५ करोड़ वर्ष से अपनी जाति का पृथक् अस्तित्व बनाए रहने में समर्थ यह प्राणी यों अति स्वल्प मात्रा में ही शेष रह गया है, फिर भी वह प्राणी वैज्ञानिकों के लिए एक आश्चर्य के रूप में विद्यमान है ।

चमगादड़ का वर्गीकरण करना कठिन पड़ता है क्योंकि उसमें पशु और पक्षियों के दोनों चिह्न पाए जाते हैं । उड़ती है, पक्षी है और स्तनपायी है, अंडे नहीं बच्चे देती है और घोंसला नहीं बनाती है इसलिए पशु है । उसे उभयपक्षी कहकर सन्तोष करना पड़ता है । यही बात छिपकली के बारे में है वैसे वह साँप की तरह रेंगने वाले वर्ग में गिनी जानी चाहिये पर चूँकि उसके पैर और पंजे होते हैं इसलिए उस वर्ग में भी कैसे गिनी जाए ?

छिपकली की सबसे अद्भुत बात यह है कि उसकी पूँछ शरीर में जुड़ी हुई होते हुए भी एक स्वतंत्र उप अंग मात्र है । पूँछ से वह कई काम लेती है पर जब विपत्ति आती है या कोई आक्रमण करता है तो अपने आप झटक कर उसे तोड़कर अलग कर देती है । कटी हुई पूँछ देर तक हिलती-डुलती और हरकत में रहती है । आक्रमणकारी उसे ही असली छिपकली समझ लेता है और उस पर झपट पड़ता है । इस अवसर का लाभ उठाकर वह नौ-दो ग्यारह हो जाती है ।

शरीर के टुकड़े करके अलग करने में प्रवीण एक और अद्भुत जीव है 'पालोला' । यह मलाया पालीनेशिया फ्लोरिडा के तटवर्ती चट्टानों में पाया जाता है । रेंगने वाले जीवों में ही उसकी गणना है । वह अपने आप में ही नर है—अपने में ही मादा । वंश वृद्धि की दृष्टि से वह अपने आप में पूर्ण है । उसे किसी को साथी बनाने या ढूँढ़ने की जरूरत नहीं पड़ती । शरद ऋतु में उसका प्रजनन काल होता है । तब वह चट्टानों से निकलकर समुद्र तट पर आ जाता है, उसका पिछला दो तिहाई भाग हरा और नीला होता चलता है । उस पर दाने-दाने से उग आते हैं । अब अगले एक तिहाई भाग को नर और पिछले दो तिहाई भाग को मादा कह सकते हैं । गुप-चुप भीतर ही भीतर न जाने क्या होता रहता है कि पूँछ गर्भवती हो जाती है और उगे हुए दाने अंडों का रूप धारण कर लेते हैं । जब उसकी अभिन्न सहचरी मादा पूँछ प्रजनन की तैयारी में होती है तो 'पालोला' उसे झटक कर अलग कर देता है । झंझट से बचने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए खुद तो फिर चट्टान में आ छुपता है और बेचारी मादा समुद्र में अपने अंडे बच्चों के साथ एकाकी जीवन नौका खेती है और अपना परिवार सँभालती है । जिस तरह एक पत्नी के मरने के बाद मर्द दूसरा विवाह करके नई दुल्हन ले आते हैं । इसी तरह 'पालोला' की नई पूँछ निकलनी शुरू होती है, बढ़ती और पुष्ट होती है । अगले वर्ष उसकी भी वही दुर्गति । पुराने सामन्त राजाओं का वही तरीका था जब तक पत्नी गर्भवती नहीं होती, तब तक उसे साथ रखते थे इसके बाद उसे रद्दी खाते का माल समझकर महल के एक कोने में पटक दिया जाता था और नई दुल्हन को साथ लगाया जाता था । लगता है 'पालोला' ने इसी प्रकार की रीति-नीति अपना रखी है । फर्क इतना ही है उसे नई दुल्हन तलाश नहीं करनी पड़ती वह घर बैठे आ जाती है और अपने आप ही उसमें आत्मता होने का प्रयत्न करती है ।

ठीक इसी तरह का एक और रेंगने वाला जीव है 'माईरिआनीडा' यह भी अपने आप में पूर्ण है । स्वयं ही नर तथा स्वयं ही मादा । मार्च में उसकी सफेद पूँछ लहराने लगती है और पीली होती जाती है । यही है उसका गर्भ धारण । जब यह अंडों के भार से बोझल हो जाती है तो वह भाग अलग हो जाता है और उसमें जन्मा परिवार स्वतंत्र रूप से अपना जीवन धारण करता है ।

'कुछ सेक्स लैस' जीव मछली शक्ल के भी होते हैं, वे बिना नर की सहायता के अपने शरीर में ही अण्डे उगाते रहते हैं और पके हुए अंडे मूल शरीर से बाहर निकल कर स्वावलम्बी जीवन जीने लगते हैं ।

फ्रांस के जीवविज्ञानी बेलाफेकर ने बिच्छू के सम्बन्ध में भी बहुत खोजबीन की है, उसकी प्रेम-कथा और दाम्पत्य जीवन की परिणति जितनी विचित्र है उतनी ही दुःखद भी । ऐसी अद्भुत नीति शायद ही किसी अन्य प्राणी में पायी जाती हो ।

अप्रैल-मई में बिच्छुओं का ऋतु काल आता है । नर-मादा एक-दूसरे को तलाश करते हैं । पटरी बैठती है या नहीं इसके लिए शीर्षासन की तरह सिर नीचे और पूँछ ऊपर करके उलटे खड़े हो जाते हैं । पूँछ मिलने पर वे इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि उपयुक्त साथी मिला या नहीं । पूँछ हुक की तरह उलझ जाए तो समझना चाहिये कि विवाह पक्का हो गया, अन्यथा वे दूसरी तलाश में बिछुड़ जाते हैं ।

जोड़ी बन जाने पर दोनों मिलकर छोटा गड्ढा खोदने में लगते हैं । यही उनका अन्तःपुर होता है । इस खुदाई के बीच भी वे दोनों एक-दूसरे का एक हाथ पकड़े रहते हैं । रात भर उसमें उनका विश्राम होता है और यहीं सुहागरात मनाते हैं ।

दूसरे दिन प्रातःकाल उस गड्ढे का दृश्य बहुत ही वीभत्स बन जाता है । नर बिच्छू के पंजे, डंक और कुछ अन्य अवशेष ही वहाँ इधर-उधर छितरे मिलते हैं । शेष सब कुछ गायब । मादा बिच्छू अपनी कामतृप्ति करने के उपरान्त स्वादिष्ट भोजन का आनन्द भी पति देव के शरीर से ही लेती है और उसे भोर होते-होते खा-पीकर समाप्त कर देती है ।

इतने पर भी मादा बिच्छू अपने बच्चों के प्रति बड़ी सहृदय होती है । प्रायः १४ महीने उसे गर्भधारण किये रहना पड़ता है । इसके बाद वह अंडे देती है । उन्हें सेती है और कई सप्ताह तक बच्चे जब तक चलने-फिरने लायक नहीं होते इन्हें पीठ पर ही लादे फिरती है ।

मनुष्य के दाँत दो-बार निकलते हैं । एक जन्म के समय दूसरे ५-६ वर्ष की आयु में । पर हाथी के दाँत उसकी ५०-६० वर्ष की जिन्दगी में छै बार उखड़ते और निकलते हैं । उसे अपना बड़ा-सा पेट भरने के लिए कड़े वृक्ष तोड़ने चबाने पड़ते हैं । फलतः दाँत जल्दी घिसते और टूटते हैं इसलिए प्रकृति ने उसके दाँत छै बार निकलने की व्यवस्था की है ।

जीवधारी जगत् की विचित्रताएँ उसके रचनाकार की महानता का ही नहीं उसकी विनोदप्रियता का भी परिचय देती हैं ।

अद्भुत क्षमताओं से सम्पन्न चमगादड़

चमगादड़ उष्ण रक्तक होने पर सक्रिय होता है और शीत रक्तक होने पर सुषुप्ति अवस्था में चला जाता है । यदि उसे रेफ्रीजेटर में बन्द कर दिया जाय तो उसके रक्त का तापमान गिर जाएगा और एक दम सो जाएगा । जीवविज्ञानी अपने अन्वेषण कार्य के लिए यही करते हैं, जब चाहते हैं, उसे शीत स्थिति में रखकर सुला देते हैं और जब चाहते हैं थोड़ी गर्मी देकर जाग्रत कर देते हैं । साधारणतया उसके हृदय की धड़कन १८० बार प्रति मिनट होती है, किन्तु जब वह सुषुप्ति स्थिति में होता है तो वह चाल घटकर मात्र प्रति मिनट ३ रह जाती है । श्वास क्रिया ४८० प्रति मिनट से घटकर मात्र ८ रह जाती है । सर्दियों में आमतौर से वह बिना कुछ खाए-पिए सोता ही रहता है । इतने छोटे आकार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राणी प्राय: एक दो वर्ष ही जीते हैं, पर चमगादड़ है जो बीस वर्ष की आयु आसानी से भोग लेता है ।

चमगादड़ में वृद्धता के कारण रक्तवाहिनी धमनियों में कोई विकृति नहीं आती और न वसा की परतें ही जमा होती हैं । बच्चे और बूढ़े की नाड़ियों की स्वच्छता और कोमलता में अधिक अन्तर नहीं आने पाता ।

एक अद्भुत विशेषता चमगादड़ में यह है कि रतिक्रिया और गर्भधारण दोनों कार्य एक साथ न होने देने की बात पूर्णतया उसकी मुट्ठी में रहती है । शरद ऋतु में शीत निष्क्रिय होने से पूर्व प्राय: उसका रतिकर्म होता है । इस समय मादा शुक्राणुओं को अपनी एक अतिरिक्त थैली में जमा कर लेती है और जब बसन्त ऋतु में निद्रा निवृत्त होती है तब उस संचित शुक्र भण्डार को गर्भाशय में ले जाकर गर्भधारण करती है । इसलिए वह कई महीने पूर्व का गर्भाधान कार्य ही काम दे जाता है । आमतौर से वह एक ही बच्चा जून-जुलाई में देती है ।

अँगुलियों के बीच झिल्ली तनी रहने से वे बहुत तेज उड़ सकते हैं और तरह-तरह की कलाबाजियाँ दिखा सकते हैं । पूरी रफ्तार से उड़ते हुए भी वे दायें-बायें ९० के कोण पर मोड़ ले सकते हैं ।

चमगादड़ के शरीर में एक अद्भुत प्रकार की 'सोनार' व्यवस्था है । अँधेरे में शिकार पकड़ने के लिए उसे उसी व्यवस्था का विशेष लाभ मिलता है । चमगादड़ का शरीर अल्ट्रासोनिक पाल्सिस—पराध्वनि स्पंदों के पुँज निस्तृत करता है जो किसी वस्तु से टकराकर प्रतिध्वनि के रूप में उसी के पास वापस लौट आते हैं । उसी को उसे आँखों से देखने की अपेक्षा की स्थिति से अधिक स्पष्ट जानकारी मिल जाती है । मानव निर्मित किसी भी सोनार अथवा राडार की अपेक्षा चमगादड़ का शरीर यंत्र अरबों गुना अधिक सही और अधिक सम्वेदनशील होता है ।

उसके शरीर से निकलने वाली तरंगों की अपेक्षा २००० गुनी अधिक जोर की तरंगें उत्पन्न की गईं ताकि वह यथार्थता मालूम न कर सके पर चमगादड़ उस परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ उसने अपनी फ्रीक्वेन्सी सही रूप में पकड़ ली और कृत्रिम तरंगों के बहकाने में तनिक भी नहीं आया, एक ही छोटी गुफा में रहने वाले हजारों चमगादड़ बिना दूसरे से टकराए उसी आधार पर सरलतापूर्वक उड़ते रहते हैं । छोटे-से चमगादड़ की इन विशेषताओं को देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है, पर यदि कोई मनुष्य के कण-कण में भरी विभूतियों पर दृष्टिपात करे तो प्रतीत होगा कि इस संसार में चमगादड़ नहीं अपितु अद्भुत क्षमताओं में सबसे बड़ा-चढ़ा प्राणी मनुष्य है । दुर्भाग्य इतना ही है कि न तो उन्हें समझा जा सका न उनका सदुपयोग ही किया जा सका ।

प्रकृति का उपहार-अनुदान मक्खी को भी मिला है

कीटविज्ञानियों का कथन है कि संसार के समस्त जीवों में 'मक्खी' ही सर्वश्रेष्ठ धावक है । दौड़ने का विश्व रिकार्ड ४४.५ सैकिण्ड में ४०० मीटर का है, पर मक्खी इतनी दौड़ एक सैकिण्ड में ही पूरी कर सकती है । जेट विमानों की उड़ान बहुत तेज समझी जाती है, पर मक्खी तो प्रति घंटे ८१८ मील की गति से दौड़ती है । उसका कीर्तिमान वायुयानों द्वारा तोड़ा जा सकना कठिन है ।

जब मक्खी को किसी के द्वारा अपना पीछा किए जाने का भय होता है अथवा नाच-कूद की मुद्रा में होती है तो तेज दौड़ते हुए भी कुण्डली उड़ान भरती है और हवा में सीधी डुबकी लगाने और सीधे ऊपर उछलने के करतब दिखाती है । इतनी तेज चाल पर इतने मोड़-तोड़ बदलना किसी वायुयान के लिए भी सम्भव नहीं हो सकता ।

वायुयान की गति संचालन में मक्खी की संरचना और क्रिया-पद्धति का गहरा अध्ययन किया गया है और उससे बहुत कुछ सीखा गया है । अतिवेग से आती हुई मक्खी हाफ रेल बनाती है । जब वह मन्दगामी होती है । हाफ लूफ तरीका अपनाती है । इसी गति नीति को देखकर वायुयान के गति विधान में महत्त्वपूर्ण सुधार किए गए हैं । कोई मक्खी अत्यधिक वेग से उड़ रही है तो वह अपने पंखों पर केन्द्राकर्षण का अतिशय भार न पड़ने देने की बात तो ध्यान में रखते हुए 'रोल' पद्धति से नीचे उतरती है । 'लूप' पद्धति से नहीं । अब वायुयानों ने भी अपने उतरने की विधि में यही संशोधन किया है ।

मक्खियों के दुहरे पंख होते हैं । एक जोड़ा उड़ने का काम करता है और नीचे वाला दूसरा जोड़ा शरीर का सन्तुलन बनाए रहता है । यह निष्क्रिय पंख वायुयानों में लगे जिरास्कोप का काम करते हैं । मस्तिष्क के साथ ज्ञान तन्तुओं की अधिकतम सम्वेदनशीलता जुड़ी रहती है । इसलिए विविध जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए यह पंख ही मक्खी के प्रमुख आधार होते हैं ।

भिनभिनाने वाली मक्खियों से कई गुनी बड़ी मक्खियाँ संसार के विभिन्न क्षेत्रों में पाई जाती हैं । कनाडा की 'पाइन पा' हजारों एकड़ फसल खा जाती है । 'स्क्रूवर्म' मुर्गियों के झुण्ड के झुण्ड धराशायी कर देती है । अफ्रीकी 'बेडगर्ड' मक्खियों चिड़ियों के बराबर बड़ी और विषैली होती हैं और उसके काटने से मनुष्य तथा पशु बीमार पड़ जाते हैं । चिकित्सा विज्ञानियों ने मक्खियों के पंखों पर लिपटे हुए एक लाख तक रोग जीवाणु पाए हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मक्खियों का प्रजनन अद्‌भुत है । वे एक बार में १२५ से लेकर ५००० तक अंडे देती हैं । यदि सभी जीवित रहे तो एक जोड़े मक्खी की सन्तान एक वर्ष में इतनी हो जायेगी कि सारी धरती पर ४६ फुट ऊँची परत इन मक्खियों की ही जमा हो जाय । मक्खियों को वयस्क होने में केवल ६ दिन लगते हैं । इतने समय में ही वे पेट भरने और प्रजनन करने में समर्थ हो जाती हैं । किन्तु उनका जीवन भी कुल २०-२५ दिन का ही होता है । एक वर्ष में उनकी प्राय: तीस पीढ़ियाँ हो जाती हैं ।

डी० डी० टी० सरीखे कीटनाशक रसायन इसलिए बनाए गए थे कि उनसे मक्खी जैसे जन्तुओं का नाश किया जा सकेगा । मक्खी ने इन रसायनों को चुनौती देकर अपने भीतर एक ऐसा तत्व विकसित कर लिया है, जिसके कारण वे विषैले रसायन उसकी अधिक हानि नहीं कर सकें । इन नाशक द्रव्यों के बावजूद भी मक्खियों की संख्या बढ़ती ही जा रही है और हारकर वैज्ञानिकों को यह कहना पड़ रहा है कि जनता को सफाई रखने की आदत जब तक नहीं सिखाई जाएगी तब तक मक्खी जैसे जन्तुओं से छुटकारा नहीं मिल सकेगा ।

छोटी मक्खी को कितनी अद्‌भुत क्षमताएँ मिली है ? इसे ध्यानपूर्वक देखें तो यह जाना जा सकेगा कि अकेले मनुष्य को ही नहीं अन्य प्राणियों को भी प्रकृति ने मुक्तहस्त से उपहार-अनुदान दिए हैं ।

इसी तरह यूनाइटेड स्टेट्स से अर्जेन्टाइना तक चूहे की आकृति का एक ओपोसम जन्तु पाया जाता है । उसकी पूँछ बहुत लम्बी होती है । अपनी पूँछ को लपेट कर यह घण्टों डालों में लटका झूलता रहता है ।

मादा ओपोसम को प्रकृति ने १३-१३ स्तन दिए हैं । किन्तु उसकी प्रजनन क्रिया इससे भी बढ़कर है । ओपोसम एक बार में १८-१८, २०-२० तक बच्चे देती है । इतने अधिक स्तन होने पर सब बच्चों को दूध पीने के लिए एक-एक भी स्तन नहीं मिलता, फलस्वरूप भाइयों में आपस में ही युद्ध होता है । इस संघर्ष में प्रति प्रसव १४-१५ बच्चे मर जाते हैं, जो प्रारम्भ से ही कुछ शक्तिशाली होते हैं वही ४-५ जीवित रह पाते हैं ।

पेट-प्रजनन में तो चूहा भी मनुष्य से आगे है

प्राणधारी की आकांक्षा और चेष्टा जिस भी दिशा में तत्पर होती है, उसी दिशा में आशातीत सफलता मिलने लगती है । चेतना की तत्परता का चमत्कार चूहे जैसे छोटे प्राणी में भी देखा जाता है । पेट पालने और सन्तानोत्पादन में उसे जो असाधारण उत्साह रहता है, उसने इन दोनों ही क्षेत्रों में आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है ।

अनुमान है कि भारतवर्ष में चूहे प्राय: ३३० लाख टन अनाज हर वर्ष खा जाते हैं । फसल घर आने से पहले ही खेत-खलिहानों में प्राय: १० प्रतिशत अनाज साफ कर देते हैं । खाने के अतिरिक्त बिखेरने की बर्बादी भी कम नहीं करते । अपने बिलों में भी वे भविष्य के लिए काफी अन्न जमा करते हैं । तलाशी लेने पर कई चूहों के बिलों में १४ किलो तक अनाज बरामद हुआ है । अनुमान है कि पूरे देश में प्राय: ५ अरब ८० करोड़ चूहे हैं । आबादी के हिसाब से हर एक मनुष्य के पीछे १० चूहों का अनुपात आता है । एक चूहे को भर-पेट खाने का अवसर मिले तो वह लगभग अपने शरीर के बराबर प्राय: आधा पौंड अनाज आसानी से खा और पचा सकता है । खाऊपन की आदत ने उनके पेट को बहुत परिपुष्ट कर दिया है ।

चूहों की सन्तानोत्पादन क्षमता भी ऐसी ही आश्चर्यजनक है । पेट भरने के बाद उनको दूसरा प्रिय-कार्य काम कौतुक ही सूझता है । उनकी इस अभिरुचि ने अभीष्ट सफलता प्राप्त की है और परिवार बढ़ाने में वे अन्य प्राणियों से कहीं आगे रहते हैं ।

चूहिया वर्ष में प्राय: ३-४ बार बच्चे देती है । उनका वार्षिक प्रजनन प्राय: १० बच्चों का होता है । एक साल की चुहिया जवान हो जाती है और बच्चे पैदा करने लगती है । इस प्रकार की उसकी वंश वृद्धि को देखते हुए मारने-पकड़ने के उपाय प्राय: बेकार ही साबित होते हैं ।

चूहों जैसा निरुद्देश्य जीवन पेट और प्रजनन के उपरान्त दुष्टता और उच्छृंखलता अपनाने में प्रवृत्त होता है । उनके द्वारा किए जाने वाले उपद्रवों का लेखा-जोखा लेने पर विदित होता है कि दादागीरी में उन्होंने अपने को किसी से पीछे नहीं रहने दिया है ।

प्रौढ़ चूहे मोटे होकर उद्दंड हो जाते हैं और अनाज से पेट भरने तक सन्तुष्ट नहीं रहते, तब वे पशु-पक्षियों पर आक्रमण करते हैं और मनुष्यों तक की खबर लेने से नहीं चूकते । अकेले बम्बई शहर में चूहे के काटे घायल लगभग २० हजार की संख्या में अस्पतालों में भर्ती होते हैं । घरेलू मरहम पट्टी करके बैठे रहने वालों की संख्या तो इससे कई गुनी अधिक होगी ।

पालतू मुर्गियों के अंडे चुराने में वे उस्ताद होते हैं । पेड़ों पर चढ़कर पक्षियों के अंडे भी वे मजे से खाते हैं । आयरलैंड में भूरे चूहों की संख्या इतनी बढ़ी कि उन्होंने तालाबों का सफाया ही कर दिया । साइसिल द्वीप समूह में एक बार वे इतने बढ़े कि पेड़ों पर पक्षियों के लिए बसेरा करना कठिन हो गया और वे हार-मानकर उस क्षेत्र को छोड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर अन्यत्र घोंसले बनाने के लिए चले गए । आसाम के एक हाथी व्यवसायी ने बताया कि एक बार उसके तीन हाथी चूहों द्वारा पिछले पैरों का माँस काटे जाने से घायल हो गये । सिवनी (मध्य प्रदेश) के एक गाँव में डेढ़ किलो भारी चूहे को बन्दूक की गोली से मारना पड़ा । वह तीस मुर्गियों के बच्चों को दबोचकर उदरस्थ कर चुका था और सोते आदमियों का माँस काटने लगा था ।

निरुद्देश्य मानव-जीवन भी चूहे जितनी ही प्रगति करता है और उतनी ही सफलता प्राप्त करता है । किसी भी रीति से कमाना और कुछ भी करने में खर्च करना—वासना और विलासिता की ललक लिप्सा में आँखें बन्द करके डूबे रहना, इसके बाद बची शक्ति को अहंकार, आतंक के उद्धत प्रदर्शन में लगाये रहना, क्या यही मानवोचित जीवन है । इस प्रकरण को तो मनुष्य की अपेक्षा चूहा भी अधिक सफलतापूर्वक सम्पन्न कर लेता है ।

बदलते समय के साथ अनुकूलन जरूरी

नाले का पानी स्थिर होता है, इसलिए कीचड़ युक्त बदबूदार होता है, किन्तु नदी और झरने प्रवाहमान होते हैं । फलतः उनमें न गंदगी होती है, न कीचड़ वरन् अपने में स्वच्छ जल सँजोये रहकर प्यासों को शीतलता प्रदान करते रहते हैं । मनुष्य के साथ भी यही बात लागू होती है । आज वह जिस स्थिति से गुजर रहा है, उसमें एक प्रकार का ठहराव आ गया है और इस कारण उसमें स्वयं में असंतोष, समाज में अशान्ति और राष्ट्र में अराजकता का वातावरण पैदा हो गया । जब तक उसके जीवन का पड़ाव गतिमान जलराशि का रूप धारण नहीं कर लेता और बदलते समय के अनुरूप स्वयं को, विचार को बदलना नहीं सीखता, तब तक उसका निज का जीवन एवं समाज घृणित स्थिति में ही बने रहेंगे । बल्कि यह कहना अधिक समीचीन होगा कि इससे अस्तित्व सम्बन्धी खतरा भी पैदा हो सकता है ।

इसी बात को 'दि टर्निंग प्वाइंट' के विद्वान लेखक फिटजार्फ क्रापा ने अपनी पुस्तक के 'दि सिस्टम्स व्यू ऑफ लाइफ' के (पृ. २९४-२९५) अध्याय में भलीभाँति समझाया है । वे प्रस्तुत अध्याय में लिखते हैं कि शरीर विज्ञान का एक निश्चित नियम है । उसकी प्रत्येक प्रणाली में वातावरण के परिवर्तन के अनुसार परिवर्तन होता रहता है और इस प्रकार वह अपने तंत्रों को परिस्थिति के अनुरूप अनुकूलित करते रहकर स्वयं को जीवित बनाए रहता है । इस प्रकार की अनुकूलन क्षमता न सिर्फ मनुष्य में होती है, वरन् पेड़-पौधों समेत हर प्रकार के प्राणियों में पायी जाती है । वे कहते हैं कि मनुष्य जैसे विकसित प्राणी में प्रतिकूलताओं से अपनी रक्षा के लिए तीन प्रकार के अनुकूलन की क्षमता होती है, जो लम्बी अवधि के वातावरण परिवर्तन के क्रम में क्रमिक रूप से क्रियाशील रहती है । उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति समुद्र तल से ऊँचे पहाड़ की चोटी पर जाता है, तो वह हाँफने लगता और हृदय धौंकनी की भाँति चलने लगता है, पर यह सभी परिवर्तन उत्क्रमणीय (रिवर्सिबल) होते हैं एवम् वातावरण के बदलते ही व्यक्ति की स्थिति पूर्ववत् हो जाती है । यदि व्यक्ति उसी दिन नीचे आ जाय, तो वह पुनः सामान्य हो जाता है । इस प्रकार का अनुकूल दबाव (स्ट्रेस) का एक भाग है । यह दबाव जन्तु के किसी एक अथवा अनेक प्रणालियों में खिंचाव पैदा करता है, जिसका मान अधिकतम होता है । परिणामस्वरूप समग्र तंत्र में यह स्थिति पैदा हो जाती है, जिससे वह अन्य किसी दबाव (स्ट्रेस) के प्रति अनुकूलन क्षमता खो देता है । उदाहरण के लिए ऊँचे पहाड़ की चोटी पर स्थित व्यक्ति वहाँ पर बनी किसी सीढ़ी पर और ऊँचा चढ़ सकने में सक्षम न हो सकेगा । इस स्थिति में, चूँकि शरीर का एक तंत्र दूसरे से जुड़ा होता है, अतः शरीर की यह अक्षमता पूरे शरीर तंत्र में प्रसारित होकर समग्र शरीर की लोचकता अथवा अनुकूलन शक्ति को समाप्त कर देगी ।

यहाँ यदि परिवर्तित वातावरण लम्बे समय तक बना रहता है, तो उसे उस वातावरण में जीवित रहने के लिए पुनः अनुकूलन की आवश्यकता पड़ेगी और व्यक्ति पुनः अनुकूलन की एक अन्य प्रक्रिया से गुजरेगा । इस प्रक्रिया के दौरान शरीर तंत्र की फिजियोलॉजी में विभिन्न प्रकार के जटिल परिवर्तन होने आरम्भ होते हैं, ताकि वह अपने लचीलेपन को कायम रखते हुए वातावरण के प्रभाव को सहन करने की क्षमता बनाए रख सके । इस प्रकार ऊँची चोटी पर व्यक्ति कुछ दिन पश्चात् बिना किसी कठिनाई के सामान्य ढंग से साँस लेने की स्थिति में आ जाता है ।

यदि प्राणियों में अनुकूलन की यह क्षमता न हो तो शायद वे अपने को जीवित न रख सकें । ऐसे ही अनुकूलन क्षमता बदलते सामाजिक परिवेश में स्वयं को जीवित-जीवन्त बनाए रखने के लिए मनुष्य को भी अभीष्ट होती है । यदि परिवेश के अनुरूप परिवर्तन वह न कर सके, तो उसका जीवित रह पाना सम्भव न हो सकेगा ।

इसी आशय का मन्तव्य प्रकट करते हुए जॉन रसेल अपनी पुस्तक 'एडाप्टिव नेचर ऑफ मैन एण्ड एनिमल' में लिखते हैं कि इसे भगवान की महती कृपा ही समझना चाहिए कि उसने सभी प्राणियों में एक ऐसी विशिष्ट क्षमता का समावेश किया है, जिसके अन्तर्गत वह किसी भी वातावरण में स्वयं को उसके अनुरूप ढालकर जिन्दा रह सकता है, चाहे वे अतिशीत युक्त ध्रुवीय प्रदेश हों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अथवा विषुवत रेखा के उष्ण क्षेत्र । दोनों क्षेत्रों में कुछ दिन के निवास के बाद उनका शरीर-तंत्र स्वयं को वहाँ रहने योग्य बना लेता है । यह तो शरीर-प्रणाली की अपनी विशेषता है, जो अपने ढंग से अपने को परिस्थितियों के अनुरूप विकसित कर लेता है, किन्तु रसेल के मत से मानवी अस्तित्व को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए सिर्फ शरीर-प्रणाली के अनुकूलन मात्र से ही काम चलने वाला नहीं है । हाँ, इतना अवश्य है कि जहाँ इतने से ही काम चल जाय, वहाँ तो ठीक है, पर जहाँ आगे और अनुकूलन की आवश्यकता हो, वहाँ दूसरे तंत्रों का भी अनुकूलन जरूरी है अन्यथा वह अस्तित्व सम्बन्धी संकट पैदा कर सकता है ।

शरीर अनुकूलन की तरह रसेल विचार-अनुकूलन को भी मानवी अस्तित्व का एक प्रमुख पक्ष मानते हैं और कहते हैं कि वर्तमान परिस्थितियों में इसी की सबसे अधिक आवश्यकता है । यदि मनुष्य समय के अनुरूप अपने विचारों में परिवर्तन नहीं लाता, तो बदलते परिवेश में उसका अस्तित्व समाप्त होने की सम्भावना उसी प्रकार बढ़ जाएगी, जिस प्रकार शरीर-तंत्र के अनुकूलन के अभाव में किसी जीव का अस्तित्व संकट गहरा जाता है ।

एफ एण्डर्सन अपनी पुस्तक 'एडाप्टेशन' में लिखते हैं कि शरीर तंत्र की यह सबसे बड़ी विशेषता है कि वह किसी भी प्रतिकूलता में जल्द ही अपने को उसके अनुकूल ढाल लेता है, पर मानवी विचार-तंत्र के साथ यह उतना ही कठिन है । मनुष्य अपने विचार को बदलते समय के साथ बदलना नहीं चाहता जबकि होना यह चाहिए कि उसमें रबर जैसा लचीलापन हो । आज जिस परिस्थिति के इर्द-गिर्द हमारा विचार-तंत्र क्रियाशील है, कल यदि वह परिस्थिति न रहे, तो उसमें भी तत्सम बदलाव लाया जा सके, इसी में मनुष्य की विशिष्टता और प्रगतिशीलता है । पर प्राय: ऐसा संभव हो नहीं पाता और यही उसकी प्रतिगामिता एवम् यहाँ तक कि विनाश की जड़ है ।

मूर्धन्य दार्शनिक प्रीतम ए० सोरोकिन कहते हैं कि कभी प्रगति के उच्च शिखर पर पहुँची रोमन सभ्यता सिर्फ इस कारण विनष्ट हो गई कि लोग समय के अनुरूप अपने विचारों और क्रियाकलापों में परिवर्तन नहीं ला सके । वे लिखते हैं कि तत्कालीन शासक जूलियस सीजर ने वहाँ के अधिकांश लोगों को एक ऐसा कार्ड मुहैय्या कर रखा था, जिसके अन्तर्गत सामान्य लोगों को जो नहीं सोचना और करना चाहिये था, उसकी उन्हें पूरी-पूरी छूट थी । बस यही खुली उच्छृंखलता धीरे-धीरे व्रण से नासूर बनता गया और उनके विनाश का कारण बना ।

आज हम बिल्कुल उन्हीं परिस्थितियों से गुजर रहे हैं । कहीं ऐसा न हो कि हमारी हठधर्मिता सर्वनाश की निमित्त बन जाय । अत: समय रहते हमें चेत जाना चाहिये और पिछली घटनाओं से सीख लेकर समय के अनुरूप अपने विचारों को परिवर्तित करते रहकर अपना अस्तित्व बचाए रखने का प्रयास करना चाहिये । इसी में हमारी प्रगतिशीलता है और समझदारी भी ।

स्वच्छता, सुगढ़ता के पक्षधर—जीव-जन्तु

मनुष्येतर प्राणियों की दिनचर्या, आदतें, स्वभाव देखकर लगता है कि वे मनुष्य से कहीं अधिक अपने शरीर की निवास स्थान की सफाई पसन्द करते हैं । कुछ पशु-पक्षी तो नित्य स्नान करते देखे जा सकते हैं । कुछ आवश्यकतानुसार करते हैं, कुछ ऋतुओं के संधिकाल में वृहद् सफाई का आयोजन करते हैं । इन सबके पीछे प्रकृति प्रेरणा ही रही होती है, जिसका पालन वे नियमपूर्वक एवम् कड़ाई से करते हैं । इससे न केवल वे स्वस्थ और प्रसन्न रहते हैं, वरन् जीवन की रक्षा भी होती है ।

ऋतुओं के संधिकाल में साँप अपने शरीर से केंचुल उतार देते हैं । सीपी, घोंघा आदि भी अपने शरीरों के खोल बदल देते हैं । मछलियाँ अपनी शक्ल में परिवर्तन कर लेती हैं । पक्षी अपने पंखों की निर्मोचन क्रिया कर डालते हैं, जिस प्रकार शीत ऋतु बीतने पर वृक्ष अपने पुराने पत्ते गिरा देते हैं । अनेक जीव-जन्तु अपने मुलायम रोंये अथवा बालों को गिराकर नवीन बालों से सुसज्जित हो जाते हैं । किन्तु यह क्रिया ऋतु चक्र कहकर टाल दी जाती है । यहाँ एक विचारणीय प्रश्न यह उपस्थित होता है कि यह अभियान प्रकृति द्वारा क्यों चलाया जाता है ? विशेषज्ञों का इस सम्बन्ध में कहना है कि ऐसा इसलिए भी किया जाता है कि जीवधारियों की त्वचा की ऊपरी परत में मैल जमा हो जाता है और परजीवी पलने लगते हैं । त्वचा में टूट-फूट भी हो जाती है । इसलिए बदलना आवश्यक हो जाता है । इसीलिए ऋतुओं के संधिकाल में प्रकृति द्वारा विशेष स्वच्छता अभियान चलाया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप प्रकृति के अधिकांश जीव-जन्तु, वृक्ष, वनस्पति इस शोधन प्रक्रिया में संलग्न देखे जाते हैं ।

कितने ही पक्षी नित्य स्नान करते हैं और अपने पंखों में छिपी गन्दगी, पसीना तथा मैल और परजीवी जन्तुओं को निकाल फेंकते हैं । वर्षा व गर्मी के अतिरिक्त वे सर्दियों में भी स्नान करते हैं । कुछ पक्षियों के पंखों के नीचे तैलीय ग्रन्थियाँ भी होती हैं, जिन्हें चोंच से नोंचकर वे तेल निकालते और परों पर तेल की कंघी जैसी करते देखे गए हैं । जल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्नान के बाद वे खुली धूप में अपने पंख सुखाते हैं, जिससे उन्हें विटामिन 'डी' प्राप्त होता है और वे वर्ष भर स्वस्थ बने रहते हैं । कुछ पक्षी बालू रेत स्नान का भी आनन्द लेते हैं । इसका रहस्य यह है कि उनके परों में परजीवी पलने से खुजली होती है, अतः उन्हें नष्ट करने के लिए मृतिका स्नान करते हैं । मृतिका स्नान के उपरान्त वे जल स्नान भी करते हैं । अतः शरीर की स्वच्छता का उन्हें पूर्ण ध्यान रहता है ।

पक्षियों के अतिरिक्त पशु भी अपनी सफाई और स्नान का ध्यान रखते हैं । वे भी धूल में लेटकर परजीवियों से छुटकारा पाने का प्रयत्न करते हैं अथवा कीचड़ और पानी में घुसकर उनसे मुक्ति पा लेना चाहते हैं, हिरन, गाय, बैल, हाथी स्वच्छ जल में स्नान करना पसन्द करते हैं । हाथी, गैंडा, भैंसा आदि घण्टों पानी में पड़े रहकर क्रीड़ा-कल्लोल करते रहते हैं । माँसाहारी और हिंसक जीव शेर, चीता, लकड़बग्घा तक स्नान करते हैं । हाथी धूल-मिट्टी में भी स्नान करना पसंद करता है । किन्तु सूअर या भैंसे की तरह गन्दी कीचड़ में लेटना पसंद नहीं करता ।

शारीरिक सफाई के अतिरिक्त पशु-पक्षी अपने बिल, कोतर, गुफा, घोंसले की सफाई का भी पूरा ध्यान रखते हैं और कितने ही पक्षी अपने घोंसलों में रोशनी तथा सुरक्षा का भी पूरा प्रबंध कर लेते हैं । सबसे विलक्षण घोंसला 'होर्नबील' पक्षी का होता है । होर्नबील की मादा वृक्ष की कोतर में अंडे देती है, जिसे नर होर्नबील ऊपर से मिट्टी और घास-फूँस से इस तरह बन्द कर देता है कि मादा केवल चोंच बाहर निकालकर केवल दाना, पानी और हवा ही ले सके तथा कोई शत्रु आक्रमण न कर सके । इतनी चतुराई से बनाए गए आवास की सफाई का होर्नबील को पूरा ध्यान रहता है । मादा अपनी अथवा बच्चों की बीट चोंच से बाहर निकाल देती है । जब बच्चे बड़े हो जाते हैं, तब कोतर का मुँह बड़ा कर दिया जाता है । मादा और बच्चे बाहर निकलकर धूप, मृतिका और पानी से स्नान करते हैं । बाद में अपने पंखों का निर्मोचन भी ।

इसी प्रकार बया पक्षी जिसे दर्जी चिड़िया या बीवर्स के नाम से जाना जाता है, भी बड़े कलात्मक ढंग से अपना घोंसला बनाती है तथा बच्चों के रहने के स्थान के अतिरिक्त मल-मूत्र की सफाई के लिए अलग प्रकोष्ठ की व्यवस्था बनाती है । पशु-पक्षियों में कम ही ऐसे पक्षी पाए जाते हैं, जो अपने रहने के स्थान को मल-मूत्र से गन्दा करते हैं । चूहे, खरगोश, नेवला आदि बिल बनाकर रहते हैं । बच्चों के रहने के लिए अलग कक्ष की व्यवस्था भी रखते हैं । उनके नीचे घास-फूँस का बिछौना भी बिछाते हैं । किन्तु कीड़े-मकोड़े परजीवी जन्तु हो जाने पर बिछौना बदल देने में आलस नहीं करते तथा अपने निवास स्थान को मल-मूत्र से गन्दा भी नहीं करते । जहाँ तक बन पड़ता है, वे बिल के बाहर ही मल-मूत्र त्यागते हैं और भोजन के अवशेष गिराते हैं ।

सहयोग, संगठन, सक्रियता की दृष्टि से ही नहीं सफाई के मामले में मधुमक्खियों की व्यवस्था देखते ही बनती है । इतने बड़े छत्ते में सारे काम-काज व्यवस्थित ढंग से बँटे गए होते हैं । श्रमिक, मजदूर शहद एकत्रित करते हैं । छत्ता बनाने वाले कारीगर छत्ता बनाते हैं । यदि कहीं गंदगी नजर आती है अथवा किसी सहयोगी की मृत्यु हो जाती है तो मृतक लाश को छत्ते में नहीं रहने दिया जाता । उसे उठाकर मजदूर मक्खियाँ दूर फेंक आती हैं । इसी प्रकार कुत्ता, बिल्ली, बन्दर आदि सब अपनी-अपनी तरह अलग-अलग ढंग से किसी न किसी तरह सफाई की व्यवस्था जुटा लेते हैं । बन्दरों के यदि जुएँ हो जाते हैं तो वे परस्पर एक-दूसरे का सहयोग करके उन्हें पकड़कर निकाल फेंकते हैं । इसी प्रकार प्रत्येक जीव अपने शरीर एवम् निवास की सफाई सुरक्षा का ध्यान रखता है और प्रकृति प्रदत्त स्वच्छता एवम् सुरक्षा की प्रेरणा का अनुसरण करता है । इस नियम की वे कभी उपेक्षा या अवहेलना नहीं करते ।

यह तो मनुष्य है जो बुद्धि-चातुर्य में तो स्वयं को प्रवीण-पारंगत मानता है किन्तु सफाई-सुगढ़ता के मामले में पक्षियों, जीव-जन्तुओं से कहीं पीछे है । अस्वच्छता-अनगढ़ता ही रोगों को आमंत्रित करती है । यदि आत्मशोधन की आवश्यकता समझते हुए मनुष्य दर्शन-अध्यात्म की प्रेरणाओं को हृदयंगम करना जरूरी मानता है तो इसके बहिरंग पक्ष स्वच्छता से उसे शुभारम्भ करना चाहिये । इसके लिए चाहे तो वह प्रकृति से, जीवों से प्रेरणा ले सकता है ।

मात्र विज्ञान नहीं सद्ज्ञान भी चाहिये

वैज्ञानिक क्षेत्र में एक नयी तकनीक का विकास हुआ है जिसे 'वायोनिक्स' कहते हैं । इस पद्धति में हजारों शोधकर्ता प्रकृति का अध्ययन गहराई से करने में लगे हैं । वायोनिक्स में प्रकृति के सभी जीव-जन्तुओं का अध्ययन, उनकी शारीरिक विशेषताओं का गूढ़ पर्यवेक्षण इसलिए किया जाता है कि उनके आधार पर नए प्रयोग-परीक्षण किए जा सकें । इस क्षेत्र में लगे वैज्ञानिकों का कहना है कि जीव-जन्तुओं के क्रिया-कलापों में इंजीनियरिंग के महत्वपूर्ण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिद्धान्त छिपे हैं । उनको समझा और अपनाया जा सके तो भौतिक क्षेत्र में मानव अबकी अपेक्षा कई गुना आगे बढ़ सकता है ।

शोधकर्त्ताओं का मत है कि मनुष्य ने मौलिक रूप में कुछ नहीं किया है । प्रकृति की नकल उतारकर प्रेरणा ग्रहण कर ही वह विकास की वर्तमान अवधि तक पहुँच सका है । वायोनिक्स के अध्ययन में लगे वैज्ञानिकों का कहना है कि प्रकृति संसार की सबसे कुशल प्रशिक्षक है । समय-समय पर वह मूक रूप से मनुष्य को पाठ पढ़ाती रहती है । उसकी प्रेरणा एवं प्रशिक्षण को सही रूप से जीवन में उतारा जा सके तो सर्वांगीण प्रगति का आधार बन सकता है ।

अब तक की प्रगति की समीक्षा करने पर यह तथ्य और भी स्पष्ट हो जाता है कि इंजीनियरिंग क्षेत्र में जितना विकास हुआ है—वह प्रकृति के जीव-जन्तुओं की नकल मात्र है । मेढक की आँखों की संरचना एवं देखने की पद्धति पर आधारित अनेकों यन्त्रों का निर्माण हो चुका है । मेढक की यह विशेषता है कि वह जीवित कीटकों का ही भक्षण करता है । जीभ की परिधि में आने वाले कीटकों को ही उसकी आँखें देख सकती हैं । नीचे पड़े हुए मृत जन्तुओं पर प्राय: उसकी दृष्टि नहीं पड़ती है । एक प्रयोग में 'जान्स होप' और 'ह्यूमर जोन' नामक कीटशास्त्रियों ने मृतक मक्खियों का ढेर मेंढक के पास लगा दिया । मक्खियों में गति न होने के कारण मेंढक की आँखें उन्हें नहीं देख सकीं । उनकी आँखों की बनावट ऐसी होती है कि वे गतिशील वस्तुओं को ही देख पाती हैं तथा उन्हीं का सन्देश भी मस्तिष्क तक पहुँचाती हैं । मेंढक की आँख की संरचना एवं क्रिया-पद्धति के आधार पर मिलिट्री में 'मैप रीडिंग' के लिए आँख बनाने में सफलता मिली है । अमेरिका की हवाई-सुरक्षा पद्धति जिसे 'आटोमेटिक ग्राउण्ड इनवारवन्मेंट' (ए० जी० ई०) कहते हैं—ऐसे ही राडार का प्रयोग किया जाता है । जिस प्रकार मेढक की आँखें मात्र अपने दुश्मनों एवं आहार को ही देखती हैं, उसी प्रकार ए० जी० ई० राडार भी कार्य करता है । सामान्यतया कई वस्तुएँ आकाश में एक साथ दिखाई पड़ती हैं । बादल, छोटी उल्काएँ, पक्षी, हवाई जहाज आदि भी दिखाई पड़ने के कारण असुविधा बराबर बनी रहती थी । उड़ने वाले यान अपने हैं या दुश्मन के इस निर्धारण में पर्याप्त समय लग जाता है । इस असुविधा का हल निकल आया है—ए० जी० ई० राडार द्वारा । मेढक की आँख के समान यह राडार मात्र दुश्मन के यानों का ही अंकन करता है । हवाई दुर्घटनाओं को रोकने एवम् यानों के आवागमन पर समुचित निगरानी बनाए रखने के लिए भी मेंढक की नेत्र पद्धति पर आधारित एयर ट्राफिक रेडार स्कोप का निर्माण हुआ है ।

रैटिल स्नेक एक विशेष प्रकार का सर्प होता है । वह अधिक गरम रक्त वाले जन्तुओं का ही शिकार करता है । तापमान जानने के लिए उसके मस्तिष्क पर एक विशेष सम्वेदनशील यंत्र होता है, जो एक डिग्री के हजारवें हिस्से तक का अन्तर माप सकता है । इस यंत्र द्वारा वह 'इन्फ्रारेड' किरणों को भी ग्रहण कर सकता है । वैज्ञानिकों ने इसके अध्ययन से प्रेरणा लेकर 'ऐन्टी एयर क्राफ्ट साइड विन्डर मिसाइल' और 'मेगा-सटेलाइट' का निर्माण किया है । इन यंत्रों से सूक्ष्मतम ताप नापने की आवश्यकता पड़ती है । आज की विकसित इन्फ्रारेड सेन्सिंग पद्धति भी इन्हीं सिद्धान्तों के आधार पर कार्य करती है । इन्फ्रारेड सेंसिंग पद्धति द्वारा संसार के किसी भी कोने से छोड़े गए राकेट के विषय में कुछ ही क्षणों में पता लगाया जा सकता है । 'कोनिकल चैम्बर विंग' के निर्माण को देखकर मानवी मस्तिष्क की सराहना करने को मन करता है, पर इसके निर्माण की प्रेरणा भी पक्षियों से मिली है । आकाश में तेज गति से उड़ने वाले समुद्री पक्षियों के पंखों की संरचना को देखकर जहाजों में स्थिरता देने के लिए उक्त 'विंग' का निर्माण सम्भव हो सका है ।

सामान्य से लेकर असामान्य भौतिक विज्ञान की उपलब्धियाँ प्रकृति प्रेरणाओं द्वारा ही प्राप्त हो सकी हैं । 'वायोनिक्स' की सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि एलेक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र में हुई है । अमेरिका के 'एअर बार्न इन्केमेन्ट लेबोरेटरी' ने एक ऐसी कृत्रिम आँख बनाई है, जो सामान्य कोशिकाओं से कैन्सर कोशिकाओं को पृथक् दर्शाती है । उक्त सूक्ष्मदर्शक यन्त्र की प्रेरणा मानवी आँख से मिली है । लिंकन लेबोरेटरी एवम् जनरल इलेक्ट्रिक कम्पनी ने एक ऐसे यन्त्र का निर्माण किया है, जो मानवी आँख की क्रियापद्धति का अनुसरण करती तथा गतिशील वस्तुओं की वास्तविक दूरी का बोध करा सकती है ।

कम्प्यूटर के निर्माण पर वैज्ञानिकों को गर्व है, पर एक सामान्य कीड़ा कहीं उससे अधिक सक्षम एवं सक्रिय है । उड़ती हुई मक्खी को पकड़ने में शिकारी कीड़े को एक सैकिण्ड का बीसवाँ भाग लगता है, जो कि किसी भी कम्प्यूटर की क्रियापद्धति से कहीं अधिक सशक्त है । 'डॉ० वैरन मैकुबोला' इस कम्प्यूटर प्रणाली के मूर्धन्य वैज्ञानिक हैं । उनका कहना है कि कम्प्यूटर जटिल मन्द बुद्धि वाले पशु होते हैं, उनमें सबसे पिछड़ी हुई चींटी जितनी भी मानसिक क्षमता नहीं होती है । जो कार्य चींटियाँ कर सकती है, वह शक्तिशाली कम्प्यूटर द्वारा भी सम्भव नहीं है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मछली के फेफड़ों का अध्ययन किया जा रहा है, कि उसमें ऐसी कौन-सी विशेषता है जिसके द्वारा पानी में रहते हुए भी ऑक्सीजन ग्रहण करती तथा कार्बन डाइ-ऑक्साइड छोड़ती है । इससे पनडुब्बियों के और परिष्कृत उपयोग में मदद मिलेगी । डॉल्फिन मछली के मुँह के निकट एक विशेष प्रकार की इलास्टिक त्वचा होती है, जिससे वह ९० प्रतिशत मुँह से खिंचाव को कम कर सकती है । यू० एस० रबर कम्पनी जहाजों एवं पनडुब्बियों के उपयोग के लिए डॉल्फिन मछली से प्रेरणा लेकर प्लाएबिल रबर स्किन के निर्माण में संलग्न है ।

वायोनिक्स की शोध में विश्व के हजारों जीवशास्त्री, भौतिकविद्, रसायनशास्त्री, इलेक्ट्रॉनिक्स के विशेषज्ञ, इन्जीनियर, गणितज्ञ लगे हुए हैं । वे जीवों की बायोलॉजिकल संरचनाओं के रहस्योद्घाटन करके भौतिक क्षेत्र में नवीन प्रयोग-परीक्षणों में जुटे हैं । भौतिक प्रगति में प्रकृति प्रेरणाएँ असामान्य रूप से सहायक सिद्ध हुई हैं । बुद्धिमान मनुष्य ने जीवों से भरपूर लाभ उठाया है, और आगे भी उठाएगा ।

पर प्रकृति प्रेरणाओं का एक और भी पक्ष है, जिसका अनुसरण कहीं अधिक आवश्यक है—जीव-जन्तुओं का प्राकृतिक जीवन-क्रम । सहजता, सरलता, उमंग, उत्साह से भरी दिनचर्या । कृत्रिमता से दूर हटकर स्वास्थ्य, प्रसन्नता एवं प्रफुल्लता से भरे जीवन के लिए मनुष्य को भी पशु-पक्षियों की प्राकृतिक दिनचर्या से प्रेरणा लेनी होगी । न केवल जीव-जन्तुओं वरन् प्रकृति का प्रत्येक घटक मनुष्य को प्रेरणा देने में समर्थ है । स्वास्थ्य ही नहीं, मानवी एकता, समता, सुचिता, सहकार एवं सौहार्द्र को विकसित करने के लिए भी प्रकृति का अध्ययन करना होगा । सृष्टि की सुव्यवस्था एवं सन्तुलन प्रत्येक अणु-परमाणु के परस्पर सहकार-सहयोग पर ही आधारित है । मानवी एकता एवम् आत्मीयता का आधार भी यही है । मनुष्य ने प्रकृति की नकल द्वारा यांत्रिकीय प्रगति की है । शान्ति और संतोष से भरे, स्नेह 'आत्मीयता' सौहार्द्र से, स्निग्धता, प्रसन्नता से ओत-प्रोत जीवन की प्राप्ति के लिए भी प्रकृति के परस्पर के सहकार-सहयोग की प्रेरणाओं को भी अपनाना होगा । वायोनिक्स की उपलब्धियों का सही उपयोग वह तभी कर पाएगा ।

घ्राण शक्ति का जीवन विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान है

नेत्रों को मानव जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । आँखें जो देखती हैं, उनसे हम बहुत कुछ जानते-सीखते हैं, और तदनुरूप प्रेरणाएँ प्राप्त करके अपनी गतिविधियों का निर्माण करते हैं । यों कान भी अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका हमारे ज्ञान सम्वर्धन और जीवन विकास के क्षेत्र में कम सम्पादित नहीं करते ।

इसके अतिरिक्त एक और भी महत्वपूर्ण इन्द्रिय है—नासिका । उसमें निवास करने वाली घ्राणशक्ति का महत्व भी नेत्र, कान जैसा ही है पर दुर्भाग्य से अब उसे दुर्गन्ध और सुगन्ध लेने तक ही सीमित कर लिया गया है ।

जीवन को स्थिर रखने वाला अमृत श्वास के द्वारा ही प्राप्त होता है । ऑक्सीजन को शरीर के अंगों तक पहुँचा कर जीवन धारण किए रहने की आवश्यकता को नासिका ही पूरी करती है । श्वास चलना बन्द होते ही मृत्यु सामने आ खड़ी होती है और जीवन का पटाक्षेप हो जाता है ।

छोटे कृमि-कीटकों का नहीं, पशु वर्ग के जीवधारियों का जीवन प्रवाह बहुत करके गन्ध शक्ति पर निर्भर रहता है । नेत्र और कान की अपेक्षा वे अपनी घ्राण शक्ति पर ही अधिक निर्भर रहते हैं । वंश वृद्धि का प्रकरण तो पूरी तरह उनका उसी सूत्र के साथ जुड़ा रहता है । मनुष्येतर जीवन में कामोत्तेजना-कामतृप्ति ही एक महत्त्वपूर्ण हर्षोल्लास है, उसकी सुख एवम् सुविधा के लिए भी ये जीवधारी गन्ध तत्व पर ही निर्भर रहते हैं । यदि वे घ्राण शक्ति से वंचित रहे होते तो फिर उनका जीवन निर्जीवों से भी अधिक बुरे स्तर का होता ।

गन्ध का महत्व मनुष्य के लिए भी कम नहीं । घ्राण शक्ति को विकसित करके हम न केवल शारीरिक और मानसिक शक्ति ही विकसित कर सकते हैं वरन् आत्मबल भी प्रचुर मात्रा में बढ़ा सकते हैं। योग साधना में स्वर विद्या के इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए अत्यधिक महत्व दिया गया है ।

चीटियाँ किसी फर्श या दीवार पर चलती हैं तो वे कतारबद्ध एक के पीछे एक के क्रम से होती हैं । किसी कारणवश कुछ चीटियाँ पिछड़ जाएँ तो भी वे वही रास्ता अपनाती हैं, जिस पर उस दल की आगे वाली चीटियाँ गई थीं । अभीष्ट स्थान तक जाकर घर वापस लौटने पर भी यही क्रम रहता है । रास्ते की अड़चन अथवा दल वर्ग बदलने का कुछ अजनबीपन आदि आने पर चीटियाँ आपस में इस प्रकार हाथ और नाक मिलाती हैं मानो वे चुपचुप कुछ पूछताछ कर रही हों । असल में वे इस प्रकार एक-दूसरे को सूँघती भर हैं । एक-दूसरे के शरीर से आती हुई गन्ध के आधार पर इन्हें सामने वालों का पूरा इतिहास विदित हो जाता है । भटकन दूर कर अपनी राह पकड़ने का बहुत कुछ उद्देश्य वे सहज ही पूरा कर लेती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मधुमक्खियाँ मकरन्द पान करके जब अपने घर आती हैं तो पास-पास बने हुए छत्तों के भ्रम में पड़े बिना वे अपने ही छत्ते में चली जाती हैं । यदि गलती से कोई मक्खी भटककर किसी दूसरे के छत्ते में घुसने का प्रयत्न करे तो उसमें रहने वाली मक्खियाँ उस पर टूट पड़ती हैं और मारकर भगा देती हैं ।

मक्खियों की शक्ल-सूरत एक होने पर भी यह पहचान कैसे होती है कि किसका घर कहाँ है इस प्रकार का उत्तर देते हुए जीवविज्ञानी बताते हैं कि गन्ध ही इस पहचान का प्रमुख आधार है । हर छत्ते की अपनी एक स्वतंत्र गन्ध होती है । रानी मधुमक्खी की लार ग्रन्थियों से एक गन्ध युक्त स्राव निकलता है । इसी पर मुग्ध होकर उस छत्ते की मक्खियाँ आजीवन ब्रह्मचर्य का व्रत पालन करते हुए रानी मक्खी की सेवा में निरत रहती हैं । यह गन्ध उस पूरे छत्ते में बस जाती है और जो बाँदी मक्खियाँ उसमें रहती हैं वे भी उसी महक से महकने लगती हैं । इस गन्ध को सभी मधुमक्खियाँ पहचानती हैं और उसी के आधार पर अपने छत्ते की, अपने वंश परिवार की पहचान करती हैं ।

दीमकों में भी मधुमक्खियों की भाँति ही एक रानी और शेष बाँदी होती हैं । रानी के दो ही काम हैं पेट भरना और प्रजनन करना । अंडा पालन बाँदी दीमकों के जिम्मे होता है । बाँदियाँ ही रानी को भोजन कराने से लेकर अन्य सेवा कार्यों में जुटी रहती हैं । ऐसा क्यों होता है ? मधुमक्खियों की तरह यहाँ भी वही उत्तर मिलता है । रानी दीमक के शरीर की त्वचा से एक आकर्षक गन्ध स्राव निरन्तर निकलता है और वह इतना हृदयग्राही होता है कि उसे परिवार की दीमकें उसका लोभ छोड़ ही नहीं सकती और इस गन्ध केन्द्र की सेवा-सुरक्षा में संलग्न रहना अपना अहोभाग्य समझती हैं । इस गन्ध से अन्य दीमकों में एक विशेष प्रकार का आनन्द छाया रहता है, जिसके प्रभाव से वे निजी प्रजनन तक से उदासीन रहती हैं । कोई दीमक अपने परिवार से भटक जाय अथवा रानी मर जाय तो ही दूसरी दीमकों में लैंगिक परिपक्वता आती है और वे अपनी नर-मादा विशेषता को कार्यान्वित करती हैं ।

कीट-विज्ञानी एलिस्टेयर स्टुआर्ट ने दीमकों के समाज गठन और सामूहिक क्रिया-कलाप का आधार उनके शरीर से निकलते रहने वाला डाइटर्पीनोइड हाइड्रोकार्बन नामक रसायन बताया है । नेता दीमक की प्रतिक्रियाएँ इस रसायन में न्यूनाधिकता उत्पन्न करती हैं और उसी प्रभाव से गन्ध प्रवाह में थोड़ा अन्तर आ जाता है । हवा में फैलने वाली इस गन्ध प्रवाह के आधार पर दल की अन्य दीमकें समझ जाती हैं कि नेता द्वारा क्या संकेत किया जा रहा है वे सब अनुशासित सैनिकों की तरह आदेशों का पालन करने में जुट जाती हैं । यही है वह मूल आधार जिस पर दीमकों की अद्भुत सामूहिकता टिकी हुई है ।

प्रो० कार्लवान फ्रिश ने मधुमक्खियों में एक रसायन खोजा है, जिसे रानी रसक्वीन सक्टैंस-कहा जाता है । इसमें ट्रासडिसेनोइक ऐसिड और लिमोनीन की प्रधानता होती है । यह एक मादक गन्ध उत्पन्न करता है और रानी मक्खी के शरीर से निरन्तर अंडे उत्पन्न होते रहने की स्थिति उत्पन्न करता है । इस गन्ध की मोहक तीव्रता ही बाँदी मक्खियों को लगभग प्रणय संवेदना जैसी रस धार बहाती रहती है और स्वेच्छापूर्वक उस रानी की बाँदी बनने में दाम्पत्य सुख जैसी सुखद सन्तोष की अनुभूति करती है । इन बाँदी मक्खियों के पेट के पिछले भाग में पाई जाने वाली 'नासाफोन ग्रन्थि' उस रानी रस से तृप्त होती रहती है, अस्तु उन्हें विवाह की आवश्यकता अनुभव नहीं होती और ब्रह्मचारी का सन्तोषी जीवन बिताती रहती हैं ।

खतरे से सावधान होने का, आहार का साधन मिलने का, अमुक काम में जुटने का—विश्राम का, क्रीड़ा-कल्लोल का, आदेश-निर्देश दीमक नेता द्वारा अपने दल को दिया जाता रहता है । इसके लिए वह न तो वाणी का उपयोग करती है और न झंडी दिखाने जैसी कोई दृश्य क्रिया का आश्रय लेती है वरन् अपनी मनःस्थिति को गन्ध रस में बदल कर हवा के सहारे अपने साथियों पर छिड़क देती है । यदि यह स्राव मन्द या बन्द हो जाय तो नेता दीमक किसी को कुछ बताने या कराने की स्थिति में नहीं रहेगी ।

चीटियों में भी यह गन्ध रस उनकी समाज संरचना चलाता है । उनमें हैप्टेनोल सिट्रिल और सिट्रोनेलल रस निकलते हैं, जो गन्ध के रूप में उनकी समूहगत गतिविधियों को चलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहता है ।

फ्रांस के स्ट्राम्बुर्ग में साइक्रोफिजियोलोजी प्रयोगशाला के डॉ० फिलिप कोपार्ट्स इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि छोटे जीवों में उनकी घ्राण शक्ति ही प्रधान पथ-प्रदर्शक का काम करती है, उनकी चेतना आँखों की अपेक्षा नासिका के माध्यम से अधिक ज्ञान सम्वर्धन करती और उसके सहारे अपनी गतिविधियाँ निर्धारित करती है । परस्पर एक-दूसरे की शारीरिक और मानसिक स्थिति का परिचयात्मक आदान-प्रदान वे गन्ध के आधार पर ही करती हैं ।

लोवो जाति के भेड़िये यह जानते हैं कि शिकारी कुत्ते गन्ध के आधार पर ही पीछा करते हैं, इसलिए जब कभी उन्हें शिकारी कुत्तों से पाला पड़ता है, तो अपने भागने का रास्ता ऐसे आगे-पीछे उल्टा-सीधा करते हैं कि उन भूलभुलैयों में कुत्ते ठीक प्रकार पीछा न कर सकें और वे सहज ही बचकर भागने में सफल हो सकें । राल बैरोजा की लकड़ी जलाकर जहाँ कोयला बनता है वहाँ की गन्ध में प्रायः भेड़ियों की गन्ध खो जाती है । लोवो इस वैज्ञानिक तथ्य को भी जानते हैं और जब कभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उन्हें आक्रमणकारी कुत्तों से पाला पड़ता है तो उस कोवला गन्ध वाले क्षेत्र में घुस जाते हैं फिर कुत्ते उन्हें खोजने में असमर्थ हो जाते हैं । इस स्थिति का लाभ उठाकर वे कुत्तों पर उल्टा आक्रमण भी करते हैं ।

कुत्ते सूँघकर यह जान जाते हैं कि उनके मालिक का मिजाज इस समय कैसा है और अगले क्षण वह क्या करने जा रहा है, चोरी और हत्याओं का पता लगाने के लिए प्रशिक्षित कुत्ते बहुत ही उपयोगी साबित हुए हैं । वे गन्ध के आधार पर उस रास्ते चलते हैं, जिस पर कि अपराधी गया है और अन्ततः जहाँ भी वह होता है जाकर पकड़ लेते हैं । पुलिस को इस आधार पर अपराधों का पता लगाने में बड़ी सहायता मिल रही है ।

प्रयोगशाला में चूहों की घ्राणेन्द्रिय शल्य क्रिया करके निकाल दी गयी तो वे एक प्रकार से विक्षिप्त जैसे बन गए । मित्र-शत्रु का अन्तर, बिल का रास्ता और खाद्य अखाद्य का विश्लेषण तक करने में वे असमर्थ हो गए । अपने-पराए का अन्तर करना उनके लिए कठिन हो गया ।

मादा कुत्ता, बिल्ली, खरगोश, हिरन आदि पशुओं की जननेन्द्रिय से ऋतु काल में एक विशेष प्रकार की गन्ध निकलती है । वह इतनी मादक होती है कि नासिका के माध्यम से मस्तिष्क में पहुँचकर नर के शरीर और मन में विचित्र प्रकार का आवेश उत्पन्न करती है और वह उस उद्गम की तलाश में दौड़ पड़ता है, जिधर से यह गन्ध आती है । कभी-कभी नरों में भी इस प्रकार के उभार आते हैं और वे उस क्षेत्र की मादाओं को आकर्षित करते हैं, पर मादकता मादा की गन्ध में अधिक और नर में कम होती है । इसलिए जिस तेजी से मादा के संकेतों पर नर को आवेशग्रस्त होना पड़ता है, वैसा नर को उद्विग्न देखकर मादा को कदाचित व्याकुलताग्रस्त होना नहीं पड़ता है तो भी वह न्यूनाधिक मात्रा में प्रभावित अवश्य होती है ।

मस्क रैट—कस्तूरी चूहा अमेरिका और कनाडा में पाया जाता है, उसके भी मूत्र मार्ग से और मल द्वार के मध्य एक विशेष प्रकार की कस्तूरी निकलती है । अल्पाइन, नकरे, गेजेल, एन्टीलोप, डोरकस तथा मार्टेन जैसे पशुओं के भी सुगन्धित द्रव निकलता है । कुछ मगरमच्छ, कछुये तथा सर्प भी कस्तूरी वर्ग के पाए गए हैं । उपरोक्त गन्ध जाति के हर प्राणी में यह कस्तूरी नहीं होती । उसकी प्रौढ़ता के दिनों में ही उसका विकास होता है । बचपन में तो होती ही नहीं । ढलती आयु में वह क्रमशः घटती जाती है और अधिक वृद्धता आने में वह स्वयंमेव घटती चली जाती है । आश्चर्य की बात है कि उपरोक्त गन्ध भले ही किसी भी प्राणी में पाई जाय पर मिलेगी मलद्वार और मूत्र मार्ग के मध्य वाले स्थान पर ही ।

रुचिकर सुगन्ध प्राणियेन के शरीर से भी प्राप्त की जाती रही है । इस प्रकार की उपलब्धि में कस्तूरी को अग्रणी समझा जाता है । प्रायः स्तनपायी जीवों में ही इस प्रकार की गन्ध का बाहुल्य रहता है पर अब कुछ पक्षियों, सरीसृपों, सीप वर्गी कीड़ों, तितलियों और कृमि-कीटकों में भी ऐसी ही गन्धें ढूँढ़ निकाली गई हैं । पशुओं में कस्तूरी मृग के अतिरिक्त लगभग वैसी ही मिलती-जुलती गन्ध सिवेट, एम्बट ग्रिस, मस्क रैट, कैस्टोरियम में भी पाई गयी है ।

नर कस्तूरी मृग के शिश्न और नाभि के बीच एक अतिरिक्त आन्तरिक कोष्ठ होता है । यह बड़ी ग्रन्थि छोटे कई ग्रन्थि गुच्छकों से मिलकर बनी होती है । इसमें एक स्राव उत्पन्न होता है और क्रमशः गाढ़ा होते जाकर कठोर हो जाता है, शरीर के भीतर वह गीला ही रहता है । हिरन को मारकर उसके इस कड़ी गाँठ और तरल स्तर वाले समस्त द्रव को निकालकर हल्की धूप में सुखा लिया जाता है । यही कस्तूरी है । जो युवा हिरन में आधे औंस से लेकर दो औंस तक पायी जाती है । ताजी कस्तूरी दूधिया रंग की होती है । सूखने पर वह जैसे-जैसे कड़ी होने लगती है, वैसे-वैसे ही भूरे, लाल रंग में बदलती जाती है । गन्ध का मूल उद्गम कस्तूरी में पाया जाने वाला 'कीटीन' रसायन है । रसायनविद् कस्तूरी का गैस द्वारा द्रवीकरण करके इस चिपचिपे रंगहीन स्वत्व को निकाल लेते हैं । इसकी एक बूँद यदि तीन हजार गुनी वस्तु में मिला दी जाय तो भी उसमें कस्तूरी की गन्ध आएगी । इसे एलकोहॉल, पानी में और ईथर में घुलाया जा सकता है । रायासनिक विश्लेषण करने पर इसमें अमोनिया, कलिस्टेरीन, चर्बी, मोम, जिलेटीन, एल्बूमिन आदि पदार्थ पाए जाते हैं ।

जीवों से प्राप्त होने वाली सुगन्धों में कस्तूरी मृग के बाद सिवेट नामक बिल्ली का है । यह अफ्रीका में विशेष रूप से पाई जाती है । इथोपिया में तो इसका पालन मुर्गीपालन की तरह एक गृह उद्योग-सा बन गया है । यह इण्डोशिया में भी पाई जाती है । पूँछ के नीचे जननेन्द्रिय के समीप एक ग्रन्थि गह्वर में यह रस एकत्रित होता रहता है । पालने वाले प्रायः हर महीने उसे निचोड़ लेते हैं । हर बार वह प्रायः १० ग्राम की मात्रा में मिल जाता है ।

तीसरा सुगन्ध द्रव देने वाला प्राणी 'बीवर' है । यह साइबेरिया, अमेरिका, कनाडा आदि देशों में पाया जाता है । वैसे यह जलचर है पर कुछ समय थल पर भी मगर, कछुआ आदि की तरह निर्वाह करता है । जननेन्द्रिय और मलद्वार के मध्य दो छोटी नाशपाती जैसी ग्रन्थियाँ होती हैं । इन्हीं के भीतर 'कैस्टोरियम' नामक कस्तूरी पायी जाती है ।

ह्वेल मछलियों का यौवन मद उसकी उद्दीप्त स्थिति में बह निकलता है और वह जल के सम्पर्क में आकर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कड़ा हो जाता है । समुद्र की सतह पर वह अक्सर तैरता हुआ पाया जाता है । दूर-दूर तक उड़ती हुई यह गन्ध मछुआरों को अपनी जानकारी देती है और वे नावें दौड़ाते हुए उसे ढूँढ़ लेते हैं । हाथी का यौवन मद उसके कान के पास बहता है, जिन दिनों वह द्रव बहता है हाथी की मनःस्थिति पागल जैसी हो जाती है । इसलिए उसका प्राप्त कर सकना सरल नहीं होता, फिर वह गन्ध अत्यन्त तीव्र होने पर भी मनुष्य नासिका को उतनी प्रिय नहीं लगती-इसलिए ह्वेल के यौवन मद की तरह हाथी के यौवन मद का उपयोग कदाचित ही होता है ।

नर हाथी में यह गन्ध ग्रन्थियाँ आँखों के पास होती हैं । ऊँट के सिर के पीछे । मगर-मच्छ की गरदन से यह स्राव टपकता है ।

जीवविज्ञानी डॉ० नेस्विट ने कृषि के लिए हानिकारक कीटकों को पकड़कर उनका यौनाकर्षी रस एकत्रित किया है । इसे जहाँ भी छिड़का जाता है, वहाँ नर कीटक अनायास ही सब ओर से उड़ते-खिंचते चले आते हैं और ढेर के ढेर जमा हो जाते हैं तब उसे विष घोल छिड़ककर मार डालना अति सरल हो जाता है । सामान्यतया एक मादा कीटक उतना ही यौनाकर्षी रस निसृत करती है जिससे समीपवर्ती कीटकों को अता-पता लग सके । फिर वे लोग जब उलझ पड़ते हैं तो यौवन गन्ध की स्थिति दूसरी हो जाती है और फिर अन्य नर कीट उधर दौड़ना बन्द कर देते हैं । किन्तु यौनाकार्षी रस यदि अधिक मात्रा में संग्रह किया गया है तो वह दूर-दूर तक और अधिक गहरी गन्ध फैला रहा होगा । ऐसी दशा में नर-कीटकों को आमन्त्रण और आकर्षण बहुत दूर तक ही नहीं बहुत बड़े आकर्षण के साथ मिलेगा । इस खिंचाव से वे अपने को रोक नहीं पाते और आमन्त्रण केन्द्र पर झुण्ड के झुण्ड इकट्ठे होते चले जाते हैं ।

कनाडा के कीटविज्ञानी आर० एच० राइट ने इस सन्दर्भ में बहुत माथा-पच्ची की है कि मादा कीटकों के शरीर से ऋतुकाल में निकलने वाले 'फेरोमोन' गन्ध परमाणु नर तक पहुँचकर उसे क्यों कर उत्तेजित करते हैं । और वह क्यों अपनी सामान्य जीवनचर्या छोड़कर मादा के सान्निध्य के लिए आतुर हो उठता है । तलाश करते-करते वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यौनाकर्षी रस के कण 'फेरोमोन' मात्र रासायनिक सम्मिश्रण ही नहीं होते वरन् उनमें रेडियो तरंगें भी रहती हैं, जो भिन्न लिंग वाले प्राणी में पाए जाने वाले 'ऐन्टीना' को थपथपाती हैं । इस खड़खड़ाहट से नर की प्रसुप्त कामवासना जाग पड़ती है और वह आमन्त्रण की दिशा में आतुर होकर दौड़ता है । यह रस नर में आमतौर से न्यून और निर्जीव स्तर का होता है, वह नर को उत्तेजित भर करता है पर मादा वर्ग को आकर्षित करने की उसमें क्षमता नहीं होती । स्वयं अपने आप में भी वह अकारण उत्तेजना ग्रहण नहीं करता । यही कारण है कि कीट जगत में नर की ओर से नारी के प्रति प्रणय निवेदन की पहल नहीं की जाती ।

कैनबरा के कामनवेल्थ साइंटिफिक एण्ड इण्डस्ट्रियल रिसर्च आर्गनाइजेशन की एटोमोनाजी विभाग ने कृमि-कीटकों के शरीर से निकलने वाले रसों की खोज की है और पाया है कि उनकी अधिकांश हलचलें इन द्रवों में भरी हुई गन्ध के आधार पर ही चलती हैं । प्रजनन कर्म तो पूर्णतया इन्हीं गन्धों पर आश्रित रहता है । फ्रांसीसी कीटविज्ञानी ई० ओ० विल्सन तथा प्रो० हैनरी फ्रावे इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं, कि कीट जीवन का संचार सूत्र उनके शरीरों के समय-समय पर उठने वाले रसायनों की गन्ध पर निर्भर रहता है । ट्रापिकल प्रोडक्ट्स इन्स्टीट्यूट लन्दन के शोध अधिकारी डा० बेडा नोस्विट्ट तो कीट वर्ग के यौनाकर्षी रसों का संग्रह करके उनके विभिन्न सम्मिश्रणों द्वारा वर्ण शंकर कीट जातियाँ उत्पन्न करने तक में सफल हुए हैं ।

गन्ध का अपना महत्त्व है । कीटवर्ग पर तो उसी का अधिकार है, पशु वर्ग को भी उसी से भारी सहायता मिलती है । इस प्रकार सृष्टि के अधिकांश प्राणी अपनी जीवन यात्रा गन्ध के राजमार्ग पर चलते हुए पूरी करते हैं, उनका प्रजनन कार्य तो बहुत करके उसी गन्ध प्रेरणा के आधार पर सम्पन्न होता है । दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं कि गन्ध का देवता ही, उन्हें कठपुतली की तरह विविध क्रिया-कर्म करने के लिए नचाता रहता है ।

मनुष्य ने घ्राण शक्ति की उपेक्षा करके उसे निर्बल बना दिया है । उससे यह उतना महत्त्वपूर्ण लाभ उठा नहीं पाता जितना कि उठाया जा सकता है । यों तो धूप, दीप, पुष्प, चन्दन से देव पूजा में और चित्त की प्रफुल्लता के लिए इत्र-फुलेल आदि का उपयोग किया जाता है । खाद्य पदार्थों को सुगन्धित बनाने के लिए भी तरह-तरह के पदार्थ प्रयुक्त होते हैं पर हम उसका वह महत्त्व नहीं समझ पाते जो अन्य प्राणियों ने समझा है ।

नेतिकर्म, स्वर योग, प्राणायाम सोऽहम् साधना, नासिकाग्र पर ध्यान आदि साधना प्रकरणों में नासिका इन्द्रिय के वायु संचार को कुछ रीति-नीति जानने के उपरान्त भूतकाल के साधक बहुत कुछ प्राप्त कर सके थे । वे जानते थे कि घ्राणेन्द्रिय को सुविकसित करके कितना कुछ प्राप्त किया जा सकता है । जो तत्व प्राणिजगत के अधिकांश सदस्यों के लिए जीवन दाता—वंश वृद्धिकर्ता, उल्लास और आवेश की उत्तेजना प्रदान करने जैसे महत्वपूर्ण प्रयोजनों का आधार बना हुआ है वह क्या मनुष्य के लिए कुछ भी उपयोगी नहीं हो सकता ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घ्राणशक्ति की उपयोगिता और गन्ध विज्ञान पर नये सिरे से खोज करने की आवश्यकता है, ताकि इस महत्वपूर्ण आधार के सहारे मानवीय क्षमताओं को अधिकाधिक विकासोन्मुखी बनाया जा सके ।

परमसत्ता के अनुदान- हर जीवधारी को एक समान

परमात्म-सत्ता की विधि-व्यवस्था इस विराट-ब्रह्माण्ड का संचालन बड़ी निराली सुदक्षता के साथ कर रही है । इसका प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक घटक अपना जीवन क्रम निर्बाध रूप से चला सके, इसलिए उसने सभी को परिस्थितियों के अनुरूप सक्षम बनाया है । यद्यपि मनुष्य को अनेकानेक विभूतियाँ एवं विशेषताएँ मिली हैं, इसी कारण वह सभी जीवों में ज्येष्ठ एवं श्रेष्ठ है । पर इसका यह तात्पर्य नहीं है कि मनुष्येतर प्राणियों के प्रति उसकी उदारता व प्यार में न्यूनता है ।

जीवजगत का अध्ययन करने पर पता चलता है कि इन कनिष्ठ समझी जाने वाली अन्यान्य सन्तानों को भी ऐसी विलक्षण एवम् अद्भुत क्षमतायें प्रदान की हैं, जिससे कि वे जीवन व्यापार का निर्वाह सक्षमता और सफलतापूर्वक कर सकें ।

जीव-जन्तुओं की नाना विधि विलक्षणताएँ, उनकी उपयोगिता, आवश्यकता के अनुरूप ही हैं । सभी जीवधारी अपनी दृष्टि, श्रव्य, घ्राण आदि संवेदन क्षमताओं के आधार पर विश्व उद्यान में सफलतापूर्वक विहार करते और इसी आधार पर सहयोग-सहकार अपनाते देखे जाते हैं । इनमें दृष्टि क्षमता एक ऐसी विभूति है, जिसके द्वारा इस विश्व उपवन की सुन्दरता को देखा एवं उसमें से उपयोगी को चुना जा सकता है । पक्षियों में यह क्षमता आश्चर्यजनक रूप से अधिक होती है । बहुत ऊँचे उड़ने वाले गिद्ध, बाज जैसे पक्षी ऊपर से ही छोटे-छोटे कीड़ों को देख लेते हैं और उन्हें उठाकर आहार बना लेते हैं । इनकी यह दृष्टि क्षमता मनुष्य की अपेक्षा आठ गुनी अधिक है ।

कुछ अन्य जन्तु जो दृष्टि क्षमता में हीन होते हैं, उनमें वैश्व चेतना ने इस अभाव को विशिष्ट प्राण शक्ति को देकर उन्हें आश्चर्यजनक रूप से सक्षम बनाया है । उदाहरण के लिए कुत्तों में जहाँ रंग बोध प्रायः नहीं के बराबर होता है और वे संसार को धुँधले, धूसर रंग का ही देख पाते हैं । वही उनकी घ्राण शक्ति विलक्षण रूप से विकसित होती है । एक एलसेशियन कुत्ते में लगभग २२०० लाख घ्राण कोशिकाएँ पायी जाती हैं । मनुष्य में इन कोशों की संख्या मात्र ५० लाख होती है । अतः वह केवल अधिकतम १० हजार प्रकार की गंधों को पहचान सकता है, जबकि कुत्तों में लाखों गुना अधिक गन्धों को पहचानने की क्षमता पायी जाती है ।

नेवले के सूँघने की शक्ति मनुष्य तो क्या कुत्ते से भी अधिक होती है । कोलम्बो के अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर मादक पदार्थ की तस्करी की रोकथाम के लिए प्रशिक्षित नेवलों का उपयोग किया जाता रहा है । तस्करी का माल ढूँढ़ निकालने या विस्फोटक सामग्री को खोज निकालने में इन छुद्र कहे जाने वाले जीवों की अद्भुत क्षमता देखते ही बनती है । इस कार्य के लिए नेवलों को प्रशिक्षित करने का कार्य अमेरिका में वृहद् पैमाने पर किया जा रहा है । प्राणिविशेषज्ञों का कहना है कि नेवला एक अत्यधिक समझदार और सूझबूझ वाला प्राणी है । किसी भी प्रकार की सूक्ष्म गन्ध को सूँघ सकने में वह सक्षम है ।

कुछ जीवधारी ऐसे भी हैं, जिसमें मात्र निज के उपयोग की एक ही प्रकार की गन्ध पहचानने की अद्भुत सामर्थ्य है । जैसे कि एक प्रकार के गुबरैले का लार्वा । यह अपना भोजन अंगूर की जड़ों से प्राप्त करता है । इनसे निकलने वाली कार्बन डाई- आक्साइड गैस की गन्ध को यह आश्चर्यजनक रूप से पहचानता है । भूमि के ऊपर से इस गन्ध को पहचान कर उसके सहारे जमीन के अन्दर घुसकर जड़ों तक पहुँच जाता है ।

कुछ जीव-जन्तुओं की परिस्थितियाँ एवं विहार काल असामान्य होते हैं और तदनुरूप उनका व्यवहार भी । जैसे कि रात्रि विचरण । ऐसे जन्तुओं में दृश्येन्द्रियों का कोई विशेष महत्त्व उपयोग नहीं होता । अतः इनमें परमसत्ता की कृपा एक अन्य विशिष्टता श्रव्य क्षमता के रूप में प्रस्फुटित होती है । चमगादड़ प्रति ध्वनि द्वारा स्थिति का निर्धारण शत-प्रतिशत सही ढंग से करते हैं । ये जन्तु कुछ विशिष्ट प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करते हैं, जिनमें से मात्र कुछ एक ही मनुष्य के लिए श्रव्य हैं । इनकी प्रतिध्वनियों द्वारा ये अपने शिकार का पता लगा लेते हैं । साथ ही उड़ते समय मार्ग में पड़ने वाले अवरोधों, विघ्नों को भी जान लेते हैं । इस प्रकार बिना किसी विघ्न-बाधा के सुरक्षित विचरण करते हैं । प्रत्येक अपनी स्वतः उत्पन्न की हुई ध्वनि की प्रतिध्वनि द्वारा ही मार्गदर्शन करता है और साथ-साथ अपने अन्य साथियों की प्रति ध्वनियों से भ्रमित भी नहीं होता । उनकी यह अपश्रव्य पराश्रव्य ध्वनि एवं प्रतिध्वनि उत्पादन तथा वर्गीकरण प्रक्रिया वैज्ञानिकों के लिए आज भी एक रहस्य बनी हुई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक और अन्य आश्चर्यजनक सुनने का तरीका उत्तरी अमेरिका की इक्न्यूमान मक्खी में पाया जाता है । इसके पैरों में कान होते हैं । इनका अधिकांशतया उपयोग वह हार्नटेल लार्वा के लकड़ी चबाने से उत्पन्न ध्वनि को सुनने में करती है ।

अन्यान्य जन्तु सम्वेदनात्मक संकेतों के प्रति आग्रही होते हैं । उनके क्रिया-कलापों का संचालन इन्हीं पर निर्भर है, उदाहरणार्थ—मधुमक्खी पहले फूलों की गंध से अत्यधिक आकर्षित होती है । वे पत्तियों के आधार पर उनकी आकृति एवम् रंग की पहचान करती हैं । भोजन चूस लेने के पश्चात् वे सीधे अपने छत्ते की ओर आकर्षित होती हैं । ठीक उसी प्रकार जिस तरह पूर्व में पुष्पों की ओर थीं । अब कोई भी पुष्प चाहे कितना ही आकर्षक एवं सुगन्धित क्यों न हो उन्हें लुभा नहीं सकता । नियामक सत्ता ने एक विशिष्टता इन्हें प्रदान की है, वह है पराबैंगनी किरणों के प्रति सम्वेदनशीलता । इसी क्षमता के द्वारा वह सूर्य की सही स्थिति का निर्धारण करने में सक्षम होती है । चाहे वह कितने ही घने बादलों में क्यों न छिपा हो ? इसी से दिशा-निर्धारण प्रक्रिया सम्भव होती है ।

परमात्मा को अपनी सृष्टि के प्रत्येक घटक से कितना प्यार है, उसने उनकी आवश्यकतानुरूप कैसी-कैसी विचित्रता-विशिष्टता प्रदान की है । इसके अनेकानेक उदाहरण वैज्ञानिकों द्वारा की जा रही नित्य-निरन्तर नवीन खोजों के रूप में सामने आ रहे हैं । उन्हें हम भले ही अपने मनोनुकूल किसी भी भाषा या शब्दावली में व्यक्त करें, किन्तु हर दशा में यह समस्त विशिष्टताएँ, विभूतियाँ वस्तुतः परमसत्ता की सरल समदर्शिता को ही प्रदर्शित करती हैं ।

ऐसी ही एक नवीन विलक्षणता का पता सन् १९५२ में कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रो० डॉ० टी० एच० वुलांक ने लगाया । उन्होंने बताया कि रैटिल सर्प में तृतीय नेत्र भी पाया जाता है । यह नासाद्वार एवं आँखों के बीच दो छोटे गड्ढों के रूप में होते हैं और ऊष्मा सम्वेदन के सिद्धान्त पर कार्य करते हैं । इनके माध्यम से वह रात्रि विचरण के समय घोर अँधेरे में भी अपना शिकार भली प्रकार खोज लेते हैं ।

ऐसी अनेकों विशेषताएँ-विलक्षणताएँ परमपिता ने अपनी सन्तानों को उनकी आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुरूप प्रदान की है, ताकि वे सब इस विश्व वाटिका में सुगमता एवम् सक्षमतापूर्वक विहार कर सकें ।

सचमुच उस सत्ता का स्नेह प्यार अगाध है । संसार का कोई पदार्थ या व्यक्ति जितना समीप हो सकता है उसकी अपेक्षा ईश्वर की निकटता और भी अधिक है । फिर भी आश्चर्य है, इतना सब होते हुए सृष्टि का सर्वाधिक बुद्धिमान कहा जाने वाला मनुष्य अपनी बुद्धि के आवरण में लिपटा उससे अरबों-खरबों कोसों दूर है । उसकी समीपता की अनुभूति के साथ जिस परम आनन्द और सन्तोष का अनुभव होना चाहिये वह उसे कभी हुआ ही नहीं ।

स्रष्टा का सृजन कितना सुन्दर कितना समग्र ?

थलचर होने के नाते हम धरती की ऊपरी सतह पर पाए जाने वाले पदार्थों और प्राणियों के सम्बन्ध में ही थोड़ा-बहुत जानते हैं । धरती की भीतरी परतों से पाई जाने वाली खनिज सम्पदा की भी खोजबीन की जाती है । इतने पर भी धरातल की थोड़ी नीची परतों में रहने वाले प्राणि-परिवार के सम्बन्ध में बहुत कम जानकारी मिल सकी है । सीधा सम्बन्ध जिनसे न हो उनके सम्बन्ध में उपेक्षा और अनभिज्ञता रहना स्वाभाविक भी है ।

जलचरों की अपनी एक अनोखी दुनिया है । उसमें धरातल पर रहने वाले प्राणियों की तरह ही जलचर रहते हैं और अपने स्तर की साधन-सुविधाएँ उसी क्षेत्र से प्राप्त करते हैं । उनकी संचरना भी ऐसी है कि उस क्षेत्र में निवास करने और आवश्यक सुविधा-साधन उपलब्ध करने में किसी प्रकार की कठिनाई अनुभव न करें ।

जलचरों में मछली प्रधान है । उसकी विविधिता देखकर भी आश्चर्य होता है, फिर यदि अन्य जलचरों के बारे में अधिक जाना जा सके तो प्रतीत होगा कि प्राणिजगत उससे कहीं बड़ा है जितना कि हम देखते और जानते हैं ।

विश्व की समग्र संरचना और उसमें पाए जाने वाले पदार्थों और प्राणियों की विविधता देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है, कि उनका सृजनकर्ता कितना कुशल, कितना कलाकार और कितना समर्थ हो सकता है ?

समुद्र में पाए जाने वाले प्राणियों में स्पंज, मूँगा बनाने वाले प्राणी, कीड़े, स्टारफिस, सीअरचिन, आक्टोपस, घोंघे, केंकड़े, मछलियाँ, बैक्टीरिया एवं डायटम पाये जाते हैं । इनके अतिरिक्त खतरनाक प्राणियों में ह्वेल, मैनेटी, डोलमिन्स, समुद्री सर्प प्रमुख हैं । गहरे समुद्र में रहने वाले इन प्राणियों को पैलेजिक कहते हैं ।

रीढ़ वाली मछलियों की अब तक २०,००० जातियाँ खोजी जा चुकी हैं । समुद्र में रहने वाली मछलियाँ समुद्री पानी के रंग के अनुरूप अपना रंग बदल लेती हैं । देखने में हरी या नीली दिखाई पड़ती हैं । उनके मुँह नुकीले होते हैं, जिससे वे आसानी से तैर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सकें । ईश्वर ने परिस्थितियों के अनुरूप सुरक्षा की कैसी व्यवस्था बनायी है इसे सहज ही इन समुद्री जीवों में देखा जा सकता है ।

सील मछली ५० मील प्रति घण्टे की रफ्तार से चलती है । 'ट्यूना' नामक मछली ९ मील प्रति घण्टा की चाल चलकर अपने १५ साल की उम्र में १० लाख मील की यात्रा तय करती है । गुरुत्वाकर्षण के प्रभाव से बचने के लिए मछलियाँ निरन्तर तैरती रहती हैं । मछलियों की आँखों में पलकें नहीं होती हैं । यह एक रहस्य बना है कि मछलियाँ सोती हैं या नहीं । रात में मछलियाँ समुद्री सतह पर तैरती हैं, क्रिन्तु दिन में सूर्य की गर्मी से बचाव के लिए काफी गहराई में चली जाती हैं ।

'ईल' मछली प्रत्येक वर्ष शरद ऋतु में यूरोप की नदियों को छोड़कर अटलांटिक महासागर में लाखों की संख्या में आ जाती हैं । ये मछलियाँ 'बरमूडा' के निकट 'सरगासो' सागर में एकत्रित हो जाती हैं तथा यहीं अंडे देकर मर जाती हैं । इन अंडों से निकली मछलियाँ यूरोप के समुद्री किनारे के पास तीन साल तक घूमती रहती हैं तदोपरान्त नदियों में चली जाती हैं ।

शार्क के शरीर में हड्डियाँ नहीं पाई जाती । हड्डियों की पूर्ति 'कार्टिलेज' करता है । शार्क मछली को चलती-फिरती 'मासिका' कहा जाता है । कठिन परिस्थितियों में भी शार्क जीवित रहती है । यह सबसे अधिक खतरनाक मछली है । सफेद शार्क से नाविकों को सदा खतरा बना रहता है । 'लैमन' शार्क एक प्रकार का द्रव निकालती है । यह द्रव आदमी के चमड़े को जला सकता है । अब तक कुल २५,००० समुद्री मछलियों की पहचान की जा चुकी हैं ।

स्रष्टा ने बुद्धि, भाव-सम्वेदनाओं की दृष्टि से मनुष्य को सर्वश्रेष्ठ बनाया । अपनी इन विशेषताओं के कारण ही वह सृष्टि का मुकुटमणि कहलाता है किन्तु अन्य प्राणियों में भी ऐसी विशेषताएँ दी हैं, जिन्हें देखकर मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ होने का दम्भ टूट जाता है ।

ह्वेल समुद्र में रहने वाला एक भीमकाय जन्तु है । अथाह समुद्र में तैरते हुए यह एक छोटा द्वीप-सा प्रतीत होता है । इसकी लम्बाई १०० फुट से लेकर १६५ फुट तक पायी जाती है । एक साधारण ह्वेल किसी दस मंजिली इमारत के बराबर होती है । १२ से लेकर १५ फुट तक मोटी ह्वेल का वजन सामान्यत: १२० टन से १५० टन तक होता है । इस प्रकार लगभग हाथी से २० गुना वजन इसका होता है ।

एक व्यक्ति का हृदय हाथ की मुष्ठिका के बराबर होता है, जबकि ह्वेल का एक कार के बराबर होता है । ह्वेल का हृदय ५० से ७० लीटर तक स्वच्छ रक्त पूरे शरीर में छोड़ता है । ह्वेल के शरीर में २००० से ३५०० हजार लीटर तक तेल पाया जाता है । एक ह्वेल की औसत आयु ५०० वर्ष होती है ।

जन्म के दो वर्ष बाद से ह्वेल शिशु प्रजनन के योग्य हो जाता है । एक बार में मादा एक या दो बच्चे देती है । बच्चा जन्म के पूर्व ११ माह तक माँ के गर्भ में विकसित होता है । जन्म के समय शिशु का वजन लगभग ८ टन होता है । प्रति घण्टा ८ पौण्ड की दर से वजन में वृद्धि होती है । नवजात ह्वेल शिशु की लम्बाई २७ फीट होती है । कुछ माह के बाद इसकी लम्बाई दूनी हो जाती है । एक शिशु ५०० से लेकर ९०० लीटर तक माँ का दूध पीता है ।

ह्वेल का सुरक्षा यंत्र उसकी पूँछ है । एक लम्बी बस की आकार की यह पूँछ नाविकों को सदा भयभीत करती रहती है । पूँछ की फटकार चार-पाँच मील के क्षेत्र में सुनायी पड़ती है । अच्छे से अच्छे, मजबूत जहाज इसकी टक्कर से बच नहीं पाते हैं ।

न्यूजीलैण्ड के कई द्वीपों के बीच में कई खतरनाक खाड़ियाँ हैं, जहाँ बड़ी-बड़ी नुकीली चट्टानें अभागे जहाजों का शिकार करती थी, इन चट्टानों से टकराकर कई समुद्री जहाज नष्ट हो गए । अब से कोई ८० वर्ष पूर्व एक डॉल्फिन मछली ने जहाजों के पथ-प्रदर्शन का काम शुरू कर दिया । वह शीघ्र ही मल्लाहों में लोकप्रिय हो गयी । मल्लाह डॉल्फिन के पीछे-पीछे चलने लगे । एक बार दो समुद्री जहाज एक ही खतरनाक क्षेत्र की ओर बढ़ रहे थे । डॉल्फिन के लिए समस्या पैदा हो गई कि किसे बचाए ? अपनी विवेक बुद्धि से उसने तीव्र गतिमान जहाज के पथ-प्रदर्शन का निर्णय लिया । उसे सुरक्षित क्षेत्र में पहुँचाकर डालफिन बिजली की तेजी से पलटी व चट्टानों से कुछ ही दूर दूसरे जहाज को टकराने से बचा लिया ।

डॉल्फिन को मछलियों से अधिक मनुष्य से प्यार है । न्यूजीलैण्ड के एक तट पर एक डॉल्फिन मछली की प्रतिमा स्थापित है, जो आपोजैक नामक मछली की स्मृति में निर्मित की गई है । वह तैराकों में बहुत लोकप्रिय थी । लोगों के साथ वाटरपोलो खेलती, नौसिखिये तैराकों को सहारा देकर बचाती व छोटे-छोटे बच्चों को पीठ पर सैर कराती थी । एक दिन वह एक तीव्र गतिमान नाव से टकराकर मर गई । प्रतिमा उसके मित्रों ने उसकी याद बनाए रखने के लिए स्थापित की है ।

डॉल्फिन समुद्र का अत्यन्त बुद्धिमान जीव है । इसका मस्तिष्क मानव मस्तिष्क से बड़ा है । मनुष्य में व उसमें इतना ही फर्क है कि उसके मानव जैसे हाथ-पैर नहीं हैं, बोलने की विशेषता उसमें नहीं है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होनोलूलू के अनुसंधान केन्द्र के वैज्ञानिकों ने एक अन्य डॉल्फिन को इस प्रकार प्रशिक्षित किया है कि वह वायरलेस के सन्देश समझ लेती थी । उसके शरीर के साथ एक रिसीवर बाँध दिया गया था । जब केन्द्र से इसे कोई सन्देश भेजा जाता तो वह तत्काल उसका पालन करती थी ।

डॉल्फिन तीन विभिन्न आवाजें निकाल सकती है । मनुष्यों की तरह वह कहकहे लगा सकती है, स्त्रियों की तरह चीख सकती है तथा शिकार पकड़ने में सफल होने के बाद बिल्ली की तरह म्याऊँ कर सकती है ।

कौटुम्बिकता एवं सामाजिकता इनका एक प्रमुख गुण है । यदि कोई मछली बीमार पड़ जाए तो बस्ती की सारी मछलियाँ उसका हाल पूछने आती हैं व शिकार लाकर देती हैं, जहाँ इसके लिए उन्हें भूखा न रहना पड़े ।

जीवन में सम्प्रेषणशीलता का बड़ा महत्त्व है । इसी के माध्यम से पौधों से लेकर जीव तक अपनी किस्मों, मित्र या शत्रु की पहचान या उनके अस्तित्व का पता लगाते हैं । समुद्री जीवों के अनेकानेक रूपों या व्यवहारों की जानकारी होने पर हमें चकित रह जाना पड़ता है ।

इन रहस्यमय समुद्री जीवों का विशद् अध्ययन करने के बाद यह पता चला है कि एक लम्बी अवधि तक समुद्र में रहने के बाद प्रजनन के उद्देश्य से प्रेरित होकर ये अपनी पुरानी जगह वापस लौट आती हैं । विशाल समुद्र से नदी में वापस आना कठिन कार्य है, परन्तु यह पता चला है कि कुछ रासायनिक तत्व उन्हें सही रास्ता ढूँढ़ने में काफी मदद करते हैं । यह प्रवासचर्या सहज ही हमें पक्षियों में होने वाले 'माइग्रेशन' प्रक्रिया का स्मरण दिला देती है । वैज्ञानिकों ने प्रवास में रहने वाली मछलियों की मानसिक लहरों का तुलनात्मक अध्ययन कर गन्ध के महत्व की जानकारी प्राप्त की है ।

कुछ जाति की मछलियाँ आपस में आवश्यक सामाजिक सूचनाएँ देने के लिए रासायनिक विधि का प्रयोग करती हैं, इन मछलियों में अपनी जाति, मित्र तथा दुश्मन, कामभावना एवम् दूसरों की स्थिति पहचानने की अजब शक्ति होती है ।

जापान के लोग समुद्र की तली पर 'सरगैसो' नामक घास की खेती करते हैं, जिससे दवाइयाँ बनाई जाती हैं । इन लोगों को 'आक्टोपस' से सतर्क रहना पड़ता है क्योंकि इनका निवास समुद्र के तली में होता है । मादा आक्टोपस एक बार में ४०,००० से ५०,००० तक अंडे देती है । अंडों से बच्चे जन्मते ही सूर्य प्रकाश की ओर भागते हैं ।

आक्टोपस की १०० से अधिक जातियाँ पायी जाती हैं, सामान्य आक्टोपस ३ फुट के हुआ करते हैं । कुछ इतने छोटे होते हैं, जो अँगुली के नाखून पर बैठ सकते हैं । भूमध्य सागर में पाए जाने वाले 'आक्टोपस' के टेन्टेकिल्स साठ फुट तक होते हैं जबकि प्रशान्त महासागर में पाये जाने वाले 'आक्टोपस' के ५० फुट लम्बे टेन्टेकिल्स पाए गए इससे सामान्यतः यह अनुमान है कि इसकी लम्बाई ११० फुट तक होती है ।

'मेरान स्टियक्स' जो फ्लोरिडा के निकट पाम बीच स्थित मेरिन बायोलीजिकल लेबोरेटरी के अध्यक्ष हैं, का कहना है कि मुझे आक्टोपस में दिलचस्पी इसलिए हुई कि उसमें गिरगिट की तरह रंग बदलने की क्षमता है और आँखें बिल्कुल मनुष्य जैसी होती हैं तथा आश्चर्यजनक चतुरता होती है ।

फेडरिक ड्यूमा और जे० बाई० कास्टो ने सागर जल में साहसों की कहानी 'दी साइलेन्ट वर्ल्ड' में लिखा है, कि एक दिन मैंने एक छोटे आक्टोपस को पकड़ा, पकड़ते ही वह जेट विमान की गति से भागने लगा और लाल रंग की पिचकारी जैसी छोड़ी । इनकी एक बहुत बड़ी विशेषता यह है कि ये १ इंच के आठवें हिस्से की जितनी कम जगह में से अपने शरीर को निकाल सकता है ।

एडवर्ड रिकेट्स और जैक केतविन ने अपनी किताब 'विटवीन पैसिफिक टाइड्स' में लिखा है कि आक्टोपस की आँखें बिल्कुल आदमी जैसी विकसित होती हैं तथा बिना रीढ़ की हड्डी वाले किसी भी प्राणी से बड़ा और अधिक कार्यक्षम मस्तिष्क होता है । मनुष्य जैसी पाँच ज्ञानेन्द्रियों की शक्ति उनमें भी होती है और टेन्टेकिल्स की शक्ति एवम् नियन्त्रण क्षमता मनुष्य जैसी होती है तथा मैस्कुलर क्षमता तो बहुत बढ़ी-चढ़ी हुआ करती है ।

धरती के प्राणियों के सम्बन्ध में हम कुछ जानते हैं । जलचरों की थोड़ी-सी जानकारी भी मिलने लगी है । यह ज्ञान जितना-ही बढ़ेगा और रहस्यों की गहराई में उतरने का उतना अवसर मिलेगा । उसी अनुपात से सृष्टि और उसके स्रष्टा की विचित्रताएँ समझते और उसके सौन्दर्य को निहार कर पुलकित होते चले जाएँगे ।

प्रगति और अवगति पुरुषार्थ पर अवलम्बित

कितनी ही मछलियाँ अपने शरीर से बिजली उत्पन्न करती हैं और उसका झटका मारकर शिकार को बेहोश करके उदरस्थ करती हैं । शिकार का यह तरीका अपेक्षाकृत अधिक सरल पड़ता है । शार्क इस प्रकार की मछलियों में प्रसिद्ध है । ह्वेल अपने आकार के अनुसार ६०० वोल्ट तक बिजली पैदा करती है । इतना झटका खाकर कोई मजबूत आदमी भी ढेर हो सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन मछलियों को ऐसी विशेषता कैसे मिली इसकी खोज करने वालों का कथन है कि विद्युत उत्पादन के अवयव हर मछली में होते हैं । उनके द्वारा उत्पादन भी होता रहता है । पर वे उसे अन्य क्रिया-कलापों में खर्च करने की आदत डाल लेती है । फलतः ऐसा चमत्कार नहीं दिखा पातीं जैसा कि शार्क मछली शिकार पर आक्रमण करने के लिए बिजली का प्रहार करने में अभ्यस्त हो गई है । किसी अन्य जाति की मछली को यदि प्रयत्नपूर्वक इसके लिए सधाया जाय तो वह भी वही काम कर सकती है, जो शार्क करती है ।

मनुष्य शक्तियों का भण्डार है । उसमें इतने अधिक प्रकार की इतनी अधिक मात्रा में क्षमताएँ विद्यमान हैं कि उनका आभास पाने पर आश्चर्य होता है । वे किसी-किसी में दृष्टिगोचर होती हैं, किसी में नहीं, इसका कारण एक ही है कि जिन्होंने प्रस्तुत भण्डार में से आवश्यक को खोजा और उभारा, उनमें वो काम करने लगी । इसके विपरीत जो अनजान या अकर्मण्य बना रहे, उन्हें सामान्य लोगों अथवा गए-गुजरों जैसा जीवन व्यतीत करना पड़ा ।

भूमि में उर्वरता होती है, पर बिना प्रयत्न किए उसमें से अनायास ही फसल उग पड़े ऐसा कहाँ होता है, पुरुषार्थ छोटे-बड़े हर काम के लिए आवश्यक है, अन्यथा थाली में रखा ग्रास तक मुँह में प्रवेश न कर सकेगा । पुरुषार्थ का तात्पर्य इतना ही है कि जो विद्यमान है, उसे सही तरीके से उगाया और काम में लगाया जाय । जो है ही नहीं उसके लिए पुरुषार्थ करने पर भी कुछ बनता नहीं । चट्टान पर उपवन कैसे उगेगा ? मानवी पुरुषार्थ की प्रशंसा इसलिए की गई है कि उसकी आत्मसत्ता में, समर्थ काया में सफलता की अजस्र और अगणित सम्भावनाएँ भरी पड़ी हैं । ईश्वर ने उसे विभूतिवान बनाया है । प्रयत्न करने और समुन्नत बनाने का अवसर प्राप्त करना उसकी अपनी मर्जी पर निर्भर है ।

संसार में अनगिनत विशिष्ट व्यक्ति हुए हैं । उन्होंने अपनी-अपनी मर्जी के क्षेत्रों में असाधारण सफलताएँ प्राप्त की हैं । उन उपलब्धियों को देखकर उन्हें चमत्कारी, भाग्यवान अथवा वरदान सम्पन्न बताया है, पर वस्तुतः ऐसा कुछ भी होता नहीं है । सूझ-बूझ, लगन और मेहनत का नाम ही चमत्कार है । यह वैभव हर किसी के पास समुचित मात्रा में विद्यमान है पर उसे समझने और कुरेदने का कोई विरले ही प्रयत्न करते हैं ।

राबर्ट एल० बिले ने रहस्य, रोमांच भरे ऐसे घटनाक्रमों को खोजा, जिन पर मनुष्य को सहज विश्वास नहीं होता । इसके लिए उसने पुस्तकों से संकलन नहीं किया वरन् १९८ देशों में भ्रमण करके जो सामग्री जुटाई उसके प्रमाण और चित्र भी एकत्रित किए । इस प्रयास के लिए इंग्लैण्ड के राजा ने उसे दूसरा मार्कोपोलो कहा ।

यही व्यक्ति कार्टून निर्माता के रूप में भी प्रख्यात हुआ । उसके बनाए व्यंग्य चित्र ३८ देशों के प्रायः ३०० समाचार पत्रों में १८ भाषाओं में प्रकाशित होते रहे । इन अखबारों की पाठक संख्या करोड़ों थी ।

ऐसे उदाहरणों में भूतकालीन इतिहास के अगणित पृष्ठ भरे पड़े हैं और अभी भी आए दिन ऐसे घटनाक्रम सामने से गुजरते रहते हैं । शरीर की संचरना की दृष्टि से लोगों के बीच नगण्य-सा अन्तर है । मस्तिष्क भी न्यूनाधिक मात्रा में एक जैसा ही है । कठिनाइयों और सुविधाओं के अवसर हर किसी के सामने रहते हैं । सहयोगी और विरोधी हर किसी का पीछा करते हैं । फिर कुछ ऊँचे उठते हैं, कुछ नीचे गिरते हैं और कुछ त्रिशंकु की तरह बीच में लटके रहते हैं । यह उनकी निजी प्रतिभा और तत्परता के न्यूनाधिक होने की परिणति है । उन्हें घटाने-बढ़ाने हेतु मनुष्य स्वयं ही उत्तरदायी है ।

विशेषताओं में हमसे कहीं आगे हैं—अन्यान्य प्राणी

विकास-क्रम में मनुष्य सबसे आगे माना जाता है । माता के गर्भ में प्रवेश करते समय उसका भार एवम् विस्तार जितना होता है, उसी को अस्तित्व का प्रथम परिचय कह सकते हैं । इस समय उसकी जो स्थिति होती है उसकी तुलना में प्रौढ़ावस्था तक पहुँचते-पहुँचते वह प्रायः अपनी वृद्धि एक अरब गुनी बढ़ा लेता है । इस विकासक्रम को देखकर उसकी प्रगतिशील क्षमता पर आश्चर्य होता है पर यह नहीं मानना चाहिये कि अन्य प्राणी सर्वथा पिछड़ी स्थिति में ही पड़े रहते हैं और अपनी प्रगति नहीं करते । अपने आरम्भकाल में प्राणियों की जो स्थिति थी, उसकी तुलना में सभी ने आशाजनक उन्नति की है और इस समय वे इतने आगे बढ़ गए हैं कि उसे देखकर आश्चर्यचकित होना पड़ता है । इसमें ईश्वर की निष्पक्ष न्यायकारिता का ही पग-पग पर दर्शन होता है ।

विकास एवं रचनाक्रम में वरिष्ठ कहा जाने वाला मनुष्य अपनी विशिष्टता, प्रतिभा, बुद्धि-वैभव पर इतराता भले ही हो पर सृष्टि के अन्यान्य प्राणियों की तुलना में कई अर्थों में वह पीछे रह जाता है । अकशेरुकीय प्राणियों में कॉकरोच को ही लें तो प्रकृति ने उसकी शारीरिक संचरना को इतना मजबूत बनाया है कि आदमी की तुलना में वह सौगुना अधिक विकिरण सहन कर सकता है । मानवी काया पर गुरुत्वाकर्षण के १८ जी. के बराबर दबाव पड़ने से हड्डियाँ टूटने-चरमराने लगती हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु तिलचिट्टा है कि जिस पर १२६-जी का दबाव चार घण्टे तक निरन्तर पड़ते रहने पर भी वह जीवित रहता और अपना सामान्य क्रिया-कलाप करता रहता है ।

वैज्ञानिकों ने अनुसंधानों के आधार पर यह पता लगाया है कि भीमकाय शरीर वाले सरीसृप डाइनोसौर, जो करोड़ों वर्ष पूर्व कभी इस धरती पर छाए हुए थे, किन्तु किन्हीं परिस्थितियोंवश अब विलुप्त हो चुके हैं, कॉकरोच भी उन्हीं का समकालीन प्राणी है । डाइनोसौर जिन प्रतिकूल परिस्थितियों को नहीं झेल सके और अपना अस्तित्व गँवा बैठे उसी वातावरण में कॉकरोच जीवित बने रहे । ईश्वर प्रदत्त मजबूत सुरक्षा कवच से ढका शरीर एवम् परिस्थितियों से तालमेल बिठा सकने की अद्भुत कुशलता ने ही इसे सुरक्षित रखा है ।

इन्हीं क्षमताओं से सम्पन्न होने के कारण आज 'स्पेस रिसर्च' में इस जीव को विशिष्ट प्रकार के कैप्सूलनुमा उपकरणों में पर्याप्त हवा मात्र भर कर 'स्पेस' में भेजा जाता है । उसके स्नायविक एवम् पेशीय प्रतिक्रियाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए इलेक्ट्रोड लगा दिए जाते हैं ।

सामान्यत: जीवधारियों में उनके कद के अनुसार उनकी आयु हुआ करती है । उदाहरणार्थ, चूहे की आयु एक वर्ष, कुत्ते की १२ वर्ष और घोड़े की १७ वर्ष होती है । चमगादड़ का कद चूहे जितना ही होता है, जिसके हिसाब से उसकी आयु एक वर्ष होनी चाहिये, परन्तु वह २० वर्ष या उससे अधिक समय तक जीवित रहता है । विख्यात प्राणिविद् जेम्स पोलिंग के अनुसार यह कहा जा सकता है कि नियम के अनुसार वे असामान्य आयु वाले होते हैं । मनुष्य के भारी-भरकम डील-डौल वाली काया से इसकी तुलना करें तो वह इसके सामने नगण्य ठहरेगा ।

इसी तरह हम जो भोजन ग्रहण करते हैं उसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा जैसे पोषक तत्वों की बहुलता रहती है । सन्तुलित आहार न मिलने पर जीवनीशक्ति क्षीण होती है । परन्तु चमगादड़ जीवनपर्यन्त विशेषकर एक ही तत्व चरबी वाले कीड़ों को खाता रहता है फिर भी न तो उसकी जीवनीशक्ति कमजोर पड़ती है और न स्वास्थ्य लड़खड़ाता है ।

वैज्ञानिकों ने चमगादड़ को 'अनुपम प्राणी' की संज्ञा दी है । वस्तुत: यह नाम उन्हें उनकी विशेषताओं के कारण ही मिला है । हाईस्पीड फोटोग्राफ द्वारा यह देखा गया है कि जब उसे खाने के लिए बहुत अधिक मात्रा में कीड़े-मकोड़े मिल जाते हैं तो वह अपने पंखों को थैलीनुमा आकार दे देता है और उसी में उन्हें एकत्र कर लेता है तथा आवश्यकता पड़ने पर उड़ते समय भी खाता रहता है । ध्रुव प्रदेशों को छोड़कर सर्वत्र पाया जाने वाला यह विलक्षण जीव खदानों, गुफाओं, खण्डहरों, वृक्षों आदि में निवास करता है, किन्तु अभी तक यह एक रहस्य ही बना हुआ है कि जाड़े की ऋतु में करोड़ों की संख्या में ये कहाँ गायब हो जाते हैं ।

सृष्टि के आरम्भ में जीवन अमीबा जैसे छोटे प्राणियों के रूप में प्रकट हुआ था । उसमें जन्मजात रूप से विद्यमान प्रकृति की महत्वाकांक्षा ने आगे बढ़ने और साधन उपलब्ध करने का पुरुषार्थ उत्पन्न किया । जो चाहता है सो करता है—जो करता है सो पाता है, का सिद्धान्त अपनाकर विभिन्न समुदायों के प्राणी वर्तमान स्तर तक पहुँचे हैं । भविष्य में उनकी महत्वाकांक्षा ही उपयुक्त दिशाधारा का निर्धारण करेगी और उसी प्रेरणा के अनुपात से वे क्रमश: आगे बढ़ते चलेंगे । परन्तु मनुष्य की स्थिति कुछ दूसरी ही है । वह पूर्वजों की तुलना में आगे बढ़ने की अपेक्षा अवनति की ओर अग्रसर होता जा रहा है । वह इन प्राणियों से ही कुछ शिक्षा ले तो आगे बढ़ने का मार्गदर्शन लेता रह सकता है ।

प्राणियों की सक्षमता और कुशलता

इस पृथ्वी पर मनुष्य तो मात्र ५०० करोड़ ही रहते हैं, पर उनकी तुलना में हजारों गुने अन्यान्य-प्राणी रहते हैं, इनमें से पशु-पक्षी, मगर, मछली जैसे परिचित प्राणी तो थोड़े से ही हैं । वे भी मनुष्यों की तुलना में १०० गुने अधिक हो सकते हैं, पर सूक्ष्मजीवी नेत्रों की दृश्य सीमा से बाहर वालों की संख्या तो इतनी अधिक है, उनकी गणना नहीं कल्पना ही की जा सकती है । जल-थल और नभ में जो भी असंख्यों जीव हैं, उनकी उपस्थिति से कोई जगह खाली नहीं है, पर उनके सम्बन्ध में हम बहुत ही कम जानते हैं । उनके स्वार्थों के साथ अपने स्वार्थ मिलाकर चलने की बात तो कभी सोचते नहीं, सोचते भी हैं तो शोषण ही ध्यान में रहता है । संरक्षण और पोषण नहीं ।

भूमि की उर्वरता इन्हीं सूक्ष्मजीवियों पर निर्भर है । वे ही वनस्पति के उगने और बढ़ने में सहायता करते और संतुलन बनाए रहते हैं । यदि उनकी संख्या कम हो जाए तो प्रकृति विकृति में बदल जाती है और वनस्पति को नष्ट करने वाले कृमि-कीटक उपज पड़ते हैं । कीटनाशक औषधियों के द्वारा उनका विनाश करने का प्रयास किया जाने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगा, पर प्रकृति को तो अपने सन्तुलन का ज्ञान है । उसने उन कीटकों को यह अभ्यास करा दिया कि वे इन मारक विषों को ही पचाने लगें और उनका नशे की तरह सेवन करके उल्टे अधिक ढीठ बनने लगें ।

प्रकृति ने सभी प्राणियों को भावनाशील और कर्तव्यपरायण बनाया है । जो व्यतिरेक करता है वह अपनी करनी का फल भोगता है । बच्चा माता का दूध ठीक तरह पीता है, तब तक वह दुलार से छाती पर चिपकाए रहती है, पर जब वह उद्दण्डता पर उतारू होता है और स्तनों को काटकर लहूलुहान करने का तरीका अपनाता है तो माँ उसके लिए समुचित उपाय अपनाती है । बोतल का दूध पिलाती है और छाती लगाने की बजाय पालने में झुलाने का प्रबन्ध करती है । प्रकृति सभी जीवधारियों का भरण-पोषण ठीक प्रकार करती है । उनमें प्रत्येक को इतनी क्षमता और बुद्धिमत्ता भी देती है कि कठिन परिस्थितियों में भी अपना काम चलाते रहें । मनुष्य का यह अहंकार ठीक नहीं कि उसकी चतुरता असाधारण एवम् सर्वोपरि है । जीव को अपने-अपने प्रयोजन के उपयुक्त ऐसी क्षमता एवम् भावनाएँ प्रदान की हैं कि उन्हें देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

जिस प्रकार पृथ्वी की उर्वरता बढ़ाने वाली प्रजातियों का बाहुल्य है, उसी प्रकार मनुष्य के साथ रहने वाले कीड़-मकोड़े भी उसे स्वच्छता, सुव्यवस्था का पाठ पढ़ाते हैं । साथ ही गलती करने पर करारा पाठ भी पढ़ाया है । शरीर की स्वच्छता ठीक न रखने पर जूँ उत्पन्न हो जाते हैं । बिस्तर को अस्वच्छ रखने पर खटमल आ घुसते हैं । घर में अनाज या दूसरी वस्तुएँ फैली-बिखरी फिरें और गन्दगी फैलाएँ, इसकी सफाई का काम चूहों के जिम्मे है । मकान में सीलन उत्पन्न होने पर जो कृमि उत्पन्न होते हैं उन्हें छिपकली, तिलचिट्टे ठिकाने लगाते रहते हैं । जहाँ-तहाँ सड़न, कीचड़ से उत्पन्न होने वाले जन्तुओं को मक्खी-मच्छर निगलते रहते हैं । मक्खी गन्दगी बटोरती है पर स्वयं असाधारण रूप से स्वच्छ रहती है । दोनों पंखों से शरीर पर कहीं भी मैल जमा नहीं होने देती ।

वन में अनावश्यक रूप से बढ़ते हुए घास पत्ते को वन जीव खाते रहते हैं । वनजीवों की संख्या अनावश्यक रूप से न बढ़ने पाए, इसलिए सिंह, व्याघ्र उनका नियंत्रण रखते हैं, पर साथ ही इस बात का भी ध्यान रखते हैं कि अनावश्यक रूप से मार-काट न की जाय । जब पेट खाली होता है तभी आखेट करता है अन्यथा पेट भरा होने पर अन्य वनजीव उसके निकट ही घास चरते रहते हैं न किसी को डराया जाता है न सताया ।

वात्सल्य सभी मादाओं में बहुलता से देखा गया है । वे अपने बच्चों को दुलार, पोषण एवम् संरक्षण देने में महिलाओं से पीछे नहीं रहतीं । अंडे सेने के समय वे उन्हें छाती से लगाए बैठी रहती हैं । नर, पत्नी तथा बच्चों के प्रति अपने दायित्व को निबाहता है और उनके लिए आहार जुटाना तथा सुरक्षा में चौकस रहता है । कंगारू, बन्दर, चिंपाजी आदि मादाएँ अपने बच्चों की कैसी सँभाल करती हैं यह देखते ही बनता है । भेड़िया मादा को मनुष्य बालक मिल जाए तो वह उसे खाती नहीं वरन् अपने बच्चे की तरह पाल लेती है । ऐसी घटनाएँ अनेकों देखी गई हैं । हथिनी जब बच्चा देती है तो बच्चे को सारा झुण्ड अपनी सम्पत्ति मानता है, बीच में लेकर चलता है और कोमल वनस्पतियाँ ढूँढ़-ढूँढ़ कर उसे खाने को देते हैं क्योंकि मादा का दूध इतना पर्याप्त नहीं होता कि उसका पेट भर सके । पक्षियों के बच्चे जब तक उड़ने लायक नहीं हो जाते तब तक उनके माता-पिता चोंच में खाना पहुँचाते रहते हैं । सारस प्रकृति के पक्षी पति-व्रत, पत्नी-व्रत निबाहते हैं । जोड़ा बिछुड़ जाने पर वे पुनर्विवाह नहीं करते । कछुए, घड़ियाल जैसे जल-जन्तु अपने अंडों को बालू में गाढ़ देते हैं और जब उनके पकने की हलचल होती है, तभी निकालकर उन्हें स्वावलम्बी बनाने में जुट जाते हैं । बिल्ली अपने बच्चों को न केवल शिकार मारना सिखाती है वरन् मुहल्ले के सभी घरों में लिए इसलिए फिरती है कि वे वहाँ की परिस्थितियों से अवगत हो सकें । कंगारू मादा अपने पेट में बनी थैली में ही बच्चों को दूध पिलाती है और पालती है ।

बुद्धिमत्ता की दृष्टि से सभी जीव-जन्तुओं में अपने-अपने काम की बुद्धि है । खटमलों को यदि चारपाई के पाये पर मिट्टी का तेल आदि लगाकर रोका जाय तो वे दीवार के सहारे छत तक पहुँच जाते हैं और जिस बिस्तर में पहुँचना है उस पर ऊपर से कूद पड़ते हैं । झींगुर अपने पैरों को रगड़कर ऐसी ध्वनि उत्पन्न करता है जो आवाज सुनने वालों को भी लुभाती है । तिलचिट्टे रसोईघरों, पाखाने आदि में फैली हुई गन्दगी को साफ करने में लगे रहते हैं, वे अपने को छिपाए रहने की कला में भी बहुत प्रवीण होते हैं ।

शारीरिक शक्ति की दृष्टि से कई प्राणी मनुष्य की तुलना में कहीं अधिक बढ़-चढ़ कर हैं । नीलगाय की एक छलाँग १२ मीटर तक देखी गई । कंगारू एक घन्टे में तीस मील की चाल से दौड़ सकता है । बिना पंख वाले आस्ट्रिच पक्षी की दौड़ ८० किलोमीटर प्रति घण्टा देखी गयी है । चीता सबसे बड़ा धावक है । वह २० सैकण्ड में ६५० मीटर की दूरी पार कर लेता है ।

मक्खी की एक छलाँग शरीर की तुलना में ६० गुनी होती है । इस अनुपात से यदि मनुष्य कूद सके तो उसकी हर छलाँग १२० मीटर की होनी चाहिए । मछलियों में से तेज दौड़ने वाली १ घण्टे में १२० किलोमीटर तक दूरी पार कर लेती है । आर्किटिकटैन पक्षी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव तक की यात्रा बिना रुकें करता है । इसमें उसे ४ महीने लगते हैं और ४० हजार किलोमीटर दूरी पार करनी पड़ती है ।

शिकागो क्षेत्र में एक धानी पूँछ वाली बिल्ली पाई जाती है, स्कंक । यह दौड़ने, नाचने और पेड़ों की चोटियों तक जा पहुँचने में माहिर होती है । वह किसी संकट में घिर जाने पर अपनी पूँछ में से भी विषैली गैस निकालती है कि पीछा करने वाले शिकारी बेहोश तथा अंधे तक हो जाते हैं ।

पशु-पक्षियों की अपनी-अपनी सांकेतिक भाषाएँ भी हैं, जिससे वे अपने स्वजातियों से विचारों का आदान-प्रदान कर लेते हैं । तोता तो ६० तरह के शब्द बोल सकता है, दूसरे पशु-पक्षियों तथा कीटपतंगों में भी १५-२० प्रकार के शब्द बोल सकने की क्षमता होती है । इससे वे एक-दूसरे को अपने मनोभाव प्रकट करते रहते हैं । मधुमक्खियाँ इस सम्बन्ध में बहुत माहिर होती हैं । चींटी तथा दीमक भी ।

प्रकृति ने मनुष्य को ही नहीं अन्य प्राणियों में अपने प्रकार की क्षमताएँ दी हैं । कुत्ते की घ्राण शक्ति अन्यों की अपेक्षा कहीं अधिक होती है ।

वरिष्ठता विस्तार में नहीं स्तर में है

बड़प्पन किसी के वैभव, विस्तार, बल, पद, चातुर्य, कौशल आदि के आधार पर नहीं आँका जाना चाहिये । वरन् देखा यह जाना चाहिये कि उसने मानवी गरिमा के अनुरूप अपने को ढालने में कितनी सफलता पाई, अपनी समर्थता एवम् सम्पदा का किस स्तर के प्रयोजनों में उपयोग किया ?

विस्तार और अन्य प्राणियों की वरिष्ठता बताने की दृष्टि से ध्यान योग्य माना जा सकता है, किन्तु मनुष्य के सम्बन्ध में यह बात लागू नहीं होती । उसकी विशिष्टता मानवी गरिमा के अनुरूप आदर्शवादिता अपनाने में है । यदि वह इस कसौटी पर खरा नहीं उतरता तो फिर यही कहना पड़ेगा कि अन्य प्राणियों की तुलना में वह कहीं पिछड़ा हुआ है । आकाश विस्तार और पराक्रम की दृष्टि से सृष्टि के कितने ही प्राणी मनुष्य की तुलना में कहीं अधिक बढ़े-चढ़े पाए जाते हैं ।

थलचरों में सबसे बड़ा अफ्रीकी हाथी होता है । वह १३ फुट तक ऊँचा पाया गया है । वजन में ९० क्विंटल तक ।

ऊँचाई के हिसाब से जिराफ सबसे ऊँचा होता है, वह २० फुट तक का देखा गया है । दौड़ने वालों में चीता अपनी शानी नहीं रखता । यों चीते संसार के अधिकांश मध्य ताप वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं पर दौड़ने की दृष्टि से ईरान, तुर्कमानिया और अफगानिस्तान में पाए जाने वाले अधिक तेज हैं । वे ६५ से ७० मील की दौड़ हर घंटे के हिसाब से लगा सकते हैं, किन्तु साथ ही यह भी तय है कि वे इस चाल से दस मिनट से अधिक नहीं दौड़ सकते हैं । इतने में ही वे बेतरह थककर चूर हो जाते हैं और हाँफने, सुस्ताने लगते हैं ।

लम्बी दौड़ लगाने वालों में पश्चिमी अमेरिका का हिरन—'एंटिलोप' सबसे आगे है । वह ३५ मील प्रति घण्टे की चाल से लगातार दिन भर दौड़ता रह सकता है ।

स्तनधारी प्राणियों में हाथी को सबसे अधिक समय तक माता के गर्भ में रहना पड़ता है । यह अवधि ७६० दिन की होती है ।

एक साथ अधिक बच्चे जनने की दृष्टि से मेडागास्कर के वन-विलाव—टेनरेक का है, जो एक बार में ३२ तक बच्चे जनता है । इस घुड़दौड़ में अमेरिकी चूहे भी पीछे नहीं । वे भी ३०-३५ बच्चे एक समय में जनते देखे गए हैं ।

जलचरों में सर्वाधिक विशालकाय प्राणी ब्लू ह्वेल है जिसे बेलिनोप्टेरा मस्कुलस भी कहते हैं । यह अधिकतम कितनी बड़ी होती होगी यह तो नहीं कहा जा सकता पर मछुआरों द्वारा पकड़ी गई ब्लू ह्वेलों में सबसे लम्बी ११० फीट ढाई इन्च थी । इसका भार प्राय: २००० क्विंटल था, इसे ३५ प्रौढ़ अफ्रीकी हाथियों के बराबर माना जा सकता है ।

ब्लू ह्वेल जन्म समय में ही ३० फुट लम्बी और ३० क्विन्टल भारी होती है । उसका वृद्धिक्रम भी असाधारण है । एक वर्ष में वह बढ़कर दस गुनी अर्थात् ३०० क्विंटल हो जाती है ।

शार्क ह्वेल ६० फुट लम्बी और ४५ क्विंटल भारी पाई गई है । इसका अंडा १२ इन्च लम्बा साढ़े पाँच इन्च चौड़ा और ३ इन्च ऊँचा होता है ।

एक साथ सर्वाधिक अंडे देने वाली मछली सनफिश है । वह ३० लाख अंडे एक बार में देती है । उनका व्यास आरम्भ में ०.०५ इन्च होता है ।

शरीर से विद्युत तरंगें फेंकने वाली मछली इलेक्ट्रोफोरस ब्राजील, कोलम्बिया के समुद्रों में पायी जाती है । उसके शरीर से निकलने वाली विद्युत ६५० वोल्ट तक विशेष परिस्थितियों में पहुँच जाती है । साधारण स्थिति में भी वह ४०० वोल्ट फेंकती रहती है । आक्रमण के लिए ही वह इस बिजली को हथियार के रूप में प्रयोग करती है । खूँखार मछलियों में दक्षिण अमेरिका की व्हाइट शार्क मशहूर है, वह मनुष्यों पर आँखें मूँदकर आक्रमण करती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक दिनों तक जीने वाले प्राणियों में कछुये को रिकार्ड किया गया है । वह १५२ वर्ष तक जिया । इसी प्रकार जापान के सिरा प्रकाशनगर के तालाब में पाली गई रंगीन मछली २२८ वर्ष की होकर सन् १९७४ में मरी ।

एगलर मादा मछलियाँ नरों की तुलना में कई गुनी बड़ी होती हैं । नर उनके आश्रित रहते हैं । शिकार वे ही मारती हैं, नर उसी को खाकर काम चलाते हैं । थक जाते हैं तो पत्नी की पीठ पर बैठकर सुस्ताते भी रहते हैं । इन मछलियों को अपने नर भी बच्चों की तरह ही पालने पड़ते हैं ।

पक्षियों में विशालकाय शुतुरमुर्ग होता है । वह ९ फुट ऊँचा और डेढ़ क्विंटल तक भारी होता है । अंडे की लम्बाई ८ इन्च और चौड़ाई ६ इन्च तक की पाई गई है । वजन दो किलोग्राम । वह इतना मजबूत होता है कि एक प्रौढ़ मनुष्य उस पर खड़ा हो जाय तो भी टूटेगा नहीं ।

तेजी से पंख हिलाने वाली चिड़ियाँ होती हैं जो उड़ते समय एक सैकिण्ड में प्रायः १०० बार पंख हिलाती हैं । इस तेजी के कारण उसकी उड़ान से भौंरे की गूँज जैसी आवाज आती है ।

आकाश में लगातार उड़ते रहने वाली चिड़िया स्वेफ्टएपरू है । यह नौ महीने लगातार उड़ सकती है । इसी अवधि में वह खाने-पीने का भी जुगाड़ बिठाती रहती है । यही हाल सूटी टर्न का है । वह सिर्फ अंडे देने और बच्चे पालने के लिए ही जमीन पर उतरती और घोंसला बनाती है । बच्चे समर्थ होते ही फिर आकाश में उड़ते रहने के लिए चल पड़ती है । गर्भधारण भी वह उसी स्थिति में कर लेती है । इसकी उड़ानें एक वर्ष से भी अधिक की होती हैं ।

फ़ोरिडा में एक चील का घोंसला सबसे बड़ा पाया जाता है, वह अपने आकार और बच्चों को निर्वाह का ध्यान रखते हुए ८ फुट चौड़ा और २० फुट गहरा घोंसला बनाती है जो वजन में लगभग २३ क्विंटल होता है । पेड़ इतना वजन नहीं उठा पाते तो वह झाड़ियों के बीच बिना खतरे वाली जगहों में घोंसले बना लेती है ।

तेज दौड़ने वाले पक्षियों में 'काउटा कूटा' है जो एक घण्टे में १५० मील तक उड़ सकता है । उससे कुछ कम उड़ान भरने वाली चिड़िया फलकोन है जिसकी चाल ८० मील प्रति घण्टा आँकी गयी है ।

अजगरों में अफ्रीका तथा इन्डोचीन, में पाया जाने वाला पायबोन है, जो ३३ फुट तक का लम्बा देखा गया है । दौड़ने में इसी बिरादरी का मम्बा मशहूर है, वह सिर्फ अफ्रीका में पाया जाता है और समतल भूमि पर १५ मील प्रति घन्टे की चाल से सपाटा भरता रहता है । वजनी अजगर दक्षिण अमेरिका का एनकोड़ा है, जो सवा दो सौ क्विंटल तक का पकड़ा जा चुका है ।

फिलाडेल्फिया में पाए जाने वाली पाइपर के विष दन्त दो इन्च तक के होते हैं और फन से बाहर निकले रहते हैं । एक बार उस देश के चिड़ियाघर में उसने किसी कारण क्रुद्ध होकर अपनी ही पीठ में दाँत गढ़ा दिए थे और अपने ही विष से खुद मर गया था ।

समुद्री सर्प विषनाग भी अत्यन्त जहरीला होता है । शार्क जैसी विशालकाय मछलियाँ तक उसकी गन्ध पाते ही भाग खड़ी होती हैं । वह चाहे तो फुसकार भर से आस-पास के जलचरों का सफाया कर सकता है पर आमतौर से वैसा करता नहीं, विषधर होते हुए भी सौम्य प्रकृति का होता है ।

मेंढकों में अमेरिका का बुलकाया डेढ़ फुट तक लम्बा होता है । इससे भी बड़ा पच्छिमी अफ्रीका का नियामोवा है, जो तीन फुट लम्बा और १३ पौण्ड तक भारी पाया गया है । लम्बी छलाँगें भरने वाले आक्सरिका मेंढक दक्षिणी अफ्रीका में पाए जाते हैं । उनकी छलाँगें ३० फुट तक की देखी गई हैं ।

मनुष्य इनमें से एक का भी मुकाबला नहीं कर सकता । ऐसी दशा में उसका अन्य प्राणियों की तुलना में वरिष्ठ होने का दावा सहज ही रद्द हो जाता है । मानवी गरिमा के अनुरूप स्तर विनिर्मित कर सके तो ही उसकी विशिष्टता को मान्यता मिलेगी ।

सीखने के लिए सामने ही सब कुछ है

हमें प्रकृति से बहुत कुछ सीखना है । सिखाने के लिए हर क्षेत्र में अध्यापक मौजूद हैं । दत्तात्रेय को जब सामान्य गुरुओं से समाधान नहीं हुआ तो उन्होंने प्रजापति के परामर्शानुसार प्रकृति एवम् प्राणियों का पर्यवेक्षण किया और उनसे उन्हें सन्तोषजनक गुरुज्ञान मिल गया । मकड़ी जैसे क्षुद्र प्राणी से उसने यह सीखा कि जाला बुनना और उसे समेट लेना पूरी तरह अपने बस की बात है । चींटी से उन्होंने सीखा कि जब उस राई से भी छोटे जानवर को अनवरत् श्रम किए बिना चैन नहीं तो मनुष्य जैसे बुद्धिमान को ही आलस्य-प्रमाद में घिरकर क्यों अपना भविष्य अन्धकारमय बनाना चाहिये । हम भी यदि ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही दृष्टि रखें तो बड़े विद्वानों और बड़े शास्त्रों की तुलना में ही बहुत कुछ सीख सकते हैं ।

पुरातनकाल में महागज, महासरीसृप और महागरुड़ जैसे समर्थ प्राणी थे । पर उनके मस्तिष्क बहुत छोटे थे । बुद्धिमता का अभाव था इसलिए परिस्थितियों के साथ तालमेल न बिठा सके और इस धरती पर से सदा के लिए समाप्त हो गए । इसके विपरीत दक्षिण ध्रुव पर पाया जाने वाला पक्षी पेन्गुइन पंख होते हुए भी उड़ नहीं सकता, वहाँ जीवन निर्वाह की व्यवस्था बना ली है, वहीं वह पानी में डुबकी लगाकर खुराक प्राप्त कर लेता है । गृहस्थ सम्बन्धी ऐसी व्यवस्था बना लेता है, जिसे देखकर कठिनाइयों के साथ तालमेल बिठाने की उसकी दक्षता पर आश्चर्य होता है ।

जिराफ ऊँट से भी ऊँचा होता है । पत्तियों पर अपना गुजारा करता है । बढ़ाते-बढ़ाते उसने अपनी जीभ को इतना बढ़ा लिया है कि वह डेढ़ फुट तक मुँह से बाहर निकाल सकता है और पेड़ की सबसे ऊँची कोंपलों को भी हस्तगत कर सकता है ।

मनुष्य की जीभ स्वाद तो चखती है, पर चखती तभी है, जब वह घुलनशील हो । लोहे जैसी कड़ी वस्तु का वह स्वाद नहीं चख सकती । इसका तात्पर्य यह हुआ कि अपनी इच्छा या योग्यता ही सब कुछ नहीं है । साधन भी वैसे होने चाहिये जिनके सहारे अपनी प्रतिभा काम दे सके ।

ओइस्टर प्राणी अपने आप में पूर्ण है । वह कभी नर बन जाता है कभी मादा । जब उसकी इच्छा प्रजनन की होती है तो अपने अंगों को मादा जैसा बना लेता है, किन्तु जब उसे नर स्तर का उत्साह उठता है तो बिना किसी का अनुग्रह पाए अपने आप को ही नर बना लेता है । हम भी अपने स्तर को घटिया या बढ़िया बनाने में स्वतंत्र हैं ।

ह्वेल मछली सिर्फ सामने देखती है, उसे अगल-बगल का दिखाई नहीं पड़ता । इसलिए वह तनिक-सी आवश्यकता के लिए समूचा शरीर घुमाने का कष्ट उठाती है । अदूरदर्शी भी इसी प्रकार हैरान होते हैं ।

मधुमक्खियाँ ५०० ग्राम शहद इकट्ठा करने के लिए प्रायः दो लाख फूलों से सम्पर्क साधती हैं । हमें महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हस्तगत करने के लिए अधिक से अधिक लोगों के साथ जन-सम्पर्क साधना चाहिये ।

चारों ओर से घिर जाने पर एक पच्चीस किलो भारी जल-जन्तु गेंद के बराबर छेद में से अपने को लचीला बनाकर निकल जाता है । हमें भी अकड़-बाज नहीं लचीला, विनम्र होना चाहिए ।

मनुष्य की बहुज्ञता को क्षुद्र जीवों की चुनौती

प्रकृति के अन्तराल में अनेकानेक घटनाएँ घटित होती रहती हैं, जिन्हें हम आकस्मिक रूप में कार्यान्वित होते देखते रहते हैं । वे भी अपने अस्तित्व का सृजन बहुत पहले ही आरम्भ कर देती हैं । किन्तु उनका परिचय हमें तभी चलता है, जब घटनाक्रम अपने समीपवर्ती क्षेत्र में घटित होता है ।

मौसम सम्बन्धी सम्भावनाओं का पता लगाने वाले गुब्बारे आकाश में छोड़े जाते हैं । उनके द्वारा दूर-दूर क्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों एवम् प्रवाहों की जानकारी मिलती है । वायु की नमी, दबाव की गति, गति, दिशा-धारा आदि के सहारे यह जाना जाता है कि अगले दिनों कितने समय बाद किस प्रकार का परिवर्तन सम्भावित है और उसका प्रभाव मौसम पर क्या पड़ेगा ?

इसी प्रकार धरातल पर या समुद्र क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों की ऐसी जानकारियाँ जो आँखों से देखीं, कानों से सुनी नहीं जा सकतीं । सूक्ष्मग्राही यंत्रों की सहायता से यह पता लगा लिया जाता है कि कितने समय में, किस क्षेत्र में, किस प्रकार की उथल-पुथल होने की सम्भावना है । इस प्रकार के खोजी यन्त्र-उपकरणों को वैज्ञानिकों द्वारा सूक्ष्मग्राही सिद्धान्तों एवम् पदार्थों की सहायता से विशेष विधि द्वारा बनाया जाय । राकेट प्राणाली में काम आने वाले घटक प्रायः इसी प्रकार के होते हैं । उपग्रहों की अन्तरिक्ष यात्रा में संरचना में भी इसी उच्चस्तरीय प्रणाली का प्रयोग होता है । समुद्र की गहराई में रहने वाली पनडुब्बियों में भी ऐसी ही विधा का समन्वय क्रिया जाता है ।

सृष्टा ने मनुष्य को अनेकानेक विभूतियों से विभूषित किया है । शारीरिक संरचना में जितना लचीलापन और सूक्ष्मता है, उसका एक भोंड़ा स्वरूप ही अन्यान्य जीव-जन्तुओं में देखा जाता है । मानवी मस्तिष्क भी असाधारण है । उसकी तुलना अब तक के बने कम्प्यूटरों में से कोई नहीं कर सका । भविष्य में भी इस प्रकार की कोई आशा नहीं है कि प्रकृति के उन रहस्यों का पता लगाया जा सकेगा, जो मनुष्य की बुद्धि एवं पदार्थ सम्पदा की पकड़ में नहीं आते । ज्ञानेन्द्रियाँ जितनी गहराई में पहुँच नहीं पातीं, इनके बारे में मनुष्य अपने को असहाय ही अनुभव करता रहता है । उसके बनाए यंत्र-उपकरण भी उस सीमा तक पहुँच नहीं पाते जिस सीमा तक की प्रकृति के अन्तराल की गहराई है ।

किन्तु देखा गया है कि सृष्टि के अन्यान्य प्राणियों में कितनी ही ऐसी क्षमताएँ हैं जिन्हें देखते हुए मनुष्य को उस क्षेत्र में पिछड़ा हुआ ही समझा जा सकता है । ऋतु परिवर्तन की पूर्व हलचलों को अन्यान्य जीव-जन्तु पूर्वाभास के रूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में जान लेते हैं, जबकि मनुष्य उस सम्बन्ध में कुछ जानकारी परम्पराओं के आधार पर ही अनुमान लगाकर सन्तोष कर लेता है । उस सम्बन्ध में वह कुछ निश्चित रूप से नहीं जान सकता । व्यतिरेक उत्पन्न होने पर तो वह चकित भर होकर रह जाता है । कारणों के सम्बन्ध में परम्परागत ज्ञान पर ही अवलम्बित रहता है, जो अनेक बार अपने को झुठलाता भी रहता है, किन्तु अन्य जीव-जन्तुओं में से कितने ही ऐसे हैं, जिनका पूर्वाभास बहुत गहरा ही नहीं होता वरन् सुनिश्चित भी देखा गया है ।

बरसने वाले बादलों की सीलन अपने शरीर को स्पर्श करती देख कर मोर नाचने लगता है । पपीहा सफेद उघड़े और खाली बादलों को देखकर रट नहीं लगाता वरन् उसका गूँजना तब आरम्भ होता है, जब बादल बरसने वाले होते हैं और ऊपर से नीचे उतरने लगते हैं । कोयल की कूक आमों के कुंज में उस समय से ही आरम्भ हो जाती है, जबसे कि टहनियों में बौर उभरने की शुरूआत होने को होती है । इसका पता उसे आँख से देखने पर नहीं वरन् उभरते ही विदित हो जाता है । वसन्त में उन पक्षियों, कृमि कीटकों की भरमार रहती है, जो फूल न खिलने पर कभी दृष्टिगोचर नहीं होते । फूल खिलने की सम्भावना है इसका पता उन्हें समय से पूर्व ही लग जाता है । मधुमक्खियों के झुण्ड, तितलियाँ, भौंरों आदि को वसन्त के दिनों ही नहीं उसकी सम्भावना निकट आते देखकर थिरकना आरम्भ हो जाता है । वे अपने-अपने कोंतरों से निकलकर बिना निमन्त्रित अभ्यागत की तरह अपने यजमानों के इर्द-गिर्द मँड़राने, कुहराम मचाने लगते हैं ।

भूकम्प, तूफान, अन्धड़, बाढ़ आदि आने की बात मनुष्य को तो तब विदित होती है, जब दृश्य सामने आ खड़ा होता है या उसकी जानकारी किन्हीं संचार साधनों से मिलती है । पर उस प्रकार की विपत्ति वाले क्षेत्रों में वहाँ के निवासी कुत्ते, सियार, बिल्ली पहले से ही भगदड़ मचाते और पलायन करते देखे जाते हैं । वे कुहराम भी मचाते और पागलों जैसी हरकतें भी करते हैं । यह मात्र अपनी घबराहट प्रकट करने के लिए ही नहीं होता वरन् इसलिए भी होता है कि दूसरे प्राणी उनकी दी हुई जानकारी का लाभ उठाकर समय रहते अपनी आत्मरक्षा का प्रबन्ध कर सकें ।

शिकारी पशु-पक्षियों में से अधिकांश की आँखें इतनी तीक्ष्ण नहीं होतीं कि अपने शिकार को आसानी से ढूँढ़ और पकड़ सकें । यह कार्य उन्हें गन्ध की न्यूनाधिकता के आधार पर करना होता है । ये सेन्टर्स उनके मस्तिष्क में कूट-कूट कर भरे हुए हैं ।

छोटे कृमि-कीटकों में नर-मादा साथ-साथ रहते हैं । अपने-अपने काम से वास्ता रखते हैं, किन्तु जब मादा ऋतुमती होती है तो उसकी गन्ध भर से नर का समूह उसके इर्द-गिर्द मँड़राने लगता है । इसके लिए उसे लम्बी यात्रा भी करनी पड़ती है और प्रतिद्वन्द्वियों से संघर्ष भी । इस प्रणय-मिलन में मात्र गन्ध ही संदेशवाहक का काम करती है ।

ऐसी-ऐसी अनेक विशेषताएँ हैं जो पशु-पक्षियों तथा अन्य क्षुद्र समझे जाने वाले प्राणियों में पाई जाती हैं, जो मनुष्य की वरिष्ठता, बहुज्ञता को कड़ी चुनौती देती है ।

गुबरीलों का कीर्तिस्तम्भ

इस विश्व-ब्रह्माण्ड में अनगिनत प्रकार के जीवधारी हैं जो मनुष्य के साथ ही बने रहते हैं एवम् परस्परावलम्बन के सिद्धान्त पर अपना अस्तित्व बनाए रखते हैं । इकालॉजी के नियमानुसार चित्र-विचित्र प्रकार के जीव-जन्तुओं के इस संसार में जो हमें दृष्टिगोचर होता है, प्रत्येक की अपनी कुछ न कुछ भूमिका है । वहाँ कुछ भी अकारण नहीं है ।

गुबरैला एक घिनौना जीव माना जाता है । गोबर में ही आहार ढूँढ़ते रहने के कारण इसे गुबरैला नाम दिया गया है । किन्तु इसका अस्तित्व मानव के लिए एक वरदान है । हेय दृष्टि से देखे जाने की इस तुच्छ जीव की स्मृति में कैलिफोर्निया के कीट विशेषज्ञों द्वारा दो टन भार का एक कीर्तिस्तम्भ पिछले दिनों बनाया गया है । इसका उद्देश्य था, जनसामान्य को हमारे लिए हितकारी इस जीव की जानकारी देना, महत्त्व समझाना ताकि हम इसकी उपेक्षा न करें । अमेरिकावासियों के लिए यह छोटा-सा अकिंचन प्राणी इतना महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुआ कि एक बार इसकी प्रजाति नष्ट हो जाने पर इसे आस्ट्रिया से आयात किया गया । इसके पीछे एक महत्त्वपूर्ण कारण था ।

कैलिफोर्निया प्रान्त, जो उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी भाग में रॉकी माउन्टेन्स शृंखला से लगा हुआ है, में 'क्लैमथ' नामक एक विषैली घास का एकछत्र साम्राज्य था । प्रारम्भ में हरीतिमा लिये अंतत: विषैली सिद्ध होने वाली खरपतवार जो इस प्रान्त के लगभग चार हजार वर्गमील क्षेत्र में फैली हुई थी । इसकी बढ़ने की गति बड़ी तीव्र थी एवम् किसी के लिए उपयोगी न होने के कारण यह निर्बाध फलती-फूलती रही । एक दिन ऐसा आया कि किसानों जिनके पशु फार्मवादियों में बसे थे, के लिए यह एक मुसीबत बन गई । प्रान्तीय स्तर पर इसे नष्ट करने के सारे प्रयास असफल रहे । अन्तत: एक कीटविज्ञानी ने इसका एक समाधान अनायास ही निकाला । कहीं गलती से विचरण करने आए एक गुबरैले को उन्होंने तेजी से इस खरपतवार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को खाते नष्ट करते पाया । कुछ प्रयास से उन्होंने उसे पकड़ लिया एवम् प्रयोगशाला में उसे व खरपतवार के नमूने ले गए । देखा यह गया कि कुछ ही मिनटों में उस विषैली घास को इस कीड़े ने नष्ट कर उदरस्थ कर डाला और जीव-जन्तु तो इससे दूर भागते थे, पर इस गुबरीले कीड़े के लिए तो यह एक स्वादिष्ट आहार था । इसकी तलाश जारी रही । पाया गया कि उस प्रजाति का गुबरीला आस्ट्रिया में बहुतायत से पाया जाता है । एक एजेंसी को इसकी भारी मात्रा में आयात करने का ठेका दे दिया गया एवं जैसे ही इन्हें मुक्त किया गया देखते ही देखते उस विषैली घास को उन्होंने नष्ट कर दिया । वे मूलतः परागकणों व जड़ों पर हमला करते थे, जिससे उसकी वंशवृद्धि की संभावनाएँ रुक गईं एवम् एक मुसीबत से पूरे समुदाय को मुक्ति मिली ।

उत्तरी कैलिफोर्निया के लास बेगांस मेडफोर्ड तक के इस क्षेत्र में आज अनगिनत पशु फार्म हैं, औद्योगिक कारखाने हैं एवम् वैज्ञानिक अनुसन्धान केन्द्र हैं । जबकि एक समय यहाँ चारों ओर यह सर्वनाशी विषैली वनस्पति अपनी जड़ जमाए बैठी थी । अब इसके समूल नष्ट हो जाने पर एक हजार पशु फार्म स्वामियों ने चैन की साँस ली है । वर्ष १९८४ के जुलाई माह में फोर्टस्ट्रीवार नामक शहर में बीस हजार डालर मूल्य का यह कीर्तिस्तम्भ सबके सहयोग से विनिर्मित किया गया ।

आस्ट्रिया, इंग्लैण्ड, फ्रांस में भी किसी समय इस क्लैमथ नामक विषैली खरपतवार का ही साम्राज्य था । वहाँ भी प्रकृति की व्यवस्था कुछ ऐसी बनी कि आस्ट्रेलिया से आए एक मालवाहक जहाज के साथ कुछ गुबरीले भी समुद्र पार कर इतनी दूर की यात्रा सम्पन्न कर यूरोप आ गए । उन्होंने देखते-देखते अपने खाद्यान्न को ढूँढ़कर नष्ट करना चालू कर दिया । इस तरह प्रकृति सन्तुलन की इस विलक्षण व्यवस्था के कारण यूरोपवासियों ने मुक्ति की साँस ली ।

जिस अनावश्यक हानिकारक घास को समाप्त करने हेतु बहुत बड़ी राशि कीटनाशक दवाओं को छिड़कने के रूप में खर्च करनी पड़ती एवम् बदले में मृदा-प्रदूषण हाथ लगता, उसे उपयोगी कीड़ों ने देखते-देखते नष्ट कर डाला । ऐसे शुभचिन्तकों की रक्षा करना, पर्यावरण सन्तुलन हेतु समष्टि का हित ध्यान में रखना मनुष्य का कर्तव्य है, उसे निभाया जाना चाहिये ।

मृत्युपर्यन्त चिरयुवा कैसे रहें ?

खरगोश की औसत आयु ७ वर्ष होती है । बिल्लियाँ और बकरियाँ १२ वर्ष जीवित रहती हैं । कबूतर ८ वर्ष और घोड़े ५० वर्ष तक जीवित रहते हैं । कछुए एवम् सर्प की औसतन आयु १५० वर्ष और १२० वर्ष होती है । मनुष्य की आयु १०० वर्ष आँकी गई है । मनुष्य को छोड़कर अन्य जीवों के जीवनक्रम पर दृष्टि डालते हैं तो पता चलता है कि उनमें सदा यौवन का उत्साह बना रहता है । आयु की दृष्टि से उनकी सम्पूर्ण आयु में बचपन, यौवन एवम् वृद्धावस्था की कोई स्पष्ट सीमा रेखा दृष्टिगोचर नहीं होती है । अपवादों एवं दुर्घटनाओं को छोड़ दिया जाय तो पर्यवेक्षण करने पर शायद ही कोई जीव ऐसा दिखाई पड़े जो रोगग्रस्त पड़ा हो अथवा वृद्धावस्था के कारण शक्ति रहित बना असमर्थता के चंगुल में जकड़ा हो । अधिकांशतः पशु-पक्षी जीवनपर्यन्त युवा बने रहते हैं । उनकी मृत्यु वृद्धावस्था की असमर्थता में नहीं, जीवन जैसे उत्साह एवम् उमंगों के बीच होती है । उछलते, कूदते, फुदकते, मचलते, इठलाते जीवों को कभी भी मृत्यु का, वृद्धावस्था का आभास नहीं होता । पैदा होते हैं चिरयौवन की उमंगों के साथ और मरते हैं यौवन की उमंगों के बीच । जरावस्था की थकान क्या होती है इससे वे सदा अनभिज्ञ बने रहते हैं । साधनों की दृष्टि से पिछड़े, शक्ति-सामर्थ्य एवम् बुद्धि में अविकसित इन मनुष्येतर जीवों के चिरयौवन के कारणों की खोज करते हैं तो एक ही तथ्य हाथ लगता है, प्राकृतिक दिनचर्या, चिन्ताओं, आशंकाओं से रहित उमंग एवम् उत्साह से भरा जीवनक्रम ।

मचलते, इतराते युवा उमंगों से युक्त पशु-पक्षियों के मस्त जीवन का रहस्योद्घाटन करते हुए सन्त फ्रांसिस कहते हैं कि प्राणिसृष्टि ईश्वर के पितृ हृदय के बहुत समीप हुआ करते हैं । इस तथ्य से मैं पूर्णतया सहमत हूँ । प्रकृति की सहज प्रेरणा से अभिप्रेरित होकर प्रत्येक प्राणी जीवन से असीम प्यार करता एवम् उसका भरपूर आनन्द उठाता है । उनमें चिरउत्साह का यही कारण है ।

'एलन डिवाय' प्रकृति प्रेमी रहे हैं । उनका अधिकांश समय जीव-जन्तुओं, पशु-पक्षियों के अध्ययन में बीता है । उन्होंने रहस्योद्घाटन किया है कि प्रकृति के इन नन्हें जीवों में चिरउत्साह का कारण है, उनकी प्रकृति प्रेरणा के अनुरूप क्रियाएँ । लिखते हैं कि मेरा अधिकांश समय पशुओं की जानकारी में बीता है । घनिष्ट साथियों में खरगोश, मिनीपिग्टन, सफेद चूहे, हिरण, रैकून्स, स्कन्कस, लोमड़ियाँ सदा मेरा मन बहलाते रहे तथा प्रेरणाएँ देते रहे हैं । मैंने ८० वर्ष से इन प्राणियों से इतना कुछ सीखा है जितना कि तत्वज्ञान की पुस्तकों में भी नहीं । वे कहते हैं, कि फुदकते हुए जीव मूक रूप से कहते हैं कि "प्रत्येक क्षण का आनन्द लूटना सीखो ।" सृष्टि का प्रत्येक प्राणी अपने जीवन का भरपूर आनन्द उठाता है । गोधूलि बेला में गिलहरियाँ नटों की भाँति हवाई कौशल प्रदर्शित करती हैं । उन्हें न तो रात के अन्धकार का डर होता है न ही कल की चिन्ता । चौकड़ी भरता हिरन सम्पूर्ण पृथ्वी पर अपना अधिकार जताता है । हरी-भरी घास का आनन्द लेते समय उसके मनोयोग को देखते ही बनता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

५.८९ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

एलन डिवाय लिखते हैं कि, एक बार मैंने एक बुड्ढे हिरन को घास चरते देखा । इतने में एक सर्प उसकी नासिका के पास आ पहुँचा । उस समय उसकी सतर्कता एवम् परिवर्तित भाव मुद्रा देखते ही बनती थी । एक क्षण में ही आनन्द के भाव तिरोहित हो गए और वह वीर रस के भाव में हुंकार भरने लगा । पैने खुरों से आवाज करते हुए उसने साँप का दबोचकर काम तमाम कर दिया । तुरन्त बाद में वह अपनी पूर्ववत् स्थिति में आ गया और इस प्रकार घास चरने का आनन्द लेने लगा जैसे कोई घटना ही न हुई हो । इन जीवों के जीवनक्रम से मनुष्य प्रेरणा ले सकता है । सामान्य घटना एवम् बातों से प्रभावित होकर अपना सन्तुलन खोने वाले, निराशा, चिन्ता से घिर जाने वाले मनुष्य यदि उद्विग्नता और चिन्ता से मुक्ति पा लें तो ८० वर्ष की आयु में भी वे हिरन की-सी कुलाँचें भरते रह सकते हैं ।

प्रकृति की प्रेरणा है कि अनावश्यक चिन्ताएँ छोड़ो, ईश्वर प्रदत्त जीवन का सर्वोत्तम उपयोग करो । प्रसन्नता एवम् प्रफुल्लता का प्रत्येक कार्य में समावेश रखो । इस प्रेरणा के अनुरूप जीवनक्रम अपनाकर पशु-पक्षी सदा प्रसन्न रहते तथा जीवनपर्यन्त यौवन का आनन्द लेते हैं । कृत्रिमता से वे सदा दूर रहते हैं । समय पर उठना, प्रकृति का अभिवादन करना, आहार जुटाना एवम् निश्चित होकर सोना ही उनके सदा-स्वस्थ एवम् चिरयुवा रहने का रहस्य है ।

आकृतिसामर्थ्य एवम् बुद्धि की दृष्टि से सबसे पिछड़ी चिड़ियों के फुदकन को देखकर लगता है कि जैसे प्रकृति ने सम्पूर्ण आनन्द उनकी झोली में भर दिया हो । बच्चों को भोजन कहाँ से प्राप्त होगा कल के लिए आहार की क्या व्यवस्था होगी इसकी बिल्कुल ही चिन्ता नहीं करतीं । बस सूर्योदय का अभिवन्दन करके अपने काम में जुट जाती हैं, जो आहार प्राप्त होता उसे अपने बच्चों में मिल-बाँटकर खाती हैं । हाथी जैसे विशालकाय जीव को सर्वाधिक आहार की आवश्यकता होती है, पर उसे थोड़ी भी चिन्ता नहीं रहती । भूख लगने पर वह घने जंगल में स्वच्छन्द निकल पड़ता तथा हरी फूल-पत्तियों का आहार करता है । मनुष्य जैसे संग्रह की चिन्ता उसे नहीं सताती । फलतः वह सदा स्वस्थ रहता है । बिल्लियाँ, बकरियाँ, घोड़े, कबूतर यदा-कदा ही रुग्ण होते हैं । सूर्य देवता अपनी प्रातःकालीन स्वर्णिम आभा लिए उन्हें उछलने, मचलने के लिए जैसे बाध्य कर देते हों ।

प्रकृतिविज्ञानी एलनडिवाय ने अपने जीवन की एक घटना का उल्लेख किया है कि किस प्रकार नन्हें पक्षी प्रतिकूल परिस्थितियों से जूझने के लिए जान की बाजी तक लगा देते हैं, वे लिखते हैं कि एक बार मैंने एक पुराने लकड़ी के पुल के नीचे एक पक्षी का घौंसला बना देखा । उसके अंडे देखने के लिए सावधानी से आगे बढ़ रहा था । एकाएक मादा पक्षी ने मेरी नाक से एक इन्च दूर मेरी आँखों पर अपने पंखों से प्रहार किया । चौंककर सिर उठाया कि उतने में नर पक्षी ने झपट्टा मारकर मेरा चश्मा गिरा दिया । इस अप्रत्याशित संघबद्ध आक्रमण से मैं घबड़ा उठा और पैर फिसल जाने के कारण कमर तक पानी में जा गिरा । किसी प्रकार उठकर वहाँ से भागा । मुझे उस घटना से प्रेरणा मिली कि आने वाली कठिनाइयों का जब नन्हें-नन्हें जन्तु वीरों की तरह सामना कर जाते हैं, तब छोटे-छोटे उतार-चढ़ावों में घबड़ा कर अपनी जीवनीशक्ति मनुष्य नष्ट करे, यह उसका दुर्भाग्य ही है ।

एक अन्य घटना का वर्णन करते हैं—एक कठफोड़वा पक्षी उड़ता हुआ, मेरे खेत में आया और किनारे रखे हुए एक बड़े पत्थर पर बैठ गया और कुछ ही क्षणों में शरीर को निश्चेष्ट छोड़कर मृत्यु की गोद में समा गया । अन्तिम समय में भी उसे न किसी प्रकार का कष्ट था न ही मृत्यु का भय । मुझे उसकी शानदार मौत पर विशेष आश्चर्य हुआ । मनुष्य से तुलना की तो मालूम हुआ कि रोता-बिलखता, कष्ट से कराहते मनुष्य की तुलना में जीवों की मृत्यु भी कितनी सरल एवं कष्टरहित होती है । निःसन्देह यह उनके स्वच्छन्द, चिन्तारहित प्राकृतिक रहन-सहन का ही प्रतिफल है ।

मनुष्य पशु-पक्षियों से बुद्धिमान है और सामर्थ्यवान भी । प्रकृति के सर्वाधिक अनुदान उसे ही मिले हैं । नन्हें जीवों को तो सीमित साधन और सीमित सामर्थ्य प्राप्त है । अपने सीमित क्षेत्र में सीमित साधनों के सहारे असीम आनन्द अनुभव करते हैं । किन्तु मनुष्य के लिए इससे बढ़कर दुर्भाग्य की बात और क्या हो सकती है कि उसे जीवन का आनन्द लेना नहीं आ सका । कारणों की खोज में जाते हैं तो एक ही तथ्य हाथ लगता-उसका चिन्ताओं, आशंकाओं एवं कृत्रिमता से भरा जीवनक्रम ।

प्राकृतिक दिनचर्या, प्रसन्नता, प्रफुल्लता से युक्त जीवनक्रम अपनाने वाले मनुष्यों में भी अधिकांशतः चिरयुवा बने रहे । ढलती उम्र में भी उनमें असाधारण उत्साह एवम् उमंग देखा गया । चर्चिल वृद्धावस्था को सर्वोत्तम काल कहते थे । उनका कहना था जवानी खिला हुआ है तो बुढ़ापा पका हुआ फल—एक रंग का खजाना दूसरा रस का कलश । दोनों की अपनी सुवास है और अपना सौन्दर्य । इस दृष्टिकोण के कारण ही उनमें ८० वर्ष की आयु में भी युवकों जैसी उमंग और बच्चों जैसी मस्ती थी । इंग्लैण्ड के शासकीय कार्यों में भी आयु की अन्तिम अवधि में भी वह परामर्श देते रहे । महात्मा गान्धी ८० वर्ष की आयु में भी अपने को युवक मानते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थे । उनकी फुर्ती देखते बनती थी । वृद्धावस्था में भी बर्नार्डशा की चुस्ती एवं फुर्ती को देखकर उनके युवा होने का सन्देह होने लगता था । उसका कारण वे सक्रियता, प्रसन्नता, प्रफुल्लता एवम् प्राकृतिक दिनचर्या को बताते थे ।

एक जापानी सन्त का कथन है—बुढ़ापे की झुर्रियाँ, ईश्वर का दिया हुआ वरदान है । निश्चय ही प्रसन्नता मुखमण्डल पर सतत् बनी रही तो वृद्धावस्था अभिशाप नहीं बन सकती । भूतपूर्व राष्ट्रपति सर्वपल्ली डॉ० राधाकृष्णन ने चिरयौवन का रहस्य बताते हुए कहा है कि चिरयुवा बने रहने के लिए मनुष्य को हँसमुख स्वभाव को वास्तविक एवम् गम्भीर रूप में विकसित करना चाहिये । उन्होंने संयमित प्रकृति के अनुरूप आहार-विहार को चिरयौवन की कुन्जी माना ।

डॉ० मेलबिल कीथ अपनी पुस्तक 'रायल रोड टू हेल' में लिखते हैं, कि अप्राकृतिक दिनचर्या के कारण मानव जाति दिन-प्रतिदिन शक्तिसामर्थ्य की दृष्टि से क्षीण होती जा रही है, जिसका प्रतिफल है असमर्थ बुढ़ापा, अनेकानेक रोगों की उत्पत्ति । मनुष्य को प्रकृति के अन्य पशु-पक्षियों से प्रेरणा लेनी तथा अनुकरण करना चाहिये, जो आयु के अन्तिम समय में भी असीम उत्साह एवम् उमंग से भरे रहते हैं । जबकि मनुष्य अनेकों प्रकार के रोगों से ग्रस्त हुआ रोते-कलपते जीवन के अन्तिम दिन पूरे करता है ।

अविकसित प्राणी जो मनुष्य से हर दृष्टि से छोटे हैं । उनके पास न तो रहने को मकान है, न ही अन्य साधन तथा न ही कल के लिए आहार की समस्या है । संचय के नाम पर कुछ भी नहीं है । ऐसी स्थिति में भी सदा स्वस्थ एवम् प्रसन्नचित्त रहते हैं । वृद्धावस्था की असमर्थता का अभिशाप उन्हें नहीं लगने पाता । जबकि मनुष्य साधनों, योग्यता, प्रतिभा की दृष्टि से सबसे आगे है । फिर भी रोग-क्लेशों का, असमर्थता का, बुढ़ापे का रोना उसे ही रोना पड़ता है । निःसन्देह यह अप्राकृतिक रहन-सहन, अनावश्यक चिन्ताओं एवम् आशंकाओं का ही दुष्परिणाम है । शारीरिक सक्रियता, मानसिक प्रसन्नता एवं प्रफुल्लता बनी रहे तो कोई कारण नहीं है कि उसे चिर-यौवन के आनन्द से वंचित रहना पड़े । इस तथ्य को समझा एवम् अपनाया जा सके तो उसी प्रकार जीवनपर्यन्त स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त रहा जा सकता है, जिस प्रकार पशु-पक्षी ।

मनुष्य को अभी बहुत कुछ जानना शेष है

प्रकृति के गर्भ में निरन्तर स्पन्दन हो रहा है, पर उसमें से कुछ का ही अनुभव मनुष्य अपनी इन्द्रियों अथवा भौतिक यंत्रों के माध्यम से कर पाता है । मौसमी परिवर्तनों, प्रकृति विपदाओं आदि जैसी मोटी घटनाएँ ही पकड़ में आ पाती हैं । हवा का चलना, बिजली का कड़कना, सूर्य का निकलना, गर्मी, वर्षा तथा शीत ऋतुओं का आना जैसे परिवर्तन प्रत्यक्ष देखे एवं अनुभव किए जा सकते हैं । पर असंख्यों सूक्ष्म घटनाएँ प्रकृति के अन्तराल में निरन्तर घटित हो रही हैं, जिनकी कोई जानकारी मनुष्य को नहीं मिल पाती । विप्लव, भूकम्प, भूस्खलन, ज्वालामुखी विस्फोट जैसी प्रकृति विभीषिकाएँ भी अकस्मात् प्रस्तुत होती जान पड़ती हैं, पर विशेषज्ञों का मत है कि बहुत समय पूर्व इनकी पृष्ठभूमि बन चुकी होती है । प्रकृति रूपी हाँडी में वे पकती रहती तथा अपने समय पर कहर बरसाती प्रकट होती हैं । उनके जन्म लेने व पकने तथा अन्ततः सामने आने की एक क्रमबद्ध प्रक्रिया है, जिसकी यथार्थ जानकारी न होने से मनुष्य उनसे अपनी सुरक्षा नहीं कर पाता । इन्द्रियों की बनावट भी कुछ ऐसी है कि उनके अनुभव क्षेत्र में सीमित बातें ही आ पाती हैं । अधिकांश की जानकारी नहीं मिल पाती ।

जिन तत्वों से ब्रह्माण्ड की रचना हुई, उन्हीं से पिण्ड भी बना है । पिण्ड ब्रह्माण्ड की एकरूपता, समानता को ऋषियों ने 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' के रूप में वर्णन किया है । दोनों अविच्छिन्न रूप से जुड़े हुए हैं । ब्रह्माण्ड में जो भी हलचल होती है, उसका सूक्ष्म प्रभाव पिण्ड सत्ता पर भी पड़ना सुनिश्चित है । पर किन्हीं बाह्य व्यतिरेकों के कारण ब्रह्माण्डीय स्पन्दनों की अनुभूति नहीं हो पाती । किन्हीं-किन्हीं को प्रकृति की हाँडी में पकने वाली घटनाओं का उन सूक्ष्म स्पन्दनों के सहारे पूर्वाभास भी हो जाता है । सामान्य व्यक्तियों की तुलना में उनकी चेतना अधिक सुविकसित तथा इन्द्रियाँ सूक्ष्म अनुभूतियों को ग्रहण करने में अधिक सक्षम होती हैं । ऐसे ही व्यक्ति भविष्यवक्ता के रूप में प्रख्यात होते देखे गए हैं । चेतना को विकसित करके प्रकृति घटनाओं की पूर्व जानकारी प्राप्त करने की सामर्थ्य विकसित कर सकना सम्भव है, उसके बीज मानवी सत्ता में विद्यमान हैं, या एक सत्ता में विद्यमान है, यह एक सत्य है ।

प्रकृति ने यह क्षमता मनुष्येतर जीवों को भी दी है कि वे प्रकृति घटनाओं की पूर्व जानकारी प्राप्त करके अपनी सुरक्षा कर सकें । एक विलक्षण बात यह है कि उनकी इन्द्रियों की ग्राह्य क्षमता मनुष्य की तुलना में कई गुनी अधिक बढ़ी-चढ़ी है । जिन बातों का ज्ञान, मानव भौतिक यंत्रों के माध्यम से अर्जित करता है, उनका बोध बिना किसी बाह्य यंत्र के जीव-जन्तुओं को मात्र उनकी इन्द्रियों के सहारे हो जाता है । फलतः समय रहते वे अपने व्यवहार, क्रिया-कलाप में परिवर्तन करके आने वाले संकटों की पूर्व सूचना देते देखे गये हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

५.९१ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

जीव-जन्तुओं पर विगत वर्षों में की गयी शोधों से यह ज्ञात हुआ है कि उन्हें भूचाल का पूर्वानुमान हो जाता है । यह जानकारी उन्हें भूगर्भ में चल रही भूकम्पीय गतिविधियों से उत्पन्न मन्द ध्वनि, तरंगों, दुर्गन्ध, झटकों तथा ऐसे अनेक सूक्ष्म संकेतों से मिल जाती है । जन्तुओं की इस विलक्षण क्षमता पर सर्वप्रथम शोधकार्य चीन से आरम्भ हुआ जो अब काफी गति पकड़ चुका है । लिया ओनिंग प्रान्त के उत्तर पूर्वी क्षेत्र में सन् १९७० और ७४ में आये दो भूकम्पों के दौरान स्थानीय पशु-पक्षियों के व्यवहार में असामान्य परिवर्तन देखा गया ।

प्राय: सर्प गर्मी, बरसात के मौसम में अपने बिलों से निकलते-विचरते तथा आक्रमण करते देखे जाते हैं । पर दिसम्बर ७४ की तेज ठण्ड में लिया ओनिंग प्रान्त के उत्तरी पूर्वी क्षेत्र में अचानक सर्प भिन्न तरह का व्यवहार करने लगे । कड़कड़ाती ठण्ड में उन्हें अपने बिलों से निकलकर उन्मादी रूप में बिलबिलाते देखा गया । चूहे दिन के उजाले में गली, चौराहे पर निर्भीक भाग-दौड़ मचाने लगे । इसके कुछ ही देर बाद उस क्षेत्र में भूकम्पीय झटकों की शृंखला शुरू हुई । फरवरी ७५ में भी जन्तुओं का ऐसा ही परिवर्तित व्यवहार देखा । सूअर परस्पर लड़ने-भिड़ने लगे तथा अपने बाड़े को तोड़कर निकल भागे । गाय, बैल जैसे सीधे जानवर भी रस्सियाँ तोड़कर मुक्ति का प्रयास करने लगे । कुत्ते जमीन को सूँघते तथा अकारण ही भौंकते देखे गए इसके तुरन्त बाद ही भूकम्प के झटकों की दूसरी शृंखला प्रारम्भ हुई । ४ फरवरी ७५ की सुबह जन्तु जगत की यह विचित्र गतिविधियाँ जब चरमोत्कर्ष पर पहुँच गयीं, तो चीनी अधिकारियों ने पूर्व अनुभवों के आधार पर आने वाले भूकम्प का अनुमान लगाकर हैचेग शहर को तुरन्त खाली करने का आदेश दिया । खाली होने के कुछ ही घन्टे बाद एक विनाशकारी भूकम्प आया जिसने पूरे नगर को कुछ ही क्षणों में धराशायी कर दिया ।

इतिहास मे ऐसे अन्य उदाहरण भी मौजूद हैं जिसमें भूचाल आने के पूर्व जीव-जन्तुओं के व्यवहार में इसी प्रकार का अद्‌भुत आकस्मिक परिवर्तन देखा गया । प्राचीन ग्रीक शहर हेलिस के धराशायी होने से पाँच दिन पहले वहाँ के चूहों, बिल्लियों, साँप-बिच्छुओं तथा दूसरे जानवरों को शहर छोड़कर बाहर सड़कों पर भागते, रेंगते देखा गया । सन् १८३५ में चिली के कन्शिप्सन क्षेत्र में जब भूकम्प की विनाश लीला मची, तो उसके कुछ दिन पूर्व समुद्री चिड़ियों का एक विशाल झुण्ड उस क्षेत्र के ऊपर कलरव मचाता-मँड़राता देखा गया । सन् १९०६ में सैन फ्रांस्सिको में आए प्रचण्ड भूकम्प के पूर्व कुत्ते जहाँ-तहाँ लगातार भौंकते पाए गए थे । जापानी नदियों में कैटफिश के बड़े-बड़े झुण्ड का अकारण ही जल में उछलते रहना आदि घटनाएँ देखी गईं ।

इन घटनाओं के आधार पर जीववैज्ञानिकों के मन में यह विश्वास सुदृढ़ होता जा रहा है कि जन्तुओं में अवश्य ही कोई ऐसा एन्टीना या सम्वेदी तंत्र है जो भूकम्पीय तरंगों को पकड़ने में सक्षम है । दूसरी ओर भू-भौतिकी शोधों में ऐसे सूत्र-संकेत मिले हैं, जो बताते हैं कि भूकम्प आने के पूर्व भू-गर्भ में अनेकों प्रकार की सूक्ष्म हलचलें होती हैं । सम्भवत: उन्हीं को अपने सम्वेदी अंगों द्वारा ग्रहण करके जीव परिकर भूकम्प का पूर्वाभास कर लेता है और भावी विनाश लीला को देखते हुए चित्र-विचित्र हरकतें करता है । भूचाल आकस्मिक नहीं होता, अपनी विनाशलीला प्रकट करने के पूर्व अनेकों चरणों में होकर गुजरता है । भूचाल से पूर्व धरती काँपती है । यह कम्पन पृथ्वीगत चट्टानों के पारस्परिक टकराव के कारण होता है । इसके बाद भूगर्भीय हलचलें तीव्रतम होती चली जाती हैं । भूकम्पीय तरंगें भूगर्भीय चट्टानों से होती हुई पृथ्वी सतह तक पहुँचतीं और पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र में भारी फेर-बदल उत्पन्न करती हैं । ये सब घटनाएँ इतनी सूक्ष्म होती हैं कि यंत्र-उपकरणों की पकड़ में नहीं आतीं, जीव-जन्तुओं के अत्यन्त सम्वेदनशील अंग उन्हें पकड़ लेते हैं ।

पृथ्वी का सूक्ष्म चुम्बकीय क्षेत्र परिवर्तन एक ऐसी ही घटना है, जो सर्वोत्तम दिशा ज्ञान रखने वाले, पक्षी पालतू कबूतरों के ही अनुभव में आते हैं । ध्रुवों पर पृथ्वी का भू-चुम्बकीय क्षेत्र औसतन ६० हजार गॉस (गॉस-चुम्बकत्व माप की इकाई) तक पाया जाता है, विषुवत रेखा पर यह लगभग ३० हजार गॉस होता है । कॉर्नवेल यूनिवर्सिटी के जीवविज्ञानी एस. लारकिन्स तथा उनके दिवंगत सहयोगी विलियन कीटन के अनुसार अति सुग्राहक चुम्बकीय सुई की भाँति पालतू कबूतर ३० गॉस जैसे अति सूक्ष्म चुम्बकत्व परिवर्तन को भी आसानी से पकड़ लेता है । यह विशेषता मात्र कबूतरों में ही नहीं मधुमक्खियों, गुबरैलों, दीमकों तथा अन्य छोटे जीवों में भी पाई जाती है ।

कहा जा चुका है कि जिस प्रकृति को मनुष्य शान्त, स्थिर मानता है, वह ऐसी है नहीं, उसमें निरन्तर स्पन्दन हो रहा है । उन स्पन्दनों में भली-बुरी घटनाओं के बीज विद्यमान हैं । उसमें ऐसी ध्वनियाँ निकलती रहती हैं, जो हमारी श्रवण क्षमता के परे हैं । अपनी अद्‌भुत श्रवण क्षमता के बल पर वे नगण्य जीव-जन्तु उन्हें सुन लेते । प्रकृति के गर्भ में पल रही आपदाओं-विभीषिकाओं से जीवन रक्षा करने की पूर्व व्यवस्था बनाते तथा तदनुरूप सन्देश सम्प्रेषित करते देखे जाते हैं । मनुष्य की श्रवण क्षमता सीमित है । कान १००० से ४००० साइकिल्स प्रति सेकिण्ड की ध्वनियों को ही पकड़ सकते हैं । १०००० साइकिल्स प्रति सैकिण्ड वाली ध्वनियों के लिए हम बहरों के समान हैं, जबकि कुत्ते, बिल्ली

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोमड़ी ६० साइकिल प्रति सेकिण्ड की ध्वनि को भी आसानी से सुन सकते हैं । चूहे, चमगादड़ तथा ह्वेल डॉल्फिन जैसी मछलियाँ तो १०००००० साइकिल प्रति सैकिण्ड तक की ध्वनियों को न केवल सुन सकते हैं वरन् वैसी ध्वनि तरंगें उत्पन्न भी करने में भी सक्षम हैं ।

इस स्तर की ध्वनियों को अल्ट्रासोनिक तरंगें कहते हैं । इनके अतिरिक्त एक अन्य प्रकार की ध्वनि तरंग भी होती है, जो भूगर्भीय चट्टानों के मन्दगति से फटने तथा भूगर्भीय गैसों से आकस्मिक प्रस्फुटन से पैदा होती है । ये ध्वनि तरंगें पूर्णतः मानवी श्रवण क्षमता से परे हैं । 'सिस्मोग्राफ जैसे श्रवण यंत्रों के माध्यम से भी इन्हें नहीं सुना जा सकता । पशु-पक्षियों की इन्फ्रा ध्वनि-तरंग ग्रहण सामर्थ्य सम्बन्धी एक पर्यवेक्षण में जीवविज्ञानी मेलबिन क्रीथेन एवम् उनके सहयोगियों ने पाया कि पालतू कबूतर ३ साइकिल प्रति मिनट जैसी अत्यन्त मन्द ध्वनि तरंग को भी आसानी से पकड़ लेते हैं । इसी प्रकार का तरंग ग्रहण तंत्र कॉड मछली में भी पाया जाता है, जो भूकम्प से पूर्व उन्मादियों जैसी इधर-उधर उछलती-कूदती दिखाई देती है ।

सूक्ष्म ध्वनि तरंग श्रवण सम्बन्धी शोध अत्यन्त कठिन कार्य है, क्योंकि आधुनिक वैज्ञानिक युग में भी ध्वनि सम्बन्धी परिष्कृत तथा सम्वेदनशील यंत्रों के बावजूद सूक्ष्मतम को पकड़ने वाले नहीं बन सके हैं । वैज्ञानिकों का मत है कि इन्फ्रा ध्वनि तरंगों से भी सूक्ष्म स्तर की ध्वनियाँ प्रकृति भू-गर्भ में स्पन्दित होती रहती हैं, जिनकी कोई जानकारी नहीं मिल पाती, जबकि कबूतर आदि उन्हें आसानी से सुन लेते हैं । माइक्रोफोन स्टेशन द्वारा पता लगाई जाने वाली कोलाहल जैसी कृत्रिम ध्वनियाँ भी कबूतर पकड़ लेते हैं जिसके लिए मीलों लम्बे हवा-कोलाहल फिल्टर रूपी जटिल तकनीकी व्यवस्था बनानी पड़ती है, यह व्यवस्था कबूतरों में प्रकृति ने फिट की है ताकि वे श्रवणातीत ध्वनियों को सुन सकें ।

अल्ट्रा तथा इन्फ्रा ध्वनि तरंगों के अतिरिक्त मन्द भूकम्पीय कम्पनों को भी पकड़ने में पशु-पक्षी सक्षम होते हैं । शोध निष्कर्षों से ज्ञात हुआ है कि कबूतर की टाँग में सम्वेदी तन्त्रों का एक ऐसा जाल बिछा होता है, जो अत्यन्त मन्द कम्पनों के प्रति भी अति सम्वेदनशील होता है । एक प्रयोग में देखा गया कि भूकम्प के पूर्व पालतू कबूतरों का झुण्ड यकायक उड़ गया जबकि दूसरे पालतू कबूतरों, जिनके सम्वेदी अंगों से सम्बद्ध स्नायु काट दिए गए थे, बिना घबराए दाना चुगते रहे । वे भूगर्भीय भूकम्पों के कम्पनों को नहीं पकड़ सके । कबूतरों की तरह मछलियों को भी मन्द कम्पनों का ज्ञान होता जाता है । मछलियों तथा अन्य जलचरों में एक विशेष प्रकार का 'लेटरल लाइन सिस्टम' होता है । यह तन्त्र न केवल अपने निकटवर्ती शत्रुओं का पता लगा लेता है वरन् समुद्र के माध्यम से लम्बी दूरी तय करके हल्की भूकम्पीय तरंगों को ग्रहण करने में सक्षम होता है ।

प्रकृति के भीतर क्या सूक्ष्म प्रक्रिया चल रही है तथा उससे किस प्रकार के संकेत मिल रहे हैं, इसकी जानकारी मनुष्येत्तर जीवों को आसानी से मिल जाती है । सर्वसमर्थ होते हुए भी मनुष्य इस क्षेत्र में उन नगण्य जीवों से भी पिछड़ा हुआ है । असम्भव कुछ भी नहीं है । सूत्र एवम् विधा हाथ लग सके तो वह सामर्थ्य मनुष्य अपनी ही कायिक प्रयोगशाला में विकसित कर सकता है । वह विधा क्या हो, यह विज्ञान के समक्ष शोध का विषय है । अपनी हठधर्मिता छोड़कर अध्यात्म की विभिन्न धाराओं का सहयोग लिया जा सके तो इस दिशा में बढ़ने तथा कुछ महत्त्वपूर्ण करने का संकेत मार्गदर्शन अध्यात्म विज्ञान दे सकता है । ऐसा सम्भव हो सके तो सचमुच ही प्रकृति रहस्यों को समझने तथा उनसे समय पर लाभ उठाने के वे सूत्र हाथ लग सकते हैं जिनसे प्रकृति के अन्य जीव अनायास ही लाभान्वित होते रहते हैं । इससे समय से पूर्व विभीषिकाओं से बचने, अनुकूलताओं से लाभ उठाने तथा श्रवणातीत ध्वनियों से अन्तःसामर्थ्य को विकसित करने का मार्ग प्रशस्त हो सकता है ।

स्नेह-दुलार, सुधार का कारगर प्रदर्शन

मनुष्य से लेकर थोड़ी समझ वाले पशु-पक्षियों तक में प्रशंसा के प्रति अनुराग पाया जाता है । यह प्रेम-भाव का सूचक है । प्रेम एक ऐसा चुम्बकत्व है जिसमें विकसित प्राणिवर्ग में से किसी को भी लुभाया और वशवर्ती बनाया जा सकता है ।

स्वामी परमानन्द ने सिंह का एक छोटा बच्चा पाल लिया था, उन्होंने उसे शाकाहारी बना लिया था । बच्चा बड़ा होने पर भी उनके साथ चलता था । समीप ही सोता-बैठता यहाँ तक कि उसने अपनी दिनचर्या का क्रम वैसा ही बना लिया था । एक बार वे पालतू सिंह समेत भारत के वायसराय से मिलने गए थे ।

दक्षिण अफ्रीका की उस कुतिया की सर्वत्र चर्चा है, जो अपने मालिक की भेड़ें चराकर अकेली ही ले आती है । गलती से कोई भटक जाय तो उसे ढूँढ़ कर लाती थी । चरवाहे के चले जाने पर उसने यह कार्य स्वयं सँभाल लिया था और जब तक जीवित रही अपने कार्य को अंजाम ठीक तरह देती रही ।

इसी प्रकार कई शौकीनों ने चिंपाजी, गोरिल्ला, वनमानुष जाति के बच्चों को पालकर अनुशासन में रहना और शिष्टाचार निभाना सिखाया था । इस सिखाने के पीछे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

५.९३ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

प्रेम-प्रदर्शन और उसके प्रमाण में छोटे-मोटे उपहार देने, गोदी में उठा लेने, पीठ थपथपा देने, सिर खुजला देने जैसे प्रमाण प्रस्तुत कर दिया करते थे ।

अन्य छोटे-बड़े जीव-जन्तुओं में प्रेम-प्रदर्शन करने वाले के प्रति सद्भावना रखने और निकटता में प्रसन्नता अनुभव करने की विशेषता पाई जाती है ।

पशु मनोविज्ञान की अच्छी जानकारी रखने वाले सरकसों के पशु प्रशिक्षक अनगढ़ जानवरों को ऐसे खेल दिखाने के लिए अभ्यस्त कर लेते हैं जैसे कर सकना मनुष्यों के लिए भी सम्भव नहीं होता । यह कार्य वे मुख्यतया प्रेम-प्रदर्शन के माध्यम से ही कर पाते हैं । भूल करने पर इतना ही दण्ड काफी होता है कि उनके प्रति रुष्ट होने, उपेक्षा दिखाने जैसा अभिनय कर दिया जाय । इतने भर में वे अपनी गलती खोजने और सुधारने का प्रयत्न करने लगते हैं ।

प्रेम पाकर प्रसन्न होनें और प्रेमी के साथ घनिष्टता स्थापित करने, उसके संकेतों पर चलने की विशेषता समझदार पशु-पक्षियों में पाई जाती है । वह प्रयत्नपूर्वक विकसित भी की जाती है, जिन्हें ऐसा अवसर नहीं मिलता वे उस विशेषता को गँवा भी बैठते हैं और अनगढ़ प्रकृति के ही दूसरों की भाँति बने रहते हैं । छेड़ने, डराने से भी विद्रोही बनते एवम् प्रतिशोध लेते भी देखे गये हैं ।

यह स्वभाव मनुष्य में और भी अधिक विकसित स्तर पर होता है । उसमें दुर्गुणीअवज्ञाकारी होने का प्रधान कारण एक ही है उनसे रुष्ट रहना, प्रताड़ना देना और समय-कुसमय उनकी निन्दा करते रहना । सुधारने के यह तरीके आमतौर से नाकामयाब होते हैं, क्योंकि अविकसित व्यक्तित्व में प्रताड़ना को शत्रुता गिना जाता है । उनमें इतनी समझ नहीं होती कि नाराजी का मूल कारण सोच पाएँ और सुधारने की पद्धति को कार्यान्वित कर पाएँ ।

बालकों के साथ बड़ों को विशेष रूप से यही व्यवहार करना चाहिये और उनके झलकने वाले दोष-दुर्गुणों का निराकरण इसी उपाय-उपचार से करना चाहिये । बड़प्पन इसमें है कि छोटों से प्यार करें और उसका प्रदर्शन करने के लिए प्रशंसापरक शब्द बोला करें । इतना ही नहीं उनकी अच्छी क्रियाओं के लिए छोटे-मोटे उपहार भी दिया करें ताकि वे अपना सम्मान समझते हुए गर्व-गौरव कर सकें । प्रेम व्यवहार के अभ्यस्त होने पर ही अपनी तनिक-सी नाराजी चोट करती है और वे गलती समझने तथा सुधारने का प्रयत्न करते हैं ।

पारिवारिक एवम् दाम्पत्य जीवन में भी स्नेह-दुलार की प्रक्रिया कारगर सिद्ध होती है । पर कितने लोग हैं जो दाम्पत्य जीवन में 'एक और एक मिलकर ग्यारह बनने' की उक्ति चरितार्थ करते हैं । अधिकांश की स्थिति तो एन्जिलर मछली जैसी ही देखी जाती है ।

कुछ वर्ष पूर्व की बात है, कुछ वैज्ञानिकों ने एन्जिलर मछली के बारे में विस्तृत खोज प्रारम्भ की । मध्य सागर में रहने वाली इस एन्जिलर के बारे में अब तक लोगों को वैसे ही स्वल्प-सी जानकारी थी जैसे शरीरस्थ अनेक चक्रों, ग्रन्थियों, गुच्छाओं एवम् उपत्यिकाओं के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों को थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त है ।

अध्ययन के लिये जितनी भी एन्जिलर पकड़ी गईं, नर उनमें से एक भी न निकला । जिस तरह भारतीयों में धर्म और भावनाशील का अधिकांश भाग स्त्रियों में ही दिखाई देता है, एन्जिलर में नर एक भी न मिलना वैसे ही कौतूहलवर्द्धक था ।

एक दिन एक मछली विशेषज्ञ ने निश्चय किया कि इस मछली के अंग-प्रत्यंगों की जानकारी प्राप्त करनी चाहिये । मानवीय बुद्धि में एक बड़ा दोष है कि वह स्थूल और दिखाई पड़ने वाली वस्तुओं के बारे में ही अधिकांश सोचता और उन्हें ही प्राप्त करने का प्रयत्न करता है, जबकि आकाश में ईथर के समान विश्व में अनेक ऐसे अदृश्य सूक्ष्म तत्व भरे पड़े हैं, जिनकी जानकारी मिल जाए तो आज का व्यक्ति भी ऋषियों-मुनियों जैसी समर्थता का स्वामी बन जाए । हमारे अन्तरंग में ही ऐसी शक्तियों के भाण्डागार छिपे पड़े हैं पर हम शरीर को अनेक वैज्ञानिकों की तरह ऊपर-ऊपर देखकर, पढ़कर थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त कर छोड़ देते हैं ।

विशेष और महत्वपूर्ण जानकारी तब मिली जब इन विशेषज्ञ महोदय ने देखा एन्जिलर मादा के सिर के ऊपर सीधी आँख पर एक बहुत ही छोटा-सा मछली जैसा जीव चिपका हुआ है । इस जीव का अध्ययन करने से पता चला—यही वह सज्जन है, जिनकी वैज्ञानिकों को तलाश थी । नर एन्जिलर यही था, बेचारी मादा के सिर पर चिपका उसी के रक्त को चूसने वाला, पति था शैतान से भी बढ़कर ।

मादा का आकार ४० इन्च, भगवान् ने अच्छा किया कि पतिदेव को कुल चार ही इन्च का बनाकर यह दिखाया कि नारी को मात्र प्रजनन और शोषण की सामग्री बनाने वालों का बौना होना ही ठीक है । मनुष्य के इतिहास में भी यही पाया जाता है । संसार के जो भी देश आज प्रगति के शिखर पर पहुँचे हैं, उन सबमें नारी के उत्थान के लिए बड़े कदम उठाये गए हैं । हम भारतवासी हैं, जिन्होंने नारी को दासी, पर्दे में रहने वाली, शिक्षा-शून्य बनाया उसका रमणी के रूप में उपभोग किया । तभी तो प्रगति में एन्जिलर नर की तरह बौने के बौने रह गये ।

हममें यह दोष कहाँ से आया इसका भी एन्जिलर मछली के अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों ने दिया । उन्होंने नर को स्वभाव का अध्ययन करके बताया कि उसकी यह

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शोषणप्रियता उसकी आलसी और वासनापूर्ण प्रकृति के कारण है । जीवन में मधुरता के लिए कोई स्थान न होने के कारण वह अपनी ही पत्नी का खून पिया करता है ।

देखने में एन्ड्रिलर नर पापी और अपराधी कहा जा सकता है पर जिन लोगों ने नारी का मूल्यांकन दहेज से किया, पर्दे और अशिक्षा से किया, वासना के रूप में दासी और सम्पत्ति के रूप में किया, उन्हें क्या माना और क्या कहा जाय इसका निर्णय तो हमें अपने भीतर झाँककर ही करना पड़ेगा ?

वन्य प्राणियों का दु:खद महाविनाश

पशुओं की रक्षा, प्राणिजगत के सन्तुलन को स्थिर रखने के लिए आवश्यक है । सिंह, व्याघ्र आदि हिंस्र जन्तुओं की असन्तुलित अभिवृद्धि को प्रकृति प्रकोप के माध्यम से स्वयं ही नियन्त्रित करती रहती है । यदि मनुष्य उनके विनाश पर उतर पड़े तो फिर न केवल यह धरती का आँगन इन चलते-फिरते खिलौने से रहित होकर सौन्दर्यहीन हो जाएगा वरन् प्राणिजन्य सन्तुलन बिगड़ जाने से अन्य अनेक प्रकार के संकट आ खड़े होंगे । पशुओं के खुरों से, पंजों से वन्य प्रदेशों की जमीन की खुदाई, गढ़ाई, कुटाई होती रहती है । फलस्वरूप उसमें वनस्पति उगाने की क्षमता बनी रहती है । पोली जमीन उनकी भाग-दौड़ से कड़ी होती है और आँधी में उड़ने से वर्षा में बहने से बच जाती है और खार-खड्डे नहीं बनते । वन्य पशुओं का मलमूत्र उस क्षेत्र की जमीन में उपयोगी खाद देता रहता है और वहाँ की उर्वरता बनी रहती है ।

वन्य पशुओं की रक्षा के लिए चिरकाल से प्रयत्न होते रहे हैं । सहज ही माँस और चर्म प्राप्त करने के लोभ में मुफ्तखोर शिकारी पशु-वध का क्रूर व्यसन अपनाने को सहज ही प्रोत्साहित हो जाते हैं । बराबरी की बुद्धि और बल वाले के साथ तो युद्ध करना महँगा पड़ता है । अल्प बुद्धि और वन्य पशु-पक्षियों को तीर बन्दूक जैसे अस्त्रों के सहारे लुक-छिपकर प्रहार करने और उन्हें मार गिराने में लगता है हृदयहीन मनुष्य अपनी बहादुरी का भी अनुभव करता है और उस कायरतापूर्ण हत्या पर गर्व भी करता है । इन्हीं दुष्प्रवृत्तियों ने शिकार का शौक बढ़ाया और उसकी चपेट में पशु-पक्षियों का इतना अधिक नृशंस संहार आरम्भ हो गया कि धरती पर से इन निरीह प्राणियों का अस्तित्व समाप्त हो जाने की ही आशंका उत्पन्न हो गई ।

अफ्रीका को बसाते समय योरोपियनों ने जिस प्रकार उस क्षेत्र के प्राणियों का संहार किया उसकी कथा यदि सामने लाई जाय तो उस महाविनाश के दृश्य हृदयहीनों के भी कलेजे कँपा सकते हैं । शिकारियों के लिए उन दिनों अफ्रीका स्वर्ग था । उनकी गोलियाँ निरन्तर आग बरसातीं और एक-एक शिकारी गिरोह दिन भर में हजारों पशुओं को धराशायी कर देता । सिंह, व्याघ्र, चीते, गैंडे, हाथी, जिराफ आदि के चमड़े से सारा योरोप ढक गया । धातुओं और वस्त्रों के स्थान पर इस सस्ते और सुन्दर चमड़े की हर चीज बनने लगी और लगने लगा कि अब योरोप के नर-नारी चर्माच्छादन से ही ढके जाएँगे । वन्य पशुओं के रक्त माँस में उन दिनों अफ्रीकी जंगलों का दृश्य बूचरखाने जैसा बना दिया गया था । यह तो एक काल और स्थान की बात हुई । साधारणतया सस्ती वीरता और मुफ्त का माल पाने के लोभ ने धूर्त मनुष्य को शिकार का शौकीन बनाया और उस आधार पर वन्य पशुओं का भयावह विनाश होता रहा ।

इस विभीषिका को रोकने के लिए समय-समय पर विचारशील समाज नायकों ने प्रतिबन्धात्मक प्रयत्न किए हैं । बौद्ध और जैन धर्मों ने अध्यात्म और नीति की पृष्ठभूमि में अहिंसा का प्रचार किया और मनुष्यों की ही तरह पशु-पक्षियों के साथ भी करुणा प्रदर्शित करने की प्रेरणा दी । सम्राट अशोक ने इस सन्दर्भ में कुछ कड़े प्रतिबन्ध लगाए थे, उनका उल्लेख उपलब्ध शिलालेखों में मिलता है ।

इंग्लैण्ड के शासक तृतीय हेनरी ने सन् १२१७ में वन्य पशुओं के रक्षा सम्बन्धी कानून बनाये थे । फ्रांस ने भी सन् १८४४ में ऐसा ही कानून बनाया । चीनी दार्शनिक कनफ्यूशियस ने पक्षियों को अन्धाधुन्ध मारने का निषेध किया था ।

अमेरिका में वन जीवों की सुरक्षा के लिए ४० संरक्षित अभय उद्यान हैं । दक्षिण अफ्रीका में आठ हजार वर्ग मील का क्रूनार राष्ट्रीय क्षेत्र इसी प्रकार का संरक्षित प्रदेश है । कांगो में ऐसा संरक्षित प्रदेश ५० हजार वर्ग मील का है । केनिया—अफ्रीका का नेशनल पार्क प्रसिद्ध है । उस क्षेत्र में दुर्लभ पशु-पक्षियों का उन्मुक्त विचरण देखने के लिए संसार भर के यात्री वहाँ पहुँचते हैं । कनाडा, न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया में भी ऐसे ही शिकार प्रतिबन्धित वन प्रदेश हैं । स्वीडन एक छोटा-सा देश है पर वहाँ भी १४ राष्ट्रीय उद्यान पशु विहार के लिए बने हुए हैं । स्विट्जरलैण्ड, इटली, स्पेन, फिनलैण्ड, आस्ट्रिया, पोलैण्ड, चैकोस्लेविया आदि देशों ने भी इसी प्रकार वन्य पशुओं को संरक्षण प्रदान किया है । शहरी चिड़ियाघरों में थोड़े-से पशु-पक्षी देखने से भी बच्चों का मनोरंजन होता है, पर सुविस्तृत वनों में भी हाथी, सिंह, चिम्पैजी, गैंडा, कंगारू, जेबरा, जिराफ आदि की उन्मुक्त जीवनचर्या देखकर जो आनन्द आता है, वह अनोखा ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । उसके लिए हजारों की संख्या में दर्शक उन संरक्षित वन प्रदेशों में पहुँचते हैं और उस यातायात से सरकारों को, व्यवसायियों तथा श्रमिकों को अच्छा लाभ होता है ।

वन्य पशु-पक्षी मनुष्य के शत्रु नहीं मित्र हैं । उनके द्वारा होने वाले उपकारों की यदि गहराई से छानबीन की जाय तो प्रतीत होगा कि वे पालतू पशुओं से कम उपयोगी नहीं हैं । यदि उनके वध करने पर हम उतर आएँ तो फिर ऐसी क्षति का सामना करना पड़ेगा जो वन्य पशुओं के माँस, चर्म से होने वाले लाभ की तुलना में अत्यधिक महँगी पड़ेगी ।

जब फीजी द्वीप बसाया गया तो वहाँ चूहे और कौओं के अभाव से खेतों में होने वाले कीड़े फसल को बुरी तरह बर्बाद करने लगे । रासायनिक घोल छिड़कने जैसे उपचारों से जब कोई काम चलता न दीखा तो भारत से चूहे और कौए पकड़कर वहाँ ले जाए गए और बसाए गए, तब कहीं जाकर कीड़ों का उपद्रव काबू में आया ।

शिकार का व्यसन अपनाकर लोग अपनी कुशलता अथवा बहादुरी का प्रमाण देना चाहते हैं पर वे नहीं जानते कि इस क्रूर कर्म के द्वारा वे न केवल अपनी आन्तरिक निष्ठुरता ही बढ़ा रहे हैं वरन् इस सुन्दर संसार को कुरूप बनाने का भी अपराध कर रहे हैं । शिकार का वर्तमान क्रम जारी रहा तो वह दिन दूर नहीं जब पशु-पक्षियों का इस संसार से अस्तित्व ही मिट जाएगा ।

बबर शेर अब भारत में सिर्फ गुजरात के गीर वन में ही एक बहुत छोटी संख्या में ही सीमित रह गए हैं । चीतों की कई जातियाँ नष्ट हो गईं । गैंडे सिर्फ आसाम में ही पाए जाते हैं और उनकी संख्या ५०० से अधिक नहीं है । सिक्कम का बारहसिंगा लुप्त हो गया । मारखोर, काले हिरन, थारबकरी, गवाज जैसे वन्य पशुओं की नस्ल भी अब समाप्त होती ही जा रही है । फरिस्टर चैम्पियन ने भविष्यवाणी की थी कि भारत में वन्य जीवों का भविष्य अन्धकारमय है, उनकी आशंका सही सिद्ध होती दीख रही है । इस संकट का सामना करने और वनजीवों की रक्षा का आन्दोलन करने के लिए भारत में—नीलगिरी गेम एसोसियेशन, इण्डियन बोर्ड ऑफ वाइन्ड लाइफ, वाइल्ड लाइफ सोसाइटी और बाम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी ने कुछ प्रयत्न भी किया पर उनके कागजी प्रयास कुछ अधिक कारगर न हो सके । शिकारियों की प्रकट और अप्रकट गतिविधियाँ तेजी से दुर्लभ वन्य जीवों का विनाश करने में लगी हुई हैं ।

गैंडे की हर चीज उपयोगी होती है और महँगी बिकती है । एक औंस सींग का मूल्य लगभग एक हजार रुपये होता है । एक चिड़ियाघर ने भारतीय गैंडा दम्पत्ति का मूत्र बेचकर ७०० पौंड (लगभग चौदह हजार रुपये) कमाए थे । गैंडे के चमड़े की ढाल, तीर, तलवार की लड़ाई के दिनों में सुरक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण साधन थी । हकीम लोग गैंडे के सींग की भस्म को नपुंसकता के लिए प्रयोग करते रहे हैं ।

गैंडा प्रायः ५० वर्ष जीता है । गर्भ में वह १९ महीने रहता है । पन्द्रह वर्ष की आयु में वह जवान हो जाता है । हर गैंडा अपनी अलग दुनिया बसाकर रहता है । १०० एकड़ की जमीन में सन्तोषपूर्वक गुजर कर लेता है, पर इतने में किसी दूसरे का प्रवेश पसन्द नहीं करता । मार्च का महीना उसे गृहस्थी बसाने की आवश्यकता अनुभव कराता है । पर मतलब निकल जाने के बाद उन्हें तलाक देकर एकाकी रहना ही अधिक सुविधाजनक प्रतीत होता है ।

पक्षियों की लुप्त जातियों में कोटुक्क, मोरनिंगद्रव, ट्रम्पटरस्वन, हूपिकक्रेन, एक्सिमो, करलू, आइवरी बर्ड, वुडपिकर, वेहाऊ पेटरेल फ्लोमिंगो को भी शुमार किया जाता है । कभी वे धरती के विभिन्न भागों में बहुलता के साथ पाए जाते थे, पर अब उनके दर्शन कभी-कभी ही होते हैं ।

न्यूफाउण्डलैण्ड तथा आइसलैण्ड क्षेत्र का निवासी पक्षी ग्रेट आक अपने सुहावने परों के लिए प्रख्यात था । शिकारियों ने उसका वंश ही नष्ट कर दिया ।

हंस से बड़ा किन्तु उसी जाति का पक्षी 'डोडो' मारीसश टापू में रहता था पर अब तीन सौ वर्षों से उसकी जाति ही समाप्त हो गई ।

न्यूजीलैण्ड में शुतुरमुर्ग की जाति का एक और पक्षी था मोआ यह १२ फुट ऊँचा था पर उड़ नहीं सकता था । अब संसार से सदा के लिए विदा हो गया । इसी प्रकार कत्थई रंग की चितलीदार मैना 'सैंडल बैक' भी अब न्यूजीलैण्ड से समाप्त हो गई ।

नैपाल की करनाली घाटी में पाँच हजार फुट ऊँचाई पर पाया जाने वाला पक्षी स्पाइनी वैक्लर अब कहीं देखने को नहीं मिलता ।

डेढ़ सौ वर्ष पूर्व पैसेंजर पिजन नीले रंग का कबूतर चिड़ियों की तरह झुण्ड बनाकर आसमान में उड़ता था । उनकी इतनी बहुलता थी कि सूरज बादलों की तरह ढक जाता था, पर अब वे सुन्दर पक्षी एक प्रकार से लुप्त हो गए.। उस जाति का पक्षी सन् १९१४ में अन्तिम बार देखा गया था ।

जलकुक्कुट की जाति का शुतुरमुर्ग की तरह उड़ने में असमर्थ एक पक्षी 'नोट तिनस' अब से पचास वर्ष पूर्व न्यूजीलैण्ड में बहुलता के साथ पाया जाता था, पर अब वह लुप्त हो गया । सन् १९४८ के बाद फिर उसे कभी कहीं नहीं देखा गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भेड़, बकरियों के बच्चे और छोटे खरगोशों तक को चोंच में पकड़ कर उड़ जाने वाला बड़ा गिद्ध 'काण्डर' कभी कैलीफोर्निया के जंगलों में बड़ी संख्या में पाया जाता था, पर अब १९४९ के बाद उसके दर्शन दुर्लभ हो गए हैं और उसे लुप्त मान लिया गया है ।

ह्वेल मछली का शिकार जिस तेजी से हो रहा है उसे देखते हुए हर्मन मेलविल ने 'मोवीडिक' में लिखा है—पिछले तीस वर्षों के अन्दर समस्त संसार में नील ह्वेल की आबादी एक लाख से घटकर अब मात्र एक हजार रह गई है । उनके प्रजनन के मुकाबिले शिकार कहीं अधिक तेजी से हो रहा है । ऐसी दशा में संसार से उसके अस्तित्व का अन्त होता ही दीखता है ।

पालतू पशु-पक्षियों को तो माँस के लिए काटा मारा ही जा रहा था । थोड़े वन्य पशु-पक्षी बचे थे, लगता है अब उनकी भी खैर नहीं । यह स्थिति कितनी दुःखद सिद्ध होगी इसे आज भले ही न समझा जा सके पर भावी पीढ़ियाँ तब उस क्षति के कारण होने वाले दुःख का अनुभव करेंगी और उस महाविनाश को धिक्कारेंगी, जिसे हम इन दिनों उत्साहपूर्वक चला रहे हैं ।

सृष्टि का सौन्दर्य ऐसे नष्ट न करें

ओस्लो—नार्वे के एक सेठ के घर चोर घुस आए । घर के किसी भी सदस्य को पता नहीं चला पर घर में पाली हुई भारतीय मैना यह सब देखती रही, चोर अभी सामान बाँध रहे थे कि मैना ने शोर मचा दिया जिससे घर वाले जाग पड़े और चोर रँगे हाथ पकड़ लिए गए ।

मैना जाति की यह छोटी-सी चिड़िया जिसका नाम था सैडल बैक, किसी समय न्यूजीलैण्ड में ऐसे चहचहाती घूमती फिरती थी जैसे अपने आँगन में घुटनों रेंगते हुये फूल से कोमल बच्चे । बच्चों के लिए हम क्या नहीं करते ? उनसे हमारे प्रेम और सौन्दर्य की वात्सल्य और चापल्य की आकांक्षायें तृप्त होती हैं इसलिए जिस घर में बच्चे न हों श्मशान लगता है ।

किन्तु अपने घरों में सौन्दर्य के लिए तड़पने वाले मनुष्यों ने सृष्टि के सौन्दर्य को जो उजाड़ने का षड्यन्त्र रचा है क्या उसकी भर्त्सना न की जाए ? एक दिन था जब न्यूजीलैण्ड के पेड़-पौधे, खेत, बाग और वन चितले शरीर, कत्थई रंग की इस चिड़िया की चहक से खुशनुमा दिखाई दिया करते थे, अब वनों-उद्यानों में उनकी पूँछ के भी दर्शन नहीं होते । यह चिड़िया अब लुप्त जन्तुओं के रजिस्टर में दर्ज करा दी गयी है । मनुष्यों ने अपने स्वाद के लिए इन सारी चिड़ियों को उदरस्थ कर डाला । अब न्यूजीलैण्ड से इनका वंश समाप्त ही हो गया है ।

चिड़ियों का फुदकना, चहकना उनके रंग-बिरंगे रूप प्रकृति का सौन्दर्य होते हैं । पर्वत, नदियाँ, घाटी और वादियाँ ऊँचे, लम्बे फल-फूल और झब्बेदार पेड़-पौधे देखकर आत्मा को शान्ति मिलती है । उसी प्रकार रंग-बिरंगी चिड़ियों को देखकर भी बड़ी प्रफुल्लता और स्फूर्ति मिलती है पर मनुष्य की शैतानियत को क्या कहा जाए जो इन भोले-भाले पक्षियों का सफाया करती जा रही है ।

मॉरिशस द्वीप में पाया जाने वाला डोडो पक्षी भी इसी प्रकार माँसाहारी विदेशियों द्वारा चट कर लिया गया । आकृति भले ही भद्दी रही हो इस पक्षी की लेकिन अपने सीधेपन के लिए यह मनुष्यों का मन सदैव आकृष्ट करता रहा । कबूतर की तरह का हंस से थोड़ा बड़ा यह पक्षी लोगों को दया की प्रेरणा दिया करता था । पर आप ही दुर्बुद्धि मनुष्यों की हिंसा का शिकार हो गया । तीन सौ वर्षों से अधिक हो गए इस पक्षी का अब कहीं नाम-निशान भी नहीं मिलता ।

भारतीय मैना अपनी बौद्धिक कुशलता के लिए संसार में प्रसिद्ध है । उसने मनुष्य जाति का कितना उपकार किया है उसका वर्णन नहीं किया जा सकता । मनुष्य किसी छोटे-से चोर से डर सकता है पर मैना ने भयंकर डाकुओं से भी मुकाबला किया है । कई बार उसने अपने मालिकों की करोड़ों की सम्पत्ति बचाई है । ऐसी कहानी घर-घर सुनने को मिलेगी पर अब यही मैना धीरे-धीरे नष्ट होती जा रही है । कुछ तो जंगल नष्ट होने के कारण कुछ मनुष्य की माँसाहारी दुष्प्रवृत्ति के कारण । मैना अब ५ प्रतिशत से अधिक शेष नहीं रही । प्रकृति के इस सौन्दर्य और इस प्रेरणा को तभी बचाया जा सकता है, जब लोगों की माँसाहारी प्रवृत्ति रुके और उनमें जीवों के प्रति प्रेम और दया का भाव भी पनपे ।

हमारे राष्ट्रीय पक्षी मोर की भी यही दशा हुई । कंजड़-कबाली, नट-कंजरों ने इसे मार-मार कर समाप्त-सा कर दिया है । पहले मोर बादलों की गरज से गरज मिलाया करते थे । उनकी कूक इतनी प्यारी लगती थी कि वर्षा का सौन्दर्य द्विगुणित हो उठता था, पर मोर भी धीरे-धीरे नष्ट होता जा रहा है । यदि उसे सुरक्षा प्रदान न की गई तो पक्षीशास्त्रियों का अनुमान है कि अगले कुछ ही वर्षों में मोर पक्षी भी लुप्त जन्तुओं की श्रेणी में आ जाएगा ।

अधिकांश सभी पक्षी प्राकृतिक चारे पर निर्भर करते हैं । मनुष्य का वे अहित नहीं करते वरन् कीड़े-मकोड़ों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गन्दे और बदबू फैलाने वाले माँस से मनुष्य-जाति की सेवा और रक्षा करते हैं, पर हमारी ओर से उन्हें मिलती हैं बंदूक की गोलियाँ । शिकार का ऐसा शौक चर्राया है मनुष्य को कि वह बेचारे सीधे-सादे पक्षियों को ही नष्ट किए दे रहा है । कुछ लोग दयालुता के नाम पर ही कष्ट देते हैं । पिंजड़े में बन्द करना या मारकर नष्ट करना दोनों पाप एक ही तरह के हैं । पक्षी प्रकृति में उन्मुक्त-सौन्दर्य है, उन्हें उन्मुक्त ही रहने देना चाहिए ।

कैलीफोर्निया में पाया जाने वाला गिद्ध जिसे वहाँ 'काण्डर' कहा जाता था, मरे हुये पशुओं का माँस खाकर प्रकृति को शुद्ध रखता था, पर शिकारी लोगों ने उस बेचारे का वंश ही नष्ट कर दिया । सन् १९५० के लगभग एक पहाड़ी पर उनका झुण्ड दिखाई दिया था इसके बाद बहुत खोज की गई पर अब तो उसकी छाया के भी दर्शन नहीं होते ।

मनुष्य को देखते ही झुरमुट में छिप जाने वाले, अपनी मादा के सामने भी लाज मारने वाले पक्षी नोटोरनिस को भी नहीं छोड़ा, मानवीय दुष्प्रवृत्ति ने । जल में रहने वाला यह पक्षी भी मूल रूप से न्यूजीलैण्ड में ही पाया जाता था पर आज २० वर्ष से अधिक हो गये वहाँ भी एक भी नोटोरनिस देखने को नहीं मिलता ।

आइसलैण्ड तथा न्यूफाउन्डलैण्ड में पाया जाने वाला ग्रेट ऑक पक्षी अपने परों के सौन्दर्य के लिए कभी संसार में प्रसिद्ध था । ना रहता तो प्रकृति सौन्दर्य भी नष्ट न होता और लोगों को घर या बाल सजाने के लिए उसके पर भी मिलते रहते । लेकिन मनुष्य की मूर्खता ने यहाँ एक और सोने वाली मुर्गी की कथा रच डाली । लोगों ने सोचा पता नहीं उसे मारकर कितने पर मिल जाएँगे ? एक-एक करके मारते गए और अब कोई ९० वर्ष से ऊपर हुए यह पक्षी भी सदैव के लिए इस संसार से उठ गया ।

कौन जाने, मनुष्य की यह दुष्प्रवृत्तियाँ न बदलीं तो एक दिन सृष्टि का सारा ही प्राकृतिक सौन्दर्य नष्ट न हो जाये । कहते हैं मनुष्य बुद्धिशील, दयावान् प्राणी है । वह तरह-तरह की वस्तुएँ गढ़ सकता है, पर सही यह है कि उसने अधिकांश फूहड़पन गढ़ा । सौन्दर्य जो परमात्मा ने बनाया था, उसे तो नष्ट करने का पाप ही कर सका है वह । लगता है यह दानवी प्रवृति न रुकी तो संसार का यह जीव सौन्दर्य एक दिन सबका सब ही नष्ट हो जाएगा ।

उपयोगिता नहीं परमार्थ परायणता

अल्बर्ट का मनोविज्ञान वस्तुत: मानवीय चेतना का मनोविज्ञान न होकर पाशविक वृत्तियों का तोड़ा-मरोड़ा इतिहास मात्र है । वह कहता है—मनुष्य श्रेष्ठ पशु है (मैन इज दि सुपर एनिमल) । अर्थात् मनुष्यों में जो पाशविक वृत्तियाँ हैं, वह कोई दोष-दुर्गुण नहीं वरन् प्राकृतिक हैं और इस दृष्टि से उसकी जो भी स्वाभाविक आकांक्षाएँ हैं वह अनुचित नहीं हैं, भले ही उसे उसके लिए अन्य प्राणियों का भी शोषण और उत्पीड़न करना पड़ता है । जो जितना उपयोगी है वह उतने ही अधिक अधिकारों का पात्र है, भले ही इस स्वायत्तता का उपयोग वह अपने निजी सुख और स्वार्थों के लिए करता हो । उपयोगितावाद की यह संक्षिप्त व्याख्या हुई । आज योरोप ही नहीं संसार के प्राय: सभी देशों के पढ़े-लिखे लोग इसी मान्यता का आचरण-व्यवहार कर रहे हैं, भले ही कहने-सुनने को उनके सिद्धान्त चाहे कितने ही आदर्शवादी क्यों न हों ?

उपयोगिता का समर्थन भी जिस ढंग से किया गया है वह कम हास्यास्पद नहीं । बड़ी मछली छोटी मछली को खा जाती है, इसलिए कम शक्ति वालों का शोषण कोई पाप नहीं, एक प्राकृतिक प्रक्रिया हुई । जीव-हिंसा, पशु-उत्पीड़न और बढ़ता हुआ माँसाहार इसी दुष्ट सिद्धान्त की देन है । उस मान्यता का प्रतिपादन है कि—'जो अधिक ताकतवर होता है, वही बन्दर अपने समूह का मुखिया होता है ।' खरगोश, हिरन, भेड़ और बकरियों की शक्ति न्यूनतम है, उन्हें भेड़िये, बाघ, शेर और चीते आदि शक्तिशाली जन्तु खा जाते हैं । यदि सहयोग, सादगी, सहानुभूति और सदाचार ईश्वरीय आदेश हुए होते तो शाकाहारी भेड़ें और बकरियाँ कमजोर न होतीं और न ही वह हिंसक जन्तुओं द्वारा भक्षण कर ली जातीं । बड़ा वृक्ष अपने घेरे में दूसरे वृक्ष को पनपने नहीं देता । हर शक्तिशाली कम शक्ति वाले को खा जाता है । यदि इन प्राकृतिक सिद्धान्तों को मनुष्य भी अपने व्यवहार में, आचरण में लाता है तो यह कोई दोष नहीं ।

उपयोगितावाद सच पूछा जाये तो शक्तिवाद 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' और सामन्तवाद का ही दूसरा नाम है । इस सिद्धान्त ने ही संसार को नास्तिक और स्वच्छन्दतावादी बनाया है । भावनाओं का अन्त इस सिद्धान्त ने ही किया है । ठीक भी है जहाँ केवल शक्ति और उपयोगिता को ही महत्व देना हुआ वहाँ परस्पर प्रेम, उदारता, सहयोग, सौजन्य, स्नेह, सामूहिकता का क्या मूल्य रहा ? जहाँ उत्कृष्टता की भावनाएँ न होंगी वहाँ क्यों तो व्यवस्था रहेगी और क्यों विश्व-शान्ति जिन्दा रहेगी । आज उपर्युक्त प्रकार की मान्यताओं के कारण ही सारा विश्व अशान्ति-असन्तोष, कलह-क्लेश और शोषण के जाल में उलझता चला जा रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस जड़वादी मान्यता का जो भी परिपोषण करते हों उन्हें मनुष्य शरीर की आन्तरिक स्थिति पर एक बार भावनापूर्वक विचार करने की आवश्यकता है । हमारे शरीर का प्रत्येक कोश एक स्वतंत्र मानव बीज है, उसमें मनुष्य की सारी स्थूल और चेतन क्रियाएँ विद्यमान हैं । 'कोश' साँस लेता है, खाता है, पीता है, चलता है, डरता है, बचाव करता है, मल विसर्जन करता है । 'अमीबा' एककोशीय जीव है । उसका नाभिक जब दो भागों में बँट जाता है तो वह दो अमीबा बन जाते हैं और दोनों अपनी-अपनी तरह से उक्त क्रियाएँ और अनुभूति करने लगते हैं । दो विभाज्य अमीबा, दो अलग गुणों वाले अमीबा आत्मा (न्यूक्लियस) की दृष्टि से एक ही हैं और उदाहरण के लिए जब दो अमीबा अपनी शक्ति में ह्रास अनुभव करते हैं तो वह एक-दूसरे में मिलकर दो नाभिक (न्यूक्लियस) से एक नाभिक (न्यूक्लियस) वाला एक अमीबा बन जाते हैं, उस स्थिति में वह नवजात अमीबा की-सी शक्ति अनुभव करता है । इससे सिद्ध हो जाता है कि शरीर के अनेक कोशों (सेल्स) में बँट जाने पर भी उनकी आत्मिक चेतना एक ही है । मनुष्य इस बात का ध्यान रखे या न रखे, वह उपयोगितावाद जैसे खण्डनात्मक तथ्य को माने तो मानता रहे पर लघुकोशीय जीव यह भूल करने को तैयार नहीं ।

मनुष्य शरीर के विचित्र अवयव एक ही कोश 'स्पर्म' से पैदा होते हैं । स्थान की आवश्यकता के अनुरूप वे अपना आकार बदलकर मस्तिष्क, हृदय, जिगर, तिल्ली, नसें, माँसपेशियाँ आदि बनाते हैं पर उन्हें पता है कि विभिन्न स्थिति में काम की जिम्मेदारियाँ उठाते हुए भी वह सब एक ही पिता की सन्तान, भाई-भाई हैं और इसीलिए वे बराबर प्रेम, दया, सहयोग, सहानुभूति, श्रम, सामूहिकता आदि का व्यवहार करते रहते हैं इसी कारण शरीर स्थिर है ।

जिस प्रकार बहुत-से कोशों (लगभग २ अरब) से मिलकर शरीर बना उसी प्रकार बहुत-से समाज मिलकर देश और विश्व बना । स्थान की स्थिति और जलवायु की भिन्नता के कारण वर्ण-भेद, स्वभाव-भेद होते हुए भी सब एक ही आत्मा के अंग हैं यह मानकर जो शरीर का पालन करते हैं, वह विश्वशान्ति बढ़ाने और ईश्वरीय मर्यादाओं का पालन करने का पुण्य करते हैं, जो उससे विपरीत जड़वादी आचरण करते हैं प्रकृति उन्हें दण्ड देती है । इसी सूक्ष्म न्याय प्रणाली पर सृष्टि की व्यवस्था अब तक विद्यमान है । यदि प्रेम, दया, उदारता, करुणा आदि सद्गुणों का अन्त हो गया होता तो सृष्टि का भी अन्त हो गया होता ।

मनुष्य-शरीर मानवीय सद्गुणों का जिस रीति से परिपालन करता है, उसका वक्तव्य बड़ा ही रोचक है । आन्तरिक क्रियाशास्त्र (फिजियोलॉजी) का गहन अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा कि व्यक्ति और समाज को सुखी-सन्तुलित और सुव्यवस्थित बनाने वाले जो भी गुण हैं वह दूध से नवनीत काढ़ने की तरह शरीर से ही निकाले गए हैं ।

उदाहरण के लिए सहयोग और सहानुभूति को ही ले लें । मनुष्य इतना कठोर हृदय हो सकता है कि अपने भाई, अपने पड़ोसी को कष्ट और पीड़ित अवस्था में देखकर भी चुप रह जाय पर हमारे शरीर के सदस्य ऐसे हृदयहीन नहीं । परस्पर सहयोग और दूसरे के दुःख में हाथ बँटाना ही उनका जीवन है । उदाहरणार्थ, यदि एक गुर्दा खराब हो जाए जैसा कि पथरी की बीमारी के समय होता है, तो अच्छा गुर्दा दूसरे पीड़ित गुर्दे का सारा कार्य भार स्वयं सँभाल लेता है, जब तक वह ठीक न हो जाए स्वयं कष्ट सहेगा किन्तु शरीर की साधारण क्रिया में कोई अन्तर न आने देगा ।

धमनियाँ (आर्ट्रीज) शरीर को रक्त पहुँचाती हैं । बड़ों के साथ छोटे-छोटे लोग भी रहते हैं और तब उनका कोई विशेष महत्त्व जान नहीं पड़ता जैसा कि बड़ी धमनियों के साथ कुछ पतली धमनियाँ भी बनी रहती हैं । मनुष्य अपने से छोटों को कष्ट दे सकता है, उनका शोषण और उत्पीड़न कर सकता है पर धमनियों को पता है कि छोटे जीव का भी कितना महत्व है, इसलिए वह पतली धमनियों को भी पोषण देती रहती हैं । कभी कोई धमनी (आर्ट्रीज) कट जाए तो उस स्थिति में पतली धमनियाँ (एनास्टोमोसेस) रक्त प्रवाह के किनारे फूलकर आगे जोड़ देती हैं और रक्त परिभ्रमण क्रिया को तब तक साधे रहती हैं, जब तक घाव अच्छा न हो जावे । इससे आगे वाला हिस्सा काम करता रहता है । यदि ऐसा न भी हो तो पतली धमनियाँ (एनास्टोमोसेस) आजीवन काम करती हैं ।

'नेमोनेक्टामी' के अनुसार यदि एक फेफड़ा काटकर निकाल देना पड़े तो दूसरा फेफड़ा साधारण स्थिति के सारे काम सँभाल लेता है । यह सहयोग और सहानुभूति क्रियाएँ बताती हैं कि हम जिस समाज में रहते हैं, उसमें आये दिन दुर्घटनाएँ घटती हैं, उनसे कुछ लोग पीड़ित होते हैं उनके प्रति भी हमारे कर्तव्य वैसे ही हैं जैसे स्वयं अपने प्रति । व्यवस्था, विश्व-शान्ति और मानवता ऐसे ही अक्षुण्ण रहती है ।

आज लोगों ने इन बातों को भुला दिया । स्वार्थ और प्रवंचनायें प्रबल हो उठी हैं । सारा समाज उन प्रवंचनाओं में धू-धू कर जल रहा है । सर्वत्र शोषण, लूट-पाट, बेईमानी, छल-कपट, कलह के बाहरी शत्रु आक्रमण कर समाज की भलाई को धराशायी करते जा रहे हैं, पर हममें मुकाबले की शक्ति भी जाग्रत नहीं होती । शरीर के छोटे-छोटे कोषों को पता है कि जब बुराइयों, बीमारियों की तीव्रता बढ़ जाती है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तो शरीर सम्बन्धित अंग ही नहीं सारा शरीर बेचैन हो उठता है । इसलिए वे सबके सब एकजुट प्रयत्न करते हुए बुराइयों के उन्मूलन में लग जाते हैं ।

कई बार चमड़ी खुल जाने या चोट लग जाने के कारण कोई कीटाणु बाहर से आकर शरीर में घुस जाते हैं और लोगों को सताना, काटना, जूटना, भक्षण करना प्रारम्भ कर देते हैं, तब शुद्ध रक्ताणु दौड़ पड़ते हैं । (१) सूजन, (२) उस स्थान की चमड़ी का लाल हो जाना, (३) उस हिस्से का गर्म हो जाना, (४) तनाव बढ़ने से नस पर दबाव पड़ता है और दर्द बढ़ता है । इससे पता चलता है कि अच्छे कोशों की सेना एकत्रित हो गयी और बुराइयों का निष्कासन प्रारम्भ हो गया । दरअसल जिस मनुष्य समाज में बुराई के प्रति इतनी सजगता और तत्परता नहीं बरती जाती वह समाज उसी तरह सड़ जाते, निकम्मे हो जाते हैं जैसे— शरीर का कोई हिस्सा जहाँ कीटाणु हमला कर देते हैं । ऐसे विषाक्त वातावरण को जितना जल्दी साफ कर दिया जाता है शरीर की तरह समाज उतनी ही शीघ्र चैन अनुभव करता है ।

कई बार बुराई की मात्रा काफी बढ़ जाती है । रक्त में हानिकारक कीटाणु (इनफैक्टिव बैसिलाई) पैदा हो जाते हैं, उससे रोग और विकृति पैदा होती है, उसके मुकाबले के लिए रक्त के श्वेत अणु (ह्वाइट ब्लड कारपेसल्स) पहुँचते हैं और शरीर रक्षा का पूर्ण प्रयत्न करते हैं पर बेचारों की शक्ति बुराई के मुकाबले कम हुई तो हार जाते हैं और मार दिये जाते हैं, किन्तु त्याग और बलिदान की उपयोगिता समझने वाले ये अणु मरते-मरते भी कुछ न कुछ उपकार कर जाते हैं । मरे हुए श्वेत अणु प्रोटियोलाइटिक एन्जाइम बन जाते हैं और (१) शरीर के मरे हुए कोश (वैक्टीरिया) (२) एवं नष्ट हुए श्वेत अणु को घोलकर पीव बना देते हैं और उन्हें बाहर निकाल देते हैं, इससे दर्द कम हो जाता है ।

आजकल बुराइयाँ अधिक बढ़ गयी हैं इसलिए असामान्य परिस्थितियाँ पैदा की जा रही हैं । यह परिस्थितियाँ असामान्य इसलिए कही जाएँगी कि इनमें समाज के सभी विचारशील लोग अपना ध्यान निजी हितों से हटाकर पूरी तरह समाज-सुधार और दुष्प्रवृत्तियों के उन्मूलन में लगाते हुए चले जायेंगे, तब समाज शरीर उसी तरह अच्छा हो जाएगा जिस तरह शरीर के बुरे तत्व नष्ट कर देने पर । टी.वी. के जीवाणु (वैक्टीरिया) जब एसिड फास्ट बैसिलाई बन जाते हैं अर्थात् एसिड्स भी उसका मुकाबला नहीं कर पाते उस समय श्वेत अणुओं के ५ प्रकार के कोष (सेल्स) (१) पोलियोमोपर्स ७० से ७५% (२) लिम्फोसाइड्स १० से ३० प्रतिशत, (३) मोनोसाइड्स ५ से ६ प्रतिशत और (४) वेसोफिल्स आधा प्रतिशत तैयार होते हैं । लड़ाई के दिनों में जिस तरह सेनापति परस्पर ऐसी योजनाएँ बनाते हैं कि दुश्मन को हर तरह से मात दी जाये उसी तरह शारीरिक बुराई के प्रति यह संघर्ष भी बड़ा प्रेरक होता है । सर्व प्रथम पोलियोमोर्फ्स आते हैं यदि वे अपने आपको मुकाबला करने में असमर्थ पाते हैं, तब लिम्फोसाइड्स की टुकड़ी आगे बढ़कर दुश्मन को ललकारती है यदि तब भी टी. बी. के जीवाणु बलिष्ठ हुए और लिम्फोसाइड्स हार गये तो कई-कई इपिथेलाइड्स कोष मिलकर दैत्याकार कोष (जाइन्ट सेल्स) बनाकर टी. बी. के कीटाणुओं को खाते हैं । शरीर की यह सुरक्षा-शक्ति आह्वान करती है कि जब कभी सामाजिक बुराई, पाप, अपराध, अनैतिकता का कुछ ऐसा बाहुल्य हो जाये कि अग्रगण्य लोग भी उन्हें दूर न कर पायें, तब संगठित प्रयत्नों द्वारा उन्हें नष्ट करने के लिए अपनी सारी शक्ति जुटा देनी चाहिए ।

गुर्दे के ऊपर एक सुप्रारीनल ग्रन्थि (ग्लैण्ड) होती है वह एड्रिनलीक एवं कार्टिको स्टराइड्स निकालती है, जो शरीर को उसी प्रकार विषम स्थिति में कार्य करने की शक्ति देती है जैसे महापुरुष अपने अनुयायियों को देकर बुराइयों का अन्त कराते हैं । उदाहरण के लिए सामने कोई जंगली जानवर आ जाये तो एड्रिनिलीन रक्तचाप बढ़ाकर पैरों को अधिक कार्य करने के लिए अधिक शक्ति दे देती है । उतनी ही शक्ति मस्तिष्क को मिलती है, जिससे वह तुरन्त कोई निर्णय ले सके । दौड़ते समय फेफड़े माँसपेशियों (मसल्स) को ऑक्सीजन की बहुत मात्रा अनुदान दे देता है । दौड़कर आने के बाद काफी देर तक तेज हाँफी चलती रहती है, इस तरह फेफड़े अपनी खोई शक्ति पुनः अर्जित कर लेते हैं । सम्भवतः यह व्यवस्था भगवान् ने इसलिए की कि मनुष्य यह जान ले औरों की भलाई में उत्सर्ग की हुई शक्ति और क्षमतायें नष्ट नहीं होतीं वरन् एक नई चेतना लेकर भगवान् के वरदान की तरह पुनः मिलती हैं । मनुष्य अपने उपकार का पुण्य फल उसी प्रकार प्राप्त करता है, जिस तरह स्वतन्त्रता संग्राम के सिपाही अपने महत्त्वपूर्ण पदों का आनन्द ले रहे हैं ।

वस्तुतः शरीर रचना की आधारभूत शिक्षायें यदि सम्पूर्ण रूप से मनुष्य समाज में ढाल दी जायें तो विश्वशान्ति के लिए बाह्य साधनों की खोज ही न करनी पड़े । हम समता के सिद्धान्त पर धरती में जीवित है और एक-दूसरे के प्रति त्याग भावना से सुरक्षित हैं । केवल स्वार्थ ही स्वार्थ और अहंमन्यता मात्र रहे होते तो मानवीय संस्कृति का जीवित बने रहना कठिन हो जाता है । पहले यह परिस्थितियाँ नहीं थीं पर अब उनकी मात्रा बढ़ रही है, अब हर व्यक्ति स्वार्थी होता जा रहा है । खुदगर्जी के कारण ही लोभ-लालच, बेईमानी और संग्रहवृत्ति पनप रही है । इससे सामाजिक विषमता पैदा होती है और लोगों में अविश्वास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की भावनाएँ भड़कती हैं । इस स्थिति का मुकाबला त्याग और उदारता के बल पर ही किया जा सकता है ।

हमारे शरीर की व्यवस्था ऐसी ही है, जिसके संग्रह तो हैं पर एक अच्छे सहयोग के लिए, त्याग और उदारतापूर्वक औरों की सुविधाएँ बढ़ाने के लिए हैं । (१) हर हड्डी के पोले भाग में, (२) प्लीहा (स्प्लीन), (३) जिगर (लिवर) में रक्त की मात्रा संग्रहीत रहती है । कभी चोट या घाव हो जाने पर यह संस्थान अविलम्ब रक्त पहुँचाकर उस स्थान को ठीक रखने और कमजोर न होने देने का प्रयत्न करते हैं । सामूहिकता की इसी भावना पर समाज की सुख-शान्ति अवलम्बित है ।

रक्त ही नहीं शरीर में चर्बी का भी स्टोर रहता है । चमड़ी और माँस के बीच चर्बी सुरक्षित रहती है । कई दिन तक भोजन न मिले तो भी सब अंग काम करते रहते हैं चमड़ी पीली पड़ जाती है तो भी किसी की मृत्यु नहीं होने दी जाती । मृत्यु तो हृदय और मस्तिष्क को पोषण न मिलने से होती है पर शरीर-संस्कृति जानती है कि भावनाशील और चरित्रवान् लोगों के मिट जाने से समाज की सुख-शान्ति मिट जाती है, इसलिए वह अपनी सुरक्षित शक्ति उनके लिए खुशी-खुशी दान कर देती है ।

यह भलाई की शक्तियाँ ही मनुष्य को जीवन दान देती हैं । डाक्टर जानते हैं कि शरीर में शक्ति ग्लूकोज के टूटने से प्रसारित होती है । जब कोई माँसपेशी या कोश (सेल) काम करता है तो ग्लूकोज लैक्टिन एसिड में परिवर्तित होकर शक्ति प्रदान करता है । जिगर का ग्लाइकोजन ग्लूकोज में परिवर्तित होता है । यह माँसपेशियों में ए. टी. पी. (एडिनो ट्राइ फास्फेट) टूटकर ए.डी.पी.(एडिनो डाइ फास्फेट) एवं फास्फोरस में बदलता है । यह फास्फोरस क्रियेटिंग फास्फेट से मिलता है, जो अपनी शक्ति ग्लाइकोजन से लेता है । विश्राम के समय यही ग्लाइकोजन फिर जिगर में संग्रहीत हो जाता है । सामान्य स्थिति में वह रक्त में संचारित होता रहता है । हमारे साधन सत्कार्यों में निरन्तर लगते रहें और आवश्यकता पड़ने पर तो दूसरी बातों को गौण मानकर भी अपनी तमाम शक्तियाँ, प्रतिभाएँ और योग्यताएँ सामाजिक भलाई के कार्यों में लगादें, यह प्रेरणा हमें उक्त क्रिया से मिलती है ।

मनुष्य शरीर एक समाज है । इस समाज में अनेक कोष होते हैं, हमारे समाज में अनेक मनुष्य हैं । इस मनुष्य समाज को किस तरह सुखी, शान्त और समृद्ध रखें, किस तरह उसकी सुरक्षा रखें इस सबकी जानकारी हमें शरीर क्रिया-प्रणाली (फिजियोलाजी) से सीखनी पड़ेगी । हम उन नियमों पर चलकर ही मानवीय संस्कृति को जीवित रख सकते हैं ।

बुद्धिवाद से भी अधिक गरिमामय

बुद्धिवाद कितना ही उपयोगी क्यों न हो उसकी गरिमा हृदयवाद से ऊँची नहीं हो सकती । मानवीय चेतना को जहाँ तक हृदयवाद को प्रधानता देकर ही चलना पड़ेगा । जहाँ विशुद्ध जड़ प्रयोजनों की बात है, वहाँ एकाकी बुद्धि को भी मान्यता दी जा सकती है, पर जब प्रश्न जीवित चेतना मनुष्यों, प्राणियों की समस्या पर विचार करना हो, तब हृदयवाद को मान्यता देने से ही काम चलेगा । मनुष्य को जड़ पदार्थ मानकर ही एकाकी बुद्धिवाद के सहारे उसकी समस्याओं का हाल सोचा जा सकता है । यदि जीवधारियों की चेतना को भी महत्त्व देना है तो उसके उत्कर्ष का प्रयोजन हृदयवाद का—परिष्कृत भाव, आदर्श को साथ लेकर ही चलना पड़ेगा ।

कृषि, शिल्प, रसायन, उद्योग जैसी भौतिक प्रक्रियाएँ बुद्धिवादी शोध प्रयोग को ध्यान में रखते हुए सुलझाई जाएँ, यहाँ तक दो मत नहीं हो सके, पर जब यह प्रश्न सामने आये कि जीवधारियों के स्तर को कैसे ऊँचा उठाया जाय तो उसका समाधान हृदय को प्रधानता देकर ही खोजना पड़ेगा अन्यथा ग्रन्थियों को सुलझाने की दृष्टि से किये गये प्रयत्न उल्टे और अधिक उलझन पैदा करेंगे ।

पशु प्रवृत्तियाँ स्वार्थपरता को आधार लेकर ही चलती हैं । अस्तु उन्हें अविकसित और अभावग्रस्त स्थिति में ही रहना पड़ता है । शरीर की दृष्टि से अधिक मजबूत होते हुए भी वे प्रकृति प्रकोप का ग्रास अधिक रहते हैं । पारस्परिक सहयोग के अभाव में उनकी शारीरिक, मानसिक क्षमता की कोई कारगर सुरक्षाव्यवस्था नहीं हो पाती और न किसी प्रकार की प्रगति ही सम्भव होती है । आदिमकाल में वे जिस स्थिति में थे लगभग उसी स्थिति में रह रहे हैं । प्रकृति के दबाव से शरीर रचना और अभिरुचि में थोड़ा अन्तर भले ही आया हो, उनकी परिस्थितियों में कोई विशेष सुधार नहीं हो सका, इसका कारण उनकी चेतना का स्वार्थ चिन्तन तक सीमित रहना ही है । मनुष्य ने प्रगति पथ पर अग्रसर होते हुए सृष्टि का मुकुटमणि बनाने की जो अद्भुत सफलता पायी है, उसका मूल कारण उसकी बुद्धिमता नहीं—सहृदयता है । परस्पर स्नेह-सहयोग की प्रवृत्ति ने एक-दूसरे के साथ घनिष्टतापूर्वक रह सकने की स्थिति उत्पन्न की और एक ने दूसरे के अनुभव से लाभ उठाकर अपने ज्ञान सम्पदा को आगे बढ़ाया है । मनुष्य की सहृदयता क्रमशः आगे बढ़ती गयी और स्नेह-सहयोग की प्रकृति ने मिल-जुलकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक-दूसरे को अपने अनुभव, अनुदानों से लाभान्वित करने का कदम बढ़ाया । भाषा, लिपि, अग्नि, कृषि, पशुपालन, औजार, उपकरण, अन्न, वस्त्र, निवास जैसी प्रगति के मूलभूत आधारों का आविष्कार परस्पर सहयोग के आधार पर ही संभव हो सकता है । बुद्धिमत्ता वस्तुतः सहृदयता की बेटी मात्र है ।

वनमानुषों की आकृति-प्रवृत्ति मनुष्यों से मिलती-जुलती है पर वे सघन सहयोग के क्षेत्र में आगे न बढ़ सके और पिछड़ी स्थिति में पड़े रहे । चिम्पाजी, गोरिल्ला वानरों को मनुष्य का पूर्वज कहा जाता है, उनकी शरीर रचना और मन संस्थान मानव प्राणी से बहुत कुछ मिलता-जुलता है । फिर भी उन्हें वनवास का दण्ड मिला, इसका कारण सहृदयता की पुण्य प्रवृत्ति से वंचित रहने का पाप ही कहा जा सकता है । कुछ नर बालक—जहाँ-तहाँ वन्य पशुओं द्वारा पालित किये गये पाये गए हैं, उनमें पूरी तरह उन पालन-कर्त्ता पशुओं जैसी ही प्रवृत्ति और बुद्धि मिली है । इससे स्पष्ट है कि बुद्धि कोई स्वतंत्र तत्व नहीं सहयोग, सम्पर्क की प्रतिध्वनि मात्र है । बच्चे अपने अभिभावकों की भाषा में ही बोलना आरम्भ करते हैं, इससे स्पष्ट है । उच्चारण स्वतंत्र नहीं वरन् पूर्णतया परावलम्बी है, जो बच्चे बहरे होते हैं, उन्हें गूँगा भी रहना पड़ता है । शब्दों को वे सुन नहीं सकते तो फिर नकल बनाकर बोलना आरम्भ कैसे करें ?

मनुष्य, समाज की एक अविच्छिन्न इकाई है, परिस्थितियों का दास—वातावरण ही उसे उठाता गिराता है, आदि प्रतिपादन विभिन्न प्रकार से किए जाते रहते हैं । उन्हें तथ्य ही मानना चाहिये । मान्यताएँ, अभिरुचियाँ, आस्थाएँ, आकांक्षाएँ, प्रवृत्तियाँ किसी के मन में अनायास ही नहीं उठ पड़तीं, वे समीपवर्ती वातावरण से ग्रहण की जाती हैं । मनुष्य के भले-बुरे होने का श्रेय अथवा दोष सम्बन्ध परिस्थितियों को दिया जाता है । स्वाध्याय और सत्संग की महिमा इसी आधार पर गाई गई है कि उन माध्यमों से आदर्शवादी रीति-नीति अपनाने की प्रेरणा मिलती है । कुसंग से पतन वाला तथ्य भी सर्वमान्य है । अपवाद तो किसी भी क्षेत्र में पाए जा सकते हैं पर सामान्य प्रक्रिया यही है कि उत्कर्ष और अपकर्ष का स्वभाव और रुझान का बहुत बड़ा आधार सम्बन्ध जन-समूह से मिलने वाली प्रेरणा ही रहती है । इन तथ्यों पर जितनी अधिक गम्भीरता से विचार किया जाए उतनी ही अच्छी तरह यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य की प्रगति, मनःस्थिति और गतिविधि का निर्माण पारस्परिक सहयोग के आधार पर ही विनिर्मित होता है ।

यह सहयोग कहाँ से ? कैसे ? क्यों उत्पन्न हुआ, इस तथ्य पर किया गया गहनतम चिन्तन हमें इसी निष्कर्ष पर पहुँचाता है कि सहृदयता ही उदार सहयोग के लिए प्रेरित कर सकती है। आदर्शवादी प्रवृत्ति ही दूसरों के साथ सेवा, सहयोग, स्नेह एवं अनुदान भरा उदार व्यवहार करने की प्रेरणा देती है । शुद्ध स्वार्थ ही यदि मूल प्रकृति रही तो उस संघर्ष में हर किसी को अपने ही लाभ को प्रधानता देनी पड़ेगी, ऐसी दशा में संघर्ष प्रधान रहेगा और सहयोग कभी नहीं पनपेगा । मत्स्य न्याय से एक-दूसरे को खाते तो रहेंगे पर कोई किसी के सुख-दुःख में भाग न लेगा । समुद्र में रहने वाली बहुसंख्यक और विशालकाय मछलियों में यदि सहयोग रहा होता—वे एक-दूसरे के सुख-दुःख में शामिल रहने की आवश्यकता समझ गई होतीं तो मनुष्य को समुद्र में पैर धरने की भी हिम्मत न पड़ती । मछलियाँ सहज ही छक्के छुड़ा देतीं । शहद की मक्खियों का उदाहरण सामने है, उनके छत्ते में हाथ डालने का साहस बड़ी कठिनाई से ही किया जाता है । जिन पशुओं में आपत्ति के समय एक होने जितनी भी भावनाएँ हैं, उन्हें छेड़ना किसी भी आक्रमणकारी के लिये महँगा पड़ता है ।

यों सहयोग का एक सामयिक आधार, पारस्परिक आदान-प्रदान भी होता है पर उसकी कोई महत्त्वपूर्ण उपलब्धि नहीं होती । दोनों पक्ष कामचलाऊ समझौते के आधार पर अपना श्रम अथवा धन एक-दूसरे को देते रहते हैं, फलतः सुविधाओं का परिवर्तन चल पड़ता है, अर्थशास्त्र की धुरी यही है । किन्तु अधिक सघन सहयोग जिसके आधार पर अपनी सुविधाओं का त्यागकर दूसरों को लाभान्वित करने की आकांक्षा रहती है, वही मनोभाव है जिसे स्नेह अथवा सहृदयता के नाम से पुकारा जाता है । माता अपनी सन्तान को इसी भाव से पालती है । मित्र, मित्र के लिये इसी वृत्ति से प्राण निछावर करते हैं । सन्त, सुधारक, सैनिक और शहीद इसी भावना से प्रेरित होकर स्वयं कष्ट उठाते हुए समाज की सुख-शान्ति के लिये बढ़े-चढ़े त्याग-बलिदान प्रस्तुत करते हैं । महामानवों में यही प्रवृत्ति समुन्नत स्तर पर होती है । सेवाभावी और दानवीरों द्वारा जो लोकमंगल के लिये सराहनीय सत्साहस प्रदर्शित किए जाते हैं, उसमें आदर्शों के लिए लोकमंगल के प्रति, पीड़ित मानवता के प्रति उदार सहृदयता ही उल्लास भरी भूमिका प्रस्तुत करती है ।

मानव जाति की भूतकालीन प्रगति इसी प्रवृत्ति का सहारा पाकर आज की स्थिति तक बढ़ती आई है । उसमें जब कभी जितना भी व्यवधान पड़ा है, वह संकीर्ण स्वार्थ द्वारा ही डाला गया है । उदारचेत्ता महामानव ही इस विश्व की सच्ची विभूतियाँ हैं क्योंकि उन्हीं के उत्कर्ष ने समाज को अनुकरणीय और प्रभावोत्पादक प्रेरणाएँ दी होती हैं । क्षमता को स्वार्थ में खर्च कर डालते हैं, कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्ति या परिवार सुख-साधनों का उपयोग कर सकता है पर जब वह उन्हें अपने लिए खर्च करने का तप-संयम एवम् अपरिग्रह का साहस करके परमार्थ में अपनी विभूतियों का समर्पण करता है तो समस्त समाज में आशा भरा नवजीवन संचार होता है । उस अनुदान से लोकमंगल के कितने ही महत्वपूर्ण प्रयोजन पूरे होते हैं । सबसे बड़ी बात यह होती है कि उसी आदर्शवादी अनुकरण की लहरें उमड़ती हैं और अन्य असंख्यों को उसी मार्ग पर चलने की उमंग उत्पन्न करती हैं । यही वह प्रचलन है, जिसके आधार व्यक्ति, समाज एवम् युग को समुन्नत ही नहीं धन्य बनने का भी अवसर मिलता है ।

इस विश्व में जो कुछ श्रेष्ठ है, उसे सहृदयता की ही प्रतिक्रिया समझा जाना चाहिये । उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श कर्त्तव्य की आस्था विकसित हुए बिना कोई मनुष्य न तो आत्म-संयम के लिये तैयार होगा और न अपनी उपलब्धियों को सेवा-प्रयोजनों में प्रयुक्त करने के लिए सहमत होगा । आपाधापी ही ऐसी दशा में एकमात्र नीति बन जाएगी । तब स्वार्थों का संघर्ष दिन-दिन विकट होता जायेगा । स्वार्थवादी बुद्धिमत्ता विकसित होते-होते एक-दूसरे को फाड़ खाने की स्थिति उत्पन्न करेगी । सर्वत्र आशंका और अविश्वास का वातावरण छाया रहेगा । छल और आक्रमण की सम्भावना हर दिशा में छाई हुई दृष्टिगोचर होगी तो कोई चैन और आनन्द का अनुभव कहाँ से कर सकेगा । हिंस्र पशुओं के बीच घिरे हुये छोटे वन जीव निरन्तर आतंकित रहते हैं, उसी स्थिति में स्वार्थी समाज के हर सदस्य को रहना पड़ेगा । बुद्धिवाद का परिणाम स्वार्थ-साधन के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता क्योंकि प्रत्यक्ष लाभ उसी में है । परमार्थ में तो भौतिक दृष्टि से अपनी हानि ही होती है । उदारता बरतने से अपने को तो घाटा ही पड़ता है । ऐसी दशा में उसे कोई क्यों अंगीकार करेगा ? परमार्थ की विडम्बनाएँ भी यश पाने और उस आधार पर दूसरों को प्रभावित करके परोक्ष लाभ उठाने की वृत्ति से होती रहती हैं । पर उस छद्म कौतुक से कोई ठोस प्रयोजन सिद्ध नहीं होते ।

आदर्शवादी परम्पराओं के प्रचलन का आधार एकमात्र सहृदयता ही हो सकती है । बुद्धि से भी समाज हित की दुहाई देकर परमार्थ प्रयोजनों का समर्थन तो किया कराया जा सकता है पर वैसा करने की प्रेरणा उत्पन्न करना असम्भव है । विशुद्ध बुद्धिवादी को विशुद्ध स्वार्थी ही बनना पड़ता है और विशुद्ध स्वार्थ साधन की मनोवृत्ति समाज का पतन और समाज का स्तर गिराने में कितनी भयंकर सिद्ध हो सकती है, इसे आज सर्वत्र छाई हुई अगणित विभीषिकाओं के रूप में हम सहज ही जान सकते हैं । यदि यही क्रम चलता रहे तो हमें पिशाच बनकर सामूहिक आत्महत्या के लिये अग्रसर होना होगा अथवा पशु-प्रवृत्ति अपनाकर आदिमकाल की अविकसित स्थिति में पहुँचकर वनमानुषों की तरह रहना पड़ेगा ।

सहृदयता का महत्व बुद्धिमत्ता से घटकर नहीं बढ़कर ही माना जाना चाहिये और यह अनुभव किया जाना चाहिये कि मानवी आदर्शों को, प्रगति के चिरस्थायी आधारों की सुख-शान्ति को, सन्तोष और आनन्द को एकमात्र इसी आधार पर जीवित रखा जा सकता है कि सहृदयता की महान् प्रवृत्ति को अधिकाधिक विकसित करने के लिए उससे भी कहीं अधिक प्रयास किया जाय जैसा कि बुद्धिमता को विकसित करने के लिए किया जा रहा है । बुद्धि के लिए स्थापित शिक्षा संस्थानों की तुलना भाव सम्वर्धन के चेतना केन्द्रों को, धर्म संस्थानों को, अध्यात्म के प्रयोग प्रयत्नों को अधिक ही बढ़ावा दिया जाय—कम नहीं । विश्वास, सहानुभूति, सहिष्णुता, सहकारिता, चरित्रनिष्ठा, नम्रता, सज्जनता, उदारता एवम् सेवा-साधना जैसी सत्प्रवृत्तियाँ, सद्भाव सम्वर्धन के साथ ही जुड़ी हुई हैं । कहना न होगा कि मानव चेतना भौतिक पदार्थों से नहीं सद्भावनाओं और सत्प्रवृत्तियों का खाद, पानी पाकर ही जीवित रह सकती है, विकसित हो सकती है । इसी पर विश्वमंगल का सारा आधार टिका हुआ है ।

गाँधीजी कहते थे—"हृदय, बुद्धि और श्रम तीनों के समन्वय में ही मानव जाति का हित है ।" अकेले बुद्धिवाद की प्रतिष्ठा अवांछनीय है । सहृदयता भावनात्मक है । बुद्धि और हृदय का समन्वय इतना सघन होना चाहिये कि उसे सत्कर्म की सत्प्रवृत्तियों के रूप में सर्वत्र बिखरा हुआ देखा जा सके । इस समन्वय पर ही सर्वजननीन, सार्वभौम कल्याण निर्भर है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीव-जन्तु बोलते भी हैं, सोचते भी हैं

क्या सचमुच मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है?

मनुष्य द्वारा अपनी सर्वश्रेष्ठता को ढेरों प्रमाणों और अनेकों तथ्यों के आधार पर चाहे जिस ढंग से सिद्ध कर लिया, पर इसमें कोई तथ्य है भी अथवा नहीं यह भी विचार किया जाना चाहिए ।

मनुष्य की सर्वश्रेष्ठता का आधार यही तो माना जाता है कि उसमें बुद्धि एवं विवेक का तत्व विशेष है । उसमें कर्तव्यपरायणता; परोपकार, प्रेम, सहयोग, सहानुभूति, सहृदयता तथा सम्वेदनशीलता के गुण पाये जाते हैं, किन्तु इस आधार पर वह सर्वश्रेष्ठ तभी जाना जा सकता है जब सृष्टि के अन्य प्राणियों में इन गुणों का सर्वथा अभाव हो और मनुष्य इन गुणों को पूर्ण रूप से क्रियात्मक रूप से प्रतिपादित करें । यदि इन गुणों का अस्तित्व अन्य प्राणियों में भी पाया जाता है और वे इसका प्रतिपादन भी करते हैं तो फिर मनुष्य को सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणी मानने के अहंकार का क्या अर्थ रह जाता है ।

शेर, हाथी, गैंडा, चीता, बैल, भैंसे, गीध, शुतुरमुर्ग, मगर, मत्स्य आदि न जाने ऐसे कितने थलचर, नभचर और जलचर जीव परमात्मा की इस सृष्टि में पाये जाते हैं जो मनुष्य से सैकड़ों गुना अधिक शक्ति रखते हैं । मछली जल में जीवन भर तैर सकती है, पक्षी दिन-दिन भर आकाश में उड़ते रहते हैं क्या मनुष्य इस विषय में उनकी तुलना कर सकता है ? परिश्रमशीलता के सन्दर्भ में हाथी, घोड़े, ऊँट, बैल, भैंसे आदि उपयोगी तथा घरेलू जानवर जितना परिश्रम करते और उपयोगी सिद्ध होते हैं, उतना शायद मनुष्य नहीं हो सकता । जबकि इन पशुओं तथा मनुष्य के भोजन में बहुत बड़ा अन्तर होता है ।

पशु-पक्षियों के समान स्वावलम्बी तथा शिल्पी तो मनुष्य हो ही नहीं सकता । पशु-पक्षी अपने जीवन तथा जीवनोपयोगी सामग्री के लिए किसी पर कभी भी निर्भर नहीं रहते । वे जंगलों, पर्वतों, गुफाओं तथा पानी में अपना आहार आप खोज लेते हैं । उन्हें न किसी पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता पड़ती है और न किसी संकेतक की । पशु-पक्षी स्वयं एक-दूसरे पर भी इस सम्बन्ध में निर्भर नहीं रहते । अपनी रक्षा तथा आरोग्यता के उपाय भी बिना किसी से पूछे ही कर लिया करते हैं । जीवन के किसी भी क्षेत्र में पशु-पक्षियों जैसा स्वावलम्बन मनुष्यों में कहाँ पाया जाता है ? यहाँ तो मनुष्य एक-दूसरे पर इतना निर्भर है कि यदि वे एक-दूसरे की सहायता न करते रहें तो जीना ही कठिन हो जाए ।

मनुष्य शिल्प शिक्षा, अनुकरण तथा उपकरणों पर निर्भर रहता है । वह कोई भी वस्तु अथवा स्थान का निर्माण बिना किसी से सीखे-देखे अथवा औजारों के अभाव में नहीं कर सकता जबकि पशु-पक्षी अपना निवास स्वयं अपनी अन्तःप्रेरणा से बना लिया करते हैं । न तो वे उसके लिये किसी के पास शिक्षा लेने जाते हैं और न उन्हें किन्हीं उपकरणों की आवश्यकता होती है । लोमड़ी, बिलाव तथा शृंगालों आदि के निवास कक्ष देखते ही बनते हैं । वे अपनी माँदों तथा विवरों ने सब प्रकार की सुविधा का समावेश कर लेते हैं । पक्षियों के घोंसले तथा कोतर तो उनकी निर्माण कला के जीते-जागते नमूने ही होते हैं । वया का घोंसला, मधुमक्खी का छत्ता, मकड़ी का जाला तथा चींटी का विवर देखकर तो यही कहना पड़ता है कि परमात्मा के इन क्षुद्र समझे जाने वाले जीवों को गजब की निर्माण बुद्धि दी है । वह सूक्ष्म शिल्प देखकर मनुष्य का मन ईर्ष्या कर उठता है ।

पशु-पक्षी किसी भी ज्योतिषी से बढ़कर आकाश की गतिविधियों का अध्ययन कर लेते हैं, उन्हें उनकी तरह किसी वेधशाला की आवश्यकता नहीं होती, उनकी वेधशाला उनकी नासिका तथा आँखों में ही बनी हुई है । पशु-पक्षियों से अधिक मार्ग का ज्ञान मनुष्यों के लिये किसी प्रकार भी सम्भव नहीं । एक स्थान के पक्षी को किसी भी स्थान पर ले जाकर क्यों न छोड़ दिया जाये वह बिना किसी भूल अथवा भ्रम के अपने स्थान पर लौट आयेगा । इसी विशेषता के कारण बहुत समय तक कबूतर तथा हंस आदि पक्षी पत्र-वाहक का उत्तरदायित्व निर्वाह करते रहे हैं ।

यदि पशु-पक्षियों को प्रशिक्षित करने पर ध्यान दिया जाय तो वे भी मनुष्यों की तरह बुद्धिमान हो सकते हैं । मनुष्य भी आदिमकाल में अन्य प्राणियों की तरह ही अनगढ़ था । सहयोग की वृत्ति अधिक रहने से एक ने दूसरे की सहायता की और संचित अनुभव का लाभ अपने साथियों को मिल सके इसका प्रयत्न किया । एक का अनुदान दूसरे को मिलने की पुण्य-प्रक्रिया ने मनुष्य को पीढ़ी दर पीढ़ी अधिक बुद्धिमान और अधिक क्रियाकुशल बनाया है । यदि यही आधार अन्य प्राणियों को मिल सके तो वे भी अब की अपेक्षा कहीं अधिक बुद्धिमान हो सकते हैं । उनमें भी वे सब तत्व मौजूद हैं, जो मनुष्य की तरह बुद्धिमान बन सकने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का द्वार खोल सकते हैं । मनुष्य चाहे तो इस दिशा में अन्य प्राणियों की बहुत सहायता कर सकता है । अविकसित मस्तिष्क के बालकों को कुशल अध्यापक लिखा-पढ़ाकर बुद्धिमान बना देता है तो कोई कारण नहीं कि अन्य प्राणियों को प्रशिक्षित बनाने के लिए किये गये प्रयत्नों को सफलता न मिले ।

इस संदर्भ में अमेरिका में मिसिसिपी राज्य के अन्तर्गत पोपरबिल नामक कस्बे के निवासी केलर ब्रिलैण्ड नामक एक अधेड़ सज्जन विशेष रूप से प्रयत्न कर रहे हैं । यों वे मनोविज्ञानशास्त्र के स्नातक हैं, पर उन्होंने अपना प्रमुख कार्य तरह-तरह के प्राणियों को उनके वर्तमान स्तर से आगे की शिक्षा देकर अधिक बुद्धिमता का परिचय दे सकने योग्य बनाने का अपनाया है । पशु मनोविज्ञानशास्त्र में उनके प्रयत्नों ने नई कड़ियाँ सम्मिलित की हैं ।

ब्रिलैण्ड की पत्नी मेरियन भी इस प्राणि-प्रशिक्षण कार्य में पूरी सहायता कर रही है । इन दिनों लगभग ४० किस्म के जीवों को अपने स्कूल में 'भर्ती' किया हुआ है जिनमें मछली, चूहे, कुत्ते, मुर्गे, तोते आदि सभी किस्म के प्राणी सम्मिलित हैं । अब तक उनके स्कूल में लगभग एक हजार प्राणी आश्चर्यजनक कार्य कर सकने और आकर्षण केन्द्र बन सकने योग्य विशेषताएँ प्राप्त करके विदा हो चुके हैं । प्रशिक्षित जीवों को खरीदने वाले शौकीनों की कमी नहीं रहती, वे अपने मनपसन्द के प्राणी मूल्य देकर खरीद ले जाते हैं और मनोरंजन का आनन्द लेते हैं । शिक्षकों को भी इस धंधे से अच्छी आजीविका प्राप्त होती रहती है ।

इस विद्यालय की एक कक्षा की मुर्गियाँ आज्ञा देने पर जूक बाक्स का स्विच दबाकर फिल्मी रिकार्ड चालू कर देती हैं और उनकी ध्वनि पर तालबद्ध नृत्य करती हैं ।

मुर्गे टीम बनाकर खिलाड़ियों की तरह अपने-अपने मोर्चे पर आमने-सामने खड़े होते हैं और उस क्षेत्र में प्रचलित 'वैसवाल' खेल, सही कायदे, कानून के अनुसार खेलते हैं । उनमें से न कोई बेईमानी, चालाकी करता है और न लापरवाही । जो पार्टी हार जाती है वह बिना अपमान अनुभव किये, पर फैलाकर रेत में बैठ जाती है ।

रेनडियर प्रेस की मशीन चलाते हैं । कुत्ते बास्केट बाल खेलते हैं । बतखें स्वसंचालित ढोल बजाने की मशीन को चलाती हैं, दर्शक उस बाजे का आनन्द लेते हैं ।

खरगोश पियानो बजाते और दस फुट दूरी तक ठोकर मारकर गेंद फेंकते हैं । बकरियाँ कुत्ते के बच्चों को पालतीं और अपनी दूध पिलाती हैं ।

यह सारी शिक्षा ब्रिलैंड ने पुरस्कार का प्रलोभन देकर पूरी कराने की तरकीब निकाली है । वे इन प्राणियों को आरम्भ में एक कार्य सिखाते हैं । पीछे जब वे मालिक की मर्जी समझने और निबाहने का संकेत समझ लेते हैं तो प्रत्येक सफलता पर स्वादिष्ट भोजन देने का उपहार दिया जाने लगता है । उन्हें सामान्य रीति से भोजन नहीं मिलता । उपहार पर ही उन्हें निर्वाह करना पड़ता है । लोभ से, आवश्यकता से अथवा विवशता से प्रेरित होकर वे सिखाये गये कामों को पूरा करते हैं और दर्शकों का मनोरंजन तथा शिक्षकों का पारिश्रमिक जुटाते हैं । काम करो तो खाना मिलेगा अन्यथा नहीं । यह तरीका सारी प्रशिक्षण प्रक्रिया की धुरी है ।

कुछ जानवर स्वभावतः चतुर होते हैं और कुछ मन्द बुद्धि । चतुर अपनी सीखी विधि को फुर्ती के साथ इशारा पाते ही पूरा कर देते हैं पर कुछ या तो भूल जाते हैं या उपेक्षा करते हैं । उन्हें कठिन और बढ़िया काम से हटाकर सरलता से हो सकने वाले खेल सिखा दिये जाते हैं । एक रैकून को जब बचत के पैसे जमा करने वाले डिब्बे में गिनती के पैसे डालने में अभ्यस्त न बनाया जा सका तो सीटी बजाने की सरल शिक्षा देकर छुट्टी दे दी गई ।

संदेशवाहक कबूतर, नियमित रूप से नियत स्थानों पर पहरे-दारी करने वाले कुत्ते, बिखरे सामान को इकट्ठा करने वाली बिल्लियाँ, रेडियो बजाने के शौकीन रैकून अपने बताये हुए काम ठीक तरह करते हैं ।

अधिक समझदार जानवरों में कुत्ते और बन्दर आते हैं । वे किसी छोटी फैक्ट्री या दुकान के मालिक का पूरी तरह हाथ बँटाते हैं । ढेर की वस्तुओं को छाँटकर अलग-अलग कर देना, उन्हें अलग-अलग स्थानों पर यथाक्रम लगा देना, उन्हें कुछ ही दिन में आ जाता है । घड़ी देखकर नियत समय का अनुमान कर लेना और तदनुसार अपनी ड्यूटी में हेर-फेर कर देना उनमें से अधिकांश को आ जाता है । प्रेसर कुकर में भोजन पकते छोड़कर मालिक चला जाता है और जब पक जाने की सीटी बजती है तो बन्दर द्वारा स्विच बन्द करके उस काम को पूरा कर देना सहज ही आता है । ऐसे-ऐसे अनेक काम वे सीख जाते हैं । तोता, मैना मनुष्य की नकल करने के लिए प्रसिद्ध थे और अन्य कई पशु-पक्षियों को भी थोड़ा-बहुत मानवी भाषा और उसका तात्पर्य समझने का अभ्यास होने लगा है ।

ब्रिलैण्ड केलर का २८० एकड़ भूमि पर बना प्राणि- प्रशिक्षण गृह 'एनीमल विहेवियर इन्टर प्राइस' के नाम से प्रसिद्ध है । उसकी वार्षिक आमदनी २५ लाख रुपया है । इस आय से वे नई प्रयोगशालाएँ और नये प्रशिक्षण गृह स्थापित करते जा रहे हैं । अब तक सरकस वालों को ही यह श्रेय प्राप्त था कि वे खतरनाक जानवरों को कुछ खेल दिखाने के लिए प्रशिक्षित करते हैं । इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दिशा मे ब्रिलैण्ड के प्रयोग प्राणियों के बौद्धिक विकास की समस्या सुलझाने की दृष्टि से हो रहे हैं । उनकी शिक्षण पद्धति को 'कंडीशनिंग थियरी' कहा जाता है, जिसका आधार प्राणियों को यह समझा देना कि ऐसा करने से ऐसा होगा । कर्मफल का सिद्धान्त जानकर पशु-पक्षी भी यह समझ जाते हैं कि हमारे लिए क्या करना लाभदायक है और क्या करना हानिकारक ? एक मनुष्य ही ऐसा है जो सब कुछ सीखकर भी जीवन समस्याओं के सुलझाने में भूल पर भूल करता रहता है और कर्मफल के सिद्धान्त का जानकार होते हुए भी नशेबाजी जैसे अनेक प्रसंगों में उसकी पूरी उपेक्षा करता है ।

प्रशिक्षण से पशु-पक्षी बौद्धिक विकास की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं और अपने लिए तथा दूसरों के लिए अधिक उपयोगी हो सकते हैं । ऐसा ही उपयोगी शिक्षण ४०० करोड़ आवादी वाले संसार में रहने वाले ३०० करोड़ पिछड़े लोगों को भी मिल सके तो वे आज की स्थिति से निःसन्देह कहीं ऊँचे उठ सकते हैं ।

हम लें ही नहीं योगदान दें भी

ज्ञान अनायास ही किसी को प्राप्त नहीं हो जाता । प्रयत्न, परिश्रम, इच्छा और परिस्थिति के आधार पर उसे पाया और बढ़ाया जाता है । मनुष्य को बुद्धिमान कहा जाता है, पर यह बुद्धिमत्ता सापेक्ष है । ग्रहण करने का-समझने का तन्त्र दूसरे प्राणियों को भी अवसर और साधन मिलें तो वे भी विकासोन्मुख हो सकते हैं और क्रमशः आगे बढ़ते हुए आज की अपेक्षा कहीं आगे पहुँच सकते हैं ।

कुत्ते को अपनी श्रेणी के दूसरे जानवरों की तुलना में अपेक्षाकृत अंधिक बुद्धिमान माना जाता है । उसने यह स्थिति अकस्मात् ही प्राप्त नहीं कर ली । मुद्दतों से वह मनुष्य का साथी बनकर रहता चला आया है । कुछ तो मनुष्य ने अपनी आदतों और आवश्यकताओं के अनुरूप उसे ढाला है । कुछ वह अपने अन्नदाता का अनुग्रह पाने के लिए स्वयं ढला है । संयोग और परस्पर आदान-प्रदान ने उसे इस स्थिति में पहुँचाया है । जंगली कुत्ते अभी भी योरोप के कई देशों में झुण्ड के झुण्ड पाये जाते हैं । नस्ल उनकी भी लगभग वैसी ही है पर स्वभाव में जमीन-आसमान जितना अन्तर । पालतू और जंगली कुत्तों की शक्ल भले ही मिलती-जुलती है, आदतों में जरा भी साम्य नहीं होता । पालतू बिल्ली और जंगली बिल्ली में भी यही अन्तर मिलेगा । पालतू बिल्ली ने मनुष्य की आदतों को पहचानकर अपने को बहुत कुछ अनुकूलता के ढाँचे में ढाला है, जबकि जंगली बिल्ली बिल्कुल जंगली की जंगली बनी हुई है । इसे शिक्षण प्रक्रिया का श्रेय कहना चाहिए ।

भारत के अतिरिक्त अफ्रीका आदि देशों में ऐसे कई बालक भेड़ियों की माँद में पाये गये हैं, जो उन्होंने खाये नहीं, पाल लिये । इन बालकों को जब बड़ी उम्र में पकड़ा गया तो उनमें मनुष्य जैसी कोई प्रवृत्ति न थी । वे चारों हाथ-पैरों से भेड़ियों की तरह चलते थे । कच्चे माँस के अतिरिक्त और कुछ खाते न थे, आवाज भी उनकी अपने पालन करने वालों ही जैसी थी । अन्य आदतें भी उन्हीं के समान । ज्ञान ग्रहण का माद्दा वेशक उनमें रहा होगा पर परिस्थितियों की अनुकूलता के अभाव में उनका विकास सम्भव ही न हो सका ।

दूसरी ओर अल्प विकसित पशु-पक्षी समुचित शिक्षण प्राप्त करके ऐसे करतब दिखाते हैं, जिन्हें देखकर आश्चर्य-चकित रह जाना पड़ता है । मदारी लोग रीछ, बन्दरों को सिखाते हैं और उनके तमाशे गली, मुहल्लों में दिखाकर लोगों का मनोरंजन करते हुए अपनी जीविका कमाते हैं, सरकसों में सिखाये-सधाये शेर, हाथी, घोड़े, ऊँट, बकरे, रीछ, बन्दर आदि ऐसे कौतुक करते हैं जैसे मनुष्य भी कठिनाई से ही कर सके । इससे यही सिद्ध होता है कि शिक्षा और शिक्षक में-शिक्षा का महत्व असाधारण है । उसके द्वारा अल्पबुद्धि या बुद्धिहीन समझे जाने वाले पशु भी बहुत कुछ कर सकते हैं, जबकि बुद्धिमान समझा जाने वाला मनुष्य शिक्षण का उचित अवसर न मिलने पर मूर्ख और निकृष्ट कोटि की गन्दी आदतों वाला बना रहता है ।

पशुओं को प्रशिक्षित करने, उन्हें अधिक उपयोगी और समुन्नत बनाने का प्रयत्न जहाँ भी किया गया है, वहाँ आशाजनक सफलता मिली है । मस्तिष्कीय विकास के अनुसार शिक्षा ग्रहण करने की मात्रा तथा अवधि में अन्तर हो सकता है पर इतना निश्चित है कि शिक्षा निरर्थक नहीं जाती । प्रयत्न किया जाय तो पालतू पशुओं को अबकी अपेक्षा अधिक बुद्धिमान तथा उपयोगी बनाया जा सकता है और जंगली आदतों वाले जानवरों को सभ्यता, अनुशासन तथा जानकारी की दिशा में अधिक शिक्षित किया जा सकता है । लगभग हर प्राणी में ज्ञान प्राप्त कर सकने की मूल प्रवृत्तियाँ मौजूद हैं । मनुष्य का कर्तव्य है कि उन्हें भी अपना छोटा भाई माने और बौद्धिक प्रगति की दिशा में आगे बढ़ने में सहयोग प्रदान करे ।

प्रसन्नता की बात है कि इस दिशा में अब अधिक ध्यान दिया जा रहा है और विभिन्न पशु-पक्षियों को इस योग्य बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है कि वे अधिक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुद्धिमान बन सकें और मनुष्य के लिए अधिक सहायक एवं उपयोगी सिद्ध हो सकें । जर्मनी के मुन्स्टर विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रेन्स तथा उनकी सहयोगी कुमारी उकर इस विषय में बहुत दिनों से अनुसन्धान कर रहे हैं और पशुओं के प्रशिक्षित करने की विधियों का आविष्कार करने में निरत हैं ।

मलाया में पाई जाने वाली एक विशेष प्रकार की बिल्ली 'सिवेट' तथा 'मंगूस' नाम के एक अन्य पशु को उन लोगों ने प्रशिक्षित करने में बड़ी सफलता पाई । वे रंगों की भिन्नता तथा दूसरी कई बातों में प्रवीण हो गए ।

कोहलर ने पक्षियों को गिनती सिखाने तथा वस्तुओं की भिन्नता स्मरण रखने में शिक्षित कर लिया । वे शब्दों का भावार्थ भी समझने लगे ।

प्रोफेसर रेन्स की छात्रा 'सिवेट' निरन्तर रुचिपूर्वक पढ़ती रही और करीब ३० प्रकार के पाठ पढ़कर उत्तीर्ण होती रही । उससे ३४ हजार बार प्रयोग कराये गये जिसमें वह ७० से लेकर ८४ प्रतिशत तक सफल होती रही । प्रोफेसर महोदय ने अपनी पुस्तक में उपरोक्त बिल्ली को पढ़ाने और उसकी भूल सुधारने की विधियों पर विस्तृत प्रकाश डाला है ।

हाथी को दिखाई देने वाली वस्तु और सुनाई देने वाली ध्वनियों का सही तरीके से विश्लेषण करना नहीं आता पर वह इशारे समझने में बहुत प्रवीण है। संकेतों के आधार पर उसे भविष्य में बहुत आगे तक प्रशिक्षित किया जा सकेगा और उसे मनुष्य का उपयोगी साथी, सहायक बनाया जा सकेगा । बन्दर के बारे में भी ऐसी ही आशा की जा सकती है । उसकी चंचल प्रकृति और अस्थिर मति को सुधारा जा सकता है और मानव परिवार में कुत्ते की तरह, उपयोगी जीव की तरह सम्मिलित किया जा सकता है।

कुत्ते का भौंकना सुनकर उसका मालिक यह आसानी से बता सकता है कि उसके चिल्लाने का मतलब क्या है ? भूख, प्यास, थकावट, शीत, गुस्सा, चेतावनी आदि कारणों को लेकर भौंकने के स्वर तथा स्तर में जो अन्तर रहता है उसे पहचान लेना कुछ कठिन नहीं है । कुत्ते की भाषा मनुष्य समझता हो सो बात नहीं है । कुत्ते भी मनुष्य की भाषा समझ सकते हैं । अभ्यास कराने पर उन्हें १०० शब्दों तक का ज्ञान कराया जा सकता है और उन आदेशों के आधार पर उन्हें काम करने के लिए अभ्यस्त किया जा सकता है । ६० शब्द समझने तक में तो अभी भी कई कुत्ते सफलता प्राप्त कर चुके हैं । शब्द के साथ-साथ उसके कहने का विशेष ढंग और भावमुद्रा का स्वरूप मालिक को भी सीखना पड़ता है । कानों से बहरे लोग सामने वाले के होंठों का संचालन तथा मुखाकृति का उतार-चढ़ाव देखकर लगभग आधी बात पकड़ लेते हैं । उसी प्रकार कुत्ते को आदेश देते समय, मात्र शब्दों का उच्चारण ही काफी नहीं वरन् मालिक को अपना लहजा, अदा और तरीका भी शब्द के साथ मिश्रित करके आदेश की एक नई शैली का आविष्कार करना पड़ता है । कुत्ते को ऐसी ही भाव और शब्द मिश्रित भाषा से ही आज्ञानुवर्ती बनाया जा सकता है ।

कुत्ते रास्ता चलते बीच-बीच में पेड़-पौधे, खम्भे आदि पर बार-बार पेशाब करते चलते देखे गये हैं । इस आधार पर वे अन्य साथियों को उस मार्ग से गुजरने की सूचना देते हैं । यह मूत्र गन्ध उस क्षेत्र पर उस कुत्ते के आधिपत्य की सूचना देती है और लौटते समय उसी रास्ते का संकेत देती है ।

लन्दन चिड़ियाघर के अधिकारी डा. हंसमंड मारिस का कथन है कि कुत्ते का दुम हिलाना, उसके मनोभावों के प्रकटीकरण से सम्बन्धित है । विभिन्न मनःस्थितियों में उसकी पूँछ अलग-अलग ढंग से हिलती है । उसे समझा जा सके तो स्काउटों की 'झण्डी संकेत पद्धति' के अनुसार कुत्ते के मनोभावों को समझा जा सकता है ।

कुत्ते में एक अद्भुत क्षमता निकटवर्ती भविष्य ज्ञान की है । वे ऋतु परिवर्तन की पूर्व सूचना दे सकते है और कई बार तो दैवी विपत्तियों की पूर्व सूचना भी देते हैं । कुछ समय पूर्व लिन माडल के डेवन प्रदेश में विनाशकारी बाढ़ आई थी, जिसमें भारी धन-जन की हानि हुई । दुर्घटना से ४ घण्टे पूर्व सारे नगर के कुत्तों ने इकट्ठे होकर इस बुरी तरह रोना शुरू किया कि लोग दंग रह गये और तंग आ गये । जब बाढ़ आ धमकी तब समझा गया कि कुत्तों का इस प्रकार सामूहिक रूप से रोना विपत्ति की पूर्व सूचना के लिए था ।

बिल्लियाँ भी कुत्तों से पीछे नहीं । मस्तिष्कीय सक्षमता की दृष्टि से वे कई बातों में और भी आगे हैं । उन्हें सिखा-पढ़ाकर उपयोगी बनाया जाना अन्य छोटे पशुओं की अपेक्षा अधिक सरल है ।

पशुओं में ज्ञान के मूलतत्व ही विद्यमान नहीं हैं वरन् उनमें भावों की अभिव्यक्ति का भी माद्दा है । टूटी-फूटी उनकी भाषा भी है, जिसके आधार पर वे अपनी जाति वालों के साथ विचार-विनिमय कर सकते हैं । इस भाषा को और अधिक विकसित किया जा सकता है । इस विकास के आधार पर मनुष्य के साथ अन्य प्राणियों के विचार-विनिमय का द्वार भी खुल सकता है ।

वैटजेल नामक एक प्राणिप्रेमी ने सन् १८०१ में कुत्ते, बिल्ली तथा कई पक्षियों की भाषा का एक शब्दकोष बनाया था । फ्रांस निवासी ट्यूपो नेमर्स ने कौओं की आवाज पर एक पुस्तक प्रकाशित की थी । योरोप के कई विश्वविद्यालय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस सम्बन्ध में अपना अनुसन्धान कार्य कर रहे हैं । इनमें केम्ब्रिज विश्वविद्यालय का एक 'शब्दकोष' तो लगभग तैयार भी हो चला है ।

'चिंपेंजी इंटेली जेन्स एण्ड इट्ज बोकल एक्सप्रेशन' पुस्तक के लेखकद्वय श्री ईयर्कस और श्रीमती लर्नेड ने चिपेन्जी बन्दरों की लगभग ३० ध्वनियों का संग्रह और विश्लेषण करके एक प्रकार से उनका भाषा विज्ञान ही रच दिया है ।

हरमन फ्रेबुर्ग ने अपनी पुस्तक 'आउट आफ अफ्रीका' में ऐसे अनेक संस्मरण लिखे हैं, जिसमें गोरिल्ला और मनुष्य के बीच बातचीत भावों का आदान-प्रदान और सहयोग-संघर्ष का विस्तृत परिचय मिलता है । साधारणतया जानवर अपनी ही जाति के लोगों से विचार-विनिमय कर पाते हैं पर यदि सिखाया जाय तो न केवल मनुष्य के साथ हिल-मिल सकते हैं वरन् एक जाति का दूसरी जाति वाले अन्य जीवों के साथ भी व्यवहार-सम्पर्क बनाया और बढ़ाया जा सकता है ।

जानवरों का भाषा कोष तैयार करने में कई संस्थाओं ने बहुत काम किया और कितने ही अन्वेषक निरत हैं ? केम्ब्रिज की 'दी एशियाटिक प्राइमेट एक्स पेडीशन' संस्था ने इस सम्बन्ध में बहुत खोज की है । इस संस्था के शोधकर्ता विश्व भर में घूमे हैं और विभिन्न पशुओं की आवाजें रिकार्ड की हैं । मोटेतौर पर यह आवाज कम होती हैं पर बारीकी से उनके भेद-प्रभेद करने पर वे इतनी अधिक हो जाती हैं कि उनके सहारे उन जीवों के दैनिक जीवन की पारस्परिक सहयोग के लिए आवश्यक बहुत-सी जरूरतें पूरी हो सकें । पैरिस के प्रो. चेरोन्ड और अमेरिका के डा. गार्नर ने अपनी जिन्दगी का अधिकांश भाग इसी शोध कार्य में लगाया है ।

बन्दरों की भाव-भंगिमा, उनकी मनःस्थिति को अच्छी तरह प्रकट करती है । जरा गम्भीरता से उसके चेहरे पर दृष्टि जमाई जाय तो सहज ही पता चल जायगा कि वह इस समय किस 'मूड' में है । उसके डरने, प्रसन्न होने, क्रोध करने, थक जाने, दुःख व्यक्त करने, साथियों को बुलाने आदि के स्वर ही नहीं भाव भी होते हैं, जिन्हें आसानी से पहचाना जा सकता है ।

चिंपेंजी बन्दर तो हँस भी सकता है । बच्चों के वियोग में चिंपेंजी मादा रोती देखी गई है । नीचे वाला होंठ आगे निकला देखकर आँखों को ढके बैठी हुई मादा चिंपेंजी को शोकग्रस्त समझा जा सकता है । इस स्थिति में उससे सहानुभूति प्रकट करने दूसरे साथी भी इकट्ठे हो जाते हैं और संवेदना प्रकट करते हैं ।

गोरिल्ला अपने क्रोध की अच्छी अभिव्यक्ति कर सकता है । गिब्बन बन्दर सबेरे ही उठकर शोर करते हैं जिसका मतलब है कि यह क्षेत्र हमारा है । कोई दूसरे इस क्षेत्र में प्रवेश करने का प्रयत्न न करें ।

अन्य प्राणियों को उपेक्षा के गर्त में पड़ा रहने देने या उनके शोषण करते रहने में मनुष्यता का गौरव बढ़ता नहीं । अपनी प्रगति से ही सन्तुष्ट न रहकर हमारा यह भी प्रयत्न होना चाहिए कि अन्य प्राणियों के बौद्धिक उत्कर्ष में समुचित ध्यान दें और सहयोग प्रदान करें ।

बुद्धिमान होने के कारण मनुष्य सबसे बड़ा नहीं है

मनुष्य को परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ रचना कहा गया है । परमात्मा ने उसमें वे सभी विशेषताएँ और क्षमताएँ समाहित कर दी हैं जिनके आधार पर यह कहा जा सके कि ईश्वर ने अपने इस प्रियपुत्र पर अपना विशेष प्यार-दुलार लुटाया । स्थूल दृष्टि से देखने पर यही दिखाई देता है कि मनुष्य को सर्वसमर्थ शरीर तन्त्र के अलावा बौद्धिक सामर्थ्य का विशेष अनुदान मिला है । लेकिन मनुष्य को प्राप्त हुई शारीरिक सामर्थ्य से अन्य प्राणियों की तुलना की जाय तो कितने ही प्राणी उससे अधिक बलवान और शक्तिशाली सिद्ध होंगे । बौद्धिक सामर्थ्य और सूझबूझ की तुलना में चींटी, कौआ, खरगोश, कुत्ता, बिल्ली आदि कितने ही प्राणी मनुष्य से इक्कीस सिद्ध होंगे ।

कहा जाय कि इन सब प्राणियों में सीखने की क्षमता नहीं होती । यह सोचना भी गलत है क्योंकि शरीर रचना में उससे समानता रखने वाले प्राणी उससे अधिक अच्छी तरह सीख-समझ सकते हैं । मनुष्य की शरीर संरचना और बौद्धिक सामर्थ्य से निकटतम अनुरूपता रखने वाला प्राणी खोजा जाय तो वह लंगूर ही होगा । लंगूरों की प्रायः तीन श्रेणियाँ बतायी जाती हैं एक- ओरगुंटान, दूसरी-गोरिल्ला और तीसरी श्रेणी में चिंपाजी आते हैं ।

इनमें से भी ओरगुंटान श्रेणी के लंगूर कम होते जा रहे हैं । अब ये केवल इण्डोनेशिया के जंगलों में ही मिलते हैं और बन्दरों की तरह वृक्षों पर एक टहनी से दूसरी टहनी पर कूदते हैं । इनकी भुजाएँ अन्य लंगूरों की तुलना में अधिक सशक्त होती हैं तथा इनके पाँव अन्य लंगूरों की अपेक्षा छोटे और कमजोर । ओरगुण्टान को पकड़कर यदि किसी पिंजड़े में बन्द कर दिया जाय तो चुपचाप उदास मुद्रा में बैठ जाते हैं । जैसे ये अपनी बंधक स्थिति से क्षुब्ध हों और उसकी पीड़ा छटपटाहट अनुभव करते हों ।

ओरगुण्टान से कुछ अधिक विकसित लंगूर है गोरिल्ला । ये प्रचुर संख्या में पाये जाते हैं । सीधे खड़े

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होने पर ५ फीट के दिखाई देते हैं । अफ्रीका में पाये जाने वाले गोरिल्लों में से कुछ का बजन तो दो क्विंटल तक है, लेकिन ये कभी-कभी ही सीधे खड़े होते हैं ।

मनुष्य के सर्वाधिक समीप लंगूर है । चिंपाजी और मनुष्य के रक्त में इतनी समानता पाई जाती है कि यह आदमी का रक्त है अथवा चिंपाजी का पहचाना नहीं जाता । यही नहीं चिम्पाजियों को भी मनुष्य में होने वाले रोगों यथा—ग्रस्पिण्ड पोलियो जैसी बीमारियों का शिकार होता देखा गया है ।

चिंपाजी को एक भाषा ही नहीं मिली है अन्यथा कई मामलों में यह मनुष्य की न केवल बराबरी करता है, वरन् उसे पीछे भी छोड़ देता है । चिंपाजी जंगल में अपने आस-पास के वायुमण्डल के सम्बन्ध में बहुत अधिक सतर्क रहते हैं । जंगल में जब ये एक-दूसरे को पुकारने के लिए किल्कारी करते हैं तो मनुष्य के लिए उसकी आवाज कान फाड़ देने वाली सिद्ध होती है । जब इन्हें पकड़कर कहीं रख लिया जाता है और ये नये व्यक्तियों को देखते हैं तो इतनी जोर से चीखते हैं कि इनके रखवालों को कनटोप पहन लेना पड़ता है ।

चिंपाजी मनुष्य के हाव-भाव और सिखाई जाने वाली बातों का बहुत शीघ्र अनुकरण करने लगते हैं । उनकी प्रकृति का अध्ययन करने वालों में गार्डनर तथा उनकी पत्नी बीट्राइस प्रमुख रही हैं । ११ वर्ष पूर्व गार्डनर दम्पत्ति ने एक आठ मास के चिंपाजी को सिखाना आरम्भ किया । चिंपाजी को बाकायदा नाम भी दिया गया- वाशोई । गार्डनर दम्पत्ति ने वाशोई को अमेरिका सांकेतिक भाषा सिखाई जो प्रायः गूँगों, बहरों को सिखाई जाती है । जब वह चिंपाजी ५ वर्ष का हो गया तो उसे इस भाषा के १३२ संकेतों का अच्छी तरह अभ्यास हो गया ।

वाशोई के अलावा गार्डनर दम्पत्ति ने ४ और चिंपाजी पाले जिनमें से एक का नाम है भोजा । भोजा अब चित्र भी बनाने लगा है । उसने अपनी प्रतिभा का प्रथम परिचय श्यामपट पर एक चाक से दिया । भोजा प्रायः अपने मानव सम्बन्धियों को चित्र बनाते हुए देखता रहता था । एक दिन भोजा को न जाने क्या सूझी कि उसने चाक उठाया और ब्लैकबोर्ड पर एक डिजायन बनाने लगा । जब यह डिजायन बना चुका तो उसने संकेत दिया कि मेरा काम खत्म हो गया है । यह पूछा जाने पर कि यह क्या है तो भोजा ने सांकेतिक भाषा में उत्तर दिया—यह पक्षी है ।

सिखाने पर कोई भी व्यक्ति कुछ भी समझ-सीख सकता है, परन्तु उसमें जटिलता के अनुसार सीखने-समझने की सामर्थ्य में भी अन्तर आ जाता है । उदाहरण के लिए कम्प्यूटर की कार्य-प्रणाली इतनी जटिल है कि उसे चलाना हर किसी के बस की बात नहीं होती, परन्तु एक तीन वर्षीय चिंपाजी लाना कम्प्यूटर चलाने में भी समर्थ है । उसकी विशेषता यह है कि वह अनुसन्धानकर्ताओं के प्रश्नों का उत्तर मशीन से मनुष्य चालकों की अपेक्षा अधिक शीघ्रता और कुशलता से देता है ।

इन घटनाओं को अपवाद भी कहा जाय तो रोजमर्रा के जीवन में चौराहों पर मजमा लगाकर मदारी के इशारों पर खेल दिखा रहे बन्दरों को देखा जा सकता है । अपने मास्टर का इशारा पाकर वे बन्दर कैसे-कैसे आश्चर्यजनक करतब कर लेते हैं ? देखते ही बनता है । भालू भी बन्दरों की ही तरह कोई आदत या अभ्यास को तुरन्त ग्रहण कर लेता है । सरकस में तो घोड़े, शेर, बकरी, हाथी तक मनुष्यों से न हो सकने वाले काम सीख लेते हैं और अपने मास्टर के निर्देशन में खेल दिखाकर लोगों को चमत्कृत कर देते हैं ।

कहा जा सकता है कि किसी कार्य का अभ्यास करना या बार-बार दोहराकर उसे सीख लेना बुद्धिमत्ता नहीं है । बुद्धिमानी का अर्थ मौलिक सूझ-बूझ है जो किसी भी अवसर या घटना विशेष पर तुरन्त निर्णय लेकर अमल में ले आये । इस मौलिक सूझ-बूझ को प्रत्युत्पन्नमति भी कहा जा सकता है । अन्य प्राणियों में प्रत्युत्पन्नमति नहीं होती । जैसे किसी तोते को रटा दिया जाय कि 'डर मत डर मत ।' तोता हमेशा यही दोहराता रहेगा 'डर मत डर मत' परन्तु बिल्ली दिखाई देते ही तोता टें-टें करने लगता है । उस समय न इससे उड़ते बनता है न 'डर मत डर मत' का पाठ करते ।

आकस्मिक घटनाओं में फँसकर तुरन्त निर्णय लेने की क्षमता तो मनुष्य में भी बहुत कम होती है । शौर्य, पराक्रम और साहस पर घण्टों भाषण देने वाले लोग स्वयं संकट के समय घबड़ाकर भागते या हड़बडाहट में उस संकट को और गम्भीर बनाते देखे गये हैं । वस्तुतः मनुष्य में जो कुछ बुद्धिमता दिखाई देती है, इसका अस्सी प्रतिशत भाग सीखा और दोहराया गया भर होता है । बार-बार अभ्यास से वह बात उसके दिमाग में डाल दी गयी भर होती है । उदाहरण के लिए चार-पाँच वर्ष का होते ही बच्चे को अक्षर ज्ञान कराया जाता है, पाठों को दोहराना और अक्षरों को पहचानना सिखाया जाता है । जो भाषा वह बचपन में सीख लेता है, वह उसे आजीवन याद रहती है । इसी प्रकार आदतें, स्वभाव और प्रकृति भी बहुत कुछ दूसरों के देखा-देखी सीखी जाती है ।

जिसे मौलिक बुद्धि कहा जा सके, वह क्षमता बहुत कम लोगों में होती है क्योंकि मनुष्य जो कुछ भी सीखता, समझता और उस आधार पर सभ्य, समझदार दिखाई देता है, वह समाज में रहने के कारण ही है । जिस वातावरण में वह रहता है, वह वातावरण उसे अनुरूप बनने के लिये प्रेरित करता है । बचपन से ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसे सीखना सिखाया जाता है इसलिए वह आगे चलकर बिना सिखाये भी बहुत कुछ सीख सकता है ।

यही बात अन्य जीव-जन्तुओं के बारे में भी देखी जा सकती है । जीवशास्त्र के पन्ने पलटते चलिये, जीव-जन्तुओं का अध्ययन करते जाइये तो एक से एक बढ़कर ऐसे उदाहरण मिल जायेंगे जो मनुष्य की बौद्धिक क्षमता को लजाते हैं ।

न विद्यालय न शास्त्र

सृष्टि के अन्य जीवों में मनुष्य की सैकड़ों विशेषताएँ हैं । वह सफाई पसन्द करता है, करनी भी चाहिए क्योंकि जो साफ-सुथरा रहता है, गन्दगी से बचता है वही केवल स्वस्थ व नीरोग रह सकता है । स्वास्थ्य विज्ञान की लम्बी जानकारियों के आधार पर यह नियम बनाया गया है, पर मधुमक्खी के पास इस तरह का ज्ञान देने वाला कोई विद्यालय नहीं, स्वास्थ्य के नियमों का उसे पता नहीं, रोग कौन-कौन से होते हैं इसका उसे कोई ज्ञान भी नहीं फिर मधुमक्खी के उपनिवेश में सफाई का उतना ही ध्यान रखा जाता है, जितना रानी की सुरक्षा का । कोई मधुमक्खी मर जाये तो उसके सड़ने, गलने और बदबू फैलाने से पूर्व ही मधुमक्खियाँ उसके शव को छत्ते से १५-२० गज की दूरी पर बाहर फेंक आती हैं । उनमें एक क्रम रहता है, प्रतिदिन नियत समय पर मक्खियाँ उड़ान करती हैं और छत्ते से बाहर मल त्यागकर आती हैं । इसका अर्थ है कि यदि मकान की सफाई न रखी गई, उसमें गन्दगी फैलने दी गई तो उससे सारी कालोनी में महामारी फैल सकती है । यह ज्ञान शरीर का नहीं, उस आत्मा का है, जो मनुष्य और मधुमक्खी दोनों में एक समान है ।

श्री रक्षपाल लिखित पुस्तक 'कीटों में सामाजिक जीवन' में बताया गया है कि यदि कोई चूहा किसी दीमक के किले में घुस जाता है, तो रक्षक दीमक उस पर अपने डंकों का प्रहार करके उसे मार डालते हैं । संगठित आक्रमण और प्रकृतिदत्त साधनों के उपयोग से वे शत्रु पर विजय पा जाते हैं । पर बेचारे कण-कण के कीट उतने बजन के चूहे के शव को बाहर किस तरह करें ? जब तक वह सड़-गल कर समाप्त हो तब तक तो उनके कमरे में इतनी बदबू फैल सकती है, जो उन सबका ही नाश कर दे, इसलिए वे दूसरी युक्ति से काम लेते और मनुष्य से अधिक चतुरता का परिचय देते हैं । लोग तो खेत व मैदान में मल त्यागकर उसे खुला छोड़ आते हैं, जिससे वातावरण दूषित होता है, उसे गड्ढा खोदकर मल त्यागने और उसमें मिट्टी पटक देना भी लज्जास्पद लगता है, इस दृष्टि से अधिक बुद्धिमान दीमक हैं, क्योंकि वे तुरन्त एक प्रकार का द्रव प्रोपोसिल बनाते हैं और उसकी मोटी परत वाली वार्निश उसके शरीर में कर देते हैं, इससे उसकी गन्दगी का एक झोंका भी बाहर नहीं जा पाता । एक बार कपूर की डेली को इनके महल में फेंककर देखा गया । जितनी देर में कपूर की गन्ध उपनिवेश में फैले दीमकों ने उसे इस द्रव से कीलित कर दिया ।

मनुष्य बड़ा भारी इन्जीनियर है, भाखड़ा से लेकर चन्द्र रॉकेट तक की डिजाइनिंग में उसने जो बुद्धि खर्च की है, उसे देखकर लगता है, यह दूसरा परमात्मा है, पर यदि यही योग्यता किसी तुच्छ प्राणी में हो तो उसे भी परमात्मा का अंश ही कहा जायेगा । जीव-वैज्ञानिक डा. बेल्ट ने हिमालय की ४००० फुट ऊँची एक चोटी पर चढ़कर एक ऐसे चींटी परिवार का अध्ययन किया जो गृह निर्माण कर रहा था । जहाँ वे घर बना रही थीं, वह एक नदी का कगार था । बिल से निकाली हुई मिट्टी नीचे गिर जाती थी और इस कारण मकान का सहन उम्दा नहीं बन पा रहा था । अंत में इस स्थिति से निपटने का काम कुछ विशेषज्ञ चींटियों को सौंपा गया । उन्होंने उस स्थान का विधिवत् निरीक्षण कर एक योजना बनाई । उस योजना के अनुसार मजदूर चींटियों को भीतर के काम से हटा कर पहले छोटी-छोटी कंकड़ियाँ बीनकर लाने का आदेश दिया गया । वह सब कंकड़ बीनकर लाईं और इस तरह पहले एक मजबूत पथ बना दिया गया, तब आगे का काम प्रारम्भ हुआ । अब मिट्टी के लुढ़कने की कोई गुंजाइश नहीं रही ।

जीव-जन्तुओं की विलक्षणता मनुष्योचित

बुद्धि और ज्ञान-शक्ति की दृष्टि से मनुष्य की अन्य जीव-जन्तुओं से कोई तुलना नहीं की जा सकती, फिर भी अनेक जीव-जन्तुओं में ऐसी विशेषताएँ मिलती हैं, जिनकी समता कोई सामान्य दर्जे का मनुष्य नहीं कर सकता । उदाहरण के लिए कुत्ते की सूँघने की, गिद्ध की देखने की, शेर की उछलने की, मधुमक्खियों की सामूहिकता की शक्तियों का उदाहरण मनुष्य कभी उपस्थित नहीं कर सका और भी अनेक जीव आहार प्राप्त करने या आत्म-रक्षा के लिए ऐसी-ऐसी विधियों से काम लेते हैं, जो आश्चर्यजनक जान पड़ती हैं । साथ ही अनेक पशु-समय समय पर ऐसी सूझ-बूझ का परिचय देते हैं, जिसे देखकर उनको कभी 'जड़ पदार्थ' की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता । अनेक अन्वेषण करने वालों का तो यह कथन है कि मनुष्य ने कितनी ही बातों का ज्ञान जीव-जन्तुओं से ही प्राप्त किया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुनने वाली चिड़ियाँ

बुनने के कार्य में कई तरह की चिड़ियों ने बड़ी उन्नति की है । हमारे देश में इसके लिए 'वया' पक्षी का घोंसला प्रसिद्ध है । वह घास के तिनकों को ऐसी कारीगरी से बुनती है कि उसका घोंसला एक दर्शनीय वस्तु बन जाता है । उसके भीतर न तो पानी जाता है और न कोई शत्रु साँप, बन्दर, कौआ आदि भीतर घुसकर अण्डों या बच्चों को कुछ हानि पहुँचा सकता है ।

इससे मिलती-जुलती एक चिड़िया अमेरिका में भी होती है, जो अपना घोंसला सुन्दर बनाती है । कितने ही लोग इनकी कारीगरी देखने के लिए रंग-बिरंगा ऊन उनके निवास स्थान के पास रख देते हैं । चिड़िया इसी का प्रयोग अपने घोंसले बनाने में करती है । जब ये रंग-बिरंगे घोंसले पेडों में लटकते हुए दिखाई पड़ते हैं तो उनकी शोभा विचित्र दिखाई देती है । उनमें अनायास ही ऐसे अद्‌भुत और आकर्षक डिजायन बन जाते हैं कि फिर स्त्रियाँ और पुरुष उनकी नकल करने लगते हैं । भारतवर्ष में एक 'दर्जी चिड़िया भी पाई जाती है । यह अपने घोंसले को केवल बुनती ही नहीं वरन लटकती हुई पत्तियों को घास का प्रयोग करके इस प्रकार सीं देती है, जैसे दो फीतों के बीच कोई झूला (हिण्डोला) लटक रहा हो । इसी लटकते हुए 'कटोरे' के बीच उसका घोंसला टिका रहता है ।

मछलियों की विद्युत शक्ति

कई प्रकार की मछलियों ने अपने शरीर में बिजली के बैट्टीनुमा अंग विकसित करके उनके द्वारा आत्म-रक्षा और आहार संग्रह की विधि निकाली है। अमेरिका की अमेजन नदी में पाई जाने वाली 'एल' मछली की पूँछ बहुत बड़ी होती है । उसमें बिजली की बैट्री के तीन समूह होते हैं । इसके द्वारा यह मछली कई सौ 'वोल्ट' की ताकत का धक्का मार सकती है, जिससे कभी-कभी घोड़े और मनुष्य भी गिरकर पानी में डूब जाते हैं । इस बिजली का प्रयोग वह सम्वाद प्रेषक तार के रूप में भी करती है क्योंकि जैसे ही एक मछली किसी शिकार पर आघात करती है, वैसे ही उसके सभी दूरवर्ती साथियों को उसका पता लग जाता है और दौड़कर उसी स्थान पर आ जाती हैं ।

अरब समुद्र और नील नदी में 'कैट फिश' (बिल्ली मछली) नाम की एक भारी और दो फीट के लगभग लम्बी मछली होती है, जिसका रंग पीला होता है और उस पर भूरे धब्बे पड़े होते हैं । इसका सारा शरीर एक लिफाफे की तरह बिजली के अंग से ढका रहता है । इसमें भी काफी शक्ति होती है और प्राय: आपस में लड़कर एक-दूसरे पर विद्युत शक्ति द्वारा आघात पहुँचाया करती हैं ।

एक और मछली 'टारपेडो' नाम की होती है, जिसमें हल्की विद्युत शक्ति होती है और जो काफी संख्या में सारे गरम समुद्रों में पायी जाती है । यह कोमल मछलियों को बिजली का धक्का देकर पकड़ लेती है । पुराने जमाने में हकीम लोग इससे गठिया रोग का इलाज करने का काम लेते थे । इसके लिए रोगी को मछली के ऊपर तब तक खड़ा रहना पड़ता था, जब तक के लिए चिकित्सक आज्ञा देता था या रोगी बिजली के झटके को सहन कर सकता था ।

मानव-इतिहास में सुरंगों का भी बड़ा महत्त्व है । शत्रुओं से बचने अथवा बहुमूल्य वस्तुओं के भण्डार आदि को गुप्त रखने के लिए पुराने जमाने में सुरंगें खोदी जाती थीं । भारत के कितने ही प्राचीन किलों में सुरंगें देखने में आती हैं, जिनके भीतर अब भय के कारण कोई नहीं घुसता । इससे उनके विषय में तरह-तरह के किस्से सुनने में आते रहते हैं । पर इनमे से अधिकांश किसी घेरे या आक्रमण के समय बाहर निकलने के गुप्त मार्ग के रूप में ही प्रयुक्त होती थीं ।

इन सुरंगों को बनाने का विचार सम्भवत: मनुष्यों ने जीव-जन्तुओं से ही ग्रहण किया है, क्योंकि वे आत्म-रक्षा अथवा आहार की खोज में सुरंगें बनाया करते हैं ।

सुरंग बनाने वाले कीड़ों में केंचुआ बहुत प्रसिद्ध है । वह अपने एक सिरे से भूमि में प्रवेश करता है और जो कुछ मिलता है, उसे निगलकर दूसरे सिरे से मिट्टी के रूप में ही बाहर फेंकता जाता है । इस प्रकार से अपना निर्वाह करते हैं और साथ ही नीचे की मिट्टी को ऊपर लाकर छोटे पेड़-पौधों की वृद्धि में भी सहायक होते हैं । कहते हैं कि इस प्रकार केंचुये किसी बगीचे की एक एकड़ भूमि की ४०० मन मिट्टी को एक वर्ष के भीतर नीचे से ऊपर ले आते हैं और भी कितने ही छोटे कीड़े इसी प्रकार धरती में छेद करके नीचे की मिट्टी को ऊपर लाया करते हैं ।

इन कीड़ों के अतिरिक्त न्यौला, चूहे, छछूँदर, झींगुर और साही, स्यार आदि जंगली पशु भी सुरंग खोदते रहते हैं । इन सब प्राणियों का शरीर लम्बाई में अधिक होता है, जिससे उन्हें खोदने के काम में सहायता मिलती है । अफ्रीका का चींटी खाने वाला रीछ तो अपने पैरों से सुरंग बनाने में इतनी तेजी से मिट्टी काटता है, जितना कि दो मजदूर फावड़ा या गैंती लेकर भी नहीं काट सकते ।

जीव-जन्तु एक प्रकार के जड़ पदार्थ हैं, इस मान्यता का खण्डन उन अनेक पशुओं की बुद्धिमानी से होता है, जो वे समय-समय पर प्रकट करते हैं । कुत्तों की स्वामिभक्ति और चोरों का पीछा करते हुए धन का पता लगा आना और फिर स्वामी को वहाँ ले जाना आदि घटनाओं के सच्चे किस्से आमतौर से प्रसिद्ध हैं । बन्दर भी अपने किसी साथी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को बचाने के लिए बहुत समझदारी का परिचय दिया करते हैं । कहते हैं कि बन्दर का बच्चा कुएँ में गिर गया तो कई बन्दर एक-दूसरे के पैर पकड़कर कुएँ में लटक गये और बच्चा उन पर चढ़कर बाहर आ गया । घोड़ों की बुद्धिमानी और स्वामिभक्ति की कथाएँ भी प्रसिद्ध हैं । जब एक सेनाध्यक्ष बहुत घायल होकर रणक्षेत्र में गिर गया तो उसका घोड़ा उसके कमरबन्द को मुँह में पकडकर घर तक उठा लाया जो दस-पन्द्रह मील दूर था ।

भिन्न-भिन्न जाति के पशुओं में पारस्परिक प्रेम के समाचार प्राय: सामयिक पत्रों में छपा करते हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि उनमें प्रेम की भावना और एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति भी होती है । एक विलायती अखबार में एक मेंमना तथा नर बतख की दोस्ती का वर्णन छपा था, जो कभी अलग नहीं होते थे । इसी तरह एक बिल्ली तथा डौमकोवे में घनिष्ट मित्रता हो गई थी । कौआ अपनी शरारती आदत के अनुसार सोने की इच्छुक बिल्ली की पूँछ मरोड़कर जगा देता था । तब थोड़ी देर के लिए दोनों में खट-पट भी हो जाती थी ।

स्मरण शक्ति और बदला लेने की घटनाओं से भी पशुओं के मानसिक विकास का कुछ पता चलता है । कुछ वर्ष पहले अखबारों में एक हाथी की घटना इस प्रकार छपी थी—

"धुवरी राज्य में एक हाथी को खीला सूत्रधार नामक महावत ने पीटा था । इसके कुछ समय बाद खीला ने अन्यत्र नौकरी कर ली और वह एक नये हाथी का महावत बनाया गया । कई वर्ष बाद संयोग से खीला का नया हाथी और वह हाथी जिसे उसने पीटा था, काम पर से साथ-साथ वापिस आ रहे थे । दोनों महावत परस्पर परिचित थे और मार्ग में उनमें से एक ने हाथी को जरा ठहराकर तम्बाकू की चिलम अपने साथी को दी । उसी समय मौका देखकर पीटे गये हाथी ने एकाएक सूँड़ उठाकर खीला को नीचे खींच लिया और महावत द्वारा बहुत रोके जाने पर भी तुरन्त ही कुचलकर मार डाला ।"

कानपुर में चैतू नामक गड़रिया ने किसी बात पर एक गाय को बहुत मारा । गाय ने इस घटना को स्मरण रखा और कई महीने बाद जब उसे अवसर मिला उसने चैतू को गिराकर सींगों से खूब मारा ।

प्रेम और स्नेह–सद्भाव भी

सम्पर्क में आये मनुष्यों, जीव-जन्तुओं को स्मरण रखने व समय आने पर उनसे वैसा व्यवहार करने में सचमुच ही जीव-जन्तुओं की कोई समझ है । इतना ही नहीं वे प्रेम करने और स्नेह 'सद्भाव' रखने में मनुष्य से पीछे नहीं हैं । अन्य जीव भी प्रेम करते हैं, प्रेम ही नहीं शुद्ध और नितान्त पवित्र प्रेम । उदाहरण के लिए कुछ गर्म देशों के समुद्र में मछली की सी आकृति का एक जीव पाया जाता है, उसे मनाती कहते हैं । उसे अपने बच्चे से इतना प्यार होता है कि कैसी भी परिस्थिति में वह उसे अपने से अलग नहीं करती । उसके शरीर में दो झिल्लियाँ होती हैं जो हाथों का काम देती हैं, इनसे ही वह अपने बच्चे को छाती से चिपकाये रहती है और उसे हमेशा दूध पिलाती रहती है । कभी-कभी इसका बच्चा छूट जाता है तो वह ऐसे रँभाती है जैसे लवाई (हाल की व्याई) गाय अपने बच्चे के लिये रँभाती है । सम्भवत: इसी गुण के कारण उसे समुद्री गाय (सी काऊ) भी कहते हैं । १ टन वजन से भी भारी मनाती संसार के दुर्लभ जीवों में से है, इसीलिए उसकी रक्षा के लिए कड़े नियम बनाये गये हैं, अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अन्तर्गत इसे अवध्य कर दिया गया है ।

मनुष्य अपने आपको सामाजिक प्राणी कहला सकता है तो छोटे-छोटे जीव कम सामाजिक नहीं । यह केवल प्राकृतिक प्रेरणा से ही नहीं, उनकी बुद्धिमता से भी होता है ।

चींटी, मधुमक्खी, दीमक, मनाती, बीवर आदि के शरीर में अवतरण, निश्चित रूप से अज्ञान, अन्धकार और अचेतनता में जन्म लेना है, पर यह एक विलक्षण सत्य है कि इस नन्हें से शरीर में रहने वाली नन्हीं सी चेतना में भी वह सारी क्षमताएँ भरी पड़ी हैं, जो किसी भी योग्य मनुष्य में सम्भव हैं । शरीर जीवन साधनों के यन्त्र हैं और प्रत्येक जीव को उसकी प्रकृति और स्वभाव के अनुरूप मिले होते हैं, यह मनुष्य शरीर की ही विशेषता है कि उसमें प्रकृति के परम्परागत विषयों को भी विजय करने की क्षमता है, यदि वह ऐसा न करके अन्य जीवों का सा ही निम्नगामी जीवन जीता है और अपने स्वभाव को ऊर्ध्वमुखी नहीं बनाता तो निश्चित रूप से उसे भी अज्ञान, अन्धकार और अचेतना में भटकता हुआ एक सामान्य जीव मात्र समझना चाहिए, जबकि वह एक शाश्वत, सर्वव्यापी और सनातन पराशक्ति है, यदि वह अपने इस रूप को समझ ले तो भगवान् हो जाये पर यदि वह महत्वाकांक्षाओं में ही भटकता है, तब तो उसे भी 'कीट-पतंगे की श्रेणी का ही एक जीव कहना चाहिये ।

इन सब बातों से सिद्ध होता है कि पशुओं का मानसिक और बौद्धिक विकास भले ही मनुष्य की तुलना में कम हुआ हो फिर भी उनमें प्रेम, सहानुभूति कृतज्ञता, स्वामिभक्ति आदि गुण पाये जाते हैं और कितने ही पशु समय-समय पर बुद्धिमानी का प्रमाण भी देते हैं । ये सब बातें किसी चैतन्य तत्व के अभाव में संभव भी नहीं हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकतीं । इसलिए पशुओं को जड़ अथवा मनुष्यों का लक्ष्य समझ लेना एक बड़ी भूल है । वरन् वस्तु तथ्य तो यहाँ है कि मानसिक विकास में पिछड़े होने के कारण ये जीव-जन्तु मानव के छोटे भाई हैं, जिनके साथ उसे सहृदयता और सहानुभूति का व्यवहार करना चाहिए ।

मनुष्येतर प्राणियों के बारे में भी सोचिए

अनादिकाल में मनुष्य इतना बुद्धिमान नहीं था, जितना कि आज है । नारियल, लौकी के बर्तन, पत्थर के औजार थे । जब आग का आविष्कार हुआ तब पाक विद्या सीखी गई और धातु के उपकरणों का निर्माण हुआ । कृषि के उपरान्त पशुपालन ही मनुष्य की सबसे बड़ी सफलता थी । बोलने में, लिखने में प्रगति बहुत पीछे हुई है । आदिमकाल का मनुष्य नर-बानरों के स्तर पर ही निर्वाह करता था ।

सहकारिता के बल पर क्रमशः प्रगति के चरण बढ़े और मनुष्य सुख-सुविधाओं का अधिपति तथा प्रकृति के रहस्यों का उद्घाटन करके वैज्ञानिक बना और सृष्टि का मुकुट-मणि कहलाया ।

जो क्षमता मनुष्य में है उससे मिलती-जुलती या भिन्न प्रकार की क्षमताएँ अन्य प्राणियों में भी हैं । पर एक ही कमी है-बुद्धि बल की । यह किसी को उपहार में जन्मजात रूप में नहीं मिला है । अब भी वन क्षेत्रों के निवासी प्रायः हजारों वर्ष पुराने स्तर का जीवन ही जीते हैं और वनमानुषों की तरह गुजारा करते हैं । बुद्धिमता एक ने दूसरे को सिखाई है, यह तथ्य ध्रुव सत्य है ।

मनुष्य ईश्वर का बड़ा बेटा है । अन्य प्राणी उसके छोटे भाई-बहिन । बुद्धिमता में वे पिछड़ गये हैं । मनुष्य का कर्तव्य है कि उनके अनाड़ीपन का अनुचित लाभ न उठाये वरन् जिस प्रकार अपने सगों को सुयोग्य बनाया जाता है, उसी प्रकार पशु जगत के साथ थोड़ा परिश्रम किया जाय और उन्हें भी न्यूनाधिक मात्रा में उतना ही सुविकसित बुद्धिमान बनाया जाय जैसा कि मनुष्य स्वयं है । इस प्रकार वे भी सुखी और सम्मानित जीवन जी सकें और धरती के पुत्र होने के नाते इसी पृथ्वी पर उसी प्रकार कलोल कर सकेंगे जिस प्रकार मनुष्य करता है ।

पशुओं को आसानी से बुद्धिमान एवं उपयोगी बनाया जा सकता है । मदारी, बाजीगर, रीछ, बानरों को सधाकर उनकी कमाई में अपना गुजारा करते हैं । सरकस वाले जानवरों को इतना हिला लेते हैं कि वे मनुष्यों को आश्चर्य चकित करने वाले करतब दिखा सकें ।

कबूतरों से डाक लाने ले जाने का काम लिया जाता था । तोता-मैना मनुष्य की बोली की नकल करते हैं । बन्दर, लुहारों की धोंकनी धोंकते हैं । कुत्ते घर की रखवाली करते हैं । यह आम बातें हैं । कभी-कभी तो वे अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय ऐसा देते हैं, जिसे देखकर उनके कमाल को देखते हुए दंग रह जाना पड़ता है ।

फिल्मों में कितने ही बन्दर और कुत्ते ऐसे पार्ट करते हैं कि उन्हें किसी कलाकार से कम नहीं ठहराया जा सकता । कुछ दिन पूर्व एक कुत्ता पोस्टमैन की भूमिका निभाने, घर-घर चिट्ठियाँ बाँटने में यशस्वी हो चुका है । यह प्रशिक्षण का ही प्रतिफल है । ऐसी आश्चर्यजनक घटनाएँ संसार भर में होती रहती हैं, जिनमें पशुओं ने मनुष्य से बढ़कर सद्भावना का परिचय दिया है । कुत्ते और बिल्ली बिछुड़ जाने पर सैकड़ों मील का रास्ता ढूँढ़ते-ढूँढ़ते मालिकों के घर आ जाते हैं ।

अभी-अभी कुछ दिन की बात है कि इंग्लैण्ड के जान ह्वानसन और रोडरीफ लकी ने बर्फीले प्रदेश में एक खास किस्म के वनमानुष को पाया । उसे घर लाकर घर के सदस्य जैसा बेझिझक बनाया फिर उसे पढ़ाना शुरू किया, उसने ५०० शब्द अँग्रेजी के सीख लिए । इतने से ही वह अपनी बात कह लेती है और दूसरों की समझ लेती है । वह साइकिल पर सवार होकर बिना भटके अभीष्ट स्थान तक पहुँच जाती है । यह बंदरिया अमेरिका तथा इंग्लैण्ड के कई फिल्मों में भी काम करती है और अपने मालिकों के लिए ढेरों पैसे कमाती है ।

मध्यकाल में सामन्त आये दिन एक-दूसरे से लड़ाइयाँ ठानते रहते थे और बार-बार युद्ध होते रहते थे । इस कार्य के लिए घोड़े और हाथी ऐसी अच्छी तरह सिखाये और सधाए जाते थे कि मनुष्य का कम उनका अधिक अभ्यास तथा पराक्रम कौशल काम आता था । थोड़े से घोड़े और हाथियों के बल पर उन दिनों बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ जीती जाती थीं ।

पालतू हाथी जंगली हाथियों को पकड़कर लाने में इतने प्रशिक्षित होते हैं कि उनकी चतुरता को देखकर अचम्भे में रह जाना पड़ता है । असम के जंगलों से लकड़ी के भारी लट्ठे ढोने का काम पालतू हाथियों से ही लिया जाता है । राजाओं के यहाँ ऐसे शिकारी कुत्ते रहते थे जिनकी सहायता से शेर, चीते आदि का शिकार भी आसानी से कर लिया जाता था । बर्फीले स्थानों पर हिरन और कुत्ते ही बिना पहिये की गाड़ी चलाते हैं और मालिकों को तथा उनके सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाते हैं। तंजानियाँ की एक फ्रांसीसी महिला ने शेरों का एक पूरा परिवार पाल रखा था जो उसके साथ ही रहता था । वे सभी बहुत भोले और प्रेमी थे । उनकी फिल्में बनाने संसार भर की कई कम्पनियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

६.११ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

आईं । जिस बात पर लोग बिलकुल यकीन नहीं करते थे उस स्वभाव परिवर्तन की बात पर लाखों करोड़ों को विश्वास करना पड़ा ।

'आत्मवत् सर्वभूतेषु' और 'बसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धान्त भारतीय संस्कृति के नहीं मानव संस्कृति के प्राण हैं । इन्हें मौखिक कथनोपकथन तक सीमित नहीं रखा जाना चाहिए वरन् शोभा और शान तब है, जब इन्हें कार्यान्वित किया जाय । मनुष्यों तक की बात सोचने में हमें सीमित नहीं रहना चाहिए वरन् सोचना यह चाहिए कि यह धरती सब की है और उस पर समतुल्य बिरादरी के पशुओं को ज्ञान बल से सम्पन्न किया जाना चाहिए । यह कार्य हम कर सकते हैं और उनका ही नहीं साथ ही अपना भला भी कर सकते हैं । पालतू पशुओं की सुरक्षा हुई और उन्हें सुविधा मिली है । साथ ही मनुष्य का भी कम हित साधन नहीं हुआ है । इसी प्रकार आगे उन्हें प्रशिक्षित, समझदार बनाया जा सके तो वे अधिक सम्पन्न और अधिक सुविधा प्राप्त करेंगे, साथ ही इसमें मनुष्य का भी कम हित-साधन नहीं होगा । उसे श्रेय मिलेगा और आदर्शों के परिपालन में उसे तत्पर भी कहीं देखा जा सकेगा ।

पशुओं को बुद्धिमान एवं उपयोगी बनाने का कार्य कठिन तो है पर असम्भव नहीं । यदि इस कार्य में हाथ डाला जाय तो कोई कारण नहीं कि प्राणिजगत को अधिक समुन्नत बनाने में तत्पर होकर मनुष्य सच्चे अर्थों में भगवान का ज्येष्ठ पुत्र न कहला सके और अपने छोटे भाइयों की सहायता करने का यश एवं सुयोग प्राप्त न कर सके ।

यदि यह उचित लगता हो तो सचमुच ही आदर्श अपनाने का मन हो तो धरती का कुछ भाग पशुओं को जीवित रहने के लिए भी छोड़ना होगा । आज तो स्थिति ऐसी है कि बढ़ती हुई अन्धाधुन्ध आबादी के लिए अन्न, माँस सब कुछ कम पड़ रहा है । जब मनुष्य के लिए ही रहने की जगह कम पड़ रही है । भोजन में असमंजस है और पशु-पक्षियों से लेकर जलचरों तक को उदरस्थ करने की योजना बन रही है, तो अन्य जीवधारी पृथ्वी पर बचेंगे कैसे ? रहेंगे कहाँ ? खायेंगे क्या ? और काम किसके आयेंगे ? जब मनुष्य बढ़ते-बढ़ते धरती का कोई कोना खाली नहीं छोड़ रहे हैं ।

बुद्धिमता मनुष्य ने प्रयत्नपूर्वक प्राप्त की है । यह उसी की बपौती नहीं है । जहाँ कहीं भी अन्य पशु-पक्षियों को सीखने-सिखाने का अवसर मिला है, वहाँ उसने अपनी बुद्धि को अपेक्षाकृत कहीं अधिक बढ़ा लिया है ।

उत्तरी कोरिया में बन्दरों को इस प्रकार सिखाया गया है कि वे अपने लुहार मालिकों का पंखा घुमाते रहते हैं और एक मजदूर का परिपूर्ण काम कर देते हैं ।

अमेरिका के एक कन्सास नगर की एक फिल्म कम्पनी ने एक चिंपाजी इस प्रकार सधाया था कि वह कई फिल्मों में बताये हुए पार्ट बड़ी खूबसूरती से करता रहा ।

सिडनी में एक कबूतर पालन केन्द्र बनाकर उन्हें ऐसा प्रशिक्षित किया गया है, जिसमें सधाए हुए कबूतर नियत स्थान पर डाक पहुँचाते और जवाब लेकर भेजने वाले के पास वापस लौट आते हैं । जीवविज्ञानी डेमण्ड मॉरिस ने बन्दरों को चित्र बनाने की कला में प्रशिक्षित किया था । एक बन्दर द्वारा बनाये २०० चित्र उसने प्रदर्शनी में रखे थे । जिन्हें सन्देह होता, उनके सामने बन्दर बताये हुए चित्र की दूसरी नकल हाथों-हाथ बनाकर तैयार कर देता था । डेमण्ड ने 'अल्फा' नामक चिंपाजी तथा कांगो नामक शिबून बन्दर को घर में आने वाले अतिथियों का समुचित सत्कार करने के लिए भी प्रशिक्षित कर रखा था ।

सिडनी में एक कुत्ता इस प्रकार प्रशिक्षित किया गया था कि अपने अन्धे मालिक की छड़ी पकड़कर वह उसे रोज दफ्तर ले जाता और लौटने का समय होने पर वह उसे उसी प्रकार वापस भी ले आता ।

उज्जैन (भारत) में एक १९ वर्षीय युवक मुन्नालाल ने लगभग १०० साँप इस प्रकार सधाये थे, जो उसकी आज्ञानुसार काम करते थे । इस प्रदर्शन को क्षीर सागर मैदान में हजारों व्यक्तियों ने देखा ।

सरकस में हाथी, शेर, कुत्ते, घोड़े आदि को अद्भुत काम करते देखकर यह विश्वास कोई भी कर सकता है कि सिखाने वाले भयंकर पशुओं को भी सिखा लेते हैं । रीछ बन्दरों को तो ग्रामीण मदारी भी इशारे पर काम करने के लिए प्रशिक्षित कर देते हैं ।

मध्य युग की लड़ाइयों में घोड़े और हाथी इसी प्रकार युद्ध कौशल के लिए प्रशिक्षित किये जाते थे एवं वे शत्रु पक्ष को छकाते और हराने में अनोखी सूझ-बूझ का परिचय देते थे ।

अतीन्द्रिय क्षमताओं की दृष्टि से कई प्राणियों की प्रतिभा असाधारण होती है । वर्षा होने, भूकम्प आने, किसी मकान के गिरने आदि की सम्भावनाएँ बिल्ली पहले ही जान जाती है । जब वह बच्चों समेत भागने लगे तो समझना चाहिए कोई विपत्ति आने वाली है ।

यह माना जा सकता है कि मनुष्य की मस्तिष्कीय संरचना एवं लम्बे समय से चले आ रहे पारस्परिक सहकार ने मनुष्य को अधिक बुद्धिमान बना दिया है । पर ऐसा नहीं समझा जाना चाहिए कि अन्य प्राणी सर्वथा बुद्धिहीन हैं । उनके निमित्त यदि प्रशिक्षण की उपयुक्त व्यवस्था की जाय तो वे भी मनुष्य के अच्छे साथी सिद्ध हो सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानवेतर प्राणियों का संसार भी मनुष्यों जैसा

काम, प्रेम, गृहस्थ और दाम्पत्य आदि के लिये इन जीवों का जगत बड़ा विचित्र है, कई जीवों में जोड़ों की घनिष्टता ऐसी प्रगाढ़ होती है कि एक के न रहने पर दूसरे का दुःख शरीरान्त से ही छूटता है । कबूतर के बारे में यजुर्वेद तक में उद्धरण देते हुए बताया है—**'मित्रवरुणाभ्यां कपोतान्'** मित्रता, प्रेम और दाम्पत्य-निष्ठा हममें कपोतों जैसी हो । सारस भी ऐसा ही पक्षी है, जोड़े में कोई एक बिछुड़ जाये तो दूसरा बहुत दुःखी हो जाता है । पंडुक नर मर जाता है तो उसकी मादा उसके शव में शरीर कूट-कूटकर विलाप करती है । उसका वह आर्तनाद देखकर मनुष्य के भी आँसू आ जाते हैं और ऐसा लगता है कि मनुष्य में भी ऐसी निष्ठा होती तो उसका जीवन कितना सुखमय होता ?

थोड़ी सी बात में गाल फुला लेने और सप्ताहों मन में क्रोध भरे रहने की बेवकूफी केवल मनुष्य ही करता है अन्य जीव नहीं । सृष्टि के प्रायः सभी जीव प्रबल प्रतिरोध या आक्रमण की स्थिति में ही क्रोध व्यक्त करते हैं, अन्यथा उनका जीवन बड़ा हल्का-फुलका और विनोदप्रिय होता है । मनुष्येतर जीवों का यह मनोविनोदी स्वभाव देखते ही बनता है । पेन्गुइन पक्षी अपनी पत्नी से मनोविनोद के लिये अपनी चोंच उसकी चोंच में डालकर बड़ी देर तक विचित्र क्रियायें करके उसका मन प्रसन्न रखता है । कछुआ अपनी मादा की आँख को खुजलाता और पीठ पर हल्की चपत-सी लगाकर खेल करता है । मैडम अब्रू नामक क्यूबा की एक महिला के पास एक चिम्पाजी था, वह बड़ा ही मजाकिया स्वभाव का था । नर जाति के इस चिम्पाजी की विशेषता यह थी कि वह हमेशा अपनी मादा के साथ ही रहता, कोई स्त्री पास आ जाये तो कोई बात नहीं पर किसी आदमी के पास पहुँचते ही वह अपनी पत्नी को छिपा लिया करता था । ऐसा करते समय वह मुस्कराता भी था । लोग इसके इस विनोद का घण्टों आनन्द लिया करते थे पर वह मानो खेल-खेल में ही मनुष्य के प्रति अविश्वास और व्यंग्य व्यक्त किया करता था । पराई इज्जत पर हाथ साफ करने की मानवीय दुष्प्रवृत्ति के नाम पर चिम्पाजी का यह व्यंग्य अयुक्ति संगत नहीं कहा जा सकता ।

बया को खेल-कूद और मनोविनोद की जिन्दगी विशेष प्रिय है, वह इधर-उधर से, कहीं से रुई या डोरा ढूँढ़ लाती है, फिर उससे झूला बनाकर स्वयं भी झूलती है, पड़ोसियों और बच्चों को भी झुलाती है, बीच-बीच में बया उनको सिखाती और समझाती भी है । नृत्य का भी आनन्द लेती है । पेन्गुइन पक्षी बर्फ में फिसलने का एक विशेष खेल खेलता है । बतखों की जल क्रीड़ा देखते ही बनती है । कोयल का गाना और मैनाओं की मनुष्य की भाषा की नकल करना भी कम मनोरंजक नहीं । आश्चर्य की बात यह है कि नृत्य आदि उत्सवों में अधिकांश विनोदी कार्य नर को ही करने पड़ते हैं । गौरेया दिन में कई बार खेल-खेल में नकली युद्धाभ्यास करती है । कई चिड़िया नटों जैसे करतब दिखाकर अपने अन्य साथियों को हँसाती हैं ।

और तो और आतिथ्य और मैत्री भाव के लिये भी पशु-पक्षियों का संसार मानवीय क्षेत्र से अधिक सुन्दर और विश्वस्त है । सजातीयों से प्रेम तो सभी कर लेते हैं, अपने परिवार का आदर-सत्कार कर लेना बड़ी बात नहीं, हृदय की विशालता और सौजन्य की रक्षा तब होती है, जब मनुष्य अपने परिश्रम से उत्पन्न किये धन और वस्तुओं को केवल आत्मीयता और मैत्री के सुख के लिये दूर से आये अतिथियों को खिला-पिलाकर अथवा देकर प्रसन्न होता है । यह सत्प्रवृत्ति ही मनुष्य को संकीर्णता से निकालकर विराट् के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में सहायता करती है पर आज का मनुष्य तो इन सद्गुणों को भी भूलता जा रहा है ।

आपको इस बात का अनुमान तब हो, जब आप कभी ध्रुव प्रदेश की यात्रा करें । वहाँ का निर्जन क्षेत्र और बर्फ से ढके पहाड़ आपको शायद ही कुछ दे सकें पर उस प्रदेश के निवासी-मनुष्य नहीं, पक्षी आपकी उतनी आवभगत करेंगे, जितनी आपके कोई अत्यन्त प्रिय सम्बन्धी कर सकते होंगे । आदरसूचक मीठी बोली बोलती हुई, वह अनेक साथियों के साथ पंक्तिबद्ध होकर आपकी ओर चल देंगी । कोई जीवपशु या पक्षी मनुष्य के पास जाकर उसके विश्वासघात का भाजन बन सकता है पर विचारा साधारण-सा पक्षी आपके पास निर्भय इस दृष्टि से आता है कि आप उसकी पीठ पर हाथ फेरेंगे और पुचकारेंगे, प्यार करेंगे । आपका मिष्ठान्न और मखमली गद्दों से स्वागत कर सकते होते, यह वस्तुयें उनके पास होतीं तो अवश्य ही आपके आतिथ्य में वे यह सब प्रस्तुत करते ।

शुतुर्मुर्ग अपने लम्बे डीलडोल और लम्बी दौड़ान के लिये तो प्रसिद्ध है ही सहृदयता और मित्रभाव के लिये भी लोग उसका उदाहरण देते हैं, इसकी मैत्री प्रायः जेबराओं के साथ होती है । अन्य चौपाये भी यदि इसके निवास-स्थान के आस-पास आ जायें तो यह उनसे भी बड़ी जल्दी घनिष्टता स्थापित कर लेता है, उसमें न तो उसका कोई स्वार्थ है, न भय । आत्म-सन्तुष्टि के लिये ही वह मित्रता करता है और जिसके साथ मैत्री करता है, उसको अन्त तक निबाहता भी है । मनुष्यों की मित्रता अधिकांश स्वार्थ और मतलबगर्जी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

की होती है, मित्र के लिये आत्मोत्सर्ग वाली दृढ़ता एकाध मनुष्य में ही होगी पर शुतुर्मुर्ग जिसके साथ दोस्ती करता है, उसे न केवल उसकी असहाय अवस्था में उसके भोजन, पानी का प्रबन्ध करता है, वरन वैसे भी उसे कुछ न कुछ खिलाता रहता है । जेबराओं से विशेष मैत्री का कारण यह है कि जेबरा स्वयं भी उसे अच्छी-अच्छी वस्तुयें खाने को देते हैं और उसके प्रत्युपकार के लिये, वह अपनी ऊँची गर्दन से आस-पास के क्षेत्र में चौकसी रखता है, कोई शिकारी या आक्रमणकारी हिंसक जीव दिखाई दे जाये तो जेबरा अपने मित्र को तुरन्त आगाह करेगा और उसे किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचायेगा ।

खेलना और प्राकृतिक सौन्दर्य वाले स्थानों में भ्रमण का आनन्द लेने के लिये पशुपक्षी सैकड़ों कोस की यात्रा करते और अपनी प्रकृति-स्थता का परिचय देते हैं । घुमक्कड़ प्रकृति के लिये स्टिल्ट सबसे आगे हैं, वह अमेरिका और उत्तरी- ध्रुव तक की यात्रा करता है और सुन्दर स्थानों में चार-चार महीने तक रहता है । खंजन चिड़िया ऋतु परिवर्तन के साथ उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ता रहता है । जहाँ समुद्री पानी जमा रहता है, वहाँ संसार के कोने-कोने से गर्मियों में पक्षी आकर वहाँ का आनन्द लेते हैं । साइबेरिया के पक्षियों को भरतपुर के जलाशय और झीलें बहुत पसन्द हैं, वहाँ प्रति वर्ष लाखों की संख्या में पर्यटक पक्षी आते और अपने पीछे सैकड़ों जीव-विशेषज्ञों को इसलिये खींच लाते हैं, ताकि वे जीवों की इस घुमक्कड प्रवत्ति का अध्ययन कर सकें । संसार के अनेक जीव विशेषज्ञ आश्चर्यचकित हैं कि इतनी अधिक मात्रा में भारत-भ्रमण पर जाने का रहस्य क्या है ? जो कुछ भी हो एक स्थान पर जमकर सड़ी- गली जिन्दगी बिताने वाले मनुष्यों को उनसे एक प्रेरणा अवश्य मिलती है कि यह जीवन प्राकृतिक सौन्दर्य का रसास्वादन करते जिया जाय । कृत्रिम जीवन में ही आसक्त रहकर भावी पीढ़ी को दिग्भ्रांत न किया जाये । इस जीवन में थकावट और नये रक्त के लिये बोझ रहता है, उस बोझ की परेशानी न स्वयं उठाई जाये और न औरों पर थोपा जाये ।

जीव-जन्तुओं जितनी भी दया, करुणा, उदारता, मैत्री-भावना, परिश्रमशीलता, प्रेम और निष्ठा मनुष्य में होती तो वह आज की अपेक्षा कहीं अधिक सुखी होता । पर उसे तो अपने बुद्धि का, ज्ञान का अभिमान है । वह यह समझता है कि भावनाओं का अन्त करके जीवन में मानवीय संवेगों और मर्यादाओं को तोड़कर अधिक सुखी रहा जा सकता है दरअसल यह उसकी बुद्धिमानी नहीं मूर्खता ही है । बुद्धिमान व्यक्ति विवेकी न हो तो उस अर्जित ज्ञान का भी कोई महत्त्व नहीं रह जाता, फिर मनुष्य यह भी तो नहीं कर सकता कि ज्ञान की सर्वाधिक पूँजी उसी के पास है । सृष्टि के अन्य जीवधारियों में भी मनुष्य के समान ही अद्भुत ज्ञान और विलक्षण प्रतिभायें पाई जाती हैं ।

चींटी का भूमिगत निवास स्थान कभी देखें तो उनके बुद्धि कौशल का पता चले । यह जमीन में सुरंगें बनाकर रहती हैं, जो १५-२० फुट क्षेत्र तक में फैली होती हैं । इन सुरंगों में हजारों लाखों कमरे होते हैं । यह कमरे विभागशः होते हैं, जल भण्डार के कमरे अलग, चिकित्सालय अलग, कुछ कमरों में चींटियों का खाद्य निगम काम करता है और कुछ में उनके सिपाही सैनिक अभ्यास । मजदूरों के कक्ष अलग और रानी चींटी का विशाल हवादार महल अलग यदि उनमें बौद्धिक क्षमतायें न होतीं तो इतनी सुन्दर कल्पना का साकार स्वरूप कहाँ से आ जाता ? दीमक अपने घरों को इस तरह उठाती हैं कि उसमें हवा, पानी, तूफान और ऊपर के धमाके को भी कोई प्रतिक्रिया भीतर तक नहीं पहुँच सकती । यह दोनों जन्तु मौसम विशेषज्ञ होते हैं, मशीनें धोखा दे सकती हैं पर वर्षा होने के समय की इतनी अच्छी जानकारी उन्हें होती है कि एक बूँद आने से पहले अपना सारा सामान ढोकर सुरक्षित स्थानों पर पहुँचा देती हैं और पानी आने से पहले ही स्वयं भी छिप जाती हैं ।

एक बार मास्को (रूस) के एक कारखाने के प्रमुख सहायक इन्जीनियर अनातोली बाइकोव ने कहीं यह पढ़ा कि पक्षियों में बहुत दिनों तक याद रखने वाली विलक्षण स्मरण-शक्ति होती है, उसने इससे लाभ उठाने का निश्चय किया । उसने कुछ कबूतर पाले और उन्हें मशीनों का ज्ञान कराया और ऐसा प्रशिक्षण दिया कि मशीन का जो पुर्जा खराब हो कबूतर चोंच मारकर उसका संकेत कर दिया करें । कई तरह की कठिनाइयों के बावजूद भी यह प्रशिक्षण चलता रहा और एक दिन उसने इसमें महत्त्वपूर्ण सफलता पाई । कई प्रशिक्षित कबूतरों ने एक घण्टे में ४-५ हजार तक पुर्जों की जाँच का काम करना सीख लिया । कबूतरों को उक्त प्रशिक्षण ४-५ दिन में ही दे दिया जाता है । तीन सप्ताह में तो वे उसके विशेषज्ञ हो जाते हैं, रूस का यह प्रयोग एक दिन अन्य जीव-जन्तुओं को मनुष्य की समानता में लाकर खड़ा कर दे तो कोई आश्चर्य नहीं । ऐसे प्रशिक्षित कबूतर तो रंग ही नहीं उँगलियों के निशान जैसी सूक्ष्म बातों का पता लगा लेते हैं, यह देखकर मानना पड़ता है कि मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षी भी बुद्धि और ज्ञान रखते हैं ।

सन् १९४१ में दो वैज्ञानिकों ने चमगादड़ की विचित्र ज्ञान-शक्ति का पता लगाकर बताया कि वे जीते, जागते प्राकृतिक रैडार हैं । रैडार यन्त्र का सिद्धान्त ध्वनि पर आधारित है । किसी भी ध्वनि प्रेषक वस्तु की विद्युत चुम्बकीय तरंगें वायुमण्डल में टकराती हैं । रैडार के यन्त्र उस ध्वनि के आधार पर ही उस वस्तु की दूरी, गति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि का पता लगाते हैं पर यह तो उन वस्तुओं तक ही सीमित है, जिनकी ध्वनि काफी स्थूल होती है । संसार के सभी पदार्थ गतिशील हैं, इसीलिये उन सबको अत्यन्त सूक्ष्म कम्पन हुआ करता है, उस कम्पन की ध्वनि इतनी बारीक होती है कि बड़ी शक्ति वाला लाउडस्पीकर लगाकर भी उसे नहीं सुना जा सकता । उसे सुनने के लिये अति उच्च आवृत्तियों की ग्रहणशीलता चाहिये । यह शक्ति चमगादड़ में पाई जाती है, चमगादड़ ५०००० आवृत्ति प्रति सेकेण्ड की तरंगें प्रसारित कर सकता है, उससे यदि उसकी आँखें बन्द करके किसी अन्धेरे कमरे में, अत्यन्त पतले सैकड़ों धागे बाँधकर भी दौड़ाया जाये तो वह बिना किसी धागे के टकराये अपनी पूर्ण गति से उड़ता रहेगा । आवाज की अत्यन्त सूक्ष्म ग्रहण-शीलता के आधार पर वह बाधायें पार कर लेता है । चमगादड़ की यह क्षमता मनुष्य के लिये भी एक चुनौती बन गई है कि वह यह सोचे कि क्या उसका मात्र किताबी ज्ञान इस विलक्षण ज्ञानशक्ति की तुलना कर सकता है ।

जर्मन वैज्ञानिक कोलर ने एक बार एक चिम्पाजी बन्दर पर प्रयोग करके यह सिद्ध किया वह अपनी आयु के मनुष्य से कहीं अधिक समझदार होता है । हम मनुष्यों के मन में जो कुछ भी ऊँट-पटाँग आता है, वैसा ही करते रहते हैं, यह नहीं सोचते कि इससे अपने स्वास्थ्य को हानि तो नहीं ? इस भावी पीढ़ी अथवा समाज का अहित तो नहीं हो रहा । अविवेकशीलता के कारण हमने कितनी समस्यायें पैदा कर लीं, उनकी गणना भी नहीं की जा सकती पर चिम्पाजी हर बात पर बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से विचार करता है और तब कोई निश्चित कार्य करता है, उतावली करने की भूल मनुष्य करते हैं चिम्पाजी नहीं ।

प्रयोग के दिनों में उन्होंने एक बार चिम्पाजी के पिंजड़े से कुछ दूर पर एक केला टाँग दिया । पास में दो डण्डे रख दिये । हाथ से तो वह केले को नहीं पकड़ सकता था पर दोनों डण्डों की लम्बाई इतनी थी जितने से केले को आसानी से स्पर्श किया जा सकता था । दोनों डण्डे एक बोल्ट से जोड़े जा सकते थे, वह सामग्री भी पास रख दी गई । चिम्पाजी ने सारी वस्तुयें देखीं । थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर डण्डों को जोड़कर उसने केले को उतार ही लिया । इस प्रयोग से उनकी यह धारणा कि अन्य जीवों में भी विचार करने की क्षमता विद्यमान है, की पुष्टि ही होती है । इसी प्रकार लन्दन के जीव संग्रहालय 'जू' में दो ऐसे बन्दर थे, जिनमें से एक टाइप राइटिंग कर सकता था, दूसरा चित्रकारी, इन दोनों ने अपने समय में बहुत यश अर्जित किया ।

प्रशिक्षण से प्रतिभा परिष्कार संभव

जानवरों की बुद्धि को यदि प्रशिक्षित और परिष्कृत किया जा सके, तो कई बार वे मनुष्यों जैसी प्रतिभा और प्रखरता का परिचय देने लगते हैं । ऐसी ही एक घटना २०वीं सदी के प्रारंभ की है ।

इंगलैंड का एक नागरिक था—डेविड पार्कर । विवाह हुए कई वर्ष बीत जाने पर भी कोई संतान न हुई, तो उसने एक कुतिया पाल ली । नाम रखा—फाइले ।

डेविड सरकारी गुप्तचर विभाग में काम करता था उसने फाइले को मनोरंजन का साधन मात्र बनाये रखना उचित न समझा और उसे प्रशिक्षित करने का निश्चय किया । जिस कला में वह प्रवीण था, जिसमें उसकी रुचि थी, उसी में कुतिया को भी पारंगत बनाने का निर्णय किया ।

कुछ ही दिनों में दोनों में गहरी मित्रता हो गई, इतनी गहरी कि कभी डेविड को कार्यवश बाहर जाना पड़ता, तो फाइले खाना-पीना त्यागकर डेविड की वाट जोहती रहती । उसके आने पर ही वह अन्न ग्रहण करती, पैरों से लिपटती और प्रेम प्रदर्शित करती ।

प्रशिक्षण भी बीच-बीच में बराबर चल रहा था । डेविड जो कुछ सिखा सकता था, सिखाया जैसे चोरों का पता कैसे लगाया जाता है ? चोरी का माल कैसे बरामद किया जाता है ? अपराधी का पीछा करके उसके मनोरथ को विफल कैसे किया जाता है आदि अनेकानेक कौशल उसने कुतिया को खेल-खेल में सिखला दिये । रोज-रोज के अभ्यास से फाइले ने भी मनुष्यों जैसी समझ अर्जित कर ली ।

एक दिन डेविड घर से बाहर दौरे पर था । पत्नी मकान में अकेली थी । उसे किसी का साहचर्य प्राप्त था, तो वह एकमात्र कुतिया ही थी, अन्यथा रात्रि में घर एक प्रकार से सुनसान जैसा बना रहता । डेविड की उपस्थिति में उसका कोई न कोई इष्ट मित्र आता ही रहता था, फलतः अकेलापन का डरावना वातावरण समाप्त हो जाता, पर इस समय की स्थिति बड़ी असह्य थी । इसी का लाभ उठाकर कुछ चोर घर में घुस आये । मालकिन गहरी नींद में सो रही थी, किन्तु कुतिया जरा-सा खटका होते ही जाग पड़ी । प्रश्न यह था कि क्या करना चाहिए ? मोटी बुद्धि यह कहती थी कि हो-हल्ला मचाया जाय, चोरों को काटा और भगाया जाय । संभवतः दूरदर्शिता ने उसे सुझाया कि ऐसा करने पर उसकी तथा मालकिन की जान जा सकती है । धन को भी नहीं बचाया जा सकता था । उसने दूसरा उपाय सोचा चुपचाप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुर्दे जैसी पड़ी-पड़ी सब देखती रही । चोर माल लेकर चल दिए, तो वह दबे पाँव उनके पीछे लग ली । चोरों ने माल को पास के कब्रिस्तान में गाड़ा और सुविधानुसार उसे बेचने का निश्चय किया ।

कुतिया ने यह सब देखा और चुपके से घर लौट आयी । प्रात: जानकारी हुई, हल्ला मचा और पड़ोसी एकत्रित हुए । कुतिया ने एक परिचित का पैंट पकड़ा और उसे कब्रिस्तान की ओर ले गई । अन्य दर्शक भी पीछे चले । नियत स्थान पर उसने पंजों से जमीन खोदी । माल मिल गया । नन्हें-से जानवर की इस बुद्धिमानी पर सभी अवाक् रह गये ।

डेविड लौटा, तो उसे फाइले की सूझबूझ पर भारी प्रसन्नता हुई । उसने जाना कि इसमें सीखने की क्षमता है । उसे जासूसी कुत्तों के केन्द्र में भर्ती कर दिया गया । कुछ ही समय में उसने इतनी बुद्धिमता अर्जित कर ली कि उन्हीं दिनों भड़के द्वितीय महायुद्ध में उसने महत्त्वपूर्ण केन्द्रों में अतिगोपनीय पत्र मुँह में दबाकर नियत स्थान पर पहुँचाने और उनके उत्तर लेकर वापस लौटने का कार्य इतनी अच्छी तरह किया कि सेना के प्रमुख अफसर तक दंग रह गये । उसे कप्तान का पद दिया गया और आयु पूरी करके जब मरी, तो पूरे सैनिक सम्मान के साथ दफनाकर उसका स्मारक बनाया गया, जिस पर अभी भी हर वर्ष श्रद्धांजलि दी जाती है । जब पशुओं में ये विलक्षणताएँ हैं तो मनुष्यों में तो ऐसे अगणित हैं, जिनकी प्रतिभा को यदि परिष्कृत करने में सहायता मिले तो वे साधारण से कहीं ऊँचे उठकर असाधारण स्तर के बन सकते हैं ।

बुद्धिमान पशु-पक्षी भी होते हैं

सहायकों की वृद्धि सभी को अभीष्ट है । प्राणियों को प्रगति का अवसर, साथी सहायकों की संख्या बढ़ने पर ही सम्भव हो पाया है । जो झुण्ड बनाकर रहते हैं, उन्हें सुरक्षा का लाभ भी मिलता है और पारस्परिक सहकार के आधार पर मनोबल ऊँचा रहने से लेकर सुविधासम्पन्न जीवन-यापन का अपेक्षाकृत अधिक अवसर मिलता है । चींटी, दीमक, मधुमक्खी जैसे प्राणी किस प्रकार पारस्परिक सहयोग का लाभ उठाते हैं, इसे सभी जानते हैं । हिरन, सिंह, हाथी आदि का झुण्ड बनाकर रहना उनके लिए लाभदायक ही रहता है ।

मनुष्य की प्रगति में उसकी अपनों से तथा अन्यान्य प्राणियों के साथ सम्पर्क साधने और सहयोग का आदान-प्रदान की आदत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है । इसका एक प्रमाण पशुपालन के सन्दर्भ में मिली सफलता का उल्लेख किया जा सकता है । साधारणतया वन्य पशुओं के साथ मनुष्य का सीधा कोई तालमेल नहीं बैठता । मिलने पर विदकते हैं और भयाक्रान्त होकर दूर भागने की चेष्टा करते हैं । इसे व्यवहारकुशलता ही कहना चाहिए कि उनके बीच परस्पर आदान-प्रदान का क्रम चल पड़ा । कृषि के उपरान्त दूसरा सबसे बड़ा उद्योग पशुपालन ही है । सुविधा और समृद्धि बढ़ाने में पशुओं ने जो मनुष्य की सहायता की है, उसे भुलाया नहीं जा सकता । यदि यह तालमेल नहीं बैठता तो दोनों आपस में टकराते और नितान्त घाटे में रहते ।

इस दिशा में अब एक कदम और उठाने की आवश्यकता है । मात्र पशुओं की शरीर सम्पदा को ही पर्याप्त न समझा जाय वरन् उनकी बुद्धिमता को भी विकसित किया जाय और उसका लाभ उठाया जाय । शरीर कितना ही उत्तम हो, बुद्धि उससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण और बढ़-चढ़कर है । पशुओं को बुद्धिमान बनाकर सरकस वालों ने उनके द्वारा अपेक्षाकृत अधिक लाभ उठाया है । घोड़े, हाथी सिखाये-सधाये गये तो वे युद्धों से लेकर अन्यान्य कार्यों में उनसे असाधारण सहायता प्राप्त कर सकने में सफल रहे । कुत्तों ने अच्छे-खासे पुलिस मैनों से बढ़कर अपराधियों का पता लगाने और अपराधों को रोकने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है । अब आवश्यकता इस बात की है जो पशु-पक्षी मनुष्य के सम्पर्क में आ चुके हैं, जिनमें बुद्धि की मात्रा कुछ बढ़-चढ़कर है, उन्हें अधिक बुद्धिमान बनाने के लिए प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाय । जहाँ ऐसे प्रयत्न चल पड़े हैं, उन्हें प्रोत्साहन दिया जाय और मिल-जुलकर काम को आगे बढ़ाया जाय ।

इन प्रयासों के माध्यम से हम एक अन्य दूसरे दर्जे की मनुष्य जाति उत्पन्न कर सकेंगे और उनके सहयोग से उससे अधिक लाभ उठा सकेंगे, जो आज की उपेक्षित स्थिति में उठा पाते हैं । समुचित प्रशिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके आधार पर अविकसित प्राणियों को भी उनकी सामर्थ्य के अन्तर्गत आने वाले कार्यों के लिए दक्ष बनाया जा सकता है । कुत्ता एक सामान्य स्तर का पशु है । आमतौर से उससे चौकीदारी जैसा काम ही लिया जाता है, पर प्रशिक्षित करने पर उसे कितने ऐसे महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए सुयोग्य बनाया जाता है जिसके लिए उनकी बिरादरी में कोई प्रचलन या परम्परा नहीं है ।

अन्धों का मार्गदर्शन करने में अब वे असाधारण सहायता करने योग्य बनाये जाने लगे हैं । एक नियत स्थान से दूसरे स्थान तक वे अपने मालिक को नियमित रूप से पहुँचाने और वापस लाने का काम करने लगे । प्रशिक्षित कुत्ते की गरदन में रस्सी बाँध दी जाती है और वह आगे-आगे चल पड़ता है । अन्धा मालिक उस रस्सी के संकेतों पर अपने पैर बढ़ाते और मोड़ते हुए आगे बढ़ता है जहाँ कुत्ता रुके, वहाँ मालिक को रुकना पड़ता है । यह मोड़ रास्ते में आने वाले व्यवधानों के कारण आते हैं । सामने से आने वाली भीड़ या सवारी की दशा और तेजी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को देखकर वह अनुमान लगा लेता है कि सामने वाला बचेगा या नहीं । यदि लगता है कि उसके कारण अपने सफर में कोई अड़चन नहीं पड़ेगी तो ही वह यथावत् चलता है अन्यथा बाईं ओर बचने का ध्यान रखते हुए स्वयं भी मुड़ता है और मालिक को भी मोड़ता है । उसे ध्यान रहता है कि उसे अकेले ही नहीं चलना है वरन् मालिक के मार्गदर्शन का उत्तरदायित्व भी ठीक तरह निभाना है ।

उँगली या लाठी पकड़कर अन्धों को कहीं से कहीं ले जाने की पुरानी परम्परा में एक कीमती आदमी घिरता है । वह कार्य कुत्ते के सस्ते श्रम से क्यों न पूरा करा लिया जाय । यह सोचकर उस प्रयोजन के निमित्त उन्हें सिखाने, साधने के लिए कितनी ही संस्थाओं का सृजन हुआ है और उन्होंने अपना काम सफलतापूर्वक आगे बढ़ाया है । पाश्चात्य देशों में चल पड़े ऐसे प्रयासों में इंग्लैण्ड अग्रणी है । उसकी एक संस्था है 'दि गाइड डाग फार दी ब्लाइण्ड्स' । उसकी वरसेस्टर, एसेक्स, फोरफर, लीमिंग्टन, वार्गिघम आदि स्थानों में ७० शाखाएँ हैं । सरकस के लिए जानवर सधाने वालों की तरह इन संस्थानों में श्वान मनोविज्ञान के ज्ञाता काम करते हैं और भिन्न-भिन्न उपायों द्वारा अपने छात्रों का कौशल निखारते हैं । नर उद्दण्ड होते हैं और मादा स्वभावतः सहनशील । इसलिए इस प्रयोजन के लिए मादाएँ भर्ती की जाती हैं । प्रशिक्षण आरम्भ करने से पूर्व उनके प्रजनन अवयव निकाल दिये जाते हैं ताकि उस उत्तेजना के कारण अपनी ड्यूटी पूरी करने में गड़बड़ी न करें ।

शिक्षा का आरम्भ भीड़ रहित स्थानों में होता है । बाद में उन्हें भारी भीड़ के बीच गुजरने और द्रुतगामी वाहनों से बचने के लिए भी अभ्यस्त बना दिया जाता है । जिस मालिक को उसे सुपुर्द किया जाना है उसे तीन सप्ताह केन्द्र में रहकर अपने भावी मार्गदर्शक के साथ दोस्ती बढ़ानी पड़ती है । जब दोनों के बीच घनिष्टता विकसित हो जाती है, तभी कुत्ता विद्यालय छोड़कर उस नये मित्र के साथ जाने को रजामन्द होता है ।

पशु-पक्षियों में से कुछ जातियाँ ऐसी हैं, जिनमें समझदारी की मात्रा काफी है और थोड़े-से प्रयत्न से उनकी विशेषताओं का लाभ उठाया जा सकता है । इस सन्दर्भ में कबूतर मनुष्य के लिए अन्य पक्षियों की तुलना में अधिक उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं ।

मास्को के 'अनातोली शेरोव इन्स्टीट्यूट' ने ऐसे पशु-पक्षियों का विशेष परीक्षण आरम्भ किया है जिसके अनुसार यह जाना जा सकेगा कि उनकी संरचना, प्रवृत्ति एवं सूझ-बूझ को मोड़-मरोड़कर किसी मनुष्य के साथ सहयोग करने को उपयुक्त बनाया जा सके । इस परीक्षा में प्रायः आधे दर्जन पशु और सात पक्षी उत्तीर्ण हो गये हैं । फलतः उनके लिए कार्य निर्धारण और पाठ्यक्रम बनाने की तैयारी तत्परतापूर्वक हो रही है ।

जानवरों को विशिष्ट प्रयोजनों के लिए सधाने वाले रूसी प्रशिक्षक ब्लादिमिर दुरोव ने अपने सधाये पशु-पक्षियों के विवरण प्रकाशित किये हैं । उसमें उसने जानवरों की अतीन्द्रिय क्षमता को अपनी संकल्प शक्ति से प्रभावित करने और तदनुसार विलक्षण काम कराने का सफलता का उल्लेख किया है । सामान्यतया जानवरों को लालच या प्रताड़ना के माध्यम से उनकी आदत से भिन्न प्रकार की बातें सिखाई जाती हैं । जब तब प्यार प्रदर्शन का भी प्रयोग होता है किन्तु दुरोव ने इससे भिन्न मार्ग चुना । जिन्हें सम्वेदनशील पाया, उन जानवरों को अति निकट बुलाकर बहुत देर तक प्यार भरी नजर उनकी आँखों में डालने का अभ्यास किया । पाया कि इस प्रयोग में वे सम्मोहित एवं समर्पित जैसी मनःस्थिति में जा पहुँचते हैं । उसी समय दुरोव ने छोटे-छोटे निर्देश दिये और उन्हें पालने का आग्रह किया । आश्चर्य यह कि वे इसी मानसिक संकेत के आधार पर वैसा करने लगे जैसा कि उन्हें बिना कुछ कहे या सिखाये-चाहा गया था । इस प्रयोग में उसकी एक कुतिया बहुत सफल रही । वह मूक सन्देश द्वारा बताई गई पुस्तक को दूर रखे पुस्तकों के ढेर में से ढूँढ़कर ले आती थी । पुस्तक का नाम तो वह नहीं पढ़ सकती थी पर रंग और डिजायन का नक्शा मस्तिष्क में उतार दिये जाने पर वह दिये गये निर्देश को ठीक प्रकार पालन करके दिखा देती थी । इसी प्रकार यह शिक्षक अतीन्द्रिय क्षमता का प्रयोग करके अदृश्य संकेतों के आधार पर अन्य पशु-पक्षियों से भी आश्चर्यजनक कार्य करा लेता था ।

रूस के समीपवर्ती समुद्र क्षेत्रों में पाई जाने वाली डोलफिन मछली प्रकृतितः ऐसी है जिसे मनुष्यों के साथ दोस्ती करना बहुत सुहाता है । उसे थोड़ी भी ट्रेनिंग देकर पालतू बनाया जा सकता है । वह हाथ से दिये हुए बिस्कुट पाने के लिए बार-बार लपककर आती है और तब तक देने वाले के इर्द-गिर्द फिरती रहती है जब तक कि वह निराश नहीं हो जाती या किसी दूसरे द्वारा बुला नहीं ली जाती । पालतू कुत्ते या बिल्ली की तरह वह नाम लेने पर पानी से निकलकर ऊपर आ जाती है और अपनी उपस्थिति का परिचय देती है । थोड़े दिन की शिक्षा पाकर वह हल्के-फुल्के आदमियों तथा बच्चों को अपनी पीठ पर बिठाकर पूरे तालाब का इस सधे हुए ढंग से चक्कर लगाती है जिससे सवार को गिरने का खतरा न उठाना पड़े । वह कुछ शब्दों का अर्थ भी समझ लेती है और इशारों के आधार पर अपनी गतिविधियों में हेर-फेर करती है ।

इंग्लैण्ड के प्लीमथ अस्पताल में मनुष्य धावकों के स्थान पर कबूतर कर्मचारी भर्ती और प्रशिक्षित किये गये हैं । इस अस्पताल की रक्त परीक्षण प्रयोगशाला कई मील दूर है । वहाँ तक पहुँचने और रिपोर्ट लाने में काफी समय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगता है तथा खर्च पड़ता था । अब वह कार्य प्रशिक्षित कबूतर करने लगे हैं । उन्हें अस्पताल से सीधे प्रयोगशाला तक उड़ने की शिक्षा दी गई है । पैर में जाँच के रक्त की छोटी थैली बाँध देने पर वे सीधे प्रयोगशाला पहुँचते हैं । डाक्टर उस थैली की जाँचपड़ताल करके रिपार्ट टेलीफोन से अस्पताल कार्यालय को बता देते हैं । इस योजना से समय तथा पैसे की बहुत बचत होने लगी है ।

जासूसों के कामों में उनका बहुत उपयोग है । छोटे कैमरे और टैप रिकार्डर उन्हीं के जैसे रंग के बनाकर इस प्रकार बाँध दिये जाते हैं कि किसी को उनके साथ इन उपकरणों के होने का सन्देह तक न हो । शत्रु क्षेत्रों में जाकर आवश्यक जानकारियाँ संग्रह करके लाने में उनके द्वारा अच्छी भूमिका निभाये जाने की आशा की जा रही है । उसके लिए आवश्यक उपकरण बनाये जा रहे हैं ।

मास्को का समाचार है कि सीसिया क्षेत्र के एक गड़रिये का पालतू सारस उसके भेड़ बाड़े की पूरी तरह चौकीदारी, रखवाली करता है । जब भेड़ें बाड़े में होती हैं तो वह दरवाजे पर पहरा लगाता है । कोई भेड़ बाहर जाना चाहती है तो उसे पंख पसार के रोकता है और चोंच से धकेलकर भीतर खदेड़ता है । दिन भर वहीं रहता है जहाँ भेड़ें चरती हैं । कोई खतरा देखता है तो चिल्लाकर सावधान करता है । जब उसे सोना होता है तब भेड़ों के साथ ही सोता है । इस सारस को गड़रिये ने घायल अवस्था में एक पहाड़ी पर पड़ा पाया था और उसे घर लाकर पाल लिया था ।

मलेशिया में बन्दरों द्वारा ऊँचे पेड़ों पर चढ़कर नारियल, सुपाड़ी, खजूर आदि तोड़ने का प्रशिक्षण बहुत सफल हुआ है । मनुष्य की तुलना में उनका कार्य जल्दी भी होता है और सही भी । साथ ही उनके श्रम का मूल्य मात्र मनपसन्द आहार देने से ही काम चल जाता है जबकि उन कामों के करने वाले मनुष्य का वेतन कई गुना अधिक होता है ।

वानर जाति के कई वर्ग ऐसे हैं जिनमें सूझ-बूझ और अनुशासन का अभ्यास करना सरल है । इनमें से चिंपाजी वनमानुष और बस्तियों में पले बन्दर अधिक उपयोगी पाये गये हैं । डा. मार्केल आन्द्रे चिंपाजियों को इस योग्य बनाने में लगे हुए हैं कि वे होटलों में सेवा कर्मचारियों का काम कर सकें और आगन्तुकों के लिए कौतूहल मनोरंजन का माध्यम बन सकें । सामान्य दफ्तरों और कारखानों में भी हलके-फुलके काम कर सकते हैं और श्रमिकों जैसी ड्यूटी देते रह सकते हैं । चौकीदारी के लिए भी उन्हें प्रयुक्त किया जा सकता है ।

झज्जर (जिला रोहतक) में एक साँड़ और बन्दर की घनिष्ट दोस्ती देखी गई । दोनों साथ-साथ विचरण करते हैं । साँड़ बन्दर को अपनी पीठ पर बिठाये-बिठाये फिरता है और बन्दर जो कुछ यहाँ-वहाँ से छीन-झपटकर लाता है उसका एक हिस्सा बैल को खिलाता है । बैल को छेड़ने पर बन्दर और बन्दर को छेड़ने पर बैल हिमायत लेता है और उसे दूर तक खदेड़ने में दोनों साथ-साथ चलते हैं । इस दोस्ती का दृश्य देखने के लिए स्थानीय तथा बाहर के लोगों की भीड़ उनके पीछे-पीछे लगी रहती है ।

मेरठ में एक बन्दर को शराब का ऐसा चस्का लगा है कि वह निरन्तर ऐसा अवसर ढूँढ़ने के लिए फिरता रहता है जिसमें उसके हाथ यह पेय लगे । होटलों, शराबखानों के इर्द-गिर्द वह घात लगाये छिपा बैठा रहता है और जब भी अवसर पाता है, बोतल छीनकर पेड़ पर जा चढ़ता है और देखते-देखते गटक जाता है । नशे में उन्मत्त होकर अभी किसी पर हमला तो नहीं किया पर उसकी उछल-कूद और मुखाकृति देखते ही बनती है । यह चस्का उसे एक बार कहीं से खुली शराब प्राप्त कर लेने और उसका स्वाद चख लेने तथा मस्ती का मजा लूट लेने के बाद लग गया मालूम होता है ।

मोदी नगर (मेरठ) से ११ किलोमीटर दूर मुरादपुर पुर्सी गाँव में प्रायः आधा दर्जन डकैतों ने मूलचन्द्र वैश्य के घर पर हमला किया । गृह स्वामी के पुत्र को डकैत पिस्तौल से मारने की धमकी दे रहे थे और धन पूछ रहे थे । उतने में पालतू गाय ने रस्सा तुड़ाकर डकैतों पर हमला बोल दिया । एक को सींगों से वहीं मार दिया और अन्यों ने भागकर अपनी जान बचाई । गाय की यह बहादुरी चर्चा का विषय बनी रही ।

बुद्धिमानी केवल मनुष्य के ही हिस्से में नहीं आई । पशु-पक्षियों में भी वह क्षमता मौलिक रूप से विद्यमान है । बड़े भाई के नाते मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह अपने छोटे भाइयों की बुद्धिमत्ता विकसित करने का कर्त्तव्य निभायें । इससे अनेकों प्राणियों की उपयोगिता बढ़ेगी तथा मनुष्य भी अपने प्रयत्न का समुचित प्रतिफल उनकी विशेष सहायता के रूप में प्राप्त कर सकेगा ।

प्रशिक्षण और मार्गदर्शन की स्वयंभू शक्ति

सृष्टि के लाखों जीव-जन्तुओं में मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है जिसे बहुत लम्बे समय तक पराश्रित रहना पड़ता है । अनुभव और निष्कर्षों की दृष्टि से तो वह आजीवन परावलम्बी ही रहता है, पर खान-पान जैसे सामान्य जीवन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यवहार के लिए भी उसे बहुत दिनों तक माता-पिता की सेवाओं की आवश्यकता रहती है । कुत्तों और बिल्लियों के बच्चे जन्म लेते ही माँ का दूध आप ढूँढ़ लेते हैं, मनुष्य के बच्चे की माँ स्वयं बच्चे के मुँह में स्तन न डाले तो बेचारा भूखों मर जाये । चलना-फिरना, टट्टी, पेशाब और भोजन की अपनी सुविधाएँ अन्य जीव जल्दी ही विकसित कर लेते हैं, पर मनुष्य के बच्चे को लम्बी अवधि तक इनके लिए भी पराश्रित रहना पड़ता है । मनुष्य इस तरह एक प्रशिक्षणशील प्राणी-ढाला जाने वाला प्राणी है । अभिभावक अपने इस दायित्व को भली प्रकार समझकर ही अच्छी तरह निभा सकते हैं ।

यदि आने वाली पीढ़ी को पैदा करने का ध्यान रहे, उसे नियम, व्यवस्था, अनुशासन, रीति-नीति और सामाजिक मर्यादाओं का प्रशिक्षण न मिले तो उसकी रचनात्मक प्रवृत्तियों का बहक जाना नितान्त स्वाभाविक है । मनुष्य जिस मिट्टी का बना है, उसमें स्वभावतः अधोमुखी प्रवृत्ति, अधिक ऊर्ध्वगामी चिन्तन और कर्तृत्व कम ही है । खुला छोड़ने का ही परिणाम है कि वर्तमान पीढ़ी असभ्य, उद्दण्ड और उच्छृंखल होती चली जा रही है । अनेक ऐसे उदाहरण हैं जब हम जंगली जानवरों को यहाँ तक कि खूँखार जन्तुओं को भी प्रशिक्षित कर उन्हें मनोरंजक, सहिष्णु और उपयोगी बना लेते हैं तो मनुष्य तो गीली मिट्टी का बना है उसे तो किसी भी इच्छित दिशा में मोड़ा, सजाया-सँवारा जा सकता है ।

पश्चिमी आस्ट्रेलिया में विल्मा नाम की एक महिला ने पशु उद्यान बनाया है, इसमें ६ कंगारू भी हैं, इन्हें जिस क्रम से भोजन पाने की व्यवस्था कर दी गई है ये उसी क्रम में गृहस्वामिनी का दरवाजा खटखटाते हैं और अपनी बारी का भोजन पाकर प्रसन्न हो जाते हैं ।

जंगली बतख अपने मालिक से इतना प्यार करने लगती हैं कि उन्हें कोई और पुकारता रहे तो वह उधर कान भी न करेंगी, किन्तु यदि उनका मालिक पुकारे तो वह दौड़कर वहाँ पहुँच जाती हैं । इसी तरह घर के बच्चों में भी समय पर न केवल भोजन अपितु प्रत्येक काम समय पर डालने की प्रवृत्ति डाली जा सकती है । हमें शिकायत रहती है कि बच्चे माँ-बाप का कहना नहीं मानते, पड़ोसियों के बहकावे में आ जाते हैं, यदि उन पर अपना प्यार भरपूर रहे, उनका कल्याण सच्चे मन से चाहें तो बच्चे आजीवन माता-पिता के होकर रह सकते हैं ।

वैज्ञानिक डॉ० कैलाग, डॉ०. हेगे, डॉ०. निवाड़ा विश्वविद्यालय अमेरिका के गार्डनर दम्पत्ति ने चिम्पाजिओं को मानवीय प्रकृति में ढालने के लम्बे अर्से तक प्रयोग किये । इस प्रशिक्षण से उनमें मनुष्यों की तरह रहने, खाने, कपड़े पहनने की आश्चर्यजनक प्रवृत्ति का विकास हुआ । बोलने में पूरी सफलता तो शायद इसलिए न मिल पाई कि उनकी शारीरिक संरचना मनुष्य से भिन्न कोटि की होती है, पर सतत् अभ्यास से यह चिम्पाजी मामा, पापा, अप, कम, गिव मी ड्रिंक प्लीज, खोलो (ओपेन) फूड (खाना), वाटर (पानी) आदि ३० शब्द तक यह थोड़े ही प्रयास से सीख गये ।

१९१३ में मास्को (रूस) की श्रीमती कोट्ज, १९६८ में अमेरिका के क्लार्क नामक एक व्यक्ति ने ओरेंग जाति के बन्दरों और चिम्पाजिओं को पेन्टिंग सिखाई । कुछ ही समय के प्रशिक्षण से वह कुर्सी में बैठकर विधिवत् पेन्टिंग का अभ्यास करने लगे । क्लार्क ने सन् १९७१ में ओक्लहोम की पेन्टिंग प्रतियोगिता में तो अपने बन्दर जिम को विधिवत् भाग दिलाया, जिसमें अच्छी पेन्टिंग के लिए ५ हजार डालर का पुरस्कार भी मिला ।

वाणीविहीन, साधनविहीन जीव-जन्तुओं में भी जब सूक्ष्म ग्रहणशीलता का अभाव नहीं तो मनुष्य के बच्चों में प्रतिभा की कमी की कल्पना करना न्यायोचित नहीं । यदि अपने दायित्वों का निर्वाह माता-पिता, परिवार वाले पूरी निष्ठा व पूरे मन से करें तो हर घर में इन्जीनियर, वैज्ञानिक, कलाकार, साहित्यकार जो भी कुछ हम चाहते हैं वह सब हो सकते हैं । खुला छोड़ देने से तो बालू क्या सीमेण्ट की दीवारें भी ढह जाती हैं, पर यदि प्रयत्नपूर्वक उठाया जाये तो मिट्टी से भी मजबूत दीवार खड़ी की जा सकती है ।

प्रशिक्षण मिलने पर कुत्ते मनुष्य की अनेक प्रकार की सेवाएँ करते हैं । बाणभट्ट ने लिखा है कि तत्कालीन भारतीय शासक युद्धों में कुत्तों का प्रयोग करते थे । ईसा से पूर्व १०१ सन् में ट्यूटन्स ने कुत्तों की सहायता से ही रोमन सेना पर आक्रमण किया और विजय पाई । द्वितीय महायुद्ध में जर्मनी ने इस कार्य के लिए २ लाख कुत्ते प्रशिक्षित किये । नैपोलियन की अपनी विजय में कुत्तों का बड़ा योगदान रहा है । १९०४ में रूस-जापान के युद्ध में भी कुत्तों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी । मलय देश के शासकों ने पिछले दिनों अफ्रीका के माऊ-माऊ के विरुद्ध तथा भारत-पाक युद्ध के समय भारतीय सेना के कुत्तों ने भारी योगदान दिया । यह कुत्ते जासूसी के लिए अत्यन्त निष्णात् पाये गये । अपनी गन्ध से अपराधी तथा दुश्मन का पता लगा लेना इनके लिए बहुत सरल होता है ।

कुत्तों की तरह घोड़े व खच्चर भी सेना के बहुत महत्त्वपूर्ण अंग हैं । प्रशिक्षित घोड़ों तथा खच्चरों के कारनामे बड़े आश्चर्यजनक होते हैं । अपने स्वामी को सकुशल बचा ले जाने दुश्मन पर प्रहार तथा छिपकर घात लगाने में वे अत्यन्त कुशल होते हैं । पहाड़ी युद्ध तो लड़ा ही खच्चरों के बल पर जाता है । हवाई आक्रमण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के समय खच्चर मोर्टार तोपों सहित इस तरह दुबककर छिप जाते हैं कि दुरबीन लगे जहाज भी इन्हें पहचान नहीं पाते । मनुष्य का कौशल और उसकी दक्षता तो बहुत ही उच्च श्रेणी की हो सकती है यहाँ कार्तिकेय जैसे सेनापति, नागार्जुन जैसे रसायनज्ञ, आर्यभट्ट जैसे गणितज्ञ और वाराहमिहिर जैसे ज्योतिषाचार्य घर-घर पैदा हो सकते हैं, पर यह सब तभी है जब प्रशिक्षण पूर्ण मनोयोग, भावना, तत्परता और कोई लक्ष्य बनाकर दिया जाए ।

हैम्बर्ग चिड़ियाघर के एक चिम्पाजी में ऐसी आकांक्षाएँ पायी गईं कि उसमें मनुष्य की सी जिज्ञासाएँ हैं । वह मनुष्यों के क्रिया-कलाप विशेषकर साइकिल चलाने की क्रिया को बड़ी तन्मयता से देखता । चिड़ियाघर के अधिकारियों ने उसके लिए उसे छोटे पहियों वाली एक साइकिल मँगा दी । उसे बैठाना और पाइडिल मारना सिखाया गया । थोड़ी देर के अभ्यास से चिम्पाजी पाइडिल मारने लगा और अब अपनी गैलरी में बखूबी साइकिल चलाकर दर्शकों का मनोरञ्जन करता है । उसके बुद्धि कौशल का इससे भी उन्नत उदाहरण तब देखने में आया जब उसकी गैलरी में केलों का एक गुच्छा लटका दिया गया । चिम्पाजी कुछ देर तक उछल-उछलकर उसे पकड़ने का प्रयत्न करता रहा, पर जब गुच्छा हाथ न लगा तो कोठरी में पड़े एक लकड़ी के बक्से को उठाकर गुच्छे के नीचे रखा और उसके ऊपर खड़ा होकर गुच्छे को पकड़ने का प्रयास किया । इस पर भी गुच्छे तक हाथ नहीं पहुँचा, कुछ देर सोचने के बाद उसने क्रमशः दूसरा और तीसरा बक्सा रखा और अन्ततः गुच्छा पाने में सफलता प्राप्त कर ली ।

मनुष्यों के सामने कई ऐसे लक्ष्य हैं जिन्हें समझने में ही असामान्य सूक्ष्म बुद्धि चाहिए । बुद्धि ही नहीं प्रौढ़ और परिपक्व चिन्तन चाहिए । वह हिम्मत और मनोबल भी चाहिए जो उसे इस कठिन साधना से विचलित होने और आकर्षणों से बचाने में सहायक हो, मनुष्य जीवन के रहस्यों, आत्मा पर पड़े, सृष्टि रचना का आधार और उसकी नियम व्यवस्था जानना सभी कुछ सम्भव है, पर इस दिशा में मिलने वाला संरक्षण और मार्गदर्शन उतना ही प्रौढ़, सूक्ष्म, सम्वेदनशील और कल्याण की भावना से ओत-प्रोत होना चाहिए । इन जीवों में ऐसी अकल्पित क्षमताएँ हो सकती हैं तो मनुष्य की विवेचन शक्ति का तो कहना ही क्या ? पर उसका विकास स्वतः कभी-कभी ही हो सकता है ? अधिकांश में प्रशिक्षण आवश्यक होता है । वातावरण आवश्यक होता है, जिसकी व्यवस्था बड़ों को ही करनी पड़ती है ।

मनुष्य जीवन भी एक प्रवास

सृष्टि में विद्यमान जीवन व्यवस्था को जन्म-मरण के चक्र को शास्त्रीय भाषा में आवागमन का चक्र कहा जाता है । आवागमन अर्थात् आना और जाना, अर्थात् किसी स्थान पर पहुँचना और कुछ समय रहकर, अभीष्ट कार्य पूरे करने के बाद वापस लौट जाना । भारतीय मनीषियों की मान्यता है कि परमात्मा प्रत्येक जीव को किसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए निश्चित अवधि का समय देकर इस संसार में भेजता है और फिर वापस बुला लेता है ।

मनुष्येतर जीव-जन्तुओं को तो भोग-योनि कहा गया है और मनुष्य को कर्म-योनि का प्राणी माना गया है । भोग-योनि के सम्बन्ध में बताया गया है कि जीव इस प्रकार अपने पूर्वकृत कर्मों का ही परिणाम या दण्ड भोगता है, लेकिन मनुष्य को अपने जीवन में कर्मों की स्वतंत्रता भी प्रदान की है और उस स्वतंत्रता के साथ अन्य कई विशेषतायें देकर मनुष्य को इस लोक में भेजा गया है । इस स्वतंत्रता और विशिष्टताओं के साथ उसे कुछ विशिष्ट दायित्व भी सौंपे गये हैं और उन दायित्वों को पूरा करने के लिए संसार में भेजा जाता है । अफसर जिस प्रकार किसी दौरे पर जाते हैं और अपने अधिकारों का उपयोग कर सुपुर्द कामों को निपटाकर आते हैं, व्यापारी जिस प्रकार अपने व्यापार-व्यवसाय के उद्देश्य से कहीं जाते हैं और उन कामों को पूरा करने के बाद लौट आते हैं, मनुष्य को भी उसी प्रकार कुछ विशिष्ट दायित्वों को पूरा करने के लिए जीवन-यात्रा पर भेजा जाता है । भारतीय दर्शन की यह मान्यता स्पष्ट है और इसी कारण जीवन को आवागमन के चक्र के रूप में व्याख्यायित किया गया है ।

यात्राएँ मानव स्वभाव का अंग

सामान्य जीवन-चक्र में भी यात्राएँ मानव स्वभाव का एक अंग ही बनी हुई हैं । जीवन में यात्राओं का यह स्थान उस समय भी था जब पृथ्वी पर यातायात् के साधनों का उतना विकास नहीं हुआ था । तब न केवल आजीविका, रोजगार, अध्ययन के लिए अपितु प्राकृतिक सुषमा के दर्शन, जीवन-चक्र में आयी एकरसता को तोड़ने के लिए देशाटन से लेकर योग्यता बढ़ाने, सत्संग करने और ज्ञान प्राप्ति के लिए भी एकाकी तथा सामूहिक यात्राएँ आयोजित हुआ करती थीं । संसाधनों के विकास के साथ-साथ इस प्रवृत्ति का भी विकास हुआ है । यात्राओं की सफलता के लिए प्रचुर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भौगोलिक ज्ञान, स्थान विशेष के रीत-रिवाज, रहन-सहन योग्य विश्राम स्थलों की जानकारियाँ पूर्व में ही उपलब्ध हो जाने के कारण यह यात्राएँ अब सब तरह से आरामदेह हो गयी हैं ।

दूसरी और पशु-पक्षी हैं उनमें भी प्रवास का नैसर्गिक गुण आदिकाल से चला आया है । उनकी यात्राएँ पहले की अपेक्षा अब अधिक संकटपूर्ण हो गयी हैं । उन्हें कोई भौगोलिक ज्ञान भी नहीं मिला होता है, किन्तु यह प्रकृति का एक चमत्कार ही है कि प्रतिवर्ष हजारों पक्षी, जंगली जीव न केवल पड़ोसी राज्यों की अपितु सुदूर देशों की भी यात्राएँ करते हैं । मनुष्यों में भाषावाद, जातिवाद, रहन-सहन की भिन्नता के कारण उनके हृदय परस्पर मिल नहीं पाते, पर इन जीवों में ऐसा कोई अन्तर्द्वन्द्व नहीं । विशेष स्थानों में अनेक देशों से आये भिन्न जाति के पक्षी और जीव-जन्तु परस्पर सहिष्णुता, आदर भावना और भाई-चारे की स्वस्थ परम्परा से जीवन निर्वाह कर नियत समय पर अपनी मातृभूमि को लौट जाते हैं । मनुष्य जीवन भी एक सुनिश्चित और विराट प्रवास का लघु-संस्करण है । जीव-जन्तुओं के माध्यम से हम पता लगा सकें कि इस नैसर्गिक क्षमता का कारण क्या है तो एक अनोखी जीवन दृष्टि का विकास नितान्त सम्भव है ।

प्रवासी पक्षियों में व्हाइट स्टार्क, गोल्डन प्लावर, आर्कटिन टर्न, सेल्ड पाइपर, सारस और वोवालिक मुख्य हैं । यह अधिकांश समुद्र के ऊपर उड़ान भरते हैं । इस कारण उन्हें उबाऊ दूरी लगातार उड़कर पार करनी पड़ती है । गोल्डन प्लावर टुंड्रा से पम्पास तक की १२००० किलोमीटर, श्वेत स्टार्क को समूचा स्टार्क जिब्राल्टर जल डमरू, आर्कटिकटर्न को तो सम्पूर्ण धरती की परिक्रमा करनी पड़ जाती है । जब ये उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव की लगभग २५ हजार किलोमीटर दूरी तय कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते है, जहाजों की तरह यह भी नियमित रूप से समुद्रों में पाये जाने वाले टापुओं में कुछ समय विश्राम कर अपनी आगे की यात्रा की तैयारी करते हैं ।

योरोपीय देशों के सारस शरद ऋतु में अफ्रीका आ जाते हैं और वसन्तु ऋतु में पुनः लौट जाते हैं । एक बार पूर्व प्रशा (जर्मनी) से अनभिज्ञ सारसों के कुछ बच्चे ऐसेन नामक स्थान पर ले जाकर छोड़ दिये गये । उस समय तक वहाँ के अन्य प्रवासी सारस जा चुके थे । अत्यधिक चक्करदार रास्ता होने पर भी वे किसी अन्तःप्रेरणा से एक निश्चित दिशा से प्रशा जा पहुँचे । इसी तरह कुछ कौवों को उत्तरी जर्मनी और वाल्टिक के पार उत्तर-पूर्व की दिशा से ले जाकर छोड़ा गया, पर वे ५०० मील की वापसी यात्रा समानान्तर मार्ग से सम्पन्न कर यथापूर्व स्थान पर लौट आये । आश्चर्य तो तब होता है, जब इनके अण्डे भी यदि एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचा दिये जायें तो उनसे निकलने वाले बच्चे भी अपने जन्म स्थान पर लौट आये । ऐसा पैत्रिक गुणसूत्रों की प्रेरणा से होता है । इससे संस्कारों की महत्ता प्रतिपादित होती है ।

इंग्लैण्ड से अफ्रीका की दूरी ६००० मील है, पर वहाँ की अबाबीलें कष्ट उठाकर भी यह देशाटन करती हैं । अमेरिका में दक्षिणी अमेरिका जाने वाली स्वर्ण टिटहरी को २००० मील यात्रा करनी पड़ती है । पेन्गुइन उड़ नहीं सकते पर वे समुद्र में तैरकर ही आटार्कटिक से दक्षिणी अमेरिका की यात्रा करती हैं । वे जिस रास्ते जाती है उसी से लौट आती हैं । विशेष ध्वनि से गाते हुए चलने वाली इनकी टोलियाँ दर्शकों का मन उसी तरह मोहती हैं, जैसे मेले-ठेले जाने वाली स्त्रियों की गीत गाती टोलियाँ ।

अपने जन्म स्थान की कुत्तों को भी विलक्षण पहचान होती है । वे गन्ध के सहारे सैकड़ों मील दूर से अपने घर लौट आते हैं । न्यूयार्क (अमेरिका) का कुत्ता एल्वनी विश्व भ्रमण की ख्याति प्राप्त कर चुका है, इसने अकेले रेल और समुद्री जहाजों से जापान, चीन, योरोप देशों की यात्रा की और अन्ततः सकुशल न्यूयार्क वापस लौट आया ।

मनुष्य कहाँ से आया, उसका यथार्थ क्या है, यह न तो समझने का प्रयास करता है, न लक्ष्य प्राप्ति के प्रयत्न । पर यह पक्षी हैं जो दूर-दूर तक जाकर भी समय पर प्रयत्नपूर्वक खुशी-खुशी लौट आते हैं । शरद ऋतु में उत्तरी-पश्चिमी ध्रुव प्रदेशों के पक्षी भारत, दक्षिणी अफ्रीका, श्रीलंका तक फैल जाते हैं, पर ग्रीष्म ऋतु आते ही अपनी जन्म-भूमि को लौट जाते हैं । द्वितीय विश्वयुद्ध के समय जीववैज्ञानिकों ने जर्मनी के ब्रिमेन नगर में एक प्रयोग किया उन्होंने सात अवाबीलें पकड़ीं और उन्हें लाल रँग से रंग दिया । फिर उन्हें विमान में बैठाकर लन्दन लाकर हवाई अड्डे के पास छोड़ दिया गया । पीछे पाया गया कि उनमें से पाँच अवावीलें सुरक्षित अपने पूर्ववर्ती घोंसलों में पहुँच गईं ।

हममें से अनेकों मनुष्यों की परमात्मा कुछ विशेष बौद्धिक और आत्मिक गुणों से सम्पन्न कर पृथ्वी पर भेजता है और यह आशा करता है कि वे सृष्टि को सुन्दर बनाने की उसकी कल्पना को साकार बनायेंगे, पर वह ऐसा करना तो दूर अपने बुद्धि कौशल को अपने ही स्वार्थ साधनों में उलझाकर यह कामना करता रहता है कि उसे संसार से जाना नहीं पड़े । अपनी हठबुद्धि के कारण वह न केवल संसार को कुरूप बनाता है अपितु पश्चात्ताप भरी जिन्दगी लेकर लौटने को विवश होता है ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

६.२१ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

नवीनता के प्रति आकर्षण जीवन का नैसर्गिक गुण है । यह गुण भी जीवन की पृथक्-पृथक् इकाइयों में सामंजस्य प्रस्तुत करता है और मनुष्य को उसके चिन्तन के लिए भावभरी विराट सामग्री प्रदान करता है । जीवों की भाँति मनुष्यों में भी यह गुण पाया जाता है किन्तु सांसारिकता के भार इस तरह के आह्लाद प्रदान करने वाले गुणों को भी नष्ट कर देते हैं । तब उनकी पाशविकता उभरकर सामने आ जाती है । अच्छे और नये के स्वागत की दृष्टि ने ही भारतीय मनीषी को अचानक कर्मयोग का दर्शन दिया है । इस परम्परा को बनाये रखने में न केवल प्रसन्नता अपितु पवित्रता भी निहित है । अमेरिका के आरेगन राज्य में सिलबर्टन नाम के एक कस्बे के निवासी फ्रेंक बेजियर ने कोली जाति का एक कुत्ता पाला नाम रखा गया 'बाबी' । बाबी बड़ा ही स्वामिभक्त कुत्ता था । वह न केवल तरह-तरह के करतबों से घर वालों का मनोरंजन करता अपितु वह एक स्वामिभक्त सेवक के सभी कर्तव्य निवाहता, घर की रखवाली के अतिरिक्त बच्चों को स्कूल पहुँचाना, जंगली जानवरों से खेतों की रक्षा करना उसकी दिनचर्या में सम्मिलित कार्य थे । एक बार बेजियर को इडियाना जाना पड़ा साथ में बाबी भी था । दुर्भाग्य से कुत्ता वहाँ खो गया । बहुत खोजने पर भी बाबी न मिला तो निराश बेजियर वापस सिलबर्टन लौट आये । किन्तु बाबी निराश नहीं हुआ । नितान्त अपरिचित ३००० मील का कष्ट भरा मार्ग उसने अगणित बाधाओं के बावजूद पार कर ही लिया और अन्ततः एक दिन अपने मालिक तक पहुँचने में सफलता प्राप्त कर ली । इसे कुत्तों की यात्रा का सबसे बड़ा रिकार्ड माना गया है । साथ ही उसकी स्वामिभक्ति का अद्भुत उदाहरण भी ।

इसी तरह भावनाओं के अलौकिक जगत के सत्य से हमें भी इन्कार नहीं करना चाहिए । यह सत्य दृष्टि में निरन्तर बना रहे तो अनायास ही दुष्कर्मों और खोटे कृत्यों से छुटकारा मिल जाता है, पर उसी के साथ ही व्यावहारिकता का आचार भी नष्ट न हो तो ही संतुलन बना रह सकता है । नवीन के प्रति अनन्य जिज्ञासा का अर्थ पलायनवाद नहीं होना चाहिए । अपनी इसी त्रुटि के कारण भारतीय जीवन ने धक्का खाया और शिरोमणि तत्वदर्शन को धरती की धूल चाटनी पड़ी । आकाश की कल्पनां करते समय धरती के यथार्थ से मुँह न मोड़ें, जन्म स्थान बार-बार लौटने में जीवों की प्रकृति का यही संदेश संकेत हो सकता है ।

प्रकाश की खोज

प्रकाश चिरकाल से ही मानवीय प्रेरणा का स्रोत रहा है । प्रकाश जितना दिव्य और स्निग्ध होता है उतना ही मोहक लगता है । चैत्र की नवरात्रियों के समय आकाश से आने वाले प्रकाश में कुछ ऐसी दिव्यता होती है कि उसका अनुभव कर आँखें चमकने लगती हैं । ब्याह-शादियों के समय छूटने वाली फुलझड़ियाँ देखकर न केवल बच्चे अपितु बड़े भी प्रसन्न होते हैं । प्रकाश का मानवीय चेतना से कोई सीधा सम्बन्ध है, तभी हम अन्धकार बर्दाश्त नहीं कर पाते । परमात्मा से "अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलने" की प्रार्थना करते हैं । प्रकाश ही जीवन और अन्धकार अविद्या है । यह बात प्राण चेतना पर समान रूप से लागू होती है, चाहे वह मनुष्य हो या मनुष्येतर जीव ।

पक्षियों के प्रवास सम्बन्धी वैज्ञानिक अनुसंधानों ने यह सिद्ध कर दिया है कि पक्षियों का प्रवास जिन कारणों से प्रेरित होता है उनमें ऋतु परिवर्तन को अनुकूल बनाये रखना, भोजन प्राप्त करना गौण है । अधिक समय तक प्रकाश की उपलब्धि ही प्रमुख है । जिन प्रदेशों में चौबीसों घण्टे या अधिक से अधिक समय सूर्य का प्रकाश रहता है, वहाँ पक्षी अधिक रहना पसन्द करते हैं । ध्रुवों के समीपवर्ती प्रदेश इसी कोटि के हैं । आर्कटिक टर्न तथा गोल्डेन प्लोवर ऐसे ही पक्षी हैं जो ध्रुवों की यात्रा गर्मियों में ही करते हैं क्योंकि उन दिनों वहाँ से सूर्य चौबीसों घण्टे दिखाई देता है । केवल मौसम की ही बात होती तो उसमें आये दिन उतार-चढ़ाव आते रहते हैं, किन्तु वे ऐसा नहीं करते । अमेरिका के एक सर्वेक्षण में यह पाया गया है कि वहाँ सैन जुआन कैपिस्ट्रान स्थान में आने वाले स्वालो पक्षी प्रतिवर्ष एक ही निर्धारित तिथि को पहुँचते हैं ।

न्यूयार्क में एक पक्षी पाया जाता है बाँजकक्कू इनके बच्चे पैदा होते ही आत्मनिर्भर जीवन बिताते हैं । माता-पिता इन्हें अपने साथ यात्राओं में भी नहीं ले जाते जबकि वे प्रतिवर्ष सोलोनद्वीप समूह की यात्राएँ करते हैं । न जाने कौन-सी सूक्ष्म अन्तःप्रेरणा है कि बच्चे अपने आप ही अपने पूर्वजों की तरह यात्राएँ करने और उन स्थानों में स्वतः पहुँच जाते हैं, जहाँ उनके पितामह आते जाते रहते हैं । वैज्ञानिकों का अनुमान है कि प्रकाश किरणों की दिशा, विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र तथा पृथ्वी के घूमने की स्थिति को पक्षी भली प्रकार अनुभव करते हैं । इसी कारण वे इतनी लम्बी यात्राएँ बिना किसी जान-पहचान और यन्त्र के सम्पन्न करते हैं, नक्षत्रों की स्थिति सूर्य के परिभ्रमण के आधार पर भी वे अपनी यात्राएँ सम्पन्न करते हैं, किन्तु जितना ही उनका यह सूक्ष्मबोध आश्चर्यजनक है, उसी तरह यह तथ्य भी है कि वे रात में बिना पूर्वज्ञान और मार्गदर्शन से उन्हें इन सभी परिस्थितियों की जानकारी किस स्रोत से उपलब्ध होती है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीव-जन्तुओं की संस्कृति

मैरीटेरियन सागर में गर्मी के प्रारम्भिक दिनों में मछलियों की बहुतायत देखने को मिलती है । मैकरल, पिलचर्ड और हैरिंग नाम की रंग-बिरंगी मछलियाँ इधर से उधर खेलती, कूदती, उछलती, फुदकती हुई बहुत अच्छी लगती हैं । इन्हें देखकर ऐसा लगता है क्रीड़ा और मनोरंजनपूर्ण जीवन ही यथार्थ है । पैसा और प्रजजन की चिन्ता में पड़े घिसी-पिटी जिन्दगी जीना कोई बुद्धिमत्ता नहीं ।

कुछ ही सप्ताह बाद वहाँ जायें तो फिर एक भी मछली दिखाई न देगी । चहल-पहल वाला वह क्षेत्र बिलकुल सूना-वीराना दिखाई देने लगता है । प्रलय के बाद पृथ्वी की सी नीरवता और निर्जनता का साम्राज्य देखकर लगता है— जीवन पृथ्वी से बँधा हुआ नहीं, वह परमात्मा की एक कलात्मक सत्ता है, जो इन मछलियों की तरह आनन्द के लिए कभी पृथ्वी में आ जाता है । तो कभी अन्य लोकों में । उसे सांसारिक बन्धनों से बाँधना बेवकूफी है । मुक्ति के इच्छुक जीवन को तो प्रवासी होना चाहिए । आज यहाँ, कल वहाँ उसके लिए तो सारा संसार ही अपना घर है ।

स्काम्बर नाम की मछलियों का जीवन बनजारे की तरह होता है । शीत ऋतु में स्काम्बर उत्तरी समुद्र में बड़ी संख्या में देखने को मिलती हैं । ग्रीष्म ऋतु आई और जैसे ही किनारों का पानी गर्म होना प्रारम्भ हुआ वे बड़े-बड़े समुदाय बनाकर उत्तरी अटलाण्टिक महासागर के दोनों तटों पर पहुँच जाती हैं । जीवशास्त्रियों का मत है कि मछलियाँ खाने और प्रजनन के लिए प्रवास (माइग्रेशन) करती हैं, पर स्काम्बर उन भारतीयों की तरह हैं जो आत्म-कल्याण के लिए ही अन्तेवास करते हैं । ब्रह्मचर्य और गृहस्थ दो आश्रम सामुदायिक संगठन में एक स्थान पर रहकर बिताने के बाद वे सांसारिक प्रलोभनों को ठुकराकर विराट सीमा के सौन्दर्य का रसपान करने निकल पड़ते हैं और वानप्रस्थ व संन्यासी जीवन जंगलों, पहाड़ों, घाटियों और सुदूर देशों में भ्रमण करते हुए व्यतीत करते हैं । एक स्थान पर रहकर सांसारिक गन्दगी बढ़ाने का पाप हम भारतीयों ने स्काम्बर के समान ही कभी नहीं बढ़ने दिया । इस तरह हम एक स्थान पर रहते हुए भी सारे संसार के बने रहे ।

स्काम्बर भी ऐसा ही करती है । तरीके में थोड़ी ही भिन्नता है । मई-जून में वे उत्तरी समुद्र में ही अण्डे-बच्चे देती हैं और फिर वहाँ से अकेले नहीं, अपने सम्पूर्ण समुदाय को लेकर वहाँ से निकल पड़ती हैं । 'अकेले नहीं, हम सब' का, सिद्धान्त रखकर लगता है ये मछलियाँ श्रेष्ठता में मनुष्य से आगे निकल गई ।

एक बार गुरुनानक देव एक ऐसे गाँव में पहुँचे, जहाँ के लोग बड़े उद्दण्ड और गँवार थे । उन्होंने नानक की आवभगत भी अच्छी तरह नहीं की, फिर भी जब वे चलने लगे तो ग्रामवासियों को आशीर्वाद दिया- "तुम लोग इसी तरह आबाद रहो ।" नानक अगले दिन अगले गाँव में रुके । वहाँ के लोग बड़े नेक, शान्तिप्रिय, अहिंसावादी और मिलनसार थे । उन्होंने नानक का यथेष्ट आदर-सत्कार किया । नानक विदा होने लगे तो वे लोग उन्हें कुछ दूर पहुँचाने भी गये । प्रणाम कर जब ग्रामवासी लौटने लगे तो नानक ने आशीर्वाद दिया—"तुम लोग उजड़ जाओ, तुम लोग उजड़ जाओ ।"

नानक के एक शिष्य को यह बात नहीं भायी, उसने कहा- "महात्मन् ! बुरे लोगों को अच्छा आशीर्वाद और अच्छे लोगों को बुरा-बात कुछ समझ में नहीं आई ।" नानक हँसे और बोले- "बात यह है कि बुरे लोग संसार में फैलें तो उससे बुराई फैलती है पर यदि अच्छे लोग एक ही स्थान पर जमे बैठे रहें—लोकसेवा के उद्देश्य से वे घर न छोड़ें तो संसार में भलाई के विस्तार का अवसर ही कहाँ आयेगा ?"

शिष्य की समझ में सारी बात स्पष्ट हो गयी पर हम अभी तक यह बात नहीं समझ पाये । आजीविका और अपने बच्चों के विकास की दृष्टि से भी हमें संसार में फैलना पड़े तो एन्ग्रालिश मछली की तरह फैलना ही चाहिए । विश्व की विशद्ता का और अपने आप का अच्छी तरह अध्ययन करने का अवसर तो तभी मिलता है, जब हम औरों के पास जाकर अपनी तुलना करें । हिन्दू-मुसलमान आदि जातियाँ कोई ईश्वरीय विधान नहीं । जाति एक सापेक्ष वस्तु है, उसकी अच्छाई-बुराई का आधार गुणों की श्रेष्ठता ही हो सकती है, वंश नहीं । यह पता हमें और सारे संसार को तभी चल सकता है, जब हमारे सम्पर्क का दायरा विस्तीर्ण हो ।

एन्ग्रालिश मछली वसन्त ऋतु में अपनी चैनेल में पाई जाती है, किन्तु अण्डे देने के लिए वह 'ज्वाइडर जा' के बाहरी हिस्से में पहुँच जाती है । सारडिना मछली जुलाई से दिसम्बर तक कार्नवेल में रहती है पर जाड़ा प्रारम्भ होते ही वह गरम स्थानों की ओर चल देती है । सामो मछली समुद्र में पाई जाती है, पर उसे गंगा और यमुना नदी के जल से अपार प्रेम है । अपने इस अपार प्रेम को प्रदर्शित करने और अच्छे वातावरण में अपने बच्चों के पालन-पोषण के लिए वह हजारों मील की यात्रा करके गंगा, यमुना पहुँचती है । अण्डे-बच्चे सेने के बाद भोजन के लिए वह फिर अपने मूल निवास को लौट आती है । इस स्वभाव के कारण ही सामो दीर्घजीवी और बड़ी चतुर मछली होती है । हमारी तरह उनके बच्चे भी सामाजिक संकीर्णता में पले होते तो इस अतिरिक्त विकास का अवसर उन्हें कहाँ मिल पाता ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

६.२३ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

हमारी कमजोरी यह है कि विपरीत परिस्थितियों और संघर्षों से टकराना हमें अच्छा नहीं लगता । शांतिपूर्ण दिखाई देने वाली यह स्थिति वस्तुतः एक भ्रम है और हमारे विकास का मुख्य अवरोध भी । यों तो संसार की अधिकांश सभी जातियों की मछलियाँ उल्टी दिशा में चलती हैं, पर योरोप में पाई जाने वाली एन्युला बहाव की उल्टी दिशा में चलकर लम्बी यात्रा करने वाली उल्लेखनीय मछली है । ज्ञान और सत्य की शोध में हिमालय की चोटियों तक पहुँचने वाले भारतीय योगियों के समान यह एन्युला मछली अटलाण्टिक महासागर पार करके गहरे पानी की खोज में बरमुदा के दक्षिण में जा पहुँचती है । बरमुदा अमेरिका के उत्तरी कैरोलाइना राज्य से ६०० मील पूर्व में स्थित ३५० छोटे-छोटे द्वीपों का एक समूह है ।

वहाँ अण्डे-बच्चे देकर यह अपने घर लौट आती है । उसके प्रवासी बच्चों में अपने माता, पिता, पूर्वजों और संस्कृति के प्रति इतनी प्रगाढ़ निष्ठा होती है कि ढाई-तीन साल के होते ही वे वहाँ से चल पड़ते हैं और ५-६ महीने की यात्रा करते हुए अपने जाति भाइयों से जा मिलते हैं और इस तरह बहुत दूर-दूर होकर भी उनका अपनी जाति से सांस्कृतिक सम्बन्ध उसी प्रकार बना रहता है, जिस तरह सैकड़ों मोरीशस, ट्रिनिडाड, केन्या, यूगाण्डा, मलेशिया, थाई, इण्डोनेशिया, नैटाल, डर्बन, सुवाफीजी, लंका, वर्मा, इंग्लैण्ड और अमेरिका में रहने वाले भारतीय आज भी अपने धर्म और अपनी संस्कृति की आदि भूमि भारतवर्ष से सम्बन्ध बनाये हुए हैं ।

प्रवासी पक्षियों का सांस्कृतिक प्रेम

कार्तिक लगा और भरतपुर की झीलें तरह-तरह के रंगीन चहल-पहल करने वाले प्रवासी पक्षियों से भरनी प्रारम्भ हुईं । कहते हैं भरतपुर आने वाले अधिकांश पक्षी रूस के साइबेरिया प्रान्त से आये हुए होते हैं । पक्षियों का यों विश्व के भिन्न-भिन्न स्थानों से यह प्रेम विलक्षण है और कौतूहलवर्द्धक भी । उससे जीव मात्र की एकता और सम्पूर्ण पृथ्वी के एक परिवार, एक इकाई होने का जो प्रमाण मिलता है वह भी कम कौतूहल-वर्द्धक नहीं ।

बड़ौदा के आस-पास तथा कच्छ के नल सरोवर में भी शेष भारत और विश्व के अनेक भागों से आये हुए पक्षी जाड़े के दिन किस हँसी-खुशी में काटते हैं, उसे देखकर लगता है कि संसार के लोग भी ऐसे ही परस्पर मिल-जुलकर रहने का अभ्यास कर सके होते, तो विश्व कितना खुशहाल दिखाई देता ?

पक्षियों के प्रवासी जीवन (माइग्रेशन) का अपना एक विचित्र ही इतिहास है । जहाँ मनुष्यों में थोड़ी-थोड़ी जमीन, भाषावार प्रांत, देश-देशान्तरों के मध्य सीमा-विवाद उग्ररूप धारण करते और रक्तपात की परिस्थितियाँ उत्पन्न करते हैं, वहाँ पक्षी हैं—मनुष्य से बहुत नेक, जिन्हें न तो भाषा का भेदभाव करना आता है, न प्रान्त और देश का । थोड़े दिन का आयुष्य, बड़ी-खुशी के साथ बिता लेते हैं ।

पक्षी-विशेषज्ञों का मत है कि वे यह सब अन्तःप्रेरणा से करते हैं । इस प्रेरणा का उद्देश्य मौसम की अनुकूलता प्राप्त करना, भोजन और आजीविका की खोज, बच्चे पैदा करने के लिए उपयुक्त वातावरण प्राप्त करना होता है । कई पक्षी प्रकाश की कमी अनुभव करने पर उसी प्रकार एक स्थान को छोड़ कर दूसरे स्थान में चले जाते हैं, जिस प्रकार कुछ देशों में राजनैतिक या शासन-तन्त्र की भयंकरता के कारण बहुत-से लोगों को निर्वासित होना पड़ता है । किन्तु चिड़ियों के प्रवास की दशा का अध्ययन यह बताता है कि ऐसा करते समय पक्षी अपनी सूक्ष्म बुद्धि, विवेक एवं सूझ-बूझ का भी प्रयोग करते हैं । वे जब अक्षांशीय (लागीट्यूडनल) पथ पर एक ध्रुव से दूसरे ध्रुव की ओर यात्रा करते हैं, तब ऐसे स्थानों से होकर चलते हैं, जहाँ उन्हें भोजन, घोंसले आदि की सुविधा रहे । लौटते समय भी वे उसका ध्यान रखते हैं । यह केवल अन्तःप्रेरणा से ही नहीं हो सकता, इसमें उनकी समझ ही प्रधान होती है । मनुष्य भी इसी प्रकार प्रवास से पूर्व समझ से काम लें यह आवश्यक है ।

पक्षी जब उत्तरी गोलार्द्ध से दक्षिणी गोलार्द्ध को चलते हैं, तो यह सीधा (देशान्तरीय) प्रवास (वर्टीकल माइग्रेशन) कहलाता है । इसमें भी वही सूझ-बूझ रहती है । कुछ पक्षी जो स्थायी रूप से रहते हैं, पर कुछ ही समय के लिए बाहर जाते हैं, उदाहरण के लिए कौवे, खञ्जन, पिप्पलीज, मछली राजा (किंग फिशर) आदि को खाना नहीं मिलता, बर्फ जम जाती है तब कुछ ही दिन बाहर रहना पड़ता है, फिर वे वापस आ जाते हैं । कुछ चिड़िया होती ही खानाबदोस (बर्ड आफ पैसेज) हैं । वे घूमते-फिरते हुए सृष्टि के विभिन्न दृश्यों का आनन्द लेती हुई जीवनयापन करती हैं। इसकी मनुष्य से तुलना करने पर लगता है एक ही गाँव, प्रांत और देश को घर बना लेना मनुष्य जोति की कितनी संकीर्णता है, यदि हम सारे संसार को ही एक परिवार, एक देश मान सके होते तो धरती स्वर्ग बन गयी होती ।

डॉ० एलचिन ने बहुत दिन तक चिड़ियों के प्रवासी जीवन का अध्ययन करके लिखा है—एक पक्षी समय के अनुसार अधिक-से-अधिक अपने रहन-सहन, वेष-भूषा में परिवर्तन भी कर लेते हैं । पर अपनी सभ्यता, संस्कृति और

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदर्शों को वे उन स्थानों में भी नहीं भूलते जहाँ उन्हें प्रवासी जीवन बिताना पड़ता है । हम भारतीय हैं, जिन्होंने कभी 'कृण्वन्तोविश्वमार्यम्' हम सारे विश्व को आर्य (सुसंस्कृत) बनायेंगे का नारा दिया था, संसार भर में फैल गये थे, लोगों को धार्मिक, सांस्कृतिक उपदेश व शिक्षण देकर उन्हें सभ्य व सुसंस्कृत बनाया था । उनकी सांस्कृतिक निष्ठा रत्तीभर भी न डिगी थी, तभी सारे विश्व को प्रभावित करना सम्भव हुआ था । आज तो स्थिति बिल्कुल ही उलट गई । लाखों-करोड़ों भारतीय जावा, सुमात्रा, मौरीशस, केन्या यूगांडा, ट्रिनीडाड, फिलीपाइन्स, नैटाल, डर्बन, मलाया, सिंगापुर आदि में बसे हैं, पर उनकी अपनी न शिक्षा रही, न संस्कृति । वेष-भूषा, रहन-सहन, आहार-विहार तक बदल गये । नाम अभी भी भारतीय हैं, पर काम और आचार-विचार तो पाश्चात्यों से भी गये-गुजरे हो गये । अपनी संस्कृति के प्रति निष्ठा न होना सत्य सनातन धर्म के लिए भारी आघात हुआ । हम अपनी ही निष्ठा से टूट गये तो संसार पथ-भ्रष्ट क्यों न होता ?

चिड़ियाँ चलने के लिए तैयारी करती हैं तब अपने पुराने पंख गिराकर नये पंख धारण कर यात्रा का स्वागत करती हैं । पहले वे एक बार परीक्षण उड़ान कर लेती हैं । अकेले नहीं, अनेक चिड़ियाँ एक दिन एक स्थान में नियत समय पर एकत्रित होकर उड़तीं और संगठन व एकता की महत्ता प्रतिपादित करती हैं । वे दिन में भी चलती हैं और सुरक्षा की दृष्टि से रात में भी, पर यात्रा के दिनों में उनकी सभ्यता और शिष्टाचार देखते ही बनता है ।

सबसे आगे कबीले की झुण्ड की वृद्ध चिड़िया चलतीं और मनुष्य जाति को संकेत से समझाती हैं कि वृद्ध शरीर से कितने ही अशक्त क्यों न हो जायें वे कभी अनुपयोगी नहीं होते । उनके पास जीवन भर का ज्ञान और अनुभव संग्रहीत रहता है । चिड़ियाँ उनसे महत्वपूर्ण लाभ ले सकती हैं, तो मनुष्य जैसा समझदार प्राणी वैसा क्यों नहीं कर सकता ? भारतीय संस्कृति में वृद्धों को, माता-पिता को इतना सम्मान दिया गया है, तभी हम संसार में अपना गौरव स्थापित कर सके हैं और आज जबकि पाश्चात्यों के अन्धानुकरण व अपनी ही दुर्बलताओं के शिकार हमने उन्हें आदर देने में कमी कर दी तब हम दिग्भ्रान्त पथिक के समान इधर-उधर भटकते भी दिखाई दे रहे हैं ।

चिड़ियों की समझ इस दृष्टि से मनुष्य की समझ से श्रेष्ठ है । वे जब अपने देश से जाती हैं, तब वृद्धों को आगे रखती हैं । उनके पीछे अर्थात् मध्य में छोटे बच्चे होते हैं । सुरक्षा की कितनी सावधानी, सबसे पीछे युवा पक्षी । पर लौटते समय यह स्थिति बिल्कुल बदल जाती है । वृद्धों के आदेश पर प्रौढ़ पक्षी सबसे आगे चलते हैं, ताकि वे अगली यात्राओं के लिए अनुभव प्राप्त करें, दक्ष हो जायें, बीच में वही छोटे बच्चे और सबसे पीछे मार्ग-दर्शन करती हुई वृद्ध चिड़िया । वे रहती भर हैं पीछे, पर रास्ता चलने में थोड़ी-सी भी भूल हो तो वे सुधार देती है । घनी अंधेरी रातों में भी वृद्ध पक्षी तारागणों की मदद से उन्हें चलना सिखाते हैं । पक्षी अपने बुजुर्गों के सम्मान का पूरा लाभ लेते हैं जबकि हम मनुष्यों ने बुजुर्गों का सत्कार न कर अपना भारी अहित किया ।

हजारों मील की दूरी तक चले जाते हैं यह पक्षी, पर जब वापिस लौटते हैं तो उनकी संस्कृति, बोली, भाषा में किन्चित मात्र परिवर्तन परिलक्षित नहीं होता ।

समुद्र के तट, पर्वत, वादी, घाटियों और नदियों का भ्रमण करते पक्षी होते हैं छोटे, पर अपना दृष्टिकोण विशाल बना लेते हैं । पक्षी-विशेषज्ञों का विश्वास है कि इन्हें पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र, उसके घूमने से उत्पन्न मैकेनिकल फोर्स आदि का भी पता होता है । मनुष्य ही है, जो कि अपने सीमित ज्ञान पर दम्भ दिखाता है । यह पक्षी जो ज्योतिर्विज्ञान तक से परिचित होते हैं, अँधेरी रातों में तारों की मदद से आगे बढ़ते चले जाते हैं, पर उन्हें अपना श्रेष्ठता का कुछ भी अभिमान नहीं होता । एक छोटे-से प्राणी की चहकती-फुदकती जिन्दगी जी लेते हैं और साथ ही तरह-तरह के ज्ञान और अनुभव भी अर्जित करते रहते हैं, लेकिन ऐसा कभी नहीं हुआ कि उन्होंने अपनी नैसर्गिक प्रकृति, संस्कृति और विशेषताओं का परित्याग किया हो ।

यह तो मनुष्य ही है जो महत्वहीन और निर्मूल्य सुख-साधनों के प्राप्त होते ही अपने आपको भूल बैठता है और अपनी विशेषताओं, क्षमताओं तथा दायित्वों की स्मृति खो देता है । उचित यही है कि जीवन को एक प्रवास, एक यात्रा मानते हुए उसे सफलतापूर्वक सम्पन्न करने की बात सोची जाय तथा मनुष्य जीवन को सफल व सार्थक बनाया जाय ।

भाव संवेदनाएँ आत्मचेतना की प्रतीक

न्यूजीलैंड द्वीप के पास क्रुक जलडमरूमध्य में कोई ५ मील ऐसा समुद्र है, जिसमें बड़ी-बड़ी मूँगों और पत्थरों वाली टेढ़ी-मेढ़ी चट्टानें हैं । यहीं डालफन जाति की एक दस फुट लम्बी और तीन फुट चौड़ी मछली रहती थी । वह मछली इस खतरनाक स्थान में नाविकों को सही रास्ता बताती थी, जिससे वे दुर्घटनाओं से बच जाते थे । जहाजी इसी कारण प्यार से उसे 'पैलोरस जैक' कहा करते थे ।

"जब तक खतरा रहता मछली आगे-आगे चलती और जहाज पीछे-पीछे । जैसे ही साफ समुद्र आ जाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह एक बार ऊपर उछलती और गोता लगाकर भाग जाती । नाविक समझ जाते थे, अब कोई खतरा नहीं है । एक बार एक जहाज के किसी अजनबी व्यक्ति ने उस विलक्षण मछली पर गोली दाग दी । गोली लगते ही मछली डुबकी लगाकर भाग गई और कई वर्ष तक नहीं दिखाई दी । इस बीच कई जहाज वहाँ दुर्घटनाग्रस्त हो गये ।''

''कुछ दिन तक विश्राम करने के पश्चात् मछली का घाव ठीक हो गया । इसी बीच न्यूजीलैंड सरकार ने निषेधाज्ञा प्रसारित कर दी कि उस मछली को मारने वाला दण्ड का अधिकारी होगा । इसके कुछ दिन बाद ही वह मछली फिर दिखाई देने लगी । उसने मनुष्य की कृतघ्नता का बिल्कुल ध्यान न दिया और फिर से परोपकार के व्रत का पालन करने लगी । आश्चर्य यह है कि जैसे ही वह रोटूरा नामक उक्त जहाज को देखती वैसे ही डुबकी लगाकर भाग जाती । जब इस मछली की मृत्यु हुई तो उसकी असाधारण सेवा के लिये न्यूजीलैण्डवासियों ने उसका एक भव्य स्मारक बनाया । उसकी एक प्रस्तरमूर्ति प्रतिष्ठित की गई जो अब भी विद्यमान है ।''

इस मछली का विचित्र वर्णन दिल्ली से प्रकाशित होने वाले नवभारत टाइम्स के साहित्यिक संस्करण में छपा था । इसी पत्र में कैप्टन पी. जे. प्रसाद द्वारा लिखा हुआ लद्दाख सीमांत का एक और विवरण प्रकाशित हुआ था, जिसमें बताया गया है कि कुछ याकों ने बर्फीले तूफान से सीमा रक्षकों को बचाया था । जैसे ही तेज अंधड़ आता-बताते हैं याक पंक्तिबद्ध होकर खड़े हो जाते और गश्तीदल उनकी ओट में छुप जाता । इस तरह भयंकर, बर्फीले तूफान से बचकर गश्तीदल अपने खेमे तक पहुँच जाता ।

यह घटनायें सिद्ध करती हैं कि चेतन स्वरूप आत्मा ही सर्वभूत प्राणियों में विद्यमान है । अपने-अपने कर्मानुसार जीव विभिन्न शरीरों में प्रकट होता है, किन्तु जीव-मात्र की आत्मिक स्थिति एक जैसी है, इसलिये कभी किसी जीव को न मारना चाहिये, न सताना चाहिये । उनसे आत्म-विकास की शिक्षा लेनी चाहिये ।

विश्व में दो प्रकार के पदार्थ पाये जाते हैं- जड़ और चेतन । वृक्ष, वनस्पति, पौधों, गुल्म-लताओं तक में चैतन्य के चिह्न प्रकट हो रहे हैं, किन्तु तमोगुण की अधिकता के कारण वे सब अविकसित प्राणी हैं, कीट पतंग, वृक्षों की अपेक्षा थोड़ा अधिक विकसित हैं, पशु-पक्षियों का स्वाभाविक ज्ञान कीट-पतंगों से भी अधिक विकसित पाया जाता है । कई बार तो पशु-पक्षियों की विशेषतायें मनुष्य की बुद्धि और उसके चातुर्य को शर्मिन्दा करने लगती हैं । आहार, निद्रा, भय, मैथुन तक में ही नहीं, ज्ञान-विज्ञान, धर्म, बुद्धि-विवेक में भी वे मनुष्य से बढ़े-चढ़े पाये जाते हैं । यद्यपि उनमें आत्म-कल्याण के लिये साधनायें करने वाला नैमित्तिक ज्ञान नहीं होता । वह लाभ केवल मनुष्य को ही प्राप्त है । पर यदि सामान्य जीवों की गतिविधियों को देखकर हम यह मान लें, कि आत्म-चेतनता कर्मानुसार अन्य योनियों में भी पाई जाती है और यदि मनुष्य में धार्मिकता, सच्चाई, ईमानदारी, उत्कृष्टता आदि नहीं है तो उसकी स्थिति पशुओं से भी निम्नतर है, तो अवश्य ही आत्मा को पहचानने और जीवन लक्ष्य को प्राप्त करने का भाव जाग्रत हो सकता है ।

साहस, दया और करुणा

आक्रमण और मृत्यु के भय से जिस तरह मनुष्य कई बार किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं, वैसी ही घबराहट कई जीवों और पक्षियों को भी होती है, उससे पता चलता है कि वे भी जीवन और मृत्यु की शृंखला में जुड़े होते हैं और मोह-आसक्ति, अज्ञान के कारण उन्हें भी मृत्यु से ठीक उसी तरह डर लगता है, जिस तरह मनुष्य को ।

अरब, सीरिया, मोसोपोटामिया और अफ्रीका आदि में शुतुर्मुर्ग नाम का एक सात-आठ फुट लम्बा पक्षी पाया जाता है । शुतुर्मुर्ग की मूर्खता प्रसिद्ध है । कोई खतरा दिखाई देने पर वह अपना सिर बालू में छिपा लेता है और समझ लेता है कि खतरा दूर हो गया । उसका गुस्सा भी उतना ही प्रबल होता है, गुस्से में वह भयंकर आक्रमण करता है । कहते हैं उसकी चोंच का प्रहार इतना तीक्ष्ण होता है कि लोहे की चादर में भी छेद हो सकता है ।

शुतुर्मुर्ग में स्नेहसद्भाव का भी विलक्षण भाव पाया जाता है । पक्षी होने पर भी वह जेबरा और हिरणों के साथ रहता है ।

कुछ समय पूर्व सारस पक्षियों के सम्बन्ध में कहा जाता था कि सर्दियों में वह उड़कर देशान्तर को चला जाता है । यात्रा के समय वह कई छोटे-छोटे पक्षियों को भी अपनी पीठ पर बैठाकर उड़ जाता है । प्रवासी पक्षियों के सम्बन्ध में बड़ौदा के गायकवाड़ विश्वविद्यालय के प्राणिशास्त्र विभाग में खोजबीन करने वाले प्राणिविद् प्रो. जे. सी. जार्ज ने इस विश्वास का उल्लेख किया है । यह न भी हो तो भी सारस का दाम्पत्य प्रेम विलक्षण माना गया है । नर या मादा को मारकर कोई उसे तब तक नहीं ले जा सकता, जब तक उसी तरह साथी को भी न मार दिया जाये ।

पंजाब में करनाल जिले के थानेश्वर नामक स्थान के पास कुछ तालाब हैं । वहाँ सारसों के अनेक जोड़े निवास करते हैं । एक बार एक सारसी पर एक गीदड़ ने आक्रमण कर दिया । सारसी के पैर में जख्म हो गया, जिससे वह पीछे हट गई पर अब गीदड़ ने उसके छोटे बच्चे पर हमला कर दिया । इस बार सारसी की ममता ने प्रचण्ड रूप धारण किया । घायल होते हुए भी उसने साहस और बुद्धि से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काम लिया । उसने चोंच से गीदड़ की आँखों में तीखे प्रहार किये जिससे भयभीत होकर गीदड़ भाग गया । उधर मादा की आवाज सुनकर नर सारस भी आ पहुँचा, उसने भी गीदड़ पर हमला कर दिया, जिससे गीदड़ को भागते ही बना ।

साहसी ही नहीं मनुष्येतर जीवों में दया और करुणा भी कम नहीं होती । बुन्देलखण्ड की एक घटना है, एक गाँव का कोई ५ वर्ष का बालक खेलते-खेलते गाँव के किनारे पर पहुँच गया । वहाँ से खेल प्रारम्भ होते थे । उधर से एक विषधर सर्प दौड़ा आ रहा था, सर्प उत्तेजित था इसलिये उसने उस बच्चे को ही घेर लिया । यह दृश्य वृक्ष की शाखा पर बैठा एक बन्दर देख रहा था । उसे बच्चे पर दया हो आई, वह झटपट नीचे उतरा और पीछे से जाकर सर्प को एक तमाचा जड़ा । साँप ने बच्चे को तो छोड़ दिया और बन्दर पर झपट पड़ा । बन्दर ने साहस और बुद्धि से काम लिया । वह वार भी करता था और प्रतिघात से भी बचता था । यह द्वन्द्व-युद्ध एक घण्टे चला और अन्त में विजय बन्दर की ही रही, उसने साँप को कूँच-कूँच कर जान से मार डाला ।

गाय बहुत सीधा जानवर है, गायें बहुत कम लड़ती-भिड़ती हैं पर अपने बच्चे, कुनवे और साथियों के प्रति उनमें सामूहिकता और सहकारिता का कितना अच्छा भाव होता है, उसकी एक विचित्र घटना ओरछा में घटित हुई । उसे सुनकर मनुष्य की शक्ति और ज्ञान का दंभ मिथ्या प्रतीत होने लगता है । मनुष्य जो करता है, उसमें अपना स्वार्थ प्रधान रहता है पर गायों ने सबके स्वार्थ में अपना स्वार्थ सन्निहित सिद्ध कर दिखाया ।

बात यों हुई कि एक दिन गायों का एक झुण्ड जंगल में चर रहा था । चरवाहे उन्हें जंगल में छोड़कर घर लौट जाते हैं । अभी गायें आई ही थीं कि अचानक एक बाघ ने आक्रमण कर दिया । पहले तो गायें भागीं, जैसे ही उन्होंने देखा कि भागने पर भी किसी न किसी की मृत्यु अवश्यम्भावी है तो सब गायें रुक गईं । उन्होंने मिलकर एक घेरा बनाया । छोटे-छोटे बछड़ों को बीच में खड़ा कर आक्रमण की राह देखने लगीं । बाघ पहले तो सक-पकाया पर उसने गायों को भोला समझकर फिर आक्रमण कर दिया पर इस बार का आक्रमण महँगा पड़ा । १५-२० गायें सीगों से बाघ पर टूट पड़ीं । बाघ का शरीर क्षत-विक्षत हो गया और उसे भागते ही बन पड़ा ।

मौलिक बुद्धि जैसी कोई चीज न होने पर भी मनुष्य को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिए भावनाओं का आधार लिया जा सकता है । मनुष्य में भावनाएँ होती हैं, यही ठीक है, परन्तु पशुओं में भी भाव सम्वेदनाएँ होती हैं और वे मनुष्य से ज्यादा उन्हें अनुभव करते हैं । अन्तर है तो इतना ही कि मनुष्य भावनाओं को व्यक्त कर सकता है और पशु-पक्षी भावनाओं को व्यक्त नहीं कर सकते ।

भावों की यह अभिव्यक्ति भी मनुष्य अपने परिवार और समाज से ही सीखता है । मनुष्य के संसर्ग में रहने वाले अन्य कई प्राणी, पशु-पक्षी भी अपनी भावनाओं और प्रतिक्रियाओं को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करना सीख जाते हैं । कहा जाता है कि मनुष्य के पास अपने भावों को व्यक्त करने के लिए एक समर्थ और समृद्ध भाषा है । अन्य प्राणियों के पास कोई भाषा नहीं है, लेकिन यह एक भ्रम भी हो सकता है कि अन्य प्राणियों के पास भाषा नहीं है, हो तो उन्हें भी देखा जा सकता है । यह बात और है कि मनुष्य उनकी वाणी को सुनता तो है, परन्तु समझ नहीं सकता अथवा मनुष्य ने अपनी भाषा का आवश्यकता के अनुसार अधिक विकास कर लिया और अन्य प्राणी उस क्षेत्र में पीछे रह गये, लेकिन यहाँ आकर मनुष्य को मात खा जानी पड़ती है । कोई मनुष्य आज तक पशु-पक्षियों की भाषा में बात करने या समझने में समर्थ नहीं हो सका है जबकि जानवर उसके भाव यहाँ तक कि उसकी भाषा को समझने का अभ्यास बहुत जल्दी कर सकते हैं ।

मनःशास्त्रवेत्ता पेटर राक ने एक चिम्पाजी पाला जिसे नाम दिया 'कोको', कोको के सम्बन्ध में राक का दावा है कि वह अपनी भावनाओं को भी व्यक्त कर सकता है । कोको ने ५॥ वर्ष की आयु में सांकेतिक भाषा के ३०० वाक्य सीख लिए ।

कुछ और मनोवैज्ञानिकों ने कोको की परीक्षा ली तो उसने प्रत्येक व्यवहार की प्रतिक्रिया व्यक्त की और हर्ष-उल्लास के साथ खेद व दुःख भी व्यक्त किया ।

शरीर, बुद्धि, भावनाएँ उनकी अभिव्यक्ति और भाषा की दृष्टि से मनुष्य का अन्य प्राणियों की तुलना में बढ़ा-चढ़ा होना मात्र एक भ्रम है । यह आभास जरूर होता है कि वह अन्य प्राणियों से बढ़ा-चढ़ा और उन्नत है । सम्भव है यह भ्रम अन्य प्राणियों में भी हो । जिन आधारों पर मनुष्य की श्रेष्ठता सिद्ध की जाती है, वे तो झूठे हैं ही परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि वस्तुतः मनुष्य अन्य प्राणियों के समान ही है । निस्सन्देह मनुष्य अन्य प्राणियों की तुलना में श्रेष्ठ और परमात्मा का सबसे बड़ा पुत्र है क्योंकि मनुष्य जीवन एक अवसर है, जिसमें यह सिद्ध किया जा सकता है कि परमात्मा ने हमें जो वस्तुएँ, जो विशेषताएँ और जो अधिकार दिये हैं, उनका हम सदुपयोग कर सकते हैं और अपनी प्रामाणिकता, कर्त्तव्यपरायणता के आधार पर और अधिक उच्च स्थिति प्राप्त करने के योग्य सिद्ध कर सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मैत्री, सद्भाव और कर्त्तव्य भावना

स्वार्थ और आत्मरक्षा की प्रवृत्ति सभी प्राणियों में पायी जाती है । यह प्रवृत्ति जीवन को प्रेम करने के फलस्वरूप ही विकसित हुई । यह बात दूसरी है कि उन प्रवृत्तियों का विकास कितने परिष्कृत अथवा विकृत रूप में होता है परन्तु यह सच है कि प्रत्येक प्राणी में एक ऐसी चेतन सत्ता विद्यमान है, जो उसे निरन्तर ऊँची उठने की प्रेरणा देती है । स्वार्थों की पूर्ति के साथ-साथ उच्च आदर्शों को जीवन में आत्मसात करने की प्रेरणा देने वाली इस चेतन सत्ता का नाम ही अन्तरात्मा है ।

मनुष्य समाज में तो कितने ही लोग उच्च आदर्शों की पूर्ति के लिए अपने तुच्छ स्वार्थों को बलि देते देखे जा सकते हैं । समाज भी ऐसे व्यक्तियों को महामानव, देवात्मा, आदर्श पुरुष कहकर सम्मानित करता और श्रद्धा से शीश नवाता है । अन्तरात्मा के रूप में सम्बोधित की जाने वाली यह चेतना केवल मनुष्य के पास ही नहीं है वरन् अन्य पशु-पक्षियों में भी, जिनके पास बुद्धि का अभाव है, सोचने-समझने की क्षमता नहीं है इन आदर्शों के प्रति अगाध प्रेम देखा गया है । अमरीकी लेखक एच.ए. जेज ने पशु-पक्षियों के आपसी व्यवहार का लम्बे समय तक अध्ययन किया और अपने निष्कर्षों को 'विजडम ऑफ एनिमल्स' नामक पुस्तक में लिखा । इस पुस्तक में एच. ए. जेज ने कितनी ही ऐसी घटनाओं का उल्लेख किया जो यह प्रमाणित करती हैं कि पशु-पक्षियों में भी नैतिक चेतना तथा आदर्शों के प्रति प्रेम होता है और वे इन आदर्शों को प्राण-पण से निबाहते भी हैं ।

एच० ए० जेज ने अपनी पुस्तक 'विजडम ऑफ एनिमल्स' में एक पालतू बिल्ली तथा एक तोते की दोस्ती का उल्लेख किया है । सामान्यतः बिल्ली-तोते को देखते ही झपटने की कोशिश करती है परन्तु उक्त पुस्तक में जिस बिल्ली और तोते का उल्लेख किया गया है, वे परस्पर एक-दूसरे को बहुत प्रेम करते थे । घर में जब कोई नहीं होता तो बिल्ली तोते को इस प्रकार खिलाती रहती थी जैसे कोई बच्चा खिला रहा हो । एक दिन उनकी मालकिन रसोई में कोई चीज पकाने के लिए चूल्हे पर रखकर ऊपर कमरे में चली गई और वहाँ किसी काम में व्यस्त हो गयी । बिल्ली और तोता दोनों ही रसोई में खेलने लगे । खेलते-खेलते तोता पकने के लिए चढ़ाये गये बर्तन में गिर पड़ा । बिल्ली तुरन्त ऊपर वाले कमरे में दौड़ी गयी और मालकिन के कपड़े खींचकर, उछलकर व्याकुलता प्रदर्शित करने लगी । मालकिन ने झल्लाकर कहा क्या बात है ? तो बिल्ली ने उसकी ओर कातर भाव से देखा तथा रसोई की ओर चल पड़ी । पता नहीं उसकी आँखों में क्या भाव थे कि मालकिन ऊपर वाले कमरे में निकलकर रसोई की ओर बिल्ली के पीछे-पीछे चल दी । वहाँ जाकर उसने देखा कि तोता चूल्हे पर चढ़ाये गये बर्तन में गिर पड़ा है और बुरी तरह छट-पटा रहा है । मालकिन ने उसे बाहर निकाला । यह बिल्ली उस समय अपनी मालकिन को बुलाने नहीं जाती तो निश्चित था कि तोते के प्राण निकल गये होते ।

पशु अपने सजातीय प्राणियों, परिवार के सदस्यों, बच्चों से तो प्रेम करते ही हैं, उन्हें साथ लिए घूमते और स्नेह का परिचय देते हैं । परन्तु दूसरे पशुओं से भी प्रेम सम्बन्ध बनाने, स्नेह, सौहार्द्र बढ़ाने और मैत्री करने के उदाहरण बहुत कम देखने को मिलते हैं, लेकिन मिलते अवश्य हैं । वरमिंघम (ब्रिटेन) में सर सैमुअल गुडवीईयर के यहाँ एक टट्टू था । उसकी एक खच्चर से अच्छी दोस्ती हो गयी थी और दोनों बाड़े से निकलकर देर तक घूमा करते थे । टट्टू को एक बाड़े में रखा जाता था । बाड़े का फाटक अन्दर से एक चटखनी से बन्द होता था और बाहर से कुण्डी द्वारा । टट्टू अपना सिर फाटक के ऊपर तो कर सकता था किन्तु वह बाहर कुण्डी तक नहीं पहुँच सकता था, फिर भी वह अकसर बाड़े के बाहर खुले में घूमता देखा जाता था । यह एक रहस्य ही था कि बाड़े का फाटक कैसे खुल जाता था ?

एक दिन सर सैमुअल ने देखा कि टट्टू पहले भीतरी चटखनी को झटके देकर खाँचे से अलग करता और फिर रेंकना शुरू कर देता । उसकी आवाज सुनकर बाहर एक खच्चर आ जाता । खच्चर अपनी नाक से धकेलकर कुण्डी खोल देता फिर दोनों साथ-साथ घूमते ।

'वेजल' नामक एक जर्मन पत्रिका में एक कुत्ते और बिल्ली की मित्रता का वर्णन छपा है । कुत्ते और बिल्ली जन्म-जात शत्रु होते हैं, परन्तु यह कुत्ता और बिल्ली साथ-साथ खाते-पीते, उछलते-कूदते और साथ-साथ उठते-बैठते थे । इनके मालिक ने कुत्ते और बिल्ली की मैत्री को परखना चाहा । वह केवल बिल्ली को अपने कमरे में ले गया और उसे खाना दिया उसने बड़े मजे में खाना खाया । ऐसा लगा कि कुत्ते की अनुपस्थिति बिल्ली को जरा भी नहीं खली है । फिर एक तस्तरी में खाना रखकर वह तस्तरी अलमारी में रख दी गयी । अलमारी में ताला नहीं लगाया गया और बिल्ली को खुला छोड़ दिया गया । बिल्ली तुरन्त कमरे से बाहर गयी और थोड़ी देर में वह अपने साथी कुत्ते को वहाँ बुलाकर ले आयी । दोनों उस अलमारी तक गये फिर बिल्ली ने धक्के से अलमारी का दरवाजा खोला तथा उछलकर कुत्ते को वह तस्तरी दिखाने लगी । कुत्ते ने तस्तरी देख ली और उसने पंजों से दाबकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तस्तरी को बाहर निकाल लिया । पहले उसने बिल्ली की ओर तस्तरी खिसकाई परन्तु बिल्ली पीछे हट गई जैसे वह कह रही हो मैं तो खा चुकी हूँ । कुत्ते ने भी जैसे बिल्ली का आशय समझ लिया और तस्तरी को अपने पंजे में दाबकर सारा खाना खा गया । जब तक कुत्ता खाना खाता रहा तब तक बिल्ली उस स्थान पर ऐसे बैठी रही जैसे वह पास बैठकर खाना खिला रही है ।

एक-दूसरे के प्रति प्रेम और कोमल भावनाओं का प्रदर्शन तो ठीक है, पशु-पक्षी अपनी मित्रता में अवरोध उत्पन्न करने वाले कारणों को भी दूर करते हैं । दूसरों की इच्छा या अनिच्छा अथवा बहकाने पर जुड़ने-टूटने वाली मित्रता का आधार स्वार्थ ही हो सकता है, क्योंकि मित्रता सच्चे हृदय से की जाती है और बाहरी कारणों से स्थिर बनती अथवा टूटती नहीं है । प्रसिद्ध अँग्रेजी साप्ताहिक 'स्टेट्स मेन' में एक पिल्ले और सूअर की ऐसी ही मित्रता का वर्णन छपा था । वे दोनों साथ-साथ घूमते थे । उनके स्वामी को यह पसन्द न था इसलिए उसने पिल्ले के गले में लकड़ी का एक छोटा-सा किन्तु बजनदार टुकड़ा बाँध दिया, ताकि वह भाग न सके । किन्तु उसने पहले ही दिन देखा कि उस पिल्ले के गले में पड़ी रस्सी कट गई थी और वह सूअर के साथ स्वतन्त्र घूम रहा था । दूसरे दिन पिल्ले के गले में चमड़े का मजबूत पट्टा डाला गया और उसमें लकड़ी का टुकड़ा जंजीर से लटकाया गया, लेकिन उस दिन भी पट्टा कट गया और लकड़ी का वह टुकड़ा कहीं गिर पड़ा । पिल्ला अपने पट्टे को स्वयं कदापि नहीं काट सकता था, फिर वह कैसे कट जाता है यह देखने के लिए निगरानी की गई तो पाया गया कि यह काम उसके दोस्त सूअर का ही है ।

यह तो हुई सामान्य मैत्री धर्म की बातें, साथ-साथ रहने, उठने बैठने के कारण आपस में इस तरह की घनिष्टता को स्वाभाविक भी कहा जा सकता है, परन्तु पशु-पक्षी में कर्तव्यभावना, विपत्तिग्रस्तों के प्रति सहयोग, सद्भाव तथा पीड़ितजनों से सहानुभूति और आततायी के प्रति आक्रोश की भावनायें भी खूब पाई जाती हैं । युद्ध में घोड़ों के उपयोग की चातुरी, कुत्ते की स्वामिभक्ति और दूसरे घरेलू जानवरों का प्रेम तो आये दिन देखने को मिलता ही है । इस तरह की कई घटनायें इतिहास में प्रसिद्ध भी हैं । ऐसा नहीं है कि ये पशु इस तरह का विशेष व्यवहार अपने मालिक के साथ ही करते हों । उनके अपने साथियों के प्रति भी उनका व्यवहार कई बार इतना सूझ-बूझ भरा होता है कि देख-सुनकर दंग रह जाना पड़ता है ।

कुछ दिन पूर्व अमेरिका के प्रसिद्ध पत्र 'लाइफ' में एक व्यक्ति की आँखों देखी घटना का वर्णन छपा था । हुआ यह कि एक भेड़ का बच्चा किसी तरह काँटेदार झाड़ी में उलझ गया था । उसने झाड़ी से निकलने की बहुतेरी कोशिश की परन्तु बेचारा अन्ततः असफल रहा और थककर निराश हो गया । पास ही उसकी माँ भेड़ भी चर रही थी । झाड़ियों में खड़खड़ाहट सुनकर उसे न जाने क्या शंका हुई कि वह वहाँ देखने आयी । सामान्यतः इस प्रकार की आहट पाकर भेड़-बकरियाँ भाग जाती हैं परन्तु वह मादा भेड़ पास आई और अपने बच्चे को झाड़ियों में फँसा देखकर उसे निकालने की कोशिश करने लगी । वह भी विफल रही । निराश होने के बाद वह खेतों के पास चर रहीं दूसरी भेड़ों के पास गई । कुछ ही देर बाद वह एक नर भेड़ के साथ वापस लौटी । मेंढे ने अपने सींगों से काँटेदार टहनियों को खींचना शुरू किया और कुछ ही देर में मेमना झाड़ियों से मुक्त हो गया । झाड़ियों से निकलने के बाद उसकी माँ और नर मेंढा उस मेमना को चाट-चाटकर जिस प्रकार प्रेम प्रदर्शित कर रहे थे, लगता था उसे विपत्ति से छूट जाने के लिए आश्वस्त कर रहे हों और उसका भय मिटा रहे हों ।

आततायियों के प्रति रोष-आक्रोश की भावना केवल मनुष्यों में ही नहीं होती वरन् पशु-पक्षी भी अनीति का डटकर मुकाबला करते हैं । सामान्यतः कमजोर जानवर ताकतवर जानवर से डर जाते हैं और डरकर या तो भाग जाते हैं अथवा आत्मसमर्पण कर देते हैं । परन्तु कई बार वे गजब की साहसिकता तथा समझदारी का परिचय देते हुये आततायी का डटकर मुकाबला करते हैं । जे० जे० रीमेन्स ने अपनी एक पुस्तक में लिखा है कि-डबलिन में उनके मकान की खिड़की के पास अबाबीलों के एक जोड़े ने घोंसला बनाया और उसमें रहने लगे । उन्हें रहते हुए कुछ ही दिन हुए थे कि एक गौरेया ने उनके घोंसले पर कब्जा कर लिया । अबाबील दम्पति को यह देखकर बड़ा गुस्सा आया ।

उन्होंने गौरेया को घोंसले से निकालने की जी तोड़ कोशिश की परन्तु गौरेया अपनी शक्तिमद में आकर घोंसले पर अड्डा जमाये ही रही । अन्त में अबाबील दम्पति अपने कुछ साथियों को ले आयी । उन्होंने गौरेया को घोंसले से बाहर निकालने की अपेक्षा उसकी उद्दण्डता का मजा चखाने का निश्चय कर लिया था । सभी अबाबीलें मिलकर अपनी चोंचों में कीचड़ भरकर लाने लगीं और उससे घोंसला का मुँह बन्द कर दिया । गौरेया अब भीतर ही बन्द हो गई थी कुछ दिन बाद जब वहाँ से घोंसला हटाया गया तो गौरेया मरी पाई गई । बेचारी को अपने किये की सजा जीवन से हाथ धोकर भोगनी पड़ी थी ।

पशु-पक्षियों द्वारा किया जाने वाला यह विशेष व्यवहार आकस्मिक ही नहीं कहा जा सकता । मानवी बुद्धि की दृष्टि से इस तरह के सम्बन्धों की रीति-नीति नैतिक चेतना के जागरण से ही विकसित होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य के भीतर भी अपने मित्रों व साथियों के प्रति निर्दोष, निस्वार्थ त्याग भावना का उदय होता है । बुरे से बुरे और दुष्ट से दुष्ट व्यक्ति में भी कई अवसरों पर विपत्तिग्रस्तों के प्रति करुणा का भाव जाग उठता और कमजोर से कमजोर व्यक्ति भी अपने से बलवान आततायी से भिड़ जाने का साहस जुटा लेता है । कहने का अर्थ यह है कि नैतिक चेतना अथवा अन्तरात्मा की प्रेरणा सभी प्राणियों में होती है, वह पशु-पक्षी हो या मनुष्य-देवता । यह नैतिक चेतना अथवा अन्तरात्मा की प्रेरणा इस बात का प्रतीक है कि किसी भी प्राणी का जन्म और जीवन निपट उसका अपना मात्र ही नहीं है, बल्कि प्रत्येक प्राणी की समष्टिगत उपयोगिता है । प्रकृति ने उसे निजी स्वार्थों को पूरा करने के अलावा समष्टिगत उपयोगिता सिद्ध करने की भी भरपूर प्रेरणा प्रदान की है । मनुष्य को मिले अतिरिक्त साधन और विशेष सुविधायें तो इन प्रयोजनों को पूरा करने के लिए विशेष दायित्वों का बोध कराते हैं ।

आनन्द और उन्नति का आधार

अन्य प्राणियों की तुलना में मनुष्य ने बहुत अधिक उन्नति की है । इस उन्नति का कारण मनुष्य की बौद्धिक विशेषता ही प्रधान कारण है, जिसके बल पर वह व्यवस्था, सूझ-बूझ, उपलब्ध साधनों का नियोजन व उपयोग अधिकाधिक कुशलतापूर्वक कर पाने में समर्थ हुआ है । परमात्मा ने मनुष्य को यह सम्पदा प्रदान करने के लिए मुक्तहस्त उदारता से काम लिया और इस सम्पदा के बाद जिन कारणों से मनुष्य ने उन्नति की है वह है सामूहिकता तथा सहकार की प्रवृत्ति । साथ-साथ रहने से, मिल-जुलकर काम करने से ही मानवीय सभ्यता और संस्कृति का विकास हो सका है ।

मनुष्येतर प्राणियों में से भी जिन प्राणियों में सहयोग व सामूहिकता की प्रवृत्ति पाई जाती है, वे क्षुद्र होते हुए भी सुरक्षित और व्यवस्थित जिन्दगी जीते हैं । उनका अस्तित्व भी उतना ही जीवन्त बना रहता है और कई प्राणी जो शारीरिक दृष्टि से मनुष्य की तुलना में काफी बढ़े-चढ़े हैं, चतुरता भी उनमें पर्याप्त है, पर वे परस्पर सहयोग करने की वृत्ति से रहित होने के कारण न तो उन्नति ही कर सके और न अपने अस्तित्व को ही सुरक्षित रख सके । सिंह जो किसी जमाने में भारी संख्या में सर्वत्र पाया जाता था, शक्ति की दृष्टि से वह सर्वोपरि कहलाता था, अब धीरे-धीरे अपना अस्तित्व खोता चला जा रहा है । जिस तेजी से उसकी संख्या घट रही है, उससे देखते हुए पशु विद्या के ज्ञाता यह सम्भावना मानने लगे हैं कि कहीं सौ दो सौ वर्षों के अन्दर ही सिंह का अस्तित्व इस पृथ्वी पर से पूर्णतया समाप्त न हो जाय । जिन जीवों में परस्पर सहयोग की न सही साथ-साथ झुण्ड बनाकर रहने की प्रवृत्ति पाई जाती है वे इस कठिन समय में भी कम से कम अपने अस्तित्व की रक्षा किये हुए हैं । मनुष्य बन्दर को बहुत सताता है, वह उसकी आँखों में खटकता है, फिर भी परस्पर सहयोग के बल पर वह घुड़की देने की अब भी हिम्मत करता है । कुत्ते परस्पर लड़ते हैं इसलिए उनका नाम ही तिरस्कार-सूचक बन गया । बन्दर अब भी पुजते हैं और देवता कहलाते हैं ।

जड़जगत में संगठन की शक्ति को हम आसानी से देख सकते हैं । चींटियों का झुण्ड जब चिपट जाता है तो बड़े साँप को भी जीवित खा जाता है । टिड्डियों का दल, मनुष्य की रखवाली को व्यर्थ बनाता हुआ सारी फसल को चौपट कर जाता है । हाथियों और बन्दरों के झुण्ड निर्भयतापूर्वक जिधर चाहते हैं उधर बढ़ते जाते हैं, उनमें से प्रत्येक को यह विश्वास होता है कि कठिन समय आने पर साथियों का सहयोग सहज ही उपलब्ध हो जायगा । झुण्ड बाँधकर चरने वाली गायें आक्रमणकारी बाघ की दाल नहीं गलने देतीं ।

सूत के एक धागे को कोई बच्चा भी आसानी से तोड़ सकता है पर जब वे सौ पचास की संख्या में इकट्ठे होकर रस्सी बन जाते हैं तो बड़े पहलवान के लिए भी उसे तोड़ना कठिन होता है । एक सींक का कोई मूल्य नहीं, उससे किसी प्रयोजन की सिद्धि नहीं होती, पर जब कितनी ही सींकें मिलकर एक बुहारी बन जाती हैं तो उससे घरों की सफाई बड़े सुचारु रूप में होती रहती है । छोटी-छोटी पानी की बूँदें जब तक अलग हैं तब तक उन्हें जमीन सोख लेती है, हवा सुखा देती है, लेकिन जब वे इकट्ठा हो जाती हैं तो नदी, तालाब, समुद्र के रूप में अपना प्रचण्ड शक्ति का परिचय देती हैं । जो जमीन अलग-अलग बूँदों को क्षण भर में सोख लेती थी वही अब तालाब के तल में या किनारे पर पतली कीचड़ के रूप में परास्त पड़ी दिखाई पड़ती है । एक सिपाही कुछ नहीं कर सकता पर जब उसका पूरा दल सेना के रूप में कहीं चढ़ाई करता है तो सामने वालों के छक्के छूट जाते हैं ।

कुछ डाकू एक गिरोह बनाकर जब सक्रिय होते हैं तो बड़े प्रदेश की लाखों जनता को आतंकित कर देते हैं । थोड़े-से संगठित षड्यन्त्रकारी बड़ी से बड़ी सुव्यवस्था को खतरे में डाल देते हैं । थोड़े-से गुण्डे-बदमाशों की चाण्डाल चौकड़ी से भले आदमी डरते और दबते रहते हैं । इस प्रभाव में उन व्यक्तियों का मूल्य नहीं, उनकी सामूहिकता ही प्रधान है । ये डाकू, गुण्डे, बदमाश, षड्यन्त्रकारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शारीरिक और मानसिक दृष्टि से वैसे ही होते हैं जैसे अन्य साधारण नागरिक, उनमें डराने जैसी कोई बहुत बड़ी विशेषता नहीं होती । वे अकेले हों तो उनकी मरम्मत आसानी से हो सकती है पर चूँकि उनका एक गिरोह होता है, यह गिरोहबन्दी ही खतरे का-डरने का प्रधान अस्त्र है । देशों और जातियों का इतिहास भी इसी प्रकार का है । इतिहास साक्षी है कि जो लोग संगठित थे, वे उन्नति के मार्ग पर बढ़ते गये और जो असंगठित थे, फूट में ग्रस्त थे, उन्हें अवनति एवं पराजय का मुख देखना पड़ा ।

भारत किसी समय में बड़ा गौरवशाली, शक्तिसम्पन्न एवं उन्नति के शिखर पर पहुँचा हुआ देश था, तब यहाँ के लोग संगठन का महत्व समझते थे, एक-दूसरे के दु:ख-सुख में साथी ही न थे, वरन् परस्पर सहायता करके एक-दूसरे को आगे बढ़ाने में सुख-सन्तोष अनुभव करते थे । 'संसार की सारी प्रगति और समृद्धि संगठन के आधार पर अवलम्बित है' इस गुरु मन्त्र को यहाँ का हर नागरिक जानता था और उसी आदर्श के अनुरूप अपनी सारी योजनाएँ बनाता था । यह प्रवृत्ति जहाँ बढ़ती है, वहाँ स्वर्णिम सुख-शान्ति का स्वयम् ही अवतरण होता है, जैसा कि पूर्व काल में इस देश में सर्वत्र दृष्टिगोचर होता था । धीरे-धीरे जब इस मनोवृत्ति का ह्रास हुआ, लोग व्यक्तिगत लाभ को, स्वार्थपरता को महत्व देने लगे, परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, शोषण, अपहरण, लूट-खसोट, छल-कपट, फूट-फिसाद का बढ़ना भी स्वाभाविक था— यह विष बीज जहाँ बोये गये होंगे, वहाँ सत्यानाश के फल ही उगेंगे । असंगठित, फूट-फिसाद में ग्रस्त, आपापूती और ईर्ष्या-द्वेष के दलदल में जब हम फँस गये तो मुट्ठी भर विदेशी आक्रमण चढ़कर दौड़े और इतने विशाल देश पर जादू की तरह कब्जा कर लिया । इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है, असंगठित समाजों में सदा से यही दुर्गति होती आई है ।

मनुष्य में सहयोग की भावना ही परस्पर श्रद्धा, अनुशासन, प्रेम और कर्तव्यनिष्ठा के भाव भरती है । सहानुभूति-विहीन जीवन कष्ट और उलझन का ही नहीं हिंसा और बर्बरता का भी जीवन बन जाता है । ऐसा तो असभ्य जंगली जानवर तक नहीं पसन्द करते, मनुष्य को क्यों पसन्द करना चाहिये ? रूसी प्राणी विशेषज्ञ श्री साइवर्ट सोफ मैदानी क्षेत्र में रहने वाले जानवरों का अध्ययन कर रहे थे । तब उनके सामने एक विचित्र घटना घटित हुई । उन्होंने देखा एक सफेद पूँछ वाला उकाब पक्षी आकाश में मँड़रा रहा है । आधा घण्टे तक वैसे ही मँड़राते रहने के बाद उसने एक प्रकार की ध्वनि की । यह आवाज तेज थी लगता था उसने किसी को दौड़कर आने के लिये पुकारा हो । वह आवाज सुनते ही दूसरे उकाब ने आवाज की और दौड़कर उसके पास आ गया। इस तरह दस-बारह उकाब वहाँ एकत्रित हो गये । फिर जाने क्या बात हुई वे सब गायब हो गये । दोपहर के लगभग उकाबों का पूरा झुण्ड उसी स्थान पर उतरा । साइबर्ट सोफ ने ऐसी पोजीशन ली जहाँ से उनकी सारी हरकत देखी जा सकें । सभी उकाब एक घोड़े की लाश के पास पहुँचे । सबसे पहले बूढ़े उकाबों ने उसका माँस खाया फिर वे हटकर निगरानी करने लगे और तब दूसरे उकाबों ने माँस खाया । उकाबों की इस सामाजिक भावना ने साइबर्ट सोफ को बहुत प्रभावित किया ।

सहयोग और सामूहिकता के आधार पर निश्चित व सुरक्षित जीवन ही, आनन्द तथा उल्लास का आधार बनता है । इतना ही नहीं इन तत्वों की महत्ता समझने वाले लोग, देश और जातियाँ अपराजेय होती हैं । मनुष्य जाति की समग्र सुख-समुन्नति साधनों में नहीं भावनाओं के विकास में है । भावनाओं के विकास द्वारा ही कोई मनुष्य अभावपूर्ण जीवन में भी आनन्द और उल्लास, हँसी और खुशी प्राप्त कर सकता है ।

सहयोग, संगठन और सहकार की विशेषताओं के अलावा अन्य जीव-जन्तुओं में विद्यमान बौद्धिक क्षमतायें इस बात की भी प्रतीक हैं कि सृष्टि के कण-कण में एक ही चेतन तत्व समाया है अन्यथा आकृति, प्रकृति, शक्ति व शरीर के संरचना में भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हुए भी सभी प्राणियों में व्यवस्था, बुद्धिमता और सूझ-बूझ के तत्व समान रूप से विद्यमान होते हैं ।

गरिमा अन्य प्राणियों में भी

इस दृष्टि से ब्राजील की एक चींटी को अद्‌भुत आश्चर्य कहा जा सकता है जो कृषि पर ही निर्भर रहती है । सामान्य चींटियों की तरह यह दूसरों की कमाई पर निर्भर नहीं रहती । यह कुछ पेड़ों से गिरी पर टूटी हुई पत्तियाँ ले आती है और उन्हें अपने बिल में रखती है । किसान जिस तरह अपने खेतों को अच्छी तरह जोतता, घास-फूस निकालकर बीज बोता है, उसी प्रकार यह चींटियाँ भी इन पत्तों का भली प्रकार निरीक्षण करती हैं, कहीं कोई कीड़ा या रोगाणु तो नहीं है । यदि पत्ता अच्छा हुआ तो वे इसमें एक विशेष प्रकार की फफूँद बोती हैं । पैदा की हुई इस फफूँद से ही इनका आहार चलता है । चींटी में स्वावलम्बन के साथ गुण-दोष विवेचन की क्षमता आश्चर्यजनक है ।

यदि कोई चींटी बँटवारा करना चाहे तो जिम्मेदार चीटियाँ उसके लिये नया बिल ढूँढ़ देती हैं । विदा करते समय उन्हें यह ध्यान रहता है कि कहीं इसे आहार के अभाव में भूखों न मरना पड़े इसलिये ये फफूँद का एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कण भी उसे देती हैं । इस कण को लेकर चींटी दूसरे बिल में जाती है और वहाँ अपनी कृषि जमाकर सुखपूर्वक रहने लगती है । तुच्छ जीव में मनुष्य से बढ़कर विवेक भी कम विस्मयबोधक नहीं ।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक फ्रिश के शिष्य डॉ० लिंडावर ने मधु-मक्खियों का बहुत दिन तक अध्ययन किया और बताया कि उनकी प्रवृत्तियाँ मानव जीवन की गति-विधियों से विलक्षण साम्य रखती हैं । जिस प्रकार घर के मुखिया के आदेश पर घर के सब काम व्यवस्थापूर्वक चलते हैं, उसी प्रकार मधु-मक्खियों में एक रानी मक्खी होती है, छत्ते की सारी व्यवस्था का भार उस पर ही होता है । छत्ते के सब निवासी उसके निर्देशों का अच्छी प्रकार पालन करते हैं । इन मक्खियों में विभाग बँटे हुए होते हैं, कुछ मजदूर होती है, जिनका काम छत्ते को बनाना, टूट-फूट जोड़ना, छत्ते में कोई मर जाये उसे वहाँ से ले जाकर श्मशान तक पहुँचाना यह सब काम मजदूर करते हैं । कुछ सैनिक मक्खियाँ होती हैं, इनका काम है रानी मक्खी और छत्ते की बाहरी आक्रमणकारियों से सुरक्षा । मनुष्यों की फौज में कुछ सिपाही कायर और डरपोक हो सकते हैं, किन्तु यह दुश्मन के संघर्ष में अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करतीं । ये उनसे मृत्यु पर्यन्त लड़ती हैं । कुछ मक्खियों का काम फूलों से पराग लाना और उनसे शहद बनाना होता है । इस तरह जिसको जो काम मिला होता है वह वही काम दत्त-चित्त करती रहती है ।

छत्ते में दूसरी रानी मक्खी पैदा हो जाती है तो उसके लिये परिवार न्यारा कर दिया जाता है । रानी मक्खी अपने लिये उपयुक्त स्थान की खोज में चलती है पर वह एक दिन में नहीं मिल जाता । रानी मूर्ख नहीं होती, वह यद्यपि नन्हा-सा कीट ही है । कुछ समय के लिये वह किसी पेड़ पर बसेरा डाल लेती है और अपने सभासदों को आदेश देती है कि वे ऐसा स्थान ढूँढ़ें जहाँ जल की समुचित मात्रा उपलब्ध हो, पराग के लिये फूल और घना जंगल हो तथा स्थान ऐसा हो जहाँ छत्ते की नींव जमाने में दिक्कत न हो । आमतौर पर यह जहाँ पहले छत्ते लगे होते हैं, उन स्थानों पर ही नया छत्ता बनाते हैं, उससे मोम की दीवार, वृक्ष से चिपकाने में सुविधा रहती है ।

स्थान के चुनाव में कई बार इनमें मतभेद हो जाता है । यदि दो-चार मक्खियों में ही विरोध रहे तब तो वे स्वयं अपनी भूल मानकर छत्ते में मिल जाती हैं पर यदि मतभेद इतना हो कि दो दलों में विभक्त होने की स्थिति आ जाये तो रानी मक्खी अपनी समझदारी से काम लेती है, वह जिस पक्ष को उचित मानती है, उसे लेकर नये स्थान में चली जाती हैं और बाद में अपने विशेष दूत भेजकर अपने बिछुड़े साथियों को भी वहाँ बुला लेती है । इस स्थिति में विरोधी पक्ष चुपचाप चला आता है और अपने दल में सम्मिलित होकर काम करने लगता है । डाक्टर लिण्डावर के अनुसार मक्खियों में इससे भी विलक्षण मानसिक गतिविधियाँ चलती हों तो कोई आश्चर्य नहीं ।

यह दो उदाहरण इसलिए दिये गये हैं कि मनुष्य यह न मान ले कि न्याय, नीति, ईमानदारी, विकास आदि की बौद्धिक क्षमतायें केवल उसे ही मिली हैं, जीवों में जीव अति सभ्य संसार में रहने का दावा कर बैठें तो उनकी बात को असत्य सिद्ध करना कठिन हो सकता है । ये उदाहरण इस बात के प्रतीक हैं कि संसार के सम्पूर्ण जीवों में व्याप्त आत्मचेतना एक ही है । सबमें एक ही प्रकार की न्यूनाधिक नई-नई प्रवृत्तियाँ पाई जाती हैं । मनुष्य केवल इसलिए अपवाद है कि उसमें प्रत्येक जीवन की सम्भावनायें विलक्षण रूप से भरी गई हैं । वह अपने आप में एक स्वतंत्र सत्ता है । इसलिए उसे यह सोचने, समझने का अवसर मिलता है कि हमारे जन्म का उद्देश्य क्या है और उस उद्देश्य को कैसे सार्थक किया जा सकता है ?

प्रो० जे० वी० एस० हाल्डेन का कथन है—"एक लाख वर्ष पूर्व कोई ऐसा एकाकी मनुष्य का जोड़ा था, जो अकेला एक ही था, उसी से आज के सम्पूर्ण मनुष्यों का आविर्भाव हुआ है । हम सब मनुष्य दूर के रिश्ते में सगे भाई हैं और सगे भाइयों जैसा व्यवहार ही हमें करना चाहिए ।" और आगे तत्वदर्शन की ओर बढ़ें तो डॉ० हाल्डेन के ही मतानुसार आज से लगभग ७००० लाख वर्ष पूर्व पृथ्वी में कोई एक प्राणी था, चाहे वह प्रोटोजोआ (एककोषीय जंतु) था या फिर कोई आत्म-चेतना सम्पन्न प्राणी, उसी से सृष्टि के सम्पूर्ण प्राणियों का आविर्भाव हुआ । इस तरह हमें मात्र मनुष्यों में ही भाई-चारे का सम्बन्ध नहीं देखना चाहिए वरन् सम्पूर्ण प्राणियों में एक ही आत्मचेतना का परिष्कार देखना चाहिए । सम्पूर्ण प्राणियों के प्रति मैत्री, करुणा और आत्मभाव तत्वदर्शन का वह सिद्धान्त है, जो हमें शीघ्र ही ईश्वर से मिला देता है, जब सब अपने ही भाई बन्धु, नाती-पोते, पिता-बाबा, माँ-बहिन, बुआ-भतीजे हैं तो किसके साथ छल-कपट, अनीति और अन्याय किया जाये ?

अपने परिवार के लिए हम अपनी आजीविका का ९९ प्रतिशत भाग लगाते हैं और थोड़ा-सा अपने लिये रखते हैं, क्योंकि हमें अपने प्रियजनों की सेवा से सुख, सन्तोष मिलता है । यदि इस दायरे को बढ़ाकर हम प्राणिमात्र के प्रति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-भावना और समता का विस्तार कर लें और उसे समष्टि भाव से निष्ठापूर्वक पूरा करते रहें तो यह निश्चय है कि हमारे सुख-सन्तोष और आनन्द की सीमा भी बढ़ी हुई होगी । प्रेम का पूरा आनन्द एक-दो के साथ प्रेम-भाव से ही नहीं मिल सकता, उसका जितना अधिक विस्तार कर सकते हैं, अर्थात् घृणास्पद से भी यदि प्रेम करने का स्वाभाव विकसित कर पायें तो अपने जीवन में बहुत अधिक आनन्द और आल्हाद की अनुभूति कर सकते हैं ।

इस विचारणा का आधार यह है कि सम्पूर्ण जीव-जगत् एक ब्रह्म से स्फुरित हुआ है । इसी का नाम तत्व-दर्शन है । सनातन धर्म और संस्कृति का विकास इस तत्व-दर्शन से विकसित होने के कारण ही वह अकाट्य है । हमारे भारतीय धर्म ग्रन्थ कहते हैं—प्रारम्भ में एक ही ब्रह्म था उसकी इच्छा हुई—**'एकोऽहं बहुस्याम:'** मैं एक हूँ बहुत हो जाऊँ । उसकी इस इच्छा शक्ति ही का विस्तार अनेकानेक ब्रह्माण्ड और अनेक जीव-जन्तुओं में दिखाई देता है । सम्पूर्ण विविधता में भी वह एक ही अविनाशी अक्षर तत्व समाया हुआ है । **'बहुनामह एक मैव'** संसार में जो कुछ दिखाई देता है, उस सबमें एक मैं ही चेतन रूप में व्याप्त हूँ । जब हम इस बात को समझ लेते हैं, तब हमें प्राणियों के साथ व्यवहार के लिये ही एक नया दृष्टिकोण नहीं मिलता वरन् मनुष्य जीवन की वर्तमान गतिविधियों को भी हम दोषपूर्ण लगते हैं और यह मानने को विवश होते हैं कि हमारे जीवन में जो अभाव, अशक्ति और अज्ञान है, उसे भौतिक पदार्थों से नहीं दूर किया जा सकता वरन् आत्मा को विराट परमात्मा बनाकर ही हम कष्टों से मुक्ति और सच्चे आनन्द की उपलब्धि कर सकते हैं ।

योगवासिष्ठ गीता आदि ग्रन्थों में सम्पूर्ण जीवों में एक ही शक्ति और चेतन सत्ता के विद्यमान होने के वैज्ञानिक रहस्यों पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है । पैंगलोपनिषद में ब्रह्म के द्वारा सृष्टि रचना पर बड़ा सूक्ष्म प्रकाश डाला गया है और बताया गया है कि एक ही तत्व किस प्रकार विभिन्न जीव और पदार्थों का अस्तित्व धारण करता चला गया । पैंगल ऋषि महर्षि याज्ञवल्क्य के पास जाते हैं और तप करते हैं । १२ वर्ष तक तप करने से जब उनकी आत्मा शुद्ध हो जाती है, तब वे महर्षि से कहते हैं **'परम् रहस्य कैवल्य मनुब्रूहीति प्रपच्छ'** भगवन् आप मुझे परम् रहस्यकारी 'कैवल्य' का उपदेश करें । महर्षि याज्ञवल्क्य ने उन्हें बताया सृष्टि के आदि में केवल सत् ही था । वही नित्य, मुक्त, अविकारी, सत्य, ज्ञान, आनन्द से पूर्ण सनातन एकमात्र अद्वितीय ब्रह्म है, उसी से लाल, श्वेत, कृष्ण गुण वाली प्रकृति उत्पन्न हुई और यह चराचर जगत बन गया ।

शेर बहुत हिंसक जन्तु है किन्तु समझ, सौन्दर्य और वात्सल्य जैसे गुण उसमें भी विद्यमान हैं । वे अपने पारिवारिक जीवन में बहुत निष्ठावान होते हैं । आजन्म गृहस्थ जीवन की मर्यादाओं का पालन करते हैं और सभी पत्नियाँ एक बार प्रणय सूत्र में आबद्ध होने के पश्चात् अपने पति के साथ सम्बद्ध बनी रहती हैं । शेर और शेरनी का कदाचित् ही कभी तलाक होता है । बच्चों को वे दोनों मिल-जुलकर बड़े लाड़-चाव से पालते हैं । प्रसिद्ध जीवशास्त्री श्री सलीम आलिम ने अनेक जीवों के अध्ययन के बाद बताया कि बिटेन में पाये जाने वाले अधिकांश छोटे पक्षी एक पत्नीव्रत जीवन-यापन करते हैं । योरोप में पाया जाने वाला स्टारलिंग जो एक प्रकार से मैना की आकृति का पक्षी है, दिसम्बर के महीने में इसके विनाश के दिन होते हैं, कई बार तो आधे स्टारलिंग तक मर जाते हैं, उनमें से कइयों के जोड़े बिछुड़ चुके होते हैं । इस आघात को सहन करना और प्रेमविहीन जीवन-यापन करना स्टारलिंग के लिये कठिन पड़ता है, इन दिनों उनका बिलखना देखकर भावुक मनुष्यों से भी ऊँची इनकी मन:स्थिति प्रतीत होती है ।

हमारे देश में पाये जाने वाला बया पक्षी दाम्पत्य जीवन में निष्ठावान नहीं रहता और इस भूल का दण्ड भुगतता है । वह कई-कई विवाह करके अपने घोंसले में बहुधा कई-कई पत्नियाँ ले आता है और फिर उसकी पत्नियों में परस्पर द्वेष-भाव, मार-पीट, काट-कलह होती है, उस मार-धाड़ में उसकी भी काफी मरम्मत होती रहती है और बया अपनी भूल पर पछताता रहता है ।

यह उदाहरण जहाँ यह बताते हैं कि मनुष्य जैसी बुद्धिशीलता, चतुरता, संसार के सब प्राणियों में होने से वे सब एक ही जाति के जीव हैं, सब एक आत्मा के अंश हैं और उन्हें एक ही सार्वभौम नियम का पालन कर सुखी रहने और तोडने पर दु:ख पाने को बाध्य होना पड़ता है ।

डॉ० जे० डी० हक्सले चिड़ियों के जीवन के अध्ययन में बड़ी रुचि रखते थे । एक विलायती पक्षी क्रमटी का विवरण देते हुए उन्होंने लिखा—"यह चिड़िया वसन्त आगमन पर विवाह की तैयारी करती है । नर एक स्थान पर बैठकर गाना गाता है । वह पेड़ों की टहनियाँ आदि एकत्रित करके रखता है और यह दिखाने का प्रयत्न करता है, मानो उसे उपार्जन, संरक्षण एवं गृहस्थ निर्माण की कला की समुचित सामर्थ्य उपलब्ध है ।" मनुष्य को भी तो विवाह से पूर्व अपनी क्षमता की ऐसी ही परीक्षा कर लेनी चाहिए, यदि उसमें उतनी योग्यता न हो तो विवाह की जिम्मेदारी वहन करने का दुस्साहस नहीं ही करना चाहिए ।

मादा क्रमटी नर के पास से गुजरती है और उसकी योग्यता परख लेती है, तभी उसका प्रणय स्वीकार करती है । कई दिन मादा परखती रहती है, कहीं उसे झूठे प्रलोभन तो नहीं दिये जा रहे हैं । जब पूरा विश्वास हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है, तभी नर मादा दोनों मिलकर घोंसला बनाने की तैयारी करते हैं । अण्डे सेने का काम भी दोनों मिल-जुलकर बारी-बारी से करते हैं ।

ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं, जो यह बताते हैं कि संसार में जो भी विविधता है शरीर और प्रकृति की है । चेतना सबमें एक है, मनुष्य की यदि कुछ विशेषता है तो यही कि उसमें विवेक भी है और वह अपनी चेतना को समझने और उसे सम्पूर्ण प्राणियों की आत्मचेतना के साथ जोड़ते हुए, विश्व विराट की अनुभूति की क्षमता से सम्पन्न है, यदि वह इसी उद्देश्य को पूरा कर लेता है तो इसी नर शरीर से नारायण जैसी पूर्णता में परिणत हो सकता है ।

वे भी बोलते हैं, कोई समझे तो

भाषा और साहित्य द्वारा अपने विचार अभिव्यक्त करने और अपनी संवेदना से दूसरे साथियों को परिचित कराने की क्षमता सृष्टि के किसी भी जीवधारी को नहीं मिली है । केवल मनुष्य ऐसा है जिसे यह सुविधा प्राप्त हुई है । किसी भी प्राणी को अपने समीपवर्ती या दूरवर्ती किसी अन्य प्राणी से कुछ कहना, बताना हो तो वे न बोलकर बता सकते हैं और न लिखकर । यह विभूति तो परमात्मा ने अपने उत्तराधिकारी राजकुमार मनुष्य को ही दी है ।

यह मान्यता तभी तक सही है, जब तक कि मनुष्य अपने इस विशेष रूप से उपलब्ध उपहार का उपयोग मानवेतर जीवों की अपेक्षा उत्कृष्ट दिशा, आत्मशोध, आत्मकल्याण और लोक-मंगल के लिए करता है । विचार, चिन्तन, मनन और प्रतिपादन की विशेषता मनुष्य को छोड़ कर और अन्य किसी भी प्राणी को प्राप्त नहीं है । यह सारी योग्यतायें मनुष्य को ही मिली हैं, यदि वह उनका उपयोग अपने स्वार्थ तक ही सीमित न रखकर पुण्य-परमार्थ में करता है, तब तो यह ईश्वरीय अनुदान भी सार्थक है यदि वह केवल लौकिक, भौतिक और इन्द्रिय सुखों की पूर्ति तथा विकास में ही इस योग्यता को खर्च करता है तो यही मानना पड़ेगा कि उसमें और अन्य क्षुद्र कहे जाने वाले जीव-जन्तुओं में कोई अन्तर नहीं है ।

यह बात जीवशास्त्र में अब तक हुई उपलब्धि का अध्ययन करने से भी सिद्ध हो जाती है क्योंकि मनुष्येतर प्राणियों की भी अपनी भाषा है । वह मूक तो है पर मनुष्य को मिली बौद्धिक क्षमता से उनकी क्षमता कुछ कम नहीं है । वे अपनी इस भाषा का उपयोग करके भी मनुष्य की अपेक्षा कहीं अधिक व्यवस्थित, अनुशासित और सुख-शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं ।

व्यवस्था बुद्धि, जीव-जन्तुओं की विलक्षण बुद्धिमत्ता

प्रसिद्ध जीववैज्ञानिक रोमेन्स को एक बार बड़ा कौतूहल हुआ कि एक खोजी मधुमक्खी सैकड़ों मील दूर जाकर कोई पुष्पोद्यान अथवा जलाशय देखकर आती है, उसकी सूचना वह अन्य मधुमक्खियों को कैसे देती है? उन्होंने शीशे के छल्ले बनाकर मधुमक्खी के छत्ते में फिट कर दिये फिर कुछ मधुमक्खियों को विशेष प्रकार के रंगों से रंग दिया, तब कहीं उनकी विचार-विनिमय प्रणाली का अध्ययन करना सम्भव हुआ ।

एक मधुमक्खी उड़ी और किसी दिशा में चली गई । वहाँ उसे ऐसे फूलों के पौधे मिले जो फूले भी थे और जिनमें पराग भी प्रचुर मात्रा में था । उसने कुछ परागकण इकट्ठे किए और मुँह में दबाये छत्ते को लौट आई । अन्य मधुमक्खियाँ उसे ऐसे घेरकर खड़ी हो गईं जैसे वह सब समाचार पाने के लिए उतावली हों । अब वह मधुमक्खी नाचने लगी वह एक गोलार्द्ध में नाचती थी और रह-रहकर नाचने की दिशा बदल देती थी, उससे अन्य मधुमखियों ने पता लगा लिया कि फूल और पराग यहाँ से किस दिशा में कितनी दूर पर हैं ? नाच बन्द करके उसने अपनी मूँछ सभी साथियों की मूँछ से स्पर्श कराकर कुछ संकेत दिया और फिर वह स्वयं भी अपने काम में जुट गई । यह नहीं कि उसने लोगों को सूचना देना भर पर्याप्त समझा हो वह तो उसका थोड़ी देर का अपना सामुदायिक कर्त्तव्य था, उसे पूरा करने के बाद भी वह अपना काम करती है, जबकि मनुष्य है कि एक काम मिल गया फिर वह दूसरा काम छूना भी पसन्द नहीं करेगा । हमारी बहुमुखी प्रतिभा के द्वार इसीलिए बन्द रहते हैं कि हम अपनी क्षमताओं को क्रियान्वित करने में भी लज्जा अनुभव करते हैं ।

श्री जगपति चतुर्वेदी ने अपनी पुस्तक 'जीव-जन्तुओं की बुद्धि' में इन संकेतों को स्पष्ट करते हुए बताया है कि यदि मधुमक्खी धीमे वेग से नाचती है तो उसका अर्थ यह होता है कि पराग की मात्रा जिसकी उसने खोज की है थोड़ी है । इसलिए वहाँ से थोड़ी मधुमक्खियाँ जाती हैं पर यदि नाच का वेग तेज है तो वह पराग की मात्रा अधिक होने का सूचक माना जाता है और मधुमक्खियाँ अधिक आ जाती हैं । यदि फूल १०० गज की दूरी पर है तो वह गोलार्द्ध में नाचती है, यदि उनकी दूरी २-३ मील है तो वह अँग्रेजी के आठ बनते हैं, उस शक्ल में नाचते हुए चक्कर काटती है । यह भी है कि वह एक मिनट में जितने बार चक्कर काटती है दूरी का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुमान उसी से होता है । उदाहरण के लिए यदि वह एक मिनट में २२ बार नाचती है तो फूल ३०० गज दूर होंगे । यदि दूरी ३००० गज है तो चक्करों की संख्या ११ ही होगी । इसी प्रकार वह दिशा भी नाचते हुए दायें-बायें दिशा काटकर व्यक्त करती है । आश्चर्य तो इस बात का है कि यह प्रशिक्षण उन्हें किन्हीं माता-पिता से न मिला होकर जन्मजात अन्तःप्रेरणा के रूप में मिलता है और यह बताता है कि अभिव्यक्ति चेतना का नैसर्गिक गुण है । इस गुण का उपयोग वे न केवल आहार जुटाने में वरन् छत्ते में अनुशासन, शत्रुओं से रक्षा एवं पारिवारिक व्यवस्थायें जुटाने में करते और बताते हैं कि मनुष्य भी यदि अपनी भाषा, साहित्य, कला का उपयोग तुच्छ भौतिक हितों में ही करता है तो वह हमसे पिछड़ा है क्योंकि हम उसकी अपेक्षा कहीं अधिक व्यवस्थित और शान्ति में हैं ।

प्रसिद्ध जीवशास्त्री प्रो० हीथ ने दीमक के जीवन का गहन अध्ययन किया है, उन्होंने 'जीव जन्तुओं की दुनिया' पुस्तक में उनके बीच प्रयुक्त होने वाली सांकेतिक भाषा के बड़े गूढ़ रहस्यों का भी पता लगाया, उन्होंने लिखा है कि दीमक जिस किले (बाम्बी) में रहती है, उसमें कई प्रकार के कमरे होते हैं । राजा-रानी एक विशेष भवन में रहते हैं शेष सब छोटे-छोटे कमरों में । कोई दीमक भूखी होती है तो वह मजदूर दीमक के सींग को स्पर्श करती है । यही उनका भोजन माँगना है । यदि भोजन माँगने वाला बच्चा है और वह भविष्य में उस किले का राजा बनने वाला हुआ तो उसकी भोजन माँगने की प्रक्रिया कुछ भिन्न रौबदार होगी । मजदूर दीमक अविलम्ब अपने मुँह से कोई तरल पदार्थ निकाल देती है, जो उस उत्तराधिकारी राजकुमार के आहार के काम आता है । यदि माँगने वाला कोई मजदूर हुआ तो मजदूर दीमक अपने पिछले हिस्से से आँतों से खाना निकालकर उसे देगा । यों दीमक की सार्वजनिक जीवन व्यवस्था बड़ी ही सुचारु होती है तथापि वह एक कीड़ा है और उसकी सारी चेष्टायें खाने-पीने और परिवार के भरण-पोषण, रक्षण तक ही सीमित है, मनुष्यों को मिली इन कलाओं का उपयोग भी यदि इन्हीं बातों तक सीमित रहे तो उसे भी दीमक की तरह का ही एक कीड़ा समझना चाहिये ।

चींटी अपने विचार प्रगट करने और एक-दूसरे को संवाद पहुँचाने में चाहे कितनी मूक भाषा का प्रयोग करती हो उसकी सूक्ष्मता और बुद्धिमता का अनुमान मेजर हैगस्टन के इस प्रयोग से ही लगाया जा सकता है । मेजर हैगस्टन ने एक बार चींटी के बिल के पास खाने का एक छोटा-सा टुकड़ा रख दिया, जो उनके अनुमान से एक चींटी नहीं उठा सकती थी । चींटी आई उसने उसे देखा और तुरन्त बिल में पहुँची और अपने साथ १० मजदूर चीटियाँ ले आई, ग्यारहों ने उसे उठाया और घर ले गईं इस बीच उन्होंने गुड़ के ढेले को पतली पेन्सिल जैसा बनाकर उसके तीन टुकड़े किये । पहला टुकड़ा आधा इन्च का था, दूसरा पौन इन्च और तीसरा लगभग डेढ़ इन्च का था । एक चींटी आई उसने तीनों टुकड़ों को देखा, इस बीच और भी कई चींटियाँ आईं और उन टुकड़ों को भिन्न-भिन्न दिशाओं और दूरियों में पड़ा देख गईं ।

थोड़ी देर पीछे चींटियों का समूह निकला जिसमें १६१ चींटियाँ थीं । बिल से निकलते ही उनमें से २९ चींटियाँ पूर्व की ओर चली गईं, जहाँ सबसे छोटा टुकड़ा पड़ा था, शेष में से ४४ दक्षिण की ओर जिधर दूसरा टुकड़ा पड़ा था, ८९ चींटियाँ उधर गईं जिधर सबसे बड़ा टुकड़ा था । तीनों दल बात की बात में तीनों टुकड़े उठा ले गए और मेजर साहब खड़े सोचते रह गये । यदि इन चींटियों में अनुभव करने, सोचने और अपने मन की बात को सांकेतिक रूप से दूसरी चींटियों को समझा देने की योग्यता न होती तो इतना व्यवस्थित कार्य वे कैसे कर लेतीं ? मनुष्य तो उससे भी सरल और स्पष्ट बुद्धि का स्वामी होकर भी उतनी व्यवस्था से नहीं रह पाता । परलोक की बात तो दूर अपनी बुद्धि का सही उपयोग न करके वह अपनी शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, सामाजिक अथवा राष्ट्रीय सभी क्षेत्रों में अव्यवस्थायें ही फैलाता और अशांति ही बढ़ाता है । यदि अपनी बौद्धिक क्षमता का उपयोग मनुष्य ने मूक पशु-पक्षियों, जीव-जन्तुओं की तरह केवल लौकिक हितों के लिये भी व्यवस्थित ढंग से किया होता तो सार्वजनिक क्षेत्र आज इतना दूषित और उलझा हुआ न होता । मनुष्य-जीवन आज दुःख, कष्ट, पीड़ा और कलह-क्लेश का अखाड़ा बना हुआ है, वह इस बौद्धिक सामर्थ्य के दुरुपयोग के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ।

गीध अशुभ पक्षी माना जाता है पर अपनी भावनायें, अपने विचार तो वह भी व्यक्त कर लेता है । एक गीध जब कोई मरा हुआ पशु देखता है तो किसी ऊँचे वृक्ष की छत पर बैठकर एक विशेष प्रकार से 'चैंव-चैंव' की आवाज करके गर्दन घुमाकर संकेत करता है । इस संकेत में मरे पशु की किस्म, स्थान और कितने गीधों के लिये भोजन उपलब्ध है वह सारी बातें कह देता है । इस आवाज को जो भी दूसरा गीध सुनता है चलने की तैयारी करने से पूर्व उसी तरह का संकेत अपने पीछे वाले गीधों के लिये कर देता है । अपनी जाति के प्रति आत्मीयता का यह भाव मनुष्य में भी आ गया होता तो आज लोग जाति-पाँति, ऊँच-नीच, वर्ग-भेद को लेकर झगड़ते नहीं । गीध एक-एक कर इकट्ठा होने लगते हैं, जितने आवश्यक थे उतने गीध आ जाने पर सब प्रथम संकेत देने वाले को संकेत देकर आगे चलने को कहते हैं, क्योंकि उसे उस समय उस पशु के माँस का सबसे नरम भाग खाने का अधिकार होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

६.३५ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

हम यह सोचते हैं कि अन्य जीव-जन्तु हमारी तरह बोल नहीं सकते तो उनमें विचार करने की क्षमता का अभाव होगा । बुद्धि उनमें भी होती है । बातचीत वे भी कर लेते हैं । **'खग जाने खग ही की भाषा-ताते उमा गुप्त कर राखा'** वाली बात है ।

ये जीव-जन्तु हमें गूँगे-बहरे दिखाई पड़ते हैं पर वस्तुत: वैसा है नहीं । वे आपस में घुल-घुल कर बातें करते हैं, एक-दूसरे के साथ विचार-विनिमय करते हैं और पारस्परिक सहयोग जुटाने में उस संभाषण का प्रयोग करते हैं । यह अलग बात है कि उनके सम्भाषण उपकरण मनुष्यों से भिन्न हैं और उनका शब्द कोष हमारे उच्चारण विधान से मेल नहीं खाता ।

मिशिगन विश्वविद्यालय के कीटविज्ञानी डॉ० बाडाँक के अनुसार कीड़े-मकोड़े भी परस्पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं, यदि उनमें यह क्षमता न रही होती तो उनका जीवित रहना ही असम्भव हो जाता, पक्षी निरर्थक चहचहाते मालूम पड़ते हैं, पर वस्तुत: वे अपनी प्रसन्नता, व्यथा, योजना, जानकारी आदि की सूचनायें अपने साथियों को देते हैं । ध्वनि के साथ-साथ उनकी मन:स्थिति घुली होती है, जिसकी जानकारी उस वर्ग के अन्य पक्षी प्राप्त करते हैं और उससे लाभ उठाते हैं । खतरा किसी एक को मालूम पड़ जाय तो वह अपनी भाषा में अपने साथियों को सूचित कर देता है, फिर सब मिलकर उसी का उच्चारण करते हैं ताकि न केवल साथियों को आगाही हो जाय वरन् शिकारी शिशु को उनकी सर्तकता एवं आक्रामक सम्भावना के कारण आक्रमण करने का इरादा ही बदलना पड़े ।

छोटे कीड़ों की भाषा नहीं होती वे अंग स्पर्श से विचारों का आदान-प्रदान करते हैं । वह स्पर्श ऐसे ही निरर्थक नहीं होता वरन् उसकी एक व्यवस्थित संकेत शृंखला होती है, जिससे उस वर्ग के कीड़े भली प्रकार परिचित होते हैं । एक-दूसरे के किस अंग को किस पकड़ के साथ छुएँ और क्या हलचल करें इस प्रक्रिया से वे साथियों को अपने मन की बात बता देते हैं । ध्वनि, स्पर्श, दृष्टि और हलचल के माध्यम से छोटे जीवों का आदान-प्रदान चलता है । हम अपने स्तर पर उन्हें मूक कह सकते हैं पर वस्तुत: बोलते वे भी हैं । उनका उच्चारण इतना मन्द होता है कि हमारे कान उन्हें सुन-समझ नहीं सकते, फिर भी वे जिह्वा से न सही शरीर के विभिन्न अंगों की हलचलों या रगड़ से ऐसी क्रमबद्ध ध्वनि उत्पन्न करते हैं जिसे उनकी भाषा कहा जा सकता है ।

बरसात में मेंढकों की टर्र-टर्र अकारण नहीं होती इसमें वे अपनी मानसिक स्थिति का परिचय देते हैं । टिड्डे अपने पंजों को पिछले पैरों से रगड़कर ध्वनि उत्पन्न करते हैं, झींगुर की टाँगें मनुष्य द्वारा बजाये जाने वाले किसी वाद्ययन्त्र की तुलना का ध्वनि-प्रवाह निसृत करती हैं । जर्मन कीटविज्ञानी फेवर ने टिड्डों की भाषा खोजने के लिए योरोप भर के जंगलों की खाक छानी है । उसने टिड्डों के लगभग ४०० ध्वनि-संकेत और चौदह स्तर के प्रणय निवेदन टेप किये हैं । इन ध्वनियों को टेप पर सुनकर भी अन्य कीड़े उस जानकारी के अनुरूप ही अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं । योरोप के ग्राइलस, कम्पेस्टस, ग्रावाइमैकुलेटस आदि झींगुर जातियाँ अपने अन्य साथियों की तुलना में अधिक मुखर होती हैं । मादा और नर के स्वरों में अन्तर होता है, इससे वे लिंग भेद को आसानी से पहचान लेते हैं और तदनुरूप शिष्टाचार बरतते हैं ।

मधुमक्खी विशेषज्ञ मार्टिन लिण्डेयर ने मधुमक्खियों के आदान-प्रदान के माध्यम को नृत्य माना है । वे अनेक तरह की कलाबाजियों के नृत्य करती हैं और संग्रहीत सूचनाओं की जानकारी छत्ते के अन्य साथियों को देती हैं । इसी आधार पर उनका झुण्ड मकरन्द प्राप्त करने के लिए उपयुक्त दिशा की जानकारी पाता है और कूच करता है । कुछ मक्खियाँ इस खोज-कला में और सूचना-सम्वाद देने की कुशलता में बहुत प्रवीण होती हैं, वे प्राय: इसी कार्य को रुचिपूर्वक करती रहती हैं ।

प्रो० रावर्ट हिण्डे के अनुसार पक्षी ही नहीं कीड़े भी आँखों के इशारे से अपने बहुत-से मनोभाव साथियों को बता देते हैं । यों आँखों की हलचल और चितवन में भी थोड़ा बहुत अन्तर पड़ता है, पर पुतलियों की सम्वेदनशीलता में वैसा बहुत कुछ रहता है जिससे एक-दूसरे की भावनाओं का आदान-प्रदान हो सके । इस दृष्टि से छोटे प्राणी मनुष्यों से पीछे नहीं हैं । यों मनुष्य भी आँखों और पुतलियों के सहारे अपने गुह्य मन:स्थिति को जाने-अनजाने साथियों पर प्रकट करते रहते हैं ।

कार्लवाल फ्रिच ने मधुमक्खी नृत्य की अनेक मुद्राओं के फिल्म लिये हैं और बताया है कि उनकी क्या हलचल, कितनी दूर किस दिशा में, किस स्तर की, क्या स्थिति है, इसकी सूचना ठीक प्रकार देती हैं । मधुमक्खियों की इस संकेत भाषा के आधार पर उनने परीक्षा की तो उनका प्रतिपादन शत-प्रतिशत सही निकला ।

जुगनू की तरह और भी कई कीड़े अपने शरीर से प्रकाश निकालते हैं । कैलकीड कीड़ा तो रेलवे सिगनलों की तरह लाल, हरी रोशनी जलाता-बुझाता रहता है । यह प्रकाश सदा एक जैसा नहीं चमकता । उसके जलने-बुझने, मन्द एवं तीव्र होने में जो बारीक अन्तर रहते हैं, उससे वे अपनी जाति वालों से आपसी वार्तालाप करते रहते हैं ।

कितने ही जीवों का काम उनकी घ्राण शक्ति से ही चलता है । जीवनोपयोगी कितनी ही जानकारियाँ वे

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तुओं एवं जीवों के शरीरों से निकलने वाली गन्ध के आधार पर ही प्राप्त करते हैं । इतनी ही नहीं उनकी विभिन्न शारीरिक, मानसिक परिस्थितियों से विभिन्न प्रकार की गन्धें निकलती हैं, उस वर्ग के प्राणी इन्हें सूँघकर एक-दूसरे की स्थिति का परिचय प्राप्त करते रहते हैं । रति प्रयोजन के लिए उनके शरीरों से विशेष रूप से तीव्र गन्ध निकलती है, यही वह सूत्र है जो उनकी वंश रक्षा की व्यवस्था जुटाये रहता है । बहुत छोटे अदृश्य कीड़े तो इस गन्ध के आदान-प्रदान से ही गर्भधारण कर लेते हैं । ई० ए० विल्सन के अनुसार चींटियाँ अपने शरीर से एक रस निकालतीं और टपकाती चलती हैं ताकि अन्य चींटियाँ उनके आह्वान पर विशेष प्रयोजन के लिए उसी रास्ते को सूँघती बढ़ती चली आवें । चींटियों का पंक्तिबद्ध चलना इसी गन्ध के आधार पर होता है ।

गंध के इस स्रवण और उसके माध्यम से पूर्ववाली चींटियों द्वारा छोड़े गये संकेत चिह्नों को चींटियों का संवाद या संदेश प्रेषण और ग्रहण ही कहा जाना चाहिए । यह तो सांकेतिक भाषा हुई । जीव-जन्तुओं के स्थिर संवाद की एक अलग ही प्रणाली है । उनकी अपनी भाषा है, इसमें कोई संदेह नहीं है ।

जीवों की भाषा—विलक्षणता

जिन्हें वाणी प्राप्त है वे अपने थोड़े-से शब्दों के सहारे ही काम चला लेते हैं । अपने हर्षोल्लास अथवा दु:ख-दर्द की अभिव्यक्ति वे उतने से उच्चारण में ही कर लेते हैं । इससे उनका जी हल्का होता है, उत्साह मिलता है तथा दूसरे साथियों को अपनी ही तरह उत्तेजित करते सम्वेदना उभारना सम्भव होता है । इससे उनका स्नेह, सौजन्य एवं सहयोग निखरता है । चिड़ियाँ जब चहचहाती हैं, उससे उनके शरीर का अंग संचालन भी होता है । इस उच्चारण और संचालन को देखकर उनके सजातीय यह पता लगा लेते हैं कि उसका अभिप्राय क्या है ? और उस जानकारी को प्राप्त करने के उपरान्त उन्हें क्या करना चाहिए ?

यही बात पशुओं के सम्बन्ध में है । उनके शब्द और भी स्पष्ट होते हैं । झींगुर, मच्छर, मक्खियाँ जैसे कीट-पतंग भी शब्दोच्चारण करते हैं । मेंढक जैसे छोटे जीव भी कर्णकटु शब्द बोलते हैं । हलकी आवाज तो प्राय: सभी जीवों की होती है । जिह्वा अथवा दूसरे अवयवों के सहारे वे ध्वनि करते और अपनी मन:स्थिति का अन्यों को परिचय देते हैं ।

हम मनुष्य यदि अन्य प्राणियों की भाषा समझने का प्रयत्न करें, उनकी अभिव्यक्तियों और आवश्यकताओं को अनुभव करें तो निस्संदेह अपने परिवार का अबकी अपेक्षा असंख्य गुना विस्तार हो सकता है और उसी अनुपात से आत्मीयता का क्षेत्र बढ़ सकता है । अभी तो ४०० करोड़ मनुष्यों के ही एक मानव समाज से हमारा परिचय है, उनमें भी भाषा की एकता से ही घनिष्टता एवं सहयोग का द्वार खुलता है । भाषा की दृष्टि से जिनके बीच आदान-प्रदान का माध्यम अभी नहीं बना है, वे मनुष्य समाज के सदस्य होते हुए भी एक-दूसरे से अपरिचित जैसी स्थिति में पड़े रहते हैं ।

मानवी भाषाओं के बीच एकता के क्षेत्र बढ़ाने के प्रयत्न चल रहे हैं । यदि प्राणियों की भाषा को समझने का क्षेत्र बढ़ सके तो जीवधारियों की दुनिया अब की अपेक्षा बहुत बड़ी हो सकती है । विकसित प्राणी अविकसितों को ऊँचा उठने का सहारा दे सकते हैं और अविकसितों के सहयोग का बहुत बड़ा लाभ मनुष्य जैसे विकासवानों को मिल सकता है । प्रयत्न करने पर और ध्यान देने पर हम जीवधारियों की भाषा समझने में बहुत कुछ प्रगति कर सकते हैं ।

बछड़े के रँभाने से पता चलता है कि उसकी जननी गाय उससे दूर चली गई है । चिड़ियों के नन्हें बच्चे भी माँ के दूर जाते ही चीं-चीं कर उठते हैं । पास आने पर पंख फड़-फड़ाकर प्रसन्नता प्रदर्शित करते हैं । कुत्ते का पिल्ला माँ की उपस्थिति में हर्ष-सूचक ध्वनि भिन्न रीति से करता है और दूर जाने पर रोने की आवाज भिन्न रूप से । दोनों स्थितियों में उसका स्वर एवं भंगिमा भिन्न-भिन्न होती है ।

इससे स्पष्ट है कि भाव सम्प्रेषण के लिए पशु-पक्षी भी विशिष्ट ध्वनि-क्रमों का निश्चित विधि से उच्चारण व प्रयोग करते हैं । यानी उनकी अपनी एक भाषा है । वे अपने वर्ग के जीव की भाषा ही समझते हैं । कुत्ता-कुत्ते की, गाय अपने बछड़ों, बैल व अन्य गायों की, चिड़िया-चिड़ियों की भाषा अच्छी तरह समझने में समर्थ हैं ।

बाघ की दहाड़ स्वर 'औं ...घ् ... ह' अथवा ऊं...घ् ...ह जैसा होता है । गुर्राहट 'गर्र र् र्' जैसी होती है । ऋतुमती शेरनी शेर को बार-बार पुकारती है । शेर उसे सुनकर वहीं से प्रत्युतर देता है और दोनों एक-दूसरे के समीप पहुँचते हैं । प्रणयकेलि के समय दोनों बहुत ही तेज आवाज करते हैं, मानो प्रचण्ड युद्ध हो रहा हो ।

बाघ, चीते या तेंदुए बड़ी सतर्क चाल चलते हैं । उनकी पहचान का सर्वोत्तम माध्यम काकड़, चीतल, साँभर और हिरन की उच्च ध्वनियाँ ही हैं । काकड़ की आवाज 'वोक्' जैसी होती है, नर चीतल भारी, दीर्घ सी ध्वनि से सतर्क करता है, साँभर तीव्र शंख ध्वनि की तरह 'पैंड' की आवाज करता है और श्रोता को सहसा चौंका देता है । बाघ, चीता, बघेरा या तेंदुआ की उपस्थिति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का सर्वाधिक प्रामाणिक अनुमान इन्हीं आवाजों से होता है । साथ ही उत्तेजित बन्दरों की 'खो-खो' या लंगूर की 'खुर्र-खुर्र' भी इन हिंसक प्राणियों की उपस्थिति का संकेत है ।

यह हुई वन की 'भाषा' । वन की 'लिपि' को भी समझना आवश्यक है । नरम या आर्द्र मिट्टी पर पशुओं के पद चिह्न ही यह लिपि है । उनसे वहाँ से गुजरने वाले पशु का वर्ग, आकार, गुजरने का समय तथा दिशा का सूचक होता है । वनवासी इन चिह्नों को पहचानने में प्रवीण होते हैं । पटु शिकारी भी इसमें दक्ष होते हैं । जरा-सी दबी घास या टूटी हुई डालें, सूखी कड़ी भूमि में भी पशु के जाने-आने की दिशा का पता चल जाता है ।

वन में पशु-पक्षियों की बोलियों के भी अभिप्राय को समझना आवश्यक है । एक-दूसरे को अपनी उपस्थिति की सूचना देने के लिए अथवा मौज की लहर में हाथी जोरदार स्वर में चिंघाड़ते हैं इं...धा..र । जबकि भय या उत्तेजना की स्थिति में वे फटी-सी और तीखी ध्वनि करते हैं- 'पैं....ऐं....ऐं' । कभी-कभी हाथी 'गुर्र-र्र-र्र' ध्वनि से गुर्राते हैं, जो क्रोध का परिचायक है । मानो कोई मोटर इन्जन चालू किया गया हो ।

हाथी कभी-कभी फुफकारते हैं तेजी से । एक-दो फर्लांग दूर भी फुफकारने पर लगता है मानो १५-२० फुट दूर से ही ध्वनि आ रही हो ।

शहर और नगरों की होने वाली हलचलों का आभास हवा में गूँजने वाले शोर-शराबे से लग जाता है । कार, स्कूटर, ट्रक आदि के सड़क पर से गुजरने से उनकी आवाजों में रहने वाले अन्तर से यह पता चलता है कि कौन वाहन गुजरा ? ताँगा, इक्का, धकेल, बैलगाड़ी ऊँटगाड़ी के आवागमन की बात बिना उन्हें देखे ही मात्र ध्वनि के सहारे जानी जा सकती है । अगल-बगल में बच्चों की उछल-कूद और बड़ों की भगदड़ में जो अन्तर होता है, उसे कमरे में बैठकर भी बिना देखे जाना जा सकता है । हवा की तेजी वर्षा की गति आदि की हलचल कान से सुनकर आँखें मींचे-मींचे भी जानी जा सकती हैं । हवा में गूँजने वाली ध्वनियों के सहारे हम सहज ही समीपवर्ती वातावरण का अनुमान लगा सकते हैं ।

जंगल की भी अपनी भाषा है । वन्य पशु-पक्षियों की उपस्थिति तथा हरकतों का अनुमान उनके संसर्ग से उत्पन्न होने वाली आवाजों के आधार पर सहज ही जाना जा सकता है । वन क्षेत्र के निवासी उनके अभ्यस्त भी होते हैं । शिकारियों को भाषा की अच्छी जानकारी होती है । जंगलों में निवास अथवा काम करने वाले यदि जंगल की भाषा न समझें तो उनके सामने प्राण संकट खड़ा रहेगा । अस्तु जिस प्रकार शहर, गाँव में रहने वालों को उसे क्षेत्र के निवासियों से सम्पर्क साधने के लिये स्थानीय भाषा की जानकारी प्राप्त करनी होती है, उसी प्रकार जिनका वन्य प्रदेशों और उनमें रहने वाले प्राणियों से वास्ता पड़ता है उन्हें जंगल की भाषा जानना भी आवश्यक होता है ।

ग्रीष्म ऋतु में ताजे पद-चिह्न भी तेज हवा द्वारा धूल से भरकर पुराने लगने लगते हैं और शरद ऋतु में नरम मिट्टी पर छायादार हिस्से में कुछ पुराने निशान भी ताजे जैसे दीखते हैं । अभ्यास से सही पहचान की क्षमता आती है ।

बाघ और तेंदुए के पद-चिह्नों का कुत्तों के पद-चिह्नों से साम्य होता है । पर बाघ और तेंदुऐ के पैरों के चिह्न कुत्ते के पग-चिह्नों से चौगुने से भी ज्यादा बड़े होते हैं । कुत्ते के पदचिन्हों में पंजों के आगे नाखून के चिह्न दीखते हैं, बाघ तेंदुऐ के नाखून चलते समय सिमटकर पंजों की गद्दियों में छिप जाते हैं । अत: उनके निशान नहीं होते, बाघ तेंदुऐ पग चिह्न गोल से होते हैं, सामने की ओर चार छोटी उँगलियों के चिह्न तथा पीछे गद्दी का तिकोना-सा निशान होता है ।

हाथी के पग चिह्न चक्की के पाट से होते हैं । हाथी के पैर के नाखूनों का निशान जिस ओर दीखे, वही उनके जाने की दिशा होती है । घास के पौधे की गिरी हुई या झुकी स्थिति से भी हाथी के जाने-आने की दिशा ज्ञात हो जाती हैं । टूटी घास के हरे या सूखे होने से गुजरने के समय का अनुमान हो जाता है । युवा हाथी-हथनियों के तलवे साफ और पद चिह्न भी साफ होते हैं, किन्तु प्रौढ़ वृद्ध हाथियों के पद चिह्नों में उनके पैरों की विवाइयों का निशान स्पष्ट दीख जाता है ।

भालू के पिछले पैरों का निशान मानव पग-चिह्नों की ही तरह किन्तु कुछ कम लम्बा होता है । ऐड़ी और पंजों के बीच की दूरी भी कम होती है । अगले पैरों के निशान लगभग आयताकार होते हैं । भालू के पग-चिह्नों में नाखूनों के निशान भी दीखते हैं ।

टूटी शाखाएँ, टूटे या चर्वित घास, पेड़ों की छिली हुई सी, नीचे गिरी छाल आदि से हाथियों के आने-जाने के बारे में बहुत कुछ पता चल जाता है ।

नमकीन मिट्टी वाले स्थान में 'चाटन' के आस-पास छिपकर पशु देखे जा सकते हैं । पशुओं की लीद, मेंगनी इत्यादि से भी उनके बावत कई सूचनाएँ मिल जाती हैं । इसी तरह भालू, चीते, बाघों द्वारा पेड़ों के तनों पर पैना करने के लिए नाखूनों की रगड़ के चिह्नों से भी कई बातें जानी जाती हैं ।

जब हाथी किसी शाखा को तोड़ता है, तो 'कड़ाक' या 'करड़ड़' की लम्बी खिंचती-सी ध्वनि होती है । ऐसी ध्वनि की शीघ्र-शीघ्र एवं बार-बार आवृत्ति हो तो अनुमान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता है कि वहाँ हाथियों का पूरा समूह है । बन्दर जब डाल तोड़ते हैं तो ध्वनि नीचे से नहीं, पेड़ की ऊँचाई से आती है और वह हल्की तथा छोटी होती है । कुल्हाड़ी से काटी जा रही लकड़ी से 'खट-खट' आवाज आती है और उसमें नियमितता होती है । कठफोड़ा जब लकड़ी में चोंच मारता है तो सर्वथा भिन्न 'खुट-खुट' की ध्वनि होती है ।

जैसे जंगल में एक डाल टूटने की ध्वनि होती है-सम्भव है, यह किसी हाथी ने तोड़ी हो या बन्दरों की उछल-कूद से टूटी हो या फिर लकड़हारे ने लकड़ी काटी हो । इसी तरह पेड़ों के हिलने के भी कई कारण सम्भव हैं— कपि-समूह क्रीड़ाएँ, चीतल साँभर आदि का चलना या हाथियों की हलचल ।

इन सबकी समुचित जानकारी द्वारा ही चल रही गतिविधियों को समझा जा सकता है और तदनुकूल प्रतिक्रिया व तत्परता सम्भव है ।

पत्तों-पेड़ों के हिलने से आने वाली ध्वनियाँ भी भिन्न-भिन्न होती हैं । हिरण, चीतल जैसे खुर-धारी प्राणियों के चलने से अधिक आवाज निकलती है । कठोर खुरों से पत्ते भी जोर से दबते हैं और अगल-बगल की झाड़ियाँ, पत्तियाँ भी हिलती हैं । हाथी मंदगामी तो होता ही है । उसके तलुए भी नरम होते हैं । इसलिए भूमि पर रखे जाने पर उन पैरों से कोई विशेष ध्वनि नहीं होती, पर उसके शरीर की रगड़ से पेड़-पौधे हिलते खूब हैं ।

साँप जब घास-फूँस या शुष्क पत्तों पर चलते हैं, तो सरसराहट होती है । गोह के चलने पर भिन्न तरह की ध्वनि होती है, खड़-खड़, खड़-खड क्योंकि उसके पाँव छोटे-छोटे होते है और दुम जमीन पर घिसटती चलती है ।

अन्य प्राणियों की भाषा समझने एवं शब्दों को पहचानने के कठिनाई भी हो सकती है, पर भावों की परख तो और सरल है । भाषा में ध्वनि और शब्दों की भिन्नता रहने से उन्हें समझने में कठिनाई हो सकती है, पर भावाभिव्यक्ति तो सार्वभौम है । संसार के किसी भी कोने में जाया जाय कष्ट के अवसर पर प्रायः सभी की विपन्न मुखाकृति होगी । सभी की आँखों में से आँसू टपकेंगे और विषाद की दर्द भरी छाया उभर रही होगी । प्रसन्नता के समय सर्वत्र हँसी, मुस्कराहट, आँखों में चमक दिखाई देगी । यही बात अन्य भावनाओं के सम्बन्ध में है । मुखाकृति से अन्तरंग में घुमड़ती हुई शोक, रोष, क्रोध, आवेश, भय, चिन्ता, निराशा, उत्साह, उल्लास, कामुकता आदि के भाव सहज ही उभरते देखे जा सकते हैं ।

मूक, किन्तु विलक्षणता सम्पन्न ये पशु-पक्षी

जन्म के समय मनुष्य पशु से अधिक बेहतर स्थिति में नहीं होता । पोषण एवं संरक्षण की तुरन्त व्यवस्था न बने तो अधिक समय तक जीवित रहना मानव शिशु के लिए कठिन हो जायेगा । नौ माह के पूर्व तो वह अपने पैरों न तो चल सकता और न ही अपने हाथों आहार ग्रहण कर पाता है । पूर्णतः वह माता-पिता पर आश्रित होता तथा उनकी ही कृपा पर जीवित रहता है । शरीर की दृष्टि से पशु अधिक समर्थ होते हैं । जन्मने के कुछ ही घण्टे बाद अपने पैरों चलने लगते तथा अपने आप आहार ढूँढ़ने लगते हैं । समर्थ, बुद्धिमान, विचारवान तो मनुष्य प्रशिक्षण-शिक्षण के आधार पर बनता है । उसका अवसर न मिले, ज्ञानार्जन के लिए समाज का सम्पर्क न प्राप्त हो तो मनुष्य की स्थिति पशुओं से अधिक अच्छी न होगी ।

कार्य-कुशलता तथा अद्भुत मेधा शक्ति का आधार वह शिक्षा है, जो उसे विभिन्न रूपों में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष माध्यमों से मिलती रहती है । मनुष्येतर विकसित जीवों को भी प्रशिक्षित किया जा सके तो वे अनेकों काम ऐसे कर सकते हैं, जिनके लिए आधुनिक टेक्नालाजी का प्रयोग अथवा मनुष्यों का उपयोग किया जाता है । प्रकृति ने मनुष्य जितनी तो नहीं पर उन्हें भी कामचलाऊ बुद्धि दी है, जिसका प्रयोग वे अपने दैनन्दिन कार्यों के लिए करते हैं । पर उनके सामान्य ढर्रे से अलग हटकर ऊँचे स्तर का काम भी लिया जा सकता है । श्रम के लिए परम्परागत रूप में कुछ पशुओं का उपयोग सदियों पूर्व से होता भी रहा है, उसमें कुछ नयी कड़ियाँ दूसरे जीवों की जोड़ी जा सकती हैं । आवश्यकता इतनी भर है कि जीव-जन्तुओं की सामर्थ्य को परखा तथा उनकी सांकेतिक भाषा को समझा जा सके तथा उनके आधार पर उनके शिक्षण की व्यवस्था बनायी जा सके ।

बातचीत की कला में मनुष्य विशेष रूप से दक्ष है । यह उस भाषा का चमत्कार है जो मनुष्य को विरासत के रूप में अपने पूर्वजों से मिली है । बच्चे को भाषा ज्ञान विशेष रूप से नहीं कराना पड़ता । परिवार के लोगों के सम्पर्क से ही वह सीख लेता है । हिन्दी भाषी परिवारों के बालक हिन्दी, अँग्रेजी भाषी परिवारों के बच्चे अँग्रेजी तथा अन्य भाषी परिवारों के बालक पैतृक भाषा सहज ही सीख लेते हैं । बच्चे के माँ-बाप गूँगे तथा बहरे हों तथा उसे समाज का सम्पर्क न मिले तो वह भी बोलना नहीं सीख सकेगा । देखा जाता है कि जो बच्चे सुन नहीं पाते वे बोल भी नहीं सकते और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्ततः वे गूँगे हो जाते हैं । भाषा की जानकारी उन तक नहीं पहुँच पाती । संकेतों के आधार पर ऐसे बालक किसी तरह अपना काम चलाते हैं ।

मनुष्येतर जीवों के पास भी भाषा की कोई विरासत नहीं है, पर वे वार्तालाप गूँगे व्यक्तियों की तरह सांकेतिक आधारों पर करते हैं । विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ देने के लिए अन्य जीव विभिन्न तरह की आवाजें करते हैं । चिड़ियाँ खतरे की सूचना देने के लिए एक तरह की तथा प्रसन्नता अभिव्यक्ति में दूसरे तरह की आवाज करती हैं । कुत्ते के भौंकने में वार्तालाप छिपा होता है, जिसका प्रत्युत्तर दूसरे कुत्ते उसी भाषा में देते हैं । बन्दर अपनी इच्छा को ध्वनियों एवं अभिव्यक्तियों से दर्शाते हैं ।

वर्षों पूर्व नोमचौम्सकी नामक एक विद्वान ने कहा था कि बोलना अन्य जीवों के लिए प्रकृति ने सम्भव नहीं बनाया है, अब वह कथन गलत सिद्ध हो चुका है । मनो-वैज्ञानिकों को अब दूसरे जीवों के सम्पर्क प्रशिक्षण में आशातीत सफलता मिली है । पक्षियों, कबूतरों, चिंपाजी, बन्दरों, तोता, मैना तथा कुत्ते को सांकेतिक भाषा सिखाने में विशेष रूप से सफलता मिली है ।

तोते की स्मरण शक्ति अन्य पक्षियों की तुलना में तीव्र होती है । फ्रांसिसी भाषाविदों का निष्कर्ष है कि तोता १०० शब्द आसानी से सीख सकता है । जे० एम० रिचर्डसन नामक एक विद्वान ने एक तोते को बाइबिल का एक अध्याय पूरा कंठस्थ कराने में सफलता पायी थी । ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि 'विस्टन चर्चिल' की पुत्री 'सारा चर्चिल' ने एक मैना पाली थी जो ब्रिटिश राष्ट्रगान के कुछ अंश मधुर स्वर में गा लेती थी । द्वितीय महायुद्ध के दौरान वह मित्र राष्ट्र के घायल सैनिकों का मनोरंजन अपने गायन से करती थी ।

प्रख्यात उपन्यासकार थोमसमान की पुत्री एलिजावेथमान ने एक 'पैगी' नामक कुतिया को प्रशिक्षित किया । भौंकने के माध्यम से ही उसे भाषा ज्ञान कराने में एलिजावेथ ने सफलता पायी । पैगी कोई भी बात सुनकर उसका अर्थ समझ लेती थी । उसके उत्तर की अभिव्यक्ति प्लास्टिक के अक्षरों के माध्यम से होती थी । अक्षर उसके आगे रख दिए जाते थे तो वह उन्हें जोड़कर अपना उत्तर प्रस्तुत करती थी ।

बर्जीनिया में लेडी बैंडर नामक घोड़े ने चीनी भाषा बोलने में सफलता पा ली थी । वह प्रश्नों का उत्तर लकड़ी के अक्षर खण्ड जोड़कर दिया करता था जिसे उसके प्रशिक्षक सामने रख देते थे । एक अँग्रेजी दैनिक में उस घोड़े की विशेषताओं का विस्तृत विवरण छपा था ।

संसार के कितने ही देशों में संचार उपग्रह के इस युग में भी कबूतरों के माध्यम से सन्देश प्रसारण का कार्य लिया जा रहा है । रूस, जर्मनी जैसे राष्ट्र उनमें प्रमुख हैं । कबूतरों को अब वैज्ञानिक भी विश्वस्त सन्देशवाहक समझने लगे हैं । भारत के उड़ीसा प्रान्त में विगत ३८ वर्षों से सन्देश पहुँचाने का कार्य ग्रामीण पुलिस विभाग द्वारा लिया जा रहा है । राज्य के पुलिस उप-महानिरीक्षक आर.एम. पटनायक ने बताया कि आधुनिक संचार प्रणाली के तीव्र विकास के बावजूद पुलिस विभाग के लिए कबूतर सबसे अधिक विश्वसनीय तथा बेहतरीन वैकल्पित सन्देशवाहक सिद्ध हुए हैं । राज्य के सुदूर पर्वतीय तथा घने जंगलों वाले क्षेत्रों में तो प्रायः इन कबूतरों की मदद से दुर्गम पुलिस चौकियों से सम्पर्क रखने में मदद मिलती है ।

पुलिस संचार मुख्यालय के निरीक्षक जे.के. राय के अनुसार राज्य पुलिस ने सेना से १९४६ में कुछ कबूतर लिये थे । उनके वंशज अब एक हजार से भी अधिक संख्या में सन्देशों को पहुँचाने का काम कर रहे हैं । श्री राय का कहना है कि सन्देशवाहक कबूतर तेज दौड़ाक एवं सतर्क होते हैं । वे बहुत कठिन उड़ानें भरने में भी सक्षम हैं । अनुकूल मौसम होने पर वे औसतन ९० किलोमीटर की गति से उड़ान भर सकते हैं तथा बिना रुके १५ से २० घण्टे तक उड़ते रह सकते हैं । सबसे आश्चर्य की बात यह है कि कबूतरों के माध्यम से जितने भी सन्देश भेजे गये हैं, वे सही समय पर तथा सकुशल पहुँचे हैं । किसी प्रकृति प्रकोप में अपनी जान गँवा बैठने की स्थिति में ही सन्देश पहुँचने में व्यतिरेक आने का प्रमाण मिला है । अन्यथा उनकी वफादारी तथा मुस्तैदी में कभी भी किसी प्रकार की शिकायत नहीं मिली है । अमरीका तथा रूस में तो कबूतरों के माध्यम से गुप्तचरी कराने के भी प्रमाण मिले हैं ।

विभिन्न जीवों में मूक भाषा सम्पर्क के भी कई उदाहरण मिलते हैं । सर्वोत्तम मासिक पत्रिका में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार दक्षिणी अफ्रीका के नेटाल ड्रैकंजवर्ग के लौटेनी अभयारण्यक के ४०-५० बैबून बन्दरों ने एक बकरे को अपना अभिन्न सहचर बनाया है । वे उसका बराबर ध्यान रखते हैं । बकरा भी बन्दरों के समुदाय में अत्यन्त घुल मिल गया है । उन्हीं के साथ खाता-पीता तथा उन्हीं के साथ सोता है । बन्दर बकरे की पीठ पर सवारी करते हैं । कई बार तो दुर्गम पहाड़ी पर बकरे को अपने पीठ पर वानरों को बैठाये चढ़ते देखा गया है । अभयारण्य के वरिष्ठ प्रभारी रेंजर का कहना है कि बैबून बन्दर अत्यन्त सम्वेदनशील होते हैं, उनमें ममता भी बहुत होती है ।

प्रशिक्षित किया जा सके तो दूसरे जीव मनुष्य के कितने ही कार्यों में सहयोग भी कर सकते हैं । परम्परागत रूप में बैल, घोड़े, खच्चर, गधे, बकरियाँ, ऊँट आदि से श्रम का काम लिया जाता है । हाथी भी सवारी गाँठने के अतिरिक्त भारी गट्ठर आदि ढोने के लिए कहीं-कहीं प्रयोग में लाये जाते हैं, पर अन्य छोटे जीवों से भी कितने ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार के काम लिये जा सकते हैं । जापान असेम्बली लाइन में जाँच-पड़ताल का काम कबूतरों से लिया जाता है । बिना कोई हड़ताल किये अथवा वेतन भत्ता बढ़ाने की माँग किये वे मात्र चुगने के लिए थोड़े-से चावल के दानों के बदले पूरी मुस्तैदी से सौंपा गया कार्य करते हैं ।

रूस यूराल के मोईविस्क खण्ड में धरती के गर्भ में धातुओं का पता लगाने के लिए शेफर्ड और एअरडेल जाति के कुत्तों का उपयोग किया जाता है । उनकी घ्राण शक्ति इतनी प्रबल होती है कि १७ मीटर की गहराई तक की धातुओं को सूँघ लेते हैं । इस कार्य के लिए उन्हें मात्र थोड़ा प्रशिक्षण भर देना होता है ।

भूतकाल के ऐतिहासिक युद्धों में भी जानवरों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है । घोड़े एवं हाथी तो प्राचीनकाल में सैन्य बल के समतुल्य ही गिने जाते थे । पर कितनी ही बार दूसरे जानवरों ने भी युद्ध विजय में ऐतिहासिक भूमिकाएँ निभायी हैं । कोडाना दुर्ग अविजित बना हुआ था । शिवाजी के लिए उसे जीतना आवश्यक था । सीधी पहाड़ी पर बना होने के कारण सेनापति तानाजी को दुर्ग पर चढ़ना असम्भव प्रतीत हो रहा था । तब उन्होंने एक सैनिक की सलाह से गोह नामक जन्तु का प्रयोग किया । रस्सी में बाँधकर गोह को ऊपर फेंका गया । वह चट्टान से जाकर चिपक गया । सैनिक उसके सहारे आसानी से रात्रि के अन्धकार में दुर्ग पर जा चढ़े । उन्होंने दुर्ग पर कब्जा कर लिया ।

आधुनिक मनुष्य की स्वाद-लिप्सा एवं बर्बरता के कारण कितने ही पशु-पक्षियों का अस्तित्व संकट में पड़ गया है । उपयोगिता के आधार पर अन्य जीवों को निरर्थक ठहराया जाता है, पर यदि उन्हें भी संरक्षण, भावनात्मक पोषण एवं प्रशिक्षण मिल सके तो उपयोगिता की कसौटी पर वे भी खरे एवं मानव समुदाय के लिए हितकारी साबित हो सकते हैं ।

भावाभिव्यक्ति का अनुदान सभी को प्रदत्त

भाषा भगवान ने सब जीवाधारियों को नहीं दी है, पर भाव सबको दिये हैं । सुख, दुःख, आशंका, प्रसन्नता, आशा जैसे भले-बुरे अवसर परिस्थितिवश सभी के सामने आते रहते हैं । इसमें मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी भी सम्मिलित हैं । अपनी भाव-संवेदनाओं को वे शारीरिक हलचल अथवा विभिन्न संकेतों के आधार पर प्रकट करते हैं । जीव-जन्तुओं की सामर्थ्य को परखा तथा उनकी सांकेतिक भाषा को समझा जा सके तो उनके प्रशिक्षण में इससे काफी सहायता मिल सकती है ।

भावाभिव्यक्ति एवं बातचीत की कला में मनुष्य विशेष रूप से दक्ष है । भाषा उसे विरासत के रूप में अपने पूर्वजों से मिली है । बच्चे को भाषा ज्ञान विशेष रूप से नहीं कराना पड़ता । परिवार के लोगों के सम्पर्क से ही वह सीख लेता है ।

मानवेतर प्राणियों के पास भी भाषा की कोई विरासत नहीं है, पर वे वार्तालाप गूँगे व्यक्तियों की तरह सांकेतिक आधारों पर करते हैं । स्रष्टा ने उन्हें ऐसी क्षमता प्रदान की है जिनके आधार पर वे विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ देने के लिए विभिन्न तरह की ध्वनियाँ उत्पन्न करते हैं । चिड़िया खतरे की सूचना देने के लिए एक तरह की तथा प्रसन्नता अभिव्यक्ति में दूसरे तरह की आवाज करती हैं । कुत्ते के भौंकने में वार्तालाप होता है जिसका प्रत्युत्तर कुत्ते उसी भाषा में देते हैं । बाघ की अपनी विशिष्ट भाषा होती है । बन्दर अपनी इच्छा को ध्वनियों में एवं अभिव्यक्तियों से दर्शाते हैं, चिम्पाजी मुस्कराकर, टिड्डे अपने संगीत द्वारा तथा कीट-पतंगे अपने रंगों के माध्यम से भावाभिव्यक्ति करते हैं । पक्षियों में तोता, मैना आदि को प्रशिक्षित करने पर तो उन्हें मानवी भाषा को भी दोहराते-नकल उतारते देखा जाता है । कोयल की कूक जहाँ अपनी जाति वालों को बुलावा देती है, वहीं एक विशेष आवाज में चेतावनी भी देती है ।

जिन्हें जीभ मिली ही नहीं, उनकी बात दूसरी है । वे अपना मन मसोस कर रह जाते हैं अथवा अपने समूचे शरीर की छटपटाहट से अपनी पीड़ा का परिचय देते हैं । उदाहरण के लिए मछलियाँ प्रसन्न होने पर क्रीड़ा-कल्लोल करने लगती हैं । जब उन्हें पानी से निकालकर जाल में एकत्र किया जाता है तो उनकी छटपटाहट प्रत्येक भावनाशील का हृदय हिला देती है । मछलियाँ गंध के माध्यम से भी अपनी संवाद सम्प्रेषण प्रक्रिया पूरी करती हैं ।

पशु-पक्षियों को जीभ मिली है । वे उसके माध्यम से अपने भाव प्रकट करते रहते हैं । उनके साथी-सहयोगी उस शब्दावली के माध्यम से यह अनुमान लगा लेते हैं कि उन पर क्या बीत रही है और अपनी अनुभूतियों को साथियों पर कोई कैसे प्रकट करना चाहता है ? यद्यपि अभी तक ऐसा नियमित शब्दकोश नहीं बना है कि किस प्राणी को अपने मनोभाव दूसरों पर प्रकट करने के लिए किस शब्दावली का प्रयोग करना पड़ता है ?

जर्मनी के म्यूनिख विश्वविद्यालय के मूर्धन्य प्राणिशास्त्री डॉ० लारेन्स ने हंसों पर गहन अध्ययन किया और पाया है कि उनमें विवाह आदि का सामाजिक स्वरूप होता है तथा स्नेह भरा दाम्पत्य जीवन और साथी के मर जाने या बिछुड़ने पर वे मानवीय विरह-व्यथा, संवेदनाएँ व्यक्त करते हैं तथा ब्रह्मचर्ययुक्त जीवन व्यतीत करते हैं । हंस एवं अधिकांश अन्य प्राणी विभिन्न प्रकार की ध्वनियों के द्वारा अपने भावों को अभिव्यक्त करते हैं । वैज्ञानिक भाषा में इसे 'रिलीजर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मैकेनिज्म' कहते हैं । हंसों में लम्बी गर्दन के कारण उसे विभिन्न प्रकार से मरोड़ने की सैकड़ों मुद्रायें पायी जाती हैं, जो कि उनकी भाषा के संकेत हैं । डॉ० लारेन्स के इन अध्ययनों से मानव व्यवहार विज्ञान को नये आयाम मिले हैं ।

वे कहते हैं कि टूटी-फूटी जैसी भी उनकी भाषा है, इसके आधार पर वे अपनी जाति वालों के साथ तो विचार-विनिमय करते ही हैं, उनकी इस भाषा को और भी अधिक विकसित किया जा सकता है । इस विकास के आधार पर मनुष्य के साथ अन्य प्राणियों के विचार-विनिमय का द्वार भी खुल सकता है ।

'चिम्पेजी इंटेलीजेन्स एण्ड इट्स वोकल एक्सपेशन' नामक पुस्तक में लेखकद्वय श्री ईयर्कस और श्रीमती लर्नेड ने चिम्पेजी बन्दरों की लगभग ३० ध्वनियों को संगृहीत और विश्लेषित करके एक प्रकार से उनका भाषा विज्ञान ही रच दिया है । इसी प्राकर प्राणिविशेषज्ञ हरमन फ्रेबुर्ग ने अपनी पुस्तक 'एडवेंचर ऑफ अफ्रीका' में ऐसे अनेकों संस्मरण लिखे हैं जिसमें गोरिल्ला और मनुष्य के बीच बात-चीत, भावों का आदान-प्रदान और सहयोग-संघर्ष का परिचय मिलता है ।

भावना अन्तःकरण की भाषा है । वह प्रकट हुए बिना नहीं रहती । कोई प्राणी घुटन में आबद्ध नहीं रहना चाहता । अपने व्यक्तित्व का परिचय देने और भावों को प्रकट करने की इच्छा उन सभी प्राणियों में होती है, जिन्हें जिह्वा मिली है । भले ही वह मनुष्य की तरह क्रमबद्ध रूप में वार्तालाप न कर सकें किन्तु अपने भावों को तो किसी न किसी रूप में प्रकट कर ही देते हैं । उदाहरण के लिए मनुष्य की तरह प्रकृति के परिन्दों में भी न केवल उन्नत श्रेणी के वरन् विलक्षण अभिव्यक्ति और भंगिमाओं भरे नृत्य की परम्परा पाई जाती है । मोर इस कला में बादशाह माना जाता है । ध्रुव प्रदेश में पाये जाने वाले पेंगुइन पक्षियों के विवाह नृत्य का 'एक्शनसांग' देखते ही बनता है । भाव प्रदर्शन में ये प्राणी मनुष्यों को भी पीछे छोड़ देते हैं ।

बाज, गोह, बिल्ली, साँप आदि किसी आक्रामक जानवर की निकटता अनुभव करते ही पक्षी इकट्ठा होकर चहचहाने लगते हैं । इसके कई उद्देश्य होते हैं । एक तो सब साथियों को एक होकर संगठित होकर दूसरों के साथ मिलकर शोर मचाना चाहिए, जिससे शत्रु यह न समझे कि वे एकाकी हैं, इसलिए हमला किया जा सकता है । दूसरा यह कि सभी पर्वतीय क्षेत्र में उस समुदाय की कोई और बिरादरी हो तो वह भी सचेत हो जाय । बचने का उपाय कर ले ।

प्रसन्नता के अवसर पर भौंरे, कोकिला, मोर आदि अपनी विशेष वाणी बोलते हैं । उन शब्दों का मानवी भाषा में रूपान्तरण तो नहीं किया जा सकता पर इतना आसानी से जाना जा सकता है कि यह पक्षी अपनी वर्तमान परिस्थितियों से प्रसन्न हैं ।

हिंस्र अपनी दहाड़ से वन्य पशुओं को भयभीत करके उनके मनोबल को गिराता है, साथ ही सूचना देता है कि इस क्षेत्र में उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी हो, तो चला जाय अन्यथा परस्पर भिड़ने का खतरा है । प्राणियों में वाणी की अपेक्षा गंध कारगर है । वे अपने घर, देश, दिशा को गंध के आधार पर पहचान लेते हैं । हिरणों का तो यह स्वभाव ही होता है कि वन के जिस भाग में वे निवास करते हैं, उसके वृक्ष-वनस्पतियों में एक विशेष प्रकार की गंध छोड़ देते हैं, ताकि दूसरे हिरण उस क्षेत्र में घुसपैठ न कर सकें और यदि अनधिकार प्रवेश जरूरी ही हुआ तो वे नये सिरे से उस वन्य प्रदेश की वनस्पतियों को काट-छाँट कर उसकी गंध मिटा देते और अपनी नई गंध डालकर उस क्षेत्र में अपना वर्चस्व कायम कर लेते हैं । प्रणय-निवेदन भी वे गंध के आधार पर ही करते हैं । जिनकी आँखें कमजोर हैं वे भी गंध के आधार पर अपने शिकार को, प्रेमी को, आक्रान्ता को आसानी से पहचान लेते हैं ।

हर प्राणी की भाव-भंगिमा मनुष्य से मिलती-जुलती है, शब्द न पहचाने जा सकें तो आकृति, भाव-भांगिमा देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि कौन प्राणी अपनी क्या भाव-संवेदना व्यक्त करना या विचार-विनिमय करना चाहता है ? यदि इसे समझा और उन्हें सिखाया जाय तो वे न केवल मनुष्य के साथ हिल-मिल सकते हैं वरन् एक जाति का दूसरी जाति वाले अन्य जीवों के साथ व्यवहार-सम्पर्क और अधिक बढ़ाया जा सकता है । हम सब समष्टि के घटक हैं । यह सहयोगी आदान-प्रदान हमें परस्पर निकट तो लाएगा ही, यह भी प्रमाणित करेगा कि सभी जीवों में परमसत्ता समान रूप से विद्यमान है । जीवों के साथ एकता का सन्देश यदि मानव-मानव में ही संव्याप्त हो सके तो मानवी गरिमा को चार चाँद लग जायेंगे ।

सद्गुणों का शिक्षण, प्रकृति की पाठशाला में

अन्यान्य जीव बुद्धि के क्षेत्र में मानव से पीछे हैं, पर यदि प्रेम-सद्भाव, सहयोग-सहकार जैसे गुणों की दृष्टि से देखा जाय, तो प्रतीत होगा कि वे इस संदर्भ में मनुष्य से किसी भी प्रकार कम नहीं हैं । हम समझते हैं कि उनमें वाणी का अभाव है, विकसित भाषा और बोली की कमी है, तो वे इन गुणों से सर्वथा रहित होंगे, पर वस्तुतः बात ऐसी है नहीं । भगवान ने उनमें जितनी क्षमता का समावेश किया है, उसके अनुसार वे भी किसी न किसी प्रकार इन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भावों को अभिव्यक्त कर ही लेते हैं । वे आपसी विचार-विनिमय करते हैं । सुख के वक्त प्रसन्नता जाहिर करते व विषाद के समय दुःख व्यक्त करते हैं एवं संकटकालीन घड़ी में मनुष्यों की ही तरह विपत्ति का संकेत देकर साथियों को सावधान करते हैं । यह बात अलग है कि अपना भाषा शब्दकोष उनके भाषा-विज्ञान से पृथक् होने के कारण हम उन्हें समझ नहीं पाते, पर मात्र इस कारण से हम उन्हें गूँगे-बहरे की संज्ञा नहीं दे सकते । उनका अपना एक अभिव्यक्ति विज्ञान है । यह विज्ञान पक्षियों में अधिक सुविकसित होता है । आज-कल शोधकर्मी पक्षियों के इसी विज्ञान को समझने की कोशिश कर रहे हैं ।

मिशिगन विश्वविद्यालय के पक्षी विशेषज्ञ डॉ० ब्राडाक ने अनेक वर्षों तक इनके व्यवहार का अध्ययन किया है । उनका विचार है कि ये भी परस्पर विचारों का उसी प्रकार आदान-प्रदान करते हैं जैसे मनुष्य । उनकी चहचहाहट, उनकी फुदकन, जो हमें निरर्थक जान पड़ती है, उनमें अनेकानेक प्रकार की सूचनाएँ व जानकारियाँ होती हैं । इसके अतिरिक्त उनकी नाना प्रकार की भाव-भंगिमाएँ होती हैं, जो पृथक्-पृथक् जानकारियाँ प्रकट करती हैं । यदा-कदा ऐसी सूचनाएँ अपने समुदाय के अन्य पक्षियों को देने के लिए वे विशेष प्रकार के सांकेतिक ध्वनियों का प्रयोग करते हैं, जिन्हें सुनकर साथी सावधान हो जाते हैं । डॉ० ब्राडाक का कहना है कि मनुष्यों की ही तरह पक्षियों में भी भाव-संवेदनाएँ होती हैं । वे कहते हैं कि यदि ऐसा नहीं होता, तो विपत्ति के समय वे किसी प्रकार की ध्वनि अथवा भाव-प्रदर्शन करने की आवश्यकता नहीं समझते और उड़कर अपनी जान बचा लेने तक में ही इसकी इतिश्री मानी जाती, पर ऐसा नहीं होता । संभवतः इसका कारण यह हो कि शत्रु के चंगुल में फँस जाने के उपरान्त की कठिन स्थिति का उन्हें ज्ञान रहता हो । ऐसी स्थिति में पड़कर कोई साथी जान गँवा न बैठे, इस हेतु मोह उमड़ पड़ने के कारण प्रेम सहानुभूति के प्रतीक सूचना प्रकट होती हो । भारत के मूर्धन्य पक्षी वद् डॉ० सलीम अली जीवनपर्यन्त चिड़ियों के व्यवहार और विशेषताओं का अध्ययन करते रहे । अपने लम्बे अध्ययन और अनुभव के आधार पर उनने बताया कि पक्षियों में यदि विभिन्न प्रकार की मुद्राओं, हाव-भावों, संकेतों द्वारा विचार-सम्प्रेषण की क्षमता प्रकृति ने न दी होती तो संभव था, वे अपने अस्तित्व की रक्षा न कर पाते । वे आगे कहते हैं कि अस्तित्व रक्षा का एक अन्य आधार उनका यूथचर जीवन है । इसमें जहाँ एक के सावधान रहने पर पूरे समूह की रक्षा की जाती है । वहीं दूसरी ओर उनकी संगठित शक्ति शत्रु-पक्ष का मुकाबला करने में सक्षम होती है ।

इस प्रकार के अध्ययन विश्व के अन्य अनेक वैज्ञानिकों ने भी किये है । फ्रांस स्थित 'लेबोरेटरी ऑफ बर्डस एण्ड इट्स बिहेवियर ज्वौय एन्जासास' के मूर्धन्य वैज्ञानिक जे० सी० बेमोण्ड लम्बे समय से चिड़ियों की बोली व संकेतों का सतत् अध्ययन करते आ रहे हैं । उन्होंने पक्षियों की विभिन्न जाति-प्रजातियों की लगभग १३ सौ बोलियों व संकेत-अभिप्रायों को रिकार्ड किया है । इनमें कुछ पक्षी तो ऐसे हैं, जो अपनी जातिगत ध्वनि तो निकालते ही हैं, साथ में दर्जनों अन्य प्रकार की आवाजें भी पैदा करते हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार के पशु-पक्षी की बोलियों से लेकर मशीनों की आवाजों की नकल भी सम्मलित है । इनमें ऐसी विशेषता क्यों पायी जाती है और इसका उद्देश्य क्या है ? इस बारे में बेमोण्ड का विचार है कि सम्भवतः शत्रु पक्ष को भ्रमित करने के प्रयोजन से ही प्रकृति ने उन्हें यह विशिष्टता प्रदान की । अपनी 'बर्डस एण्ड नेचर' पुस्तक में एक योरोपियन रोबिन का विवरण देते हुए वे लिखते हैं कि "इस चिड़िया की समय-समय पर टेप की गई ध्वनियों को जब वसन्त ऋतु में नर रोबिन के क्षेत्र में लाउडस्पीकर से बजाया गया तो अन्य किसी विजातीय चिड़िया की घुसपैठ की संभावना समझकर उसे क्षेत्र के सभी रोबिन उड़-उड़ कर आक्रमण करने के लिए एकत्रित होने लगे, किन्तु कुछ समय पश्चात् जब उन्हें यह आभास मिला कि यह आवाज किसी शरारती रोबिन द्वारा की गई है, तो निर्भय होकर वे सभी अपनी उदरपूर्ति में पुनः जुट पड़े । इसी प्रकार का प्रयोग जब पतझड़ ऋतु में दोहराया गया, तो रोबिन पक्षियों की ओर से कोई प्रतिक्रिया नहीं दिखाई पड़ी । वे निर्द्वन्द्व विचरण करते रहे ।" इस आधार पर उनने निष्कर्ष निकाला कि पक्षियों की ध्वनियों में विभिन्न प्रकार के आशय प्रकट करने वाले संकेत रहते हैं, जो समय और ऋतु के हिसाब से कभी संघर्षात्मक कभी रागात्मक स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं ।

आजकल पशु-पक्षियों द्वारा व्यक्त इन संकेतों का प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में उन्हीं को डराने-भगाने के लिए किया जा रहा है । जर्मनी स्थित 'शराब का नगर' कहे जाने वाले शहर ओपनहेम में पतझड़ के दौरान अंगूर की खेती जोरों पर होती है । जब अंगूर परिपक्व हो जाते हैं, तो आकाश में तैलिपियर जाति के पक्षियों के झुण्ड के झुण्ड इन खेतों के ऊपर मँड़राने लगते हैं और मौका पाकर जैसे ही किसी कुंज में उतरना चाहते हैं वैसे ही मचान पर बैठा चौकीदार टेप रिकार्डर का बटन दबा देता है, जिससे त्रस्त एवं क्षुब्ध पक्षी अपनी जान बचाकर आकाश में ऊँचे उड़ जाते हैं, वहाँ से उड़कर किसी दूरस्थ कुंज पर टूटते हैं, तो पुनः उनके साथ वहाँ बैठा रक्षक वैसा ही व्यवहार करता है । इससे पक्षी समुदाय उत्तेजित और भयभीत होकर ऊँची उड़ान भरता हुआ आँखों से ओझल हो जाता है । वस्तुतः टेप रिकार्डर में उन्हीं के बनाए खतरासूचक ध्वनि-संकेत अंकित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं । बगान मालिक ऐसे कई रिकार्ड समय से पूर्व तैयार कर लेते हैं और जब फसलों पर उनका आक्रमण होने का समय आता है, तो वे उसे लाउडस्पीकर के माध्यम से बजाते हैं । तैलिपियर इसे झुण्ड के ही किसी सहचर द्वारा प्रसारित ध्वनि-संकेत मानते हैं और खतरे का आभास कर तत्क्षण पलायन कर जाते हैं ।

इसी प्रकार की तरकीब अब हवाई अड्डों में भी उपयोग में लायी जा रही है । घटना सन् १९६६ की है । न्यूयार्क सिटी के हवाई अड्डे पर उतरते हुए एक परिवहन विमान पर 'गल' जाति के एक विशालकाय पक्षी ने विध्वंसक झपट्टा मारा । चालक ने किसी प्रकार उसके आक्रमण को बचाकर विमान सुरक्षित हवाई पट्टी पर उतार लिया, मगर अभी दो और विमान वहाँ उतरने वाले थे और गल पक्षियों का झुण्ड ऊपर मँड़रा रहा था । विमान कहीं दुर्घटनाग्रस्त न हो जाय, यह सोचकर अधिकारियों ने पक्षी ध्वनि-संकेत विशेषज्ञ जान केडलैक को बुलाया, जो इस प्रकार की दुर्घटनाओं को रोकने में निष्णात् माने जाते थे और उन्होंने उन्हीं पक्षियों की संकटसूचक ध्वनि बजाकर नभचरों को भगाकर संभावित दुर्घटना से बचा लिया ।

भावाभिव्यक्ति की जो स्थिति मनुष्यों की है वही अन्य प्राणियों के सम्बन्ध में भी पाई जाती है । उसमें थोड़ा बहुत ही अन्तर होता है । मनुष्य अधिक सम्वेदनशील है इसलिए भाषा की सूक्ष्मता की तरह उसे भावों की अभिव्यक्ति भी अच्छी तरह करनी आती है । अन्य प्राणी भाषा की तरह भावों के प्रकटीकरण में पीछे हो सकते हैं, पर ध्यानपूर्वक उनके चेहरे को, आँखों तथा होंठों को व अन्य अवयवों को देखा जाय तो उनके भीतर काम कर रही भावनाओं, प्रवृतियों, आकांक्षाओं एवं सम्वेदनाओं को बहुत हद तक समझा जा सकता है । इस दिशा में यदि हम प्रयास करें तो मनुष्य परिवार से आगे बढ़कर प्राणिमात्र में अपनी आत्मीयता विकसित कर सकते हैं और आत्मविस्तार का अधिक लाभ उपलब्ध कर सकते हैं ।

बदलती परिस्थितियों में स्वयं भी बदलें

परिस्थितियों के मनुष्य जीवन पर पड़ने वाले जबर्दस्त प्रभाव से इन्कार नहीं कर सकते पर वहाँ परमात्मा ने मनुष्य को ऐसी योग्यतायें भी दी हैं, जिनसे वह अपने आपको परिस्थितियों के अनुरूप ढाल सके ।

यदि मनुष्य ऐसा नहीं कर सकता तो दण्ड भुगतने और असफल पड़े रहने का दोष उसी का है ।

वस्तुतः परिस्थितियाँ संसार में कुछ हैं भी नहीं । अपने आपको परिवर्तनों के अनुसार बदलते न रहने की प्रतिक्रिया का नाम ही परिस्थितियाँ हैं । संसार में जितने भी प्राणी हैं, वे प्राकृतिक परिवर्तनों के साथ अपने आपको बदलते रहते हैं, यही कारण है कि वे बिना किन्हीं साधनों के भी मुक्ति, आनन्द, स्वास्थ्य और नीरोगिता का जीवन जीते रहते हैं । एक-दूसरे को खा जाने की प्रवृत्ति पशुओं और जंगली जन्तुओं की कही जाती है, तथापि आज मनुष्य जितना अशांत और द्वन्द्वों में फँसा हुआ है, उतने तो वन्य पशु भी नहीं हैं, इसका एकमात्र कारण परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको न बदलने का दोष है ।

वातावरण परिवर्तनशील है । वस्तुयें बदलती रहती हैं, किसी भी स्थान के अनुकूल बने रहने का तात्पर्य यह है कि परिस्थितियाँ चाहे जिस दिशा में मुड़ें, हमें उन बदलती हुई परिस्थितियों के साथ बदलने की अथवा परिस्थितियों के अनुसार अपनी शारीरिक, मानसिक और बौद्धिक प्रणाली को ढालने की क्षमता होनी चाहिये । काम तभी चलेगा, जब हम इतने प्राकृतिक हों कि हमारी प्रत्येक गतिविधि प्राकृतिक परिवर्तनों के साथ बहती चली जाये, यदि हम उसका उल्लंघन करेंगे तो निश्चय ही रोग, शोक, हारी-बीमारी का कष्ट उठायेंगे ।

ध्रुवीय प्रदेशों में कुछ जन्तु जैसे लोमड़ी, रीछ और गिलहरियाँ अपने आपको वहाँ की परिस्थितियों के समरूप रखती हैं, वहाँ वर्ष भर बर्फ जमी रहती है । वर्फ श्वेत होती है, यह जीव भी अपने बालों को श्वेत रखते हैं, इससे यदि कोई बाहरी व्यक्ति इनको ढूँढ़ना चाहे तो ढूँढ़ नहीं सकता । रंग की समरूपता के कारण यह अपने आपको बर्फ की चट्टानों के साथ इस तरह समायोजित कर लेते हैं कि शिकारी इनके पास घूमते रहते हैं तो भी पहचान नहीं पाते । मनुष्यों को भी ऐसे ही समाज परिवर्तन की आवश्यकता पड़ती है, अन्य स्थानों पर पहुँचकर वह अपने आपको एकाकी अनुभव करके दुःखी अनुभव करता है पर यदि उसने अन्य प्राणियों से अनुकूलन की विद्या सीखी होती अर्थात् उस वातावरण के अनुरूप अपने आपको ढाल लेने की योग्यता का उपयोग करता तो वह जहाँ भी जाता, वहीं परस्पर प्रेम, विश्वास, एकता और आत्मीयता स्थापित करके प्रसन्नता अनुभव करता ।

मरुस्थल में पायी जाने वाली बकरियाँ, हिरण और ऊँट आदि वहाँ की प्रकृति को अक्षरशः ग्रहण कर लेते हैं, जिससे उनके शरीर भी भूरे और लहरियोंदार हो जाते हैं । कोई दूर से यह नहीं जान सकता कि वहाँ कोई खड़ा है क्या और इस प्रकार वे अपने जीवन को सुरक्षित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किये रहते हैं । कई सर्प जिस मिट्टी में रहते हैं, उसी रंग के हो जाते हैं, तितली पौधों-पौधों में जाकर उनके सौरभ और सौन्दर्य का आनन्द लेती है, इसके लिये वह किसी फूल से बँधती नहीं वरन् अपने आपको सभी फूलों के समान रंग-बिरंगा बना लेती है । टिड्डी जैसे कई कीड़े जो हरी पत्तियाँ ही खाते हैं, अपने आपको हरा रखते हैं, वह हरे वृक्षों में बैठे रहते हैं पर बाहर का कोई व्यक्ति उनका पता नहीं लगा सकता ।

समुद्री चिड़िया जैसे फ्लावर्स भारद्वाज (हार्क) टिटहरी आदि खुले स्थानों पर अण्डे देती हैं । टिटहरी, सारस आदि पक्षी पानी के बीच खुले भाग में अण्डे देते हैं । यदि वे अण्डों का रंग अपनी मन-मर्जी से कुछ भी रखते तो कभी भी कोई हमलावर जानवर आते और उन्हें उसी तरह मारकर खा जाते, जैसे सामाजिक जीवन में संग्रहवृत्ति वाले धनी लोगों को, जो दूसरे पीड़ित प्रजा वर्ग की सुविधाओं का कभी भी ध्यान नहीं देते, चोर और डकैट लूट ले जाते हैं । सामाजिक जीवन से अपना ताल-मेल न रखकर अपनी खिचड़ी अलग पकाने वाले लोग अपने आप कितना ही अहंकार प्रदर्शित करें पर भीतर अपनी सुरक्षा के लिये सबसे अधिक डरने वाले दुःखी लोग वे ही होते हैं, जो समाज की परिस्थितियों में बने रहते हैं, वह इन पक्षियों की तरह हैं, जो चौड़े में अण्डे देते हैं पर उनका रंग इस तरह का रखते हैं कि जमीं के रंग में और उनके रंग में कोई अन्तर दिखाई न दे । चील और बाज की आँखें बड़ी तेज होती हैं, वे ऊपर मँड़राते रहते हैं पर उन्हें इन अण्डों का पता भी नहीं चल पाता । समुद्र में एक चपटी मछली (फ्लैटफिश) पाई जाती है, इसी कोटि का सर्वत्र पाया जाने वाला जन्तु गिरगिट है, ये जहाँ भी रहते हैं, अनुकूलन के द्वारा अपनी सुरक्षा बनाये रखते हैं । गिरगिट अपनी ओर किसी दुश्मन को आते देखता है तो वह जिस स्थान पर होता है, उस स्थान का रंग निकालकर उसी में छुप जाता है । दुश्मन समझ नहीं पाता और इधर से उधर निकल जाता है, कई बार वे कोई तीव्र रंग निकालकर दीवाल खड़ी कर देते हैं और स्वयं अपने आपको बचाकर निकाल ले जाते हैं । प्रकृति के यह उदाहरण बताते हैं कि संसार में अस्तित्व उन्हीं का सुरक्षित है, जो स्थिति के अनुसार अपने आपको बदल सकते हों ।

यह रंग बदलने की कला मनुष्य जीवन में बड़े काम आती है । यदि हम अपने वातावरण का चारों और चौकसी से निरीक्षण करते रहें । उदाहरण के लिये आज लोगों में खाँसी, खसरा, कैंसर, तपेदिक आदि रोग बढ़ रहे हैं, हमें देखना चाहिये कौन सी बुराइयाँ हैं, जो इन्हें जन्म देती हैं । अप्राकृतिक रहन-सहन, अहार-विहार, धूम्रपान आलस्य असंयम आदि के कारण ही यह बुराइयाँ बढ़ती हैं, यदि हमारी भी परिस्थितियाँ ऐसी ही हैं तो उनसे सुरक्षा का उपाय यही है कि हम अपना रंग बदल डालें अर्थात् उन बुराइयों के आवरण को ही उतार फेंकें ।

अनुकूलन की इस योग्यता का यह अर्थ नहीं कि यदि हम किसी बुरे समाज में जाते हैं तो वहाँ की बुराइयों को आत्मसात् करना प्रारम्भ कर दें । ऐसी परिस्थितियों से बचाव की प्रेरणा कालिमा नामक तितली से ले सकते हैं । इसके पंखों का ऊपरी रंग चमकदार होता है, परन्तु सतह का रंग सूखी पत्ती की तरह का होता है । जब कभी वह किसी पौधे पर पंख सिकोड़कर बैठती है तो ऐसा प्रतीत होता है, जैसे यह कोई सूखी पत्ती हो । मनुष्य अपने मूल व्यक्तित्व को इस तरह आकस्मिक काल में छिपाकर अपनी सुरक्षा बनाये रख सकता है, पर जो अपने व्यक्तित्व को बढ़ा-चढ़ा कर दिखाते हैं, शेखी-खोरी करते हैं, वे राह चलते चाहे जिन मामूली व्यक्तियों के द्वारा ठग लिये जाते हैं ।

दंडकीट (हाइड इन्सेन्ट) नामक कीड़ा सूखी टहनी की तरह का होता है, रंग भी उसी तरह का कुछ भूरा-काला सा होता है, मोटाई भी पतली टहनी के समान ही होती है । इसके पंख ही बड़े होते हैं, पर अपनी इस विशेषता को वह बड़ी चतुराई से छिपाता है, जब किसी टहनी पर बैठता है तो पंजों को शरीर से इस तरह चिपका लेता है कि दूर से दीखने पर ऐसा लगता है, जैसे यह पत्तीदार कोई टहनी ही हो और इस तरह वह अपने आपको दुश्मन से बचा लेता है । ये उदाहरण बताते हैं कि वातावरण समकूलता से व्यक्ति अपनी आत्म-रक्षा कर सकता है । इसमें उसे कुछ भी हानि नहीं होती ।

बर्फीले क्षेत्रों में पाये जाने वाले रीछों के पास कोई वस्त्र नहीं होते, वे वहाँ के वातावरण को ही अपने में आत्मसात् करके सुरक्षित रहते हैं । जिन दिनों बर्फ और कड़ाके की सर्दी पड़ती है, बेचारा स्वयं भी जकड़कर बर्फ में दब जाता है । छः महीने तक भालू उसी में कुछ खाये-पिये बिना ही पड़ा रहता है, यदि आदमी की तरह उसने भी कृत्रिम जीवन बनाया होता, अधिक कपड़े पहनने और तंग मकानों में रहकर अपने आपको ज्यादा शानदार दिखाने की भूल उसने की होती, असंयमित जीवन बिताया होता, तो एक ही कड़ाके में ढेर हो गया होता पर प्रकृति माता की गोद में पड़े रहने के कारण उसमें इतनी क्षमता आ जाती है कि वह छः महीने दबा रहकर भी मरता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं वरन् यह समय उसकी आयु वृद्धि के काम आता है । छः महीने बाद जब धूप निकलती है, ऊपर की बर्फ पिघलकर बह जाती है, शरीर के रक्त में थोड़ी गर्मी आती है तो रीछ ऐसे ही अँगड़ाई लेकर उठ खड़ा होता है, जैसे रात की नींद लेकर सबेरे वह नई ताजगी प्राप्त कर रहा हो । प्रकृति का घनिष्ट सान्निध्य हमें भौतिक परिस्थितियों से सदैव ही सुरक्षा प्रदान करता है ।

सरलता और सीधापन प्रकृति का स्वभाव है, हम जब अपनी मान-मर्यादा, पद-प्रतिष्ठा, धन-पुत्रों के बनावटी आवरण उतार देते हैं तो ऐसे ही सीधे, स्वाभाविक, सरल और सौम्य प्रतीत होते हैं, जैसे प्रकृति के दूसरे भोले-भाले प्राणी । कोई कहेगा, ऐसी स्थिति में तो जो आवेगा, हमें वह नष्ट कर डालेगा, बात ऐसी नहीं । प्रकृति हमें परिस्थितियों के अनुरूप संघर्ष के लिये भी उत्साहित करती है । हम उसके लिये तैयार न हों, तब तो एक दिन का जीवित रहना भी कठिन हो जाये । बुराइयों और दुष्प्रवृत्तियों का सामना करने के लिये भयानक आकार (टेरीफाइंग अपियरेन्स) भी रखना आवश्यक है । हरे टिड्डे (ग्रास-होपर्स) दुश्मन को देखते ही अपने पंख फैलाकर भयानक आकृति बना लेते हैं । दुश्मन अचम्भे में पड़ जाता है और उसे चुपचाप लौटना ही पड़ता है । जब तक बन पड़ता है बिल्ली आत्म-रक्षा के लिये भागती है पर जब वह यह समझती है कि कुत्तों से बचकर भाग निकलना सम्भव नहीं, तब वह अपने दाँत, मूँछें और आँखों को ऐसे तरेरकर खड़ी हो जाती है कि कुत्तों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है और वे आक्रमण करना भूल जाते हैं । प्रकृति का यह गुण हमें बताता है कि यदि साहस और हिम्मत हो तो मनुष्य अपने से कई गुने बलवान और भयानक व्यक्तियों से भी मोर्चा लेकर उन्हें परास्त कर सकता है पर साहस बाहर की देन नहीं, मनुष्य को उस परिस्थिति के अनुरूप अपने ही भीतर से जाग्रत करना पड़ता है । यदि परिस्थिति आने पर वह संघर्ष के लिये तैयार नहीं होता तो कोई बुरा व्यक्ति या पशु उसे बन्धन से मार सकता है ।

शत्रु के विरोधी पक्ष में आ जाने के कारण भी हम अपनी सुरक्षा ही नहीं अनुभव करते, वरन् संसार की बुराइयों के विरुद्ध अपना साहस प्रदर्शित करने का यश भी प्राप्त करते हैं । प्रकृति का यह पक्ष हमें यह बताता है कि विरोधी शक्ति यदि न्यायोचित है तो कम शक्तिशाली होने पर उसके साथ रहने से बुरे तत्वों से रक्षा हो जाती है । हमारे जीवन में सैकड़ों बुराइयाँ होती हैं । हम समझ नहीं पाते, उन्हें कैसे दूर करें पर जब 'अणुव्रत' सिद्धान्त के आधार पर कोई एक छोटी-सी अच्छाई का भी व्रत लेकर उसका निष्ठापूर्वक पालन करने लगते हैं तो हमारी बुरी आदतों, बुरे तत्वों से रक्षा हो जाती है । इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री वेट्स ने दक्षिण अमेरिका में जीव-जन्तुओं की बहुत दिन खोज की थी, उन्होंने पीयरिड नामक तितली का वर्णन करते हुए लिखा है— "कुछ पक्षी हेलीकोनिड तितली का शिकार नहीं करते । पर उन्हें पीयरिड का शिकार करना अच्छा लगता है । पीयरिड उनसे अपनी रक्षा करने के लिये विरोधी पक्ष के साथ हो जाती है । यद्यपि हेलीकोनिड में उसकी रक्षा करने की शक्ति नहीं होती किन्तु विरोध के फलस्वरूप ही वह आक्रमणकारी पक्षियों की दुष्टता को निरस्त कर देती है ।"

अपने आपको परिस्थिति के अनुकूल ढालने की यह सूझ मनुष्य ने भी विकसित की होती तो वह आज परिस्थितियाँ उत्पन्न करने में समर्थ रहा होता । यदि हम अपने दृष्टिकोण में अब भी यह परिवर्तन कर लें, तो भविष्य में अपने जीवन को उन्नत, सफल और सुरक्षित बनाये रख सकते हैं । प्रकृति का यह सिद्धान्त सदैव समरस और अकाट्य है ।

वैटसिन नकल करने की कला (दि आर्ट ऑफ 'वैटसिन एडाप्शन' जीवविज्ञान जूलाजी) का एक बहुचर्चित सिद्धान्त है, जिसका अर्थ होता है, सामाजिक बुराइयों से आत्मरक्षा के लिये अपने आपको बदलना । बुराइयाँ कमजोर मन वालों पर आक्रमण करती हैं, हमें अभ्यास से अपने मन को ऐसा बनाना चाहिये, जिसमें कोई भी अप्रिय परिस्थिति टकराकर ऐसे लौट जाये जैसे पहाड़ की खाड़ी से समुद्री लहरें ।

जर्मन वैज्ञानिक श्री मुलर ने बहुत दिन तक अध्ययन करने के बाद बताया कि वंश परम्परा से कुछ तितलियाँ भिन्न जाति की होती हैं किन्तु वे अपना रंगरूप और आकार इस तरह बनाती हैं, जैसे वह तितलियाँ जो स्वाद में कटु होती हैं और दुश्मन जिन्हें खाना तो दूर पास तक नहीं आते । इस तरह वे कमजोर होने पर भी अपना बचाव कर लेती हैं ।

ऐसी ही एक कला 'मुलैरियन' नकल करने की कला (दि आर्ट आफ मुलैरियन एडाप्शन) कहते हैं, इसमें समान प्रकृति के लोगों के साथ मिलकर ऐसा संगठन बनाया जाता है, जिससे दुश्मन अपने आप ही पीछा करना छोड़ दे । धर्मशास्त्र में उसे तितीक्षा की संज्ञा दी जाती है । स्वामी विवेकानन्द जिन दिनों योगाभ्यास कर रहे थे, उनके मन में कई प्रकार की वासनायें भी भड़कती रहती थीं । कई बार यह गन्दे विचार इतने तीव्र हो उठते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थे कि उनको हटाना कठिन हो जाता था । विवेकानन्द हैरान थे, क्या करें तभी उन्हें एक विचित्र दृश्य दिखाई दिया । उन्होंने देखा एक ऐसा कीड़ा है, जो चींटियों को बार-बार पकड़कर खा जाता है । दुश्मन से बचने के लिये इन चींटियों ने एक तरकीब निकाली । पास ही कुछ ऐसी मकड़ियाँ रहती थीं, जिनका आकार और रंग-रूप इन चींटियों की तरह का था । चींटियों ने उनसे मेल-मिलाप कर लिया और उनके साथ ही रहने लगीं । चींटियों और मकड़ियों के पास-पास आ जाने से उनकी संख्या भी अधिक हो गई ।

लोभी व्यक्ति भी जिस प्रकार हित-अनहित का, अच्छे-बुरे का विवेक नहीं रहता, उसी प्रकार उस कीड़े ने भी चींटियों की बढ़ोत्तरी देखी तो उसकी प्रसन्नता का पारावार न रहा । उसने घात लगाई और टप से चींटी के धोखे में एक मकड़ी को पकड लिया । उस मकड़ी का स्वाद इतना जहरीला था कि कीड़े को मूर्छा आ गई । होश आने पर वह इतना डर गया कि फिर उसने दुबारा चींटियों को छेड़ने का साहस नहीं किया ।

इस दृश्य ने स्वामी विवेकानन्द को एक नई सूझ प्रदान की । उन्होंने निश्चय कर लिया कि यदि अब दुबारा कभी मन से दुर्वासनायें उठीं तो उसे भी ऐसा ही कडुवा स्वाद चखायेंगे । दैववश उसी दिन जब वे भोजन बना रहे थे, एक लड़की उनके पास आ गई । उसे देखते ही उनका मन चंचल हो उठा । स्वामी जी तो पहले से ही घात में थे । उठे और जलते तबे पर बैठ गये । सारा चूतड़ जल गया । लड़की चीख मारकर भाग गई । विवेकानन्द एक महीने अस्पताल में तो पड़े रहे पर फिर दुबारा उनके मन में कभी कोई पाप-भावना नहीं आई ।

डोनाउस क्राइसीपस नामक तितली, ततैये (वास्प्स) और टिड्डे (हारनेट्स) आदि अपने दुश्मनों से बचने के लिये बहुत चमकीले, भड़कीले, लाल, काले, पीले रंग बदलने, दुर्गन्ध छोड़कर अपने आपको क्रोधी और जहरीला दिखाने की क्रिया करते हैं । दुश्मन डरकर भाग जाता है । इसी प्रकार मन में उठने वाली बुराइयों को उनके अप्रिय परिणाम दिखाकर डराया और धमकाया जा सकता है, उदाहरण के लिए पढ़ने में मन न लगे तो फेल हो जाने की निराशा का चित्रण, काम न करने पर भूख ,प्यास और कपड़े-लत्ते की तंगी का चित्रण, कामवासना भड़के तो रोग, बुढ़ापा और दुर्बलता का चित्रण करके उन्हें डरा देना चाहिये ।

हेनरी फोर्ड ने इसी सिद्धान्त के रचनात्मक अभ्यास से औद्योगिक सफलता अर्जित की थी । उन्होंने अपने एक संस्मरण में लिखा है—''व्यापार के प्रारम्भिक दिनों में मुझे बड़ा आलस्य और अनुत्साह रहता, उस समय में अच्छे सम्पन्न भविष्य की कल्पना करता । मेरे बंगले होंगे, कार होगी, दास-दासियाँ होंगे, सुख के सब साधन होंगे तो कितना अच्छा होगा ? इन कल्पनाओं से आलस्य का अन्त हो जाता और मैं फिर दुगुने उत्साह से काम करने लगता । इसी तरह बढ़ते-बढ़ते मैं वर्तमान स्थिति तक पहुँचा ।''

जीव-जन्तु अपने बचाव के लिए इस सिद्धान्त का बहुत उपयोग करते हैं, उदाहरण के लिए कटमछली सीपिया अपने शरीर की एक थैली में स्याही जैसा एक तरल पदार्थ भरकर रखते हैं । अपने इस संचित संस्कार के कारण वे निर्भय विचरण करते रहते हैं, यदि उन्हें सामने से कोई दुश्मन आता दिखाई दिया तो उस थैली का रंगीन तरल पदार्थ काफी दूर तक उँड़ेलकर पानी को रंगीन करके आप उसी में छिपकर बैठ जायेंगे । शत्रु शिकार को देख नहीं पायेगा या एक ओर खड़ा ताकता रहेगा, मछली अपनी मस्ती से दूसरी ओर निकल जायेगी । जिन लोगों में ऐसे रचनात्मक स्वभाव होते हैं, वे ही संसार में उच्च सफलताएँ प्राप्त करते हैं, जो निराशावादी हर परिस्थिति के फंदे में फँस जाने वाले होते हैं, उन्हें तो छोटे-छोटे आघात ही मारकर नष्ट कर देते हैं ।

कछुआ, सीप, घोंघा, मगर आदि अपनी त्वचा के ऊपर सुरक्षात्मक आवरण रखते हैं और जी चाहे जहाँ विचरण करते हैं, उनका बड़े से बड़ा शत्रु भी कुछ नहीं बिगाड़ सकता । संसार में माना विषम परिस्थितियों के अम्बार लगे हैं पर मनस्वी व्यक्तियों के लिये जैसे परिस्थितियाँ होती ही नहीं, वे मन को इतना मजबूत बना लेते हैं कि चाहे लाभ हो या हानि, सुख हो या दुःख, यश मिले या अपयश वे अपने आदर्श-सिद्धान्तों से उन सबको दबाकर मस्ती और निश्चितता का जीवन जीते हैं । ऐसे जीवन-क्रम की गीता में बड़ी प्रशंसा की गई है । कर्मयोगी के लिये सांसारिक गतिविधियों से बचाव के लिए ऐसा ही सुरक्षात्मक आवरण रखना नितान्त आवश्यक होता है ।

संसार ऐसा विलक्षण है कि यहाँ बहुत शक्तिशाली और रूप-गुणशील भी कई बार बुराइयों की, आक्रमण की लपेट में आ जाते हैं, इसीलिये कहते हैं, न्याय और आत्मा की आवाज के लिये सबको समान रूप से प्रयत्नशील रहना चाहिए, चाहे वह छोटा हो या बड़ा । दोनों समाज में हैं, दोनों को ही सामाजिक उत्तरदायित्वों का पालन अनिवार्यतः करना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शेर जंगल का राजा होता है, बड़ा शक्तिशाली और एकान्तवासी, तो भी कुछ मक्खियाँ और कीड़े उसे ऐसे काटते हैं कि कई बार उसकी जान के ग्राहक ही बन जाते हैं । उत्तरी अमेरिका में एक खूबसूरत पक्षी 'स्कनस्' पाया जाता है और सूक्ष्मदर्शी चमगादड़ भी अपने दुश्मनों से बच नहीं पाते । यह अपनी आत्म-रक्षा के लिए अपने शरीर से एक विशेष प्रकार की दुर्गन्ध निकालकर दुश्मन को भगाते हैं । तात्पर्य यह है कि हमें संघर्ष के क्षणों में उन परिस्थितियों के लिए तैयार रहना चाहिए जो हमारी आदत के अनुकूल नहीं हों । इसके लिये पारक्यूपाइन की तरह पहले से ही तैयार रहना चाहिये । इस जन्तु के शरीर पर छोटे-छोटे काँटे होते हैं । स्याही के शरीर पर भी काँटे होते हैं, साधारणतया वे उनके काम नहीं आते । क्रोध और नाराजी भी मनुष्य के लिये हितकारक नहीं पर जिस तरह आत्मरक्षा के लिये यह जीव अपने काँटों को तरेरकर उन्हें डराकर भगा देते हैं, उसी तरह मनुष्य को परिस्थितियों में क्रोध और नाराजी भी व्यक्त करनी ही चाहिये । उस समय यही हमारे धर्म हो जाते हैं । राष्ट्र-रक्षा, सामाजिक जीवन में व्याप्त बुरे तत्वों चाहे वह चोर-डकैत हों अथवा दहेज, रिश्वत लेने वाले क्रोध और नाराजी के काँटे तरेरने ही चाहिये, यदि प्रजा अपना यह अस्त्र नहीं सँभालती तो अवांछनीय तत्व बढ़ते हैं और समाज पर छाकर सर्वत्र त्रास देते हैं ।

एटम बम विनाशकारी है, अन्य शस्त्रास्त्र लगता है, मानवता के हित में नहीं हैं पर सशस्त्र दुश्मन से बचाव की आवश्यकता आ पड़े तो प्रकृति यह बताती है कि आत्म-रक्षा के लिए वैज्ञानिक अस्त्रों का भी प्रयोग करना धर्म है । टारपिडो और नारसीन नामक मछलियों में शरीर से विद्युत उत्पन्न करने की क्षमता होती है । साधारणतया वह ऐसा करती नहीं पर यदि कोई दुश्मन पीछा करे तो ये विद्युत करेंट उत्पन्न कर उन्हें मार भगाती हैं । मनुष्य इन सभी गुणों का सम्मिश्रण है, प्रकृति अपने नन्हें जीवों के द्वारा उसे यह प्रेरणा देती है कि परिस्थिति के अनुसार मनुष्य को अपनी प्रत्येक क्षमता का प्रयोग कर मानवता की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए ।

अमेरिका में 'हागनोज्ड' नामक एक सर्प पाया जाता है, वर्जीनिया में 'अपोसम' नामक कंगारू पाया जाता है, दोनों में परले सिरे की चतुराई होती है, यह जब अपने शिकारी को देखते हैं तो ऐसे निश्चेष्ट हो जाते हैं, मानो मर गये हों । शिकारी इन्हें मृत समझकर मुड़ता है तो यह पीछे से आक्रमण कर देते हैं । कई बार हमारे सामने भी ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं, जब कोई क्षमता काम नहीं देती, उस समय ''देखि दिनन को फेर रहिमन चुप ह्वै बैठिए'' वाली कहावत के अनुसार चुप पड़ जायें पर जैसे ही परिस्थिति अनुकूल आये फिर क्रियाशील हो जाएँ । आत्मरक्षा, आत्मविकास और सामाजिक संघर्ष हमारे जीवन की मूलभूत आवश्यकतायें हैं, उसके लिए भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न स्वरूप बनाकर नाटक-कारिता का परिचय और अभिनय का आनन्द लेते हुए जीना चाहिए । ऐसा रंग-बिरंगा जीवन ही सफल और सार्थक होता है ।

रहस्यमय मछली के रहस्य

परिस्थितियों के अनुसार स्वयं का जीवनक्रम बदलने और प्रतिकूलताओं में भी जी लेने की सूझ-बूझ ईल मछली में देखी गयी । वर्षा ऋतु इन मछलियों के लिए प्रतिकूल पड़ती है । इसलिए ये अगस्त के महीने में वर्षा आरम्भ होते ही अपना स्थान छोड़कर अन्यत्र चली जाती हैं और जनवरी में, जब वर्षा बन्द हो जाती है तो वापस अपने स्थान पर लौट आती हैं । सत्रहवीं शताब्दी में जल-जन्तु के शोधकर्ता वैज्ञानिक फ्रांसिस्को रेडी ने ईल मछली से सम्बन्धित इन तथ्यों का पता लगाया ।

यों सर्प की आकृति वाली इस मछली को सदा से रहस्यमय समझा जाता है । न केवल अपनी आकृति के कारण, वरन् प्रकृति से भी यह विचित्र और रहस्यमय है । ईसा से ३०० वर्ष पूर्व तक ईल मछली के बारे में यह दन्त कथा प्रचलित थी कि वह एक विशेष जाति के सर्प से ही विवाह रचाती है, पर सत्रहवीं शताब्दी में जल-जन्तु शोधकर्ता फ्रांसिस्को रेडी ने ईल के बारे में यह विचित्र बात देखी । अगस्त से जनवरी तक यह मछली वर्षा ऋतु में अपने पूरे परिवार के साथ बाल-बच्चों सहित अन्यत्र चली जाती है । इतने दिन तक वह कहाँ रहती है और यकायक बच्चे कहाँ से आ जाते हैं यह एक रहस्य ही बना हुआ था, जिसको फ्रान्सिस्को महोदय ने ढूँढ़ निकाला ।

ईल की कई जातियाँ हैं वे इंग्लैंड, आइसलैण्ड, उत्तरी अमेरिका ग्रीनलैण्ड, जापान, आस्ट्रेलिया, आर्कलैण्ड, न्यूजीलैण्ड आदि देशों के नदी-तालाबों में पाई जाती हैं । पर जब उसको ऋतुकाल आता है तो वह प्रणय के लिए एवं प्रजनन की प्रक्रियायें सम्पन्न करने के लिए समुद्र में जाने का रास्ता ढूँढ़ती है । नदी, नालों को पार करती हुई वह किसी न किसी प्रकार समुद्र में जा पहुँचती है । वहीं वह पत्नी पद ग्रहण करती है और वहीं माता बनती है । यदि उसे समुद्र में जाने का अवसर न मिले तो फिर आजीवन ब्रह्मचारिणी का कठोर व्रत पालन करके ही जिन्दगी काट लेती है ।

डेनमार्क निवासी एक जन्तु वैज्ञानिक जोनेस सिमिट ने पता लगाया कि ईल समुद्र में ही नहीं वरन् एक विशिष्ट स्थान पर ही अपना गृहस्थ बनाती है । जहाँ-तहाँ वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रणय-प्रजनन नहीं करने लगती । योरोप की ईल को अमेरिका तक पहुँचने की लम्बी और कष्टसाध्य यात्रा में कई बार डेढ़ वर्ष या ढाई वर्ष तक लग जाते हैं । यह ठीक समय पर चलती हैं और ठीक समय पर पहुँचती हैं । यदि वह समय चूक जाय तो वह एक वर्ष रुकना ही उचित समझती है, समय की पाबन्दी और चलने तथा पहुँचने का समय उसे रेलगाड़ी की तरह ही याद रहता है और उसमें वह चूक प्राय: नहीं ही करती ।

यह बड़ी कठिन यात्रा है । इसमें उसे अनुकूल आहार न मिलने पर भूखा रहना पड़ता है, समुद्री क्षारों के प्रभाव से उसकी चमड़ी का रंग पलट जाता है । उस पर भी माँसाहारी जल-जन्तुओं से प्राण बचें तब वह अपने प्रियतम का घर ढूँढ़ पाती है । उसका विवाह समुद्र की तली में २०० से ४०० मीटर नीचे होता है । वहीं वह अण्डे देती है । अण्डों से निकलने के बाद जब बच्चे चलने-फिरने लायक हो जाते हैं तो उनके लालन-पालन का भार पति के कन्धों पर नहीं डालती वरन् अपने इन सब बाल-गोपालों को लेकर वह प्रदेश की ओर चल पड़ती है, जहाँ का अन्न-जल खाकर वह बड़ी हुई थी ।

अविकसित समझी जाने वाली ईल मछली मर्यादा पालन और शालीनता के सम्बन्ध में विकसित और बुद्धिमान समझे जाने वाले मनुष्य को बहुत कुछ सिखा सकती है, प्रणय और प्रजनन के लिये उपयुक्त पात्र और स्थान का वह चुनाव करती है और उसे क्रीड़ा कौतुक भर नहीं मानती वरन् उसके लिए कष्टसाध्य तपस्या भी करती है ।

मातृभूमि का प्यार उसे कितना अधिक है ? लौटकर वहीं आती है और समुद्र जैसे विशाल साधन-सम्पन्न के सहारे रहने की अपेक्षा अपने यहाँ की अन्न-जल प्रदान करने वाली मातृभूमि में ही दु:ख-सुख के दिन काटती है । भारत के अन्न-जल से पले, यहीं से शिक्षा पाये लड़के जब अधिक सुविधाओं के लालच में विदेशों के लिए भाग खड़े होते हैं और अपनी योग्यता से मातृभूमि को लाभान्वित करने के समय उसे धोखा देकर चले जाते हैं, तब यही कहना पड़ता है कि इन सुशिक्षितों से तो अशिक्षित 'ईल' हजार गुनी अच्छी है ।

मर्यादाओं और नीति नियमों से बँधा शिष्टशालीन व सभ्य जीवन ही प्रकृति की प्रेरणा है । परिस्थितियों के अनुसार अपने को बदल लेना और प्रगतिक्षेत्र में आगे बढ़ते रहने पर ही जीवन सफल और सार्थक होता है । प्रकृति अपने परिवार के प्रत्येक सदस्य को यह शिक्षण देती है ।

इन सभी गुणों और शिक्षाओं से ऊपर है स्वायत्तता का गुण । संसार में सामर्थ्यवान लोग ही जीते हैं । ''वीर भोग्या वसुन्धरा'' का उद्घोष सबसे पहले हम भारतीयों ने ही किया था, उसका आधार हमारी समर्थता ही थी । सामर्थ्यवान मनुष्य ही अपने आपको, अपनी बुराइयों को तथा शत्रुओं को जीत सकता है । शेर, चीता, हाथी, मगर, सूअर यह जंगल के बलवान जीव जंगल में स्वच्छन्द विचरण करते हैं, उन्हें केवल मनुष्य का ही भय रहता है और किसी का नहीं, क्योंकि उन्हें अपनी सामर्थ्य पर भरोसा होता है, वह अपनी शक्ति से आत्मरक्षा ही नहीं आक्रमण भी कर सकते हैं, इसी प्रकार मनुष्य को भी शक्तिशाली होना चाहिए । पाप और दुष्कर्म से बचे रहने के लिए हम भगवान से तो डरें पर अच्छे उद्देश्य, आदर्श और पार्थिव सुखोपभोग के लिए वर्तमान परिस्थितियों में हमें अपनी आंतरिक सामर्थ्य को इतना स्वायत्त बनाना चाहिए कि आवश्यकता पड़े तो विरोधियों को भी बलपूर्वक भी मार और भगाया जाया जा सके । जनसंख्या बढ़ाने से नहीं, आतंरिक सामर्थ्य बढ़ाने से ही हम बदली हुई परिस्थितियों में अपने आपको स्थिर और सम्मानित रख सकते हैं, दुर्बलों के लिये तो संसार में पग-पग पर कठिनाइयों के अतिरिक्त कुछ नहीं है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जीव-जन्तुओं की बोली समझना

हमारे मूक भाई-बन्धु

मनुष्य सर्वश्रेष्ठ जीव समझा जाता है । उसने अपनी मानसिक चेतना का असाधारण विकास करके ऐसी योग्यता प्राप्त कर ली है, जिसके द्वारा दूसरों पर शासन कर सके । उसकी सफलताएँ इतनी अधिक हैं, जिन पर गर्व किया जा सकता है परन्तु ऐसी बात नहीं है कि अन्य जीव जन्तु बिल्कुल ही भोंदू हों और उन्हें किसी प्रकार का कोई ज्ञान नहीं है । जब हम वैज्ञानिक दृष्टि से अन्य जीव-जन्तुओं की योग्यता पर विचार करते हैं तो आश्चर्य से दाँतों तले उँगली दबाते हुए यह बात स्वीकार करनी पड़ती है कि उनमें अनेक शक्तियाँ ऐसी महत्त्वपूर्ण हैं, जिन्हें प्राप्त करने में मनुष्य जाति को युगों का समय लगेगा । उन शक्तियों के लिये मनुष्य तरसता है ।

संसार में योग्यता, ज्ञान, बुद्धि और शक्ति की सीमा अत्यन्त है । मानव जाति के हिस्से में जितना आया है, उसका बहुत ही स्वल्प भाग अब तक प्राप्त किया जा सका है । जो योग्यताएँ हमारे हिस्से में आई हैं, उनका एक अणुमात्र ही प्राप्त करना अभी सम्भव हुआ है । परमात्मा ने अपनी अद्भुत सृष्टि के अन्तर्गत कल्पनातीत शक्तियाँ भर दी हैं और उनका बँटवारा उदारतापूर्वक छोटे-बड़े जीवों के लिये किया है । मनुष्य अपने मस्तिष्क की असाधारण उन्नति करने के कारण गर्वोन्मत्त बना हुआ है, दूसरे जीवों का मस्तिष्क इतना विकसित नहीं है तो भी उनकी शारीरिक एवं आध्यात्मिक योग्यताएँ इतनी अधिक हैं कि तुलना करने पर मनुष्य वैसी ही नीची श्रेणी का समझा जायगा जैसे हाथी के सामने चींटी । एक से एक बढ़कर उनकी उत्कृष्टताएँ हमारे बुद्धि गर्व को चुनौती देती हुई कहती हैं कि—हमें तुच्छ मत समझो, बेशक तुम बुद्धिबल में बढ़े हुए हो पर हम भी ईश्वर के वैसे ही कृपा पात्र हैं जैसे तुम । हमारे हिस्से में भी ऐसी-ऐसी योग्यताएँ आई हैं, जिन पर तुम ईर्ष्या कर सकते हो ।

प्राणियों की असाधारण शक्तियाँ

यदि मनुष्य में उछलने की शक्ति उतनी ही अनुपात से होती, जितनी कि टिड्डे में है तो मनुष्य दो ताजमहलों को एक के ऊपर एक खड़ा करके उन्हें उछलकर पार कर सकता । चींटी अपने शरीर की अपेक्षा तीस चालीस गुना अधिक वजन उठा लेती है, यदि मनुष्य में इसी हिसाब से बल होता तो वह हाथी-घोड़ों को गोद में उठाये फिरता ।

मक्खियों के पर जितनी तेजी से चलते हैं, उतनी तेजी से यदि किसी हवाई जहाज के पंख चल सकते तो वह प्रति घण्टा आठ हजार मील के हिसाब से उड़ता और पृथ्वी के एक कोने से दूसरे कोने तक पहुँचने के लिये कुछ घण्टे-मिनटों की ही जरूरत होती । चूहा जितना भोजन करता है, वैसी ही पाचक शक्ति यदि आप में होती तो कम से कम पाँच मन खुराक की नित्य आवश्यकता होती । गिद्ध की दृष्टि जितनी तेज होती है, वैसी ही यदि मनुष्य की होती तो आज तक जितनी दूरबीनें बनी हैं, वे सब बेकार हो जातीं क्योंकि इस समय बहुत कीमती दूरबीनों से जितनी दूरी दिखाई पड़ सकती है, उससे बहुत अधिक दूरी तो खुली आँखों से ही दिखाई दे जाती । वया जितनी बुद्धिमानी से अपना घोंसला बनाती है, उतनी जानकारी प्राप्त करने के लिये किसी इन्जीनियरिंग कालेज में दस वर्ष पढ़ने की आवश्यकता होगी ।

कुत्ते की सूँघने की शक्ति इतनी तीव्र होती है कि वह वर्षों पूर्व की घटनाओं को सूँघकर ही बता देता है । जिस मार्ग से वह एक बार निकल जाय, उसको आसानी से सूँघकर पहिचान लेता है । रेल में बैठकर एक कुत्ता अपने मालिक के साथ बाहर गया, परदेश में वह बिछुड़ गया । कुत्ते ने निराश होकर अपने पुराने घर को जाने का निश्चय किया । वह रेलवे स्टेशन पर पहुँचा और लाइनों को सूँघता हुआ एवं अनेक जंक्शन-स्टेशनों पर अपनी लाइन को पहिचानता हुआ पन्द्रह दिन में अपने घर पहुँच गया । चतुरता, चालाकी, मालिक का कार्य-साधन, संकेत, मनोभावों का पहिचानना आदि महत्त्वपूर्ण विषयों में कई जानवर बड़े कुशल होते हैं । बन्दर अपने शिक्षक के इशारे पर कैसे-कैसे मनोरंजक खेल करके दिखाते हैं । रीछ जैसा मनुष्य से कोसों दूर रहने वाला जानवर नाच-कूद के बड़े-बड़े काम करता है । जंगली हाथियों के पकड़ने में सिखाई हुई हथिनी ऐसी निपुण होती है कि जंगली झुण्डों में जाकर बड़ी चालकी से उन्हें भुलावे में डालकर अपने मालिक के चंगुल में फँसा लेती है । घोड़े रणक्षेत्र में ऐसी कुशलता दिखाते हैं, जैसी कोई नहीं दिखा सकता । शत्रु के आघात से मालिक को जिस फुर्ती से बचाते हैं, उसे देखकर घोड़े की बुद्धि पर आश्चर्य होता है । घुड़-दौड़ की बाजी में दूसरे को आगे न बढ़ने के लिये कई घोड़े ऐसे प्रयत्न करते हैं कि आगे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का घोड़ा पीछे रह जाता है । लोमड़ी तो धूर्तता की रानी है । शिकारी द्वारा जब पकड़ली जाती है तो कभी-कभी वह ऐसी चुप्पी साध लेती है मानो बिल्कुल मर गई है । मरी हुई समझकर शिकारी उसे झोले में डालकर चलता है, तब जब कभी मौका पाती है तो झोले में से निकल भागती है । खरगोश अपना पीछा करने वाले को चकमा देने के लिये कभी-कभी छोटे ढेले की आढ़ में छिप जाता है और इस प्रकार अपनी जान बचा लेता है । सियार जब किसी बड़े जानवर का माँस खाना चाहता है, किन्तु उसे मारने में खुद समर्थ नहीं होता तो सिंह, बाघ आदि बड़े जानवर के पास जाता है और उसके सामने एक खास तरह की बोली बोलकर अपने मनोभाव उस पर प्रकट करता है, बाघ उसका मतलब समझ जाता है और सियार के पीछे-पीछे चलकर शिकार मारता है । फिर उन शिकारी जानवरों की कृतज्ञता तो देखिये वैसे वे अपनी मारी हुई शिकार किसी दूसरे को छूने भी नहीं देते, पर इस सियार को प्रसन्नतापूर्वक खाने देते हैं । यहाँ तक कि पहिले उसका भाग काटकर अलग रख देते हैं, तब कहीं खुद खाते हैं । कितने ही बाघ, चीते आदि शिकारी जानवर सियारों को अपने दूत की तरह साथ रखते हैं और उसके लिये सब प्रकार की सुविधाएँ करते हैं । हिरन को अनुकूल ऋतुओं में ही रहना पसन्द है, इसलिये वह अच्छे मौसम में रहने के लिये हजारों कोस की यात्रा करता है । एक विशेष जाति के बारहसिंगे गर्मियों में रूस चले जाते हैं और जाड़े के दिनों में हिन्दुस्तान आ जाते हैं । उन्हें किसी सरकार से 'पासपोर्ट' लेने की जरूरत नहीं पड़ती ।

पालतू बाज चिड़ियों का शिकार करता है, मरे हुए पशु की गन्ध चील-कौओं को तीस मील दूर तक से मिल जाती है, वे बात की बात में इतनी दूर उड़ जाते हैं । कौआ रति-क्रिया करने में ऐसा लज्जाशील होता है कि जहाँ कोसों का निर्जन हो, वहीं गुप्त रीति से रति-क्रिया करता है । साँप को भी यह पसन्द नहीं है कि उसकी काम-क्रीड़ा को दूसरा देखे । सर्प और सर्पिणी जब किलोल कर रहे हों, तब किसी ने उन्हें देखा है, ऐसा पता चल जाय तो वे उस देखने वाले के प्राणघात बन जाते हैं । कोयल अपने अंडे पालने में बड़ी कामचोर होती है, वह कौए के घोंसले में अपने अंडे छोड़ आती है । यह कार्य वह बड़ी चालकी से करती है । गर्भिणी कोयल अपने पति समेत इस फिक्र में कई दिन तक घूमती रहती है कि किस कौए के घोंसले में अण्डे हैं । जब अण्डे देने का ठीक समय होता है तो नर कोयल उस अंडे वाली काकली से छेड़छाड़ करता है । काकली उसे भगाने के लिये दौड़ती है । नर कोयल उससे अकारण लड़ता है और अपने साथ बहुत देर तक उलझाये रहता है । इसी बीच में कोयल मौका पाकर घोंसले में से उसके अंडे गिरा देती है और उसमें अपने अण्डे रख देती है । काम पूरा हो चुकने पर मादा कोयल जब इशारा करती है तो नर कोयल काकली से लड़ना छोड़कर भाग जाता है । बेचारी काकली यह समझ भी नहीं पाती कि अंडों में क्या करतूत की गई है ।

कई पक्षी अपने स्वभाव के बड़े ही दृढ़ और भावना के सुस्थिर होते हैं, उनका हृदय ऐसे उच्च गुणों से परिपूर्ण होता है, जो मनुष्य में भी अच्छी तरह नहीं देखे जाते । चकोर की चन्द्रमा से ऐसी प्रीति होती है कि चाँदनी रात में वह बिना पलक झपाये चन्द्रमा को देखती रहती है । रात को जलते हुए कोयले उसके सामने रखे जाएँ तो चन्द्रमा का ही टुकड़ा समझकर उसे पेट में रखने के लिये उसमें चोंच मारती है । चकवी-चकवे नियमपूर्वक ब्रह्मचर्य पालन की इच्छा से रात को अलग-अलग रहते हैं और प्रातःकाल फिर एकत्रित हो जाते हैं । वे इस नियम में कभी बाधा नहीं आने देते । हरियल पक्षी भूमि पर पैर नहीं रखता, पानी पीने के लिये उसे उतरना होता है तो लकड़ी की खड़ाऊँ जरूर साथ लाता है । पतंगा दीपक की ज्योति से प्रेम करता है, वह ज्योति में ही मिलना चाहता है, उस प्रयत्न में उसे अपने प्राणों का रत्ती भर भी मोह नहीं होता । सारस का जोड़ा इतना पतिव्रत और पत्नीव्रत होता है कि एक के मर जाने पर दूसरा रो-रो कर प्राण दे देता है । खञ्जन पक्षी को शरद जैसी ऋतु में ही रहना पसन्द है, इसलिये वह ऋतुओं के परिवर्तन के साथ देशों का भी परिवर्तन करता है, अपनी इच्छित ऋतु में रहने के लिये उसे एक वर्ष में असंख्य भूखण्डों की यात्रा करनी पड़ती है ।

कई पक्षियों में बड़े आश्चर्यजनक गुण होते हैं । चमगादड़ को आँखों से बहुत कम दिखाई देता है, कान भी बहुत निकम्मे होते हैं, केवल उसकी स्पर्शेन्द्रिय इतनी प्रबल होती है कि उसकी सहायता से सब इन्द्रियों का काम निकाल लेती है । वैज्ञानिक लोग पहिले यह समझते थे कि यह हवा जिस चीज को छूकर आती है, उसके गुण, उसकी लहरों में होते हैं, उन्हीं के द्वारा चमगादड आस-पास की वस्तुओं को पहिचानती है । अब पता चला है कि वह हवा के प्रवाह में उलटी दिशा में भी वस्तुओं का और उनके स्थानों की दिशा तथा दूरी का भी ठीक-ठीक पता लगा लेती है । इससे सिद्ध हो गया है कि वस्तुओं के स्पर्श से ईथर तत्व में जो लहरें उठती हैं, उन्हीं के स्पर्श द्वारा चमगादड़ सब चीजों का ज्ञान वैसे ही प्राप्त कर लेती है, जैसे कि हम आँखों और कानों की सहायता से करते हैं । मुर्गा को सूर्य की प्रथम किरण का आगमन होते ही पता चल जाता है, वह प्रातःकाल की निश्चित बेला में अपनी बाँग लगाकर सोने वालों को जगा देता है । मोरों की गुप्त चेतना-शक्ति यह जान लेती है कि समुद्र के अमुक स्थान से उठने वाले बादल इस प्रान्त में बरसते हैं । समुद्र के उस स्थान से जब बरसने वाले बादल उठते हैं तो उस तट के मोर एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विशेष वाणी में बोलते हैं । मेघ-मार्ग के निकटवर्ती मोर उस वाणी को सुनकर जोरों से बोलते हैं, उनके सुनने की शक्ति तीव्र होने के कारण मीलों की आवाज वे सुन लेते हैं । इस प्रकार समुद्र तट से वर्षा होने वाले स्थानों तक में मोरों की आवाज का टेलीफोन लग जाता है । जब मोर खूब कूकते हैं, तब किसान समझ लेता है कि अब वर्षा शीघ्र ही होने वाली है । मोरों की चुप्पी से किसानों का मन भयभीत हो जाता है, क्योंकि वे जानते हैं कि मोरों की चुप्पी का स्पष्ट अर्थ है—मेह का न बरसना । मानसून का आगमन गिरगिट के बदलते हुए रंग से पहिचाना जा सकता है । देखा जाता है कि कई बार घनघोर घटाएँ आने पर भी मकड़ी अपने अण्डों को सफेद जाले में बन्द नहीं करती, क्योंकि उसे अच्छी तरह प्रतीत होता है कि यह घटाएँ बरसने वाली नहीं हैं, किन्तु मौसम बिल्कुल सूखा हो, पर मकड़ी अपने अण्डों को बन्द करने लगे तो वर्षा के समीप होने में सन्देह नहीं रह जाता । इसी प्रकार जब मकड़ी खेतों में जाला तानने लगती है तो वर्षा समाप्त हुई, ऐसा मान लिया जाता है । कई बार सावन-भादों के महीनों में मकड़ी ने जाले ताने, इसके बाद में फिर कोई वारिश नहीं हुई । इसका मतलब यह नहीं है कि जाले से डरकर वारिश भाग गई अपितु यह है कि वर्षा चले जाने का निश्चित अनुभव करके मकड़ी ने अपना कार्य आरम्भ कर दिया ।

कितने ही पक्षी बड़े उपकारी होते हैं और निस्वार्थ भावना से दूसरों को खतरे से बचाते रहते हैं । जहाँ सर्प, सिंह, अजगर, व्याघ्र आदि दुष्ट स्वभाव के जीव दिखाई पड़ें, वहाँ 'सतभैया' कीरन्तिये, गलगलिए आदि पक्षी बड़े जोरों से चिरचिराना शुरू कर देते हैं, जिससे दूसरे जीव उस खतरे को जान लें और सावधान हो जाएँ । गेंडा पशु के साथ भी कुछ पक्षी उसके शरीर के कीड़े खाने के लिये रहते हैं । वह किसी हिंसक जन्तु की समीपता का परिचय पाते ही चिरचिराना शुरू करते हैं, तदनुसार गेंडा सावधान हो जाता है ।

इस प्रकार विभिन्न प्रकार की ऐसी शक्तियाँ इन जीव-जन्तुओं में पाई जाती हैं, जो मनुष्य में नहीं होतीं या बहुत अल्प मात्रा में होती हैं । अन्य प्राणी मनुष्य की तरह स्वार्थी नहीं हैं कि अपनी शक्ति को दूसरों के लाभार्थ देने में आनाकानी करें । वे किसी के द्वारा जरा सी याचना करने पर अपनी सेवाएँ उसे अर्पित करने को तैयार रहते हैं । गाय दूध देने में और घोड़ा सवारी देने में कुछ बहुत अधिक आपत्ति नहीं करते वरन् सत्पात्री अपनी सेवा देते हुए प्रसन्न होते हैं, उसी प्रकार यदि हम योग्यतापूर्वक उनकी इन आश्चर्यजनक बातों का लाभ उठाने का प्रयत्न करें तो वे हमारी सहायता करने में जरा भी पीछे न रहेंगे ।

अन्य जीवों की आध्यात्मिक शक्ति

मनुष्येतर अन्य प्राणियों में कोई इन्द्रिय शक्ति मनुष्य की अपेक्षा असंख्य गुनी बलवान होती है, इसका वर्णन पीछे हो चुका है । यदि उसी परिमाण में वे शक्तियाँ मनुष्य को भी प्राप्त हुई होतीं तो वह इतना सामर्थ्यवान होता कि प्राचीन काल में रावण आदि मायावियों की अद्भुत सामर्थ्य बिल्कुल साधारण और स्वाभाविक प्रतीत होती ।

इन्द्रिय शक्ति के अतिरिक्त मनुष्य में आध्यात्मिक योग्यता विशेष समझी जाती है और ऐसा माना जाता है कि यह शक्ति अन्य जीवों में नहीं होती, परन्तु यह मानना बिल्कुल ही गलत और भ्रमपूर्ण है । कोई भी चैतन्य प्राणी जड़ पदार्थों से निर्मित नहीं हुआ है, हर एक चीज का निर्माण आध्यात्मिक तत्वों से होता है, फिर यह कैसे सम्भव है कि उसमें आध्यात्मिक शक्ति न हो । जड़ विज्ञान के आधुनिक पण्डित जिस बात को कह दें, वह पत्थर की लकीर की तरह नहीं मान लेनी चाहिये । रेल, तार, हवाई जहाज आदि प्राचीन समय की होड़ और परित्यक्त आविष्कारों की जूठन को लेकर वर्तमान विज्ञानवादी इठलाते फिरते हैं, पर क्या इतने मात्र से उन्हें सत्य विद्याओं का भी आचार्य मान लिया जायेगा ? विज्ञानवादी कहते हैं कि मछली आदि जीवों को मारने, काटने पर भी पीड़ा नहीं होती । पशुओं में आत्मा का होना वे नहीं मानते । कुछ समय पूर्व तो यह लोग स्त्रियों में भी आत्मा का होना नहीं मानते थे । केवल पुरुषों में ही अध्यात्म शक्ति होती है । योरोपवासी इस उपहासास्पद भ्रम में अब तक पड़े रहे हैं । अस्तु, हमें इन लोगों के कथन का अन्धानुकरण न करके स्वतन्त्र बुद्धि से काम में लाना होगा और भारतीय ऋषियों के महत्त्वपूर्ण अनुसन्धानों से सहायता लेनी होगी ।

भारतीय अध्यात्म विज्ञान स्वीकार करता है कि मनुष्य के समान ही अन्य प्राणियों में भी आत्मा है और वह भी अपना विकास ठीक उसी प्रकार करती है, जैसा कि मानवीय चेतना । आत्मा का जीवन एक और अखण्ड है । भिन्न-भिन्न योनियों के शरीर केवल वस्त्र मात्र हैं, जो नित्य बदलते रहते हैं । जेलखानों का कायदा है कि जो कैदी कपड़ों की सुरक्षा नहीं रखता, उसे टाट के कपड़े पहनने को मिलते हैं । मनुष्य शरीर का दुरुपयोग करने वालों को अन्य योनियों में जाना पड़ता है । बेशऊ उन योनियों के शरीर और इन्द्रिय शक्तियाँ अधूरी हैं । मस्तिष्क की बड़ी न्यूनता है, वाक्शक्ति विकसित नहीं है पर इन शारीरिक अभावों का सम्बन्ध आत्मा से कुछ नहीं है । कपड़े बदल जाने से शरीर की योग्यता में फर्क नहीं आता, इसी प्रकार शरीरों की भिन्नता के कारण आत्मा में हेर-फेर नहीं होता । स्मरण रखना चाहिये कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मा अमर है, जीव अखण्ड है, आपकी आत्मा असंख्य शरीरों को धारण कर चुकी है और कौन जानता है कि अभी कितने प्रकार के शरीर और धारण करने पड़ेंगे ? इन बातों पर विचार करते हुए यह मानना पड़ता है कि जीव मात्र में आत्मा है । उपयोग से जैसे हर शक्तियाँ तेज होती हैं, उसी प्रकार साधनों, अभ्यासों द्वारा आध्यात्मिक शक्तियाँ सुतीक्ष्ण बनाई जाती हैं । साधारण गृहस्थ और योगी की आत्मा एक सी है, पर अभ्यास के कारण एक की शक्ति अधिक है, दूसरे की न्यून । इसी प्रकार अन्य जीव उस योग्यता का उपयोग मनुष्य की अपेक्षा कम करते हैं, इसलिये वे इस दिशा में पिछड़े रहते हैं । फिर भी एक प्रकार वे आगे बढ़े हुए होते हैं । काम, क्रोध,लोभ मोह, मद, मत्सर, छल, पाखण्ड की नित नई रचना का भार इतना अधिक बढ़ जाता है कि आत्मा की अलौकिक और आश्चर्यजनक योग्यता दबती जाती है । पतंजलि कृत योग-दर्शन में यम-नियमों का वर्णन करते हुए उनकी विभूतियों का परिचय कराया है । वे कहते हैं कि अहिंसा का ठीक प्रकार पालन करने से मनुष्य निर्बैर हो जाता है, कोई उससे बैर नहीं करता, वह हिंसक पशुओं के साथ भी खेलता रह सकता है । सत्य की दृढ़ स्थिति वाणी से ऐसी हो जाती है कि जो कह दे, वही बात पूरी हो जाय । चोरी का त्याग करने से सब रत्न उपस्थित हो जाते हैं । ब्रह्मचर्य से अपार सामर्थ्य आती है । अपरिग्रहों से कई जन्म का वृतान्त मालूम होने लगता है । शौच के पालन से शारीरिक अंगों के प्रति निर्ममता हो जाती है । सन्तोष से परमोत्तम सुख मिलता है । तप से इन्द्रियाँ इतनी निर्मल हो जाती हैं कि बहुत दूर तक देख सकती हैं, बहुत दूर का सुन सकती हैं, शरीर रूई की तरह हलका हो जाता है । स्वाध्याय से इष्टदेवता का साक्षात्कार होता है । आसनों के अभ्यास से सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास आदि द्वन्द्व नहीं सताते । प्राणायाम् से ज्ञान का तेज प्रकाशित होता है और प्राण वश में हो जाता है । जीवन को प्राकृतिक नियमानुसार और ईश्वरीय आदेशों का पालन करते हुए पवित्रता के साथ बिताया जाय तो ऐसी अलौकिक सिद्धि सहज ही प्राप्त हो सकती हैं, जिन्हें दूसरे लोग बड़ी अद्भुत और कष्टसाध्य समझते हैं ।

इसमें आश्चर्य की कुछ बात नहीं है, जिस प्रकार राख हटा देने से अग्नि चमकने लगती है, दर्पण की धूल साफ कर देने से वह निर्मल हो जाता है, उसी प्रकार दुर्गुणों, कषाय-कल्मषों के हटा देने पर आत्मा की स्वाभाविक किरणें फूट निकलती हैं । चूँकि बहुत कम लोग निर्मल होते हैं, इसलिये वे शक्तियाँ भी कम दिखाई देती हैं, जो वस्तु कम होती है, वही आश्चर्य की तरह प्रतीत होती है । इसलिये हम योग की विभूतियों से आश्चर्य करते हैं, परन्तु यथार्थ में वह आश्चर्य जैसी वस्तु नहीं है ।

पशु-पक्षी प्रायः उतने कषाय-कल्मषों से ग्रसित नहीं होते, इसलिये उनकी स्वाभाविक, आध्यात्मिक शक्ति बहुत मलीन नहीं होती । इन जीवों के स्वभावों में सत, रज, तम विभिन्न मिश्रण होते हैं, इसलिये उनके स्वभावानुसार ही आत्म-तेज प्रसारित होता है । कुछ का ज्ञान तो बहुत ही जड़ होता है, इनकी चेतना तम से आच्छन्न रहने से बहुत मलीन हो जाती है और वे उच्च आध्यात्मिक गुणों का परिचय नहीं दे सकते, किन्तु कुछ चैतन्य, स्फूर्तिवान और जागरूक होते हैं । इनमें किसी की चैतन्यता सत् में प्रवृत्ति होती है और किसी की तम में । जैसे ज्ञान-योगी और तन्त्र-योगी अलग-अलग प्रकार की आध्यात्मिक शक्तियों से सम्पन्न देखे जाते हैं, उसी प्रकार जीव-जन्तु भी अपने स्वभाव के अनुसार आत्मा की असंख्य किरणों में से कुछ प्रकाश विशेष रूप से सतेज किया करते हैं ।

अजगर सर्प के नेत्रों में ऐसा तेज होता है कि वह दृष्टि मात्र से छोटे पक्षियों और मेंढकों को अपनी ओर खींच लेता है । वह अपने स्थान पर मुँह फाड़े पड़ा रहता है और उसकी शिकार अपने आप उसके मुँह में घुसती हुई चली जाती है । सिंह की दृष्टि से जंगली जीव जहाँ के तहाँ स्तम्भित रह जाते हैं । भेड़िये की भाव-भंगी में कुछ ऐसा बल होता है कि भेड़-बकरी का भागना तो दूर रहा, चिल्लाना तक भूल जाती हैं । बिल्ली को सामने देखकर कबूतर के पंख बँध जाते हैं । यह तामसिक आत्मशक्ति है, जैसी कि तान्त्रिकों में होती है । स्पष्ट है कि यह कार्य किसी इन्द्रिय की शक्ति से नहीं होते वरन् एक गुप्त योग्यता के कारण सम्पन्न होते हैं ।

कोई मकान गिरने को होता है तो बिल्ली उसमें से अपने बच्चे पहले ही निकाल लेती है । देहाती मरघट में जहाँ कभी-कभी साल में दस-पाँच मुर्दे जलते हैं, यदि कभी सियार लौटता देखा जाता है तो वहाँ के निवासी समझ लेते हैं कि इस सप्ताह में अवश्य ही कोई मृत्यु होने वाली है और प्रायः यह बात ठीक ही निकलती है। जब कुत्ते एक साथ मिलकर उच्च स्वर से रुदन करते हैं तो उस गाँव में चोरी, डकैती, बीमारी, कलह, विरोध, अग्निकाण्ड या ऐसे ही अन्य उत्पात होते हैं । वहाँ के निवासियों की शारीरिक और मानसिक भयावह परिस्थितियों का परिचय कुत्तों से मिलता है । वे अनिष्ट की आशंका से दुःखी होते हैं । हमें तो मकान उसी समय गिरता हुआ मालूम होता है, जब उसके टुकड़े जमीन पर गिर पड़ते हैं, परन्तु वास्तव में गिरने की सूक्ष्म क्रिया बहुत पहले से होने लगती है । बिल्ली की चेतना शक्ति इस गिरावट के कार्य को बहुत पहले से देखती है और अपने बच्चों को वहाँ से उठा ले जाती है । इसी प्रकार मनुष्य एकदम नहीं मर जाता वरन् यदि बीमार पड़ा हुआ हो तो कई दिन पहले से मरने की क्रिया आरम्भ हो जाती है । सियार को उस मुर्दनी की गन्ध आती है और वह मरघट में जा पहुँचता है । किसी व्यक्ति के सिर पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कौआ बैठ जाय तो समझा जाता है कि इसकी मृत्यु निकट है, कारण यह है कि कौए को दिखाई पड़ जाता है कि इसके सूक्ष्म शरीर का विसंगठन हो रहा है । उसकी आन्तरिक निर्बलता को समझता हुआ कौआ निर्भय हो जाता है और उस अधमुर्दे को अपना भावी भोजन समझता हुआ पूर्व स्वागत को जा पहुँचता है । इसी प्रकार जिस व्यक्ति पर कुत्ता पेशाब कर दे, उसे समझना चाहिये कि मेरा आत्म-तेज इतना निर्बल हो गया है कि कुत्ते को उसकी जीवनी-शक्ति पहिचानने में भूल हुई ।

दो व्यक्तियों में जब बड़ी घनिष्टता हो और उनमें से कोई एक अपने दूसरे मित्र से मिलने के लिये जावे तो जाने वाला उस पहुँचने के स्थान का स्मरण करता जाता है । यह विचार-धारा ईथर तत्व में मिलकर उस घर तक पहुँचती है । ऐसे विद्युत-प्रवाह को कौए अच्छी तरह पहिचानते हैं, वे पूर्व सूचना देने के लिये उस घर के मुंडेर पर जा बैठते हैं और 'कौ-कांग' 'कौ-कांग' शब्दों में किसी के आगमन की सूचना देते हैं । देखा गया है कि जिस दिन घर की मुंडेर पर कौए की हरकत होती है, उस दिन उस घर में जरूर कोई अतिथि आ जाता है । जिस घर के लोग किसी कारणवश उस स्थान को छोड़ने वाले होते हैं और वहाँ नीरवता का साम्राज्य होने वाला होता है, वहाँ आकर उल्लू बैठते और बोलते हैं एवं चमगादड़ें अपने घोंसले बनाती हैं । जिन घरों में अनेक व्यक्ति रहते थे, उनमें उल्लू और चमगादड़ों का पदार्पण हुआ तो यह देखने में आया कि कुछ काल पश्चात् वे घर वीरान हो गये । घरों में रहने वाली गौरेया चिड़िया अपने घर में किसी मनुष्य के शुभ भविष्य को जब देखती है तो बहुत प्रसन्न होती है । यहाँ तक कि खुशी में उसके सिर, गर्दन, कन्धे या भुजा पर आकर बैठ जाती है, देखा गया है कि जिसके ऊपर गौरेया बैठ जाती है, उसे किसी न किसी प्रकार का लाभ अवश्य होता है ।

सर्प को अपने कई जन्म की बातों का स्मरण होता है । वह अपने पिछले जन्म की घटनाओं को भलीभाँति स्मरण रखता है और सताने वाले से बदला लेकर ही छोड़ता है । बालक सर्प को सताने या मारने वाले को उसके माता पिता अपनी आत्मशक्ति द्वारा पहचान लेते हैं और उससे समुचित प्रतिशोध लेते हैं । कछुआ एक विचित्र शक्ति से सम्पन्न होता है । कछवी अपने अण्डे बालू में गाढ़ आती है और जल में रहते हुए ही आत्मशक्ति से उन्हें सेती रहती है । जब अण्डे पक जाते हैं तो बिना किसी प्रकार की भूल किये हुए वे अपनी माता के पास पहुँच जाते हैं । दूसरी कछुवी अन्य बच्चों को अपने पास नहीं आने देती, इसलिये बिना पूर्व दर्शन के माता-पुत्र का यह सम्मिलन एक बड़े आश्चर्य का विषय है । अण्डे देने के बाद यदि मादा कछवी को मार डाला जाय तो वह अण्डे बालू में पड़े-पडे ही सड़ जाते हैं, फिर उनसे बच्चे नहीं निकल सकते । पिंजड़े में जब कोई चूहा पकड़ जाता है या चूहे जिस पिंजड़े में पकड़े जा चुके हों, उसमें फिर अन्य चूहे बहुत ही कम घुसते हैं, क्योंकि पूर्व समय में कैद हुए चूहों के भयग्रस्त भावना-कण उसमें भरे रहते हैं । जब पिंजड़े को पानी से धोकर या अन्य प्रकार की शुद्धि करके उन भावनाकणों को हटा दिया जाता है तो फिर चूहे उसमें कैद होने लगते हैं । कसाई लोग जानते हैं कि बूचरखाने के दरवाजे पर पहुँचते ही नया पशु घबड़ा जाता है और उस फाटक के अन्दर बड़ी कठिनाई से घुसता है । प्रत्यक्षतः वहाँ बाहर कोई भय की बात दिखाई नहीं पड़ती, पर इन पशुओं की आत्मिक शक्ति इस बात का अनुभव करती है कि इस स्थान पर घातक वातावरण गूँज रहा है ।

एक नहीं, अनेकानेक प्रमाण ऐसे मिल सकते हैं और प्राप्त किये जा सकते हैं, जिनमें जीव-जन्तुओं की असाधारण अध्यात्म शक्ति सिद्ध होती है । जीवों की अन्यान्य शक्तियों से जैसे हमें सहायतायें प्राप्त होती हैं, वैसे ही उनकी इस माहन् शक्ति द्वारा भी हमें लाभ उठाना चाहिये जैसा कि हमारे पूर्वज उठाते थे ।

मनुष्य और जीव-जन्तुओं के सम्बन्ध

माता-पिता, भाई-बहिन, स्त्री-पुरुष, मित्र-रिश्तेदार, स्वजन-सहोदर तथा बन्धु-बान्धवों के साथ जिस प्रकार हमारे घनिष्ट सम्बन्ध होते हैं, ठीक वैसे ही सम्बन्ध अन्य जीव-जन्तुओं के साथ भी विद्यमान हैं । बल्कि यों कहना चाहिये कि उनके साथ जाति-बान्धवों और रिश्तेदारों से भी अधिक घना सम्बन्ध है । गाय, भैंस, बकरियों द्वारा दुग्ध-दान, बैल, भैंसों का कृषि-कर्म, भार-वाहन और ऊँट, घोड़े, हाथी, गधे, खच्चर आदि की महत्त्वपूर्ण सेवाएँ ऐसी हैं, जिनके ऊपर मानव जाति की इतनी उन्नति होने का श्रेय है । गोबर, चर्म, बाल, हड्डी आदि के द्वारा एक बड़े अभाव की पूर्ति होती है । कितने ही जीव-जन्तु ऐसे हैं जिनका कार्य हमारी समझ में नहीं आता, पर यथार्थ में वे मानव जाति की बड़ी भारी सेवा करते हैं । सुअर गन्दा और घृणास्पद समझा जाता है पर उसके द्वारा बड़ी भारी सफाई होती है । चील, कौए, गिद्ध कुत्ते, सियार आदि मृत माँस-भोजी जीव यदि अपना काम बन्द कर दें तो मृत शरीरों की सड़न से सारा वायु-मण्डल दुर्गन्धित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जावे । चींटी और दीमक खेतों को पोला करके भूमि के भीतर की उर्वरा शक्ति को बाहर लाती हैं । जिन प्रदेशों में चींटी और दीमक कम होती हैं, वहाँ की भूमि कम उपजाऊ रह जाती है । चिड़ियाँ कीड़े-मकोड़ों की अनावश्यक संख्या को कम करती हैं और उनके द्वारा होने वाली हानि से हमें बचाती है । मछलियाँ तालाबों की गन्दगी को चाटकर उन्हें निर्मल बनाती हैं । यदि बिल्लियाँ न हों तो हर छठे महीने छै-सात बच्चे देने वाली एक चुहिया का वंश दो-तीन वर्ष में इतना बढ़ जाय कि घर में चारों ओर चूहे ही चूहे दिखाई पड़ें । बकरी और कबूतरों से जो गन्ध निकलती है, वह क्षय जैसे भयंकर रोगों के कीटाणुओं का संहार करती है । छिपकली घरों में उत्पन्न होने वाले हानिकारक कीड़ों को नष्ट करती है और अपने शरीर के विद्युत प्रवाह से रोग-कीटाणुओं को जलाकर भस्म करती रहती है । बहुत-से जीव ऐसे हैं, जिनका लाभ अभी तक मनुष्य जाति समझ ही नहीं सकी है और किन्हीं-किन्हीं को तो हानिकारक भी मानती है, परन्तु जैसे-जैसे हमारे प्रज्ञा-चक्षु खुलते जावेंगे, वैसे ही वैसे हर एक जीव का महत्व समझते जावेंगे । वह समय निकट है, जब विज्ञान इस बात को प्रमाणित कर देगा कि सृष्टि का एक भी जीव निकम्मा और हानिकारक नहीं है । हर एक प्राणी सृष्टि का सन्तुलन ठीक रखने के लिये उत्पन्न किया गया है, वह किसी को हानि नहीं पहुँचाता । हमारा यह समझना बेकार है कि अमुक प्राणी हमें हानि पहुँचाता है । सच तो यह है कि सृष्टि का हर प्राणी हमें लाभ पहुँचा रहा है । प्रकृति का सारा ही कार्य हमारी भलाई के लिये हो रहा है । माली अपनी वाटिका को सुन्दर बनाने के लिये किन्हीं पौधों को उखाड़ फेंकता है, किन्हीं की डालियाँ काटता-छाँटता है, किन्हीं पेड़ों में कलम लगता है । यह कार्य पौधों को अप्रिय प्रतीत हो सकते हैं और यदि वे सोचते-समझते हों तो माली को अन्यायी, निष्ठुर, क्रूर आदि नामों से सम्बोधित कर सकते हैं, पर माली का दृष्टिकोण दूसरा ही है । वह वाटिका के हर पौधे को प्यार करता है और उसको सुरम्य बनाने के लिये ही ऐसे कतर-व्योंत करता रहता है । अमुक जीव हमें हानि पहुँचाते हैं, अमुक लाभ करते हैं, इसका निर्णय हमारी स्थूल बुद्धि ठीक-ठीक नहीं कर सकती । वैज्ञानिक यह साबित कर चुके है कि गाय के बराबर ही छिपकली का घर में रहना आवश्यक है, जितना लाभ गाय से है, उतना ही एक छिपकली से भी होता है । एक जीव-विद्या अन्वेषक डाक्टर का मत है कि यदि सृष्टि के अन्य जीव-जन्तु नष्ट हो जायें तो मनुष्य जाति का अस्तित्व तेरह घण्टे से अधिक न रहेगा । इस विषय पर गम्भीर विवेचना करने के पश्चात् एक अध्यात्म-विद्या के जिज्ञासु को यह स्वीकार करना पड़ेगा कि संसार के समस्त प्राणी मनुष्य की सेवा करते है, सहायता देते हैं, उन्नत बनाते हैं, पुष्ट करते हैं और आपत्तियों से बचाते हैं । हर जीव दूसरों के लिये वैसे ही उपयोगी और आवश्यक है जैसे कि उसके सजातीय बन्धु-बान्धुव एवं कुटुम्ब परिवार के छोटे-बड़े साथी सहयोगी ।

मनुष्य जब तक तमोगुण की भूमिका में जाग्रत रहता है, तब तक उसका स्वार्थ बहुत संकुचित रहता है । जब वह क्रमशः ऊँचा चढ़ने लगता है तो अपने स्वार्थ को भी विस्तृत करता जाता है, अन्त में एक समय ऐसा आता है, जबकि स्वार्थ और परमार्थ एक हो जाते हैं. अपने पराये का भेद मिट जाता हैं 'तू' का प्रश्न नहीं उठता । उस परमहंस गति तक पहुँचने से पूर्व सीमा संकुचित रहती है । आज हम मनुष्य जाति के अन्तर्गत ऐसे बहुसंख्यक प्राणी देखते हैं, जिनका स्वार्थ बहुत थोड़ा विकसित हुआ है । अपना शरीर, अपना परिवार, अपनी जाति, अपना देश या अपनी योनि-यहाँ तक तो कइयों का स्वार्थ विस्तृत होता देखा जाता है, परन्तु वे अभी अपनी दृष्टि, अपनी आत्मा के स्वार्थ तक बढ़ाने में समर्थ नहीं हुए हैं । जिनके कार्य अपने निकटस्थ लोगों के लिये होते हैं, उनकी मानसिक उन्नति प्रशंसनीय है, परन्तु अभी उन्हें और आगे बढ़ना है, अपने अधूरे कदम को पूरा करना है । सृष्टि के समस्त जीव-जन्तु हमारे कुटुम्बी हैं और उनके बीच में इतना अन्तर नहीं है कि उन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखें या अपने से भिन्न समझें । समस्त जीवों में एक ही जाति की आत्मा भ्रमण कर रही है । क्रम-बन्धन में बँधा हुआ प्राणी चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करता है और फिर मानवीय दिव्य शरीर को प्राप्त करता है । कर्तव्यच्युत मनुष्य फिर उन्हीं योनियों में भ्रमण के लिये अधोगति प्राप्त करते हैं । वस्तुतः समस्त जीवों में एक ही जाति की आत्मा है । जिस कुत्ते को आज हम उपेक्षा और तिरस्कार की दृष्टि से देखते है, हो सकता है कि वह चार वर्ष पूर्व हमारा स्वर्गीय पिता रहा हो । इस प्रकार हमारे इसी जन्म के कितने ही स्वजन-सहोदर, इष्ट-मित्र, बन्धु-बान्धव एवं प्रियजन ऐसे होगे, जो स्वर्ग-प्रयाण करने के बाद इन योनियों में आए हों । हम अपने कल्मष-कषायों के कारण पूर्व सम्बन्धित आत्माओं को पहचानने की योग्यता खो चुके हैं, किन्तु यदि इन प्राणियों को वह पूर्ण जन्म की स्मृति बनी हो और वे हमें उसी पुत्र, मित्र आदि के रूप में देखते हों तो क्या आश्चर्य है ? परन्तु जब वे हमारी ओर से इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपेक्षा और अनात्म भाव को देखते होंगे तो कितने दुःखी होते होंगे । यह भी हो सकता है कि कुछ समय पूर्व हम किसी पशु-पक्षी के हितू-सम्बन्धी रहे हों और हम मनुष्य देह पाकर उससे घृणा-तिरस्कार करते हों तो वह अपने मन में कितना दुःखी होता होगा ? अध्यात्म विद्या के जिज्ञासुओं को यह भावना अपने मन में दृढ़ीभूत करनी होगी कि जीव मात्र में एक आत्मा है । यदि आत्मा की मनुष्य जाति है तो यह सारे जीव-जन्तु मनुष्य हैं, किन्तु कारणवश भिन्न प्रकार के कपड़े पहिने हुए हैं । यदि आत्मा की जाति पशु-पक्षी है तो सम्पूर्ण मनुष्य पशु-पक्षी हैं, केवल अपने कठोर परिश्रम और ईश्वर की महती दया के कारण कुछ समय के लिये उत्तम साधन पा गये हैं । समस्त जीवों के बीच में शरीर भिन्नता का थोड़ा-बहुत अन्तर अवश्य है, पर यह अन्तर इतना अधिक नहीं है कि उन्हें अपने से असम्बद्ध समझा जाय । वास्तव में हम सब एक हैं । सृष्टि का हर एक जीव-जन्तु आपस में एक सुदृढ रज्जु से बँधा हुआ है । हम सब एक समान हैं और भाई-भाई हैं । अब समय आ गया है कि हम लोग अपनी स्वार्थ भावना का दायरा एक कदम और आगे बढ़ावें और जीव-जन्तुओं के साथ भी आत्मीयता का रिश्ता कायम करें । ज्ञान की उच्च भूमिका में जाग्रत होने के लिये अब आप प्रयत्नशील हो रहे हैं तो आपको अपनी आत्मीयता विस्तृत करनी होगी । आइये! अपना दायरा बढ़ावें, आपकी जाति अब तक बहुत सीमित और गिनी हुई संख्या में थी, परन्तु अब अगणित संख्या वाली एक महान् जाति का सदस्य बनना होगा । आप न तो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हैं और न हिन्दू, मुसलमान या ईसाई । आप आत्मा हैं, इसलिये आत्मा वालों को अपना जाति भाई समझिये । चलिये, समस्त आत्मा वालों को अपनाइये, उनमें आत्मीयता आरोपित कीजिये, उन्हें भी अपने समान समझकर उनमें आत्मस्वरूप का दर्शन कीजिए ।

प्राणियों की आद्य भाषा

यह समझना बड़ी भारी भूल है कि मनुष्य ही बोल-चाल सकता है, दूसरे प्राणी नहीं । वास्तविक बात यह है कि प्राणि-मात्र अपनी एक विशेष वाणी रखते हैं और वे अपने मनोभावों को भली प्रकार दूसरों पर प्रकट कर सकते हैं । मनुष्यों में देश भेद के कारण भाषा बदल जाती है । जापानी और बंगाली को अपनी-अपनी भाषा द्वारा अपने मनोभाव एक-दूसरे पर प्रकट करना कठिन है, किन्तु अन्य जीव-जन्तु इस कठिनाई से मुक्त हैं । देश भेद के कारण उन्हें अपने विचार-परिवर्तन में कुछ भी कठिनाई प्रतीत नहीं होती ।

आप सोचते होंगे कि मनुष्य केवल जिह्वा की सहायता से या अक्षर लिखकर ही बातचीत करते हैं, लेकिन बात ऐसी नहीं है । वार्तालाप का आधे से कम भाग इनके द्वारा पूरा होता है, शेष आधा अधिक भाग दूसरी प्रकार पूर्ण हुआ करता है । शब्द की शक्ति बहुत ही निर्बल, अधूरी, लँगड़ी और अस्थिर है । हमारी आन्तरिक भावना चेहरे पर सदैव नाचती रहती है । बेचारे शब्द का अर्थ उन मनोभावों के अनुसार बदल जाता है । आप एक बात कह रहे हैं, बात कहते समय यदि आपके चेहरे पर गम्भीरता के भाव होंगे तो वह सत्य समझी जायेगी, यदि उपेक्षा के भाव होंगे तो उसकी स्थिरता में सन्देह होगा, लापरवाही से झुँझलाते हुए कही जाय तो समझना चाहिये कि टालने के लिये यह कहा जा रहा है, मुस्कराहट के साथ कहा जाय तो मजाक में कहा जा रहा है, एक खास तरह से मुँह बिचकाकर वही बात कही जाय तो उसका मतलब व्यंग्य करना या उल्लू बनाना होता है । इस प्रकार उस गम्भीरता, उपेक्षा, लापरवाही, झुँझलाहट, मुस्कराहट आदि के चढ़ाव-उतार के सूक्ष्म भेदों के अनुसार उस बात के अर्थ और मूल्य में बहुत बड़ा हेर-फेर हो जाता है । 'आइये-विराजिये' यह सीधा शब्द है, पर भावना-भेद के कारण तिरस्कार, मजाक, उपेक्षा, प्रेम, आदर, आक्षेप आदि अनेक अर्थों का बोधक हो सकता है । इस तरह आप देखेंगे कि शब्द की शक्ति मनोभावों को प्रकट करने में बहुत ही अधूरी है । उच्चारण का लहजा और चेहरे पर उड़ती हुई भावनाएँ उसमें प्राण-प्रतिष्ठा करती हैं, तब कहीं मृत शब्द सजीव होता है और अपना ठीक-ठीक अर्थ प्रकट करने में समर्थ होता है । शब्दों में किस प्रकार का प्राण गूँज रहा है, इस बात को पहचानकर आप आसानी से समझ सकते हैं कि इस कथन में कितना सत्य, कितना झूठ, कितना तथ्य, कितना छल तथा कितना क्या-क्या है । वेश्या के मधुर भाषण में कितने ही कर्णप्रिय शब्दों का प्रयोग क्यों न हो, पर उनकी अवास्तविकता उच्चारण के साथ-साथ ही प्रतिध्वनि की तरह गूँजती है । यहाँ इस मथुरा नगरी में नवआगन्तुक यात्री से पण्डे लोग बड़ी ही मधुर, नम्र और विनयपूर्ण वार्तालाप करते हैं और अपने यहाँ ठहराने, सब प्रकार की सुविधाएँ देने, दर्शन कार्य में सहायता देने के बड़े-बड़े सुन्दर आश्वासन देते हैं, परन्तु यात्री लोग उनकी हर बात को शंका और सन्देह की दृष्टि से देखते हैं और उस मधुर वार्तालाप का सूखा, कर्णकटु, उपेक्षापूर्ण एवं तिरस्कारित उत्तर देते हैं, कारण यह है कि यात्री

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोग उस प्रतिध्वनि को सबसे पहले सुन लेते हैं, जो मधुर भाषण के साथ ही छिपी हुई भावनाओं के कारण उत्पन्न होती है और बड़ी तीव्र गति से चारों ओर गूँज जाती है । आप इस बात को भली प्रकार हृदयंगम कर लीजिये कि शब्द तो एक बहुत ही छोटा साधन है, वार्तालाप का बहुत बड़ा भाग आन्तरिक भावनाओं के साथ पूरा होता है । गूँगे-बहरे लोग जो न तो कह सकते हैं और न सुन सकते हैं तथा लिख-पढ़ भी नहीं सकते, वे भी अपनी आवश्यक वार्तालाप उसी प्रकार कर लेते हैं, जैसे बोलने और सुनने वाले । चेहरे की भावभंगी देखकर वे दूसरों की बात समझ लेते हैं, इसमें उनसे जरासी भी भूल नहीं होती । अपनी बात को भी वे दूसरों पर बहुत अंशों में प्रकट कर देते हैं, इसके लिये वे विभिन्न प्रकार के इशारे स्वयंमेव निर्मित कर लेते हैं । इशारे सिखाने की कोई शिक्षा व्यवस्था उनके लिये नहीं होती तो भी वे अपने आप ठीक संकेत को गढ़ लेते हैं ।

एक देश का निवासी यदि कहीं ऐसे दूसरे देश में पहुँच जाय, जहाँ उसकी बोली को कोई न समझता हो तो भी वह वहाँ जीवित रहेगा और अपने विचार संकेत से प्रकट करने एवं उनके समझने में सफल हो जायगा । कारण यह है कि मनुष्य जाति की एक नियमित आद्य भाषा मौजूद है । सृष्टि के आदि में जब तक कि शब्दोच्चारण क्रमबद्ध नहीं हुआ था, तब भी लोग आपस में वार्तालाप करते थे । बेशक शब्दावली के उच्चारण और लिपिबद्ध होने से वार्तालाप का विषय बहुत विस्तीर्ण हो गया है और भावों की बारीकियाँ एवं विचारों की सूक्ष्म तरंगें दूसरों तक अधिक मात्रा में पहुँचाना सरल हो गया है । फिर भी यह न समझना चाहिये कि बिना भाषा के काम चल ही नहीं सकता । एक आद्य और नियमित भाषा की परिपूर्ण शिक्षा प्राप्त किया हुआ जीव माता के गर्भ से बाहर आता है । इस भाषा में इतनी समता है कि वह जीवन की आवश्यकता के अनुरूप दूसरों से विचारों का आदान-प्रदान करा सकती है । जिस व्यक्ति को इस आद्य भाषा का ज्ञान न हो और केवल शब्दावली का ही तात्पर्य समझना हो तो उसे पागल कहा जायगा । भाव न समझकर केवल भाषा में उलझा रहने वाला व्यक्ति मूर्ख या अविवेकी ही कहा जायगा, क्योंकि आद्य भाषा की सहायता के बिना शब्दों के आधार, मतलब समझने वाला कुछ का कुछ अनुभव करेगा ।

चेतन्य तत्व से निर्मित हुई हर प्राणी की आत्मा अपनी एक स्वतन्त्र भाषा रखती है । मनुष्य मनुष्यों के साथ बात-चीत आसानी से कर सकता है, इसी प्रकार पशु-पक्षी भी अपनी-अपनी जाति के प्राणियों से आसानी के साथ बात-चीत करते हैं । गाय-भैसों के झुण्डों को वन्य प्रदेशों में चराने वाले चरवाहे कहते हैं कि जब किसी हिंसक जानवर की गन्ध पाती हैं तो कुछ गाय-भैंसें एक खास तरह से रँभाना आरम्भ करती हैं, झुण्ड के सारे पशु दौड़कर इकट्ठे हो जाते हैं और खतरे का मुकाबला करने के लिये सावधानी से काम लेते हैं । बन्दरों में खूब वार्तालाप होता है । वे एक-दूसरे को बहुत कुछ सिखाते हैं, अपनी टोली का संगठन बड़ी दृढ़ता से बनाये रहते हैं, विरोधियों से सम्मिलित युद्ध करते हैं । टोली का कोई सदस्य विपत्ति में पड़ जाय तो सब मिलकर उसकी सहायता करते हैं । विपत्ति में आया हुआ बन्दर एक खास तरह की किचकिच करता है, उसको सुनते ही बन्दरों के झुण्ड जमा हो जाते हैं । कुत्ते यों तो अपने स्वतन्त्र कारणों से भों-भों किया ही करते हैं, पर जब कोई विदेशी कुत्ता उनके देश में पहुँच जाय या रात के समय चोर घर में घुस आवे तो एक खास तरह से भौंकना आरम्भ करते हैं, जिसे सुनकर आस-पास के सारे कुत्ते आपसी बैर-भाव छोड़कर इकट्ठे हो जाते हैं और सब मिलकर उसका संगठित मुकाबला करते हैं ।

कोई जंगली हाथी जब अपने झुण्ड के नियमों का उल्लंघन करता है तो झुण्ड का सरदार उसे पास बुलाकर उसके शरीर पर सूँड़ फिराता हुआ समझाता-बुझाता है, वह गलती मंजूर कर ले और भविष्य में नेकचलनी से रहने का वायदा करे तो ठीक, अन्यथा उसे जाति से बहिष्कृत कर दिया जाता है और फिर लाख खुशामद करने पर भी उसे कोई अपने साथ नहीं रहने देता । जंगली जाति के लोग शेर-बाघ की बोली सुनते ही यह बता देते हैं कि इस समय यह भूखा है या भरे पेट है । भरे पेट की आवाज सुनकर वे निधड़क काम करते रहते हैं और बिल्कुल पास से गुजरने वाले शेर को देखकर जरा भी नहीं घबराते, किन्तु जब शेर की भूखी आवाज सुनते हैं तो वे तुरन्त ही प्राण बचाकर भागते हैं और बहुत सावधानी से घरों में छिप जाते हैं । बिल्ली, लोमड़ी या सियारी के बच्चे जब खो जाते हैं तो वे साधारण बोली से भिन्न प्रकार की कूक लगाती हैं, जिससे बच्चे अपनी माँ की खोज का आशय समझ जाते हैं और उस शब्द का आधार लेते हुए माता के निकट जा पहुँचते हैं ।

डाक्टर एनवर्ड ने अफ्रीका के जंगलों में विभिन्न जानवरों की बोली का १७ वर्ष तक अध्ययन किया है और वे अन्त में इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि पशुओं का बोलना निरुद्देश्य नहीं है । उनके शब्द प्राय: तीन-चार तरह के ही मालूम पड़ते हैं, पर सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर इन तीन-चार शब्दों के अन्तर्गत चढ़ाव-उतार के भेद के करीब डेढ़ सौ-दो सौ शब्द बन जाते हैं । इतने ही शब्दों से वे अपने जीवन की सभी आवश्यक वार्तालाप अपनी जाति वालों से कर लेते हैं । इन डाक्टर साहब ने गोरिल्ला, चिंपाजी, वनमानुष, सुरैया, वनविलाव आदि एक दर्जन जानवरों की करीब बीस-बीस तरह की बोलियाँ ग्रामोफोनों के रिकार्डों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भरीं । यह बोलियाँ उन्हें सताये जाने की, भोजन मिलने की, प्रसन्न होने की, कामातुरता की, इकट्ठे होने की सूचक थीं । जब इन आवाजों को लाउडस्पीकर की सहायता से वे किसी जंगल में लगा देते थे तो उसका ठीक प्रत्युत्तर उस जाति के पशु देते थे । एक मादा गोरिल्ला की कामुक तासूचक बोली को जब ध्वनिवर्धक यन्त्र द्वारा जंगल में फैलाया गया तो बहुत से नर गोरिल्ला वहाँ इकट्ठे हो गये, उनमें भी कामेच्छा के लक्षण स्पष्ट प्रकट हो रहे थे । इस प्रकार एक विपत्तिग्रस्त चिंपाजी की बोली का रिकार्ड सुनकर उस प्रदेश के चिंपाजी बेतहाशा भागे और अपनी जान बचाने के लिये इधर-उधर छिपने लगे । इन रिकार्डों की बोली के आधार पर पशु विज्ञान के अन्वेषक यह मानने लगे हैं कि जीव-जन्तु अनर्गल प्रलाप नहीं करते वरन् एक क्रमबद्ध भाषा बोलते हैं, जिसका कुछ अर्थ होता है । वह अर्थ न केवल शारीरिक आवश्यकताओं सम्बन्धी होता है वरन मानसिक हर्ष-विशाद एवं क्रोध, लोभ, छल, प्रेम, दान, सेवा, सहायता एवं उपदेश अनुभव सम्बन्धी भी होते हैं । पशुओं के छोटे बालक अपने माता-पिता एवं बड़े-बूढ़ों से बड़े चाव के साथ शिक्षा प्राप्त करते हैं, जैसे कि मनुष्य के बच्चे नानी से कहानी सुनने के लिये उत्सुक रहते हैं ।

पक्षियों की भाषा भी इसी प्रकार अर्थपूर्ण है । मोर अपनी स्वतन्त्र आवश्यकता के अनुसार कौंकते हैं, किन्तु दूसरे मोर उससे प्रभावित नहीं होते, पर मानसून की सूचक बोली बोलते ही सारे मोर एक साथ कौंकने लगते हैं । एक की बोली पर दूसरा अवश्य उत्तेजित होता है । नर तीतर जब बोलता है तो अपनी प्रसन्नता प्रकट करता है, उसका उत्तर तुरन्त ही मादा तीतर देती है । यदि एक-दूसरे का उत्तर न दें तो वे चिन्तित होकर पास-पास आते हैं और आपस में शरीर खुजलाकर यह जानने का प्रयन्न करते हैं कि चुप्पी का क्या कारण है। यदि नाराजी के कारण चुप्पी होती है तो इस खुशामद से वह प्रसन्न हो जाता है । यदि अस्वस्थता आदि का कोई दूसरा कारण होता है तो दूसरा इस बात को समझ जाता है और कष्ट निवारण के लिये प्रयत्नशील होता है । कौए यों तो जब-तब काँव-काँव करते ही फिरते हैं, परन्तु जब कोई खाद्य पदार्थ विशेष मात्रा में पड़ा दिखाई देता है तो देखने वाला 'कौं-कौं काँव' इस तरह की बोली एक ललचावे लहजे के साथ बोलता है । बस, जरा-सी देर में आस-पास के कौए इकट्ठे हो जाते हैं और उस भोजन पर टूट पड़ते हैं । चिड़ीमार कहा करता है कि फन्दे के पास दाना चुगने वाले पक्षियों में किसी अनुभवी पक्षी को फन्दा दीख जाय तो वह तुरन्त ही गरदन फुलाकर ऐसी सीटी बजाता है कि क्षण भर में सारे पक्षी उड़ जाते हैं और फिर वे भूलकर भी उस दाने की तरफ मुँह नहीं करते । रानी मधुमक्खी रोज पानी पीने जाती है, साथ वाली मक्खियों पर इसका कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता, वे अपना काम करती रहती हैं, किन्तु जिस दिन रानी मक्खी वर्तमान छत्ते को छोड़कर कहीं दूसरी जगह जाने को होती है तो वह एक खास तरीके से भिनभिनाती है । तदनुसार सारी मक्खियाँ नया घर बनाने के लिये चल देती हैं । नये घर के लिये जगह तलाश करने का काम कई दिन पहले कुछ दूत मक्खियों को मिल जाता है । वे रोज अपनी रिपोर्ट रानी मक्खी को भिनभिनाहट की भाषा में सुनाती हैं । जब तक समुचित स्थान नहीं हो जाता, वे दूत रोज ढूँढ़ने जाते हैं । अनुकूल स्थान मिलने पर वे एक दूसरी तरह का गुन्जन करती हैं, तब रानी मक्खी उन्हें आगे करके नये स्थान पर अपने दल समेत जा पहुँचती है । इसी प्रकार अन्न-राशि की खोज, उसे संचय करने का स्थान, अण्डे देने के कमरे, कारणवश स्थान-परिवर्तन इन सब मामलों में चींटियों के सरदार बड़ी बुद्धिमता के साथ आगा-पीछा सोचकर व्यवस्था करते हैं । उन सरदारों का हुक्म सुनते ही दल की सारी चींटियाँ काम में लग जाती हैं और आश्चर्यजनक अनुशासन के साथ सब कार्य शुरू करती हैं ।

मनुष्य अधिक सुसंस्कारित भाषा बोलता है और अपने भावों को लिपिबद्ध कर देता है, यह ठीक है, यह उसकी विशेषता है, पर ऐसा नहीं समझना चाहिये कि अन्य जीवों की कोई भाषा है ही नहीं । प्राणी मात्र की अपनी जाति के लिये एक स्वतन्त्र भाषा है, वह इसे कुछ उन्नत करके दूसरी जाति वालों पर भी अपने मनोभाव प्रकट करता है । यह आद्य भाषा अनादि है और अमर है । हमारी संस्कारित भाषा उसी की तो एक तरुण पुत्री है ।

जीव-जन्तुओं की बोली

प्राचीनकाल में जबकि आज के भौतिक विज्ञान की तरह अध्यात्म-विज्ञान उन्नति की बहुत ऊँची सीढ़ी पर पहुँच चुका था, उस समय जीवों के बीच का आपसी अन्तर दूर हो गया था । कम से कम वार्तालाप सम्बन्धी असुविधा तो दूर हो ही गई थी । मनुष्य अन्य जीव-जन्तुओं से वार्तालाप करते थे और वे जीव-जन्तु भी अपने से भिन्न जाति वालों के साथ अधिक स्पष्टतापूर्वक वार्तालाप करने में समर्थ थे । भारतीय इतिहास पुराणों में ऐसे प्रमाण भरे हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि पशु-पक्षी भी महान मनुष्य जाति के ही एक अंग थे । रामायण काल में हनुमान, सुग्रीव, बालि, जामवन्त, जटायु, सम्पाती, कागभुशुण्ड, गरुड़ आदि के प्रसंगों का वर्णन है, जिसमें उनका ज्ञान और कर्म मनुष्य से किसी प्रकार कम प्रतीत नहीं होता । वार्तालाप में भी कहीं कोई अड़चन नहीं । महाभारत काल में भी ऐसे प्रसंगों का बाहुल्य है । राजा शिवि ने बाज पक्षी से इस शर्त पर एक शरणागत पक्षी को बचाया था कि बदले में अपना माँस दे देंगे । इस समय बाज और राजा में बहुत वार्तालाप हुआ है । पाण्डव

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब हिमालय पर तप करके स्वर्गारोहण के लिये गये हैं तो एक कुत्ते से उनका बहुत सम्भाषण हुआ है । गिरगिट के रूप में पड़े हुए पूर्व जन्म के राजा नृग ने कृष्ण को अपनी कथा सुनाई है । ब्रह्मशाप से अजगर हुए नहुष ने भीम से बातचीत की है और मुक्ति पाई है । कालिया नाग को वश में करते समय कृष्ण ने उस सर्प से तथा उसकी सर्पिणियों से बहुत देर तक प्रश्नोत्तर किये हैं । परीक्षित को काटने वाले तक्षक सर्प से एक ऋषि के साथ बहुत कथनोपकथन होने का वर्णन आया है । गज और ग्राह के युद्ध की कथा प्रसिद्ध है । उसमें गज और ग्राह में वार्तालाप हुआ है और अन्त में गज ने बड़ी भावपूर्ण ईश्वर स्तुति की है । इन्द्र ने जब ब्रज पर वर्षा की है और भगवान कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत उठाकर इन्द्र का अहंकार दूर किया है, तब इन्द्र कृष्ण से क्षमा माँगने पहुँचा है, साथ में सुर-गौ भी पहुँची है और उसने मनुष्य के समान ही कृष्ण से विनती करके इन्द्र को क्षमा दान दिलवाया है । वैशाम्पायन तोते का सम्भाषण इतिहासों में आया है । महाभारत में एक ऐसी कथा है जिसमें एक मुर्दे को जब लोग श्मशान में ले गये हैं तो सियारों ने उन लोगों को समझाया है कि इसे जमीन में गाढ़ दो और गिद्धों ने समझाया है कि खुला छोड़ दो । दोनों उसे अपना भोजन बनाने के लिये उत्सुक हैं और बड़े-बड़े तर्कों के साथ मृतक के अभिभावकों को समझाते हैं । मार्कण्डेय पुराण में भाण्डीर पक्षी द्वारा ऋषियों को ब्रह्म विद्या का महत्त्वपूर्ण उपदेश प्राप्त होने की महत्त्वपूर्ण कथा है । तीतर के रूप वाले तैतरेय ऋषियों ने जो कुछ ज्ञान वर्णन किया है, वह एक उपनिषद में वर्णित है और उस उपनिषद का नाम तैत्तरेय उपनिषद रखा गया है ।

कुछ समय पूर्व का इतिहास देखा जाय, तब तो पशु-पक्षियों का और भी ऊँचा दर्जा प्रमाणित होता है, उन्होंने अनेक प्रसंगों पर मनुष्य जाति का नेतृत्व किया है और उस पर आई हुई आपत्तियों का निवारण किया है । बाराहावतार में शूकर ने दैत्यों का संहार किया है । कूर्मावतार में कछुए ने समुद्र-मन्थन की पेचीदा समस्या को हल किया है । मत्स्यावतार में मछली की अद्भुत कथा का वर्णन है । हंसावतार की कथा भी पुराणों में विस्तार से कही गई है ।

इसी सहस्राब्दी में मुसलमानी बादशाहत के समय तक इस विद्या के जीवित होने के प्रमाण मिलते हैं । महमूद गजनवी शिकार खेलते हुए थककर जब एक पेड़ के नीचे बैठा हुआ था तो दो उल्लू पेड़ के ऊपर बैठे हुए बहुत घुल-घुलकर बातें कर रहे थे । साथ में एक पशु-पक्षियों की बोली समझने वाला शिकारी भी था । महमूद ने उससे पूछा कि यह आपस में क्या बातें कर रहे हैं ? उसने सारा हाल बताते हुए कहा कि एक उल्लू-दूसरे से कह रहा है कि आप अपने लड़के के साथ मेरी लड़की का विवाह कर लीजिये । लड़के का पिता उल्लू उत्तर देता है कि यदि तुम पाँच ऊजड़ गाँव मुझे दहेज में दे दो तो विवाह हो सकता है, इस पर पहला उल्लू आपकी तरफ इशारा करके बता रहा है कि चिन्ता मत करो, यही बादशाह सलामत जो इस पेड़ के नीचे बैठे हुए हैं, कुछ दिन और तख्ताशीन रहे तो पाँच क्या पचास ऊजड़ गाँव दहेज में दे दूँगा । महमूद अपनी ज्यादतियों की चर्चा पक्षियों के मुँह से सुनकर बहुत शर्मिन्दा हुआ और निर्दोष प्रजा पर जुल्म करना कम कर दिया । यह घटना अरब की तबारीखों में लिखी हुई है।

इस प्रकार के अनेकानेक प्रसंग इस बात के साक्षी में उपस्थित किये जा सकते हैं कि पशु-पक्षियों की बोली समझने की विद्या बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित थी और अब तक गत सहस्राब्दी तक उसके ध्वंसावशेष प्राप्त होते हैं।

शकुन विद्या

जब जीव-जन्तुओं की बोली समझने की विद्या का भली प्रकार प्रचार था, उस समय भी यह विद्या लोगों के लिये सुलभ न थी, यह पिछले पृष्ठों पर बताया जा चुका है । साधारण श्रेणी के मनुष्य पूर्ण रूप से उनके मनोभावों को समझ नहीं सकते थे तो भी उन्होंने ऐसे उपाय ढूँढ़े, जिनके अनुसार थोड़ा-बहुत कार्य चल जाय । पशुओं के दैनिक व्यवहार के संकेत हर मनुष्य जानता है । भूख, प्यास, सर्दी, प्रसन्नता, नाराजी, स्वस्थता, बीमारी, सद्गुण, दुर्गुण-यह सब बातें एक पशु पालक दृष्टि मात्र से जान लेता है । आद्य भाषा के संकेत इन सब मनोभावों को स्पष्ट रूप से प्रकट कर देते हैं, किन्तु कभी-कभी कुछ कृपालु जीव अपनी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा भावी घटना के सम्बन्ध में पूर्वाभास पाते हैं, जो सहज उदारता के कारण उसे सम्बन्धित व्यक्ति पर प्रकट करने की कोशिश करते हैं वह सूचनाएँ कभी-कभी इतने महत्व की होती हैं कि मनुष्य के प्राण बच सकते हैं, सम्पत्ति का नाश रुक सकता है एवं बड़े-बड़े अनिष्टों से त्राण मिल सकता है । यदि ऐसी सूचनाएँ कोई भविष्यवक्ता देने में समर्थ हो सकें तो निस्सन्देह वह पुरस्कार में प्रचुर धन पाने का अधिकारी हो सकता है । यह कृपालु प्राणी जब किसी का सुन्दर भविष्य देखते हैं तो पराये सुख को अपना सुख मानने की उदार वृत्ति के अनुसार वे प्रसन्न होते हुए उसकी सूचना देने का प्रयत्न करते हैं । यद्यपि उस सुन्दर भविष्य की सूचना प्राप्त करने से उस भवतव्यता में कोई असाधारण हेर-फेर नहीं हो जाता, पर इतना तो अवश्य है कि सफलता की आशा में चित्त को पहले से ही प्रसन्नता प्राप्त होने लगती है और उत्साहित एवं हर्षोल्लासित हृदय से निर्धारित सफलता से एक कदम अधिक ही प्राप्त हो सकता है । इस प्रकार आपके मूक बन्धुओं द्वारा प्राप्त हुई शुभ या अशुभ भविष्य सम्बन्धी दोनों प्रकार की सूचनाओं से हम लोग पर्याप्त लाभ उठा सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

७.११ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

भारतीय शकुन-शास्त्र की रचना इसी आधार पर है । आध्यात्मिक तत्ववेत्ताओं ने शकुन शास्त्र के अन्तर्गत पशु-पक्षियों द्वारा प्राप्त होने वाली सूचनाओं को प्रमुख स्थान दिया है, क्योंकि जितनी सत्यता जीवित प्राणियों के संकेत द्वारा हुए शकुनों में होती है, उतनी निर्जीव या आकस्मिक शकुनों में नहीं होती । शकुन विद्या आरम्भ में पशु-पक्षियों की बोली का एक स्थूल स्वरूप था पीछे भ्रम और अज्ञान के कारण निर्जीव पदार्थों या आकस्मिक घटनाओं को भी शकुन विज्ञान के अन्तर्गत शामिल किया गया । इस मिलावट के कारण उसका मूल स्वरूप विकृत हो गया और शकुन विचार को अन्धविश्वास, मूढ़ता, रूढ़िवाद, सनक आदि उपहासास्पद पर नामों से सम्बोधित किया जाने लगा । बात ठीक भी है और अवास्तविक वस्तु की न तो अधिक दिन पूजा ही हो सकती है और न सदैव उस पर विश्वास ही किया जा सकता है । विकृत शकुन विचार में अविश्वास होने का कारण भी यह मिलावट ही हुई है ।

यह बात भली प्रकार समझ लेनी चाहिये कि हर एक पशु-पक्षी उच्चकोटि की आध्यात्मिक शक्ति नहीं रखता है और जो रखते हैं, उनमें से सब उसे दूसरों की निस्वार्थ सेवा में लगाने को उत्सुक नहीं होते । जो उत्सुक होते है, वे अपरिचित या दुष्ट वृत्ति के लोगों से उदासीन रहते हैं, इस प्रकार यह नहीं कहा जा सकता कि अमुक जीव की अमुक चेष्टा सदैव शकुन-प्रदर्शन के लिये ही होती है, जो लोग हर समय कुत्ते का कान फड़फड़ाना अपशकुन समझते हैं, वे भूल करते हैं । वह तो कुत्तों की साधारण-सी क्रिया है, जो सदैव होती रहती है। अन्य पशु-पक्षियों की हर एक क्रिया में शकुन-अपशकुन तलाश करना व्यर्थ है। पालतू, घरेलू या निकट निवासी जीव अपने परिचित व्यक्ति की सूचना देते हैं, किन्तु जंगली और दूर निवासी जीव भी कभी-कभी सूचना देने निमित्त आगे आते हैं, इसका कारण उनका पूर्व जन्मों का परिचय होता है । हम नहीं जानते कि यह प्राणी पूर्व जन्मों में हमारे कौन सम्बन्धी थे, पर वे इस बात को याद रखते हैं । उनकी दिव्य दृष्टि सतेज रहती है क्योंकि वे मनुष्य के समान कल्मष-कषायों से लदे हुए नहीं होते ।

शकुन विद्या के विद्यार्थियों का कार्य ऐसा है, जिसके लिये बड़ी सूक्ष्म बुद्धि की आवश्यकता है । किस जाति के जीवों में किस चेष्टा वाले अध्यात्म शक्ति रखते हैं ? उनमें से कौन अयाचित सहायता देता है, कौन याचित सहायता देता है । एक साथ कई मनुष्य हैं तो किसके लिये वह संकेत हुआ है, यह सब जानना आसान नहीं है । इस पर भी यह जानना कि किस कार्य की सफलता, असफलता, आशा-आशंका की सूचना मिल रही है, बहुत कठिन है, क्योंकि मनुष्य को एक समय एक साथ कई-कई काम रहा करते हैं । इन सब बारीकियों को समझने के लिये मध्यम श्रेणी की आध्यात्मिक शक्ति तो चाहिये ही । बिल्कुल भौतिक बुद्धि का व्यक्ति इस दिशा में बहुत ही कम लाभ उठा सकता है, क्योंकि वह अपनी अयोग्यता के कारण गलत बात समझेगा । गलत बात का सही परिणाम कैसे हो सकता है ? जब संगति न मिलेगी तो अपनी अयोग्यता के स्थान पर इस विद्या को ही दोषी ठहरावेगा । इस विज्ञान के द्वारा जिन्हें समुचित लाभ उठाने की इच्छा है, उन्हें अटूट श्रद्धा एवं स्थिर धैर्य धारण करना होगा और निरन्तर के अभ्यास, अनुभव और अन्वेषण के आधार पर मत स्थिर करना होगा । अध्यात्म शक्ति प्रगतिशील है, वह जड़ पदार्थों की तरह एक समान स्थिर नहीं रहती, इसलिये उसके सम्बन्ध में जड़ विज्ञान की तरह कोई स्थिर नियम नहीं बन सकते । संकेतों की कोई ऐसी पाठशाला नहीं है, जिसमें सारे जीवों को क्रमबद्ध संकेतों की शिक्षा दी जा सके । सारे कुत्तों को यह कैसे सिखाया जा सकता है कि जब उन्हें अशुभ सूचना देनी हो तो कान ही फड़फड़ाया करें । मान लीजिये कि किसी कुत्ते के कान कटे हुए हों तो क्या वह अपनी बात प्रकट करने में असमर्थ हो जायेगा? सिर हिलाने की एक छोटी सी प्रतिक्रिया कान फड़फड़ाना है । किसी कुत्ते के कान छोटे होंगे तो सिर हिलाने पर भी कान फड़फड़ाने का शब्द न होगा । साधक को इन बाह्य प्रतिक्रियाओं का अवलम्बन लेते हुए उस प्राणी की आद्य भाषा को समझाने का प्रयत्न करना होगा और तदनुसार ही उसका अर्थ निर्धारित किया जायेगा ।

पालतू जाति के पशुओं में कुत्ता, बिल्ली, हाथी, घोड़ा, गधा, गाय, भेड़ आदि और जंगली जाति के पशुओं मे मृग, सूअर, खरगोश, सियार, लोमड़ी आदि के द्वारा शकुन देखा जा सकता है । पक्षियों में हंस, बगुला, चक्रवाक, सारस, तोता, मोर, तीतर, कोयल, गिद्ध उल्लू, श्यामा, नीलकण्ठ, कबूतर, कौआ, मुर्गा आदि का शकुन देखा जाता है । कीड़ो में सर्प, दुमुँही, छिपकली, चींटी, नकुल, गोह, गिरगिट आदि की सहायता से भविष्य जाना जा सकता है । हो सकता है कि अन्य पशु-पक्षी भी इसके समान न्यूनाधिक आध्यात्मिक ज्ञान रखते हों, पर उनके साथ अधिक सम्पर्क न होने के कारण विशेष परिचय प्राप्त करना कठिन है । अलग-अलग देशों में अलग-अलग प्रकार के पशु-पक्षी पाये जाते हैं, वहाँ वे ही उपयोगी हो सकते हैं । जीवों की अधिक चैतन्य जातियाँ वे हैं, जिनमें आलस्य कम होता है, चेहरे पर उत्साह और स्फूर्ति होती है, ग्रामों के आस-पास रहते हैं और मनुष्य जाति से द्वेष नहीं करते । इन स्वभावों वाले जीव पूर्व जन्मों में श्रेष्ठ योनियों वाले रहे होते हैं, इसलिये उनकी ज्ञान भूमि विशेष रूप से तीव्र होती है । मनुष्यता से पतित होकर अधो-योनियों से गमन करने वाले प्राय: इन्हीं योनियों को प्राप्त करते हैं । पूर्व संस्कारों के कारण वे मानव जाति से विशेष प्रेम रखते हैं और जिस स्वार्थपरता की अधिकता के कारण उन्हें यह दुर्गति सहनी पड़ी है, उसे छोड़कर धीरे-धीरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परमार्थ के लिये तत्पर होते हैं । शकुनों द्वारा दूसरे की कुछ सहायता करना उनका एक ऐसा ही उत्तम कार्य है ।

उपर्युक्त जीवों में से कौन भविष्यवक्ता है, यह जानने के लिये उसके मुख और नेत्रों का गम्भीरता से अवलोकन करना चाहिये, जिसके चेहरे पर मनुष्य जैसी भावभंगी अंकित हो और जिसके स्वभाव में मनुष्य जैसे गुणों का आभास मिलता हो, जो साधक अध्यात्म विद्या में थोड़ा बहुत ज्ञान रखते हैं, वे अपनी सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा यह पहिचान सकते हैं कि कौन जीव आध्यात्मिक तेज रखता है । चित्त को एकाग्र करके निर्मल मन के ऊपर सामने वाले जीव की तस्वीर खींची जाय तो स्पष्ट प्रतीत होता है कि वह कितनी आत्म-शक्ति रखता है और उन अदृश्य बातों को किस सीमा तक जान सकता है, जिन्हें कि साधारण मनुष्य अपनी स्थूल बुद्धि से समझने में असमर्थ रहता है ।

यदि इन जीवों में से कोई आपके किसी कार्य को आरम्भ करते समय बार-बार पास आता हो और विभिन्न प्रकार के संकेत करके आपका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करता हो तो जानना चाहिये यह कुछ खास बात करने की इच्छा करता है । पालतू पशु खासतौर से कुत्ता, घोड़ा, गाय आदि जब अकारण आपके साथ कुछ विशेष सहचर्य प्रकट कर रहे हों तो उनकी ओर उपेक्षा न करनी चाहिये वरन् ध्यानपूर्वक निरीक्षण करना चाहिये कि इसका अभिप्रायः क्या है ? मोटेतौर से इतना जाना जा सकता है कि कोई पशु बायें अंगों को पटक रहा हो, सिर को नीचा किये हुए हो, आँखों में आँसू भर लाया हो, गरदन हिला रहा हो, आगे का रास्ता रोकता हो, अंग या वस्त्र पकड़कर पीछे को खींचता हो, भोजन देने पर उसकी ओर उपेक्षा दिखाता हो, दर्द होने जैसा कराहता हो तो समझना चाहिये कि इसका मतलब अनिष्टपूर्ण भविष्य की ओर संकेत करने का है । ऐसे अवसरों पर वे बायें भाग को महत्व देते हैं, अपने बायें अंगों का प्रयोग करते हैं या जिसके प्रति उनका संकेत होता है, उनके बायीं ओर रहते हैं या बायीं ओर पहुँचने का प्रयत्न करते हैं, जब कोई शुभ भविष्य उन्हें दिखाई पड़ता है तो प्रसन्न होते हैं, गरदन ऊँची रखते हैं, चंचलता प्रकट करते हैं, मल मूत्र त्याग करते हैं, उछलते-कूदते हैं, नेत्र और चेहरे पर हर्ष की भावभंगी दिखाते हैं एवं दाहिने अंगों का प्रयोग करते हैं, दाहिनी ओर रहते हैं, यदि बायीं ओर हों तो दाहिनी ओर पहुँचने की कोशिश करते हैं । इस तरह शुभ और अशुभ भविष्य की पहचान की जा सकती है ।

यहाँ यह न समझना चाहिये कि भाग्य को प्रधानता मिली हुई है और कर्म उससे पीछे है । निश्चय ही कर्म मुख्य है और भाग्य उसका फल मात्र है, परन्तु प्रकृति के अन्तराल में सार्वभौम प्रगति के कारण कुछ प्रक्रियाएँ स्वयंमेव होती रहती हैं, इनसे टकराकर कभी-कभी निर्दोष दिखाई देने वालों को हानि उठानी पड़ती है । "मरने के बाद हमारा क्या होता है ?" पुस्तक में एक स्थान पर यह बताया जा चुका है कि मनुष्य जाति आपस में पूर्णतः सम्बद्ध है, इसलिये हर व्यक्ति का स्वाभाविक कर्तव्य है कि वह दूसरों को कुमार्ग से रोककर सुमार्ग पर प्रवृत्त करे । इस कर्तव्य की जब उपेक्षा होने लगती है तो सार्वजनिक रूप से पाप बढ़ते हैं और उन सामूहिक पापों का फल एक प्रवाह के रूप से आता है, जो उन व्यक्तियों को भी व्यथित करता है, जो देखने में पूर्णतः निर्दोष प्रतीत होते हैं । आकस्मिक दुर्घटना, कलह, आपत्ति, अव्यवस्था आदि की चिनगारियाँ ऐसी होती हैं, जो निर्दोषों को भी लपेट में ले लेती हैं । यह चिनगारियाँ कहाँ जल रही हैं एवं कहाँ जलने वाली हैं, इसका पूर्वाभास यह हमारे मूक भाई-बन्धु जान जाते हैं । कभी-कभी मनुष्य के वर्तमान तथा पूर्व संचित कर्म ऐसे होते हैं, जिनके कारण दुःखद भविष्य का निर्माण होने लगता है । वह जब प्रत्यक्ष रूप से सामने आता है तो हम समझ पाते हैं, परन्तु दिव्य दृष्टि वाले उसे कुछ पहले ही जान लेते हैं । भविष्य का ज्ञान होना सम्भव है और उस भावना को यह जीव-जन्तु पहिचान कर हमें सूचित करते हैं । इस प्रकार की सूचना पाकर असावधानी का त्याग करना चाहिये, विशेष रूप से जागरूक होना चाहिये, आशंकाओं का मुकाबिला करने के लिये तैयार होना चाहिये और आत्मतेज एवं बुद्धि बल से अशुभ को शुभ बनाने के लिये प्रयत्न करना चाहिये । उद्योग की शक्ति अपार है, इसके द्वारा ताड़ को तिल और तिल को ताड़ बनाया जा सकता है । पूर्ण सावधानी के द्वारा अनिष्ट निवारण किया जा सकता है ।

पीछे बताये हुए जीव-जन्तुओं में कुत्ता, बिल्ली, घोड़ा, गाय, मृग, सियार, तोता, कबूतर, श्यामा (काली चिड़िया) हंस, मोर, नीलकण्ठ, कौआ, उल्लू, सर्प, नकुल आदि की शक्तियाँ अधिक प्रबल हैं । अभ्यासी को देखना चाहिये कि अपने आस-पास इस श्रेणी में से कोई अयाचित स्नेह प्रकट करता है या नहीं ? यदि उपरोक्त जीवों में से किसी का झुकाव आपकी तरफ अधिक हो तो उसे खान-पान की अधिक सुविधा देकर प्रेमपूर्वक अपनी ओर अधिक आकर्षिक करना चाहिये । यदि ऐसा कोई जीव हो तो विशेष रूप से किन्हीं जीवों को चुनकर उनके साथ, प्रेम-सम्बन्ध बढ़ाना चाहिये । जीवों का चुनाव करते समय पहले कई बार उसके शरीर की बनावट, नेत्र के तेज और चेहरे की भावभंगी देखकर यह पहचानना चाहिये कि इसमें आत्मतेज कितना है ? यह परीक्षा कुछ कठिन नहीं है । जब आप एकाग्र और ध्यानावस्थित होकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस जीव पर अपना चित्त जमावेंगे तो तुरन्त ही मन के अन्दर एक ऐसी स्फुरण होने लगेगी, जिससे उसके तेज की न्यूनाधिकता को अन्त:करण स्वयंमेव स्वीकार कर लेगा । आरम्भ में एक-दो पशु और एक दो पक्षी ही चुनने पर्याप्त हैं । पाँच से अधिक उनकी संख्या न होनी चाहिये । इन जीवों को मन में आदर भावना से देखना चाहिये । अपशब्द, मारपीट, उच्छिष्ट भोजन, तिरस्कार-व्यवहार से उन्हें अप्रसन्न न करना चाहिये । उनके रहन-सहन, खान-पान, आहार-विहार में अधिक पवित्रता का समावेश लाने का उपयोग करते रहना चाहिये । दो-तीन मास तक इस तरह सत्कारित किये हुये पशु-पक्षी समय-समय पर अपनी सामर्थ्यानुसार संकेत करना आरम्भ कर देते हैं । यह बताने और समझाने का अभ्यास क्रमश: बढ़ता है और कालान्तर में साधक को उनके द्वारा ऐसी बातें प्रतीत हो सकती हैं, जो उसके लिये और दूसरों के लिये बहुत ही उपयोगी हों ।

विशेष रूप से तैयार किये हुए कोई जीव न हों, तो भी परिचित या पड़ोसी पशु-पक्षियों से भविष्य का अभ्यास जानने का प्रयत्न किया जा सकता है । दूरस्थ, अपरिचित या जंगली जीवों में केवल वे ही शकुन-सम्बन्धी सहायता करते हैं, जो या तो बहुत ही उदार हृदय हों या जिनके साथ पूर्व जन्मों का कोई घनिष्ट सम्बन्ध रहा है । प्राणी का साधारण कार्य और शकुन-संकेत इनके बीच में फर्क यह है कि साधारण कार्य तो उदासीन भाव से किया जाता है, उसे करता हुआ वह अपनी अभीष्ट दिशा में संलग्न रहता है, किसी दूसरे की ओर विशेष ध्यान नहीं देता । जिस प्राणी को शकुन-संकेत करना होगा, वह दृष्टि से दृष्टि मिलावेगा, खड़ा रहेगा, मुड़-मुड़कर देखेगा, अन्य प्रकार से ध्यान आकर्षित करेगा और ऐसा प्रतीत होगा कि वह किसी विशेष कार्य के लिये खड़ा है, कुछ बात कहना चाहता है, अपने दूसरे काम को छोड़ देगा और सारा ध्यान आपके ऊपर लगा देगा-यही स्थिति शकुन-संकेत की है । जंगली और अपरिचित जीव भी ऐसी ही हरकत करते हैं और अनेक चेष्टाओं द्वारा अपना तात्पर्य प्रकट करने के लिये तत्पर होते हैं । कई मनुष्य एक साथ हों तो जिसके लिये संकेत होगा, उसी की ओर घूर-घूरकर वह प्राणी देखेगा और अन्यों की ओर ध्यान न देगा । इसी प्रकार झुण्ड में से कोई एक जीव संकेत कर रहा होगा तो झुण्ड के अन्य साथी तो अपने-अपने काम में लगे होंगे, किन्तु वही एक विशेष रूप से शकुन प्रकट करने में प्रयत्नशील होगा । यह बारीकी ध्यानपूर्वक अवलोकन करने से अच्छी तरह समझ में आ सकती है ।

शकुन सम्बन्धी अन्य ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक यह व्याख्या लिखी हुई है कि अमुक पशु-पक्षी इस प्रकार क्रिया करें तो शुभ है, इस प्रकार करें तो अशुभ । हम उस बात से पूर्ण अंशों में सहमत नहीं हैं, क्योंकि जीवों के स्वभाव और आदतें भिन्न-भिन्न होती हैं, इसलिये सबके लिये एक नियम लागू नहीं हो सकता । स्थूल परीक्षा के आधार पर जो निर्णय किया जायेगा, वह अधूरा होगा । फिर मनुष्यों की तरह जीवों के स्वभावों में भी तो परिवर्तन होता आ रहा है । पुराने काल की उनकी आदतें अब बदल गई हों और उन स्वभावों में लौट-फेर हो गया तो कैसे उन लिखित क्रियाओं को ठीक माना जा सकेगा ? इसलिये पशु-पक्षियों के अंग संचालन के आधार पर शकुन निर्धारित करने से पहले पाठकों को कई बार उसकी परीक्षा करनी होगी और एक अन्वेषक एवं आविष्कार वैज्ञानिक की तरह पूरा-पूरा अनुभव कर लेने के बाद कोई मत निर्धारित करना होगा, तभी तो शकुन विद्या की सत्यता के सम्बन्ध में अविश्वासियों को चुनौती दी जा सकेगी ।

जीव-जन्तु किस प्रकार बोलते हैं ?

पिछले पृष्ठों पर यह बता चुके हैं कि जीव-जन्तुओं की आध्यात्मिक शक्ति किन्हीं-किन्हीं दिशाओं में मनुष्य से अधिक होती है । वे बहुत सी ऐसी बातें जानते हैं या जान सकते हैं, जो साधारणत: मनुष्य को प्राप्त नहीं होतीं । जीव-जन्तु आपस में भली प्रकार वार्तालाप करते हैं और कभी-कभी इतर जीवों पर भी अपने मनोभाव प्रकट करने में सफल होते हैं । इस भाषा को समझने के लिये उत्सुक साधकों को जानना चाहिये कि वह भाषा मनुष्य की भाषा से बिल्कुल भिन्न है । न तो उसकी विस्तृत और सुस्पष्ट शब्दावली है और न उच्चारण की क्रमबद्ध शृंखला । शब्दकोष और व्याकरण का भी उसमें प्रयोग नहीं होता । देखा जाता है कि पशु-पक्षी चार से लेकर दस शब्द उच्चारण कर सकते हैं । इनके चढ़ाव-उतार के द्वारा लगभग पचास-साठ शब्द समझ में आ सकते हैं । किन्हीं-किन्हीं के डेढ़ सौ-दो सौ तक शब्द समझे जा सकते हैं, परन्तु इनसे क्रमबद्ध भाषा नहीं बनती । मनुष्य की भाषा में प्रत्येक वस्तु और गुण, कर्म, स्वभाव के लिये पृथक्-पृथक् शब्द हैं, किन्तु जीवों की उच्चारित भाषा में मनोभावों की सूचक शब्दमाला प्रयुक्त होती है । घास, दाना, पानी, सर्दी, गर्मी आदि के अलग-अलग नामों को वे प्रकट नहीं करते वरन् अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करते हैं जैसे भूख-प्यास उनके लिये एक ही दर्जे की आवश्यकता है । सर्दी, गर्मी, दर्द, खुजली एक ही तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की शारीरिक पीड़ा है । प्रेम, विरह, काम-वासना एक ही प्रकार की मनोव्यथा हैं । क्रोध, विरोध, नाराजी, अपमान एक ही संज्ञा में हैं । अपराधीपन, लोभ, चोरी, चालाकी, दम्भ एक ही श्रेणी की भावना हैं । इन विभक्तियों के अनुसार वे शब्दोच्चारण करते हैं । हम लोगों को शब्दों का उच्चारण ठीक-ठीक मालूम है और भूल होने पर दूसरों से सीख लेते हैं, क्योंकि अशुद्ध शब्दोच्चारण से काम चलने में कठिनाई होती है और दूसरे उपहास करते हैं, किन्तु पशुओं में यह बात नहीं है । यदि वे असम्बद्ध शब्दोच्चारण करें तो उनके कार्य में न तो कुछ कठिनाई आती है और न उपहास का ही भय रहता है । वे इस सम्बन्ध में उदासीन भी रहते हैं, जिससे कोई विशेष प्रगति नहीं कर पाते । किन्हीं पशु-पक्षियों को उच्चारण सिखाने का प्रयत्न किया जाय तो बहुत कुछ सीख भी लेते हैं, जैसे कि तोता-मैना पढ़ाने पर प्रवीण हो जाते हैं, उनकी अपनी कुछ विशेष रुचि इस ओर नहीं होती, इसलिये उच्चारण की स्पष्टता सम्बन्धी उनका विकास रुका हुआ ही पड़ा रहता है । हर एक मनुष्य कण्ठ स्वर में अन्तर होता है और लेखन एवं भाषण शैली में फर्क पाया जाता है । क्रमबद्ध भाषा होने के कारण यह अन्तर कुछ बहुत ज्यादा अखरता नहीं, पर यदि भाषा की सुव्यवस्थित श्रृंखला न होती तो कण्ठ स्वर और भाषण शैली के अन्तर के कारण हर मनुष्य की एक स्वतन्त्र भाषा बन जाती और वह एक-दूसरे से बिल्कुल भिन्न होती । वैसे भिन्न तो अब भी है, बिना नाम का लेख होने पर भी लेखन शैली एवं लिपि विशिष्टता के कारण यह जाना जा सकता है कि यह कागज किसका लिखा हुआ है ? दस्तावेज और हस्ताक्षर भिन्नता का सुदृढ़ आधार होने के कारण ही कानून द्वारा लिपि की सत्यता स्वीकार की जाती है । दस्तखत के कारण बड़े-बड़े फैसले होते हैं । इसका तात्पर्य यह है कि किसी भी व्यक्ति की लिपि दूसरे से नहीं मिलती । ठीक इसी प्रकार लेखन शैली में भी अन्तर होता है । भाषण के सम्बन्ध में भी यही बात है, यदि पर्दे की आड़ में बातचीत हो रही हो तो आप अपने परिचित व्यक्तियों की बातों को अलग-अलग समझ सकते हैं कि कौन क्या कहता है ? वह परीक्षा बिना चेहरा देखे हुए कण्ठ, स्वर और भाषण शैली की भिन्नता के आधार पर आसानी से हो सकती है । हमारा तात्पर्य यह बताने का है कि शब्द श्रृंखला के कारण चाहे उसकी ओर हमारा ध्यान भले ही न जाय, पर हर मनुष्य की भाषा स्वतन्त्र है और वह एक-दूसरे से बिल्कुल नहीं मिलती । ठीक इसी प्रकार अन्य जीव-जन्तुओं की भाषा भी अलग है और एक की बोली का दूसरे के साथ मेल नहीं खाता । भाषा की नियम-व्यवस्था न होने के कारण यह भेद इतना बढ़ जाता है कि एक ही जाति के जीव एक ही प्रकार के भाव प्रकट करने में अलग-अलग तरह से शब्दोच्चारण करते हैं । किन्हीं जीवों की भाषा में स्थूल परीक्षा में दो-चार शब्द ही समझ में आते हैं । इससे यह प्रतीत होता है कि वे सदा एक ही तरह की बात कहते हैं, पर सूक्ष्म दृष्टि से उनको उच्चारण भेद पर ध्यान देने से भ्रम भली प्रकार दूर हो जाता है और एक ही शब्द के चढ़ाव-उतार में जो अन्तर पड़ते हैं, वे सब समझ में आने लगते हैं ।

"जब एक जाति के जीवों की भी एक सी भाषा नहीं है तो उनकी बातों को भला कैसे समझ सकेंगे ?" पाठकों को ऐसी निराशा न अपनानी चाहिये । मनुष्य की बोली समझने में हमें शब्द-ज्ञान पर निर्भर रहना पड़ता है । यदि इसी तरीके को पशु-पक्षियों की बोली समझने में भी काम में लाया जाय तो निश्चय ही निराश होना पड़ेगा । जैसे तारवर्की में 'गर' और 'गट' इन दो शब्दों द्वारा ही एक सम्पूर्ण भाषा बन सकती है, उसी प्रकार जीवों के थोड़े से उच्चारणों द्वारा भी वैसे तो निर्माण हो सकता था, पर बहुत अनुभव करने के पश्चात् भी अभ्यासी लोग इस दिशा में सफल नहीं हो सके हैं । उच्चारण की सुविस्तृत विवेचना करने पर भी वह फलवती न हो सकी । बोलने वालों की स्वाधीनता को भाषा के किसी नियम में बन्धित नहीं किया जा सकता है ।

हमें इस सम्बन्ध में शब्दावली पर अवलम्बित नहीं रहना होगा वरन् उस आद्य भाषा से सहायता लेनी होगी, जो प्राणी को जन्म समय से ही प्राप्त है और सब प्रकार के मनोभावों को प्रकट करने की सामर्थ्य रखती है । इसका आरम्भ उनकी दैनिक क्रियाओं से आरम्भ करना होगा । कौन जीव किस प्रकार के भाव रखता है, इसका आगे बताये हुए साधनों द्वारा पता लगाना चाहिये फिर परीक्षा करनी चाहिये कि जो बात हमारे अनुभव में आई, वह ठीक थी या नहीं । आरम्भ में थोड़े आभास सही निकलेंगे और गलत अधिक होंगे, पर धीरे-धीरे उन्नति होती जायेगी और एक समय पूर्णरूप से उनकी भाषा समझ में आने लगेगी, तब अलौकिक अदृश्य और गुप्त बातों को उनकी सहायता से जानना सरल हो जायेगा ।

महाविद्या की साधना

चित्त को एकाग्र करने और मन को संकल्प रहित बनाने का अभ्यास इस कार्य के लिये आवश्यक है, जिसका आरम्भ बाह्य और आन्तरिक शुद्धि के साथ किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाना चाहिये । शरीर और वस्त्रों की सफाई शुद्ध दैनिक जीवन की पहली आवश्यकता है, किन्तु बहुत से अभागे ऐसे हैं, जो स्नान से काल के समान डरते हैं और वस्त्रों की सफाई पर उतना ही ध्यान रखते हैं, जितना कि सुअर अपनी चमड़ी पर । ऐसे गन्दे और घृणित व्यक्ति जिनके शरीर और कपड़ों में जुएँ दौड़ती फिरती हैं, मैल की दुर्गन्धि से पास बैठने को जी नहीं चाहता, पेट में सदा कब्ज की शिकायत रहती है । ऐसी बाह्य अशुद्धि में जो व्यक्ति पड़े हुए हैं, वे किसी भी आध्यात्मिक साधन के अयोग्य हैं । योगाभ्यास की सबसे पहली सीढ़ी यह है कि शरीर और वस्त्रों की अधिक से अधिक सफाई रखी जाय । आन्तरिक शुद्धि का तात्पर्य हृदयगत दुर्भावनाओं को दूर करने से है । कुविचारों का अड्डा जब तक मन के ऊपर जमा रहेगा, तब तक उसका मैल आत्मा को धुँधला किये रहेगा । राख से दबी हुई अग्नि का प्रकाश जैसे बाहर नहीं आ पाता, उसी प्रकार कषाय-कल्मषों के भार से दबी हुई आध्यात्मिक शक्ति मन्द पड़ी रहती है और वह उच्चकोटि का दिव्य ज्ञान प्राप्त करने की सामर्थ्य से वंचित रह जाती है । यद्यपि पूर्णत: सात्विक जीवन बिताना कठिन है, तो भी मन में निरन्तर सुविचारों को स्थान देने से हृदय बहुत हल्का हो जाता है और बुद्धि की सत् वत्व की ओर प्रगति आरम्भ हो जाती है ।

कुविचारों से पीछा छुड़ाने का तरीका यह है कि आप उनको ध्यान में न आने दें और आवे तो उपेक्षा करके हटा दें । मान लीजिये, आपसे कोई बुरा काम बन पड़ा या बुरी बात सोची, तो उस भूल को स्वीकार करते हुये भविष्य में वैसा न करने की प्रतिज्ञा कर लीजिये साथ ही उस गलती को उपेक्षा की दृष्टि से देखकर भुलाने का प्रयत्न कीजिये । सदा अपनी भूलों और दुष्कर्मों का ही चिन्तन करते रहने से मन में एक प्रकार की आकर्षण शक्ति पैदा होती है, जो अपने सजातीय विचारों को ही संख्या में इकट्ठा कर लेती है । जो व्यक्ति अपनी गलतियों को बढ़ा-चढ़ाकर सामने रखता है और उन्हीं का रोना रोते हुए अपने को पापी समझता रहता है, वह अवश्य ही पापी रहेगा । उसके अपने संकल्प के अनुसार पाप आमन्त्रित होकर हृदय में बैठ जायगा और अधिकार जमा लेगा । इसलिये सदैव सुविचारों को मन में स्थान देना चाहिये । आत्मा की पवित्रता पर विश्वास करना चाहिये और पवित्र विचारों को मन में लाने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिये । किये हुए पापों को बार-बार स्मरण करने से कुछ फायदा नहीं । उन्हें तो उपेक्षा के साथ भुला देना ही उचित है । एक बार गिरा हुआ पहलवान जिस प्रकार दूने जोश से कुश्ती लड़ता है उसी प्रकार पिछले समय में भूल हो जाने पर आगे के लिए अधिक सावधानी और उत्साह से काम करना योग्य है । "मैं सत्य हूँ, मैं प्रेम हूँ, मैं न्याय हूँ, मैं सच्चिदानन्द स्वरूप आत्मा हूँ और पवित्रता से परिपूर्ण हूँ । मैंने अपने आत्मस्वरूप और ईश्वरीय स्वरूप को पहचान लिया है, उस स्वरूप के अनुरूप ही संकल्प और कर्तव्य करूँगा ।" इस मन्त्र के एक-एक शब्द पर बहुत देर विचार करके उसे अनुभव करते हुए पढ़ना, विचारना और जप करना चाहिये । नियमपूर्वक इस मन्त्र का अनुभूति और विश्वास के साथ जप करने से बहुत जल्द सुविचारों का आह्वान होना शुरू हो जाता है और क्रमश: मानसिक पवित्रता बढ़ने लगती है । क्रियारूप में प्रेम, उदारता, सहानुभूति, त्याग, दान, दया के कार्यों को करते रहने से आन्तरिक पवित्रता में दिन-दिन वृद्धि होती है । शरीर और मन की, भीतर और बाहर की पवित्रता बढ़ने के साथ-साथ ही आध्यात्मिक शक्ति की उन्नति होना आरम्भ हो जाती है । इसी शक्ति की सहायता से पशु-पक्षियों की बोली सीखी जाती है । अभ्यास के इच्छुकों को सबसे प्रथम बाह्य और आन्तरिक पवित्रता के लिए प्रयत्न करना होगा, जिससे कि उन्हें इस विद्या के योग्य प्रारम्भिक योग्यता प्राप्त हो जावे और ठीक प्रकार आगे बढ़ सकें ।

मन को संकल्प रहित बनाने और चित्त को एकाग्र करने के लिए त्राटक और प्राणाकर्षण का अभ्यास हम पूर्व में बता चुके हैं । इसका अभ्यास करने से मन में एकाग्रता और स्थिरता उत्पन्न होती है । चित्त को एकाग्र करने के लिए एक बहुत ही उपयोगी साधन यह है कि प्राय: सूर्योदय से पूर्व या सायंकाल सूर्यास्त के पीछे एकान्त स्थान में पवित्र होकर अभ्यास के लिये जाना चाहिये । आसन पर मेरुदण्ड को सीधा रखकर बैठें और तीन फुट के फासले पर गर्दन की सीध में घृत का दीपक जलाकर रखें । मन को शान्त और व्यवस्थित करके दो मिनट तक एकाग्र दृष्टि से दीपक की लौ को नेत्रों पर बिना विशेष बल दिये हुए देखें । इसके बाद आँखें बन्द कर लें और उस ज्योति को मानसलोक में प्रत्यक्ष देखने का प्रयत्न करें अर्थात् आँखें बन्द करने के बाद भी सूक्ष्म नेत्रों से ठीक वैसी ही ज्योति दिखाई दे, जैसी कि थी। दो मिनट नेत्र खोलकर प्रत्यक्ष रूप से और दो मिनट नेत्र बन्द कर ध्यानावस्था में उस ज्योति के दर्शन करें । इस प्रकार चार-चार मिनट के तीन त्राटक आरंभ में करने चाहिये । फिर धीरे-धीरे इसे बढ़ाते हुए पाँच-पाँच मिनट के छै त्राटक तक करना चाहिये, अर्थात् १२ मिनट से शुरू करके आध घण्टे तक इस अभ्यास को पहुँचाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिये । ध्यान के साथ चित्त ज्योति में ही लीन रहना चाहिये । मानो इस ज्योति के सिवाय कहीं कोई पदार्थ दर्शनीय या विचारणीय है ही नहीं । मनोलय का यह साधन सरल है और उत्तम भी है । इससे चित्त में एकाग्रता आती है और मन में संकल्प-विकल्प उठना कम हो जाता है । यही मनोभूमि इस विद्या को समझाने के उपयुक्त है ।

प्राणकर्षण प्राणायाम् के लिए किसी एकान्त स्थान में समतल भूमि पर नरम बिछौना बिछाकर पीठ के बल लेट जाओ । दोनों हाथ पेट के ऊपर रखो । मुँह बन्द रखो । शरीर को ढीला रखो । अब धीरे-धीरे नाक द्वारा साँस खींचना आरंभ करो और दृढ़ भावना करो कि संसार व्यापी महान् प्राण शक्ति में से मैं स्वच्छ प्राण साँस के साथ खींच रहा हूँ और वह प्राण भी समस्त नाड़ी तन्तुओं में प्रकाशित हो रहा है । इस भावना के साथ धीरे-धीरे फेफड़ों में पूरी साँस भर लो । कुछ देर वायु को भीतर ही रोक रखो और भावना करो कि साँस के साथ खींचा हुआ प्राण शरीर के अणु-अणु में व्याप्त हो रहा है । अब वायु को धीरे-धीरे बाहर निकालो और ऐसा अनुभव करो कि शरीर के सारे दोष, रोग, विष इस साँस के साथ निकल रहे हैं । कुछ देर बिना साँस के रहो और फिर पूर्ववत् प्राणायाम् आरम्भ कर दो । आरम्भ में यह प्राणायाम् ५ से आरम्भ करना चाहिये और प्रतिदिन १-१ बढ़ाते हुए अन्त में ३० तक पहुँचा देना चाहिए ।

इन दोनों अभ्यासों से आत्मिक बल बढ़ता है और जीव-जन्तुओं की बोली समझने लायक आत्मशक्ति उत्पन्न होती है ।

इस विद्या का महत्व

इस साधना को लगातार कुछ दिनों तक करने से साधक को ऐसी शक्ति प्राप्त हो जाती है कि वह आसानी से जीव-जन्तुओं के मनोभावों को समझ लेता है । यहाँ एक बात और भी ध्यान रखने की है कि जीव-जन्तु जब अपने कोई मनोभाव किसी मनुष्य के सामने प्रकट करने के लिए आते हैं तो उनका अभिप्रायः सदा शकुन बताने का ही नहीं होता । अनेक बार वे अपने दुःख-सुख प्रकट करने के लिए और उस स्थिति में कोई सहायता प्राप्त करने के लिए भी मनुष्य के सामने आते हैं । इस विद्या के अभ्यासी को पहले यह जानना चाहिये कि निकटता की सीमा में आकर विशेष रूप से अपने मनोभाव प्रकट करने वाले इस जीव का वास्तविक उद्देश्य क्या है ? कई बार दूसरों के द्वारा सताये जाने पर भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी, बीमारी, बेचैनी से दुःखी होने पर भागकर मनुष्य की शरण में आते हैं । ऐसे अवसरों पर प्रत्येक दयालु व्यक्ति का कर्तव्य है कि उनके कष्ट का निवारण करने के लिये जो कुछ कर सकें, सहायता करें ।

सर्पों का सर्वोत्तम प्रिय पदार्थ दूध है । वे इस पदार्थ को अपने प्रयत्न एवं पुरुषार्थ से प्राप्त नहीं कर सकते, यह तो उन्हें मनुष्य की कृपा से ही मिल सकता है । देखा गया है कि नाग पञ्चमी आदि त्योहारों पर आशान्वित होकर साँप घरों में आते हैं और दूध की अभिलाषा करते हैं । ऐसा भी देखा गया है कि दूध पिला देने पर सर्प उस घर में से विदा हो जाते हैं । स्वप्नों में भी वे अपनी इस अभिलाषा को प्रकट करते हैं । इसी प्रकार अन्य जीव-जन्तु भी कभी-कभी अपनी विशिष्ट इच्छाओं की पूर्ति के लिये मनुष्य के निकट आते हैं । पवित्र मन वाला, साधनशील मनुष्य उनके मनोभावों को आसानी से समझ लेता है । इन मूक भाई-बन्धुओं की सेवा-सहायता करना मनावोचित दया, धर्म की दृष्टि से सर्वथा आवश्यक है ।

सब जीवों में अपनी आत्मा को देखना, प्राणियों में परमात्मा की एकछत्र सत्ता देखते हुए चींटी से हाथी तक सभी जीवों पर यथोचित रीति से सद्व्यवहार करना मनुष्य का कर्तव्य है । मनुष्य अधिक बलवान और बुद्धिमान होने के कारण सृष्टि का सर्वोत्तम प्राणी है । परमात्मा का बड़ा युवराज है । इतना बड़ा पद प्राप्त कर लेने के कारण उसकी स्वभावतः यह जिम्मेदारी हो जाती है कि वे अपने निर्बल जीव-जन्तुओं के साथ वैसा ही दयालुतापूर्ण व्यवहार करें, जैसा कि छोटे, कमजोर एवं बुद्धिहीन, असहाय भाइयों के साथ करना चाहिये । जिह्वा के स्वाद के लिये अन्न जैसे अमृत पदार्थ को त्यागकर निर्दयतापूर्वक पशु-पक्षियों का माँस खाना एक बड़ा ही निर्दय, घृणित एवं मनुष्यता से रहित कार्य है । पशुओं से उनकी सामर्थ्य से अधिक काम लेना, घायल या बीमार होने पर भी उन्हें काम में जोतना, बुरी तरह पीटना, कम भोजन देना या अन्य तरीकों से उन्हें सताना बुरा है । ऐसी बुरी मनोवृत्ति के मनुष्यों के सामने अक्सर कोई जीव-जन्तु अपनी आवश्यकता प्रकट करने या सहायता माँगने नहीं आते । वे जिनके मन में दया देखते हैं, उन्हीं के सम्मुख अपनी आवश्यकता प्रकट करते हैं, उन्हें ही भविष्य का शकुन संकेतों द्वारा निर्देश करते हैं । और भी अनेक अप्रत्यक्ष भावों द्वारा उनकी सहायता करते हैं, परन्तु जिनका स्वभाव कट्टर, निष्ठुर एवं निर्दयी है, उनके सम्मुख आने की उनकी कोई इच्छा नहीं होती है । इसलिये जिन सज्जनों को जीव-जन्तुओं की बोली समझने की इच्छा हो, उन्हें अपने जीवन में जीवों के प्रति दयालु बर्ताव के सिद्धान्त को प्रधानता देनी चाहिये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

७.१७ दृश्य जगत की अदृश्य पहेलियाँ

पातञ्जलि योग दर्शन में अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य व्रतों की साधना से प्राप्त होने वाली अनेक आश्चर्यजनक सिद्धियों का वर्णन है । जो व्यक्ति सदा सत्य बोलने की साधना करते हैं, उनकी वाणी में श्राप या वरदान देने की सिद्धि उत्पन्न हो जाती है । इसी प्रकार इस व्रत का पालन करने से जीव-जन्तुओं की बोली समझने की विद्या प्राप्त हो जाती है । शकुन सिद्धि की साधना का केन्द्र दया है । वह दयालु स्वभाव के माँस भोजन आदि हिंसक कार्यों से बचे रहने वाले व्यक्ति को ही प्राप्त होती है । इस साधना में जिनकी आगे प्रगति हो जाती है, उनके साथ जीव-जन्तुओं का व्यवहार भी बड़ा प्रेमपूर्ण रहता है ।

दूसरों के मन की बात जानने की विद्या का अभ्यास करने के इच्छुक यदि अपनी साधना को पशु-पक्षियों पर से आरम्भ करें तो उनका कार्य बहुत सरल हो सकता है । किस मनुष्य के हृदय में क्या विचार है, यह जानने की अपेक्षा यह जानना बड़ा सरल है कि पशु-पक्षी के मन में क्या विचार है ? कारण यह है कि मनुष्य के मन में दुराव, कपट, छल, बनावट, दम्भ आदि की मात्रा बहुत अधिक होती है, उनमें उलझे हुए वास्तविक विचारों को ढूँढ़ना और उन्हें पहचानना कठिन है, उसके लिए बहुत मनोबल चाहिये । परन्तु जीव-जन्तुओं के मन:लोक को टटोल लेना सुगम है, क्योंकि उनमें मनुष्य जैसा मायाचार नहीं होता, उनके मनोगत भाव चेहरे पर स्पष्ट रूप से अंकित होते हैं । मनुष्य के परस्पर विरोधी विचार, भीतर और बाहर का दुराव उलझन भरा होता है । उनमें जो विद्युत प्रवाह की रेडियो शक्ति मस्तिष्क से निकलती है, वह भी सम्मिश्रित होती है, इसलिये उसे ठीक रूप से पहचानने में तो नये अभ्यासी को कठिनाई होती है, पर जीव जन्तुओं का अन्तर टटोलने में यह कठिनाई नहीं पड़ती । उनके मनोभावों की विद्युत तरंगें सीधी, एकसी और स्पष्ट होती हैं । इन तरंगों का प्रवाह किसी थोड़ी भी आध्यात्मिक शक्ति रखने वाले अभ्यासी द्वारा आसानी से पहचाना जा सकता है । जीव-जन्तुओं की सांकेतिक भाषा को समझने की साधना करने वाले अभ्यासी के लिये पराये मन की बात जानने की विद्या के मार्ग में अधिक सफलता प्राप्त करने का मार्ग प्रशस्त हो जाता है ।

जो पशु-पक्षी अपने पालतू हों या जो अपने को पहचानते हों, प्रेम करते हों, उनकी मनोभावनाएँ समझने का प्रयास करना चाहिये, नेत्र, मुखाकृति एवं चेष्टाओं को स्थिर, एकाग्र एवं शान्ति चित्त से अवलोकन करने पर उसके मनोभावों का बहुत कुछ परिचय प्राप्त हो जाता है, जो अनुभव होता है, उसका कभी-कभी परीक्षण भी कर लेना चाहिये, जैसे कभी यह अनुभव हो कि यह पशु प्यासा है तो उसके सामने पानी रखकर अपने अनुभव की सत्यता-असत्यता जानी जा सकती है । यह प्रयास जारी रखने पर कीड़े-मकोड़ों और पशु-पक्षियों के मनोभाव जानने की योग्यता बढ़ जाती है और फिर उनकी संकेतमयी मूक भाषा भली प्रकार समझ में आने लगती है । इसी आधार पर शकुन विद्या में निपुणता प्राप्त की जा सकती है । यह निपुणता एक महत्वपूर्ण आध्यात्मिक सिद्धि है । इस सिद्धि के बल पर मनुष्य करोड़ों प्राणियों की अलग पड़ी हुई एक आनन्दमयी दुनिया में प्रवेश करता है और जो आनन्द मनुष्यों की इस कपटपूर्ण दुनिया में नहीं है, उसका रसास्वादन उन मूक-प्राणियों की निष्कपट दुनिया में कर सकता है । इस रसास्वादन में कितना आनन्द है, इसका परिचय पढ़ने या सुनने से नहीं वरन् क्रियात्मक अनुभव करने से ही प्राप्त हो सकता है ।

परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँच स्थापनाएँ

युगदृष्टा के स्तर की अवतारी सत्ता के रूप में परमपूज्य गुरुदेव ने अपने अस्सी वर्ष के जीवनकाल में जितना भी कुछ किया, उसकी मिसाल कहीं देखने को नहीं मिलती। करोड़ों व्यक्तियों के मनों का निर्माण, उनके सोचने के तरीके में बदलाव एवं युग निर्माण की पृष्ठभूमि बनाकर रख देने का कार्य इन्हीं के स्तर की सत्ता कर सकती थी, जो लाखों वर्षों में कभी-कभी धरती पर आती है। उनके द्वारा की गयी स्थापनाओं का जब प्रसंग आता है तब ईंट-गारे-चूने-सीमेंट से बने भवनों से पहले उनकी स्नेह-संवेदना से सिक्त हुए, ममत्व में स्नानकर उनके अपने हो गये लाखों व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं, जिनने उनके एक इशारे पर अपना सब कुछ उनको अर्पित कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कभी ऐसा ही वातावरण भारत के कोने-कोने में दिखाई देता था, जब हर घर से सत्याग्रही निकलकर आ रहे थे। भावनाओं का आवेग चिरस्थायी नहीं रहता। वे ही लोग जो कभी राष्ट्र निर्माण के लिए अपना सब कुछ छोड़, पढ़ना-लिखना छोड़ देश को आजाद बनाने के लिए कूद पड़े थे, कभी गड़बड़ाने न पाएँ, उसी के लिए बापू ने आजादी के बाद काँग्रेस भंग कर देने व सभी को एक आदर्श स्वयं-सेवक की तरह दरिद्र नारायण का उत्थान कर राष्ट्र निर्माण में लग जाने की सलाह दी थी।

सभी इस तथ्य को जानते हैं कि ऐसा नहीं हुआ, राष्ट्र का कीर्ति-स्तम्भ रूपी वह महापुरुष भी एक वर्ष के अंदर ही शहादत को प्राप्त हो चला गया। गिने-चुने उनके आदर्शों पर चलने वाले रह गये, अवसरवादियों को राजनेतृत्व भाने लगा एवं राष्ट्र आजाद होकर भी उनके हाथ में आ गया जो ब्रिटिश तो नहीं थे किन्तु, उसी रंग में रँगे सत्ता के उन्माद में काम करने वाले शासक थे- सुजेता नहीं। जिंदा रहा तो मात्र बापू का दर्शन बुनियादी आधार पर टिका- मानव को बनाने का तंत्र-आश्रम तंत्र जो सेवाग्राम-साबरमती आश्रम के रूप में कार्य करता रहा और वह भी शीर्ष-पुरुष के न रहने, बिनोवाजी के चले जाने के बाद अस्तित्व व महत्व की दृष्टि से गौण हो गया। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी दिव्य-दृष्टि से यह सब पूर्व में ही देख लिया था कि कोई भी भव्य निर्माण, आश्रम या तंत्र बनाने से पूर्व राष्ट्र को सांस्कृतिक, भौतिक, आध्यात्मिक आजादी दिलाने वाले अगणित व्यक्ति तैयार करने पड़ेंगे। १९११ में आज से ८४ वर्ष पूर्व वि.संवत् २०८६ में जन्मे, राष्ट्र की आजादी में उन्मत्त बने श्रीराममत्त कहलाने वाले, आचार्यश्री ने पहले स्वयं को तपाया, वैचारिक क्रान्ति के निर्माण का आधारभूत तंत्र स्वयं व परमवंदनीया माताजी के रूप में खड़ा किया, 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका अपनी लेखनी से लिखी, ममत्व भरी चिट्ठियों व छोटी-छोटी एक आने की किताबों से जन-जन के मन को छुआ, तब जाकर अपने एक लक्ष के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर उन्होंने गायत्री तपोभूमि, मथुरा की स्थापना की बात १९५२-५३ में सोची। सबसे पहली मंत्र दीक्षा वहीं पर १९५३ में दी व यह मानते हुए कि बिना आध्यात्मिक आधार बनाये, मनोभूमि में, भावनाओं के स्तर पर बदलाव लाये कोई क्रान्ति सफल नहीं हो सकती, धीमी खुराक देते हुए हर व्यक्ति को गायत्री व यज्ञ के तत्त्वदर्शन से जोड़ते हुए चले गये। गायत्री परिवार रूपी विराट वृक्ष का मूल आधार वह स्थापना है जो जन-जन के मनों में पहले हुई- उनकी भाव संवेदनाओं के उदात्तीकरण के रूप में सम्पन्न हुई व उनके अंदर अपनी गुरुसत्ता को त्याग करने की, यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रेरणा बलवती होने लगी। उन्होंने सर्वमेध के रूप में अपना सर्वस्व बलिदान एवं नरमेध के रूप में अपने आप को समाज के हित न्यौछावर करने की भावना से दो यज्ञ किये। अपनी जमींदारी के बाण्ड बेचकर एवं परमवंदनीया माताजी के कीमती सोने के जेवर (ढाई सौ तोले) बेचकर जो स्वेच्छा से सम्पन्न हुआ, एक स्थापना भवन के रूप में जो हुई- वह थी **गायत्री तपोभूमि, मथुरा** जो वृन्दावन रोड पर ऋषि दुर्वासा की जन्मस्थली पर बनी आज से ४२ वर्ष पूर्व १९५३ में। प्रारंभिक स्थापना यों अखण्ड ज्योति संस्थान को माना जा सकता है जहाँ अखण्ड दीपक अपनी जन्मभूमि आँवलखेड़ा से जो वहाँ से मात्र ४० मील दूर थी, स्थापित किया गया था एवं प्रारंभिक तप-तितिक्षा वहीं पर १९४१ से, तपोभूमि की स्थापना से भी १२ वर्ष पूर्व आरम्भ हो गयी थी। इस प्रकार जन-जन के मनों का निर्माण उनके अंतःस्थल में प्रवेश कर उनके अंदर देवत्व के जागरण की ललक पैदा करने वाली पृष्ठभूमि पर स्थापनाओं का क्रम बना। किराये की ऐसी हवेली जिसे भुतहा हवेली कहा

जाता था, में अखण्ड दीपक की स्थापना, उसके समक्ष तप, **अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा** के रूप में विकसित हुआ एवं एक और दूसरा निर्माण मथुरा में ही गायत्री तपोभूमि के रूप में हुआ जो कि ३ मील दूर वृन्दावन रोड पर १९५३ में बनाई गई। १९५३ में क्रमशः सुसंगठित गायत्री परिवार के बनने की प्रक्रिया चल पड़ी।

इस प्रारंभिक भूमिका को समझने के बाद ही परमपूज्य गुरुदेव की पाँच मूल स्थापनाओं एवं बाद में देश के कोने-कोने में बनी भव्य इमारतों के रूप में शक्तिपीठों, प्रज्ञा संस्थानों, भारत व विश्वभर में घर-घर में स्थापित स्वाध्याय मण्डलों व गायत्री परिवार की शाखाओं, प्रज्ञापीठों, चरणपीठों का महत्त्व समझा जा सकता है। नहीं तो जैसे अन्यान्य आश्रम-संस्थान बनते हैं, ऐसे इनका भी वर्णन किया जा सकता था व यह कहा जा सकता था कि यह वैभवपूर्ण स्थापनाएँ पूज्यवर ने कीं। उनमें यदि प्राण फूँके गये हों, प्राणवान व्यक्ति वहाँ रहते हों व उस शक्ति के महा-अवसान के बाद भी वे सतत् उसी दिशा में चल रहे हों तो माना जाना चाहिए कि प्रारंभिक पुरुषार्थ जो किया गया, वह औचित्यपूर्ण था।

परमपूज्य गुरुदेव की महत्त्वपूर्ण पाँच स्थापनाएँ इस प्रकार हैं–

(१) युगतीर्थ आँवलखेड़ा (२) अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (३) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (४) शान्तिकुंज, गायत्री तीर्थ, सप्तसरोवर, हरिद्वार तथा (५) ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, सप्तसरोवर, हरिद्वार ।

युगतीर्थ आँवलखेड़ा का नाम सबसे पहले इसलिए लिखा कि यहीं पर वह युगपुरुष संवत् १९६८ की आश्विन कृष्ण त्रयोदशी तिथि के दिन, ब्राह्ममुहूर्त में, जो अँग्रेजी तारीख से २० सितम्बर, १९११ के दिन आती थी, में जन्मा। एक श्रीमंत ब्राह्मण परिवार में, जहाँ धन की कोई कमी नहीं थी, पूरा परिवार संस्कारों से अनुप्राणित, पिता भागवत के प्रकाण्ड पंडित, बहुत बड़ी जागीर के मालिक। आज जहाँ पूज्यवर की स्मृति में एक विराट स्तंभ की, एक चबूतरे की तथा उनके कर्तृत्व रूपी शिलालेखों की स्थापना हुई है- वहीं पूज्यवर ने शरीर से जन्म लिया था। समीप बनी दो कोठरियाँ जो काल प्रवाह के क्रम में गिर सी गयी थीं, जीर्णोद्धार कर वैसी ही निर्मित कर दी गयी हैं- जैसी उनके समय में थीं। जन्मभूमि का कण-कण उस दैवीसत्ता की चेतना से अनुप्राणित है। उनके हाथ से खोदा कुँआ जिसे पूरे गाँव का एकमात्र मीठे जल वाला कुँआ माना गया- वह अभी भी है, उनके हाथ से रोपा नीम का पेड़ एवं वह बैठक जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में सब बैठकर चर्चा करते थे, आज भी उन दिनों की याद दिलाते हैं। पास में ही दो कोठरियाँ हैं जिनमें से एक कक्ष में वह स्थान है जहाँ दीपक के प्रकाश में से सूक्ष्म शरीरधारी गुरुसत्ता प्रकट हुई थी तथा जिसने उनके जीवन की दिशाधारा का १९२६ के बाद के क्रम का निर्धारण कर दिया था। यह सब देखकर मस्तिष्क-पटल पर वह दृश्य उभर आता था, जिसे गुरुसत्ता ने कभी देखा था व जो गायत्री परिवार की स्थापना का मूल आधार बना। आँवलखेड़ा में ही उनकी माताजी की स्मृति में स्थापित माता दानकुँवरि इण्टर कालेज है जो उनके द्वारा दान दी गयी जमीन में प्रदत्त धनराशि द्वारा विनिर्मित है। १९६३ से चल रहे इस इंटर कालेज से कई मेधावी छात्र निकल कर आत्म-निर्भर बने हैं व उच्च पदों पर पहुँचे हैं।

१९७९-८० में गायत्री शक्तिपीठ एवं कन्या इंटर कॉलेज की स्थापना का ताना-बाना बुना जाने लगा जो एक विशाल शक्तिपीठ तथा आसपास के दो सौ ग्रामों की बालिकाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था करने वाले, उन्हें सुशिक्षित, संस्कारवान, आत्मावलम्बी बनाने वाले कन्या महाविद्यालय का अब रूप ले चुका है। प्रथम पूर्णाहुति हेतु इसी भूमि को जो शक्तिपीठ-जन्मभूमि-ग्रामीण क्षेत्र के चारों ओर है, इसीलिए चुना गया कि यहाँ से उद्भूत प्राण ऊर्जा से यहाँ आने वाला हर संकल्पित साधक अनुप्राणित होकर जाए व राष्ट्र के नव-निर्माण की सांस्कृतिक व भावनात्मक क्रान्ति की पृष्ठभूमि रख सके। यहाँ पूज्यवर १९३६-३७ तक ही रहे, कुछ दिन आगरा रहकर १९४०-४१ में मथुरा चले गये, जहाँ दो-तीन मकान बदलने के बाद वर्तमान मकान किराये पर लिया जिसे आज अखण्ड-ज्योति संस्थान कहते हैं।

अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा में स्थित है। परमपूज्य गुरुदेव सीमित साधनों में अपने अखण्ड दीपक के साथ यहीं रहने लगे एवं यहीं से क्रमशः आत्मीयता विस्तार की जन-जन तक अपने क्रान्तिकारी चिंतन के विस्तार की प्रक्रिया 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका, जो आगरा से ही आरम्भ कर दी गयी थी, की 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ व अन्यान्य लेखों की पंक्तियों के माध्यम से सम्पन्न होने लगी। व्यक्तिगत पत्रों द्वारा उनके अंतःस्थल को स्पर्श कर एक महान स्थापना का बीजारोपण होने लगा। यहीं पर अगणित दुःखी, तनावग्रसित

व्यक्तियों ने आकर उनके स्पर्श से नये प्राण पाये तथा उनके व परमवंदनीया माताजी के हाथों से भोजन-प्रसाद पाकर उनके अपने होते चले गये। हाथ से बने कागज पर छोटी ट्रेडिल मशीनों द्वारा यहीं पर अखण्ड ज्योति पत्रिका छापी जाती थी व छोटी-छोटी किताबों द्वारा लागत मूल्य पर उसे निकालने योग्य खर्च निकलता था। बगल की एक छोटी-सी कोठरी में जहाँ अखण्ड दीपक जलता था, आज पूजाघर विनिर्मित है। पूरी बिल्डिंग को खरीद कर उनके सुपुत्र ने एक नया आकार व मजबूत आधार दे दिया है किन्तु यह कोठरी अंदर से वैसी ही रखी गयी है जैसी पूज्यवर के समय में १९४२-४३ में रही होगी। तब से लेकर आगामी ३० वर्ष का साधनाकाल-लेखनकाल पूज्यवर का इसी घीयामण्डी के भवन में छोटी-छोटी दो कोठरियों में गहन तपश्चर्या के साथ बीता। तपोभूमि निर्माण की पृष्ठभूमि यहीं बनी, १९५८ में सहस्र कुण्डी यज्ञ की आधारशिला यहीं रखी गयी, यहीं सारी योजना बनी एवं विधिवत-गायत्री परिवार बनता चला गया। रोज आने वाले पत्रों को स्वयं परमवंदनीया माताजी पढ़ती जातीं एवं पूज्यवर इतनी ही देर में जवाब लिखते जाते, यही सूत्र संबंधों के सुदृढ़ बनने का आधार बना। हर परिजन को तीन दिन में जवाब मिल जाता, शंका-समाधान होता चला जाता एवं देखते-देखते एक विराट गायत्री परिवार बनता चला गया। गायत्री महाविज्ञान के तीनों खण्ड, युग निर्माण परक साहित्य, आर्ष-ग्रन्थों के भाष्य को अंतिम आकार देने का कार्य यहीं सम्पन्न हुआ। जनसम्मेलनों, छोटे-बड़े यज्ञों एवं १००८ कुण्डी पाँच विराट् यज्ञों में पूज्यवर यहीं से गये एवं विदाई सम्मेलन की रूपरेखा बनाकर स्थायी रूप से इस घर से १९७१ की २० जून को विदा लेकर चले गये। इस संस्थान के कण-कण में जहाँ आज १० लाख से अधिक संख्या में हिन्दी सहित सभी भाषाओं में अखण्ड ज्योति पत्रिका के प्रकाशन, विस्तार, डिस्पैच आदि का एक विराट तंत्र स्थापित है, परमपूज्य गुरुदेव की चेतना संव्याप्त अनुभव की जा सकती है। भले ही बहिरंग का कलेवर बदल गया हो, अंदर प्रवेश करते ही परमपूज्य गुरुदेव व परमवंदनीया माताजी की सतत विद्यमान प्राणचेतना के स्पन्दन वहाँ विद्यमान हैं, यह प्रत्यक्षतः देखा जा सकता है।

गायत्री तपोभूमि, मथुरा को परमपूज्य गुरुदेव की चौबीस महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर की गयी स्थापना माना जा सकता है, जिसे विनिर्मित ही गायत्री परिवार रूपी संगठन के विस्तार के लिए किया गया था। इसकी स्थापना से पूर्व चौबीस सौ तीर्थों के जल व रज को संग्रहीत करके यहाँ उनका पूजन किया गया, एक छोटी किन्तु भव्य यज्ञशाला में अखण्ड अग्नि स्थापित की गयी तथा एक गायत्री महाशक्ति का मन्दिर विनिर्मित किया गया। चौबीस सौ करोड़ गायत्री मंत्रों का लेखन जो श्रद्धापूर्वक नैष्ठिक साधकों द्वारा किया गया था, यहाँ पर संरक्षित कर रखा गया है। पू. गुरुदेव की साधनास्थली व प्रातःकाल की लेखनी की साधना की कोठरी यदि अखण्ड ज्योति संस्थान में थी तो उनकी जन-जन से मिलने, साधनाओं द्वारा मार्गदर्शन देने की कर्म-भूमि गायत्री तपोभूमि थी। यहीं पर १०८ कुण्डी गायत्री महायज्ञ में १९५३ में पहली बार पूज्यवर ने साधकों को मंत्र दीक्षा दी। यहीं पर १९५६ में नरमेध यज्ञ तथा १९५८ में विराट सहस्रकुण्डी यज्ञायोजन सम्पन्न हुए। श्रेष्ठ नररत्नों का चयन कर गायत्री परिवार को विनिर्मित करने का कार्य यहीं व्यक्तिगत मार्गदर्शन द्वारा सम्पन्न हुआ। हिमालय प्रवास से लौटकर पूज्य आचार्यश्री ने युग निर्माण योजना के शत-सूत्री कार्यक्रम एवं सत्संकल्प की तथा युग निर्माण विद्यालय के एक स्वावलम्बन प्रधान शिक्षा देने वाले तंत्र के आरम्भ होने की घोषणा की। यह विधिवत् १९६४ से आरम्भ किया गया एवं अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है। जिस कक्ष में परमपूज्य गुरुदेव सभी से मिला करते थे, अभी भी यहाँ देखा जा सकता है। भव्य निर्माण परमपूज्य गुरुदेव की १९७१ की विदाई के बाद यहाँ हो गया है किन्तु, कण-कण में उनकी प्राणचेतना का दर्शन किया जा सकता है। विराट प्रज्ञानगर, युग निर्माण विद्यालय, साहित्य की छपाई हेतु बड़ी-बड़ी ऑफसेट मशीनें तथा युग निर्माण साहित्य जो पूज्यवर ने जीवन भर लिखा, उसका वितरण-विस्तार तंत्र यहाँ पर देखा जा सकता है।

शान्तिकुंज, हरिद्वार ऋषि परम्परा के बीजारोपण केन्द्र के रूप में १९७१ में स्थापित किया गया था, जब परमपूज्य गुरुदेव मथुरा स्थायी रूप से छोड़कर परमवंदनीया माताजी को अखण्ड ज्योति दीपक की रखवाली हेतु यहाँ छोड़कर हिमालय में चले गये। गुरुसत्ता के निर्देश पर वे पुनः एक वर्ष बाद लौटे व तब शांतिकुंज को उनने एक बड़ा विराट रूप देने, सभी ऋषिगणों की मूलभूत स्थापनाओं को यहाँ साकार बनाने का निश्चय किया। इससे पूर्व परमवंदनीया माताजी ने २४ कुमारी कन्याओं के साथ अखण्ड दीपक के समक्ष २४० करोड़

गायत्री मंत्र का अखण्ड अनुष्ठान आरंभ कर दिया था। पूज्यवर ने प्राण प्रत्यावर्तन सत्र, जीवन साधना सत्र, वानप्रस्थ सत्र आदि के माध्यम से विभिन्न क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता यहीं गढ़े। यह सत्र शृंखला कल्प साधना, संजीवनी साधना सत्रों के रूप में तब से ही ९ दिवसीय सत्रों व एक माह के युग शिल्पी प्रशिक्षण सत्रों के रूप में चल रही है, अभी भी अनवरत उसमें आने वालों का ताँता लगा रहता है। पहले से ही सब अपनी बुकिंग इसमें करा लेते हैं।

शांतिकुंज को गायत्री तीर्थ का रूप देकर सप्तऋषियों की मूर्तियों की स्थापना १९७८-७९ में की गयी, एक देवात्मा हिमालय विनिर्मित किया गया एवं यहाँ सभी संस्कारों को सम्पन्न करते रहने का क्रम बन गया जो सतत् चल रहा है। नित्य यहाँ दीक्षा, पुंसवन, नामकरण, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, विवाह, श्राद्ध-तर्पण आदि संस्कार सम्पन्न होते हैं। इस बीच परमवंदनीया माताजी ने जागरण सत्र शृंखलाएँ सम्पन्न करना आरम्भ रखा। देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे भारत में जीप टोलियों में भेजा गया। इनके माध्यम से तीन वर्ष तक भारत के कोने-कोने में तुमुलनाद होता रहा।

शांतिकुंज का गायत्री नगर जो आज एक विराट स्थापना के रूप में, एक एकेडमी के रूप में नजर आता है व जिसमें एक बार में एक साथ दस हजार व्यक्ति एक साथ ठहर सकते हैं, १९८१-८२ में बनना आरम्भ हुआ । विलक्षण, दुर्लभ जड़ी-बूटियों के पौधे यहाँ लगाये गये तथा प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा रूपी तीर्थस्थली का पूज्यवर ने अपने सामने निर्माण कराया। यहीं उनके निर्देशानुसार उनके शरीर छोड़ने पर दोनों सत्ताओं को अग्नि समर्पित की जानी थी। स्वावलम्बन विद्यालय से लेकर एक विशाल चौके का निर्माण एवं गायत्री विद्यापीठ से लेकर भारत के सभी सरकारी विभागों के प्रशिक्षण के तंत्र की स्थापना यहाँ पर की गयी है एवं यह एक जीता-जागता तीर्थ अब बन गया है, जहाँ पर उज्ज्वल भविष्य की पूर्व झलक देखी जा सकती है। कम्प्यूटरों से सज्जित विशाल कार्यालय से लेकर पत्राचार विद्यालय जहाँ नित्य हजारों पत्रों के द्वारा पूरे तंत्र का मार्गदर्शन किया जाता है, यहाँ की विशेषता है।

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँचवीं स्थापना है, जहाँ पर विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अभिनव शोध कार्य चल रहा है। इसे १९७१ की गायत्री जयंती पर आरम्भ किया गया था। वर्तमान शांतिकुंज- गायत्री तीर्थ से आधा किलोमीटर दूरी पर गंगातट पर स्थित यह संस्थान अपनी आकर्षक बनावट के कारण सहज ही सबके मनों को मोहकर आमंत्रित करता रहता है। इसमें तीन मंजिलों में प्रथम तल पर एक विज्ञान के उपकरणों से सुसज्जित यज्ञशाला विनिर्मित है तथा चौबीस कक्षों में गायत्री महाशक्ति की चौबीस मूर्तियाँ बीजमंत्रों व उनकी फलश्रुतियों सहित स्थापित हैं। द्वितीय तल पर एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है, जहाँ ऐसे उपकरण स्थापित हैं जो यह जाँच-पड़ताल करते हैं कि साधना से पूर्व व पश्चात्, यज्ञादि मंत्रोच्चारण के पूर्व व पश्चात् क्या-क्या परिवर्तन शरीर-मन की गतिविधियों व रक्त आदि संघटकों में देखने में आये। इनके आधार पर साधकों को साधना संबंधी परामर्श दिया जाता है। यहाँ पर वनौषधियों का विश्लेषण भी किया जाता है तथा यज्ञ ऊर्जा-मंत्र शक्ति का क्या प्रभाव साधक की मस्तिष्कीय तरंगों, जैव विद्युत आदि पर पड़ा, यह देखा जाता है। विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी यहाँ किये जाते हैं। तृतीय तल पर एक विशाल ग्रंथागार स्थापित है, जहाँ विश्वभर के शोध प्रबंध वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर एकत्रित किये गये हैं। यहाँ प्राय: ४५००० से अधिक ग्रंथ हैं, जिनमें कई पुरातन पाण्डुलिपियाँ हैं। यह अपने आप में एक अनूठा संकलन है जो और कहीं एक साथ देखने में नहीं मिलता।

परमपूज्य गुरुदेव की उपरोक्त पाँच स्थापनाएँ किसी को भी यह परिचय दे सकती हैं कि किस विलक्षण दृष्टास्तर की वह महासत्ता थी जो हम सबके बीच अपना लीली संदोह रचकर चली गयी। प्रत्यक्ष तो यह केन्द्रीय पाँच स्थापनाएँ नजर आती हैं किन्तु ४८०० से अधिक अपने भवनों वाले प्रज्ञा संस्थान ४०००० से अधिक प्रज्ञामण्डल व स्वाध्याय मण्डल तथा अगणित गायत्री परिवार की शाखाएँ यदि इनमें मिलाई जाएँ तो इनका मूल्य राशि में आँका नहीं जा सकता। यही वह सब है जो उस महापुरुष को एक अवतारी स्तर की सत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित करता है व जिसके कर्तृत्व पर श्रद्धावनत होने का मन करता है। ❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२
(सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्त्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६.ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे—

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org